इकाई 1 मृदा की प्रकृति और निर्माण

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
उद्देश्य

1.2 मृदा और उसका महत्व

1.3 मृदा की आकारिकी
मृदा प्रोफ़ाइल के अभिलक्षण
मृदा संस्तर

1.4 मृदा जनन : मृदा उत्पत्ति तथा निर्माण
खनिज तथा शैल
अपक्षयण तथा मृदा निर्माण
मृदा निर्माण को प्रभावित करने वाले कारक

1.5 मृदा का वर्गीकरण
भारत की मृदा प्रकारें

1.6 सारांश

1.7 अंत में कुछ प्रश्न

1.8 उत्तर

1.1 प्रस्तावना

पृथ्वी का विकास पांच से आठ अरब वर्ष पहले हुआ था, जब वह लाल तप्त मैग्मा (magma) [पिघले शैल (molten rock)] के रूप में थी। मैग्मा को ठंडा होने में कई लाखों वर्ष लगे और इस प्रक्रिया के दौरान वह अनेक तरीकों से रूपांतरित हुई। आरंभिक अवस्थाओं में पृथ्वी की सतह पर बिल्कुल पानी नहीं था, कुछ अरब वर्षों तक वर्षा होती रही और उस के बाद घाटी जैसे स्थानों पर जल भर जाने से महासागर और समुद्र बन गए। विकास की इन आरंभिक अवस्थाओं में, पृथ्वी की स्थितियाँ काफी तेजी से बदलती रहीं जिनमें अनेकों सिलिकेटों जैसे, ऑर्थोक्लेस (orthoclase) का निर्माण हुआ। ये खनिज जल के संपर्क में आने पर धीरे धीरे जल अपघटित हो गए और इनसे अधिक मुक्त संरचना वाले सिलिकेट बने जिन्हें मृत्तिका खनिज (clay minerals) कहते हैं। इस रूपांतरण में दस लाख वर्ष और लग गए। इसी बीच कभी जल में जीवन अस्तित्व में आया और विकसित हो गया। इस विकास के साथ ही मृदा जीवों का भी विकास होने लगा, जो मृदा के निर्माण में सहायक बना। मृदा निर्माण की प्रक्रिया, मृदा निर्माण को प्रभावित करने वाले कारक, मृदा की आकारिकी (morphology) तथा सामान्य मृदा प्रकारों की व्याख्या इस इकाई में की गई है। अगली इकाई में मृदा के विभिन्न विशिष्ट प्राचलों (parameters) के बारे में बताया गया है जो मृदा की प्रकृति और गुणवत्ता (quality) को निर्धारित करते हैं। आरंभ में ये समझना जरूरी है कि मृदा क्या है और किस प्रकार ये सभी सजीव जीवों के लिए महत्वपूर्ण है। हम इसके बारे में चर्चा अगले भाग में करेंगे।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- मृदा को परिभाषित करके उसके महत्व का वर्णन कर सकेंगे,
- मृदा प्रोफ़ाइल (profile) तथा मृदा संस्तरों (horizons) का वर्णन कर सकेंगे,
- विभिन्न प्रकार के मृदा संस्तरो (horizons) की पहचान कर सकेंगे,
- शैलों तथा खनिजों को परिभाषित कर सकेंगे,

- अपक्षयण की प्रक्रिया को समझा सकेंगे
- उन कारकों का वर्णन कर सकेंगें जो मृदा निर्माण को प्रभावित करते हैं, तथा
- सामान्य तौर पर मृदा वर्गिकी (soil taxonomy) तथा भारत की विभिन्न प्रकार की मृदाओं की व्याख्या कर सकेंगे।

1.2 मृदा तथा उसका महत्व

संज्ञा **मृदा** (soil) की उत्पत्ति लेटिन शब्द *सोलम (solum)* से हुई है जिसका अर्थ है फर्श अथवा ज़मीन। सकर्मक क्रिया (transitive verb) के रूप में मृदा शब्द का अर्थ है "गंदा करना" जैसा कि गंदे बर्तनों अथवा कपड़ों के लिए कहा जाता है।

मृदा को एक ऐसे स्रोत के रूप में जाना जाता है जो विभिन्न प्रकार के पादपों और वनस्पतियों को सहारा देकर मानव जाति की मूलभूत आवश्यकता को पूरा करती है। इसके लिए कोई विशिष्ट परिभाषा देना कठिन है, क्योंकि प्रकृति में इसका अवलोकन व्यक्ति विशेष होता है। बहुत विस्तृत रूप में मृदा को भूपर्पटी (Earth's crust) की बहुत ही "पतली परत" के रूप में देखा जा सकता है जो पादपों की वृद्धि के लिए प्राकृतिक माध्यम का कार्य करती है। फिर भी, विभिन्न व्यक्तियों के लिए इसके अर्थ भिन्न-भिन्न होते हैं। किसान के लिए, मृदा पृथ्वी की सतह का वह भाग है जिसकी वो जुताई (plough) कर सकता है और वहां फसल उगा कर अपने परिवार तथा मवेशियों का पेट भर सकता है। सिविल इंजीनियर के लिए, मृदा सभी निर्माण कार्यों, जैसे सड़कों, इमारतों, नहर तथा नालियों आदि की मेड़ बनाने आदि के लिए आधार है। तेल तकनीक विशेषज्ञ के लिए मृदा मृत्तिकाएं (soil clays) तथा मृत्तिका खनिज (clay minerals) पेट्रोलियम भंजन कारकों (cracking agents) के स्रोत हैं। अतः मृदा एक **महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन** (vital natural resource) है जिसकी उत्पादकता को बनाए रखने और उसमें सुधार करने के लिए उचित समझ और प्रबंधन की आवश्यकता होती है जिससे हमें बदले में स्वस्थ और हरे भरे पर्यावरण को बनाए रखने में मदद मिलती है।

मृदा की परिभाषा "भूपर्पटी की पतली बाहरी परत" से काफी बदल गई है और अब ये "पृथ्वी की सतह पर प्राकृतिक वस्तुओं का संग्रह" हो गई है। मृदा की वर्तमान मान्य परिभाषा जो युनाइटेड स्टेट्स डिपार्टमेन्ट ऑफ एग्रीकल्चर (United States Department of Agriculture; USDA) के मृदा सर्वेक्षण कार्यकर्ताओं (Soil Survey Staff) द्वारा दी गई है वह काफी विस्तृत है और इस पाठ्यक्रम की परिधि से परे है। उपयोग की दृष्टि से मृदा को निम्नलिखित तरीके से परिभाषित किया गया है। "पृथ्वी की सतह में प्राकृतिक तत्वों के संग्रह को मृदा कहते हैं। यह कुछ स्थानों पर रूपांतरित है अथवा मानव द्वारा निर्मित सांसारिक पदार्थों से बनी है, जिसमें सजीव तत्व मौजूद हैं और जो बाह्य जगत के पादपों को पोषण दे रही है अथवा पोषण देने में सक्षम है।"

("the collection of natural bodies in the earth's surface in places modified or even made by man of earthy materials: containing living matter and supporting or capable of supporting plants out-of-doors")

मृदा होने के लिए किसी प्राकृतिक तत्व में :

- सजीव तत्व होने चाहिए,
- पादपों को पोषण देने की क्षमता होनी चाहिए।

मृदाओं का अध्ययन क्यों करें?
—लोग और समाज मृदा पर निर्भर हैं
—मृदा एक प्रमुख प्राकृतिक संसाधन है
—मृदाएं भोजन, फाइबर तथा नवीकरणीय (renewable) अथवा पुनः प्रयुक्त होने वाले संसाधनों (जैवभार, biomass आदि) का प्रमुख स्रोत है।

MAADHYAM IAS

मृदा को परिभाषित करने के बाद आइए अब हम देखें कि हमें मृदा का अध्ययन क्यों करना चाहिए तथा उसका क्या महत्व है। आप जानते होंगे कि कृषि के आरंभ से ही किसान नदी घाटियों की उर्वर (fertile) मृदाओं की ओर आकर्षित होते रहे हैं। प्राचीन ग्रीक तथा रोमन लेखकों ने खेती की ऐसी प्रणालियों का वर्णन किया है जिनमें फलीदार पादप (leguminous plants) होते थे तथा मृदा अनुपूरकों (supplements) के रूप में भस्म (ashes) तथा सल्फर का उपयोग होता था। जर्मन रसायनज्ञ जस्टस फॉन लीबिग (Justus von Liebig; 1840) ने पाया कि मृदाओं में खनिज मिलाने से फसल की पैदावार बढ़ जाती थी। उन्होंने प्रतिपादित किया कि मृदा में खनिज तत्वों को खादों तथा उर्वरकों के रूप में मिलाना पादप वृद्धि के लिए आवश्यक होता है। उनके अनुसार पादप वृद्धि के लिए कुछ कारक आवश्यक होते हैं और यदि उनमें से कोई भी कारक सीमित (limiting, नियंत्रणकारी) हो तो पादप उत्पादन

कम हो जाता है। मृदाओं का अध्ययन आज ये सुनिश्चित करने के लिए किया जाता है कि इनमें से कौन सा कारक वांछित मात्रा से कम है और किस प्रकार पादप वृद्धि में उसके सीमाबंधन (limitation) को दूर किया जा सकता है।

वैज्ञानिक अध्ययन की पिछली दो शताब्दियों में मृदा के अध्ययन के लिए दो संकल्पनाएं (concepts) अथवा विचारधाराएं विकसित हुई हैं। एक को पीडोलोजी / मृदा विज्ञान (pedology) कहते हैं जो मृदा को एक प्राकृतिक तत्व, प्रकृति का एक जैव रासायनिक रूप से अपक्षयित (weathered) तथा संश्लेषित (syntliesised) उत्पाद मानता है तथा ये मृदा के वर्गीकरण तथा वर्णन को उसी रूप में लेता है जिसमें ये पाई जाती है। दूसरे को इडेफोलोजी /मृदा विज्ञान (edaphology) कहते हैं, जो मृदा को पादपों के प्राकृतिक आवास (habitat) के रूप में देखता है और उसका अध्ययन उसकी उत्पादकता तथा उसके संरक्षण तथा सुधार के साधनों के संदर्भ में करता है, उनका अंतिम लक्ष्य भोजन तथा फ़ाइबर (fibre) का उत्पादन होता है। हम फिर भी, संयुक्त विचारधारा को अपनायेंगे। मृदा तथा उसके महत्व के बारे में समझ लेने के बाद आइए अब हम मृदा के सामान्य गुणों के बारे में अध्ययन करते हैं लेकिन उसके पहले निम्नलिखित बोध प्रश्न को हल करने का प्रयास कीजिए।

मृदाविज्ञान /पीडोलोजी (Pedology) मृदा निर्माण, (प्राकृतिक स्रोतों से) उसके वर्गीकरण तथा संयोजन पर केन्द्रित होता है।

मृदाविज्ञान /इडेफोलोजी (Edaphology) मृदा उत्पादकता, उसके संरक्षण तथा प्रबंधन (भोजन तथा फाइबर के कुशल उत्पादन के लिए) से संबन्धित है।

बोध प्रश्न 1

पीडोलोजी (pedology) किस प्रकार इडेफोलोजी (edaphology) से भिन्न है?

....

....

....

1.3 मृदा की आकारिकी

मृदा की आकारिकी (morphology) मृदा तथा उसके सामान्य अभिलक्षणों का वर्णन है। मृदा की आकारिकी को उसको निर्मित करने वाली विभिन्न परतों की संख्या, प्रकार तथा उनकी व्यवस्था तथा उनके दिखाई पड़ने वाले तथा मापे जा सकने वाले गुणों के द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है। जनक पदार्थ (parent material) से मृदा का विकास मदा निर्मित करने वाली प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप होता है जो मृदा निर्माण करने वाले कारकों के प्रभाव के अंतर्गत होती हैं (इसकी अगले भाग में चर्चा की गई है) । इन प्रक्रियाओं में काफी लंबा समय लग जाता है-किसी मृदा के बनने में कुछ हजार वर्ष भी लग सकते हैं। जैसे–जैसे समय बीतता जाता है, मृदा परिपक्व होती जाती है और सामान्यतः अधिक गहरी होती जाती है और विभिन्न परतें विकसित कर लेती हैं जिन्हें **संस्तर** (horizons) कहते हैं। "मृदा सस्तर को आवरण प्रस्तर (regolith) की क्षैतिज (horizontal) परत के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो मृदा सतह के लगभग समानान्तर होती है तथा जिसमें अपेक्षाकृत समान (homogeneous) भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुण होते हैं जो मृदा निर्माण प्रक्रियाओं के द्वारा उत्पन्न होते हैं।"

जनक पदार्थ : वह प्राथमिक पदार्थ जिससे मृदा का निर्माण होता है।

आवरण प्रस्तर (Regolith) : ठोस चट्टान के ऊपर अदृढ़ भूमि पदार्थ

मृदा की ऊर्ध्वाधर काट (vertical section) में (जैसा कि ताजे खुदे गढढे में देखा जा सकता है) अनेक विशिष्ट संस्तरों (horizon) को देखा जा सकता है। ऐसी काट को **प्रोफाइल** (profile) अथवा **मृदा प्रोफाइल** कहते हैं। यह सामान्यतः सतह से समकोण बनाता हुआ तल होता है। मृदा प्रोफाइल का ऊपरी भाग जो जनक पदार्थ के ऊपर होता है, जिसमें मृदा निर्माण की प्रक्रियाएं होती हैं और जिसके भीतर पादप जड़ें तथा मृदा जंतु पाए जाते हैं, वह **संमृदा** (solum) कहलाता है। मृदा प्रोफाइल के अध्ययन का अर्थ सभी संस्तरों की पहचान करना तथा जितना संभव हो सके उतना संपूर्ण वर्णन करना है। विभिन्न संस्तरों का विभेदीकरण खेत में दिखने वाले अभिलक्षणों के आधार पर किया जाता है, यद्यपि कभी-कभी पूर्ण विवरण के लिए प्रयोगशाला के आंकड़ों की भी आवश्यकता होती है। फिर भी, प्रचलित तौर पर मृदा प्रोफाइल के वर्णन में मृदा के वो गुण सम्मिलित होते हैं जिनका निर्धारण केवल मृदा के आयतन का निरीक्षण करके किया जा सकता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

पेडान (Pedon) : ग्रीक शब्द जिसका अर्थ है मृदा अथवा पृथ्वी

पेडान का क्षेत्र विस्तार 1 से 10 m^2 होता है।

मृदा के गुण सिर्फ ऊर्ध्वाधर (vertical) रूप से नीचे की ओर जाने पर ही नहीं बदलते हैं, बल्कि पार्श्वीय भिन्नताएं (lateral variations) भी पाई जाती हैं, क्योंकि मृदा एक त्रिविम (three dimensional) सरचना है। अतः संस्तरों की प्रकृति तथा व्यवस्था को प्रदर्शित करने के लिए तथा मृदा के गुणों में भिन्नताओं के लिए मृदा में से एक त्रिविम नमूने का चयन इकाई के रूप में किया जाता है, जिसे **पेडान** (pedon) कहते हैं। ऐसे ही समान पेडानों का समूह जो सभी ओर से "गैर मृदा (non-soil) अथवा असमान अभिलक्षणों वाले पेडानों से घिरा रहता है उसे **पॉलिपेडान** (polypedon) कहते हैं। चित्र 1.1 में मृदा, पॉलिपेडान तथा मृदा प्रोफाइल के संदर्भ में मृदा पेडान के क्रमबद्ध आरेख को दिखाया गया है। अगले उपभाग में आप दी गई मृदा के प्रोफाइल के अभिलक्षणों के बारे में पढ़ेंगे। यह मृदा के वर्गीकरण तथा मृदा का उचित उपयोग करने के लिए महत्वपूर्ण है।

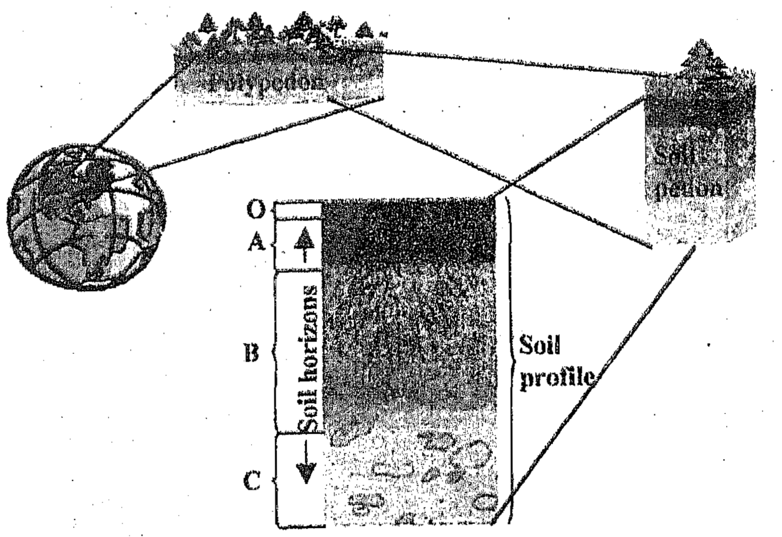

चित्र 1.1 : मृदा, पॉलिपेडान तथा मृदा प्राफाइल के संदर्भ में पेडान

1.3.1 मृदा प्रोफाइल के अभिलक्षण

मृदा कणों की सतह को आवरित करने वाले आयरन ऑक्साइड (iron oxide) तथा कार्बनिक तत्वों के कारण वर्ण उत्पन्न होते हैं।

अपचयोपचय (redox) अभिक्रियाओं के कारण मृत्तिकाएं नारंगी– लाल वर्ण दर्शाती हैं जबकि कार्बनिक तत्व गहरे वर्ण का कारण होते हैं।

खेत में अध्ययन किए जाने वाले मृदा प्रोफाइल अभिलक्षणों में मृदा संस्तरों (उसके वर्ण के विवरण के आधार पर जिसमें वर्ण का नाम अर्थात् **मन्सेल संकेतन** (Munshell notation) सम्मिलित हो), जल अवस्था तथा भौतिक अवस्था को देखना सम्मिलित है। नमूने (sample) की भौतिक अवस्था को टूटी हुई (broken), मसली हुई (rubbed), संदलित (crushed) मृदा के रूप में [redacted] जल अवस्था को "आर्द्र" (moist) अथवा "शुष्क" (dry) के रूप में रिकॉर्ड किया जाता है। मन्शेल संकेत मृदा की वर्ण व्यवस्था है जिसे मूलरूप से अमरीका में बनाया गया था और अब ये विस्तृत रूप से मान्य है। यह वर्ण के तीन परिवर्तियों (variables), वर्णिमा (hue), मान (value) तथा संतृप्ति (chroma) पर आधारित है। संकेतन को इस रूप में रिकॉर्ड किया जाता है : वर्णिमा मान/संतृप्ति; उदाहरणतः 7.5R 7/3।

वर्णिमा (hue) प्रभावी स्पेक्ट्रमी वर्ण (इन्द्रधनुष) होता है तथा यह प्रकाश की तरंगदैर्ध्य (wevelength) से संबन्धित होता है। मन्शेल व्यवस्था में पांच प्रमुख वर्णिमाएं (hues) होती 8, लाल (red,R), पीली (yellow, Y), हरी (green, G), नीली (blue, B) तथा बैंगनी (purple, P) तथा पांच मध्यवर्ती वर्णिमाएं होती हैं जो प्रमुख वर्णिमाओं के प्रत्येक जोडे के मध्यबिन्दुओं को प्रदर्शित करती हैं। मध्यवर्ती वर्णिमाएं 8, पीली–लाल (yellow- red, [redacted]), हरी–पीली (green - yellow, GY), नीली–हरी (blue- green, BG), बैंग*–नीली (purple-blue, PB) तथा लाल–बैंगनी (red - purple ,RP) । इस प्रकार & के लिए कुल 10 वर्णिमा नाम होते हैं और प्रत्येक वर्णिमा नाम में चार संख्यात्मक खंड, 2.5, 5, 7.5 तथा 10 होते हैं। उदाहरणार्थ, 2.5Y, 5Y, 7.5Y और 10Y इत्यादि प्रमुख वर्णिमाओं के संभव संकेतन हैं तथा 2.5YR, 5YR, 7.5YR तथा 10 YR इत्यादि मध्यवर्ती वर्णिमाओं को निरूपित करते हैं।

MAADHYAM IAS

मान (value) का सबन्ध वर्ण के आपेक्षिक हल्केपन अथवा गहरेपन से होता है और यह प्रकाश की उस मात्रा का मापन है जो मानक प्रकाशन स्थितियों **(standard lighting conditious)** में आंख तक पहुंचती है। उदासीन धूसर स्केल **(neutral grey scale) पर मान** शुद्ध काले वर्ण के लिए (0/) से लेकर सफेद के लिए (10/) तक होता है। किसी भी मृदा में सामान्यतः चरम वर्ण नहीं पाए जाते हैं।

संतृप्ति (chroma) स्पेक्ट्रमी वर्ण की आपेक्षिक शुद्धता अथवा प्रबलता होती है और इसका संख्यात्मक मूल्य उदासीन वर्णों के लिए (/0) से लेकर सबसे तीव्र वर्णों के लिए (/8) तक होता है।

किसी दिए गए मृदा नमूने के **लिए** मन्सेल संकेतन (Munshell **notation)** का निर्धारण मन्सेल पद्धति की वर्ण पुस्तक (चित्र **1.2** (क)) से तुलना-करके किया जाता है जिसमें विभिन्न वर्णों के कार्ड अथवा चिप **(chip)** होते हैं **और** ये ऊपर वर्णित वर्णिमाओं के अनुसार क्रमबद्ध रूप से व्यवस्थित होते हैं। किसी वर्णिमा विशेष के कार्ड में ऊर्ध्वाधर रूप से व्यवस्थित चिपों **(chips)** की श्रृखला होती है जो उस वर्णिमा के सबसे हल्के से लेकर सबसे गहरे शेड (मान) तक को बराबर के चरणों में दिखाती है जैसा कि चित्र 1.2 (ख)में दर्शाया गया है। किसी विशेष मान के लिए वर्ण के चिपों को क्षैतिज रूप से बांए से दांए उनकी संतृप्ति के बढ़ते हुए क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। तीनों गुणों को सदैव वर्णिमा/मान तथा संतृप्ति **के** क्रम में **दिया जाता है,** ऊपर दिए गए उदाहरण **(7.5 R** 7/3) में 7.5 R वर्णिमा है, 7 मान है तथा 3 संतृप्ति है।

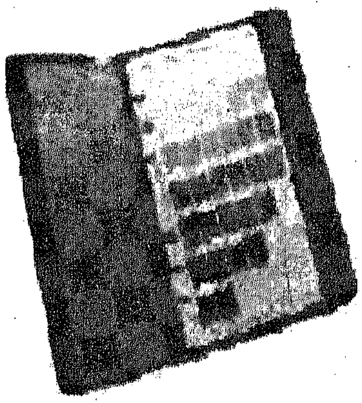

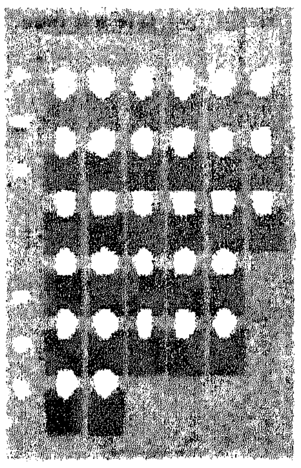

चित्र 1.2 : क) मन्सेल वर्ण पुस्तिका ख) मन्सेल पुस्तिका से लिया गया एक वर्ण चार्ट।

मृदा संस्तरों के बीच तथा मृदा समूहों के बीच स्पष्ट विभेदन करने के लिए, मृदा आकारिकी पर क्षेत्र के आंकडों के साथ ही कुछ विशिष्ट मृदा गुण जैसे यांत्रिक संयोजन **(mechanical composition), स्थूल** घनत्व **(bulk density),** pH, मृदा के सतृप्त सारसत्त **(saturation extract)** की वैद्युत चालकता **(electrical conductivity),** कार्बनिक कार्बन, खनिजीय संयोजन (mineralogical **composition,** प्राथमिक तथा द्वितीयक खनिजों का) आदि प्रयोगशाला के मापन पर भी आधारित होते हैं। इन सभी आंकड़ों का उपयोग मृदा निर्माण प्रक्रियाओं की व्याख्या करने में किया जाता है जो इन विशिष्ट मृदा संस्तरों को बनाने के लिए अनेक वर्षों से क्रियाशील रही होती हैं। हम इस बात पर जोर देना चाहेंगे कि प्रोफाइल अध्ययन मृदा जनन **(soil genesis) को** समझने के लिए तथा मृदा वर्गीकरण के आधार को समझने के लिए भी पहला चरण है। अगले उपभाग में हम विभिन्न संस्तरों के नामन (designation) की चर्चा करेंगे। उसके **पहले** निम्नलिखित बोध प्रश्न को हल करने का प्रयत्न कीजिए।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बोध प्रश्न 2

क) मृदा के वर्ण का क्या महत्व है ?

....

....

....

ख) वर्ण के विवरण 5YR 6/2 में '2' निम्नलिखित से संबन्धित है :

i) मान

ii) वर्णिमा

iii) संतृप्ति

....

....

....

1.3.2 मृदा संस्तर

प्रोफाइल में, विभिन्न संस्तरों अथवा परतों की पहचान कुछ नामों के आधार पर होती है, जो परत के गुणों की मृदा पदार्थ के गुणों के साथ तुलना करके की जाती है। तुलना के लिए लिया गया मृदा पदार्थ वह होता है जो उस समय तक मृदा निर्माण के कारकों से प्रभावित नहीं हुआ होता है। संस्तरों की अभिकल्पना के लिए तीन प्रकार के प्रतीकों (symbols) का उपयोग विभिन्न संयोजनों में किया जाता है। ये हैं : बडे अक्षर (capital letters) छोटे अक्षर (lower case letters) तथा अरबी संख्याएं (Arabic numerals)। बडे अक्षरों का उपयोग प्रमुख संस्तरों (master horizons) का नाम देने के लिए किया जाता है, छोटे अक्षरों का उपयोग प्रमुख संस्तरों के विशिष्ट अभिलक्षणों को दर्शाने के लिए अनुलग्न (suffixes) के रूप में किया जाता है, तथा अरबी संख्याओं का उपयोग उसी संस्तर के ऊर्ध्वाधर उपविभाजनों (vertical subdivisions) को दर्शाने के लिए अनुलग्नों के रूप में और असंबद्धताओं (discontinuity) को दर्शाने के लिए पूर्वलग्नों के रूप में किया जाता है।

संस्तरों के नाम

Fa——
(humification) : ह्यूमस(अपघटित कार्बनिक तत्व) का एकत्रित होना

विभिन्न संस्तरों में से प्रमुख संस्तर (master horizons) आधारभूत मृदा निर्माण प्रक्रियाओं जैसे ह्यूमसभवन (humification), अवक्षालन (eluviation) तथा समपोहन (illuviation) का परिणाम होते हैं। प्रमुख संस्तर तथा मृदाओं की परतें बड़े अक्षरों O, A, E, B, C तथा R द्वारा निरूपित की जाती हैं। यहाँ, O सतह पर कार्बनिक संस्तर को निरूपित करता है; A, E, B तथा C, खनिज संस्तर होते हैं, और प्रतीक R कठोर आधार शैल (bed rock) के लिए होता है। ये आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक मृदा में ये मृदा संस्तर उपस्थित हों।

MAADHYAM IAS

अवक्षालन (eluviation) : कार्बनिक तत्वों तथा लवणों का निक्षालन (leaching)

'O' ***कार्बनिक संस्तर*** होता है जो कार्बनिक करकट (litter) से बनता है जो पादपों तथा जंतुओं एवं ताजे अथवा आंशिक रूप से अपघटित कार्बनिक पदार्थों से प्राप्त होता है।

'A' ***खनिज संस्तर*** होता है जो कार्बनिक तत्वों के संचय (accumulation) से बनता है और उसमें मृत्तिका (clay), आयरन (Fe) अथवा ऐलुमिनियम लुप्त हो जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप स्फटिक (quartz) अथवा बालू या गाद (silt) के आमाप के अन्य प्रतिरोधी खनिजों का सान्द्रण हो जाता है।

समपोहन (illuviation) : मृत्तिकाओं का निक्षेपण (deposition)

'E' ***खनिज संस्तर*** है जिसका प्रमुख लक्षण सिलिकेट मृत्तिका, आयरन, ऐलुमिनियम अथवा इनके किसी संयोजन का लुप्त होना है, जिससे बालू तथा गाद के कणों का सान्द्रण बचा रह जाता है। ये संस्तर सभी अथवा अधिकांश मूल शैल संरचना के विलोपन को प्रदर्शित करते हैं।

'B' *संस्तर* सिलिकेट मृत्तिकाओं, आयरन तथा ऐलुमिनियम ऑक्साइडों, जिप्सम तथा कैल्शियम कार्बोनेट के संचय **(accumulation)** से पहचाना जाता है। ये पदार्थ ऊपरी परतों से आते हैं अथवा अपक्षयण **(weathering)** की प्रक्रिया के द्वारा बनते हैं।

'C' एक *खनिज संस्तर* अथवा परत है, जिसमें आधार शैल **(bedrock)** नहीं होते हैं, जो उस पदार्थ के जैसा अथवा अलग होता है जिससे ये माना जाता है कि संमृदा (solum) का निर्माण होता है, ये मृदाजनिक **(pedogenic)** प्रक्रियाओं से अपेक्षाकृत कम प्रभावित होती हैं तथा इसमें O, A, E अथवा B संस्तरों की पहचान करने वाले गुण नहीं पाए जाते हैं।

उपगणीय भिन्नताएं

ऊपर बताए गए संस्तरों के नामों के अलावा प्रमुख संस्तरों की और अधिक पहचान कुछ विशिष्ट गुणों जैसे विशिष्ट वर्ण अथवा मृत्तिकाओं तथा लवणों जैसे पदार्थों के संचित (accumulate) हो जाने से भी की जाती है। इन उपगणीय **(subordinate)** भिन्नताओं की पहचान छोटे अक्षरों (lower **case letters**) से की जाती है जो विशिष्ट अभिलक्षणों के नामों को दर्शाते हैं। इन उपगणीय भिन्नताओं की सूची और उनके अर्थ सारणी 1.1 में दिए गए हैं। शब्द "संचय" का उपयोग अनेकों परिभाषाओं में इस आशय से किया गया है कि संस्तर में वास्तव में उससे अधिक पदार्थ है, जितना कि जनक सामग्री (parent material) में पाए जाने का अनुमान लगाया गया हो। Bt संस्तर B संस्तर है जिसमें मृत्तिका का संचय **(t)** हो जाता है, इसी प्रकार Bk संस्तर में कार्बोनेटों (k) का संचय हो जाता है। जब एक से अधिक अनुलग्न **(suffix)** का उपयोग होता है, तो निम्नलिखित वर्णों को पहले लिखा जाता है : **a, e,** i, h, r, s, t तथा **w**।

सारणी 1.1: प्रमुख संस्तरों के अंतर्गत उपगणीय भिन्नताओं को दर्शाने के लिए प्रयुक्त छोटे अक्षरों के प्रतीक

वर्ण	भिन्नता	वर्ण	भिन्नता
a	कार्बनिक तत्व, अत्यधिक अपघटित	p	जुताई अथवा अन्य विक्षोभ (disturbance)
b	अंतर्हित **(buried)** मृदा संस्तर	q	सिलिका का संचय
c, cn	संग्रथन (concretion)	r	अपक्षयित **(weathered)** अथवा मृदु आधार शैल **(soft bedrock)**
d	सघन असमेकित (unconsolidated) पदार्थ	s	सिलीकेट मृत्तिकाओं का समपोढ (illuvial) संचय
e	मध्यवर्ती अपघटन के कार्बनिक तत्व	t	सिलिकेट मृत्तिकाओं का संचय
f	आलग्न मृदा **(frozen soil**, स्थायी बर्फ)	v	प्लिंथाइट (plinthite, उच्च आयरन, पुनरावृत्त शुष्कन (repeated drying) तथा आर्द्रता के कारण लाल पदार्थ)
g	प्रबल धूसर वर्णित (कर्बुरण, mottling) आयरन तथा अन्य यौगिकों का अपचयन तथा खराब निकासी के कारण धूसर वर्णो का विकास	w	विशिष्ट वर्ण अथवा संरचना
h	कार्बनिक तत्व का समपोढ़ (illuvial) संचय		
i	कार्बनिक तत्व, थोड़े से अपघटित		
k,ca	कार्बोनेटों का संचय (accumulation)	x	भंगुर (fragipan , उच्च स्थूल घनत्व के साथ भंगुर)
m	प्रबल सीमेन्टीकरण अथवा दृढ़ीकरण (indurations)	y,cs	जिप्सम, कैल्शियम सल्फेट का संचय
n	सोडियम का संचय	z	घुलनशील लवणों का संचय
o	Fe तथा Al ऑक्साइडों का संचय		

कृपया ध्यान दें कि सारणी 1.1 में दी गई जानकारी सिर्फ संदर्भ के लिए है। इन विवरणों को याद करने की आवश्यकता नहीं है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

प्रकाशिक उपकरणों **(optical aids)** से अच्छी तरह निरीक्षण करने पर अधिक विस्तृत गुण दिखाई पडते हैं, जो मृदाजनन **(pedogenesis)** को समझने में सहायक होते हैं। यह मृदा **सूक्ष्मआकारिकी** (micromorphology) कहलाता है। यह कुछ स्तर तक हैन्ड लेन्स (hand

मृदा जनन (Pedogenesis): मृदा की उत्पत्ति एवं निर्माण

धुवण सूक्ष्मदर्शी (petrographic microscope) का उपयोग शैलों तथा खनिजों के पतले सेक्शनों का परीक्षण करने के लिए किया जाता है।

lens) से किया जा सकता है लेकिन परिशुद्ध परीक्षण **(rigorous examination)** के लिए चयनित **पेड** (ped) के पतले सेक्शन बनाने की आवश्यकता होती है। इस पेड को रेज़िनों **(resins)** से संसेचित (impregnated) करते हैं जो सूखने पर पत्थर जैसा कठोर हो जाता है और फिर इसे धुवण सूक्ष्मदर्शी **(petrographic microscope)** द्वारा परीक्षण के लिए पतले सेक्शनों में काटा जा सकता है। इससे काफी विस्तृत जानकारियों जैसे, जनक पदार्थ की उत्पत्ति, बर्हिजनिक प्रक्रियाओं **(exogenic processes),** मृदा निर्माण प्रक्रियाओं तथा भूमि उपयोग के प्रबंधन आदि का आकलन किया जा सकता है।

प्रमुख मृदा संस्तरों तथा उनके संकेतों से परिचित हो जाने के बाद आइए अब हम विभिन्न प्रक्रियाओं के द्वारा मृदा के विकास को समझने की कोशिश करते हैं। उससे पहले मृदा संस्तरों के लिए उपयोग में लाए जाने वाले संकेतनों के संदर्भ में अपनी जानकारी के लिए निम्नलिखित बोध प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न कीजिए।

बोध प्रश्न 3

निम्नलिखित संस्तरों की व्याख्या कीजिए :

i) **Oap**

ii) Btk

....

....

....

1.4 मृदा जनन : मृदा की उत्पत्ति तथा निर्माण

मृदा जो विकास का एक उत्पाद है, वह भूदृश्य **(landscape)** के बदलने के साथ निरंतर बदलती रहती है। यह पांच कारकों की परस्पर क्रिया का उत्पाद है, ये हैं : जनक पदार्थ **(parent material)** जलवायु, जीव, स्थलाकृति **(topography)** तथा समय। जलवायु तथा सजीव जीव जनक पदार्थ पर क्रिया करते हैं, जबकि स्थलाकृति (अथवा स्थानीय उच्चावच, **local** relief) रूपांतरकारी प्रभाव डालती है तथा समय मृदा निर्माण प्रक्रियाओं को होने देता है। मृदा निर्माण के कारकों की अनेकों सख्याए **(degrees)** अथवा विभिन्नताएं होती हैं, तथा विभिन्न प्रकार की मृदाओं के निर्माण की संभावनाएं असंख्य हैं। फिर भी जहां कहीं भी पांचों कारकों के सभी तत्व भिन्न स्थानों पर भी समान पर्यावरणों में एक जैसे होते हैं, वहां की मृदाएं एक जैसी होती हैं। मृदा जनन के अध्ययन से ये समझा जा सकता है कि मृदाओं का विकास कैसे होता है ? मृदाएं अपने गुणों तथा उत्पादकता में भिन्न क्यों होती हैं और किस प्रकार मृदाओं को विभिन्न उपयोगों के लिए प्रबंधित किया जा सकता है ?

मृदा का विकास दो अवस्थाओं में होता है। पहले जनक सामग्री का निर्माण होता है जिसे सामान्यतः असमेकित **(unconsolidated)** माना जाता है और इसमें अपक्षयित खनिज तथा/अथवा कार्बनिक तत्व इत्यादि होते हैं। उपभाग 1.4.2 में चर्चित भौतिक तथा रासायनिक अपक्षय **(weathering)** प्रक्रियाएं शैल **(rock)** तथा अवसाद **(sediments)** का खनिज कणों में अपरदन (erode) कर देती हैं तथा खनिजों का विलयन बना देती हैं। ये अपक्षयित खनिज ज्वालामुखियों, वायु, जल, बर्फ तथा तरंगों आदि से दूर परिवहित हो जाते हैं। यही सारे कारक अवनत **(decayed)** शैल पर स्थित अन्य अपक्षयित शैलों तथा कार्बनिक तत्वों से अपक्षयित खनिजों को परिवहित कर देते हैं और कथित जनक सामग्री को उत्पन्न करते हैं जिससे मृदा का निर्माण होता है। दूसरी अवस्था में मृदा निर्माण अथवा मृदा जनन प्रक्रियाओं द्वारा कुछ समय के अन्तराल में मृदा का विकास होता है। मृदा जनन को चित्र 1.3 में आरेख द्वारा निरूपित किया गया है।

MAADHYAM IAS

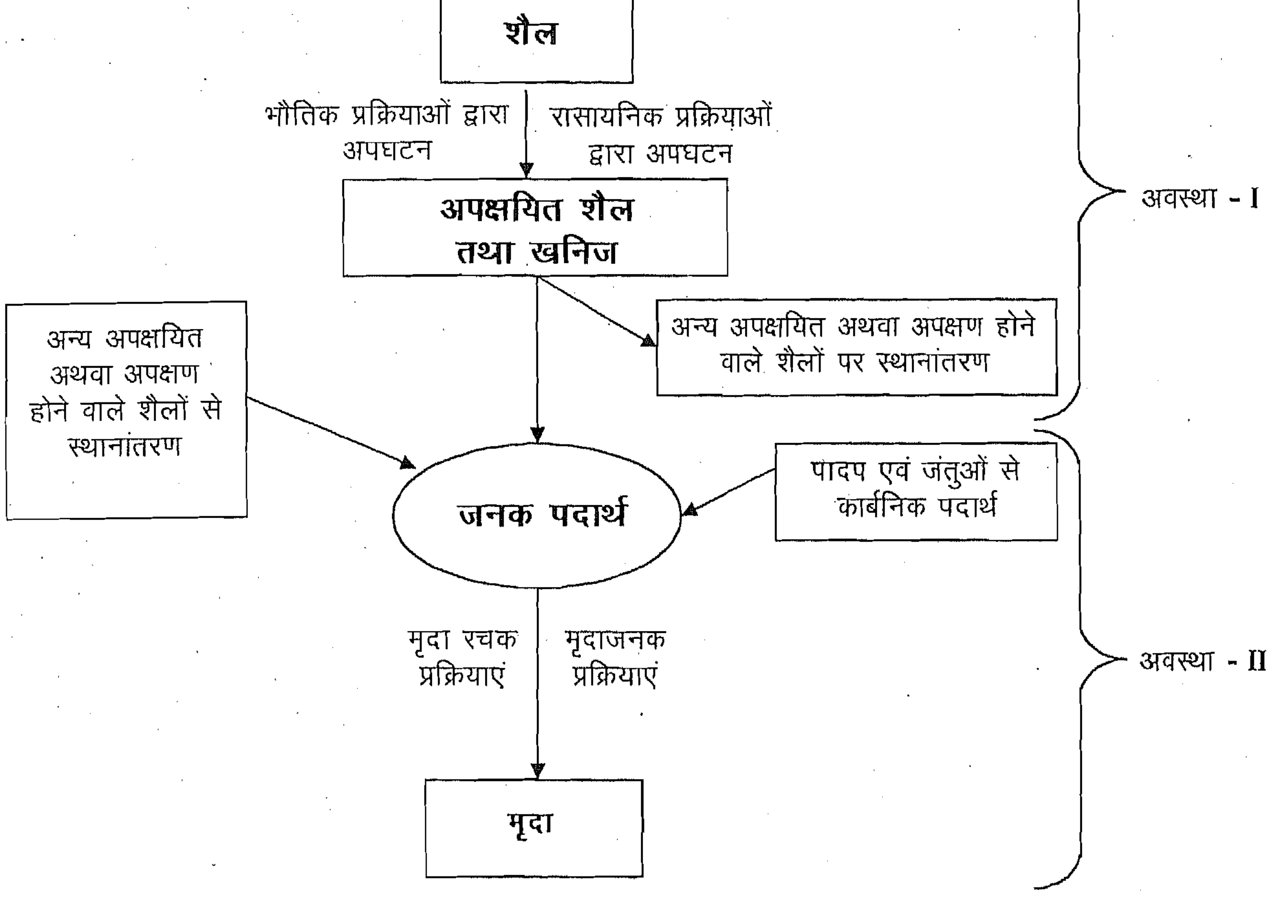

चित्र 1.3 : मृदाजनन की अवस्थाओं का आरेखीय निरूपण

अतः मृदा जनन की दो स्पष्ट प्रावस्थाएं हैं। एक **अपक्षयण** (weathering) है जिसमें शैलों तथा खनिजों का विघटन (disintegration) तथा अपघटन सम्मिलित है तथा दूसरी **निक्षेपण** (deposition) है जिसमें मृदाजनिक कारकों तथा मृदा निर्माण प्रक्रियाओं के द्वारा मृदा का विकास सम्मिलित है। अपक्षयण प्रक्रिया को बेहतर तरीके से समझने के लिए शैलों (rocks) तथा शैल खनिजों (rock minerals) का अध्ययन करना महत्वपूर्ण है। आप इसके बारे में अगले उपभाग में पढ़ेंगे।

1.4.1 खनिज तथा शैल

खनिज एक अकार्बनिक पिंड (inorganic body) होता है, जो प्रकृति की प्रक्रिया द्वारा निर्मित होता है, सामान्यतः इसका निश्चित संयोजन होता है। यदि यह अनुकूल परिस्थितियों में निर्मित होता है, तो इसका रूप क्रिस्टलीय तथा अन्य भौतिक गुण होते हैं। मृदा वैज्ञानिक, फिर भी, मृदा if पाए जाने वाले अकार्बनिक रवाहीन (amorphous, अक्रिस्टलीय) घटकों को पद **मृदा खनिज** (soil mineral) में सम्मिलित करते हैं। पादप वैज्ञानिक भी मृदा से प्राप्त होने वाले अनिवार्य पादप पोषक तत्वों के लिए खनिज शब्द का उपयोग करते हैं। उत्पत्ति के आधार पर, खनिजों को दो समूहों में वर्गीकृत किया जाता है, **प्राथमिक** (primary) तथा **द्वितीयक** (secondary)।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

खनिज जो मूलरूप से तब बने जब तप्त मैग्मा (पिघले हुए शैल, molten rock) ठंडा हुआ और उससे ठोस आग्नेय शैलों (igneous rocks) जिनका वर्णन निम्नलिखित है, का निर्माण हुआ, **प्राथमिक खनिज** कहलाते हैं उदाहरणतः क्वार्ट्ज (quartz), माइका (mica), फेल्डस्पार (feldspar) आदि। इन खनिजों में इनके निर्मित होने के बाद से अब तक बहुत कम परिवर्तन हुए हैं तथा ये आग्नेय (igneous) एवं कायांतरित (metamorphic) शैलों में पाए जाते हैं (निम्नलिखित अनुच्छेदों में समझाया गया है)। भूपर्पटी का निर्माण इस तरीके

से चलता रहता है। जबकि प्राथमिक खनिज पृथ्वी की सतह पर सामान्य रूप से पाए जाने वाले तापमान तथा/अथवा दबाव (<100°C तथा एक वायुमंडल) से अधिक पर निर्मित होते हैं, **द्वितीयक खनिज** पृथ्वी की सतह पर पाए जाने वाले तापमान तथा दबाव पर ही, पहले से विद्यमान खनिजों के अपक्षयण (weathering) से निर्मित होते हैं। इस प्रक्रिया में, जल को सामान्य भागीदार के रूप में सम्मिलित करते हुए, तत्व विलयन में निर्मुक्त (release) हो जाते हैं। इनमें से कुछ तत्व मृदा पदार्थ में से निक्षालित (leach out) हो जाते हैं तथा भौमजल (ground water), सरिताओं तथा अतत महासागर में मिल जाते हैं जबकि निर्मुक्त हुए तत्वों में से कुछ बारीक मृदा कणों की सतह पर अधिशोषित (adsorbed) तथा प्रतिधारित (retained) रहते हैं और पादप पोषक तत्वों के तत्काल उपलब्ध स्रोत के रूप में कार्य करते हैं। अन्य निर्मुक्त हुए तत्व द्वितीयक खनिज निर्मित करने के लिए जल के साथ पुन संयोजित हो जाते हैं। सिलिकेट मृत्तिकाएँ (silicate clays) तथा आयरन ऑक्साइड (iron oxide) जैसे खनिज, जो कम प्रतिरोधी (resistant) पदार्थों के विखंडन तथा अपक्षयण से निर्मित होते हैं, वे द्वितीयक खनिजों के उदाहरण हैं। कुछ महत्वपूर्ण प्राथमिक तथा द्वितीयक खनिजों को सारणी 1.2 में सूचीबद्ध किया गया है।

सारणी 1.2 : मृदा में पाए जाने वाले प्राथमिक तथा द्वितीयक खनिज

प्राथमिक खनिज		द्वितीयक खनिज	
नाम	**सूत्र**	**नाम**	**सूत्र**
क्वार्ट्ज	(SiO_2)	जिओथाइट	$(FeOOH)$
मस्कोवाइट	$[KAl_3Si_3O_{10}(OH)_2]$	हेमेटाइट	(Fe_2O_3)
ऑर्थोक्लेस	$[KAlSi_3O_8]$	गिब्जाइट	$(Al_2O_3\,3H_2O)$
बायोटाइट	$[KAl\,(Mg.Fe)_3Si_3O_{10}(OH)_2]$	मृत्तिका खनिज	ऐलुमिनियम सिलिकेट
	$[NaAlSi_3O_8]$		
ऐलीबाइट	$[Ca_2Al_2\,Mg_2Fe_3Si_6O_2\,2(OH)_2]$		
हॉर्नब्लेन्ड	$[Ca_2(Al.Fe)_4(Mg.Fe)_4Si_6O_{24}]$	डोलोमाइट	$[CaMg(CO_3)_2]$
	$[CaAl_2Si_2O_8]$	कैल्साइट	$CaCO_3$
	$[(Mg,Fe)_2SiO_4]$	जिप्सम	$CaSO_4.2H_2O$
ऑगाइट	$[K_2(Si_6Al_2)Al_4O_{20}(OH)_2]$		
ऐनॉर्थाइट	$[CaAl_2Si_2O_8]$		
ऑलिवीन	$[(Mg.Fe)_2SiO_4]$		
माइका	$[K_2(Si_6Al_2)Al_4O_{20}(OH)_2]$		

खनिज पदार्थों का पिंड **शैल** (rock) कहलाता है। यह एक अथवा अधिक खनिजों का बना हो सकता है। कुछ शैल कठोर तथा संहत (campact) $3 हैं उदाहरणतः ग्रेनाइट (granite) तथा बेसाल्ट (basalt) जबकि अन्य अबद्ध तथा स्वल्प समुच्चयित (feebly aggregated) होते हैं जैसे बलुआ पत्थर (sandstone) तथा अबद्ध बालू (loose sand)। प्रत्येक शैल में कुछ गुण पाए जाते हैं जैसे वर्ण, संरचना, विशिष्ट घनत्व (specific gravity), विदलन (cleavage) तथा खनिजीय विन्यास (mineralogical makeup)। इन गुणों का उपयोग शैल–खनिज की पहचान करने के लिए किया जा सकता है। शैलों को तीन प्रमुख श्रेणियों में विभाजित किया गया है। इनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित अनुच्छेदों में किया गया है।

आग्नेय शैल (igneous rocks) : जैसा कि ऊपर बताया गया है, आग्नेय शैल मैग्मा के शीतलन से बनते हैं। ज्वालामुखी के फूटने से ग्रेनाइट, झावा (pumice) तथा आब्सीडियन (obsidian) जैसे आग्नेय शैल निर्मित होते हैं। आग्नेय **9'h** भूपर्पटी के लगभग 95 प्रतिशत भाग को बनाते हैं तथा लगभग सोलह किलोमीटर मोटे होते हैं। ये स्थूल शैल ज्यादातर क्रिस्टलीय प्रकृति के होते हैं तथा **कठोर शैल** (hard rock) कहलाते हैं। इन शैलों में मुख्य रूप से प्राथमिक खनिज होते हैं जिनमें क्वार्टज (quartz), फेल्डस्पार (feldspar), ऐम्फिबोल (amphibole), पाइरोक्सीन (pyroxine), ऑलिवीन (olivine) एवं माइका जैसे खनिज आवश्यक रूप से होते हैं। उपयुक्त पर्यावरणीय स्थितियों में, आग्नेय शैल अवसादी (sedimentary) तथा कायांतरित (metamorphic) शैलों में परिवर्तित हो सकते हैं।

अवसादी शैल (sedimentary rocks) : अवसादी शैल, आग्नेय शैलों के विखंडन से निर्मित होते है। ये शैल पादप जड़ों, बर्फ फन्नीयों (ice wedges) तथा पृथ्वी की गतिविधियों द्वारा

MAADHYAM IAS

टूट जाते हैं तथा हिमनदों (glaciars), तरंगों, धाराओं तथा वायु वेग से दूर स्थानों तक चले जाते है। ये परिवहित कण सिलिका, आयरन ऑक्साइड अथवा चूने जैसे पदार्थों द्वारा आपस में समेकित (consolidated) रूप में जुड़ जाते हैं तथा नए शैलों को निर्मित करते हैं। कभी-कभी ये शैल उन पदार्थों से बनते हैं जो कभी जल में विलयन के रूप में घुले हुए थे तथा शीतलन, वाष्पन अथवा सीधे रासायनिक अवक्षेपण (precipitation) के द्वारा शैल पिंडो के रूप में निक्षेपित हो गए। बलुआ पत्थर (sandstone), चूना पत्थर (limestone) तथा शेल (shale) अवसादी शैलों के प्रकार हैं जिनमें क्रमशः क्वार्ट्ज (quartz) बालू, चूना तथा मृत्तिका होते हैं। इनमें से अनेकों शैल परतों अथवा स्तरों में निक्षेपित रहते हैं और इसलिए ये **स्तरित शैल** (stratified rocks) कहलाते हैं। कुछ अधिक महत्वपूर्ण अवसादी शैल तथा उनमें सामान्यतः प्रभावी रूप से पाए जाने वाले खनिजों को सारणी 1.3 में दिया गया है।

कायांतरित शैल (metamorphic rocks) : वे आग्नेय तथा अवसादी शैल, जो पृथ्वी की सतह के नीचे की ऊष्मा तथा दबाब की संयुक्त क्रिया के द्वारा अपनी पूर्व अवस्था से परिवर्तित हो गए उन्हें **कायांतरित शैल** कहते हैं तथा ये प्रक्रिया **कायांतरण** (metamorphosis) कहलाती है। इस प्रकार आए परिवर्तनों में भौतिक तथा रासायनिक दोनों गुण होते हैं, जो शैलों के संरचनात्मक लक्षणों को बदल देते हैं। कई बार मूल शैल के सरचनात्मक गुण तथा संयोजन दोनों साथ ही साथ प्रभावित हो जाते हैं। कुछ शैलों में कायांतरण इतना प्रभावी होता है कि नया शैल मूल शैल से बिल्कुल भिन्न दिखाई पड़ता है। जल की अभिक्रिया से शैल में से कुछ पदार्थ निकल सकते हैं अथवा उसमें नए पदार्थ जैसे सिलिका, चूना अथवा आयरन ऑक्साइड मिल सकते हैं जिससे अबद्ध बालू (loose sand) बलुआ पत्थर में तथा बलुआ पत्थर क्वार्टज़ाइट में बदल सकते है। कुछ शैल तथा खनिज जो उनमें प्रभावी रूप से पाए जाते हैं उन्हें सारणी 1.3 में दिया गया है।

सारणी 1.3 : कुछ महत्वपूर्ण अवसादी तथा कायांतरी शैल तथा उनमें सामान्यतः प्रभावी रूप से पाए जाने वाले खनिज

अवसादी शैल	प्रभावी खनिज	कायांतरित शैल
चूनापत्थर	कैल्साइट [$CaCO_3$]	संगमरमर
डोलोमाइट	डोलोमाइट $CaMg(CO_3)_2$	संगमरमर
बलुआ पत्थर	क्वार्ट्ज [SiO_2]	क्वार्टजाइट
शेल	मृत्तिकाएं	स्लेट
संगुटिकाश्म[क] (conglomerate)	भिन्न[ख]	नाइस (gneiss)

क) विभिन्न खनिजीय संगठन के छोटे पत्थर संगुटिकाश्म के रूप में आपस में जुड़ जाते हैं।
ख) उपस्थित खनिजों का निर्धारण मूल शैल के द्वारा होता है जो कायांतरण के कारण परिवर्तित हो गया होता है। आग्नेय शैल में सामान्यतः प्रभावी रूप से पाए जाने वाले प्राथमिक खनिज भी पाए जाते हैं।

संगुटिकाश्म (conglomerate): मोटे दानों वाले पत्थर जिनके कण गोलाकार तथा 2mm से अधिक माप के होते है।

हम परिणामतः यह कह सकते हैं कि पृथ्वी पर समस्त जीवन खनिजों में बद्ध है तथा अपक्षयण (उपभाग 1.4.2) के द्वारा जीवन के लिए आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध हो जाते हैं। यहां तक कि समुद्र के जीवों को भी वही पोषक तत्व मिलते हैं जो भूमि पर अपक्षयण के द्वारा निर्मुक्त होते हैं, और फिर नदियों द्वारा समुद्र में ले जाए जाते हैं। इन्हीं कारणों से, हमें यह समझने की आवश्यकता है कि अपक्षयण क्या है और यह कैसे होता है। आप इसके बारे में अगले उपभाग में पढ़ेंगे। उससे पहले निम्नलिखित बोध प्रश्न को हल करने का प्रयत्न कीजिए।

बोध प्रश्न 4

अ) आग्नेय शैल में पाए जाने वाले प्राथमिक खनिजों के नाम बताइए।

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

ब) अवसादी शैल में पाए जाने वाले द्वितीयक खनिजों के नाम बताइए।

....

....

....

1.4.2 अपक्षयण तथा मृदा निर्माण

शैलों के विनाश तथा निर्माण की संयुक्त गतिविधि को **अपक्षयण** कहते हैं। हमारे आसपास प्रतिदिन प्राकृतिक अपक्षयण प्रक्रियाएं होती रहती हैं, जो सतत् रूप से पृथ्वी की सतह पर भू आकृतियों (land forms) की पुनर्व्यवस्था तथा निर्माण करती रहती हैं। अपक्षयण में, पहले शैल भौतिक रूप से छोटे आमाप के शैलों में टूट जाते हैं जो उस एक खनिज के बराबर के हो सकते है जिसके वो बने होते हैं अथवा रासायनिक रूप से नए खनिजों के माप के हो सकते हैं। इसके परिणामस्वरूप इनका अनेक प्रकार से विघटन तथा क्षय होता है। अपक्षयण की रासायनिक तथा भौतिक प्रक्रियाएं एक दूसरे के लिए सहायक होती हैं। जो शैल यांत्रिक रूप से छोटे टुकड़ों में तोड़े जाते हैं उनमें मूल शैल का अधिक **पृष्ठीय क्षेत्रफल** (surface area) होता है जो उसके रासायनिक अपक्षयण की क्षमता को बढ़ा देता है, जबकि शैल का रासायनिक अपक्षयण उसे मृदु कर देता है जिससे उसका भौतिक विघटन आसान हो जाता है।

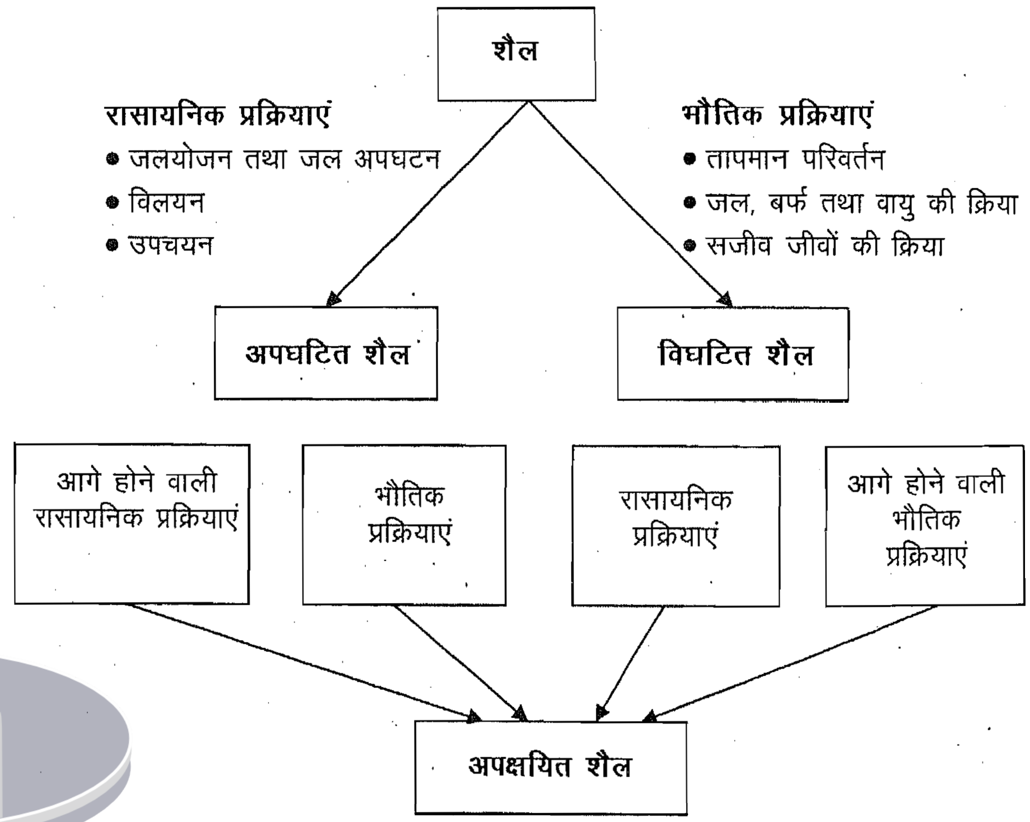

चित्र 1.4 : अपक्षयण के पथ

MAADHYAM IAS

मृदु शैलों में अपक्षयण तथा मृदा विकास लगभग साथ-साथ चलते हैं, जबकि कठोर शैलों में अपक्षयण मृदा विकास से पहले होता है। चित्र 1.4 में दर्शाये गए बदलावों में दो मूल प्रक्रियाएं, **यांत्रिक** (mechanical) तथा **रासायनिक** (chemical) सम्मिलित होती हैं। पहले वाली को **विघटन** (disintegration) तथा बाद वाली को **अपघटन** (decomposition) कहते हैं। इन सभी प्रक्रियाओं का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से है :

यांत्रिक अथवा भौतिक अपक्षयण प्रक्रियाएं

किसी शैल का छोटे टुकड़ों में टूटना भौतिक (physical) अथवा यांत्रिक (mechanical) अपक्षयण कहलाता है। इसका बड़ा उद्भासित (exposed) पृष्ठीय क्षेत्रफल होता है, जो

इसकी अपक्षयण क्षमता (weathering potential) को और अधिक बढ़ा देता है। शैल जल, बर्फ, वायु, पादप एवं जंतुओं की यांत्रिक क्रिया द्वारा अनेकों तरीकों से टूटते और निम्नीकृत (degrade) होते हैं जिनका वर्णन नीचे किया गया है। तापमान का अपक्षयण प्रक्रिया पर परोक्ष (indirect) प्रभाव होता है। तापमान में बदलाव से वास्तव में यांत्रिक तरीके से अपक्षयण होने लगता है। आइए यह समझने की कोशिश करें कि ऐसा कैसे होता है ?

तापमान में परिवर्तन : शैल में उपस्थित विभिन्न खनिज तापमान में बदलाव होने पर भिन्न भिन्न तरीके से व्यवहार करते हैं। दिन में सूर्य की गर्मी के कारण शैल गर्म हो जाने पर फैल जाते हैं तथा रात में ठंडे हो जाने पर सिकुड़ जाते हैं। शैलों के एकांतरी (alternate) तापन तथा शीतलन से एक प्रकार का प्रतिबल (stress) उत्पन्न हो जाता है जो अंततः मृदा में दरार डाल देता है। विश्व के हिमनदीय क्षेत्रों में अथवा वनों की आग के दौरान शैलों को चरम तापमान सहना पड़ता है। चूंकि ताप का चालन (conduction) बहुत धीमा होता है, अतः शैल की सतह तथा उसके भीतर के तापमान में काफी अन्तर होता है इस कारण एक प्रकार का पार्श्व प्रतिबल (lateral stress) पैदा हो जाता है जो शैल की बाहरी परतों को उतार देता है। यह परिघटना **अपशल्कन** (exfoliation) कहलाती है तथा शैल के विदरों (crevices) में उपस्थित जल के जम जाने से तथा अभारन (unloading) अर्थात्, ऊपर स्थित शैलों अथवा अवसादों (sediments) के हट जाने से दबाव मुक्त हो जाने के कारण बढ़ जाती है।

जल,बर्फ तथा वायु की अपघर्षी (abrasive) **क्रिया** : जल, तरल तथा जमी हुई अवस्था दोनों में ही एक प्रमुख यांत्रिक अपक्षयण कारक है। अवसाद युक्त वर्षा जल, गुरूत्वाकर्षण के प्रभाव के तहत गतिशील हिमनद (ice glaciars) तथा धूल कणों से युक्त हवा (धूल भरी आंधी) में उन खनिज कणों का अपघर्षण करने के लिए पर्याप्त काटने की शक्ति होती है जो अपक्षय होते शैल की सतह पर उनके संपर्क में आ जाते हैं। यही नहीं, जल शैलों की छोटी दरारों में प्रवेश कर जाता है जहां वो सर्दियों के मौसम में जम भी जाता है। जमा हुआ जल फैलने पर एक बल उत्पन्न करता है जो खनिजों तथा शैलों को तोड़ने के लिए पर्याप्त होता है। शैल में जल के जमने तथा पिघलने के पुनरावृत चक्र जो **जमने–पिघलने की क्रिया** (freeze-than! activity) अथवा **तुषार क्रिया** (frost action) कहलाते हैं, दरारों को चौड़ा कर देते हैं और शैल को दो टुकड़ों में भी विभाजित कर सकते हैं। शैलों के एकांतरी (alternate) रूप से गीले होने और सूखने से भी परतों का विदारीकरण (disruption) हो सकता है और **अंततः** गीले होने पर परतें फूल जाती हैं।

जल के जम जाने से विकसित होने वाला बल लगभग 1465 मीट्रिक टन (मेगा ग्राम प्रति वर्ग मीटर Mg/m^2) अथवा 150 टन/फुट^2 के बराबर होता है।

शुष्क मौसम में बहुत कुछ तुषार क्रिया जैसी ही एक और क्रिया कार्य करती है, इस प्रक्रिया **में** भौमजल सतह **पर** आ जाता है, जिसके वाष्पीकृत हो जाने पर हेलाइट (halite), कैल्साइट (calcite) तथा जिप्सम (gypsum) जैसे लवण शैलों पर रह जाते है। रंध्रावकाशों (pore paces) में यह **लवण–क्रिस्टल वृद्धि** (salt-crystal growth) खनिज कणों को टुकड़ों में तोड देती है। आग्नेय (igneous) शैलों, जैसे ग्रेनाइट में, जल कणों के बीच के विभंजनों (fractures) में प्रवेश कर जाता है तथा आग्नेय शैल को उसके अलग-अलग कणों में तोड देता है। **a कणिकी विघटन** (granular disintegration) कहलाता है।

विलयन : शैलों में विभिन्न आयन जैसे Ca^{2+}, Mg^{2+}, Fe^{2+}, Cl^-, SO_4^{2-}, PO_4^{3-} आदि पाए जाते हैं। जल में घुलनशील लवण बहते हुए जल की सतत् क्रिया के द्वारा निकल जाते हैं जो शैल में से रिसते रहते हैं। इस प्रक्रिया से शैलों में दरार आ जाती हैं, जिससे वे ठोस पिंड नहीं रह जाते हैं और अंततः टूट जाते है।

MAADHYAM IAS

पादप तथा जंतु , सजीव जीवों जैसे लाइकेन (lichen), कवक (fungi), जीवाणु , नील हरित शैवाल (blue green algae), ब्रायोफाइट आदि की गतिविधि भी अपक्षयण के लिए उत्तरदायी होती है। इसे **जैविक अपक्षयण** (biological weathering) कहा जाता है। लाइकेन शैलों में से पोषक तत्व निकालने में सक्षम होते हैं। ये जल को लंबे समय तक रोके रखने में सक्षम होते हैं जिस दौरान रासायनिक प्रक्रियाएं संपन्न होती हैं उदाहरणतः ऐलुमिनो–सिलिकेट जो शैलों के महत्वपूर्ण घटक होते हैं, वे जल अपघटन तथा कार्बोनेटीकरण (carbonation) की प्रक्रिया द्वारा सरल मृत्तिका कणों में परिवर्तित हो जाते हैं। शैवाल भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि ये प्रकाश संश्लेषण (photosynthesis) द्वारा कार्बनिक तत्व में वृद्धि कर देते हैं। कार्बनिक तत्व तथा CO_2, H_2CO_3 बनाते हैं जिसमें विभिन्न खनिज घुल जाते हैं तथा इसके परिणामस्वरूप शैल टूट जाते हैं। बढ़ती

ब्रायोफाइट : निम्न पादप जो छायादार तथा आर्द्र स्थानों पर उगते हैं।

लाइकेन : दोहरे जीव जिनमें कवक तथा शैवाल सहजीवी संबन्ध में रहते हैं।

ह्यूमस : कार्बनिक तत्व जो अत्यधिक विघटित हो चुका होता है तथा और अधिक परिवर्तन के लिए प्रतिरोधी होता है।

हुई पादप जड़ें कई शैलों को तोड़ने में सक्षम होती हैं। जंतुओं द्वारा निरंतर खुदाई से भी धीरे-धीरे भौतिक विघटन होता रहता है। इसके अतिरिक्त, **ह्यूमस** भौतिक अपक्षयण की धीमी प्रक्रिया को जुताई और खेती के द्वारा तेज गति प्रदान कर देती है।

रासायनिक अपक्षयण प्रक्रियाएं

अपघटन की रासायनिक प्रक्रिया शैलों तथा खनिजों के भौतिक विघटन के साथ आरंभ हो जाती है। रासायनिक अपक्षयण प्रक्रियाओं (chemical weathering processes) में, शैलों के खनिज रासायनिक रूप से आंशिक तौर पर अथवा पूर्णतः परिवर्तित होकर द्वितीयक खनिजों को बनाते हैं। अवक्षेपण (precipitation. वर्षा) के बढने से शैलों में खनिजों का अपक्षयण तेज हो जाता है, जैसा कि चूना पत्थर तथा संगमरमर की बनी गुम्बदो तथा स्मारकों पर दिखाई देता है। वास्तव में, जल रासायनिक अपक्षयण का एक प्रमुख कारक है। रासायनिक अपक्षयण ऑक्सीजन तथा कार्बनिक और अकार्बनिक अम्लों की उपस्थिति में बढ़ जाता है जो पादप तथा जंतुओं के अवशेषों के सूक्ष्मजीवी विखंडन से बनते है। तापमान के बढ़ने से भी रासायनिक अभिक्रिया की गति बढ जाती है जिससे खनिजों का निम्नीकरण हो जाता है। इसीलिए आर्द्र, उष्णकटिबंधी जलवायु में मृदा तथा इमारतें बहुत अधिक अपक्षयित होती हैं।

जल : जैसा कि ऊपर बताया गया है , जल रासायनिक अपक्षयण का महत्वपूर्ण कारक है और जब इसमें घुले हुए लवण तथा अम्ल होते हैं तो यह और भी अधिक प्रभावी हो जाता है। यह विभिन्न प्रकार की रासायनिक अभिक्रियाएं जैसे जल अपघटन (hydrolysis), जलयोजन (hydration) तथा जल विघटन (dissolution) आदि करके खनिजों के निम्नीकरण (degradation), परिवर्तन (alteration) तथा पुनःसंश्लेषण (re-synthesis) को बढ़ा देता है। उदाहरण के लिए, खनिज ऐनहाइड्राइट (anhydrite, $CaSO_4$) जलयोजन पर, रासायनिक रूप से जिप्सम ($CaSO_4.2H_2O$) में परिवर्तित हो जाता है। जिप्सम का उपयोग निर्माण उद्योग में किया जाता है। पोटैशियम युक्त फेल्डस्पार (feldspar), माइक्रोक्लाइन ($KAlSi_3O_8$) पर जल की अभिक्रिया को दर्शाने वाला एक अन्य उदाहरण नीचे दिया गया है :

$$\underset{(*)}{KAlSi_3O_8} + \underset{(\text{द्रव})}{H_2O} \xrightarrow{\text{जल अपघटन}} \underset{(\text{ठोस})}{HAlSi_3O_8} + \underset{(\text{विलयन})}{K^+ + OH^-}$$

$$\underset{(\text{ठोस})}{2HAlSi_3O_8} + \underset{(\text{द्रव})}{11H_2O} \xrightarrow{\text{जल अपघटन}} \underset{(\text{ठोस})}{Al_2O_3} + \underset{(\text{विलयन})}{6H_4SiO_4}$$

$$Al_2O_3 + 3H_2O \xrightarrow{\text{जलयोजन}} \underset{(\text{जलयोजित ठोस})}{Al_2O_3.3H_2O}$$

उपर्युक्त अभिक्रियाएं दर्शाती हैं कि किस प्रकार जल की उपस्थिति में होने वाली विभिन्न अभिक्रियाएं (जल अपघटन, विलयन तथा जलयोजन) माइक्रोक्लाइन को जलयोजित ऐलुमिनियम ऑक्साइड (ऐलुमिना, alumina) में परिवर्तित कर देती हैं, तथा पोटैशियम जो एक प्रमुख पादप पोषक तत्व है तथा सिलिसिक अम्ल (H_4SiO_4) को मृदा में निर्मुक्त करती हैं।

अम्ल विलयन अपक्षयण : जल में हाइड्रोजन आयनों की उपस्थिति से अपक्षयण की गति तेज हो जाती है। वर्षा जल वायु से CO_2 को घोलकर कार्बोनिक अम्ल (carbonic acid), H_2CO_3 बनाता है। जब यह अम्ल ऐसे शैलों के संपर्क में आता है जिनमें चूना, सोडा तथा पोटाश होते हैं, तो इन शैलों के कैल्शियम, मैग्नीशियम तथा पोटैशियम युक्त खनिज कार्बोनेटों में बदल जाते हैं तथा वर्षा जल में घुल जाते हैं। उदाहरण के लिए, चूना पत्थर (limestone) में पाया जाने वाला कैल्साइट (calcite) निम्नलिखित रूप से अभिक्रिया करता है:

$$Ca(OH)_2 \xrightarrow{H_2CO_3} CaCO_3 + H_2O$$

$$\underset{\substack{\text{कैल्साइट}\\(\text{ठोस})}}{2CaCO_3} + \underset{(\text{विलयन})}{H_2CO_3} \rightarrow \underset{(\text{विलयन})}{2Ca(HCO_3)_2}$$

MAADHYAM IAS

क्योंकि बाइकार्बोनेट बहुत अधिक घुलनशील होते हैं, अतः $Ca(HCO_3)_2$ विलयन में चला जाता है। साथ ही, अम्ल वर्षा के कारण मृदा में पाए जाने वाले अधिक प्रबल अम्ल, जैसे नाइट्रिक तथा सल्फ्यूरिक अम्ल तथा मृदा में पैदा होने वाले कुछ कार्बनिक अम्ल भी अपघटन कर देते हैं उदाहरणतः संगमरमर पत्थर निम्न प्रकार से अपघटित होता है :

$$2CaCO_3 + 2H^+ \longrightarrow Ca(HCO_3)_2 + Ca^{2+}$$
$$Ca^{2+} + SO_4^{2-} \longrightarrow CaSO_4$$

हम आपको बताना चाहेंगे कि ताजमहल की सफेदी भी संगमरमर के $CaSO_4$ में परिवर्तित हो जाने के कारण कम होती जा रही है।

उपचयन : उपचयन द्वारा अपक्षयण सामान्यतः उन शैलों में होता है जो ऐसे तत्वों से समृद्ध होते हैं जो आसानी से उपचयित हो जाते हैं उदाहरणतः खनिज में Fe^{2+} के रूप में उपस्थित आयरन Fe^{3+} अवस्था में उपचयित हो जाता है। उपचयन अवस्था में इस परिवर्तन के कारण एक समायोजन (adjustment) हो जाता है जिसके कारण एक कम स्थायी खनिज बनता है जिसका विघटन तथा अपघटन दोनों हो सकते हैं। दूसरे शब्दों में, जब खनिज में से Fe^{2+} जैसे आयन निकल जाते हैं अथवा उपचयित हो जाते हैं तो खनिज संरचना की दृढ़ता (rigidity) कम हो जाती है तथा उसका यांत्रिक विखंडन आसान हो जाता है। यह आगे की रासायनिक क्रियाओं के लिए अनुकूल स्थिति प्रदान करता है। तापमान की अधिकता तथा अवक्षेपण की उपस्थितिं उपचयन की प्रक्रिया को तेज कर देते हैं।

अपक्षयण के पश्चात् मृदा में और अधिक बदलाव आ जाते हैं। ये परिवर्तन वास्तव में, असंख्य तथा जटिल होते हैं। इन परिवर्तनों को करने वाले कारकों के बारे में अगले उपभाग में बताया गया है। आप उनका अध्ययन निम्नलिखित बोध प्रश्नों को हल करने के बाद करेंगे।

बोध प्रश्न 5

अपक्षयण की रासायनिक प्रक्रिया में होने वाली महत्वपूर्ण अभिक्रियाओं के नाम बताइए ।

....

....

....

....

बोध प्रश्न 6

अपक्षयण की जैविक प्रक्रिया में भाग लेने वाले जीवों के नाम बताइए।

....

....

....

....

1.4.3 मृदा निर्माण को प्रभावित करने वाले कारक

शैलों के अपक्षयण से निर्मित होने वाले जनक पदार्थ (parent material) आगे रूपांतरित होने से पूर्व अपनी उत्पत्ति के स्थान से कहीं और परिवहित होकर (transported) पुन निक्षेपित (redeposited) हो जाते हैं। हमें इस बात को स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि अपक्षयण तथा मृदा निर्माण अथवा विकास दो स्पष्ट रूप से भिन्न प्रक्रियाएं नहीं हैं, ये क्रमागत (consecutive) यहां तक कि अतिव्यापी (overlapping) भी हो सकती हैं। वह स्थिति जहां शैल का अपक्षयण समाप्त होता है तथा मृदा निर्माण आरंभ होता है, हमेशा बहुत स्पष्ट नहीं होती है, फिर भी इन प्रक्रियाओं का अंतिम उत्पाद मृदा पिंड ही है। जैसा कि पहले बताया गया है, मृदा विकास अथवा मृदा उत्पत्ति (soil genesis) जैसा कि इसे कहा जाता है, वह अनेकों कारकों जैसे जनक पदार्थ, स्थलाकृति (topography), समय, जलवायु तथा जीवमंडल (biosphere) का परिणाम होती है, जिन्हें संयुक्त रूप से **मृदा**

परिवहित होने वाले जनक पदार्थों का नामकरण उस मुख्य बल के आधार पर किया जाता है जो परिवहन तथा पुनः निक्षेपण के लिए उत्तरदायी होता है। उदाहरण के लिए, वह मृदा जो जल द्वारा परिवहित होती है तथा नदियों के तटों पर निक्षेपित हो जाती है वह **जलोढक** (alluvium) कहलाती है। यदि यह गुरुत्वार्कषण के कारण किसी तीखी ढलान के आधार पर निक्षेपित हो जाती है तो यह **मिश्रोढक** (colluvium) कहलाती है, आदि।

MAADHYAM IAS

रचक **(soil formers)** कहते हैं। जेनी के अनुसार, मृदा निर्माण इन सभी कारकों का फलन होता है तथा इसे निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है :

$$S = f(cl,o,r,p,t...)$$

जहां **S**, मृदा निर्माण जलवायु **(cl)** जीव (o) स्थलाकृति अथवा उच्चावच **(relief)** जनक पदार्थ (p) तथा समय अथवा भूमि की उम्र (t) का फलन है। जेनी ने जोर दिया कि मृदा गुण इन कारकों के आपेक्षिक प्रभाव **(relative influence)** द्वारा निर्धारित होते हैं।' उन्होंने तापमान तथा बर्षा को जलवायु के रूप **4,** वनस्पतिजात् **(flora)** तथा प्राणिजात् **(fauna)** को जीवमंडल जीवों; भौम-जल स्तर **(water table)** की ऊँचाई, ढलान तथा गहराई को उच्चावच (relief) के रूप में विशेषीकृत किया था। जनक पदार्थ एक असमेकित (unconsolidatad) तथा कमोबेश रासायनिक रूप से अपक्षयित खनिज अथवा कार्बनिक पदार्थ होता '8 जिससे मृदाजनिक (pedogenic) प्रक्रियांओं के द्वारा मृदा के समृदा (solum) का निर्माण होता है। इन कारकों को सामान्यतः दो श्रेणियों में विभाजित किया जाता है : **i) निष्क्रिय कारक अथवा निष्क्रिय मृदा रचक (passive factors or passive soil formers) तथा (ii) सक्रिय कारक अथवा सक्रिय मृदा रचक (active factors or active soil formers)** जिनकी व्याख्या नीचे की गई है।

निष्क्रिय कारक अथवा निष्क्रिय मृदा रचक

निष्क्रिय कारक बहुत कुछ मंद गति से क्रिया करने वाले कारक होते हैं और इनमें जनक पदार्थ, स्थलाकृति तथा समय सम्मिलित हैं। आइए, हम निम्नलिखित अनुच्छेदों में प्रत्येक की संक्षिप्त चर्चा करें।

जनक पदार्थ : जनक पदार्थ का अभिप्राय उस प्राथमिक तत्व से है जिससे मृदा का निर्माण होता है। जनक पदार्थ या तो कोई ठोस शैल या अपघटित शैल या कार्बनिक पदार्थ अथवा जल, वायु, हिमनदों, ज्वालामुखियों के निक्षेपण अथवा ढलान से नीचे की ओर आने वाला पदार्थ हो सकता है। सामान्यतः मृदा निर्माण में जलवायु कारकों का प्रभाव इतना प्रभावी होता है कि जनक पदार्थ का प्रभाव दब जाता है यानि, जनक पदार्थ मृदा निर्माण में निष्क्रिय भूमिका निभाता है। विभिन्न शैल अथवा जनक पदार्थों को यदि समान जलवायवी स्थितियों में रखा जाए तो उनसे बनने वाली मृदाएं एक दूसरे से काफी समान होंगी। दूसरी तरफ, समान शैलों अथवा जनक पदार्थों को भिन्न-भिन्न अथवा असमान जलवायवी स्थितियों में रखा जाए तो उनसे बनने वाली मृदाएं भिन्न प्रकारों की होंगी। यद्यपि, विभिन्न जलवायवी स्थितियों में होने वाले परिवर्तनों की प्रकृति कमोबेश समान ही होती है, लेकिन परिवर्तनों का विस्तार क्षेत्र, दर तथा दिशा तथा उनके पूर्ण होने की सीमा जलवायवी तत्वों के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। अतः एक ही मूल शैल अथवा जनक पदार्थ विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न मृदाओं को जन्म देते है।

जनक पदार्थ : मृदा निर्माण के शून्य काल के मृदा निकाय की अवस्था–जेनी

ऐसे उदाहरण भी हैं जहां जलवायु के प्रभाव को जनक पदार्थ द्वारा कम अथवा निष्प्रभावी कर दिया गया है। ऐसी स्थितियों में निर्मित होने वाली मृदाएं, जहां जनक पदार्थ का प्रभाव सर्वोपरि होता है वे **अधस्थ प्रभावित मृदाएं** (endodynamorphic soils) कहलाती हैं, उनके विपरीत **बहिः प्रभावित मृदाएं** (ectodynamorphic soil) वे होती हैं जिनमें जलवायु का प्रभाव सबसे प्रभावी होता है। युवा मृदाएं तथा पहाड़ों की ढलानों पर निर्मित होने वाली मृदाएं अधस्थ प्रभावित मृदाओं के उदाहरण हैं।

स्थलाकृति : भूदृश्य **(landscape)** पर मृदा का स्थान अर्थात् भूमि की स्थलाकृति (topograhy) अथवा **उच्चावच (relief)** मृदा निर्माण का एक प्रमुख निष्क्रिय कारक है क्योंकि यह जलवायवी प्रक्रिया के असर को प्रभावित कर सकता है। जल धारण, जल निकासी (drainage), वाहजल **(runoff),** मृदा अपरदन **(soil erosion)** तथा सूक्ष्म जलवायु अर्थात् , भूमि सतह का सूर्य तथा वायु के लिए उद्‌भासन, द्वारा यह कारक मृदा निर्माण को प्रभावित करता है। यदि शैल बहुत ही सीधी ढ़ाल का होता है तो उसकी धारण क्षमता कम होती है। यदि उसमें गढ़ढे तथा छिद्र होते हैं, तो क्षमता अधिक होती है। पहाड़ों की तलहटी की मृदाओं को ढ़लानों की मृदाओं की अपेक्षा अधिक जल मिल जाता है, तथा ऐसी ढ़लानों की मृदाएं जो सीधे सूर्य के सम्मुख होती है वो उन मृदाओं की अपेक्षा अधिक शुष्क होती हैं जो सम्मुख नहीं होती हैं। यहीं नहीं, खनिज संचय **(accumulation),** पादप पोषक तत्व, वनस्पति का प्रकार, वनस्पति की वृद्धि, अपरदन तथा जलनिकासी भी स्थलाकृतिक उच्चावच पर निर्भर करती है।

मृदा अपरदन : बहते हुए जल, वायु, बर्फ अथवा अन्य भौगोलिक कारकों, के द्वारा भूमि सतह का छँट जाना

MAADHYAM IAS

समय : समय मृदा निर्माण में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि यह मृदा रचक प्रक्रियाओं को जनक पदार्थ पर क्रिया करने तथा उसमें महत्वपूर्ण परिवर्तन करने का अवसर प्रदान करता है। कठोर शैलों को अपक्षयित होने में अधिक समय लगता है जबकि मृदु शैल जल्दी अपक्षयित हो जाते हैं। समय मृदा पिंड की परिपक्वता की मात्रा को भी नियंत्रित करता है। जब मृदा पिंड पर मृदा रचक (soil formers) अपेक्षाकृत अधिक लंबी अवधि तक क्रियाशील रहते हैं और जब मृदा रचक प्रक्रियाएं लगभग पूर्ण हो जाती हैं, तो वह मृदा **परिपक्व मृदा** (mature soil) कहलाती हैं। परिपक्व मृदा में संस्तर (horizons) सामान्यतः सुविकसित होते हैं। युवा अथवा अपरिपक्व मृदा में जिसमें अभी भी मृदा जनिक प्रक्रियाएं हो रही होती हैं, संस्तरों का विभेदीकरण बहुत सुस्पष्ट नहीं होता है। समय के साथ युवा मृदाएं परिपक्व बन जाती हैं तथा परिपक्व मृदाएं कभी-कभी निम्नीकृत हो जाती हैं।

सक्रिय कारक अथवा सक्रिय मृदा रचक

अनेक वर्षों से यह जाना जा चुका है कि **जलवायु** (climate) प्रमुख अवस्था कारकों (state factors) में से एक है जो मृदा निर्माण को नियंत्रित करती है। मृदा जलवायु प्रवृत्तियां जो मृदा आर्द्रता (soil moisture) तथा मृदा तापमान के संयुक्त कारकों में दिखाई देती हैं, वो अनेकों अनुप्रयोगों (applications) के लिए महत्वपूर्ण हैं जिनमें मृदा गुणवत्ता सुधार, परिशुद्धि खेती (precision farming), समाकलित फसल प्रबंधन (integrated crop management) तथा पारिस्थितिक प्रणाली प्रबंधन (ecosystem management) सम्मिलित हैं। जलवायु के अतिरिक्त जीवमंडल जिसमें वनस्पतिजात् तथा प्राणिजात् सम्मिलित हैं, एक महत्वपूर्ण सक्रिय मृदा रचक कारक हैं। आइए, हम निम्नलिखित अनुच्छेदों में मृदा विकास में उनके प्रभाव का संक्षिप्त अध्ययन करें।

वर्षा : उन विभिन्न जलवायु कारकों में जो सक्रिय मृदा निर्माण में भाग लेते हैं, वर्षा अथवा अवक्षेपण (precipitation) सबसे महत्वपूर्ण कारक है। यह जल की आपूर्ति करता है जिसकी जनक पदार्थ में गतिशीलता मृदा पिंड की प्रकृति को काफी हद तक प्रभावित करती है। जब यह जनक पदार्थ के एक भाग से दूसरे में रिसता है, तो यह अपने साथ विलयन में तथा निलंबन (suspension) में पदार्थों को ले जाता है। इस प्रकार ले जाए गए पदार्थ या तो जल की गतिशीलता के रुक जाने पर जनक पदार्थ के दूसरे भाग में पुनः निक्षेपित हो जाते 8, अथवा निक्षालित (leached out) होकर पूर्णतः मृदा पिंड से अलग हो जाते हैं। यह गतिशीलता नीचे की ओर, ऊपर की ओर अथवा पार्श्व में हो सकती है। इसके परिणामस्वरूप, मृदा पिंड के एक भाग में कुछ घटकों की कमी हो जाती है तथा दूसरा भाग उनसे समृद्ध हो जाता है।

जल की गतिशीलता वर्षा की मात्रा तथा प्रकृति द्वारा निर्धारित होती है। जहां वर्षा अत्यधिक अथवा सघन होती है, वहा विलयन में घुल गए घटक अंतस्रवण (percolation) , निक्षालन (leaching) तथा जलवाह (run off) के द्वारा पूरी तरह से बाहर निकल जाते हैं। दूसरी तरफ, यदि वर्षा बहुत सघन नहीं होती है अथवा कम मात्रा में होती है, तो जल की गतिशीलता विशेष रूप से नीचे की ओर की गतिशीलता सीमित हो जाती है तथा घटक मृदा पिंड में ही रह जाते हैं। ये ऊपरी परतों से निचली परतों में रिस जाते हैं जहां वो फिर से निक्षेपित हो जाते है। जब सतह पर मृदा आर्द्रता के वाष्पन से जल ऊपर की ओर आने लगता है, तो घुलनशील पदार्थ उसके साथ ही गतिशील रहते हैं तथा ऊपरी परतों में चले जाते हैं अथवा सतह पर ही आ जाते हैं। इस प्रकार वर्षा उन सभी पदार्थों का पुनः वितरण कर देती है जो मृदा पिंड में घुलनशील होते हैं तथा जो निलंबन में होते हैं।

वर्षा तथा वाष्पन का अनुपात **पी/ई** अनुपात (PIE ratio) कहलाता है, जहां p/पी अवक्षेपण (precipitation) के लिए होता है तथा E/ई वाष्पन (evaporation) दर्शाता है। यदि पी/ई अनुपात अधिक होता है तो अपक्षयण तेजी से होगा। यदि P/E अनुपात कम है तो अपक्षयण धीरे होगा। अन्य कारकों के साथ मिलकर वर्षा **भौमजल स्तर** (water table) की गहराई को भी प्रभावित करती है तथा लंबी काल अवधि में जल की केशिका क्रिया (capillary action) तथा वातन (aeration) को भी प्रभावित करेगी। वर्षा परोक्ष रूप से पादप तथा जतु जीवन की गतिविधियों द्वारा मृदा निर्माण को प्रभावित करती है। उन वनस्पतियों की प्रकृति, प्रकार तथा मात्रा जिनको वर्षा सहारा देती है बदले में वो उसके प्रभावों को रूपांतरित करते हैं।

भौमजल स्तर : भौमजल भूमिजल की ऊपरी सतह अथवा वह स्तर है जिसके नीचे एक असीमित जलभर (unconfined aquifer, जिसमें भौमजल स्तर ऊपरी जल स्तर को बताती है) स्थायी रूप से जल से संतृप्त रहता है।

MAADHYAM IAS

तापमान : तापमान एक अन्य जलवायवी कारक है जो मृदा निर्माण की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। यह P/E अनुपात को प्रभावित करता है। यदि तापमान अधिक होता है P/E अनुपात कम होता है। यदि तापमान कम होता है, P/E अनुपात अधिक होता है। तापमान विभिन्न रासायनिक अभिक्रियाओं की प्रक्रिया को तथा विभिन्न सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को भी नियंत्रित करता है।

जेनी (1941) द्वारा यह अभिकलन किया गया था कि उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में अपक्षयण की दर शीतोष्ण (temperate) क्षेत्रों की दर से तीन गुना तेजी से तथा उत्तर ध्रुवीय (arctic) क्षेत्र से नौ गुना तेजी से होती है।

उच्च तापमान निक्षालन की प्रक्रिया में बाधा डालता है तथा घुलनशील लवणों को ऊपर की ओर गतिशील करता है। जहां कहीं भी, आर्द्रता की स्थितियां अनुकूल होती हैं, वहां उच्च तापमान वनस्पतियों की सघन वृद्धि में सहायक होते है तथा साथ ही सूक्ष्मजीवों की अधिक क्रियाशीलता के कारण कार्बनिक तत्वों के तेजी से अपघटन के लिए उत्तरदायी होते हैं। दूसरी ओर, निम्न तापमान, वाष्पन को कम करके निक्षालन को बढ़ावा देते हैं। ये अपघटन की क्रिया को कम करके कार्बनिक तत्व के सचय (accumulation) में सहायक होते हैं। इस प्रकार तापमान जनक पदार्थ में होने वाली रासायनिक तथा जैविक अभिक्रियाओं की दर को तथा कार्बनिक तत्व के अपघटन की दर को नियंत्रित करता हैं।

जनक पदार्थ में होने वाले परिवर्तनों पर जलवायवी कारकों का प्रभाव वर्षा व तापमान के अनुपात द्वारा निर्धारित होता है। उच्च वर्षा के साथ निम्न तापमान से अनुपात बढ़ जाता है, जिससे अधिक घुलनशीलता तथा अधिक निक्षालन होता है। वायुमंडल को अधिक आर्द्र रखकर, यह वाष्पन को नियंत्रित रखता है। यह ह्यूमस का संचय भी करता है। दूसरी तरफ, अल्प वर्षा के साथ उच्च तापमान से अनुपात कम हो जाता है, जिससे अधिक वाष्पन होता है तथा वायुमंडल शुष्क हो जाता है। निक्षालन (leaching) तथा अवक्षालन (eluviation) सीमित होते हैं तथा लवण अपने विलयनों में से अवक्षेपित हो जाते हैं। वे या तो निचली परतों में वहीं जमा हो जाते हैं जहां निक्षेपित होते हैं अथवा जल के ऊपर की ओर गतिशील होने पर सतह पर या उसके नजदीक ले आए जाते हैं।

जीवमंडल : इन दो प्रकार के कारकों के साथ ही जीवमंडल (biosphere, सजीव पर्यावरण) भी एक अन्य महत्वपूर्ण सक्रिय मृदा रचक कारक है। सजीव पादपों तथा जंतुओं की गतिविधियां तथा उनके कार्बनिक व्यर्थ पदार्थों तथा अवशेषों के अपघटन का मृदा विकास पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। मृदा में ऐसे विभेद जो प्राथमिक रूप से वनस्पतियों में विभेद के परिणामस्वरूप होते है, वे विशेष रूप से संक्रमण क्षेत्रों (transition) में अधिक स्पष्ट होते हैं जहां वृक्ष तथा घासें मिलती हैं।

बोध प्रश्न 7

समय और तापमान किस प्रकार मृदा निर्माण में कार्य करते हैं ?

....

....

....

1.5 मृदा का वर्गीकरण

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

किसी भी वर्गीकरण का उद्देश्य उस क्षेत्र के ज्ञान तथा विचारों को श्रेष्ठ संभव तरीके से संगठित करना है जिससे विभिन्न गुणों के बीच संबन्धों को समझा जा सके साथ ही ये भावी विकास के लिए साधन प्रदान करता है। मृदाओं का वर्गीकरण तभी से आरंभ हो गया था जब मानव ने उसे पादप वृद्धि के लिए माध्यम के रूप में उपयोग में लाना आरंभ कर दिया था। उस पहलू से वह कुछ फसलों के लिए **अच्छी** (good) अथवा **उत्पादक** (productive) तथा कुछ के लिए **खराब** (bad) अथवा **अनुत्पादक** (nonproductive) होती थी, अथवा इन्हें भारी मृदा (heavy soil) तथा हल्की मृदा (light soils) इत्यादि के रूप में विभेदित किया जाता था। भूवैज्ञानिक जनक पदार्थ (geological parent material) के अनुसार इसे बालुई (sand) अथवा मृत्तिका (clayey) मृदाओं आदि के रूप में श्रेणीबद्ध किया गया था। मृदाओं की प्राकृतिक पिंडों के रूप में अवधारणा को सबसे पहले रूसी वैज्ञानिक वी.वी. डोकूशेव (V.V.Dokuchaev) तथा उनके सहयोगियों द्वारा विकसित किया गया था, जब उन्होंने 1883 में जलवायु, वनस्पति तथा मृदा अभिलक्षणों के बीच संबन्धों पर

ध्यान दिया । अनेक वर्षों के लंबे अंतराल के बाद, यू.एस.डिर्पाटमेन्ट ऑफ एग्रीकल्चर (U.S. Department of Agriculture) के मृदा सर्वेक्षण कार्यकर्ताओं (soil survey staff) ने दूसरे देशों के मृदा वैज्ञानिकों के सहयोग से मृदा वर्गीकरण की एक नए बोधगम्य (comprehensive) प्रणाली को विकसित किया जो मृदा के गुणों पर आधारित थी। यह मृदा वर्गीकरण प्रणाली जिसे अनेक देशों द्वारा उपयोग में लाया जाता है, उसे **मृदा वर्गिकी** (soil taxonomy) कहते हैं, इसे मूल रूप से 1975 if मृदा सर्वेक्षण कार्यकर्ताओं द्वारा प्रकाशित किया गया था। भारत में, हम लोगों ने भी उसी वर्गीकरण प्रणाली को अपनाया है।

मृदा वर्गिकी की प्रणाली मृदा गुणों पर आधारित होती है जो मृदा जनन अर्थात् मृदा के निर्माण के तरीके पर निर्भर करती है। इस कार्य के लिए अनेकों गुणों जैसे वर्ण, गठन, संरचना (texture), pH, कार्बनिक तत्व, आर्द्रता, धनायन विनिमय क्षमता (cation exchange capacity), विनिमयकारी आयन (Na, K, Ca, Mg), निष्कर्षणीय अम्लता (extractable acidity) तथा तापमान आदि पर ध्यान दिया गया है। इस सरल प्रमाणिक आधार पर मृदाओं को छह समूहों अथवा श्रेणियों में व्यवस्थित किया गया है जिन्हें उनके पदानुक्रम (hierarchy) के अनुसार नीचे वर्णित किया गया है।

मृदा वर्गिकी का पदानुक्रम
गण
उपगण
बृहत्समूह
उपसमूह
कुल
श्रेणी

गण (order) : सामान्यीकरण के इस उच्चतम स्तर पर मृदाओं को संस्तर (horizon) विकास की मात्रा तथा उपस्थित संस्तरों के प्रकार के आधार पर विभेदित किया जाता है। ग्यारह गण हैं जिनके नामों का अंत सोल (sol) शब्द पर होता है (लेटिन, *सोलम*–मृदा)।

उपगण (suborder) : भौतिक, रासायनिक तथा आकारिकीय गुणों के आधार पर गणों को उपगणों if विभाजित किया गया है जो जलाक्रांति (waterlogging) तथा वनस्पति की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति को प्रदर्शित करते हैं। प्रत्येक गण में अनेकों उपगण होते हैं तथा 47 उपगणों की अब तक पहचान की जा चुकी है।

बृहत्समूह (greatgroup) : इस श्रेणी if वो मृदाए आती है जिनके समान क्रम में समान प्रकार के संस्तर होते हैं जिनका तापमान, आर्द्रता प्रवृत्ति समान होती है तथा उनकी आधार स्थिति (base status) भी समान होती है। 230 से अधिक बृहत् समूहों की पहचान की जा चुकी है।

उपसमूह (great group) : तीन प्रकार I उपसमूहों की पहचान की गई b, ये **टिपिक** (typic) समूह, **इंटरग्रेड** (intergrades) तथा **एक्स्ट्राग्रेड** (extragrades) हैं। टिपिक समूह में बृहत्समूह के मुख्य गुण प्रदर्शित होते हैं इंटरग्रेड उपसमूह में एक से अधिक बृहत्समूह के गुण प्रदर्शित होते हैं, जबकि एक्स्ट्राग्रेड उपसमूह में वे गुण होते हैं जो किसी भी बृहतसमूह के नहीं होते हैं। 1200 से अधिक उपसमूहों की पहचान की जा चुकी है।

कुल (family) : इस श्रेणी if मृदाओं को उन भौतिक तथा खनिजीय गुणों के आधार पर साथ समूहित किया जाता है जो पादप वृद्धि के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। मृदा गठन, तापमान प्रवृत्ति (regime), खनिज विज्ञान (mineralogy) तथा जडों की सुगम्यता के लिए मृदा की मोटाई जैसे गुणों के आधार पर, 6600 मृदा कुलों की पहचान की जा चुकी है।

श्रेणी (series) : मृदा श्रेणी वर्गीकरण की सबसे विशिष्ट इकाई है जिसमें वो मृदाए होती हैं जो सभी प्रमुख प्रोफाइल अभिलक्षणों में समान होती हैं। धारणात्मक रूप से यह संलग्न पॉलिपेडान (contiguous polypedon) को प्रदर्शित करती है, फिर भी, क्षेत्र में पॉलीपेडान के समुच्चय (aggregates) तथा उनसे संबन्धित अंर्तवेशन (inclusions) सम्मिलित हो सकते हैं। क्षेत्र मृदा सर्वेक्षणों में मृदा श्रेणियों को सतह मृदा गठन अथवा अन्य गुणों के आधार पर मृदा प्रावस्थाओं (soil phases) में भी विभाजित किया जा सकता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

1.5.1 भारत की मृदा प्रकारें

भारतीय मृदा प्रकारों का विवरण उन लोगों की जानकारी के लिए दिया गया है जो इनके बारे में कुछ अधिक जानना चाहते हैं।

प्राचीन काल में मृदाओं को **उर्वर** (fertile) तथा **अनुर्वर** (unu vara) अथवा **ऊसर** (बंजर, barren) के रूप if वर्गीकृत किया जाता था। उसके बाद मृदाओं को किसानों द्वारा स्थानीय नाम दिए जाने वाले लगे जैसे मातासी (Matasi). रेह (Reh), रेगूर (Regur), चोपन (Chopan) आदि। आधुनिक काल if इन्हें भूवैज्ञानिक दृष्टि से भूवैज्ञानिकों द्वारा वर्गीकृत किया जाता है। भारत में पाए जाने वाले प्रमुख मृदा समूहों की संक्षिप्त व्याख्या निम्नलिखित

अनुच्छेदों में की गई है। इन्हें यहां इसलिए बताया गया है जिससे आपको यहां पाई जाने वाली किस्मों के बारे में पता चल जाए।

जलोढ़ मृदाएं (Alluvial soils) : जलोढ मृदाए भारत के सबसे बडे भाग (लगभग 700,000 km^2) में फैली हुई हैं जिनमें राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार तथा पश्चिम बंगाल के बड़े भाग सम्मिलित हैं। ये पश्चिमी आसाम तथा उत्तर गुजरात तक में पाई जाती हैं। कृषि की दृष्टि से ये मृदाएं सबसे महत्वपूर्ण हैं। परिभाषा के अनुसार, जलोढ़ मृदाएं विभिन्न माध्यमों जैसे जल, बर्फ, वायु तथा गुरूत्वाकर्षण के द्वारा जनक पदार्थ के परिवहित हो जाने से निर्मित होती हैं, यद्यपि सिंधु गंगा मैदानों के पश्चिमी भाग में विकसित होने वाली मृदाएं, पूर्वी क्षेत्र की मृदाओं से स्पष्ट रूप से भिन्न होती हैं। पंजाब तथा उससे सटे हुए उत्तर प्रदेश की अर्धशुष्क जलवायु के कारण वहां उन स्थानों पर लवणीय तथा क्षारीय मृदाएं विकसित हो गई हैं जहां कहीं भी उप-मृदा जल उच्च है, इसके विपरीत पश्चिम बंगाल की अधिक आर्द्र जलवायु में ऐसी मृदाएं नहीं पाई जाती हैं। पश्चिमी क्षेत्र में चूने के कार्बोनेटों (lime carbonates) का संचय भी अधिक है।

जलोढ़ मृदाएं अपनी चरम गहराई, जो कि अक्सर कुछ सौ फुट होती है तथा धूसर अथवा धूसर-भूरे रंगों के द्वारा अभिलक्षणित होती है। इनका गठन बालुई दुमट (sandy loam) से मृत्तिका दुमट (clay loam) तक भिन्न हो सकता है। इनकी संरचना भी परिवर्तनशील होती हैं, जो बालुई मृदाओं में अबद्ध (loose), विवृत (open) तथा मुक्त जलनिकासी (free draining) वाली तथा बहुत सी मृत्तिका मृदाओं में संहत (compact) तथा अप्रवेश्य (impervious) होती है। अपरिपक्व होने के कारण इनमें स्पष्ट संस्तर विभेदन नहीं होता है। कुछ स्थानों **m,** फिर भी बालुई तथा मृत्तिकामय (clayey) पदार्थों की एकांतरी परतों के निक्षेपण से भिन्न परतें बन जाती हैं यद्यपि वे वास्तविक संस्तर नहीं होते है।

ये मृदाएं भारत की सबसे उर्वर मृदाएं मानी जाती है, इनमें नाइट्रोजन, फ़ॉस्फ़ोरिक अम्ल तथा ह्यूमस की कमी होती है पर इनमें चूने की आपूर्ति भरपूर होती हैं। इनमें से कुछ मृदाओं में पोटाश की कमी भी दिखाई पड़ती है। इनका pH 7.0 से 8.0 तक हो सकता है। प्रमुख मृदा खनिज इलाइट (illite) तथा क्लोराट (chlorite) होते हैं।

काली मृदाएं (Black soils) ये मृदाए मुख्य रूप से अर्ध शुष्क स्थितियों में निर्मित होती हैं तथा अनेकों शैल निर्माणों के बाद उत्पन्न होती हैं। बेसाल्टी ट्रेप (basaltic trap) सबसे सामान्य शैल है जिससे उनकी उत्पत्ति हुई लगती है। जैसा कि इनके नाम से स्पष्ट है ये मृदाएं काले अथवा गहरे भूरे रंग की होती हैं। फिर भी, इनका रंग मरमोड (murmad) मृदाओं में हल्का भूरा तथा नर्मदा और ताप्ती की गहरी जलोढ़ मृदाओं में काला भूरा होता है। इनकी गहराई भी काफी भिन्न-भिन्न होती है, अत्यधिक अपरदित (eroded) मृदा में कुछ इंच से लेकर कुछ फ़ुट तक, जो कभी -कभी 20 फ़ुट से अधिक मोटाई की हो जाती है खासतौर पर नदियों के तटों पर। इनमें वो मृदाएं सम्मिलित हैं जिन्हें स्थानीय रूप से **रेगूर** (Regur) अथवा **काली कपास** (black cotton) मृदा कहते हैं। इनका गठन बालुई दुमट से भारी मृत्तिका जैसा हो सकता है।

कुल मिलाकर इन मृदाओं में उर्वरता घटक कम होते हैं क्योंकि इनमें नाइट्रोजन, फॉस्फ़ोरस अम्ल तथा ह्यूमस की कमी होती है। ये चूने से समृद्ध होती हैं और इनमें से अधिकांश में पर्याप्त मात्रा में पोटाश होता है। ये विस्तृत रूप से वितरित होती हैं तथा महाराष्ट्र, सौराष्ट्र तथा मध्यप्रदेश के विस्तृत भागों तक फैली हुई हैं। ये राजस्थान, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु तथा कर्नाटक के कुछ भागों में भी पाई जाती हैं।

MAADHYAM IAS

मरूस्थली मृदाएं (Desert soils) : ये मृदाएं तप्त मरूस्थली क्षेत्रों में पाई जाती हैं, जो भारत के उत्तर–पश्चिमी भाग में लगभग 290,000 km तक फैली हुई हैं। ये राजस्थान का अधिकांश भाग, हरियाणा तथा पंजाब का दक्षिणी भाग तथा गुजरात का उत्तरी भाग निर्मित करती हैं। मृदा में अधिकांश वो बालू है, जिसे प्राचीन समुद्र तटों से व्युत्पन्न माना जाता है। इनमें बड़ी मात्रा में घुलनशील लवण तथा भिन्न अनुपातों में चूना होता है। इनका pH अधिक होता है, तथा इनमें उर्वरता घटक बहुत कम होते हैं।

वन तथा पहाड़ी मृदाएं (Forest and hill soils) : हिमालयी क्षेत्र की पहाड़ी तथा वन मृदाए आर्द्र शीतोष्ण (humid temperate) क्षेत्रों में विकसित हुई मृदाओं के सदृश ही दिखाई

पड़ती हैं तथा इनमें **पॉडसोलीकृत** (podsolised) मृदाए, ब्राउन अर्थ (brown Earths) तथा चरागाह मृदाए (meadow soils) भी सम्मिलित पाई जाती 8।

लैटेराइट तथा लैटेराइटी मृदाएं (Laterite and lateritic soils) : ये मृदाए कुछ प्रकार के शैलों. जिनमें क्षारीय तथा अम्लीय दोनों हैं, के एकांतरी नम तथा शुष्क मौसमों की जलवायवी स्थितियों से व्युत्पन्न होती हैं। ये अधिकांशतः उच्च वर्षा वाले क्षेत्रों में पाई जाती हैं। ये हल्के गठन की होती हैं तथा इनमें एक खुली मुक्त जल निकासी संरचना होती है। ये अधिकतर अधिक वर्षा वाले स्थानों पर पाई जाती हैं तथा नमी को नहीं रोक पाती हैं। मृदा प्रोफाइल में व्यवहारिक रूप से कोई संस्तर विभेदन नहीं होता है। इनमें चूने की कमी होती है तथा इनकी अभिक्रिया अल्प से औसत अम्लीय होती है। pH 5.0 से 6.0 के बीच होता है।

ऊँचे स्तरों पर बनी लैटराइटी मृदा में पीलापन लिए लाल वर्ण होता है, इनमें बजरी (gravel) $7 मात्रा अधिक होती है तथा मृदा में सभी उर्वरता घटक कम होते हैं। जो निम्न स्तरों पर बनती हैं उनका वर्ण अपेक्षाकृत गहरा होता है, ऐसा संभवतः अधिक ह्यूमस एकत्रित हो जाने के कारण होता है। इनका गठन भी थोड़ा बारीक होता है तथा जल निकासी भी काफी अच्छी होती है। ये मृदाएं महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा केरल के पूरे पश्चिमी तट पर, दक्खिन की पहाड़ियों के ऊपर, मध्यप्रदेश तथा उड़ीसा में पूर्वी घाटों पर पाई जाती हैं।

पीटमय तथा दलदली मृदाएं (Peaty and marshy soils) . पीटमय मृदाए आर्द्र क्षेत्रों में पाई जाती हैं तथा इनमें उच्च कार्बनिक तत्वों का संग्रह होता है। ऐसी पीटमय मृदाएं जिनमें पर्याप्त मात्रा में घुलनशील लवण होते हैं, केरला के कुछ भागों में पाई जाती हैं तथा स्थानीय रूप से **'कारी'** (kari) मृदा कहलाती है। मानसून के समय मृदा जल में निमग्न (submerged) हो जाती है। मानसून के बाद, जल कम हो जाता है तथा चावल की खेती हो जाती है। मृदा काली, मृत्तिकामय तथा अत्यधिक अम्लीय (pH 3.5 जितना कम) होती है, तथा इसमें 10 से 40 प्रतिशत कार्बनिक तत्व होते हैं। अम्लता सल्फ्यूरिक अम्ल के बनने तथा कार्बनिक तत्व के अवायवीय स्थिति में अपघटन के कारण होती है। इसमें मुक्त ऐलुमिनियम तथा फेरस सल्फेट उपस्थित होते हैं। इस प्रकार की दलदली मिट्टी उड़ीसा के तटीय भागों, पश्चिम बंगाल के सुन्दरवन क्षेत्र में, उत्तरी बंगाल के केन्द्रीय भाग में तथा तमिलनाडु के दक्षिण पूर्व तट पर पाई जाती है।

लाल मृदाएँ (Red soils) : लाल मृदाए मोरचाम (rusty) लाल वर्ण द्वारा पहचानी जाती है जो अधिकांश आयरन के विभिन्न ऑक्साइडों की उपस्थिति के कारण होता है। ये या तो *स्वस्थाने (in situ)* बनते हैं अथवा निम्न स्तर पर बह कर आ गए शैलों के अपघटन के उत्पादों से बनते हैं। इनमें वो मृदाएं सम्मिलित हैं जिन्हें स्थानीय रूप से लाल दुमट (loam), लाल बालुई (sandy) तथा लाल जलोढ (alluvium) के नाम से जाना जाता है। इनके प्रमुख लक्षण इनका हल्का गठन, छिद्रमय संरचना, चूने की अनुपस्थिति तथा निम्न घुलनशील लवण हैं। इनमें सामान्यतः उर्वरता घटकों जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश, तथा चूने की मात्रा कम होती है तथा कार्बनिक तत्व की बहुत अधिक कमी होती है। इनकी अभिक्रिया उदासीन होती है व pH 7.0 से 7.5 के बीच होता है। इन मृदाओं में पाया जाने वाला प्रभावी मृत्तिका खनिज केओलाइनाइट (kaolinite) है।

लाल मृदाएं देश के बहुत बड़े भाग में फैली हुई हैं तथा लगभग सभी राज्यों में पाई जाती हैं। व्यावहारिक रूप से पूरा तमिलनाडु, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश के कुछ भाग, मध्य प्रदेश, उड़ीसा तथा छोटा नागपुर के कुछ भागों में लाल मृदा पाई जाती है। उत्तर में ये पश्चिम बंगाल के वीरभूमि जिले, बिहार के संथाल परगना, उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर, झांसी तथा हमीरपुर जिलों में तथा राजस्थान के पूर्वी अर्धभाग तक फैली हुई है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

लवणीय तथा क्षारीय मृदाएं (Saline and alkaline soils) : लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं को विभिन्न नामों से जाना जाता है जैसे उत्तर में **रेह** (Reh), **कल्लार** (Kallar), पश्चिम में **खार** (Khar) **खजान** (Khajan) तथा दक्षिण में **कार्ल** (Karl)। सामान्यतः इन मृदाओं में सोडियम , कैल्शियम तथा मैग्नीशियम के लवण पाए जाते हैं। इनकी उत्पत्ति मुख्यतः उपमृदा जल के केशिकीय (capillary) रूप से ऊपर आ जाने तथा साथ ही घुलनशील लवणों के निचली परतों से सतह पर आ जाने के कारण हुई है। इनमें से अधिकांश मृदाएं लवणीय हैं लेकिन कुछ लवणीय क्षारीय तथा क्षारीय मृदाएं हैं। ये मुख्यतः दक्षिण तथा

पश्चिम में काली मिट्टी के क्षेत्रों में, उत्तर में सिंधुगंगा जलोढ़ में तथा पूरे पूर्वी तट पर डेल्टा क्षेत्रों में तथा तटीय क्षेत्रों में पाई जाती हैं। ये मृदाएं लवणीय मृदाओं में उच्च लवणांश (salt content) के द्वारा तथा क्षारीय मृदाओं में उच्च सोडियम संतृप्तता तथा उच्च pH द्वारा पहचानी जाती है। इनमें से अधिकांश मृदाओं में चूने की मात्रा काफी होती है।

तराई मृदा (Tarai soils) : हिन्दी में "तराई" शब्द का अर्थ है नम, जो यह संकेत देता है कि तराई मृदाओं की प्रवृत्ति नम होती है तथा भौमजल स्तर स्थितियां वर्ष के अधिकांश भाग में उच्च होती हैं। तराई मृदाएं गिरिपाद (foot hill) मृदाएं होती हैं तथा जम्मू और काश्मीर, उत्तर प्रदेश, बिहार तथा पश्चिम बंगाल में हिमालय के गिरिपादों में विभिन्न चौड़ाई की पट्टिकाओं के रूप में फैली हुई हैं। प्राकृतिक स्थितियों में मृदाएं सघन वनस्पतियों से युक्त हैं। इन मृदाओं की कुछ प्रकारें बहुत ही उत्पादक हैं।

मृदाओं का गठन बालुई दुमुट से गादमय दुमटी है। मृदाएं उर्वर हैं तथा उचित जलनिकासी के साथ उत्पादक बन जाती हैं। तराई क्षेत्र की अपेक्षाकृत शुष्क मृदाएं **भाभर** (Bhabhar) मृदाएं कहलाती हैं।

पश्चिमी बंगाल में, ये मृदाए पहाड़ी नदियों के द्वारा नीचे ले जाई जाती हैं तथा इनके निक्षेपण मुख्यतः बालुई, अपरिष्कृत ह्यूमस प्रकार के तथा गहरे काले से घूसर काले रंगों के होते हैं। मृदाए अम्लीय होती हैं (**pH** 4.7 से 5.8), इनमें क्षारों तथा उपलब्ध पादप पोषक तत्वों की कमी होती है।

बोध प्रश्न 8

पीटमय तथा दलदली मृदाएं अम्लीय क्यों होती हैं ?

....

....

....

1.6 सारांश

आइए अब हम मृदा की प्रकृति तथा निर्माण के बारे में कुछ महत्वपूर्ण बातों को संक्षेप में दोहराएं जिनका वर्णन इस इकाई में किया गया है।

विभिन्न व्यक्तियों के लिए मृदा का अर्थ भिन्न होता है तथा मृदा की एक विशिष्ट परिभाषा देना कठिन है। विभिन्न परिभाषाओं, जिनमें U.S.D.A के मृदा सर्वेक्षण कार्यकर्ताओं द्वारा दी गई परिभाषा भी सम्मिलित है, की व्याख्या की जा चुकी है। मृदा एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है जिसका अध्ययन करने की आवश्यकता है जिससे इसका श्रेष्ठ संभव तरीके से उपयोग किया जा सके। मृदा का अध्ययन करने के लिए दो विचारधाराएँ हैं, एक के अनुसार मृदा विज्ञानी (Pedologists) मृदा का अध्ययन एक प्राकृतिक पिंड के रूप में करते हैं जबकि दूसरी के अनुसार मृदा विज्ञानी (Edaphologist) मृदा के विभिन्न गुणों को पादप उत्पादन के संबन्ध में देखते हैं।

MAADHYAM IAS

मृदा आकारिकी मृदा पिंड, उसके प्रगटन, लक्षण तथा सामान्य अभिलक्षणों का वर्णन है। मृदा की ऊर्ध्वाधर काट से मृदा प्रोफाइल का अध्ययन करने पर स्पष्ट परतें दिखाई पड़ती हैं जिन्हें संस्तर कहते हैं। इन संस्तरों में अपेक्षाकृत समान भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुण होते हैं जो उन प्रक्रियाओं के बारे में जानकारी देते हैं जिनसे उनका निर्माण होता है। इन संस्तरों की स्थिति वर्ण विभेदन के आधार पर होती है। मन्सेल संकेतन – एक मृदा वर्ण व्यवस्था को जो वर्णों की तीन भिन्नताओं, वर्णिमा, मान तथा संतृप्ति, पर आधारित होती है इन संस्तरों के लिए दर्शाया जाता है।

प्रोफाइल में विभिन्न संस्तरों तथा परतों की पहचान कुछ नामों द्वारा की जाती है। इस कार्य के लिए बड़े अक्षर, छोटे अक्षर तथा अरबी संख्याओं का उपयोग किया जाता है। प्रमुख संस्तर तथा मृदा की परतों को बड़े अक्षरों O, A, E, B, तथा R द्वारा प्रदर्शित किया जाता

है जबकि प्रमुख संस्तर में अधीनस्थ विभाजनों की पहचान छोटे अक्षरों का प्रयोग करके की जाती है जो विशिष्ट गुणों को प्रदर्शित करते हैं।

मृदा का निर्माण लंबे समय तक अनेकों कारकों की परस्पर क्रिया का परिणाम होता हैं। मृदा की उत्पत्ति तथा निर्माण के अध्ययन अर्थात् मृदा उत्पत्ति के द्वारा मृदा विकास की विभिन्न प्रक्रियाओं तथा उनके गुणों तथा उत्पादकता में भिन्नताओं के कारणों को समझने में मदद मिलती है। मृदा उत्पत्ति में दो स्पष्ट प्रावस्थाएं होती हैं, पहली प्रावस्था में भौतिक तथा रासायनिक अपक्षयण प्रक्रियाएं शैलों तथा खनिजों का विघटन तथा अपघटन करती हैं जबकि दूसरी प्रावस्था में अनेकों कारक जिन्हें संयुक्त रूप से मृदा रचक कहा जाता है मृदा का विकास करते हैं। जलवायु तथा सजीव जीव भी जनक पदार्थ कर क्रिया करते हैं, जबकि स्थलाकृति रूपांतरकारी प्रभाव डालती है, तथा समय मृदा रचक प्रक्रियाओं को होने देता है।

इसके परिणामस्वरूप मृदा प्रकारों में संभावित भिन्नता बहुत अधिक हो जाती है तथा इन सबका अध्ययन करना काफी कठिन हो जाता है। मृदा वर्गिकी में मृदाओं का उनके गुणों के आधार पर वर्गीकरण करने का प्रयास किया जाता है। सभी संभव मृदा प्रकारों को निम्नलिखित पदानुक्रम के साथ छह समूहों अथवा श्रेणियों में रखा गया है : गण, उपगण, बृहत्समूह, उपसमूह कुल तथा श्रेणी।

भारत की मृदा प्रकारों को नौ प्रमुख समूहों में विभाजित किया गया है। जलोढ़ मृदाएं, काली मृदाएं, मरूस्थली मृदाएं, वन तथा पहाड़ी मृदाएं, लैटेराइट एवं लैटेराइटी मृदाएं, पीटमय तथा दलदली मृदाएं, लाल मृदाएं, लवणीय तथा क्षारीय मृदाएं तथा तराई मृदाएं।

1.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. कायांतरित शैलों के निर्माण के लिए कौन से प्रमुख कारक उत्तरदायी होते हैं?
2. अपक्षयण की यांत्रिक अथवा भौतिक प्रक्रिया में सम्मिलित मुख्य अपक्षयण कारकों को सूचीबद्ध कीजिए।
3. मृदा संस्तरों का वर्णन कीजिए तथा मृदा के गुणों का निर्धारण करने में उनके महत्व को समझाइए।
4. प्राथमिक तथा द्वितीयक खनिजों में भेद बताइए तथा प्रत्येक के उदाहरण दीजिए।
5. समझाइए, किस प्रकार जल तथा तापमान शैलों तथा खनिजों के भौतिक अपक्षयण में परस्पर क्रिया करते हैं।
6. पेडान तथा पॉलिपेडान शब्दों की व्याख्या कीजिए।

1.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1. मृदा विज्ञान (पीडोलोजी) का संबंध मृदाओं के संयोजन, वितरण तथा निर्माण के अध्ययन से है जिस रूप में वो प्रकृति में पाई जाती हैं। दूसरी तरफ मृदा विज्ञान (इडेफोलोजी) मृदा के गुणों का पादप उत्पादकता के पहलू से अध्ययन है।

2. क) मृदा वर्गीकरण में मृदा का वर्ण महत्वपूर्ण होता है, जैसे मृदा गुणों को अभिलक्षणित करने, मृदा के गुणों की व्याख्या करने, तथा मृदा निर्माण को समझने में ।

ख) संतृप्ति

3. i) कार्बनिक संस्तर (O) के साथ कार्बनिक पदार्थ जिसका अपघटन हुआ है (a) तथा जिसका विक्षोभ अथवा खुदाई हुई **it** (p)।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

ii) खनिज संस्तर (B) जो मृत्तिका (t) तथा कैल्शियम कार्बोनेट (k) के संचय के लिए पर्याप्त रूप से स्थायी रहा हो।

4\. क) क्वार्ट्ज (SiO_2) फेल्डस्पार, एम्फीबोल, पाइरॉक्सीन तथा माइका आग्नेय शैलों के सबसे सामान्य प्राथमिक खनिज हैं।

ख) केल्साइट ($CaCO_3$), डोलोमाइट [$CaMg(CO_3)_2$], क्वार्ट्ज तथा मृत्तिकाएं अवसादी शैलों में पाए जाने वाले द्वितीयक खनिज हैं।

5\. जलयोजन, जल अपघटन, उपचयन, अपचयन तथा कार्बोनेटीकरण।

6\. जीवाणु, कवक, शैवाल, ब्रायोफाइट तथा लाइकेन।

7\. मृदा निर्माण में लगने वाला समय कुछ मृदाओं में अधिक तथा कुछ में कम हो जाता है। कठोर शैलों को मृदु शैलों की तुलना में अधिक समय लगता है तथा उसी के अनुसार परिपक्व मृदा का निर्माण जिसमें स्पष्ट संस्तर विकसित होते हैं वह शैल की प्रकृति पर निर्भर करता है। तापमान भी एक जलवायवी कारक है, जो P/E अनुपात को प्रभावित करके कार्य करता है। उच्च तापमान पर अनुपात कम होता है तथा निम्न तापमान पर ये अधिक होता है। यह रासायनिक अभिक्रियाओं को प्रभावित करके तथा विभिन्न सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को प्रभावित करके कार्य करता है। वर्षा भी एक अन्य जलवायवी कारक है जो तापमान के साथ मिलकर, मृदा विकास की प्रक्रिया को निर्धारित करता है।

8\. अम्लता कार्बनिक पदार्थ के अवायवीय स्थिति में अपघटन तथा सल्फ्यूरिक अम्ल के बनने के कारण होती है।

अंत में कुछ प्रश्न

1\. जल, ताप अथवा दबाव अथवा इनमें से किन्हीं दो की अथवा तीनों की संयुक्त क्रिया।

2\. तापमान, जल का दबाव तथा सजीव जीव।

3\. संस्तर O, A, E, B तथा C हैं। ये मृदा रचक क्रिया के यानि मृदा की उत्पत्ति के परिचायक है। संस्तर किसी मृदा विशेष के लिए विशिष्ट होते हैं। संस्तर विभिन्न गुणों को परिभाषित करते हैं जैसे क्या कार्बनिक तत्व का संचयन अधिक है, खनिज अधिक है, अथवा दोनों का मिश्रण है ?

4\. प्राथमिक खनिज पृथ्वी के निर्माण के दौरान पिघले हुए लावा के ठोस हो जाने के कारण बने हैं उदाहरण क्वार्ट्ज, फेल्डस्पार। द्वितीयक खनिज प्राथमिक खनिजों के रासायनिक विखंडन के पुनः क्रिस्टलीकृत उत्पाद हैं उदाहरणतः सिलिकेट, आयरन ऑक्साइड।

5\. दिन के समय शैल गर्म हो जाते हैं तथा रात में ये ठंडे हो जाते हैं जिसके कारण तापमान में प्रत्येक बदलाव के साथ विभेदक प्रतिबल विकसित होता है और अंततः शैल में दरार पड़ जाती है। शैल की बाहरी सतह भीतरी भाग की अपेक्षा अधिक गर्म होती है तथा विदरों में जमा पानी जम जाता है तथा दबाव डालता है जिसके परिणामस्वरूप शैल में दरारें पड़ जाती है।

MAADHYAM IAS

6\. पेडान एक त्रिविम पिंड है जो संस्तरों की प्रकृति तथा व्यवस्था को तथा मृदा के गुणों में भिन्नता को प्रदर्शित करता है जबकि पॉलिपेडान समान पेडानों का समूह होता है जो चारों तरफ से 'गैरमृदा' द्वारा अथवा भिन्न अभिलक्षण के पेडानों द्वारा घिरा रहता है।

इकाई 2 मृदा की गुणवत्ता के प्राचल

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

2.2 यांत्रिक प्राचल

मृदा गठन तथा विश्लेषण की विधियाँ

मृदा गठन के वर्ग

मृदा समुच्चयन तथा मृदा संरचना

मृदा वातन

मृदा जल

2.3 जैविक प्राचल

मृदा वनस्पतिजात

मृदा प्राणिजात

मृदा जीवों की लाभदायक भूमिका

2.4 भौतिक-रासायनिक प्राचल

मृत्तिकाओं की क्रिस्टल संरचना

मृदाओं का आयन विनिमय गुण

मृदा pH-अम्लता तथा क्षारता

2.5 सारांश

2.6 अंत में कुछ प्रश्न

2.7 उत्तर

2.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने मृदा के घटकों (constituents), उसके रूप और लंबे कालखंड में अनेकों कारकों की परस्पर क्रिया के परिणामस्वरूप होने वाले मृदा निर्माण के संदर्भ में उसकी प्रकृति के बारे में पढ़ा। मृदा का निर्माण पृथक रूप से नहीं हुआ है बल्कि मृदा खनिजों (soil minerals), जीवों तथा अन्य घटकों आदि सभी ने अपने तरीके से उसके विकास में योगदान दिया है। अपने निर्माण की प्रक्रिया में मृदा कुछ गुण अर्जित कर लेती है, जो इन घटकों द्वारा निर्धारित होते हैं और जो मिलकर मृदा की गुणवत्ता को निर्धारित करते हैं। इस इकाई में हम मृदा की गुणवत्ता के यांत्रिक, जैविक तथा भौतिक-रासायनिक प्राचलों (parameters), उनके महत्व और निर्धारण की चर्चा करेंगे। इन प्राचलों को समझने से हमें मृदा के उत्पादक महत्व का पता लगाने में मदद मिलेगी और इसके अतिरिक्त इससे हमें मृदा अपरदन (soil erosion) के कारणों और उसे रोकने के तरीकों का निर्धारण करने में भी मदद मिल सकती है जो स्वयं मृदा के लिए और उसके पोषक तत्वों के लिए भी एक विनाशकारी प्रक्रिया है। अगली इकाई में हम मृदा उर्वरता (soil fertility) और उत्पादकता (productivity) के मुद्दों पर चर्चा करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- मृदा गठन (soil texture) तथा मृदा संरचना का निर्धारण करने की कार्य विधि का वर्णन कर सकेंगे,

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

- मृदा 9 रंध्राकाशों **(pore spaces)** की भूमिका तथा उन विभिन्न तरीकों की व्याख्या कर सकेंगे जिनके द्वारा जल मृदा में रहता है,
- मृदा की गुणवत्ता निर्धारित करने में विभिन्न गुरू तथा लघु जीवों की भूमिका तथा मृदा जीवों की लाभदायक भूमिका का वर्णन कर सकेंगे,
- परत सिलिकेट खनिजों की सामान्य संरचना की व्याख्या कर सकेंगे,
- मृदा के आयन विनिमय गुणों की व्याख्या कर सकेंगे, तथा
- मृदा pH के विभिन्न कारणों तथा महत्व का वर्णन कर सकेंगे।

2.2 यांत्रिक प्राचल

आपने इकाई 1 में पढ़ा कि मृदा कार्बनिक द्रव्य, लवणों, धातु ऑक्साइडों, जल तथा वायु का विषमांगी मिश्रण है जिसमें विभिन्न आकार तथा संयोजन के सिलिकेट एक मुख्य घटक हैं। यांत्रिक प्राचल (mechanical parameters) बनाने वाले मृदा के भौतिक गुण काफी हद तक इन सभी घटकों पर निर्भर करते हैं। ये गुण यह निर्धारित करने के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण हैं कि मृदा का कैसे उपयोग किया जा सकता है और कैसे किया जाना चाहिए। इस तरह इससे अनेक उपयोगों के लिए मृदा की उपयुक्तता को भी निर्धारित किया जा सकता है। मृदा गठन (texture) मृदा का सबसे महत्वपूर्ण तथा स्थायी विशिष्ट भौतिक गुण है जो कुछ अन्य मृदा गुणों जैसे मृदा संरचना, वातन (aeration), जल धारण क्षमता (water holding capacity), पोषक तत्व संचय, जल गतिशीलता तथा धारण सामर्थ्य से संबन्धित है। निम्नलिखित उपभाग में मृदा गठन तथा उसके विश्लेषण की चर्चा की गई है।

2.2.1 मृदा गठन तथा विश्लेषण की विधियाँ

मृदा गठन मृदा का आधारभूत गुण है, जिसमें प्रत्येक खनिज कण का आमाप सम्मिलित होता है जिसे आसानी से बदला नहीं जा सकता है। ये विशेष रूप से मृदा कणों के तुलनात्मक आमाप को बताता है। मृदा में बहुत सी महत्वपूर्ण भौतिक तथा रासायनिक क्रियाओं की दर तथा मात्रा गठन द्वारा संचालित होती है क्योंकि ये उस सतह की मात्रा को निर्धारित करता है जिस पर अभिक्रिया हो सकती है। मृदा कणों के विभिन्न आमाप समूहों को, जिन्हें **मृदा पृथक (soil separates)** कहा जाता है **इंटरनेशनल सोसायटी ऑफ सॉइल साइंस** (आई.एस.एस.एस., **ISSS**) द्वारा मोटे तौर पर चिकनी मिट्टी अथवा मृत्तिका **(clay),** बारीक बालू (fine **sand)** , स्थूल बालू **(coarse sand)** तथा बजरी **(gravel)** के रूप में चयनित किया गया था। **युनाइटेड स्टेट्स डिपार्टमेन्ट ऑफ ऐग्रीकल्चर** (यू.एस.डी.ए., USDA) ने बालू खंड को और अधिक उपखंडों में विभाजित कर दिया है। गठनीय वर्गीकरण की दोनों प्रणालियों का वर्णन सारणी 2.1 में किया गया है।

सारणी 2.1 : यू.एस.डी.ए. तथा आई.एस.एस.एस. के अनुसार मृदा गठन का वर्गीकरण

यू. एस. डी. ए. वर्गीकरण		आई. एस. एस. एस. वर्गीकरण	
आमाप (mm)	**नाम**	**आमाप (mm)**	**नाम**
2.0 से अधिक	बज़री	2.0 से अधिक	बज़री
1.0-2.0	बहुत स्थूल बालू		
0.5-1.0	स्थूल बालू	0.2 – 2.0	स्थूल बालू
0.25-0.50	मध्यम बालू		
0.10-0.25	बारीक बालू	0.02-0.2	बारीक बालू
0.05-0.10	बहुत बारीक बालू		
0.02-0.05	गाद	0.002-0.02	गाद
0.002 से कम	मृत्तिका	0.002 से कम	मृत्तिका

सामान्य तौर पर गठन रेत, गाद **(silt)** और मृत्तिका (clay) के आपेक्षिक अनुपात के आधार पर निर्धारित किया जाता है। अगर विभिन्न आमाप के कणों को पृथक करके उनके आपेक्षिक अनुपात का निर्धारण किया जाए तो मृदा गठन की व्याख्या की जा सकती है।

MAADHYAM IAS

मृदा के नमूने में कणों के आपेक्षिक अनुपात को निर्धारित करने के लिए निम्नलिखित विधियों को अपनाया जाता है :

1) **"स्पर्श"** (feel) **द्वारा विश्लेषण की विधि** (Analysis by "Feel" Method)

बहुत प्राचीन काल से ही अनुभवी किसानों द्वारा नम मिट्टी को अपने अंगूठे और तर्जनी से छूकर मृदा गठन का अनुमान किया जाता रहा है। मृदा चिकनी या बारीक हो सकती है अथवा वह स्थूल या दानेदार (gritty) हो सकती है। पहली अवस्था में मृदा मुख्यतः छोटे कणों की बनी होती है जबकि बाद वाली अवस्था में कण बड़े आमाप के होते हैं। इस तरह दानेदार, चिपचिपाहट या चिकनेपन से क्रमशः बालू (sand), मृत्तिका (clay) और गाद (silt) की पहचान की जाती है। जब इस मिट्टी को अंगूठे और तर्जनी के बीच से निकालकर "रिबन" (ribbon) बनाया जाता है, तो जितना लंबा रिबन बनता है नमूने में उतनी ही अधिक मृत्तिका होती है। इस तरीके की यर्थाथता का निर्धारण किसान के अनुभव पर निर्भर करता है।

2) यांत्रिक **विश्लेषण** (Mechanical Analysis)

यांत्रिक विश्लेषण वास्तव में कण के आमाप का विश्लेषण है जो मृदा में उपस्थित विभिन्न कणों अथवा कणों के समूहों की मात्रा का पता लगाने के लिए किया जाता है। इस कार्य के लिए निम्नलिखित विधियों का उपयोग किया जाता है :

i) *चालनी विश्लेषण विधि* (Sieve Analysis Method)

जैसा कि नाम से पता चलता है चालनी विश्लेषण चालनियों से मिट्टी को छानकर

विधि में मृदा के नमूने को क्रमशः ऐसी चालनियों से छाना जाता है जिनके छिद्र लगातार छोटे होते जाते हैं और विभिन्न प्रकार के कणों को एकत्रित कर लिया जाता है। इस विधि से अकेले कण आमापों का पता नहीं किया जा सकता है, इससे केवल कणों को उन आमाप श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है जिस आमाप के छिद्र चालनी में होते हैं। प्रत्येक चालनी पर बची रह गई मृदा की मात्रा को मृदा नमूने की कुल ली गई मात्रा से विभाजित करके प्रत्येक आमाप के विस्तार में कणों के प्रतिशत का पता लगाया जा सकता है।

ii) *हाइड्रोमीटर विधि* (Hydrometer Method)

बोयूकोस (Bouyoucos) ने एक विशेष रूप से निर्मित हाइड्रोमीटर का प्रयोग करके मृदा में बालू, गाद तथा मृत्तिका की मात्रा का बिना उन्हें पृथक किए पता लगाने की एक सरल और द्रुतगामी तकनीक विकसित की। इस विधि में वायु शुष्क मृदा (air dry soil) की ज्ञात मात्रा (माना 50g बारीक मृदा) को काल्गन विलयन (calgon, सोडियम हैक्सामेटाफॉस्फेट) मिले हुए जल की ज्ञात मात्रा में घोला जाता है। एक निश्चित समय के बाद, उपरोक्त में 40 सैकन्ड के बाद, जब सबसे बड़े कण (बालू) सिलिंडर के तले में बैठ जाएं, तब हाइड्रोमीटर की सहायता से तरल के घनत्व (density) का पता लगाया जाता है। इससे मृदा में गाद और मृत्तिका की मात्रा का पता चल जाता है। इस तरह, 40 सैकन्ड वाला पाठ्यांक (reading) "निलंबन (suspension) में गाद और मृत्तिका की ग्राम मात्रा" का पाठ्यांक है। इसी प्रकार, दो घंटे बाद घनत्व को मापा जाता है जब गाद भी तले में बैठ जाती है। इस दो घंटे वाले पाठ्यांक का पठन "मृत्तिका की ग्राम मात्रा" के तौर पर किया जाता है। बालू की मात्रा का निर्धारण कुल मात्रा में से 40 सैकन्ड वाले पाठ्यांक को घटा कर किया जाता है।

iii) *पिपेट विधि* (Pipette Method)

चालनी विश्लेषण, यद्यपि वास्तविक कण आमाप विश्लेषण है, लेकिन इसमें 20 माइक्रॉन से छोटे कणों को अलग नहीं किया जा सकता है। ऐसे कणों को पिपेट विधि अथवा **अवसादन तकनीक** (sedimentation technique) द्वारा पृथक किया जाता है। यह विधि इस सिद्धांत पर आधारित है कि जब मृदा कणों को जल में निलंबित किया जाता है तो वो तली में बैठ जाते हैं। चूँकि अधिकांश मृदा कणों के घनत्व में कम ही भिन्नता होती है, इसलिए स्टोक्स नियम (Stokes Law) के अनुसार

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

कणों का तली में बैठने का वेग (velocity, V जिसे अवसादन वेग भी कहते हैं) प्रत्येक कण की त्रिज्या (radius, r) के वर्ग के आनुपातिक होता है यानि कि $V = kr^2$ जहाँ k एक स्थिरांक (constant) है। वेग को इकाई समय में पतन की दूरी यानि $(h) / (t)$ मानते हुए हम दिए गए व्यास के मृदा कण की निश्चित दूरी (मान लीजिए 10 cm) तय करने के समय का परिकलन कर सकते हैं। एक निश्चित समय पर निलंबन के एक छोटे खंड को पिपेट के निश्चित दूरी के खंड में से निकाल लिया जाता है उसे अवन में (100-105° C पर) सुखाया जाता है और उसका भार लिया जाता है, जिससे खंड विशेष के कण की मात्रा का पता लगाया जा सके।

यांत्रिक विश्लेषण के परिणामों का निरीक्षण करके हमें मृदा में मृत्तिका बालू तथा गाद के प्रतिशत का W लग जाता है, जिसका उपयोग हम मृदा गठन के वर्ग (textural class) को तय करने में कर सकते हैं। आइए, अब अगले उपभाग में हम ये अध्ययन करते हैं कि गठन के वर्ग क्या हैं और किस प्रकार हम मृदा के गठन वर्ग को तय करते हैं। उससे पहले निम्नलिखित बोध प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न कीजिए।

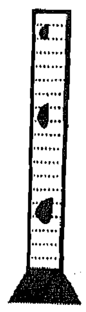

विभिन्न आमाप के कण विभिन्न दरों से आगे बढते हैं।

बोध प्रश्न 1

मृदा की गुणवत्ता को तय करने में गठन और गठन विश्लेषण का क्या महत्व है ?

....

....

....

2.2.2 मृदा गठन के वर्ग

मृदा में उपस्थित विभिन्न मृदा पृथकों (separates) के अनुपात के आधार पर, मृदाओं को विभिन्न समूहों में वर्गीकृत किया जाता है जिन्हें **मृदा वर्ग** (soil classes) कहते हैं। मृदा वर्गों का नाम उस पृथक (अथवा पृथकों) के आधार पर किया जाता है जो मृदा के अभिलक्षण में सबसे अधिक योगदान देता है। इसलिए, मृदा गठन के वर्ग के नाम द्वारा मृदा के संपूर्ण गठन के बारे में पता चल जाता है और इससे उसके भौतिक गुणों का संकेत भी मिल जाता है। इन वर्गों के तीन प्रमुख समूहों की पहचान की गई है, ये हैं, बालू (sand), दुमट (loam) तथा मृत्तिका (clay)। इनमें से प्रत्येक वर्ग में विशिष्ट गठन वर्ग के नाम भी हैं (सारणी 2.2)।

सारणी 2.2: यू एस.डी.ए. के अनुसार मूल मृदा गठन वर्ग के नाम

प्रचलित नाम	गठन	मूल मृदा गठन वर्ग के नाम
बालुई मृदाएं (sandy soils)	स्थूल (coarse)	बालू (sand) दुमटी बालू loamy sand)
दुमटी मृदाएं (loamy soils)	सामान्य रूप से स्थूल (moderately coarse)	बालुई दुमट (sandy loam) बारीक बालुई दुमट (fine sandy loam)
	मध्यम (medium)	बहुत बारीक बालुई दुमट (very fine sandy loam) दुमट (loam) गादमय दुमट(silty loam) गाद (silt)
	सामान्य रूप से बारीक (moderately fine)	बालुई मृत्तिका दुमट (sandy clay loam) गादमय मृत्तिका दुमट (silty clay loam) मृत्तिका दुमट (clay loam)
मृत्तिका मृदाएं (clayey soils)	बारीक (fine)	बालुई मृत्तिका (sandy clay) गादमय मृत्तिका (silty clay) मृत्तिका (clay)

MAADHYAM IAS

इस तरह हम देखते हैं कि गठन वर्ग के नाम उन मृदाओं का एक श्रेणीबद्ध क्रम निर्मित करते हैं जो स्थूल गठन की होती हैं और आसानी से संभाली जा सकती हैं। उसके साथ ही उन मृत्तिका मृदाओं का भी जो बहुत बारीक होती हैं और जिन्हें व्यवस्थित करना मुश्किल होता है। ये वर्ग भौतिक गुणों, जैसे मृदा वातन (aeration) तथा जुताई (tillage) की सुविधा आदि को बहुत अधिक प्रभावित करते हैं।

मृदा के वर्ग का निर्धारण करने की दो विधियाँ है। ये निम्नलिखित हैं :

i) **खेत विधि** (Field Method) इस विधि के बारे में उपभाग 2.2.1 में विश्लेषण की "ग्राफी" विधि के अंतर्गत बताया जा चुका है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है इसमें नम मिट्टी के नमूने को लेकर अंगूठे और तर्जनी के बीच रगड़कर देखा जाता है।

ii) **प्रयोगशाला विधि** (Laboratory Method)
गठन वर्ग के नामकरण की विधि विकसित करने के लिए यू.एस.डी.ए. द्वारा उपभाग 2.2.1 में बताई गई यांत्रिक विश्लेषण विधियों का प्रयोग किया जाता है। इसे चित्र 2.1 में दिए गए त्रिकोण द्वारा दर्शाया जाता है। मदा के दिए गए संयोजन के लिए, इस त्रिकोण का उपयोग करके गठन के वर्ग का नाम दिया जा सकता है।

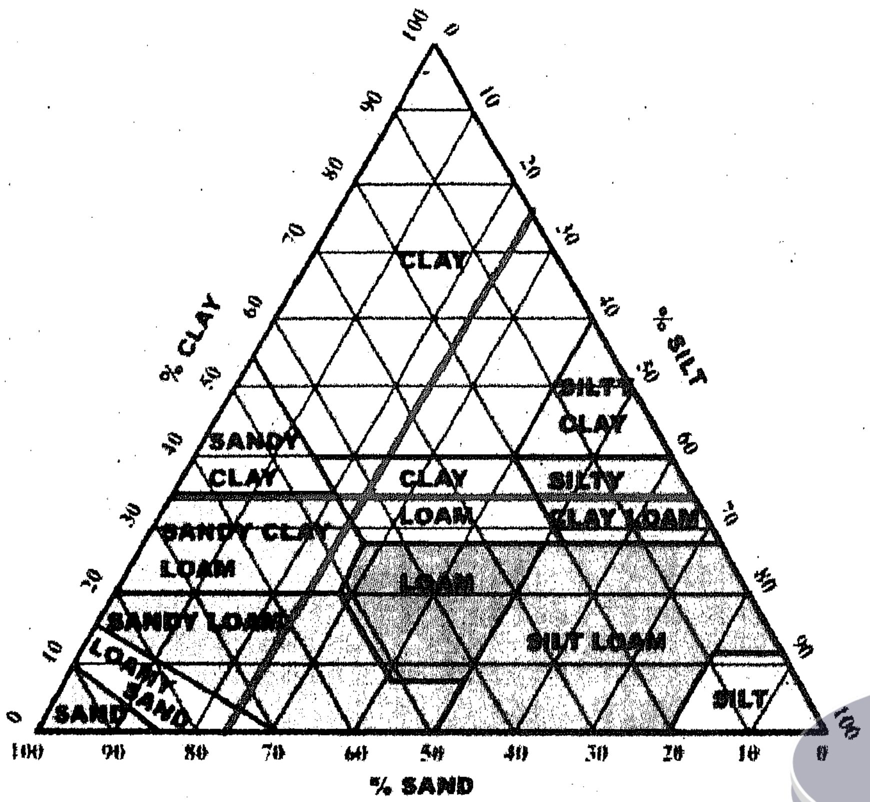

चित्र 2.1 : प्रमुख गठन वर्गों में बालू गाद और मृत्तिका के प्रतिशत

MADHYAM IAS
way to achieve your dream

त्रिकोण की भुजाएं मृत्तिका, गाद तथा बालू के द्रव्यमान (mass) प्रतिशत को प्रदर्शित करती हैं। त्रिकोण के किसी भी बिन्दु पर बालू , गाद और मृत्तिका के प्रतिशत का योग 100 होता है। मृदा के यांत्रिक संयोजन के आधार पर गठन वर्ग का पता लगाने के लिए पहले चित्र में किसी एक पृथक (माना मृत्तिका) के प्रतिशत का पता लगाया जाता है और उसके साथ वाली भुजा के समानान्तर चलते हुए त्रिकोण के केन्द्र की ओर बढ़ते हैं। बचे हुए दोनों में से किसी भी एक पृथक यानि बालू अथवा गाद के लिए भी इसी प्रकार से करते हैं। वह बिन्दु जिस पर दोनों रेखाएं एक-दूसरे को काटती हैं, उससे वर्ग नाम की पहचान की जाती है। इसे समझने के लिए हम एक उदाहरण लेते हैं। मान लीजिए कि मृदा में तीनों पृथकों का संयोजन निम्नलिखित है, मृत्तिका 35%, गाद 25% तथा बालू 40% अब हम इन तीनों में से किन्हीं दो मानों का उपयोग करके ऊपर बताई गई विधि के द्वारा मृदा

गठन के वर्ग का पता कर सकते हैं, जैसा कि चित्र में दो हरी रेखाओं द्वारा दर्शाया गया है। ये मृदा 'मृत्तिका दुमट' (clay loam) का उदाहरण है।

मृदा कणों का वितरण विभिन्न समूहों में कर लिया गया है, यद्यपि स्वैच्छिक रूप से ही सही, प्रत्येक समूह एक विस्तार का प्रतिनिधित्व करता है। ये सीमा गुणों में स्पष्ट तथा असतत् (discontinous) परिवर्तन के अनुरूप नहीं होती है। अतः 0.019 mm व्यास वाले कण के गुण 0.021 mm व्यास वाले कण से कोई स्पष्ट अंतर नहीं दर्शाते हैं। इसे इस तरह से भी कहा जा सकता है कि यांत्रिक संयोजन कण आमाप से सीधे संबंधित है। सारणी 2.3 में कुछ भारतीय मृदाओं के यांत्रिक संयोजन दिए गए हैं।

सारणी 2.3 : कुछ भारतीय मृदाओं का यांत्रिक संयोजन

मृदा	यांत्रिक संयोजन (%)		
	बालू	गाद	मृत्तिका
काली (पदीगानो, महाराष्ट्र)	10.2	13.0	76.8
जलोढ (alluvial) (बर्दन, प.बंगाल)	18.5	28.0	53.5
लैटेराइट (Laterite) (कूटापर्मा, केरल)	62.5	3.0	34.5
लाल (रायपुर, म.प्र.)	34.9	33.7	31.4
वन्य (देहरादून, उत्तरांचल)	52.2	16.5	31.3
लाल (कोयम्बटूर, तमिलनाडु)	75.9	3.5	20.6
काली (चित्तोड़गढ़, राजस्थान)	38.4	44.2	17.4
लाल (येम्मीगानूर, आंध्र प्रदेश)	78.6	7.1	14.3
जलोढ (लुधियाना, पंजाब)	71.4	15.0	13.6
रेगिस्तानी (बीकानेर, राजस्थान)	85.5	8.4	6.1

जैसा कि हमने पढ़ा गठन शब्द का प्रयोग मृदा कणों के आमाप के संदर्भ में किया जाता है। फिर भी,, जब कणों की व्यवस्था की बात की जाती 6 तो शब्द, **संरचना** (structure) का उपयोग किया जाता है। इसके बारे में हम अगले उपखंड में पढ़ेंगे। आगे बढ़ने से पहले निम्नलिखित बोध प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न कीजिए।

बोध प्रश्न 2

सारणी 2.3 तथा चित्र 2.1 में दिए गए आंकड़ों के द्वारा निम्नलिखित भारतीय मृदाओं के संयोजनों के लिए गठन वर्ग सुझाइए।

भारतीय मृदा	गठन वर्ग
काली (पदीगानो, महाराष्ट्र)	....
जलोढ़ (बर्दन, प. बंगाल)	....
लैटेराइट (कूटापर्मा, केरल)	....
लाल (रायपुर, म.प्र.)	....
वन्य (देहरादून, उत्तरांचल)	....
लाल (कोयंबटूर, तमिलनाडु)	....
काली (चित्तोड़गढ़, राजस्थान)	....
लाल (येम्मीगानूर, आन्ध्र प्रदेश)	....
जलोढ़ (लुधियाना, पंजाब)	....
रेगिस्तानी (बीकानेर, राजस्थान)	....

MAADHYAM IAS

2.2.3 मृदा समुच्चयन तथा मृदा संरचना

मृदाओं के संदर्भ में **'संरचना'** शब्द का उपयोग मृदा द्वारा लिए गए आकार के लिए किया जाता है। यह अकेले कण के रूप में अथवा प्राथमिक मृदा कणों के द्वितीयक कणों में संयोजन के रूप में हो सकती है जिन्हें **समुच्चय** (aggregates) कहा जाता है। मृदा की एक इकाई को **पेड** (ped) कहते हैं, चाहे वह समुच्चय हो या कुछ और हो। समुच्चयित संरचना नमी तथा वायु संबन्धों, पादप पोषक तत्वों की उपलब्धता, सूक्ष्मजीवों (microorganisms) की क्रिया तथा जड़ की वृद्धि के संदर्भ में गठन के प्रभाव को रूपांतरित कर देती है। सामान्य तौर पर मृदा संरचना की तीन प्रमुख श्रेणियां हैं । ये निम्नलिखित हैं:

1) **एकल कणीय** (single grained): जहां मृदा का प्रत्येक कण एक इकाई के रूप में कार्य करता है और दूसरे कणों से संबद्ध नहीं होता है। बालू और गाद इसके उदाहरण हैं।

2) **स्थूल** (massive): इसकी संरचना सघन होती है और ये सूखने पर बडे ढेले (clods) बनाती है। इसे सामान्यतौर पर **आर्द्र आलोडित** (puddled) कहते हैं और ये सामान्यतः C-सस्तर (C-horizon) बनाती है।

3) **समुच्चयित** (aggregated): ये प्राथमिक मृदा कणों जैसे, बालू , तथा मृत्तिका के समुच्चयन से बनती है। संरचना का प्रकार उनके आकार द्वारा निर्धारित होता है। इन प्रकारों को संक्षिप्त रूप से सारणी 2.4 में वर्णित किया गया है। आकार के आधार पर पांच प्रकार की संरचनाएं हैं, गोलाभ (spheroidal) , पट्टिकामय (platy), प्रिज्मीय (prismatic). स्तम्भाकार (columnar) तथा खंडी (blocky) ।

सारणी 2.4 : विभिन्न मृदा संरचनाएं तथा उनका विवरण

क्र.सं.		आरेखी स च्चय	विवरण	सामान्य संस्तर स्थान
1.	गोलाभ (spheroidal)	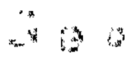	गोलाकार समुच्चय 1-10 mm व्यास का, कणमय (granular) या सरंध्र (porous), हो सकता है।	ऐ-संस्तर A-horizon
2.	(platy)	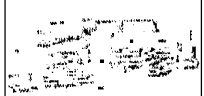	क्षैतिज (horizontal) पतली तथा चपटा समुच्चय जो उसी समय निक्षेपित मृत्तिका मृदाओं में पाया जाता है।	A-2 (A-2 horizon)
3.	प्रिज्मीय (prismatic)	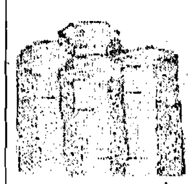	1-10 mm व्यास कोशिका परतों में ।	बी-संस्तर (B-horizon)
4.	स्तम्भाकार (columnar)		ऊर्ध्वाधर (vertical) खंभों के रूप में, अक्सर छह किनारे वाले, 15 cm तक के व्यास के	बी-संस्तर (B-horizon)
5.	खंडी (blocky)	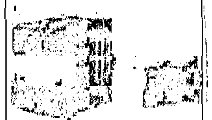	ये प्रिज्म जैसे ही होते हैं। लेकिन इनके शीर्ष गोल होते हैं। छह फलकों (six faced) वाले अनियमित खंड, सामान्यतः सभी फलक लगभग बराबर नाप के, 10 cm तक के	बी-संस्तर (B-horizon)

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

2.2.4 मृदा वातन

समुच्चय की सरंचना चाहे जैसी हो, इससे मृदा में रंध्र (pores) हो जाते हैं। ये रंध्र वायु तथा/अथवा जल से भर जाते हैं और पादप वृद्धि में इनकी भूमिका होती है। चूंकि पादप अपनी जडों से सांस लेते हैं और अगर वहां रंध्र नहीं होंगे, तो उन्हें सांस लेने के लिए ऑक्सीजन उपलब्ध नहीं हो पाएगी और वे मर जाएगें। इसलिए मृदा वातन (soil aeration) की प्रक्रिया उत्पादकता निर्धारण के लिए महत्वपूर्ण होती है। मृदा में रंध्रों की उपस्थिति उसके घनत्व को, यानि कि **स्थूल घनत्व** (bulk density) तथा **कण घनत्व** (particle density) को परिवर्तित कर देती है। मृदा के स्थूल घनत्व, $\mathbf{D_b}$ को प्रति इकाई आयतन (volume) में मृदा के द्रव्यमान (mass) के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें मृदा कण तथा रंध्र वायु सम्मिलित हैं। मृदा का कण घनत्व, $\mathbf{D_p}$ प्रति इकाई आयतन में मृदा का द्रव्यमान होता है जिसमें सिर्फ मृदा कण ही होते हैं और इसे प्रति घन सेन्टीमीटर ग्राम अथवा प्रति मीटर घन मेगाग्राम के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है। चूंकि कण घनत्व खनिज कणों के रासायनिक संयोजन तथा क्रिस्टल संरचना पर निर्भर करता है और रंध्राकाश (pore space) द्वारा प्रभावित नहीं होता है इसलिए इसे सामान्यतः $2.65\ g\ cm^{-3}$ अथवा $2.65\ Mg\ m^{-3}$ माना जाता है।

मृदा में **ठोस कणों** तथा **रंध्राकाश** (pore space) के प्रतिशत की गणना स्थूल घनत्व तथा कण घनत्व से की जा सकती है, अगर इन दोनो को ही मापन की समान इकाइयों में अभिव्यक्त किया गया हो। मृदा में ठोस कणों के प्रतिशत को निम्न प्रकार से दिया जाता है,

$$\left[\frac{\text{स्थूल घनत्व}}{\text{कण घनत्व}}\right] \times 100 = \%\ \text{ठोस}$$

इस प्रतिशत को कुल (100 प्रतिशत) योग में से घटाने पर रंध्राकाश का प्रतिशत मिल जाता है, इसलिए इसका सूत्र निम्न है

$$\%\ \text{रन्ध्राकाश} = 100 - \%\ \text{ठोस}$$

$$\%\ \text{रन्ध्राकाश} = 100 - \left[\frac{\text{स्थूल घनत्व}}{\text{कण घनत्व}}\right] \times 100$$

$$\%\ \text{रन्ध्राकाश} = \frac{\text{कण घनत्व} - \text{स्थूल घनत्व}}{\text{कण घनत्व}} \times 100$$

मृदा वातन के प्रभाव

कुछ मृदा रंध्र ऑक्सीजन तथा/अथवा CO_2 गैसों से भरे रहते हैं। ये गैसें पादपों के श्वसन में भाग लेती हैं। हम जानते हैं कि श्वसन में कार्बनिक यौगिकों का निम्न प्रकार से उपचयन (oxidation) होता है .

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \rightarrow 6CO_2 + 6H_2O$$

MAADHYAMIAS

मृदा वातन का दूसरा महत्वपूर्ण परिणाम **उपचयन-अपचयन अभिक्रियाएं** (oxidation reduction reactions) हैं जो मृदा if होती हैं और ये मृदा में विभिन्न आयनों की उपचयन अवस्था (oxidation state) को तय कर सकती हैं। यदि मृदा का वातन अच्छा 8, तो Fe, Mn, N तथा S के उपचित (oxidised) रूप Fe^{3+}, Mn^{4+}, NO_3^-, SO_4^{2-} अधिक मात्रा if होंगे। अगर मृदा का वातन अच्छा नहीं है तो अपचित रूप (reduced form) अर्थात् . Fe^{2+}, Mn^{2+}, NH_4^+, S^{2-} पाए जाते हैं।

मृदा का रंग धातु आयनों की उपचयन अवस्थाओं (oxidation state) द्वारा प्रभावित होता है। लाल, पीले तथा रक्ताभ भूरे रंग अच्छी उपचयन स्थितियों में पाए जाते हैं। अधिक मद्धिम रंग जैसे धूसर (grey) तथा नीले तब प्रभावी होते हैं जब मृदा में अपर्याप्त ऑक्सीजन उपस्थित होती है। अपर्याप्त जलनिकासी वाली मृदाएं उपचित तथा अपचित तत्वों की एकांतरी धारियों (alternate streaks) द्वारा पहचानी जाती है। चितकबरी (mottled) अवस्थाएँ

अच्छे और बुरे वातन के एकांतरी क्षेत्रों को दर्शाती हैं, ऐसी अवस्था उचित पादप वृद्धि के लिए सही नहीं होती है।

तत्वों की उपचित अवस्थाएं अम्लीय मृदाओं तथा नमी वाले क्षेत्रों में उगाई जाने वाली अधिकतर सामान्य फसलों के लिए अधिक वांछनीय होती हैं जबकि Mn और Fe की अपचित अवस्थाएं अम्लीय मृदा में पादपों के लिए आविषालु (toxic) होती हैं। शुष्क मृदाओं

(neutral) तथा क्षारीय (alkaline) शुष्क मृदा में Fe^{3+}, Mn^{4+} तथा अन्य सूक्ष्मपोषक (micronutrients) धातु आयन अवक्षेपित (precipitated) हो जाते हैं जिससे उनकी कमी हो जाती है।

बोध प्रश्न 3

ऐसी मृदा के प्रतिशत रंध्राकाश का परिकलन कीजिए जिसका स्थूल घनत्व 1.2 Mg/m^3 तथा कण घनत्व 2.6 Mg/m^3 है।

....

....

....

2.2.5 मृदा जल

जैसा कि आप जानते हैं जल पृथ्वी पर पाया जाने वाला सबसे सामान्य पदार्थ है जो जीवन के लिए आवश्यक है। पादपों को अपने वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन (evapotranspiration; पौधे के विभिन्न भागों जैसे, पत्तियों आदि के द्वारा जल का बाहर निकलना) के लिए, विलायक (solvent) के रूप में और विभिन्न अभिक्रियाओं के लिए निरन्तर जल की आवश्यकता होती है जल की आवश्यकता वायुमंडलीय स्थितियों तथा पादपों की प्रकृति के आधार पर भिन्न-भिन्न होती है। मृदा के जलांश (water content) को द्रव्यमान के आधार पर अथवा आयतन के आधार पर अभिव्यक्त किया जा सकता है। सामान्य तौर पर जल की अभिव्यक्ति अवन (oven) में सुखाने पर मृदा के द्रव्यमान में होने वाली कमी के आधार पर की जाती है। जल का ये द्रव्यमान, शुष्क मृदा के द्रव्यमान के सापेक्ष **मृदा जलांश** (θ, soil water content) कहलाता है।

जल का एक महत्वपूर्ण गुण, जिसे पृष्ठ तनाव कहते हैं, मृदाओं में उसके व्यवहार को बहुत अधिक प्रभावित करता है और इसे केशिका (capillary) में जल के स्तर की वृद्धि के द्वारा मापा जा सकता है। जल केशिका नली में पृष्ठ तनाव के कारण ऊपर चढ़ता है जबकि गुरुत्वाकर्षण का नीचे की ओर खिंचाव उसे वापस ले आता है।

आपको याद होगा कि पृष्ठ तनाव (surface-tension) को द्रव की सतह के लंब (perpendicular) प्रति इकाई लंबाई में लगने वाले बल के रूप में परिभाषित किया जाता है। इसे अणुओं को द्रव के आन्तरिक भाग से पृष्ठ भाग की ओर लाकर पृष्ठीय क्षेत्रफल (surface area) को एक इकाई बढाने के लिए आवश्यक ऊर्जा (energy) के रूप में भी परिभाषित किया जाता है।

केशिका बलों को सभी नम मृदाओं में देखा जा सकता है, फिर भी गति की दर तथा पानी का ऊँचाई में चढ़ना कभी-कभी मृदा रंध्र के माप के आधार पर अपेक्षित से कुछ कम हो सकता है। जल का चढ़ना निम्नलिखित कारणों से कम हो सकता है :

- मृदा केशिकाएं (soil capillaries) सतत और सीधी नहीं होती हैं।
- केशिकाओं की त्रिज्या बदलती रहती है।
- केशिकाओं में वायु अवरोध (air blockage) होते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

बारीक गठन वाली मृदा स्थूल गठन वाली मृदा की अपेक्षा दिए गए दाब पर भिन्न मात्रा में जल ग्रहण कर सकती है।

वैद्युत ऊर्जा (electrical energy), विभव ऊर्जा (potential energy) तथा गतिक ऊर्जा (kinetic energy) मिलकर जल की मुक्त ऊर्जा (free energy) अथवा ऊर्जा अवस्था (energy status) कहलाता है। मानक संदर्भ अवस्था (standard reference state) में मृदा जल तथा शुद्ध जल की मुक्त ऊर्जा के बीच अन्तर **मृदा जल विभव** (soil water

Ψ_m, सदैव ऋणात्मक होता हैं।

Ψ_o, ऋणात्मक अथवा धनात्मक हो सकता है।

Ψ_g, सदैव धनात्मक होता है।

potential) कहलाता है। ये मृदाओं में जल की स्थिति और गतिशीलता का निर्धारण करता हैं। ये मृदा जल की अवस्था अथवा आंतरिक स्थितियों के कारण उत्पन्न होता है और असंयुक्त जल (free water) की ऊर्जा अवस्थाओं के सापेक्ष अभिव्यक्त किया जाता है। असंयुक्त जल के विभव को ऐच्छिक रूप से शून्य माना जाता है। मृदा जल जो तीन प्रमुख बल क्षेत्रों (farce fields) में कार्य करता है उसमें ऊर्जा का व्यय होता है। मृदा जल को प्रभावित करने वाले बल क्षेत्र ठोस मैट्रिक्स (solid matrix) तथा जल के मध्य आकर्षण, गुरूत्वाकर्षण क्षेत्र तथा मृदा में विलेयों (solutes) की उपस्थिति के कारण होते हैं। इनके सगत विभव क्रमशः **मैट्रिक विभव** (matric potential, Y,,,), **गुरूत्वाकर्षण विभव** (gravitational potential, Ψ_g), **तथा परासरण विभव** (osmotic potential, Ψ_o), हैं।

मृदा में नमी की मात्रा

जैसा कि ऊपर बताया गया है नमी की मात्रा जल की आपेक्षिक सान्द्रता (ना कि कुल मात्रा) पर निर्भर करती है, इसका नमूने के आमाप से कोई मतलब नहीं होता है। मृदा में नमी की मात्रा का पता लगाने के लिए आम तौर पर खेत के मूल क्षेत्र (core) से लिए गए नम मृदा के नमूने का वजन लिया जाता है। फिर इसे अवन में 100-110° C तापमान पर सुखाया जाता है और फिर से वजन किया जाता है। मृदा द्वारा कम हुए जल की मात्रा मृदा के नम नमूने में नमी की मात्रा को प्रदर्शित करती है। मृदा में नमी की मात्रा को व्यक्त करने का सबसे प्रचलित तरीका मृदा के ठोस पदार्थों के दिए गए द्रव्यमान अथवा आयतन से संबद्ध जल का द्रव्यमान अथवा आयतन होता है।

वर्षा अथवा सिंचाई के परिणामस्वरूप अधिकांशतः गुरूत्वाकर्षण तथा जलीय प्रवणता (hydraulic gradient, मृदा के द्वारा द्रव के दबाव तथा गुरूत्वाकर्षण के कारण होने वाला जल का प्रवाह) के कारण कुछ जल का सतत् रूप से अपेक्षाकृत तेजी से नीचे की ओर प्रवाह होता है। दो-तीन दिन के बाद ये तेजी से नीचे की दिशा में प्रवाह नगण्य हो जाता है। तब मृदा को अपनी **मृद जल धारिता** (field capacity) में कहा जाता है। जब पादप मृदा से जल अवशोषित कर लेते हैं तो वो उसका अधिकांश भाग पत्ती की सतह से होने वाले वाष्पन (evaporation) के द्वारा खो देते हैं। कुछ जल सीधे मृदा की सतह से ही वाष्पन के कारण भी खत्म हो जाता है। जब मृदा सूख जाती है, तो पादप दिन के समय नमी को सुरक्षित रखने के लिए मुरझाने (wilt) लगते है। आरंभ में तो पादप रात में अपनी शक्ति वापिस प्राप्त कर लेते हैं, लेकिन अंततः वे दिन-रात मुरझाए ही रहते हैं। यद्यपि पादप मरते नहीं है लेकिन वो स्थायी रूप से मुरझाए ही रहते हैं और अगर उन्हें जल न प्रदान किया जाए तो वे मर जाते हैं। इस अवस्था में मृदा में नमी की मात्रा **म्लानि गुणांक** (wilting coefficient) अथवा **स्थायी म्लानि प्रतिशत** (permanent wilting percentage) कहलाती है। मृदा में ये जल सबसे सूक्ष्म रंध्रों (micropores) में तथा प्रत्येक मृदा कणों के चारों ओर पाया जाता है और ये उच्च पादपों के लिए उपलब्ध नहीं होता है।

पादप-उपलब्ध मृदा नमी

पादप उपलब्ध मृदा नमी (plant available soil moisture) अथवा **कुल उपलब्ध जल** (total available water) पादप जड़ क्षेत्र (plant root zone) में उपलब्ध जल की मात्रा जब मृदा के मृद जल धारिता (field capacity) में होती है तथा स्थायी म्लानि बिन्दु के बीच के अन्तर को कहते हैं। मैट्रिक विभव, Ψ_m पादप द्वारा ग्रहण की जाने वाली मृदा नमी की मात्रा को प्रभावित करता है क्योंकि ये मृद जल धारिता (field capacity) तथा म्लानि गुणांक (wilting coefficient) पर मृदा के जल की मात्रा को प्रभावित करता है। ये दोनों अभिलक्षण, जो पादप के उपलब्ध मृदा जल का निर्धारण करते हैं, मृदा के गठन, संरचना तथा कार्बनिक तत्व की मात्रा द्वारा प्रभावित होते हैं। चित्र 2.2 में गठन के सामान्य प्रभाव को दर्शाया गया है।

MAADHYAM IAS

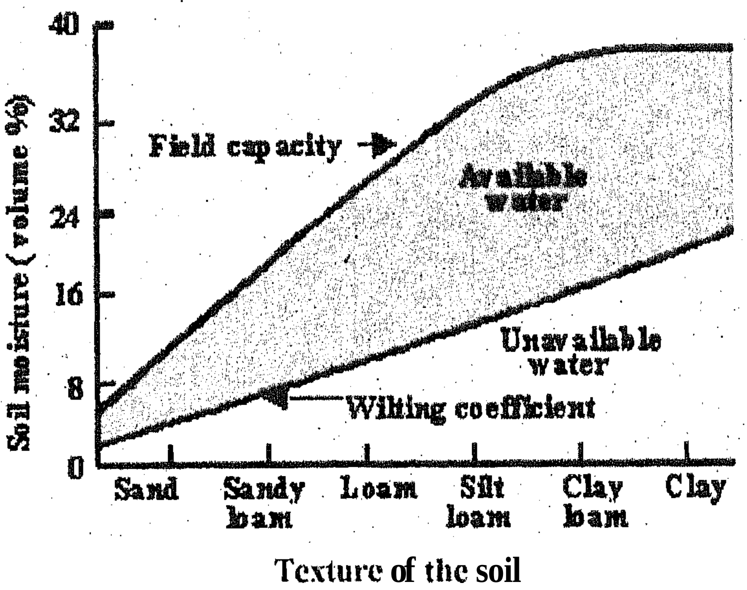

चित्र 2.2 : मृदा नमी के अभिलक्षणों तथा मृदा गठन के बीच सामान्य निरूपक संबन्ध

चित्र 2.2 से ये देखा जा सकता है कि जैसे-जैसे गठन की बारीकी बढ़ती जाती है, बालू से दुमट तथा गाद दुमट मृदाओं तक उपलब्ध नमी का संग्रह सामान्य रूप से बढ़ता जाता है। फिर भी, मृत्तिका मृदाएँ अधिकतर कणमय गाद दुमट की अपेक्षा कम उपलब्ध जल प्रदान करती है। उपलब्ध जल को धारण करने की क्षमताओं को भी तुलनात्मक रूप से इस ग्राफ में दिखाया गया है।

कार्बनिक तत्वों के अधिकांश लाभ मृदा संरचना पर उसके लाभदायक प्रभाव और साथ ही मृदा रंध्रों के आयतन पर निर्भर करते हैं। यद्यपि ह्यूमस (humus) में मृद जल धारिता स्तर पर नमी की उच्च मात्रा होती 8, लेकिन उसका म्लानि (wilting coefficient) भी उसी अनुपात में काफी अधिक होता है। अतः उपलब्ध नमी के लिए ह्यूमस का योगदान, प्राथमिक तौर पर परोक्ष, मृदा संरचना पर उसके प्रभाव के द्वारा होता है। मृदा में लवणों की उपस्थिति उपलब्ध नमी की मात्रा को कम कर सकती है।

बोध प्रश्न 4

35 kg जल/100 kg मृदा की मृद जल धारिता वाली मृत्तिका मृदा उसी गइराई और 25 kg जल /100 kg मृदा की मृद जल धारिता वाली दुमट मृदा की अपेक्षा पादपों को कम जल प्रदान करती है, इस अन्तर का संभावित कारण क्या हो सकता है ?

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

2.3 जैविक प्राचल

जैविक प्राचल (biological parameters) जिनमें जीवित जीव सम्मिलित होते हैं, मृदा का महत्वपूर्ण भाग बनाते हैं। यद्यपि जीव कुल मृदा द्रव्यमान का सिर्फ एक भाग बनाते हैं, पर वे मृदा की उर्वरता (fertility) में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मृदा जीवों में गुरूजीव (macroorganisms) हैं जिन्हें नग्न आंखों से देखा जा सकता है और सूक्ष्मजीव (microorganisms or microbes) हैं, जिन्हें सिर्फ सूक्ष्मदर्शी से देखा जा सकता है।

सूक्ष्मजीवों जे.बी. बोसिंगुइट (J.B. Bo...) ने 1838 में पहचान कर पता लगाया था कि फलियां कृषि (legumes) अपने पोषण के लिए वायुमंडलीय नाइट्रोजन का उपयोग कर लेती है। बाद में जब एक डच वैज्ञानिक एम.डब्लू. बीजरिन्च (M.W. Beigerinch) ने फलियों की जड़ ग्रंथिकाओं (root nodules) से जीवाणु को निकाला तो इस बाद की पुष्टि हो गई। अनुसंधानों से पता चला है कि मृदा अक्रिय (inert) नहीं होती है बल्कि ये एक ऐसा माध्यम है जो बड़ी संख्या में सूक्ष्मजीवों से स्पंदित (pulsating) है जो हमेशा जीवनक्षम (viable) और सक्रिय रहते हैं, इसलिए ये जीवन से भरपूर हैं। ये जीव अपनी सामान्य गतिविधियों के द्वारा मृदा की संरचना को परिवर्तित कर देते हैं और मृदा में उर्वरक तथा कार्बनिक तत्व मिला देते हैं।

मृदा जीवों को दो प्रमुख श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है ये हैं, मृदा वनस्पतिजात (soil flora, पादपों से संबन्धित) तथा मृदा प्राणिजात (soil fauna, जानवरों से संबन्धित) जिन्हें आगे उनके आमाप के आधार पर गुरू वनस्पतिजात (macroflora), सूक्ष्म वनस्पतिजात (microflora) , गुरू प्राणिजात (macrofauna) तथा सूक्ष्म प्राणिजात (microfauna) if उपविभाजित किया गया है। सतही मृदा (surface soil, 15 cm गहराई तक की) if सामान्य रूप से पाए जाने वाले जीवों की संख्या को सारणी 2.5 में दिया गया है।

सारणी 2.5 : सतही मृदाओं में पाए जाने वाले कुछ जीवों की सापेक्ष संख्या

जीव	संख्या	
	प्रति वर्ग मीटर	**प्रतिग्राम**
जीवाणु (bacteria)	$10^{13}–10^{14}$	$10^{8}–10^{9}$
ऐक्टिनोमाइसिटीज (actinomycetes)	$10^{12}–10^{13}$	$10^{7}–10^{8}$
कवक (fungi)	$10^{10}–10^{11}$	$10^{5}–10^{6}$
शैवाल (algae)	$10^{9}–10^{10}$	$10^{4}–10^{5}$
प्रोटोजोआ (protozoa)	$10^{9}–10^{10}$	$10^{4}–10^{5}$
नेमाटोडा (nematoda)	$10^{6}–10^{7}$	$10–10^{2}$
अन्य प्राणिजात (fauna)	$10^{3}–10^{5}$	–
केंचुआ (earthworm)	30–300	–

2.3.1 मृदा वनस्पतिजात

संपूर्ण मृदा में प्राथमिक उत्पादक जीवों का सबसे महत्वपूर्ण समूह कमोवेश उच्च पादप होते हैं। पादपों तथा पादप जड़ों के निरन्तर क्षय से मृदा सूक्ष्मजीवों के निर्माण में सहायता मिलती है और उससे मृदा के गुण जैसे, मृदा समुच्चयन (aggregation) , धनायन विनिमय क्षमता (cation exchange capacity), जल, वायु तथा पोषक तत्व धारण क्षमता (retention capacity) में परिवर्तन हो जाता है। क्रमिक रूप से फैलती हुई जडें आसपास के मृदा कणों पर अत्यधिक दवाब डालती हैं, जिससे वो संहत (compact) और समुच्चयित हो जाते हैं। जब जड़ों का क्षय (decay) होता है तो उनके रिक्त स्थान में जल और वायु प्रवेश कर जाते हैं। वनस्पतिजात के सूक्ष्मजीवों में जीवाणु , ऐक्टिनोमाइसिटीज, कवक तथा शैवाल हैं। उनकी प्रचुरता का क्रम भी यही है।

MAADHYAM IAS

जीवाणु (bacteria); सबसे अधिक प्रचुरता if पाए जाने वाले मृदा जीव हैं। ये मौलिक (primitive), बहुत सूक्ष्म, एककोशिकीय (unicellular) जीव होते हैं जिनमें पर्णहरित (chlorophyil) नहीं होता है। मृदा में जीवाणु सबसे ज्यादा होते हैं जिनका औसत द्रव्यमान लगभग 1.5×10^{-12} ग्राम होता है। सतह मृदा के प्रति हैक्टेयर क्षेत्र में लगभग 300 से 3000 kg जीवित जीवाणु पाए जाते है।

अधिकांश जीवाणु कोशिकाएं मृत्तिका (clay) के कणों तथा ह्यूमस (humus) अवशोषित रहती हैं। मृदा if उनकी संख्या मृदा के प्रकार तथा जलवायवी परिस्थितियों (climatic conditions) पर निर्भर करती है। जीवाणु, अपनी वृद्धि के लिए सामान्यतः लगभग उदासीन (neutral) से हल्के क्षारीय माध्यम को पसद करतें हैं, जिनका pH 6.5 से 8.00 होता है।

मदा जीवाणु **परपोषित** (heterotrophic), जो अपनी ऊर्जा तथा कार्बन जटिल कार्बनिक पदार्थों से लेते हैं अथवा **स्वपोषित** (autotrophic) हो सकते हैं, जो अपनी ऊर्जा कार्बनिक यौगिकों के उपचयन से, क़ार्बन डाइऑक्साइड से कार्बन , और नाइट्रोजन तथा अन्य खनिज अकार्बनिक यौगिकों से प्राप्त करते हैं।

ऐक्टिनोमाइसिटीज़ (actinomycetes) में ऐसे गुण होते हैं जो जीवाणु (bacteria) तथा कवक (fungi) के बीच के होते हैं, इन्हें कभी-कभी कवक जैसे जीवाणु भी कहते हैं। ये परपोषित वायुजीवी (heterotrophic-aerobic) जीव होते हैं और इन्हें वृद्धि के लिए भरपूर कार्बनिक तत्व, इष्टतम नमी (optimum moisture) और वातन (aeration) की जरूरत होती है। जब pH 5.0 से कम होता है तो इन जीवों की गतिविधि कम हो जाती है। ऐक्टिनोमाइसिटीज सभी प्रकार के कार्बनिक पदार्थों को निम्नीकृत (degrade) कर देते 8 लेकिन ये ऐसा जीवाणु और कवक से निम्न दर पर कर पाते हैं क्योंकि इनकी वृद्धि की दर कम होती है। इसी कारण मृदा Ïf मिलने वाले कार्बनिक अवशिष्टों (residues) पर पहले जीवाणु और कवक (fungi) आक्रमण करते 8 और बाद में ऐक्टिनोमाइसिटीज करते हैं। वास्तव में, ये तब काम करना आरंभ करते हैं जब आसानी से विघटित हो जाने वाले कार्बनिक यौगिक जीवाणु और कवकों द्वारा विघटित कर दिए गए होते हैं।

ऐक्टिनोमाइसिटीज को अर-कवक (ray fungi) या जीवाणु (thread bacteria) भी कहते हैं।

कवक (fungi) परपोषित पादप होते हैं जो जीवाणु से बड़े होते हैं। जो कार्बनिक पदार्थों के मृत ऊतकों (tissues) पर पलते हैं उन्हें **मृतपोषी** (saprophytic) कवक कहते 8। वो मृदाओं और पादप पोषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रतिग्राम मृदा में कवकों की संख्या 10^5 से 10^6 तक होती है (सारणी 2.5)। ये संख्या जीवाणुओं की संख्या से कम होती है लेकिन इनका कुल द्रव्यमान संभवतः जीवाणुओं जितना ही होता है। वे वायुमंडलीय कारक जो मृदा कवकों की उपस्थिति, विवरण तथा गतिविधि को प्रभावित करते हैं वो कमोबेश मृदा जीवाणुओं के कारकों जैसे ही होते हैं, केवल अंतर यह होता है कि अम्लीय मृदाओं में कवक अधिक मात्रा में होते हैं। क्योंकि ये मृदाजीव वायुजीवी तथा परपोषित होते हैं, इसलिए इन्हें मृदा में ऑक्सीजन तथा कार्बनिक तत्वों की भरपूर आपूर्ति की आवश्यकता होती है। इसलिए, वातन कारक (aeration factor) के कारण स्थूल गठन (coarse textured) वाली मृदा में कवकों की संख्या बारीक गठन वाली मृत्तिका मृदा की अपेक्षा अधिक होती है। इष्टतम मृदा अभिक्रिया (optimum soil reaction) 4.5 से 6.5 के pH के बीच होती है। फिर भी , कुछ मृदा कवक 9.0 तक का उच्च pH बर्दाश्त कर लेते हैं।

कवकों को अपमार्जक (scavengers) भी कहा जा सकता है जो मृदा में मौजूद कार्बनिक प्रकृति के किसी भी पदार्थ को विघटित कर देते हैं जिनमें लिग्निन भी सम्मिलित हैं जिन्हें जीवाणु विघटित नहीं करते हैं और इनमें से अनेक जीवाणु का भोजन होते हैं। ह्यूमस प्रमुख रूप से इन्ही जीवों द्वारा निर्मित होता है।

मृदा शैवाल (soil algae) सूक्ष्मदर्शी, पर्णहरित धारी (chlorophyll containing) जीव होते हैं जो सरलतम पर्णहरिती (chlorophyllous) पादप हैं। ये प्रकाशानुवर्ती (phototrophic) वायुजीवी जीव होते है जो पर्णहरित के द्वारा सूर्य के प्रकाश से ऊर्जा प्राप्त करते हैं और वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड का यौगिकीकरण करके अपने भोजन का संश्लेषण करते है। मृदा शैवाल एककोशिकीय जीवों के रूप में अथवा तंतुमय (filamentous) अथवा निवही (colonies) के रूप Ïf मृदा की सतह पर पाए जाते हैं, जिनका नमी स्तर पर्याप्त होता है और जो सूर्य के प्रकाश को ग्रहण कर लेते हैं। कुछ शैवाल परपोषितों (heterotrophs) के रूप Ïf मृदा की सतह के नीचे पाए जा सकते 8, कुछ शैवाल सहजीवी (symbiotic) होते हैं जबकि अन्य सहजीवी नहीं होते हैं। नमी तथा पर्याप्त सूर्य की रोशनी शैवालों की संख्या को प्रभावित करने वाली सबसे महत्वपूर्ण वायुमंडलीय स्थितियां होती हैं। इष्टतम गतिविधि के लिए pH विभिन्न विभेदों (strains) के लिए भिन्न-भिन्न होता है। शैवाल मृदा संरचना के निर्माण में भी सहायता करते हैं, लेकिन इनका मृदा में जैवरासायनिक रूपांतरण (biochemical transformation) Ïf ज्यादा योगदान नहीं हैं। ये मृदा के कार्बनिक पदार्थ स्तर ïf काफी योगदान देते हैं, नील-हरित शैवाल (blue-green algal) खासतौर पर मृदा Ïf नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ा देते हैं। ये दोनों गुण भारत की उष्ण कटिबंधी (tropical) स्थितियों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं।

चट्टानों की सतह पर शैवालीय आबादी **(algal** population) की घनी वृद्धि चट्टानों के अपक्षय (weathering) का एक कारक है।

सहजीवी (symbiotic): एक ऐसा संबन्ध जिसमें दोनों भागीदारों को एक-दूसरे से लाभ मिलता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

2.3.2 मृदा प्राणिजात

मृदा Ïf रहने वाले मृदा प्राणिजात (soil fauna), पादप ऊतकों के विघटन में मृदा वनस्पतिजात के सक्रिय भागीदार होते हैं। जब मृत पत्तियां नम मृदा पर गिरती हैं, तो उन पर तत्काल चिचडी (mites) का हमला हो जाता है जो मृत पादप काया को छिद्रित करके टुकड़ो में बांट देती हैं जिससे सूक्ष्मजीवों का उनमें प्रवेश आसान होता है और सूक्ष्मजीवीय

क्रिया के लिए बड़ी सतह मिल जाती है। मृदा प्राणिजात् भोजन के साथ जीवाणुओं को भी खा लेते हैं, जो उनके पाचन-क्षेत्र (digestive tract) में सक्रिय रहते हैं। जानवरों के मल पर भी वनस्पतिजात और प्राणिजात का समान रूप से आक्रमण होता है। अधिक प्रचलित और बहुतायत में पाए जाने वाले गुरू तथा सूक्ष्म प्राणिजात का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है।

केंचुए (earthworms) : केंचुओं की कुछ प्रजातियां पाई जाती हैं, जिनकी कायाएँ पतली, बेलनाकार और विभिन्न व्यास वाली होती हैं। ये जीव मृदा पदार्थों के साथ मृदा में उपस्थित मृत कार्बनिक ऊतकों को भी खा लेते हैं। खनिज मृदा को पचा लिया जाता है और कणमय मृदा समुच्चयों (granular soil aggregates) के रूप में मल के साथ बाहर निकाल दिया जाता है जो जीवाणु तथा खनिज पोषक तत्वों से समृद्ध होते हैं। ये जीव भोजन को सिर्फ रूपांतरित करते हैं जिससे ये उच्च पादपों के लिए अधिक लाभदायक हो

तत्व और अविघटित पादप अपशिष्ट होते हैं। ये बारीक गठन वाली उदासीन मृदाओं में अधिक पाए जाते हैं जिनमें स्थूल बलुआ मृदा की अपेक्षा अधिक चूना (lime) संग्रहित होता है।

छछूँदर (moles) : कुछ खेतों में अक्सर छछूँदरों के बिलों को देखा जा सकता है जो छछूँदरों द्वारा विघटित की गई उपमृदा (subsoil) के बने होते हैं। इन्हें मृदा में कैल्शियम की अच्छी मात्रा की आवश्यकता होती है।

चींटे (ants) : चींटे मृदा में सबसे अधिक पाई जाने वाली कीटों की प्रजाति है, ये पादप अपशिष्टों (residues) को खा लेते हैं, लेकिन ये पादपों से ज्यादा कीटों से ह्यूमस बनाते हैं।

मृदा प्रोटोजोआ (soil protozoa) : ये एककोशिकीय लेकिन जीवाणुओं से बडे होते हैं, इनका आमाप कुछ माइक्रॉन (microns) से लेकर कुछ सेन्टीमीटर तक का हो सकता है। प्रोटोजोआ सभी वायवीय (aerable) मृदाओं में पाए जाते हैं, लेकिन संख्या के आधार पर ये मृदा की आबादी का सिर्फ एक छोटा भाग ही बनाते हैं। उपजाऊ (fertile) सतही मृदा में 10,000 से लेकर 10 लाख तक प्रोटोजोआ प्रति ग्राम मृदा में हो सकते हैं। मृदा प्रोटोजोआ विपरीत वायुमंडलीय स्थितियों जैसे नमी, अम्लता तथा जलवायु को दूसरे मृदा सूक्ष्मजीवों की अपेक्षा अधिक सहन कर लेते हैं। मृदा में प्रोटोजोआ की भूमिका निश्चित तौर पर ज्ञात नहीं है क्योंकि ये जीवाणु तथा ऐक्टिनोमाइसिटीज को खाते हैं, इसलिए ये शायद मृदा में सूक्ष्म वनस्पतिजात के अनुकूल संतुलन को बनाए रखने में मदद करते हैं।

निमेटोड (nematodes): मृदा में प्रोटोजोआ के बाद सबसे अधिक **if** जाने वाले प्राणिजात हैं। इन्हें सूत्रकृमि (eelworms), धागाकृमि (threadworms) अथवा गोलकृमि (roundworms) भी कहते हैं। निमेटोड जो क्षयकारी (decaying) कार्बनिक तत्वों को खाते हैं वो **मृतजीवी** (saprophytic) कहलाते हैं, जो केंचुओं तथा अन्य निमेटोड आदि को खाते हैं वो **परमक्षी** (predatory) तथा जो उच्च पादपों की जड़ों को खाते हैं वो **परजीवी** (parasitic) कहलाते हैं। मृतजीवी समूह वाले मृदा में बहुतायत में **if** जाते हैं, लेकिन दूसरे अन्य दोनों समूहों के निमेटोड कृषि के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि वे जड़ तंत्र को कमजोर करते हैं और निमेटोड से संदूषित मृदा में उगने वाले पादपों को रोगों के लिए संवेदनशील बनाते हैं। फसलों के क्षय को फसल आवर्तन (crop rotation), जुताई (ploughing), कार्बनिक उर्वरकों तथा खली (oil cake) आदि के प्रयोग द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। निमेटोडों को नियंत्रित करने का सबसे सफल तरीका मृदा में निमेटोडनाशी (nematicides) पदार्थों का धूमन (fumigation) देना है।

MAADHYAM IAS

विषाणु (viruses) ; अतिसूक्ष्मदर्शी परजीवी (ultramicroscopic parasites) भी मृदा में पाए जाते है जिन्हें अपने संवर्द्धन (multiplication) के लिए सदैव जीवित परपोषी (host) की आवश्यकता होती है। क्योंकि ये जीवाणु से कहीं छोटे होते हैं इसलिए इन्हें सिर्फ इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी (electron microscope) से ही देखा जा सकता है। रासायनिक रूप से विषाणु न्यूक्लीक अम्ल (nucleic acids) होते हैं जो प्रोटीन के खोल (shell) में रहते हैं। मृदा में उपस्थित विषाणु **परजीवीय जीवाणु** (parasitised bacteria) कहलाते हैं और इन्हें

जीवाणुभोजी (bacteriophage) कहते हैं। जब ये कृषि के लिए महत्वपूर्ण जीवाणुओं जैसे **राइजोबियम** (rhizobium) को नष्ट कर देते हैं तो आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण हो जाते हैं। मृत्तिका तथा मृदा में उपस्थित कार्बनिक तत्व जीवाणुभोजियों को अवशोषित कर लेते हैं और इस तरह से मृदा में उनको धारण करते हैं और उनका विस्तार करते हैं।

2.3.3 मृदा जीवों की लाभदायक भूमिका

मृदा जीव, विघटन, संश्लेषण तथा रूपांतरण के द्वारा पादप तथा जंतुओं के जीवनचक्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिनमें एकल जीव के बजाय जीवों के समूह सम्मिलित होते हैं। सूक्ष्मजीवों द्वारा की जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण क्रियाएं, जिनका मृदा गुणों तथा पादप वृद्धि पर महत्वपूर्ण असर होता है, कार्बनिक तत्वों का विघटन और मृदा में ह्यूमसी (humic) पदार्थों का संश्लेषण, नाइट्रोजन का जैविक यौगिकीकरण (fixation), खनिज अकार्बनिक रूपों में पोषक तत्वों का सूक्ष्मजीवीय रूपांतरण तथा मृदा का कणीभवन (granulation) है। निम्नलिखित अनुच्छेदों में इनकी चर्चा की गई है।

कार्बनिक तत्व में पोषक तत्वों का खनिज अकार्बनिक रूप में रूपांतरण **खनिजन** (mineralization) कहलाता है।

जैवउर्वरक (biofertilizers): सूक्ष्मजीवों के संवर्द्धन (cultures) होते हैं जिनका उपयोग आदर्श स्थितियों में बीज अथवा मृदा को संरोपित (inoculate) करने के लिए किया जाता है जिससे पादप पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है। उनका उद्देश्य रासायनिक उर्वरकों की कमी पूरी करना है उन्हें विस्थापित करना नहीं है। कुछ सूक्ष्मजीव फसलों को दी जाने वाली नाइट्रोजन का यौगिकीकरण (fix) कर देते हैं, ये अघुलनशील (insoluble) फॉस्फेट को घुलनशील (soluble) रूपों में बदल कर उन्हें फसल के लिए उपलब्ध कर देते हैं, ये फसलों में खाद प्रदान करने के लिए खासतौर पर चावल में जीवभार (biomass) संश्लेषित करते हैं और कम्पोस्ट (compost) और फार्म यार्ड (farmyard) खादों में सैलुलोस के विघटन की प्रक्रिया को तेज कर देते हैं। यदि मृदा अथवा विघटनकारी क्रियाधार (substrate) में ये विशेष जीव उपस्थित ना हों तो उन्हें उस माध्यम Sf संरोपित (inoculate) किया जाना चाहिए जिससे वहाँ जैविक क्रियाविधि को आरंभ और त्वरित (accelerate) किया जा सके।

सूक्ष्मजीवों के शुद्ध अथवा मिश्रित संवर्द्धनों (cultures) को प्राकृतिक अथवा कृत्रिम संवर्द्धन माध्यमों में उगाने की क्रिया को संरोपण (inoculation) कहते हैं।

मृदा समुच्चयन (soil aggregation): कुछ जीव मृदा की बेहतर भौतिक स्थितियां बनाकर जैसे, मृदा समुच्चयन को बढ़ाकर परोक्ष रूप से लाभदायक भूमिका निभाते हैं। आपने उपखंड 2.3.2 में मृदा कणीभवन (granulation) में केंचुओं की भूमिका के बारे में पढ़ा था। पादप जड़ें भी अपने क्षय उत्पादों के द्वारा मृदा समुच्चयन को बढ़ावा देती हैं। कुछ सूक्ष्मजीवों द्वारा निर्मित होने वाले गोंद (gum) और पॉलीसैकेराइड (polysaccharides) भी मृदा समुच्चयन (soil aggregation) करते हैं। ***ऐज़ोटोबैक्टर** (Azotobacter)*, ***बैजेरिन्किया** (Baijerinckia)* तथा ***राइज़ोबियम** (Rhizobiun)* गोंद का उत्पादन करने वाले जीवाणुओं के उदाहरण हैं।

मृदा में वायुमंडलीय नाइट्रोजन का सूक्ष्मजीवों द्वारा नाइट्रोजन यौगिकों में परिवर्तन **नाइट्रोजन यौगिकीकरण** कहलाता है।

पारंपरिक तरीके (cultural practices): एक ही फसल की एक ही स्थान पर लगातार खेती से समूह विशेष के सूक्ष्मजीव उस स्थान पर जमा हो जाते है, जो अन्य पर प्रभावी हो जाते हैं। फलीदार पादप के द्वारा फ़सल आवर्तन से प्रतिकूल जनसंख्या संतुलन (unfavourable population balance) खत्म हो जाता है। सिंचाई, अम्लीय मृदाओं में चूना डालने (liming, अम्लता कम करने के लिए चूने से उपचारित करना) और मृदा Sf जिप्सम (gypsum) का उपयोग करने से जीवाणुओं की गतिविधि काफी बढ़ जाती है। उर्वरक (fertilizer) तथा खाद (manure) मृदा में फसल उत्पादन तथा सूक्ष्मजीवी जनसंख्या को बढ़ा देते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अगले भाग में बढ़ने से पहले निम्नलिखित बोध प्रश्न को हल करने की कोशिश कीजिए।

बोध प्रश्न 5

रिक्त स्थानों को उचित उत्तरों से भरिए :

i) मृदा जीव जो अपना भोजन स्वयं बना लेते हैं, ... हैं।

ii) कवक अपनी .... प्रकृति के कारण .... गठन वाली मृदा में भरपूर होते हैं।

iii) सबसे अधिक पाए जाने वाले मृदा जीव .... हैं।

iv) मृदा सूक्ष्मजीवों द्वारा किए जाने वाले दो महत्वपूर्ण कार्य .... तथा .... हैं।

2.4 भौतिक-रासायनिक प्राचल

कोलॉइड (colloids): वे कण जिनका व्यास 1-100 नेनोमीटर (nm) और प्रति इकाई द्रव्यमान बड़ा पृष्ठीय क्षेत्रफल (surface area) होता है।

आपने पढा है कि भू-पर्पटी (Earth crust) की चट्टानों (rocks) और खनिजों (minerals) का मृदा के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। भू-पर्पटी में पाए जाने वाले विभिन्न तत्वों के संभावित संयोजनों से अनेकों खनिजों का निर्माण हुआ। इसमें पाए जाने वाले सभी तत्वों में ऑक्सीजन और सिलिकॉन सबसे अधिक बहुतायत में पाए जाते हैं और इसके 75% भाग को बनाते हैं। इसी कारण भू-पर्पटी में सिलिकेट खनिजों की अधिकता होती है। मृदा का ठोस भाग मुख्य रूप से अकार्बनिक और कार्बनिक घटकों का बना होता है। अकार्बनिक घटक प्राथमिक और द्वितीयक मूल के सिलिकेटों से बनता है, जिनका निश्चित रासायनिक संयोजन और सुस्पष्ट क्रिस्टली सरचना होती है। इन्हें **प्राथमिक** (primary) और **द्वितीयक** (secondary) खनिजों के रूप में परिभाषित किया जाता है। अक्सर द्वितीयक खनिजों का कुछ अश प्राथमिक खनिजों तथा आयरन (iron), ऐलुमिनियम (aluminium) और सिलिकॉन (silicon) के ऑक्साइडों के साथ मिल जाता है और इसका आमाप 0.002 mm से कम होता है। ये मृत्तिका अश (clay fraction, अकार्बनिक मृदा कोलॉइड) होता है जो **मृत्तिका खनिज** (clay minerals) कहलाता है। कार्बनिक घटक (कार्बनिक कोलॉइड) मुख्य रूप से पादपों और आंशिक रूप से जंतुओं के कारण होते हैं। ये सिर्फ एक छोटा अंश बनाते हैं और नए उत्पादों में रूपांतरित हो जाते हैं जो अच्छी तरह से मृदा के साथ मिलकर **मृदा ह्यूमस** (soil humus) बनाते हैं। मृत्तिका खनिजों के कोलॉइडी अंश की सतह और ह्यूमस मृदा कणों और बढती हुई पादप जडों के बीच धनायन (cation) और ऋणायन (anion) के विनिमय के लिए उत्तरदायी होती है। अधिकांश भौतिक, रासायनिक और जीव वैज्ञानिक अभिक्रियाएं भी इन कोलॉइडी कणों पर ही होती हैं। अकार्बनिक अंश यानि कि मृत्तिका छोटे आमाप की होने के कारण भौतिक तथा भौतिक-रासायनिक रूप से सबसे क्रियाशील होती है।

आइए, मृत्तिका खनिजों में पाई जाने वाली केवल आधारभूत इकाइयों की संरचना की चर्चा करें।

2.4.1 मृत्तिकाओं की क्रिस्टल संरचना

अधिकांश मृत्तिका खनिजों में दो प्रकार की आधारभूत संरचनात्मक इकाइयाँ होती हैं – **चतुष्फलकीय** (tetrahedral) और **अष्टफलकीय** (octahedral)। चतुष्फलकीय इकाई SiO_4^{4-} है जिसमें सिलिकॉन चारों ऑक्सीजन अणुओं से समान दूरी पर है। अष्टफलकीय इकाई एक अष्टफलक के रूप में होती है जिसमें ऐलुमिनियम, आयरन अथवा मैग्नीशियम आयन ऑक्सीजन अथवा हाइड्रॉक्सिल आयनों से घिरे होते हैं। चतुष्फलकीय और अष्टफलकीय इकाइयाँ अपनी-अपनी इकाइयों के जुड़ जाने पर संबंधित परतें बनाती हैं। इन संरचनाओं को चित्र 2.3 में आरेखीय रूप से दिखाया गया है। ऐलुमिनियम प्रभावी परत को द्विअष्टफलकीय (dioctahedral) परत कहते हैं तथा मैग्नीशियम प्रभावी परत को त्रिअष्टफलकीय (trioctahedral) परत कहते हैं।

चतुष्फलकीय (tetrahedral) तथा अष्टफलकीय (octahedral) परतें सिलिकेट मृत्तिकाओं की आधारभूत संरचनात्मक इकाइयाँ होती हैं। क्रिस्टलों के अंदर ये सहभागी (shared) ऑक्सीजन अणुओं के द्वारा विभिन्न परतों में बंधी रहती हैं (चित्र 2.3)। ये परत संरचना मृत्तिकाओं के विभिन्न भौतिक तथा रासायनिक गुणों के लिए उत्तरदायी होती हैं।

MAADHYAM IAS

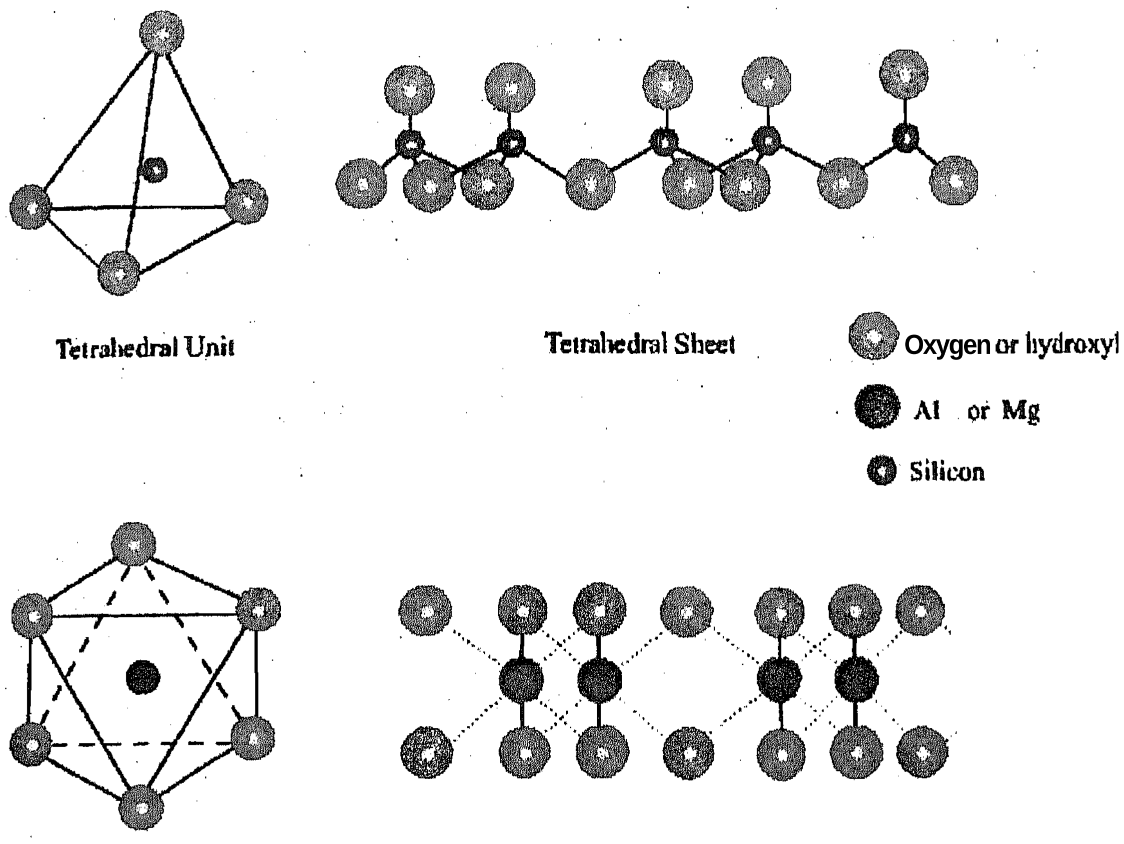

चित्र 2.3 : सिलिकेट मृत्तिकाओं की संरचना

सिलिकेटों की ये सामान्य स्थापत्य (architectural) इकाई (SiO_4^{4-}) बहुत स्थायी होती हैं। विभिन्न सिलिकेटों को प्राथमिक रूप से इन SiO_4^{4-} इकाइयों की एक दूसरे से संबद्धता के तरीके के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। इसके परिणामस्वरूप सिलिकेटों की सतत् श्रृखलाए (continuous chains) परतें अथवा पूर्ण त्रिविम (three dimensional) सरचनाएं बनती हैं जो इस बात पर निर्भर करती हैं कि सहलग्नित (linked) चतुष्फलकों का विस्तार किस तरीके से होता है। दी गई संरचना का स्थायित्व ज्यामितीय (geometrical) तथा वैद्युत (electrical) कारकों की जटिल अन्योन्यक्रिया (interplay) द्वारा पोषित होता है जिसमें अन्तिम यौगिक के सभी अणुओं की भागीदारी होती है। वह खनिज जिनमें एक चतुष्फलकीय परत तथा एक अष्टफलकीय परत क्रिस्टल इकाई को बनाती है **1:1 प्रकार** के खनिज कहलाते हैं। उदाहरणतः कैओलिन (kaolin), जबकि वो क्रिस्टल इकाई जिसमें एक अष्टफलकीय परत दो चतुष्फलकीय परतों के बीच में दबी होती है, **2:1 प्रकार** के खनिज कहलाते हैं उदाहरणतः, मॉन्टमॉरिलोनाइट (montmorillonite)। जब दो चतुष्फलकीय परतें एक सहभागी और एक असहभागी अष्टफलकीय परत के साथ उपस्थित होती हैं तो **2:1:1 प्रकार** के खनिज प्राप्त होते हैं। उदाहरणतः ऐसी संरचनाएं जिनमें एकांतरी अभ्रक (mica) परत के बाद ब्रूसाइट (brucite) की परत होती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

सिलिकेट मृत्तिकाओं में असंतुलन के कारण आवेश विकसित हो जाता है जो क्रिस्टल संरचना में एक धनायन के दूसरे से विनिमय के कारण होता है। विकसित होने वाला आवेश धनात्मक अथवा ऋणात्मक हो सकता है। उदाहरण के लिए, धनात्मक आवेश तब विकसित होता है जब Al^{3+}, Mg^{2+} को विस्थापित करता है और ऋणात्मक आवेश तब विकसित होता है जब इसका विपरीत होता है। कुछ pH आधारित आवेश भी होते हैं जो OH^- तथा H^+ आयनों की अधिक अथवा निम्न सान्द्रता के कारण विकसित होते हैं। सिलिकेट मृत्तिकाओं में धनायनों की उपस्थिति के कारण, वो अपने आंयनों को मृदा विलयन में उपस्थित आयनों के साथ बदलने में सक्षम होते हैं। यदि विनिमयकर्ता (exchanger) के

कण का माप बहुत छोटा होता है तो विनिमय आसान हो जाता है और मृत्तिकाओं में ऐसा ही होता है। हम मृत्तिकाओं के आयन विनिमय गुण के बारे में चर्चा अगले उपभाग में करेंगे।

बोध प्रश्न 6

अकार्बनिक तथा कार्बनिक मृदा कोलॉइड के बीच में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

2.4.2 मृदाओं का आयन विनिमय गुण

आयन विनिमय (ion exchange) एक उत्क्रमणीय (reversible) प्रक्रिया है। मृदाओं में अपने कोलॉइडी गुण के कारण अपने आयनों के विनिमय का गुण होता है। मृत्तिका और ह्यूमस कण जो दोनों ही कोलॉइडी प्रकृति के होते हैं, उनके निकटतम क्षेत्र में स्थित जल को विनिमयकारी धनायनों से संबद्ध जल माना जाता है। आयन विनिमय की अभिक्रियाएं धनायन विनिमय (cation exchange) अथवा ऋणायन विनिमय (anion exchange) अभिक्रियाएं होती हैं। सतह पर अवशोषित होने वाले धनायन मृदा विलयन में उपस्थित धनायनों के साथ विनिमय करते हैं। उदहारण के लिए, कोलॉइडी सतह पर उपस्थित कैल्शियम आयन मृदा विलयन में $2H^+$ आयनों के साथ विनिमय करता है।

$$\text{मृदा} - Ca^{2+} + 2H^+ \rightarrow \text{मृदा}^{H^+}_{H^+} + Ca^{2+}$$

धनायन विनिमय क्षमता मृदा के प्रति इकाई द्रव्यमान में धनायन अवशोषण स्थानों (cation adsorption sites) की संख्या को दर्शाता है।

धनावेशित आयनों के विनिमय की क्षमता **धनायन विनिमय क्षमता** (cationexchange capacity, CEC) कहलाती है, उदाहरणतः Ca^{2+}, Mg^{2+}, Na^+, K^+, NH_4^+, आदि। दी गई मृदा की धनायन विनिमय क्षमता का निर्धारण मृदा में विभिन्न कोलॉइडों की सापेक्ष मात्रा पर निर्भर करती है तथा प्रति किलोग्राम अवन शुष्क (oven dry) मृदा में धनात्मक आवेश के सेन्टीमोलों (centimoles) के रूप में व्यक्त की जाती है। एकसंयोजक (monovalent) धनायनों को द्विसंयोजक (divalent) अथवा त्रिसंयोजक (trivalent) धनायनों की अपेक्षा अधिक आसानी से विस्थापित किया जा सकता है। धनायन विनिमय अभिक्रियाओं में कुछ त्रि, द्वि तथा एकसंयोजक आयनों के लिए प्राथमिकता क्रम सामान्यतः इस प्रकार से होता है

$$Al^{3+} > Ca^{2+} > Hg^{2+} > K^+ > Na^+ > Li^+$$

बालुई (sandy) मृदाओं की धनायन विनिमय क्षमता (CEC) मृत्तिका मृदाओं से कम होती है क्योंकि स्थूल (coarse) गठन वाली मृदाओं में मृत्तिका और ह्यूमस की मात्रा सामान्यतः कम होती है।

अधिकांश मृदाओं की धनायन विनिमय क्षमता pH के साथ बढ़ती जाती है, 6.0 से कम pH पर मृत्तिका खनिज के लिए आवेश अपेक्षाकृत स्थिर होता है, जबकि 6.0 से ऊपर pH होने पर खनिज कोलॉइड पर आवेश थोड़ा सा बढ़ जाता है क्योंकि क्रिस्टल के किनारों पर स्थित हाइड्रॉक्सिल समूहों (exposed hydroxyl groups) से हाइड्रोजन का आयनन (ionisation) होता है। फिर भी, बहुत कम pH पर धनायन विनिमय क्षमता सामान्यतः कम होती है।

धनायन विनिमय गुण बहुत महत्वपूर्ण होता है क्योंकि ये मृदा के भौतिक और रासायनिक गुणों को प्रभावित करता है। सबसे महत्वपूर्ण आयन हाइड्रोजन, सोडियम और कैल्शियम के होते हैं। उदाहरण के लिए, हाइड्रोजन आयनों का विनिमय मृदा के pH को प्रभावित करता है। यदि विनिमयकारी हाइड्रोजन की प्रधानता होती है तो मृदा अम्लीय हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप Al^{3+} आयन विनिमयकारी हो जाते हैं और पादपों के लिए विषाक्त (toxic) हो सकते हैं। दूसरी ओर सोडियम आयनों का अधिक विनिमय होने पर मृदा क्षारीय हो

MAADHYAM IAS

जाती है। कैल्शियम अधिक बारीक कणों के स्थायी समुच्चय (aggregates) बनाने में समर्थ होता है।

आयन विनिमय आँकड़े निम्नलिखित के लिए सहायक होते हैं :

- मृदा के प्रबंधन में,
- मृदा की पोषक तत्व संग्रह क्षमता (nutrient storage capacity) दर्शाने में
- लवणता (salinity) के दुष्प्रभावों की प्रागुक्ति करने में,
- चूने की आवश्यकता का निर्धारण करनें में, आदि।

2.4.3 मृदा pH- अम्लता तथा क्षारता

जल में पाई जाने वाली H^+ की अतिअल्प सान्द्रता को आसानी से व्यक्त करने के लिए pH स्केल बनाया गया। मृदा-जल निकाय (soil-water system) का pH मृदा प्रावस्था (soil phase) में उपस्थित हाइड्रोजन आयनों के सक्रिय अंश का निकटतम माप (approximate measure) होता है, जहाँ वे अवियोजित (undissociated) रहते हैं। **मृदा अम्लता** (soil acidity) आयननीय (ionisable) हाइड्रोजन आयनों अथवा प्रोटोनों (protons) के कारण होती है। विनिमयकारी H^+ आयन और साथ ही अन्य धनायन इसके एक स्त्रोत हैं जैसा कि पिछले उपभाग में बताया गया है। आइए, देखते हैं कि इसके अन्य स्त्रोत क्या हैं।

अम्लीय मृदाओं का निर्माण

मृदा की अम्लता वर्तमान मृदा अम्लता के स्तर पर निर्भर करते हुए, मुख्यतः हाइड्रोजन और ऐलुमिनियम आयनों के कारण होती है। बहुत कम pH (<5.0) पर ऐलुमिनियम घुलनशील होता है और $Al(OH)^{2+}$ के रूप में जल अपघटित ((hydrolyse) हो जाता है, जो H^+ आयन निर्मुक्त (release) होते हैं, अम्लता के लिए उत्तरदायी होते हैं। 5.0 से 6.5 तक के pH पर OH^- आयनों की उपस्थिति में एलुमिनियम, $Al(OH)_2^+$ आयनों में परिवर्तित हो जाता है जो फिर से जल अपघटित होकर ऐलुमिनियम हाइड्रॉक्साइड तथा H^+ आयन बनाते हैं, जो मृदा की अम्लता को और अधिक बढ़ाता है। अभिक्रियाओं को क्रमबद्ध तरीके से निम्नलिखित रूप से लिखा जा सकता है :

$$Al^{3+} + H_2O \rightarrow Al(OH)^{2+} + H^+$$
$$Al(OH)^{2+} + H_2O \rightarrow Al(OH)_2^+ + H^+$$
$$Al(OH)_2^+ + H_2O \rightarrow Al(OH)_3 + H^+$$

अम्ल मृदाओं के निर्माण के अन्य विभिन्न तरीके निम्नलिखित हैं :

1. बहता हुआ जल अथवा वर्षा का जल निम्नलिखित अभिक्रिया के अनुसार अम्ल मृदा का निर्माण करता है,

   $$Na^+ + \text{मृदा} - \text{जल} \rightarrow H^+ - \text{मृदा} + NaOH$$

   जहाँ क्षार बहते हुए जल के साथ बह जाता है अथवा वह नीचे जमीन में रिस जाता है और अम्ल मृदा को ऊपर छोड़ जाता है।

2. वर्षा का जल वायुमंडल की CO_2 को घोलकर कार्बोनिक अम्ल (carbonic acid) बना देता है जो मृदा को अम्ल मृदा में परिवर्तित कर देता है।

   $$Na^+ - \text{मृदा} + H_2CO_3 \rightarrow H^+ - \text{मृदा} + NaHCO_3$$

   प्रदूषित वायुमंडल की वायु में SO_2, SO_3, NO_2 गैसें उपस्थित होती हैं जो वर्षा के जल में घुलकर H_2SO_3, H_2SO_4 तथा HNO_3 बनाती हैं, जिससे अम्ल मृदाए बन

MAADHYAM IAS

सारणी 2.6 : दिए गए pH पर कुछ मृदा के नमूनों की चूने की आवश्यकता

मृदा निलंबन का pH	मृदा को दिए गए पी एच (pH) तक जाने के लिए चूने की आवश्यकता (शुद्ध $CaCO_3$ के टन/एकड़* में)		
	pH 6.0	pH 6.4	pH 6.8
6.7	1.0	1.2	1.4
6.6	1.4	1.7	1.9
6.5	1.8	2.2	2.5
6.4	2.3	2.7	3.1
6.3	2.7	3.2	3.7
6.2	3.1	3.7	4.2
6.1	3.5	4.2	4.8
6.0	3.9	4.7	5.4
5.9	4.4	5.2	6.0
5.8	4.8	5.7	6.5
5.7	5.2	6.2	7.1
5.6	5.6	6.7	7.7
5.5	6.0	7.2	8.3
5.4	6.5	7.7	8.9
5.3	6.9	8.2	9.4
5.2	7.4	8.6	10.0
5.1	7.8	9.1	10.6
5.0	8.2	9.6	11.2
4.9	8.6	10.1	11.8
4.8	9.1	10.6	12.4

* मीट्रिक इकाइयों में बदलने के लिए अंको को 2.51 से गुणा कर दें यानि, टन/हैक्टेयर

अम्लीय मृदा में चूना डालने के प्रत्यक्ष **(direct)** तथा परोक्ष (indirect) प्रभाव सामान्यतः अधिक फसल वृद्धि के रूप में होते हैं, यद्यपि इनके परिमाण **(magnitude)** विभिन्न मृदा स्थितियों तथा फसल प्रणालियों में काफी बदलते रहते हैं। अम्लीय मृदा में फलियों (legumes) में चूना डाले जाने पर अधिक असर होता है। कुछ स्थानों पर चावल $7 फसल पर चूनायन का प्रभाव पड़ता है। एन पी के (NPK) उर्वरकों के साथ-साथ चूना डालने से गेहूँ , मक्का, ज्वार तथा जूट की पैदावार बढ़ जाती है। अलग-अलग फसलों में चूना डालने के अलग असर होने का मुख्य कारण यह है कि विभिन्न फसलों की सामान्य वृद्धि के लिए मृदा अभिक्रिया संदर्भ **(soil reaction references)** समान नहीं होते हैं।

क्षारीय मृदा का निर्माण

मृदा क्षारता उच्च क्षार संतृप्ति (high **base saturation)** खासतौर पर, सोडियम के साथ तथा कैल्शियम और सोडियम के मुक्त कार्बोनेटों की उपस्थिति के कारण हो सकती है। मृदा की क्षारता दो प्रकार से हो सकती है :

1. निम्नलिखित अभिक्रिया के अनुसार मृदा में घुलनशील कार्बोनेटों के जल-अपघटन से मृदा क्षारीय हो जाती है।

   $$Na_2CO_3 + H_2O \rightarrow 2Na^+ + 2OH^- + H_2CO_3$$

2. जब मृदा में Ca तथा/अथवा Mg कार्बोनेट आधिक्य में होते हैं, तो उनका जल-अपघटन हो जाता है, जैसे,

   $$CaCO_3 + 2H_2O \rightarrow Ca^{2+} + 2OH^- + H_2CO_3$$

   और मृदा क्षारीय हो जाती है, क्योंकि H_2CO_3 एक दुर्बल अम्ल है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

क्षारीय मृदा की हानियाँ

अधिकांश पादप नाइट्रोजन को नाइट्रेट के रूप में स्वांगीकृत (assimilate) कर लेते हैं और अमोनियम उर्वरकों का उपचयन (oxidation) केवल अम्लीय माध्यम में ही होता है, अतः क्षारीय माध्यम में नाइट्रोजन पौधों को उपलब्ध नहीं होती है। सभी धातु आयन हाइड्रॉक्साइडों के रूप में अवक्षेपित (precipitated) हो जाते हैं और पौधों को पोषक तत्वों के रूप में उपलब्ध नहीं होते हैं। फ़ॉस्फ़ेट भी अवक्षेपित हो जाते हैं और पोषक तत्व के रूप में उपलब्ध नहीं होते हैं। दूसरे शब्दों में क्षारीय माध्यम में पादपों की वृद्धि कम हो जाती है।

बोध प्रश्न 7

मृदा की अम्लता बढ़ाने में ऐलुमिनियम की भूमिका का वर्णन कीजिए। उसमें सम्मिलित आयनी स्पीशीज़ को लिखिए।

....

....

....

2.5 सारांश

आइए, इस इकाई में चर्चित मृदा की गुणवत्ता का मूल्यांकन करने के विभिन्न पहलुओं को संक्षेप में दोहराएं। मृदा गुणवत्ता के तीन प्रकार के प्राचल होते हैं उदाहरणतः यांत्रिक, जैविक तथा भौतिक-रासायनिक। यांत्रिक प्राचल प्राथमिक रूप से मृदा के संघटन पर निर्भर करते हैं। विभिन्न आमाप के कणों जैसे बालू, गाद तथा मृत्तिका का आपेक्षिक अनुपात मृदा के गठन का निर्धारण करता है और मृदा को उपयुक्त गठन वर्ग प्रदान करने के लिए इसका उपयोग किया जा सकता है। दूसरी तरफ मृदा की संरचना विभिन्न कणों का विभिन्न आकार के समूहों में समुच्चयन का परिणाम होती है। ये संरचनाएं मृदा में छिद्र कर देती हैं जिनमें वायु, जल तथा जीव होते हैं, जिनमें से प्रत्येक की पादप वृद्धि के लिए आवश्यकता होती है। मृदा वातन यानि मृदा छिद्रों में वायु की उपस्थिति मृदा में Fe, Mn, N ,S , C की उपचयन अवस्था को निर्देशित करती है जो फिर मृदा के वर्ण को प्रभावित करती है। छिद्रों में पानी रहता है जो विभिन्न क्रियाविधियों के द्वारा पादपों की वृद्धि और विकास के लिए उपलब्ध रहता है और पादपों को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराने के लिए माध्यम भी प्रदान करता है।

दूसरा महत्वपूर्ण मृदा गुणवत्ता प्राचल मृदा में वनस्पतिजात तथा प्राणिजात की उपस्थिति है। वनस्पतिजात और प्राणिजात, अनेक तरीकों से कार्य करते हैं और पादपों की वृद्धि के लिए पोषक तत्व उपलब्ध कराते हैं। ये जीव मृदा में उपस्थिति विभिन्न यौगिकों का अनेक प्रक्रियाओं जैसे विघटन, संश्लेषण तथा रूपांतरण करके पादपों के जीवन चक्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। एक ही स्थान पर एक ही फसल की लगातार कई वर्षों तक खेती करने से उस खास प्रकार के सूक्ष्मजीव वहां एकत्रित हो जाते हैं जो दूसरों से अधिक प्रभावी हो जाते हैं। फसल के चक्रण यानि बदल कर फसल लगाने से उनकी नुकसानदायक आबादी को रोका जा सकता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

मृदा गुणवत्ता का तीसरा महत्वपूर्ण प्राचल मृदा के भौतिक-रासायनिक गुणों से संबन्धित है। किसी भी प्रकार की भौतिक-रासायनिक अभिक्रियाओं के लिए मृदा का सबसे सक्रिय भाग मृदा कोलॉइड होता है जो मृत्तिका और ह्यूमस का बना होता है। अधिकांश मृत्तिका खनिजों की संरचना और उनमें समाकृतिक (isomorphous) प्रतिस्थापन के कारण मृत्तिका और फलस्वरूप मृदाएं आयन विनिमय गुण को दर्शाने में सक्षम होती हैं। पार्श्व सतहों (lateral surfaces) की संरचना, जो धनात्मक और ऋणात्मक आवेश युक्त होती हैं, के कारण ऋणायन विनिमय होता है। मृदा ह्यूमस उच्च धनायन विनिमय क्षमता के लिए उत्तरदायी है। यद्यपि पादप की वृद्धि के लिए अम्लीय मृदा आवश्यक होती है फिर भी अतिरिक्त अम्लता के कारण मृदा मृत्तिका के विखंडन को मृदा में उचित मात्रा में चूना

डालकर रोका जा सकता है। यदि मृदा का उचित प्रबंधन नहीं होता तो उसमें थोड़े ही समय में बालू की मात्रा बढ़ सकती है और 15 cm मोटी मृदा की परत जो लाखों सालों में बनी है, बहुत कम समय, लगभग पचास सालों में ही विलुप्त हो जाएगी।

2.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. मृदा गठन के वर्गों का श्रेणीकरण कैसे किया जाता है और इसका क्या महत्व है ?

2. मृदा जल मात्रा तथा पादप उपलब्ध मृदा नमी के बीच अन्तर बताइए।

3. मृदा वातन के गुणों की पहचान करने के तीन तरीकों का वर्णन कीजिए।

4. समझाइए कि क्यों केंचुओं को सबसे महत्वपूर्ण मृदा जीव कहा जाता है।

5. कृषि के पहलू से सूत्रकृमि क्यों बहुत महत्वपूर्ण होते हैं ?

6. निम्नलिखित अवस्थाओं में आपके विचार से सूक्ष्म वनस्पतिजात का कौन सा वर्ग सबसे सक्रिय होगा ?
   i) नाइट्रोजन की मांग वाले धान के खेतों में
   ii) अम्लीय मृदा में
   iii) सबसे प्रतिरोधी कार्बनिक यौगिकों के विघटन में
   iv) वायुमंडलीय नाइट्रोजन के यौगिकीकरण में
   v) जहाँ प्रकाश-संश्लेषण होता है।

7. आप इस तथ्य को किस प्रकार समझाएंगे कि मृत्तिका मृदाएं जिसमें सामान्यतः बालुई मृदाओं से अधिक रंधाकाश होते हैं, अक्सर बालुई मृदाओं की अपेक्षा कम वातायित होती हैं।

8. जब एक अम्लीय क्षेत्र की मृदा की पहली बार खेती करने के लिए सफाई की गई तो वहाँ का pH लगभग 8.0 था। कुछ सालों तक सिंचाई करने के बाद, फसल उत्पादन कम हो गया, मृदा समुच्चयन विखंडित होने लगा और pH 10 के आसपास पहुँच गया। इसकी क्या संभव व्याख्या हो सकती है ?

2.7 उत्तर

बोध प्रश्न

1. मृदा गठन मृदा का एक ऐसा भौतिक गुण है जो समय के साथ बदलता नहीं है और उसके विश्लेषण से विभिन्न उपयोगकर्ताओं के लिए उसकी उपयुक्तता का निर्णय किया जाता है। इसका विश्लेषण मृदा की संरचना, वातन, जल ग्राही क्षमता आदि के निर्धारण में भी सहायक होता है।

2.

गठन वर्ग
मृत्तिका
गादमय मृत्तिका
बालुई मृत्तिका
मृत्तिका दुमट
बालुई
गाद दुमट
बालुई दुमट
दुमट
दुमटी बालू

MAADHYAM IAS

3. प्रतिशत रंध्राकाश = $\frac{(2.6-1.2)}{2.6}\times 100 = 53.85$ अथवा

$$100\% - \left[\frac{1.2}{2.6}\times 100\right] = 53.8\%$$

4. चित्र 2.2 को देखिए। क्योंकि मृत्तिका का मैट्रिक विभव अधिक होता है, ये बहुत प्रब्लता से अधिक जल को जकड़े रखती है, जिसके फलस्वरूप इसकी काफी मात्रा पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाती है। दूसरी तरफ, दुमट मिट्टी में मृत्तिका की मात्रा कम होती है इसलिए पौधों को अधिक जल उपलब्ध हो जाता है।

5. i शैवाल
   ii) वायवीय, स्थूल
   iii) जीवाणु
   iv) कार्बनिक तत्वों का विघटन और ह्यूमिक पदार्थों का संश्लेषण।

6. अकार्बनिक मृदा कोलॉइड मुख्यतः द्वितीयक खनिज युक्त होते हैं, जिनमें प्राथमिक खनिज तथा Fe, Al तथा Si के ऑक्साइड मिले रहते हैं। कार्बनिक मृदा कोलॉइड मुख्यतः मृदा ह्यूमस होता है जो पादप तथा जंतु स्त्रोतों द्वारा विकसित होता है।

7. अम्लीय मृदा में विनिमयकारी ऐलुमिनियम निम्न प्रकार से धीरे-धीरे जल अपघटित हो जाता है।

$$Al^{3+} + H_2O \rightarrow Al(OH)^{2+} + H^+$$
$$Al(OH)^{2+} + H_2O \rightarrow Al(OH)_2^+ + H^+$$
$$Al(OH)_2^+ + H_2O \rightarrow Al(OH)_3 + H^+$$

इस प्रक्रिया में ये हाइड्रोजन आयनों को प्रदान करता है जो मृदा को उतना अम्लीय बनाए रखते हैं जितना पादप वृद्धि के लिए पर्याप्त होता है।

अंत में कुछ प्रश्न

1. मृदा गठन के वर्ग उसके पृथक/पृथकों के प्रतिशत पर आधारित होते हैं जो मृदा के गुणों में सबसे अधिक योगदान देते हैं। गठन वर्ग भौतिक गुणों जैसे मृदा वातन, जुताई आदि तथा मृदा विशेष के गठन की बनावट को दर्शाते हैं।

2. शुष्क मृदा के द्रव्यमान के सापेक्ष लुप्त जल के द्रव्यमान को मृदा जल मात्रा कहते हैं जबकि पादप उपलब्ध जल वह जल होता है जो पादप की जड़ों द्वारा तुरन्त सोख लिया जाता है।

3. तीन तरीके हैं (i) मृदा का उपोपचय विभव (redox potential) (ii) मृदा का रंग (iii) मृदा में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि।

4. केंचुए जिस मृदा में होते हैं उसके कार्बनिक तत्वों तथा मृदा को खा लेते हैं और उसे मिलाकर दानेदार कर देते है और वहां मल त्याग करके मृदा समुच्चयों की स्थिरता को बढ़ा देते हैं और मृदा वातन को बेहतर कर देते हैं। मृदा में रह गए उनके छिद्र भी वातन और निकासी को बढ़ा देते हैं।

5. सूत्रकृमि बहुतायत में पाए जाने वाले मृदा सूक्ष्म प्राणिजात हैं। परभक्षी और मृतजीवी प्रकृति के होने के कारण वो जड़ तंत्र की शक्ति को क्षीण कर देते हैं। इसी कारण वह मृदा जिसमें अधिक सूत्रकृमि होते हैं वहां पादपों में रोग भी अधिक होने की संभावना होती है। उनके द्वारा पादपों को होने वाली क्षति को फसल चक्रण, ग्रीष्म

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

परती (summer fallow) तथा जुताई, कार्बनिक खादों तथा खली के प्रयोग द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है।

6. i) नील हरित शैवाल
   ii) मृदा कवक
   iii) मृदा कवक तथा मृदा ऐक्टिनोमाइसिटीज
   iv) सहजीवी तथा असहजीवी नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले जीवाणु
   v) मृदा शैवाल

7. मृत्तिका मृदाओं में रंध्राकाश अधिक होते हैं लेकिन मृत्तिका जल को मजबूती से पकड़ती है जिससे ये छिद्र बंद हो जाते हैं। दूसरी तरफ बालुई मृदा में जल बालू में से रिस जाता है और छिद्र वातन के लिए खुले रहते हैं।

8. आरंभ में pH 8 होने पर मृदा में चूना था। समय के साथ कैल्शियम का अवक्षय (depleted) हो गया और उसके स्थान पर मृदा में सोडियम आयन अथवा सोडियम कार्बोनेट आ गया जिसकी वजह से समुच्चयन खत्म हो गया और सोडियम कार्बोनेट निम्न प्रकार से जलअपघटित हो गया

$$Na_2CO_3 + 2H_2O \rightarrow 2NaOH + H_2CO_3$$

क्योंकि H_2CO_3 बहुत दुर्बल अम्ल है इसलिए मृदा क्षारीय हो जाती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 3 मृदा उर्वरता तथा उत्पादकता

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

3.2 पादप पोषक तत्व

गुरूपोषक तत्व

सूक्ष्मपोषक तत्व

3.3 मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता

उपलब्ध पोषक तत्वों के आकलन की रासायनिक विधियाँ

मृदा का pH तथा पोषक तत्व उपलब्धता

3.4 मृदा उर्वरता का मूल्यांकन

मृदा उर्वरता की संकल्पनाएं

अधिकतम फसल उपज

3.5 मृदा उत्पादकता का प्रबंधन

उर्वरक तथा उर्वरक प्रबंधन

उर्वरक की आवश्यकताओं को प्रभावित करने वाले कारक

खादें

पारंपरिक तरीके

3.6 सारांश

3.7 अंत में कुछ प्रश्न

3.8 उत्तर

3.1 प्रस्तावना

इस पाठ्यक्रम की पहली इकाई में आपने मृदा की प्रकृति एवं घटकों के बारे में तथा उसके निर्माण में सम्मिलित प्रक्रियाओं के साथ-साथ उसको प्रभावित करने वाले कारकों के बारे में पढ़ा था। दूसरी इकाई में मृदा के भौतिक, जैविक तथा भौतिक-रासायनिक प्राचलों को मृदा गुणवत्ता के सूचकों के रूप में तथा उनके निर्धारण के बारे में बताया गया था। इस इकाई के हम मृदा की उर्वरता (fertility) तथा उत्पादकता ((productivity) के पहलुओं पर चर्चा करेंगे।

उस मृदा को उर्वर **(fertile)** माना जाता है जो उपयुक्त पर्यावरणीय परिस्थितियों में अधिक मात्रा में फसल उत्पन्न करती है। फिर भी मृदा उत्पादकता तथा मृदा उर्वरता के बीच में स्पष्ट विभेद किया जाना चाहिए। मृदा उर्वरता का संबन्ध मृदा के उन जन्मजात या सहज गुणों से होता है जो उसे किसी पादप विशेष की वृद्धि के लिए आवश्यक पोषक तत्वों को उचित मात्रा और अनुपात में प्रदान करने में सक्षम बनाते हैं जब प्रकाश, तापमान, नमी तथा मृदा की भौतिक स्थितियों जैसे वायुमंडलीय कारक अनुकूल होते हैं। साथ ही मृदा में कोई आविषालु पदार्थ (toxic substances) भी नहीं होने चाहिए। लवणीय मृदा (**saline** soil) वैसे तो उर्वर होती है लेकिन सोडियम लवणों की अधिकता पौधों के लिए विषाक्त हो सकती है और Na^+, Ca^{2+}, K^+ तथा अन्य पोषक आयनों के बीच संतुलन को बिगाड़ देती है। मृदा उत्पादकता मूल रूप से एक आर्थिक पहलू है और प्रबंधन की किसी विशिष्ट प्रणाली में मृदा की किसी पादप विशेष अथवा पादपों की श्रेणियों को उत्पन्न करने की क्षमता को बताता है। उत्पादकता मृदा की फसल उत्पन्न करने की क्षमता पर बल देती है और उपज

MAADHYAM IAS

के रूप में व्यक्त की जाती है। अतः मृदा उर्वरता, अच्छी प्रबंधन पद्धतियाँ, जल आपूर्ति की उपलब्धता और उपयुक्त जलवायु मृदा उत्पादकता में योगदान देते हैं। दूसरे शब्दों में, मृदा बहुत उपजाऊ (जिसमें पोषक तत्वों की पर्याप्त आपूर्ति होती है) होते हुए भी अनुत्पादक (unproductive) हो सकती है। उदाहरण के लिए इसका एक कारण अपर्याप्त जल आपूर्ति हो सकता है। मृदा उर्वरता मृदा में पादप पोषक तत्वों के स्तर को दर्शाती है जबकि मृदा उत्पादकता में मृदा के अंदर तथा उसके बाहर फसल उत्पादन को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारक सम्मिलित हैं। इस इकाई में मृदा उर्वरता तथा मृदा उत्पादकता की धारणाओं तथा उनके परस्पर-संबध को समझाया गया है यह मानते हुए कि मृदा अच्छी गुणवत्ता की है और जल, वायु तथा प्रकाश की उपलब्धता पादप वृद्धि के लिए पर्याप्त है।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- मृदा में उपस्थित गुरूपोषक तत्वों तथा सूक्ष्मपोषक तत्वों के महत्व और उनके कार्यों का वर्णन कर सकेंगे,
- मृदा उर्वरता के मूल्यांकन के नियमों का वर्णन कर सकेंगे,
- पोषक तत्व उपलब्धता की संकल्पना को समझा सकेंगे, तथा
- मृदा उत्पादकता के प्रबंधन में मृदा प्रबंधन के महत्व को समझ सकेंगे।

3.2 पादप पोषक तत्व

पादपों में प्रकाश संश्लेषण के लिए ऊर्जा का प्राथमिक स्त्रोत सूर्य है। पादपों का पूर्ण विश्लेषण करने पर बड़ी संख्या में तत्वों की उपस्थिति प्रदर्शित होती है, लेकिन केवल उन्हीं तत्वों को आवश्यक माना जाता है जो पादप को पोषण प्रदान करते हैं और पादप उपापचयन (metabolism) में भाग लेते हैं। किसी तत्व को आवश्यक कहा जाता है, यदि

i) पादप में उस तत्व की कमी से उसके जीवन की कायिक (vegetative) अथवा प्रजनन (reproductive) अवस्था का पूरा होना असंभव हो,
ii) तत्व सीधे तौर पर पादप के पोषण में शामिल हो,
iii) उसकी अनुपस्थिति से पादप में होने वाली कमी को केवल उस तत्व के द्वारा पूरा किया जा सकता हो।

प्रायोगिक रूप में, आवश्यकता को स्थापित करने के लिए इन सभी कारकों का पूरा होना कठिन हो जाता है, खासतौर पर उन तत्वों के साथ जिनकी बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है। इस कठिनाई को दूर करने हेतु सामान्य वृद्धि के लिए आवश्यक तत्वों को **अनिवार्य तत्व** (essential element) कहते हैं। इन तत्वों को **गुरूपोषक तत्वों** (macronutrients) तथा **सूक्ष्मपोषक तत्वों** (micronutrients) में विभाजित किया गया है। वो तत्व जिनकी पादप की वृद्धि के लिए अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है (सामान्यतः पादप में (> 50 mg/kg), गुरूपोषक तत्व कहलाते हैं और इनमें नाइट्रोजन (nitrogen), कार्बन (carbon), हाइड्रोजन (hydrogen), ऑक्सीजन (oxygen), फॉस्फोरस (phosphorus), पोटैशियम (potassium), कैल्शियम (calcium), मैग्नीशियम (magnesium), तथा सल्फर (sulphur), सम्मिलित हैं। वे तत्व जिनकी पादप वृद्धि के लिए बहुत ही अल्प मात्रा में (< 50 mg/kg) आवश्यकता होती है, सूक्ष्मपोषक तत्व कहलाते हैं। ये तत्व हैं बोरॉन (boron), आयरन (iron), मैंगनीज (manganese), जिंक (zinc), कॉपर (copper), मॉलिब्डेनम (molybdenum) तथा क्लोरीन (chlorine)। सोडियम (sodium), कोबाल्ट (cobalt), वेनेडियम (vanadium), सिलिकॉन (silicon), सेलेनियम (selenium), गेलियम (gallium), ऐलुमिनियम (aluminium), तथा आयोडीन (iodine) भी इसी सूची में शामिल है। आइए, इस उपभाग में संक्षिप्त रूप से इन दोनों के बारे में चर्चा करें।

कुछ तत्व जो पादपों द्वारा आयनिक रूप में अवशोषित किए जाते हैं वे हैं

नाइट्रोजन, NO_3^-, NH_4^+ के रूप में

फॉस्फोरस, $H_2PO_4^-$, HPO_4^{2-} के रूप में

पोटैशियम, K^+ के रूप में

कैल्शियम, Ca^{2+} के रूप में

MAADHYAM IAS

गुरूपोषक तत्व (~50 mg/kg): N,C,H,O,P,K,Ca, Mg और S

3.2.1 गुरूपोषक तत्व

पादप उपापचयन में प्रत्येक तत्व का विशिष्ट कार्य होता है, यद्यपि उनमें से अनेक के सही कार्य के बारे में आज भी पता नहीं है। ये अनिवार्य तत्व कोशिका के संरचनात्मक घटकों के

रूप में पाए जाते '8, जो सगठन (cellular organisation) को बनाए रखते 8, ऊर्जा रूपांतरण (energy transformations) तथा एन्ज़ाइम अभिक्रियाओं में कार्य करते हैं। कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन पादप के शुष्क द्रव्यमान का लगभग 94% भाग बनाते हैं। इन तत्वों को कार्बन-डाइऑक्साइड तथा जल से प्राप्त किया जाता है जो प्रकाश रासायनिक (photochemically) रूप से कार्बोहाइड्रेटों में परिवर्तित हो जाते हैं और अंततः प्रोटीन तथा जीवद्रव्य (protoplasm) में परिवर्तित हो जाते हैं। अपनी संरचनात्मक भूमिका के साथ ही कोशिकीय श्वसन के समय ऑक्सीकृत विखंडन के द्वारा ये पादप की वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक ऊर्जा प्रदान करते हैं। फिर भी, इन तत्वों को खनिज पोषक तत्व नहीं माना जाता है। बाकी तत्वों का वर्णन नीचे दिया गया है।

नाइट्रोजन

नाइट्रोजन एक महत्वपूर्ण पादप पोषक तत्व है जो अधिकांश पादपों द्वारा नाइट्रेट तथा अमोनियम आयनों के रूप में अपनाया (assimilated) जाता है। कार्बनिक तत्व मृदा की संपूर्ण नाइट्रोजन का भंडार घर हैं। पादपों द्वारा अवशोषित किए जाने वाले नाइट्रोजन का प्रकार चाहे कुछ भी हो, पर वह –N = , NH–, – NH_2 रूपों में ही अपचित होती है और फिर अधिक जटिल यौगिक बनाती है और अंततः प्रोटीनों का निर्माण करती है। इसके अतिरिक्त, नाइट्रोजन अनेक जैव अणुओं (biomolecules) में भी पाई जाती 8 जैसे, क्लोरोफिल पर्णहरित (chlorophyll) , न्यूक्लियोटाइड (nucleotides), फॉस्फेटिड (फॉस्फोलिपिड) तथा ऐल्केलॉइड (alkaloids), साथ ही ये अनेक एन्ज़ाइमों, हार्मोनों तथा विटामिनों में भी पाई जाती है। ये जैव अणु उपापचयन में भी बहुत शरीरक्रियात्मक (physiological) महत्व के होते हैं। नाइट्रोजन की आपूर्ति कार्बोहाइड्रेट के उपयोग से संबद्ध होती है। यदि नाइट्रोजन की आपूर्ति अपर्याप्त होती है तो कार्बोहाइड्रेट कायिक (vegetative) कोशिकाओं में निक्षेपित (deposit) हो जाते 8, जिससे वे मोटी हो जाती हैं। नाइट्रोजन उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से चुकन्दर (sugar beets) में शक्कर की मात्रा कम हो जाती है। फिर भी,, यदि नाइट्रोजन उपलब्ध हो और स्थितियाँ अनुकूल हों, तो कार्बोहाइड्रेट प्रोटीनों में और उसके बाद जीवद्रव्य (protoplasm) में परिवर्तित हो जाते हैं। जिन पादपों में नाइट्रोजन की कमी होती है, बौने (stunted) और पीले से दिखाई पडते हैं। ये पीलापन या **हरितरोग** (chlorosis) सामान्यतः पहले नीचे की ओर की पत्तियों पर दिखाई देता है, ऊपर की पत्तियाँ हरी ही रहती हैं। नाइट्रोजन की अत्यधिक कमी हो जाने पर पत्तियाँ भूरी हो जाती हैं और मर जाती है। इस तरह पादप की वृद्धि में बाधा पड़ती है और फसल की उपज पर काफी प्रभाव पड़ता है।

[% कार्बनिक तत्व = % N × 20]

क्लोरोसिस (हरित रोग) वह स्थिति है जिसमें क्लोरोफिल का विकास नहीं होता है। ऐसी स्थितियों में पत्तियों का रंग हल्के हरे से पीला या करीब-करीब सफेद सा होता है।

फ़ॉस्फ़ोरस

नाइट्रोजन और पोटैशियम के साथ ही फ़ॉस्फ़ोरस को भी प्रमुख पोषक तत्व के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। यह न्यूक्लीक अम्ल (nucleic acicls), फाइटिन (phytin), फ़ॉस्फोलिपिड (phospholipid), कोशिका झिल्ली (cell membrane), क्लोरोप्लास्ट (chloroplast, हरितलवक), आदि का प्रमुख घटक है। पादप के जीवन में आरंभ में ही फ़ॉस्फ़ोरस की पर्याप्त आपूर्ति उसके प्रजनन भागों के मूल विकास के लिए महत्वपूर्ण होती है। पादप अधिकांश फ़ॉस्फ़ोरस को $H_2PO_4^-$, आयनों और उसकी अल्प मात्रा को HPO_4^{2-} आयनों के रूप में अवशोषित करते हैं, सामान्यतः इनका अनुपात 10:1 का होता है। अवशोषित होने वाले आयनों की मात्रा pH पर निर्भर करती है। निम्न pH होने पर $H_2PO_4^-$, आयन अधिक अवशोषित होते हैं, जबकि उच्च pH होने पर इसका HPO_4^{2-} के रूप में अवशोषण बढ़ जाता है। फ़ॉस्फ़ोरस की अधिक मात्रा लिए जाने पर पार्श्व (lateral) तथा तंतुमय (fibrous) जड़ों का निर्माण होता है, जिससे अन्य पोषक तत्वों के लिए अवशोषण सतह बढ़ जाती है। फ़ॉस्फ़ोरस की पर्याप्त आपूर्ति का संबन्ध अनाज की बालियों की अधिक मज़बूती से होता है। यह कुछ फलों, सब्जियों तथा अनाज की फसलों की गुणवत्ता को भी बढ़ा देता है।

फ़ॉस्फ़ोरस फसलों, विशेष रूप से अनाजों की जल्दी परिपक्वता से भी संबन्धित है। इसकी कमी से पादप वृद्धि में काफी गिरावट आ जाती है। फ़ॉस्फ़ोरस की कमी वाली मृदा में उगने वाली फसलों में इस तत्व की मात्रा कम होती है और इसलिए वो मवेशियों को खिलाने के लिए कमतर मूल्य के होते हैं। फ़ॉस्फ़ेट की कमी वाली स्थितियों में उगने वाली

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

फलीदार फसलों में नाइट्रोजन की भी कमी हो सकती % क्योंकि ग्रंथि के जीवाणु ((nodule bacteria) सामान्य रूप से तभी कार्य करते हैं जब पादपों में पर्याप्त मात्रा में फॉस्फोरस की आपूर्ति की जाती है।

पोटैशियम

पोटैशियम तीसरा प्रमुख तत्व है जिसकी पादप वृद्धि के लिए आवश्यकता होती है, यह सामान्यतः K^+ आयन के रूप में अवशोषित होता है। मृदा में 95 से 99 प्रतिशत पोटैशियम खनिजों के जालक (lattice) के रूप में रहते हैं जैसे फेल्डस्पार (feldspar), श्वेत अभ्रक (muscovite), काला अभ्रक (biotite) तथा जलयोजित अभ्रक (hydrous mica)। भूपर्पटी में पोटैशियम की औसतन 2.6 प्रतिशत मात्रा होती है। इसका मतलब है कि उसमें प्रति हैक्टेयर 40,000 से 50,000 किलोग्राम पोटैशियम होता है। पोटैशियम की इतनी मात्रा सदैव बनी रहने के लिए पर्याप्त है। फ़िर भी, यह पोटैशियम तत्काल उपलब्ध नहीं होता है, इसलिए पोटैशियम उर्वरकों पर खर्च होने वाला धन लगातार बढ़ता रहेगा।

नाइट्रोजन, सल्फर, फ़ॉस्फ़ोरस तथा कुछ अन्य तत्वों के विपरीत पोटैशियम प्रकट तौर पर पादप में कार्बनिक यौगिक नहीं बनाता है और इसलिए यह जीवद्रव्य, वसा तथा सैलुलोस के जैसे पादप घटकों का अभिन्न भाग नहीं है। इसका कार्य उत्प्रेरकी प्रवृत्ति का दिखाई पडता है। इसके अलावा यह निम्नलिखित शरीरक्रियात्मक (physiological) कार्यों के लिए आवश्यक है :
यह प्रकाश संश्लेषण के लिए आवश्यक है। जब K^+ आयनों की कमी होती है, तो प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है तथा श्वसन बढ़ जाता है जिससे पादप की कार्बोहाइड्रेट की आपूर्ति कम हो जाती है।

यह प्रोटीन संश्लेषण के लिए आवश्यक है।

- यह उस प्रक्रिया के द्वारा कार्बोहाइड्रेटों के विखंडन के लिए महत्वपूर्ण है जो पादपों की वृद्धि के लिए ऊर्जा प्रदान करती है।
- यह आयनी संतुलन को नियंत्रित करने में सहायक है।
- यह आयरन जैसी भारी धातुओं के स्थानांतरण में महत्वपूर्ण होता है।
- यह पादप को रोगों के प्रभावों से उबारने में सहायक होता है।
- यह फल निर्माण में महत्वपूर्ण होता है।
- यह 60 से भी अधिक एन्ज़ाइम निकायों को सक्रिय करता है जो पादप की प्रमुख उपापचयी अभिक्रियाओं की दरों को नियंत्रित करते हैं।
- पादप पर्ण छिद्रों (रंध्रों, stomata) के खुलने और बंद होने की प्रक्रिया पोटैशियम द्वारा नियंत्रित होती है और इस तरह यह जल के उचित रूप से उपयोग को नियंत्रित करता है।

MAADHYAM IAS

विभज्योतकी उत्तक : वे उत्तक जिनमें विभाजित होने वाली कोशिकाएं होती हैं।

फसल उत्पादन पर इन प्रभावों के कुल असर को कई तरीकों से देखा जा सकता है। संभवतः पोटैशियम की कमी का पहला दृश्य संकेत पत्तियों पर दिखाई देता है। पोटैशियम गतिशील तत्व 2, जो कमी हो जाने पर तरुण विभज्योतकी ऊतकों (younger meristematic tissues) में स्थानांतरित हो जाता %। जिसके परिणामस्वरूप, कमी के लक्षण सबसे पहले पादपों की निचली पत्तियों पर दिखाई देते हैं और जब कमी बहुत अधिक बढ़ जाती है तो ये ऊपर के भागों में भी दिखाई पड़ने लगते हैं। इसके अतिरिक्त पोटैशियम की कमी से अक्सर बाली युक्त अनाज की फसलें (straw grain crop) खासतौर पर चावल और गेहूँ की फसलें कमज़ोर हो जाती है जिससे छोटे कण गिर पड़ते है। पोटैशियम की कमी से फसल की उपज बहुत कम हो जाती है और पादप की रोग प्रतिरोधकता ((resistance) कम हो जाती है। पोटैशियम की कमी होने पर कुछ फसलों, खासतौर पर फलों तथा सब्जियों की भी गुणवत्ता कम हो जाती है।

कैल्शियम

कैल्शियम, Ca^{2+} आयन के रूप में अवशोषित होता है और यह कोशिका भित्ति का घटक है, जो विभिन्न पादप एन्ज़ाइमों को सक्रिय करता है और कोशिका झिल्लियों की स्थिरता के लिए आवश्यक है। वह विशिष्ट शरीरक्रियात्मक कार्य जो पादपों में कैल्शियम द्वारा किए जाते हैं उन्हें स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया जा सकता है। कैल्शियम पेक्टेट के संश्लेषण में अपनी भूमिका के कारण यह कोशिकाओं की मध्य परत (middle lamellae) के निर्माण के लिए आवश्यक माना जाता है। यह भी कहा जाता है कि कैल्शियम प्रोटीन के निर्माण में सहायक होता है और माइटोकॉन्ड्रिया में प्रोटीन की मात्रा को बढ़ा देता है। चूंकि यह कोशिका भित्ति का एक घटक 3, इसलिए a तृण (straw) की मजबूती को बढाने में सहायक होता है। यह कार्बनिक अम्लों को उदासीन करने का काम करता है और इस तरह निराविषीकरण तत्व (detoxifying agent) के रूप मे काम करता है। यह बीज

अत्यधिक निक्षालन (leaching) के कारण अम्लीय मृदाओं को छोडकर जो नमी वाले क्षेत्रों में पाई जाती हैं, अन्य मृदाओं में कैल्शियम सामान्यतः भरपूर होता है। कैल्शियम की कमी से न्यूक्लियोटाइड का बनना बढ़ जाता है लेकिन न्यूक्लीक अम्ल का संश्लेषण कम हो जाता है। मृदा में कैल्शियम की कमी से पादपों में Al^{3+}, Mn^{2+} आयनों की सान्द्रता हानिकारक रूप से बढ़ जाती है। अधिकांश पोटैशियम खनिजों की तुलना में कैल्शियम युक्त खनिज सामान्यतः अधिक घुलनशील होते हैं। जिसके परिणामस्वरूप लगभग हमेशा ही मृत्तिका/ह्यूमस कोलॉइड में पोटैशियम की तुलना में अधिक विनिमियकारी कैल्शियम होता है।

उत्पादन को भी बढ़ाता है।

मृदा विलयन में बढता हुआ Ca : K अनुपात पोटैशियम के अंर्तग्रहण (uptake) को कम कर देता है। अतः अत्यधिक चूना डालने का एक हानिकारक प्रभाव यह है कि इससे पोटैशियम का अंतर्ग्रहण कम हो जाता है। फिर भी, जब पोटैशियम की अधिकता होती है, तो कैल्शियम पादप द्वारा पोटैशियम के अत्यधिक उपयोग को रोक देता है और इस तरह से उसे व्यर्थ होने से बचाता है।

मैग्नीशियम

मैग्नीशियम कार्बोहाइड्रेटों के स्थानांतरण में सहायक होता है तथा अन्य पोषक तत्वों के अंर्तग्रहण को नियंत्रित करता है संभवतः यह ऐसा फ़ॉस्फ़ोरिलीकृत यौगिकों (phosphorylated compounds) के निर्माण में सहायता करके करता है। यह फॉस्फोरस अवशोषण की कुशलता को बढ़ाकर फ़ॉस्फोरस उपापचयन से संबन्धित प्रतीत होता है साथ ही ये अनेक पादप एन्जाइमों की सक्रियता के लिए विशिष्ट माना जाता है। बीजों में अक्सर इसकी काफी मात्रा पाई जाती है।

चूंकि, प्रत्येक क्लोरोफिल अणु में एक मैग्नीशियम का परमाणु पाया जाता है. इसलिए मैग्नीशियम के बिना हरे पादप नहीं हो सकते हैं। क्योंकि मैग्नीशियम पत्तियों, तने तथा जड़ों में पाया जाता है जो मृदा पर ही गिरते हैं इसलिए इसका वृद्धि प्रक्रिया में बार-बार उपयोग हो सकता है जिससे मैग्नीशियम की कुल आपूर्ति अधिक नहीं पर पर्याप्त होती है। फिर भी, इसकी कमी से क्लोरोसिस (chlorosis) हो सकता है।

सल्फर

सल्फर मृदा में अल्प मात्रा में, शायद केवल 0.15% ही पाया जाता है। पादपों द्वारा उपयोग में लाया जाने वाला सल्फर का बड़ा भाग विघटनकारी कार्बनिक पदार्थों से अथवा उर्वरकों से आता है। सल्फर युक्त ऐमीनो अम्ल सिस्टीन (cystine) मैथाइओनीन (methionine) तथा सिस्टीन (cysteine) और प्रोटीनों के संश्लेषण के लिए इसकी आवश्यकता होती है। अनेकों अभिक्रियाएं सल्फिड्रिल समूह (sulphydryl group, -SH) के एन्ज़ाइमों की उपस्थिति के कारण होती है। सल्फर कुछ सहएन्ज़ाइमों (coenzymes) जैसे सहएन्ज़ाइम A, थाइमीन पाइरोफॉस्फेट (thiamine pyrophosphate) तथा बायोटीन (biotin) में भी पाया जाता है। ये सहएन्जाइम कार्बोहाइड्रेट, वसा तथा प्रोटीन के उपापचयन में भी सम्मिलित होते हैं। ऐसा मान जाता है कि सल्फर जड़ों की वृद्धि, बीज के निर्माण और ग्रंथिका (nodule) के बनने को उत्प्रेरित करता है। यद्यपि ये क्लोरोफिल का घटक नहीं है फिर भी सल्फर इसके

MADHYAM IAS
way to achieve your dream

निर्माण में सहायक होता है। सल्फर अलसी (flax) तथा सोयाबीन जैसी फसलों में तेल की मात्रा को भी बढ़ा देता है। हाल ही में डाइसल्फाइड बंधों (disulphide linkages, -S-S-) को भी जीवद्रव्य की संरचना से संबद्ध किया गया है तथा कुछ पादपों में सल्फिड्रिल (sulphydryl) समूह की मात्रा का संबन्ध बढी हुई शीत प्रतिरोधकता से होता है। सल्फर की कमी से पत्तियों का रंग पीला-हरित अथवा पीला हो जाता है।

3.2.2 सूक्ष्मपोषक तत्व

सूक्ष्मपोषक तत्व(<50mg/kg): B, Fe, Mn, Zn, Cu, Mo, Na, Co, V, Si, Se, Ga, Al, Cl तथा I

मोलिब्डेनम, बोरोन तथा क्लोरीन के अतिरिक्त अन्य सभी सूक्ष्मपोषक तत्व अम्ल मृदा में अधिक उपलब्ध होते हैं। ये तत्व मृदा में अपर्याप्त मात्रा के कारण या तो पादप वृद्धि को सीमित कर देते हैं अथवा जैसा कि अधिकतर होता है मृदा में उनकी उपलब्धता कम हो जाती है। अन्य का वर्णन नीचे किया गया है :

बोरोन

पी.पी.एम.: भाग प्रति दस लाख, यह प्रति किलोग्राम में मिलीग्रामों की संख्या के बराबर होता है।

1 kg बोरेक्स ~114 g बोरोन

बोरोन बहुत ही अल्प मात्रा में 0.01 से 1.0 ppm के विस्तार में पाया जाता है। वास्तविक मात्रा भिन्न-भिन्न फसलों के लिए भिन्न हो सकती है लेकिन शायद ही इसकी मात्रा ब्रोडकास्ट करने (broadcast, ऊपर से बौछार के रूप में डालने पर) पर 33-56 kg बोरेक्स प्रति हैक्टेयर से अधिक अथवा कतारों में लगाने पर 4.5 kg से अधिक होती है।

- यह पॉलीसैकेराइड के निर्माण को प्रभावित करके कोशिका विकास पर असर डालता है और झिल्लियों (membranes) के आर-पार शर्कराओं के स्थानांतरण को नियमित करता है।
- यह पादप द्वारा कैल्शियम के अंर्तग्रहण और उसके कुशल उपयोग को प्रभावित करता है।
- यह K^+/Ca^{2+} के अनुपात के नियामक (regulator) के रूप में कार्य करता है।
  यह निकट रूप से नाइट्रोजन के अवशोषण से संबन्धित है और कोशिका विभाजन के लिए आवश्यक है।
- ऐसा लगता है कि यह पादप ऊतकों (tissues) में स्थिर होता है जिससे यह उन भागों में नहीं जा पाता है जहाँ इसकी सबसे अधिक आवश्यकता होती है । इसके परिणामस्वरूप पादप की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए इसकी सतत् आपूर्ति की आवश्यकता पड़ती है।
- अगर पादप में पोटैशियम की आपूर्ति बहुत है तो उसमें बोरोन की कमी हो जाती है।

जाइलम: पादपों के संवहनी (conducting tissues) ऊतक जो जल तथा खनिज लवणों के संवहन (conduction) के लिए होते है।

फ़्लोएम : पादपों के संवहनी ऊतक जो तैयार भोजन पदार्थों के संवहन के लिए होते हैं।

बोरोन की अपर्याप्त उपलब्धता से पादप की जड़ों से फ़ॉस्फ़ोरस का क्षरण (loss) बढ़ जाता है और यह प्रोटीन के संश्लेषण को भी प्रभावित करता है। बोरोन की कमी के लक्षण हैं वर्धन शीर्षों (growing tips) का मरना, फूल का ना खिलना, जाइलम (xylem) में विकार, जड़ तंत्र का कम विकास और कोशिका भित्तियों विशेष रूप से फ़्लोएम (phloem) की कोशिका भित्तियों का विखंडन तथा विवर्णन (discoloration) कम मात्रा में उपस्थित होने पर यह लगभग सभी पादपों के लिए आविषालु (toxic) होता है लेकिन बोरोन आविषालुता के लिए पादप जातियों की संवेदनशीलता (susceptibility) में बहुत अधिक भिन्नता होती है।

आयरन

MAADHYAMIAS

आयरन, साइटोक्रोम (cytochromes), हीम (haem), तथा बिना हीम के (non-haem) एन्ज़ाइमों का घटक होता है। यह क्लोरोफिल के निर्माण के लिए भी आवश्यक होता है यद्यपि ये उसका भाग नहीं होता है। यह पादप में कुछ उपोपचय अभिक्रियाओं में सम्मिलित होता है और इसलिए यह प्रोटीन के संश्लेषण तथा कई उपापचयी अभिक्रियाओं के लिए आवश्यक होता है।

मैंगनीज़

मैंगनीज़ प्रकाश संश्लेषण में कुछ काम करता है और कुछ तत्वों और उनके उपचयन अवस्थाओं (oxidation states) के अंतर्ग्रहण का नियमन करने का कार्य करता है। Mn^{+2} की आपूर्ति सीमित हो जाने पर कुछ फसलों में अपचायी शर्करा (reducing sugar) और

सुक्रोस (sucrose) 1 कमी हो जाती है। मैंगनीज की आपूर्ति पर्याप्त होने पर गन्ने में शर्करा की मात्रा भी अधिक हो जाती है।

मैंगनीज़ की अधिकता से क्लोरोसिस हो जाती है क्योंकि मैंगनीज द्वारा आयरन का उपचयन हो जाने से वह निष्क्रिय हो जाता है। इसकी कमी के कारण क्लोरोफिल का विकास सीमित हो जाता है और क्लोरोसिस हो जाता है। आयरन की अधिकता से मैंगनीज की कमी के लक्षण दिखाई पड़ने लगते हैं। पादप वृद्धि के लिए औसत Fe/Mn अनुपात 2.0 है।

ज़िंक

यह कोशिका के भीतर उपोपचय विभव का नियमन करने में सल्फिड्रिल यौगिकों जैसे, सिस्टीन, के कार्य से संबन्धित होता है। जिंक कभी-कभी वृद्धि बढ़ाने वाले पदार्थ ऑक्सिन (auxin) से संबन्धित होता है। सामान्यतः ये माना जाता है कि क्लोरोफिल के निर्माण में जिंक का कुछ कार्य होता है लेकिन इसका कारण अभी ज्ञात नहीं है।

कॉपर

कॉपर एन्ज़ाइमों में इलेक्ट्रॉन वाहकों **(electron carrier)** का कार्य करता हैं जो पादपों में उपचयन-अपचयन (oxidation-reduction) को करता है और श्वसन की गतिविधि का नियमन करता है। यह अनेकों एन्ज़ाइमों द्वारा होने वाली अभिक्रियाओं में सहायक होता है। इसकी कमी से तरुण वर्धन शीर्ष **(young growing** tips) मर जाते हैं और मरे हुए शीर्षों के नीचे सहायक कलिकाएं (auxillary **buds)** विकसित हो जाती हैं जिसमें पादप की झाड़ीनुमा वृद्धि हो जाती है।

मॉलिब्डेनम

मॉलिब्डेनम पादपों में नाइट्रोजन के उपापचयन से निकट रूप से संबन्धित है। यह नाइट्रेट रिडक्टेस निकाय **(nitrate** reductase system) का भाग है जो ऐमीनो अम्ल के संश्लेषण से पूर्व नाइट्रोजन की आवश्यकता होने पर नाइट्रेट के उपयोग में सहायक होता है। यह सहजीवी **(symbiotic)** तथा असहजीवी **(nonsymbiotic)** नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले जीवों के लिए भी आवश्यक होता है।

क्लोरीन

क्लोराइडों के उपयोग से पत्तियाँ ज्यादा फैली हुई, हल्के हरे रंग की और अधिक चिकनी सतह वाली होती हैं। फिर भी, सूखी पत्तियों की दाह्यता (combustibility) कम होती है ऐसा संभवतः कार्बनिक अम्ल के साथ पोटैशियम की अल्प मात्रा होने के कारण होता है। क्लोरीन की अधिकता कार्बोहाइड्रेट के उपापचयन में इतनी बाधा उत्पन्न करती है कि वृद्धि रुक जाती है।

बोध प्रश्न 1

रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए :

क) यदि मृदा में फ़ॉस्फ़ोरस की कमी हो तो,

i) फसल की परिपक्वता ....हो जाएगी।

ii) फलीदार फसल ....की कमी से पीड़ित हो जाएगी।

ख) वह पोषक तत्व जो पादपों का अभिन्न भाग नहीं हैं लेकिन अनेक शरीरक्रियात्मक कार्यों में उत्प्रेरक का कार्य करता है वह .... है।

ग) .... की आपूर्ति से तृण की मज़बूती बढ़ जाती है।

घ) .... का संबंध फसल के समय से पहले परिपक्व होने से है।

ङ) कैल्शियम .... के लिए निराविषकारी (detoxifying) का कार्य करता है।

च) .... तत्व पादपों के हरेपन से संबंधित है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

छ) कैल्शियम की कमी से आविषालु .... तथा .... आयन जमा हो जाते हैं।

ज) K/Ca की सान्द्रता का नियमन करने वाला तत्व .... है।

झ) .... आयन की अधिकता और कमी दोनों से ही क्लोरोसिस हो जाता है।

ङ) यदि मृदा में पर्याप्त .... हो तो गन्ने में शर्करा की शुद्धता बढ़ जाती है।

3.3 मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता

फसलों की उत्पादकता बहुत कुछ पिछले भाग में बताए गए पोषक तत्वों पर निर्भर करती है। मृदा में इन पोषक तत्वों की उपलब्धता का आकलन करने में सहायक विधियों के बारे में पता करना महत्वपूर्ण है। पोषक तत्वों का वह अंश जो वास्तव में मृदा में पादप के उपयोग के लिए होता है वह **उपलब्ध पोषक तत्व** (available soil nutrient) कहलाता है। मृदा में उपलब्ध इन पोषक तत्वों का मूल्यांकन **मृदा उर्वरता मूल्यांकन** (soil fertility evaluation) कहलाता है। ठोस अवस्था (solid phase) जो मृदा तथा पोषक तत्वों के लिए अन्य स्त्रोत पदार्थों की बनी होती है, वह एक विषमांगी (heterogeneous) मिश्रण होता है। प्रत्येक पोषक तत्व पर्यावरण से अपनी परस्पर क्रिया के अनुसार विलयन प्रावस्था (solution phase) में योगदान देता है। इस परस्पर क्रिया (interaction) को समझना कठिन है, क्योंकि पोषक तत्वों की सही रासायनिक प्रवृत्ति के बारे में जानकारी नहीं है। इसके अतिरिक्त, विभिन्न रासायनिक और जैविक अभिक्रियाएं होती हैं जिससे विलयन प्रावस्था का निर्माण होता है। यदि हम विलयन प्रावस्था को ठोस अवस्था से अलग करके उसका विश्लेषण करें, तो हमें उस समय विलयन प्रावस्था में पोषक तत्वों की मात्रा के बारे में जानकारी मिल जाती है। ठोस प्रावस्था का ताजे जल से साम्य करना चाहिए और विलयन प्रावस्था का फिर से विश्लेषण करना चाहिए। इसे अनेक बार दोहराया जाना चाहिए, जब तक कि पोषक तत्वों का पानी में आना बंद ना हो जाए। प्रत्येक विलयन प्रावस्था में उपस्थित पोषक तत्वों की मात्रा के योग को उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा माना जा सकता है। फिर भी, ये प्रायोगिक विधि नहीं है। अधिक समय लगने के साथ ही इसमें, ये भी निश्चित नहीं होता है कि कितनी बार साम्य बनाया जाए। इस पूरे समय में अथवा वृद्धि की वांछित अवस्था पादप द्वारा ली जाने वाली पोषक तत्वों की मात्रा से पोषक तत्व उपलब्धता का सही मापन होता है लेकिन इसमें भी काफी समय लगता है।

अतः उपलब्ध पोषक तत्वों के शीघ्र मापन के लिए हमें निरीक्षणमूलक (empirical) विधियों पर निर्भर करना पड़ता है। ये अधिकतर परोक्ष होती हैं और बहुत सही भी नहीं होती हैं। इनमें से कुछ निरीक्षणमूलक विधियों की चर्चा निम्नलिखित है।

3.3.1 उपलब्ध पोषक तत्वों के आकलन की रासायनिक विधियाँ

पोषक तत्वों की जल में घुलनशील प्रकारें पादपों को उपलब्ध होती हैं लेकिन वे प्रकार भी उपलब्ध हों सकते हैं जो जल में घुलनशील नहीं होते हैं। इन पोषक तत्वों का आकलन करने में, किसी खास निष्कर्षक (extractant) का चयन अंततः निष्कर्षित पोषक तत्व की मात्रा तथा फसल की वृद्धि की उपज (crop growth yield) के बीच आपसी संबन्ध स्थापित करके की जाती है। कुछ पोषक तत्वों के आकलन का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है। इनमें से कुछ आकलनों का विस्तृत विवरण इस पाठ्यक्रम के खंड 7 में किया गया है। वास्तव में, आप इन में से कुछ आकलनों को प्रयोगशाला कार्य में करेंगे।

MAADHYAM IAS

खंड 7 में दिया प्रयोग 3 मृदा में उपलब्ध नाइट्रोजन के मापन के रूप में कार्बनिक कार्बन के आकलन से संबंधित है।

नाइट्रोजन – अधिकांश नाइट्रोजन कार्बनिक नाइट्रोजन (organic nitrogen) के रूप में उपलब्ध होती जिसे पादपों के लिए उपलब्ध कराने के लिए अकार्बनिक रूप में खनिजीकृत (mineralise) किया जाता है। कार्बनिक कार्बन (organic carbon) का आकलन विस्तृत रूप से मृदा में उपलब्ध नाइट्रोजन के मापन के रूप में किया जाता है। इसकी गणना निम्न सूत्र द्वारा की जाती है:

$$N \text{ का प्रतिशत} = \text{कार्बन का प्रतिशत} \times 0.05$$

फॉस्फ़ोरस/फॉस्फ़ेट – फ़ॉस्फ़ोरस का आकलन फ़ॉस्फ़ेट के रूप में किया जाता है। फ़ॉस्फ़ोरस का निष्कर्षण करने की कुछ विधियाँ निम्नलिखित हैं :

डायर विधि (Dyer method) : उपलब्ध मृदा फॉस्फ़ेट के निष्कर्षण के लिए 1% सिट्रिक अम्ल (citric acid) का प्रयोग किया जाता है।

ब्रे तथा कुर्ट्ज विधि (Bray and Kurtz method) : फॉस्फेट का निष्कर्षण 0.025 M HCl तथा 0.5 M $NaHCO_3$ में बनाए 0.03 M NH_4F के विलयन में किया जाता है तथा विलयन का pH 8.5 रखा जाता है।

ऑल्सेन की विधि (Olsen's method) फॉस्फेट को 0.5 M $NaHCO_3$ के साथ 8.5 pH पर 10% कॉस्टिक सोडा (caustic soda) से निष्कर्षित किया जाता है। निष्कर्षित फॉस्फेट की अमोनियम मॉलिब्डेट (ammonium molybdate) तथा स्टैनस क्लोराइड (stannous chloride) से क्रिया कराने पर उसमें रंग विकसित हो जाता है। रंग की गहनता को वर्णमापी (colorimeter) से मापा जाता है।

इस पाठ्यक्रम के खंड 7 में दिए प्रयोग 4,5,6 तथा 7 में आप क्रमशः N,S,P, तथा Mn और Fe का आकलन करना सीखेंगे।

पोटैशियम - जल में घुलनशील तथा विनिमयकारी पोटैशियम आसानी से पादपों को उपलब्ध होता है। इसे मोर्गन अभिकर्मक (Morgan reagent: 3% ऐसीटिक अम्ल के विलयन में 10% सोडियम ऐसीटेट) अथवा 1M अमोनियम ऐसीटेट (उदासीन) से निष्कर्षित किया जाता है। निष्कर्षक से, पोटैशियम का ज्वाला प्रकाशमापी (flame photometer) द्वारा आकलन किया जाता है। ज्वाला प्रकाशमापी की अनुपस्थिति if आविलता विधि (turbidity method) का प्रयोग किया जा सकता है। इस विधि में सोडियम कोबाल्टिनाइट्राइट (sodium cobaltinitritc) मिलाकर आविलता विकसित ?जाती if और &प्रकाशविद्युत (photoelectric) वर्णमापी की सहायता से मापा जाता है।

कैल्शियम तथा मैग्नीशियम : इन आयनों की विनिमयकारी प्रकारों को उपलब्ध पोषक तत्व माना जाता है। निष्कर्षक से सान्द्रता का पता एथिलीन डाइऐमीनट्रेट्राऐसीटेट (ई. डी. टी. ए., ethylenediamminetetraacetate, EDTA) के साथ अनुमापन करके किया जाता है।

सल्फर तथा बोरोन : बोरोन को गर्म जल से निष्कर्षित किया जाता है। सल्फर को पी. विलयन (P. solution. पोटैशियम डाइहाइड्रोजन ऑर्थोफ़ॉस्फ़ेट, potassium dihydrogen orthophosphate अथवा मोनोकैल्शियम फ़ॉस्फ़ेट, monocalcium phosphate से बनाया जाता है) के 500 ppm विलयन से निष्कर्षित किया जाता है तथा वर्णमापी विधि (colorimetricnlly) द्वारा अथवा आविलता विधि (turbidimetrically) द्वारा विश्लेषण किया जाता है।

जैसा कि ऊपर बताया गया है, मृदा का परीक्षण मृदा की पोषक तत्व आपूर्ति करने की क्षमता (nutrient supplying capacity) का पता करने के लिए किया जाता है। परीक्षण से प्राप्त आँकडे उर्वरक तथा अन्य तत्वों के प्रकार तथा मात्रा के बारे में बताने में सहायक होते हैं जिससे फसल उत्पादन को सुधारा जा सके । यह मूल्यांकित क्षेत्र के उर्वरता स्तर (fertility levels) को बताता है। उपलब्ध पोषक तत्वों एन पी के (NPK) के मृदा परीक्षण मूल्यों के आधार पर मृदाओं को निम्न, मध्यम तथा उच्च वर्गों में समूहित किया जाता है। सारणी 3.1 में मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं में प्रयुक्त श्रेणीकरण को दर्शाया गया है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

सारणी 3.1 : उपलब्ध पोषक तत्वों के आधार पर मृदाओं के वर्ग

पोषक तत्व उपलब्धता			मृदा का वर्ग
N%	P_2O_5 (kg/ha)	K_2O (kg/ha)	
0.5 से कम	10 से कम	100 से कम	निम्न
0.5 से 0.75	20 से 40	150 से 250	मध्यम
0.75 से अधिक	40 से अधिक	250 से अधिक	उच्च

उर्वरकों के उपयोग से लाभ की संभावना उन मृदाओं में अधिक होती है जिनमें मृदा परीक्षण करने पर किसी तत्व की मात्रा अधिक होने की अपेक्षा कम होती है।

विश्लेषण करके निर्धारित किए गए किसी पोषक तत्व की मात्रा आवश्यक रूप से यह प्रदर्शित नहीं करती है कि वह कितनी मात्रा में उपलब्ध है बल्कि इससे उसका केवल

संभावित माप लिया जा सकता है। पादप के लिए उपलब्ध पोषक तत्व की मात्रा की उपस्थिति का अधिक महत्व नहीं होता है। लेकिन जिस दर से वांछित मात्रा की जड़ तंत्र को आपूर्ति की जाती है वह बहुत महत्वपूर्ण होता है। तीव्रता (intensity) यानि कि दर तथा क्षमता (विश्लेषित मात्रा) फसलों के पोषक तत्वों की वास्तविक उपलब्धता का निर्धारण करती है और इसलिए इन दोनों की जानकारी आवश्यक होती है। उपलब्धता, उगाई गई फसल की प्रकृति और गुणों, उगाए जाने की परिस्थितियों तथा मृदा के गुणों पर भी निर्भर करती है। कोई भी निष्कर्षक (extractant) सभी भिन्नताओं (variables) का ध्यान नहीं रख सकता है और इस हिसाब से ये सभी विधियाँ निरीक्षणमूलक (empirical) हैं।

3.3.2 मृदा का pH तथा पोषक तत्व उपलब्धता

मृदा pH ऐसा सबसे महत्वपूर्ण कारक है जो मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता को नियंत्रित करता है। सभी पोषक तत्व पादपों द्वारा उनकी आयनी अवस्था में अवशोषित किए जाते हैं, क्योंकि इन आयनों की घुलनशीलता pH पर निर्भर करती है इसलिए मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता भी pH पर निर्भर करती है। चित्र 3.1 से मृदा में विभिन्न पोषक तत्वों की उपलब्धता के लिए pH विस्तार का पता चलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि 6.0 से 7.5 pH विस्तार अधिकांश पोषक तत्वों की उपलब्धता के लिए अनुकूलतम (optimum) है।

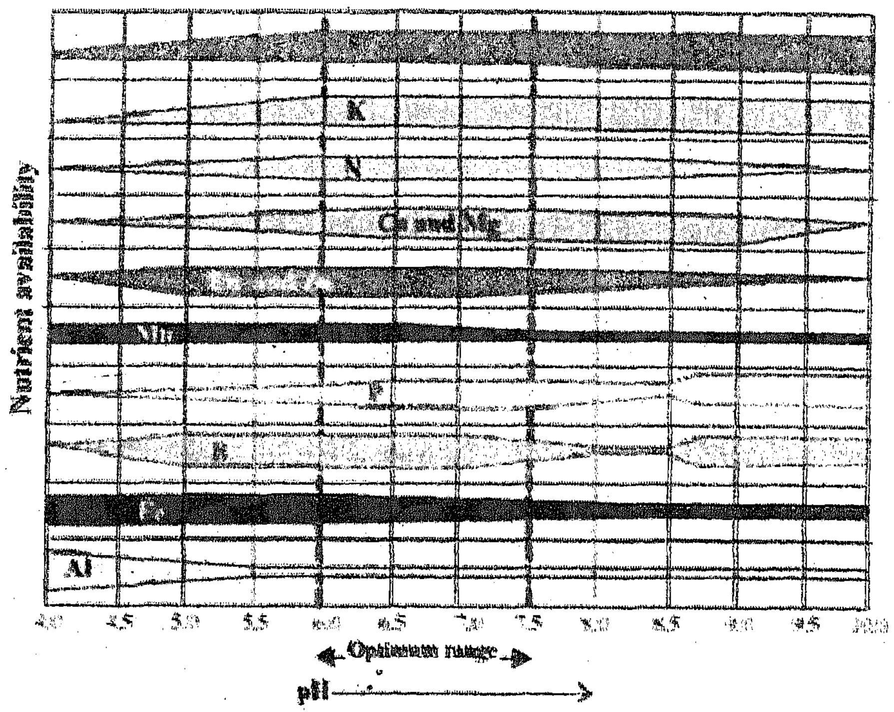

चित्र 3.1 : मृदा में पोषक तत्वों तथा अन्य तत्वों की उपलब्धता पर pH का प्रभाव

MAADHYAM IAS

अमोनीकारक (ammonifier) तथा नाइट्रीकारक (nitrifier) जीव 5.5 से 6.5 तक के pH

है। अधिकांश फॉस्फेट मृदा में अम्लीय क्षेत्र में अवक्षेपित (precipitated) हो जाते हैं लेकिन मृदा विलयन में उपलब्ध स्पीशीज (species) की प्रकृति pH पर निर्भर करती है। निम्न pH पर $H_2PO_4^-$ आयन सामान्यतः पाए जाते हैं, 7 pH होने पर, $H_2PO_4^{2-}$ आयनों की अधिकता रहती है जबकि pH 12 होने पर PO_4^{3-} आयन प्रभावी होते हैं। मध्यवर्ती pH होने पर pH के आधार पर कोई दो आयन साथ-साथ रह सकते हैं। अम्लीय मृदाओं में चूना डालने से फ़ॉस्फ़ेट की उपलब्धता बढ़ जाती है। इसकी सबसे सरल क्रियाविधि में हाइड्रॉक्सिल आयनों के लिए अघुलनशील फ़ॉस्फ़ेट से $H_2PO_4^-$ का विनिमय सम्मिलित हो सकता है। संभवतः उदासीन pH की ओर बढने से सूक्ष्मजीवी गतिविधि (microbial . activity) बढ़ जाती है जिससे फॉस्फेट की उपलब्धता बढ जाती है। दूसरी ओर, कार्बनिक तत्व या तो ह्यूमेट (humate) अथवा फल्वेट (fulvate) आयनों द्वारा आयरन तथा ऐलुमिनियम फ़ॉस्फ़ेट से फ़ॉस्फ़ेट आयन के विस्थापन के फलस्वरूप अथवा उपोपचय विभव

और इस तरह से pH को कम करके फॉस्फोरस की उपलब्धता को प्रभावित करते हैं। ह्यूमिक अम्ल (humic acid) आयरन और ऐलुमिनियम के साथ कीलेट संकुल (chelate complexes) बनाते हैं जो जल में घुलनशील होते हैं और इसलिए फॉस्फेट स्थायीकरण (fixation) को कम करते f। फॉस्फेट उपलब्धता 6.5 से 7.5 के pH विस्तार में सबसे अधिक होती है।

पोटैशियम, कैल्शियम तथा मैग्नीशियम धनायनी रूप (cationic form) में उपलब्ध होते हैं और उनकी उपलब्धता उन कारकों पर निर्भर होती है जो मृदा में विनिमय साम्यों (exchange equilibria) को नियंत्रित करते हैं। 6.0 से कम pH होने पर मृदा आंशिक रूप से क्षारक संतृप्त (base saturated) होती है और उनकी उपलब्धता कम हो जाती है। इस pH पर CO_3^{2-}, HCO_3^- में परिवर्तित हो जाता है जिससे कार्बोनेट तथा फॉस्फेट से अधिक Ca^{2+} तथा Mg^{2+} उपलब्ध हो जाते हैं।

सूक्ष्मपोषक तत्व धनायनों की घुलनशीलता कम pH होने पर सबसे अधिक होती है। जैसे-जैसे pH बढ़ता जाता है इन तत्वों के आयन पहले हाइड्रॉक्सी आयनों में और फिर अघुलनशील हाइड्रॉक्साइडों अथवा ऑक्साइडों में परिवर्तित हो जाते हैं। उदाहरण के लिए, pH में परिवर्तन के कारण आयरन में निम्नलिखित अभिक्रिया होती है

$$Fe^{3+} \xrightarrow{OH^-} Fe(OH)^{2+} \xrightarrow{OH^-} Fe(OH)_2^+ \xrightarrow{OH^-} Fe(OH)_3$$

आयरन, मैंगनीज़, जिंक, ऐलुमिनियम तथा कॉपर निम्न pH विस्तार पर उपलब्ध होते हैं जबकि मॉलिब्डेनम की उपलब्धता अम्लीय विस्तार में कम होती है और 6.5 से ऊपर pH होने पर बढ़ जाती है।

बोध प्रश्न 2

क्यों सूक्ष्मपोषक तत्व क्षारीय मृदाओं में उपलब्ध नहीं होते तथा अम्लीय मृदाओं में उपलब्ध होते हैं?

....

....

....

3.4 मृदा उर्वरता का मूल्यांकन

मृदा की उर्वरता को बनाए रखने के लिए, फसलों द्वारा मृदा में से ले लिए गए पोषक तत्वों को खाद तथा उर्वरक डालकर वापस मृदा में संग्रहित कर देना चाहिए। पुनः पूर्ति किए जाने वाले पोषक तत्व तथा उसकी उचित मात्रा फसल की पोषक तत्व की आवश्यकता तथा मृदा की पोषक तत्व आपूर्ति की क्षमता पर आधारित होती है। मृदा की पोषक तत्व आपूर्ति क्षमता (nutrient supplying capacity) का मूल्यांकन **मृदा उर्वरता का मूल्यांकन** (soil fertility evaluation) कहलाता है। आइए पहले हम मृदा उर्वरता में सम्मिलित कुछ मूल संकल्पनाओं को समझ लें।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

3.4.1 मृदा उर्वरता की संकल्पनाएं

मृदा उर्वरता के मूल्यांकन को उस पोषक तत्व की मात्रा का पता लगा कर किया जा सकता है जो पादप की वृद्धि के लिए आवश्यक हो। अनेकों प्रयोगों के आधार पर इसको समझाने के लिए दो मात्रात्मक संरूपण (quantitative formulation) प्रतिपादित किए गए हैं।

ये हैं : i) **न्यूनतम का नियम** (Law of minimum) तथा ii) **ह्रासमान प्रत्यावर्तन का नियम** (Law of diminishing return) इनका संक्षिप्त वर्णन नीचे किया गया है।

न्यूनतम का नियम

यह सबसे प्राचीन परिकल्पनाओं में से एक है जिसे वॉन लीबिग (von Liebig) द्वारा मृदा में पादप पोषक तत्व तथा पादप की वृद्धि के बीच संबंध पर प्रस्तावित किया गया था। पादप की वृद्धि प्रत्यक्ष रूप से उसकी उपज से संबन्धित होती है। यह नियम इस तथ्य पर आधारित है कि यदि मृदा में किसी एक के अतिरिक्त बाकी सभी पोषक तत्व अनुकूलतम पर्याप्त मात्रा में हैं तो फसल की वृद्धि उस एक पोषक तत्व द्वारा नियंत्रित होती है। इसका अर्थ है कि उस एक पोषक तत्व की मात्रा में बदलाव करके फसल की वृद्धि को बदला जा सकता है। यह नियम उस अवस्था तक मान्य रहता है जहां से वृद्धि कम होना शुरू हो जाती है (चित्र 3.2)।

ह्रासमान प्रत्यावर्तन का नियम

एक जर्मन वैज्ञानिक मिशरलिक (Mitscherlich) ने पादपों की उपज पर अनेक वृद्धि कारकों की विभिन्न मात्राओं के प्रभाव की गणितीय समीकरण द्वारा गणना की। इस समीकरण में यह माना गया कि पादप, अनुकूलतम स्थितियों (optimum conditions) में अधिकतम उपज देता है। प्रत्येक प्रकार की वृद्धि स्थितियों के लिए एक "सैद्धांतिक उच्चतम संभव उपज" (theoretical highest possible yield) माना जाता है जब दिए गए वृद्धि कारक जैसे पादप पोषक तत्व की अनुकूलतम आपूर्ति पाई जाती है। यह उपज, जिसे A माना जाता है, अन्य पोषक तत्वों की आपूर्ति, वायुमंडलीय स्थितियों, खेती के तरीके आदि के साथ भिन्न हो जाती है। जब ये कारक अपनी अनुकूलतम सान्द्रता में नहीं होता है तो उपज में कमी आ जाती है और प्राप्त उपज (वास्तविक उपज) को 'Y' कहा जाता है।

"ह्रासमान प्रत्यावर्तन के नियम" के अनुसार न्यून कारक (deficient factor) में इकाई बढ़त से उपज में बढ़ोतरी अधिकतम यानि कि (A–y) से कमी के अनुपात में होती है। वृद्धि-दर -वृद्धि कारक (growth-to-growth factor) के इस संबन्ध को अभिव्यक्त करने वाला गणितीय समीकरण निम्नलिखित है

$$\log (A-y) = \log \mathbf{A} - \mathbf{C}\, x \qquad \ldots\ldots(3.1)$$

जहां C = आनुपातिक स्थिरांक (proportionality constant) (एक प्रभावी कारक) तथा x = प्रयुक्त किए गए पोषक तत्व की मात्रा; जबकि x = शून्य, y = शून्य

पोषक तत्व की मात्रा बढ़ाने पर उपज बढ़ जाती है और अधिकतम यानि, (A–y) से कमी घट जाती है। पोषक तत्व की मात्रा बढ़ाने पर अधिकतम से इस कमी के अनुपात में उपज बढ़ती जाती हैं और इसलिए इसमें कम बढ़त होती है।

इसे गणितीय रूप से दिखाया जा सकता है कि पोषक तत्व (x) की मात्रा बढ़ाने से, उपज में वृद्धि की दर कम से कमतर होती जाती है। ये ही "ह्रासमान प्रत्यावर्तन के नियम" (Law of diminishing return) का मूल सार है।

चित्र 3.2 में उपलब्ध N, P_2O_5 तथा K_2O के उपज से संबन्ध के वक्रों को समीकरण 3.1 के अनुसार 'A' के प्रतिशत में दिखाया गया है।

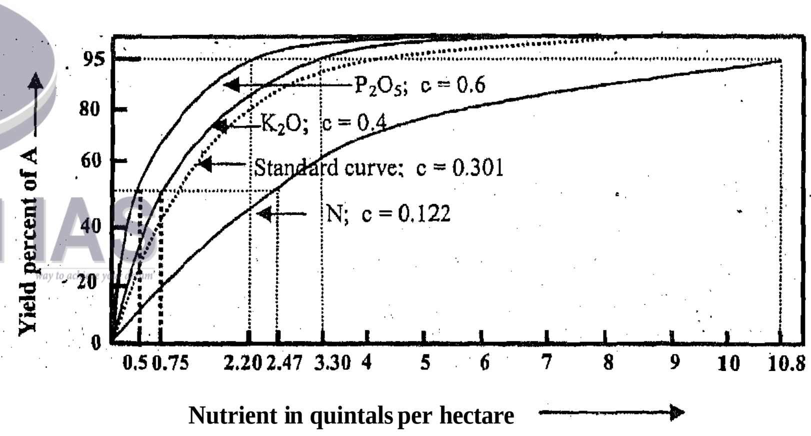

चित्र 3.2 : क्विंटल/हैक्टेयर में उपलब्ध पोषक तत्वों तथा 'A' के प्रतिशत में उपज के बीच संबंध

MAADHYAM IAS

बॉली इकाई (Baule unit)- गोटिन्जन (Gottingen) के एक गणितज्ञ जिनका नाम बी. बॉली (B.Baule) था उन्होंने गणनाएं करने में मिशरलिक की सहायता की थी। किसी वृद्धि कारक (पोषक तत्व) की मात्रा जो सैद्धांतिक उच्चतम उपज 'A' का आधा उत्पन्न करता है (चित्र 3.2) उसे **बॉली** कहते हैं, और **bu** से प्रदर्शित करते हैं। N, P_2O_5, K_2O के लिए इनकी मात्राएं क्विंटल प्रति हैक्टेयर क्रमशः 2.47. 0.5 तथा 0.75 हैं। हम ये बता देना चाहेंगे कि इन मात्राओं में मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा के साथ ही उर्वरकों द्वारा आपूर्ति की गई मात्राएं भी सम्मिलित हैं।

3.4.2 अधिकतम फसल उपज

मिशरलिक ने विभिन्न पादपों के साथ अनेकों प्रयोग किए, जिसमें उन्होंने 20 cm व्यास के साथ 20 cm गहराई के पात्रों का उपयोग किया। एक के अतिरिक्त बाकी सभी वृद्धि कारकों की उचित मात्रा लेकर और फिर इस एक कारक अथवा पोषक तत्व की मात्रा को नियमित रूप से बढ़ाते हुए उन्होंने इस पोषक तत्व की उस मात्रा का पता लगा लिया जिस पर अधिकतम उपज प्राप्त हुई। इस प्रक्रिया से ये निर्धारित किया गया कि इन पात्रों में 3.50 ग्राम N, 0 70 ग्राम P_2O_5 तथा 1 30 ग्राम K_2O से अधिकतम उपज प्राप्त हुई। इन मात्राओं को क्विंटल/हैक्टेयर में परिवर्तित करने पर अधिकतम फसल उपज के लिए N की 11 15 क्विंटल, P_2O_5 की 2 23 क्विंटल तथा K_2O की 4 14 क्विंटल मात्राओं की आवश्यकता होती है। सुविधा के हिसाब से यह माना गया कि **किसी भी वृद्धि कारक की मात्रा, जो अधिकतम उपज देती है, वह 10 बॉली (Baule) है।** तदनुसार N की 1 बॉली 11.15 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की 1/10 अथवा 1.115 क्विंटल होती है। इसी प्रकार 0223 क्विटल P_2O_5 से इस पोषक तत्व की एक बॉली बनती है तथा 0414 क्विंटल K_2O से उसकी एक बॉली बनती है। स्परवे (Spurway) ने भी समान गणनाओं से यह निर्धारित किया कि 0 0672 क्विंटल Mg से उसकी एक बॉली तथा $8\,967 \times 10^{-3}$ क्विंटल S से उसकी एक बॉली बनती है।

अधिकतम फसल उपज निर्धारित करने में यह विचार किया गया कि दिया गया पादप उदाहरणतः मक्का केवल आनुवांशिक रूप से दिए गए पादप ऊतक उत्पन्न करने में सक्षम होता है, उस पर इसका कोई असर नहीं होता है कि सभी बाहरी कारक जैसे पोषक तत्व आपूर्ति, मृदा स्थिति, जल आपूर्ति तथा जलवायु कितने अनुकूल हैं। कुछ फसलों की अधिकतम उपज सारणी 3.2 में दर्शायी गई हैं।

1 बुशेल = 63 पाउण्ड् (lbs)
1 बुशेल (UK) = 36.368 लीटर
1 बुशेल (US) = 35.239 लीटर

सारणी 3.2 : कुछ फसलों की प्रति एकड़ अधिकतम उपज (बुशेल में) जब सभी वृद्धि कारक अनुकूलतम हों

फसल	उपज	फसल	उपज
मक्का	225	आलू	1550.0
गेहूँ	171.2	चावल	252.5
जई	395.0	चुकन्दर	54*
जौ	308	गन्ना	192*
राई	198 0	कपास	4.6 #

* उपज 'टन' में तथा # उपज 'बेल' में है

बेलः इसका नाम बेल इसलिए पड़ा क्योंकि कपास को बड़े बंडलों में लपेटा या बांधा जाता था।

अधिकतम फसल उपज प्रतिशत का परिकलन

पहले ये बताया गया था कि किसी वृद्धि कारक की एक बॉली वृद्धि पर प्रभाव किसी अन्य कारक के लिए एक बॉली के प्रभाव के बराबर ही होता है और साथ ही किसी भी कारक के 10 बॉली से उस कारक के संदर्भ में अधिकतम फसल की वृद्धि प्राप्त होती है। तदनुसार किसी भी कारक की किसी भी मात्रा का बॉली इकाई में वृद्धि पर प्रभाव मिशरलिक के उपज सूत्र से अधिकतम फसल उपज के प्रतिशत के रूप में परिकलित किया जा सकता है। यह समीकरण निम्नलिखित है।

$$y = 100 - [0.1 \times 2^{(10-x)}] \quad \ldots\ldots (3.2)$$

जहां y = अधिकतम फसल उपज का प्रतिशत तथा x = बॉली इकाई प्रति एकड़ में पादप पोषक तत्व। इस प्रक्रिया के द्वारा स्परवे ने सारणी 3.3 में दिए गए मूल्यों को प्राप्त किया

MAADHYAM IAS

सारणी 3.3 : बॉली इकाई में एकल पादप पोषक तत्व की शक्ति (potency) तथा अधिकतम फसल उपज का प्रतिशत

बॉली इकाई	अधिकतम फसल का प्रतिफल	बॉली इकाई	अधिकतम फसल उपज का प्रतिशत
0.1	4.5	1.8	70.6
0.2	10.9	1.9	72.6
0.3	16.9	2.0	74.4
0.4	22.4	2.2	77.7
0.5	27.6	2.4	80.6
0.6	32.5	2.6	83.1
0.7	37.0	2.8	85.3
0.8	41.2	3.0	87.2
0.9	45.2	3.5	90.9
0.10	48.2	4.0	93.6
1.1	52.3	4.5	95.5
1.2	55.5	5.0	96.8
1.3	58.4	6.0	98.4
1.4	61.2	7.0	99.2
1.5	6.8	8.0	99.6
1.6	66.2	9.0	99.8
1.7	68.5	10.0	100.0

किसी फसल की क्षमता (potential) अथवा अनुमानित उपज की गणना सारणी 3.3 में दिए गए कारकों के उपयोग द्वारा की जा सकती है, यदि बॉली इकाई में वृद्धि कारक ज्ञात हों। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि N की आपूर्ति 0.7 बॉली है, P_2O_5 की आपूर्ति 1.0 बॉली है, K_2O की आपूर्ति 2.0 बॉली है तथा वायुमंडलीय और मृदा कारक 4.5 बॉली हैं। उगाई जाने वाली फसल गेहूं की है, जिसकी अधिकतम सैद्धांतिक उपज 171.2 बुशेल (सारणी 3.2) है। सारणी 3.3 के उपयोग द्वारा कोई भी निम्न प्रकार से अधिकतम फसल उपज का परिकलन कर सकता हैं :

N के लिए कारक (0.7 बॉली) = 37/100 = 0.37

P_2O_5 के लिए कारक (1.0 बॉली) = 48.2/100 = 0.482

K_2O के लिए कारक (2.0 बॉली) = 74.4/100 = 0.744

मृदा कारक (4.5 बॉली) = 95.5/100 = 0.955

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अधिकतम फसल उपज के लिए कारक = $0.37 \times 0.482 \times 0.744 \times 0.955 = 0.1267$

अधिकतम फसल उपज = $0.1267 \times 171.2 = 21.69$ बुशेल

ये देखा जा सकता है कि इस सूत्र से कोई भी आसानी से सबसे कम आपूर्ति वाले पोषक तत्व की दी गई मात्रा को मिलाने से उपज में होने वाली अनुमानित वृद्धि का परिकलन कर सकता है। इसी तरह, जब एक पोषक तत्व की कमी की आपूर्ति कर दी जाती है तो आवश्यकतानुसार दूसरे पोषक तत्वों को मिलाने से प्राप्त होने वाले परिणामों का निर्धारण किया जा सकता है। साथ ही, उन विभिन्न पोषक तत्वों की मात्राओं का भी परिकलन किया जा सकता है जिनसे उपज में वृद्धि हो सकती है। ऐसा पोषक तत्वों की कीमत तथा

उनसे फसल में होने वाली मूल्य वृद्धि को निर्धारित करके किया जा सकता है। ये भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि उस पोषक तत्व को मिलाने से जो पर्याप्त मात्रा में उपस्थित हो, जैसे उपर्युक्त उदाहरण में K_2O है, उपज में कुछ वृद्धि होती है चाहे फिर उसमें बिल्कुल भी N ना मिलाई जाए।

बोध प्रश्न 3

मान लीजिए कि दी गई मृदा में N की आपूर्ति 0.9 बॉली , P_2O_5 की आपूर्ति 1.9 बॉली, K_2O की आपूर्ति 4.0 बॉली तथा मृदा कारक 5.0 बॉली है। उगाई जाने वाली फसलें मक्का, गेहूं तथा गन्ने की हैं, प्रत्येक स्थिति में अधिकतम फसल उपज का परिकलन कीजिए। उपज को पर्याप्त रूप से बढ़ाने के लिए किस पोषक तत्व को बढ़ाया जाना चाहिए ?

संकेत : सारणी 3.2 तथा 3.3 का उपयोग कीजिए।

....

....

....

3.5 मृदा उत्पादकता का प्रबंधन

किसी भी देश की सतत् समृद्धि तथा वहां के लोगों की खुशहाली कुछ कारकों पर निर्भर करती है, जिनमें से सबसे अधिक महत्वपूर्ण कारक मृदा उर्वरता (fertility) का स्तर है। मृदा को सदैव उर्वर स्थिति में रखा जाना चाहिए, जिससे अच्छी उपज हो सके। यदि किसी भी आवश्यक पोषक तत्व की कमी हो , तो उसकी आपूर्ति की जानी चाहिए क्योंकि किसी भी पोषक तत्व की कमी फसल की उपज को कम कर सकती है। मृदा की उर्वरता को सिर्फ बनाए ही नहीं रखना चाहिए बल्कि उसे लगातार उन्नत करना चाहिए जिससे अधिक उपज हो सके। उर्वरक तथा खादें मृदा की उर्वरता और उत्पादकता के स्तर को बढ़ाए रखने के लिए आवश्यक होती हैं। मृदा में किसी भी सुधारात्मक उर्वरक को मिलाने की सलाह से पहले उसमें पोषक तत्वों तथा पोषक तत्वों की कमी यदि कोई हो, तो उस के सापेक्ष स्तर को जानना महत्वपूर्ण होता है।

3.5.1 उर्वरक तथा उर्वरक प्रबंधन

उर्वरकों में मोटे तौर पर वो सभी पदार्थ सम्मिलित होते हैं जिन्हें पादपों की वृद्धि के लिए आवश्यक कुछ तत्वों की आपूर्ति के लिए मृदा में मिलाया जाता है। फिर भी उर्वरकों का मतलब सामान्यतः रासायनिक उर्वरकों से होता है और खादों के विपरीत, उर्वरकों में पोषक तत्व उच्च सान्द्रता में और ऐसे रूप में पाए जाते हैं जो पादपों द्वारा आसानी से आत्मसात (assimilated) कर लिए जाते हैं। सल्फर, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटैशियम गुरुपोषक तत्व होते हैं जिनका उपयोग व्यावसायिक उर्वरकों में किया जाता है। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटैशियम को उर्वरक **तत्व** (fertilizer elements) कहा जाता है। पोषक तत्वों में सान्द्रित होने के कारण उर्वरकों का लाभ है कि ये छोटे ढ़ेर में, कम खर्च तथा आसानी से

मात्रा को मृदा उर्वरता मूल्यांकन द्वारा निर्धारित आवश्यकताओं के अनुरूप घटाया-बढ़ाया जा सकता है। भारत में इस्तेमाल किए जाने वाले कुछ सामान्य उर्वरकों तथा उनके उपलब्ध पोषक तत्वों को सारणी 3.4 में दिया गया है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

सारणी 3.4 : कुछ प्रचलित उर्वरकों के उपलब्ध पोषक तत्व

उर्वरक	% N	% P_2O_5	% K_2O
सामान्य उर्वरक (Straight fertilizers)			
नाइट्रोजनी उर्वरक			
यूरिया	46.6		
कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट (CAN)	26.0		
अमोनियम सल्फेट	21.0		
अमोनियम क्लोराइड	25.0		
फ़ॉस्फ़ेटी उर्वरक			
सुपर फ़ॉस्फेट (एकल)		16.0	
सुपर फ़ॉस्फेट (त्रिगुण)		46.0	
डाइकैल्शियम फ़ॉस्फेट		34.0	
पोटैशियमी उर्वरक			
पोटाश का म्यूरिएट; KCl			48-60
पोटाश का सल्फेट; K_2SO_4			48-50
शोनाइट; $K_2SO_4 . MgSO_4 . 6H_2O$			25-30
सम्मिश्र उर्वरक (Complex fertilizers)			
डाइअमोनियम फॉस्फेट (18-46-0)	18.0	46.0	
अमोनियम फॉस्फेट सल्फेट (20-20-0)	20.0	20.0	
यूरिया अमोनियम फॉस्फेट (28-28-0)	28.0	28.0	
नाइट्रोफॉस्फेट पोटाश के साथ (15-15-15)	15.0	15.0	15.0

सम्मिश्र उर्वरक (complex fertilizers) वह होते हैं जिनमें एक यौगिक अथवा मिश्रण में दो या अधिक पोषक तत्व होते हैं।

क्षेत्र की मृदा तथा फसल के लिए उपयुक्त विभिन्न प्रकार के जटिल तथा सम्मिश्र उर्वरक बाज़ार में बेचे जाते हैं। भारत के दिल्ली क्षेत्र में किसानों को वर्तमान समय में उर्वरकों की कितनी मात्रा दी जानी चाहिए इसका विवरण सारणी 3.5 में दिया गया है। ये अनुशंसाएं **मृदा परीक्षण** (soil testing) के आधार पर दी गई हैं। मृदा परीक्षण जानकारियों को **मृदा परीक्षण सारांशों** (soil test summeries) के रूप lf मृदा के अनुसार अथवा क्षेत्र के अनुसार एकत्रित किया गया है। यह सारांश उच्च, मध्यम अथवा निम्न N, P और K की मात्रा की श्रेणी में आने वाले नमूनों की संख्या को दर्शाता है।

सारणी 3.5 : मृदा परीक्षण के मूल्य तथा उर्वरक की अनुशंसित (recommended) मात्रा

कार्बनिक कार्बन (%)	मात्रा (kg N/ha)	उपलब्ध (kg P/ha)	मात्रा (kg P_2O_5/ha)	उपलब्ध पोटैशियम (kg K/ha)	मात्रा (kg K_2O/ha)
निम्न					
0.20 से कम	160*	10 से कम	80	100 से कम	60
0.21-0.40	140	11-20	60	101-150	50
मध्यम					
0.41-0.60	120	21-30	45	151-200	40
0.61-0.80	90	31-40	30	201-250	30
उच्च					
0.81-1.0	75	41-55	15	251-300	20
1.0 से अधिक	60	55 से अधिक	10	300 से अधिक	0

* इसमें फार्मयार्ड खाद (farm yard manure. FYM) भी मिलाया जाना चाहिए।

MAADHYAM IAS

ये अनुमतांक (ratings) यादृच्छिक (arbitrary) तथा निरीक्षण मूलक (empirical) लगते हैं लेकिन ये पर्याप्त उपज प्राप्त करने के लिए हैं। इससे उर्वरकों की विभिन्न मात्राओं के लिए उत्पादन प्राप्त किए जा चुके है। निवेश तथा उत्पादन की लागत के आधार पर निम्नलिखित प्राचल प्राप्त किए जा सकते हैं, (i) अधिकतम उपज (ii) प्रति हैक्टेयर अधिकतम लाभ (iii) प्रति रूपये निवेश पर अधिकतम वापसी /लाभ की दर **(iv)** न्यूनतम लाभकारी उपयोग तथा अपनी पसंद के अनुसार किसान द्वारा उपयोग किया जाना। उर्वरकों की अनुशंसाएं उसी सीमा तक मान्य हैं जब तक कि परीक्षण के लिए एकत्रित किए गए मृदा के नमूने कार्य क्षेत्र की मृदा को प्रदर्शित करते हैं। संशय अथवा मृदा में अधिक विषमांगता (heterogeneity) होने पर, बढी सख्या में मृदा नमूनों का परीक्षण किया जाना चाहिए।

उर्वरकों में सूक्ष्मपोषक तत्वों की मात्रा को गुरूपोषक तत्वों की मात्रा की अपेक्षा कहीं अधिक सावधानी से नियंत्रित किया जाना चाहिए। दिए गए सूक्ष्मपोषक तत्व के लिए कमी तथा आविषालुता स्तर में अन्तर बहुत ही कम होता है। इसलिए, सूक्ष्मपोषक तत्वों को तभी मिलाया जाना चाहिए जब उनकी आवश्यकता सुनिश्चित हो और जब ये पता हो कि कितनी मात्रा की आवश्यकता है। जब लेश तत्व (trace element) की कमी को पूरा करना हो, तो सामान्यतः कमी वाले पोषक तत्व के लवण को अलग से मृदा में मिला दिया जाता है। सारणी 3.6 में कुछ प्रचलित सूक्ष्मपोषक तत्वों के वाहकों (carriers) की सूची दी गई है।

सारणी 3.6: उर्वरकों में समान्य तौर पर उपयोग में लाये जाने वाले सूक्ष्मपोषक तत्वों के वाहक

यौगिक	सूत्र	पोषक तत्व संयोजन (%)
सोडियम बोरेट (बोरेक्स)	$Na_2B_4O_7.10H2O$	11% B
कॉपर सल्फेट	$CuSO_4 .5H_2O$	25% Cu
फैरस सल्फेट	$FeSO_4 .7H_2O$	20% Fe
मैंगनस सल्फेट	$MnSO_4 .4H_2O$	23-25% Mn (जलयोजन की मात्रा पर निर्भर करते हुए)
अमोनियम मॉलिब्डेट	$(NH_4)_6Mo_7O_{24} .2H_2O$	54% Mo
सोडियम मॉलिब्डेट	$Na_2MoO_4 .2H_2O$	40% Mo
जिंक सल्फेट	$ZnSO_4 .7H_2O$	35% Zn

3.5.2 उर्वरक की आवश्यकताओं को प्रभावित करने वाले कारक

उर्वरकों के उपयोग का बढ़ता चलन इस तथ्य पर आधारित है कि उनमें निवेश किए गए धन से बड़े लाभ प्राप्त किए जाते हैं। उर्वरकों के उपयोग को प्रभावित करने वाले कारक मृदा, जलवायु, फसल तथा खेती के तरीकों से संबन्धित होते हैं। उनका संक्षिप्त वर्णन नीचे किया गया है:

मृदा कारक (soil factors) : मृदा की भौतिक स्थिति, मृदा उर्वरता तथा मृदा अभिक्रिया तीन महत्वपूर्ण मृदा कारक हैं। खराब भौतिक स्थिति होने पर बाधित निकासी (impeded drainage), सीमित वातन तथा प्रतिकूल मृदा तापमान के कारण उर्वरक के पोषक तत्वों का कुशल उपयोग नहीं हो पाता है। बारीक गठन वाली मृदाओं की तुलना में स्थूल गठन (coarse textured) वाली मृदाओं में कम पोषक तत्व होते हैं और इसलिए इनमें अधिक बार नाइट्रोजनी, फ़ॉस्फ़ेटी तथा पोटाश युक्त उर्वरकों का उपयोग करना आवश्यक होता है। मृदा की उर्वरता जितनी अधिक होती है, उतनी ही कम फसलों की उर्वरकों के लिए प्रतिक्रिया होती है। उचित प्रकार के फ़ॉस्फ़ेटी उर्वरक के चयन में मृदा अभिक्रिया बहुत महत्वपूर्ण होती है।

MANODAYAM IAS
way to achieve your dream

जलवायु कारक (climatic factors) : इनमें तापमान, वर्षा तथा उसका वितरण, वाष्पन, दिन की लंबाई तथा वर्धन की ऋतु (growing season) सम्मिलित हैं। ठंडे मौसम तथा उच्च वर्षा वाले क्षेत्रों में अधिक मात्रा में अमोनियाई नाइट्रोजनी (ammoniacal nitrogenous) उर्वरकों की आवश्यकता होती है, क्योंकि उच्च वर्षा से मृदा का **निक्षालन**

निक्षालनः मृदा पदार्थों का विलयन में निष्कासन

(leaching) तथा उर्वरक के पोषक तत्वों का क्षय हो जाता है। इसी प्रकार, अधिक प्रकाश तीव्रता तथा दिन की लंबाई फसल की उर्वरक आवश्यकता को बढ़ा देते हैं।

फसल कारक (crop factors) : उर्वरकों के प्रति फसल की प्रतिक्रिया फसल की प्रकृति तथा प्रकार के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है जो जड़ों की धनायन विनिमय क्षमता से संबन्धित होती है। फसल क्रम में फलीदार फसलों (legume) में नाइट्रोजन की आवश्यकता भले ही कम हो लेकिन अन्य पोषक तत्व अनुकूलतम मात्रा में होने चाहिए जिससे फलीदार फसलों द्वारा बनने वाली नाइट्रोजन का अधिकतम उपयोग हो सके।

कृषि कारक (agronomic factors) : ये कारक फसल उत्पादन के लिए उर्वरकों के प्रभावी उपयोग की कुंजी हैं और इनमें फसलों की उर्वरक अनुक्रियता (fertilizer responsiveness), अंतरण (spacing), उचित मात्रा, समय तथा उर्वरक के अनुप्रयोग, की विधि सम्मिलित है। वे उर्वरक जो मृदा में मिलाए जाने पर अमोनिया की आपूर्ति अथवा उत्पादन करते हैं, निम्नलिखित अभिक्रिया के कारण मृदा की अम्लता को बढ़ा देते हैं।

$$NH_4^+ + 2O_2 \rightarrow 2H^+ + NO_3^- + H_2O$$

अमोनियम यौगिकों के अतिरिक्त, यूरिया जैसे पदार्थ जो जल अपघटन होने पर अमोनियम आयन देते हैं, अम्लता के संभावित स्त्रोत होते हैं। सामान्यतः उपयोग में लाए जाने वाले फ़ॉस्फ़ोरस तथा पोटैशियम उर्वरक में अगर नाइट्रोजन न हो तो मृदा के pH पर उनका कम ही प्रभाव होता है। कुछ उर्वरकों की उचित अम्ल निर्माण क्षमता जो $CaCO_3$ के किलोग्राम में अभिव्यक्त की जाती है और जिसकी 100 kg नाइट्रोजन की आपूर्ति करने पर उत्पन्न होने वाली अम्लता को उदासीन करने के लिए आवश्यकता होती है वह निम्नलिखित है।

उर्वरक	**$CaCO_3$(kg)**	**उर्वरक**	**$CaCO_3$(kg)**
$(NH_4)_2SO_4$	535	NH_4NO_3	180
$(NH_4)_2HPO_4$	*500*	बिनौला चूना (cotton seedmeal)	145
यूरिया	180	कैस्ट्रॉल बोमेस (castrol bomace)	*90*

अम्लों का निर्माण करने वाले उर्वरकों का सतत् और लापरवाही से उपयोग करने से दो तीन वर्षों के अल्प अन्तराल में ही उर्वर मृदा बंजर मृदा में परिवर्तित हो सकती है।

3.5.3 खाद

फार्मयार्ड खाद : मवेशियों के मूत्र और गोबर, बचे हुए चारे और भोजन तथा सड़ी गली पत्तियों से तैयार खाद (तैयार होने में ~ 2 महीने का समय लगता है)

कंपोस्ट : कार्बनिक अपशिष्टों के सूक्ष्मजीवीय विघटन के परिणामस्वरूप प्राप्त जैसे खेत के व्यर्थ पदार्थ, वन्य वनस्पतियों, मवेशियों के गोबर, सड़ी गली पेड़ों की पत्तियाँ, मृदा, बूचड़खाने के व्यर्थ पदार्थ (तैयार होने में ~4 महीने का समय लगता है)

जिस प्रकार उर्वरक मृदा की उत्पादकता को प्रभावित करते हैं, वैसे ही मृदा में पाए जाने वाले कार्बनिक पदार्थ भी मृदा की उर्वरता से संबद्ध होते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि कार्बनिक पदार्थो से समृद्ध मृदा अक्सर उत्पादक होती हैं और साथ ही कार्बनिक खादों का प्रयोग उस समय से मृदा की स्थिति को सुधारने के लिए किया जाता रहा है जब उर्वरकों का उपयोग आरंभ भी नहीं हुआ था। खादें वह कार्बनिक तत्व होती हैं जिन्हें जंतु, मानव तथा पादप अवशेषों से प्राप्त किया जाता है जिनमें पोषक तत्व कार्बनिक रूपों में पाए जाते हैं। इनका मूल्यांकन मुख्य रूप से इनमें नाइट्रोजन की मात्रा तथा इनमें उपस्थित कार्बनिक तत्व की मात्रा के आधार पर किया जाता है। स्थूल कार्बनिक खादों की श्रेणी में आने वाली दो प्रमुख खादें **फार्मयार्ड खाद** (एफ वाई एम, FYM) और **कंपोस्ट** हैं। इनमें मूल तत्व जंतु तथा मानव मल है जिसमें सूक्ष्मजीव होते हैं जो कार्बनी तथा नाइट्रोजनी पदार्थो को विघटित कर देते हैं। कुछ अन्य प्रकार की खादें भी होती हैं जैसे सान्द्रित कार्बनिक खादें, खाद्य टिकिया तथा भोजन जिन्हें खाद से बनने वाले जंतु व्यर्थ पदार्थों से बनाया जाता है। खादों में 50 से 80 प्रतिशत जल होता है। एक टन खाद में NPK की 10-2.2-8.3 अथवा (10-5-10) की मात्रा का अक्सर निर्देशन के तौर पर उपयोग किया जाता है। अतः प्रति एकड़ 10 टन खाद डालने से 2 से 5 टन कार्बनिक तत्व की आपूर्ति होती है, जो मृदा को बेहतर जुताई में रखने में सहायक होते हैं, जल के अंतर्ग्रहण को बेहतर बनाते हैं तथा कार्बन डाइऑक्साइड के निर्गम को बढ़ाते हैं।

MADHYAM IAS

शुष्क खाद में यद्यपि 80 प्रतिशत कार्बन होता है, फिर भी उसे प्रमुख रूप से नाइट्रोजन उर्वरक तथा कुछ सीमा तक पौटैशियम उर्वरक ही माना जाता है। खाद से पोषक तत्वों की क्षति गंभीर होती है। उदाहरण के लिए यदि किंण्वित (fermented) खाद को फैलाने के बाद जुताई से पहले मिट्टी की सतह पर सूखने के लिए, छोड़ दिया जाए तो 25 प्रतिशत नाइट्रोजन वाष्पीकरण (volatilisation) के द्वारा एक दिन में तथा 50 प्रतिशत तक चार दिनों में नष्ट हो जाती है। सबसे कुशल उपयोग के लिए खाद की उसी दिन जुताई कर देनी चाहिए जिस दिन उसे खेत में डाला जाए।

कार्बनिक तत्व के विघटन में निकलने वाली कार्बन डाइऑक्साइड की बड़ी मात्रा को कुछ पोषक तत्वों, विशेष रूप से अकार्बनिक फ़ॉस्फ़ोरस के निर्गम के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है। कार्बन डाइऑक्साइड जल में घुल जाती है और कार्बोनिक अम्ल (carbonic acid) बनाती है तथा मृदा के pH को कम कर देती है। ये प्रभाव उदासीन तथा क्षारीय मृदाओं के लिए अधिक महत्व का होता है। ऐसी स्थितियों में pH में होने वाली अस्थायी कमी अन्य तत्वों जैसे बोरोन, जिंक, मैंगनीज तथा आयरन के साथ-साथ फ़ॉस्फ़ोरस के निर्गम की दर को बढ़ा देती है। कार्बनिक तत्व के कुछ महत्वपूर्ण कार्य निम्नलिखित हैं,

- ये पोषक तत्वों, नाइट्रोजन, फ़ॉस्फ़ोरस, सल्फर आदि के भंडारण का कार्य करता है।
- ये मृदा की विनिमय क्षमता को बढ़ाता है।
- ये सूक्ष्मजीवों की क्रियाविधि के लिए ऊर्जा प्रदान करता है।
- ये कार्बन डाइऑक्साइड को निर्मुक्त करता है और इस प्रकार मृदा वायु रंध्रों को खोलता है।
- ये मृदा गठन को स्थिर करता है और जोत (tilth) को बेहतर बनाता है।

ये ध्यान देने की बात है कि अंतिम कार्य को छोड़कर बाकी सभी कार्य विघटन पर निर्भर करते हैं। इसलिए अच्छी फसल तथा मृदा की उर्वरता के लिए बढ़ी मात्रा में अवशिष्ट पदार्थों का उत्पादन और उनका विघटन आवश्यक होता है।

बोध प्रश्न 4

खराब भौतिक स्थितियों तथा उच्च वर्षा वाली मृदा को अधिक उर्वरक तत्वों की आवश्यकता क्यों होती है ?

....

....

....

बोध प्रश्न 5

उर्वरक में पाए जाने वाले उस पोषक तत्व का नाम बताइए जो मृदा में अम्लता पैदा करता है। ये भी समझाइए कि वह ऐसा किस प्रकार करता है।

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

3.5.4 पारंपरिक तरीके

वर्षों तक एक ही फसल की लगातार खेती (एकधान्य कृषि, monoculture), एक ही स्थान पर करने से किसी समूह विशेष के सूक्ष्मजीव वहां पर एकत्रित हो जाते हैं और, वो अन्य पर प्रभावी हो जाते हैं। अतः मृदा की सिंचाई, खासतौर पर बंजर क्षेत्रों में सिंचाई करने से मृदा सूक्ष्मजीवों का काफी प्रसरण (proliferation) हो जाता है। हम जानते हैं कि मृदा में पाए जाने वाले सूक्ष्म वनस्पतिजात् मृत पादपों तथा जंतुओं के विघटन तथा पोषक तत्वों के पुर्नचक्रण (recycling) में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अम्लीय मृदा में चूना डालने से

जीवाणुओं तथा ऐक्टिनोमाइसिटीज (actinomycetes) और निम्न कवकीय जीवों की गतिविधि बढ़ जाती है। फसल चक्रण (crop rotation) यानि कि बदल कर फसल उगाने से यह प्रतिकूल जनसंख्या संतुलन बिगड़ जाता है। फिर भी, फसल चक्रण तथा एकधान्य कृषि (monoculture) दोनों के ही साथ लाभ और हानियां जुड़ी हुई हैं। इन्हें नीचे दिया गया है :

फसल चक्रण

1. सभी खेतों में क्रमिक रूप (periodically) से गहरी जड़ों वाली फलीदार फसलें लगाई जानी चाहिए।
2. खेतों में अधिक वनस्पति आवरण (vegetative cover) होता है और संभवतः कम मृदा अपरदन (soil erosion) होता है।
3. मृदा की जुताई बेहतर हो जाती है।
4. ऐसी फसलें जिनकी जड़ों का भरण विस्तार (feeding range) तथा पोषक तत्वों की आवश्यकता विविध हो उन्हें उगाया जा सकता है।
5. खरपतवार (weeds) तथा कीट नियंत्रण लाभदायक होता है यद्यपि रासायनों का प्रभाव बढ़ता जा रहा है।
6. रोग नियंत्रण लाभदायक होता है, फसल के अवशिष्ट पदार्थों को बदलने से मृदा जीवों के बीच प्रतिस्पर्धा बढ जाती है और उससे रोगजनक (pathogens) जीव कम हो सकते हैं।

सतत् खेती अथवा एकधान्य कृषि

1. जलवायु एक फसल के लिए अनुकूल हो सकती है अथवा मृदा विशेष रूप से एक फसल के लिए अनुकूलित हो सकती है।
2. यंत्रों तथा निर्माण की लागत संभवतः कम हो सकती है जिससे लाभ अधिक हो सकते हैं।
3. किसान एक फसल की खेती करना पसंद करे और उसका विशेषज्ञ बन जाए। कुछ व्यक्ति अनेकों फसलों को उगाने में दक्ष और अच्छी जानकारी युक्त हो सकते हैं और साथ ही मवेशी भी रख सकते है। एकधान्य कृषि के लिए अधिक कौशल की जरूरत होती है जिसमें कीट, मृदा अपरदन तथा मृदा उर्वरता के नियंत्रण शामिल हैं।
4. किसान पूरे साल पूरी तरह से खेती में ही व्यस्त ना रहना चाहता हो।

3.6 सारांश

आइए, अब हम मृदा उर्वरता तथा उत्पादकता के विभिन्न पहलुओं को संक्षेप में दोहराएं जिनकी इस इकाई में चर्चा की गई है। मृदा उर्वरता तथा उत्पादकता मृदा के आनुवंशिक गुण हैं जिन्हें उचित प्रबंधन द्वारा सुधारने की आवश्यकता होती है जिससे फसल की बेहतर उपज प्राप्त की जा सके। अनेक तत्व जिन्हें आवश्यक तत्व कहते हैं, पादप को पोषण प्रदान करते हैं और पादप उपापचयन में हिस्सा लेते हैं। इन तत्वों को गुरुपोषक तत्व तथा सूक्ष्मपोषक तत्वों में विभाजित किया गया है जो इस बात पर निर्भर करता है कि उनकी आवश्यकता क्रमशः अधिक अथवा बहुत ही अल्प मात्रा में हैं। ये पोषक तत्व पादपों में विविध प्रकार के कार्य करते हैं और उनकी कमी से पादपों की वृद्धि प्रभावित होती है जिसे कमी के लक्षणों के रूप में दर्शाया जाता है और जो किसी पोषक तत्व विशेष के लिए विशिष्ट होते हैं।

MAADHYAM IAS

फसल की उत्पादकता केवल मृदा में पोषक तत्वों की उपस्थिति पर ही निर्भर नहीं होती है बल्कि ये पोषक तत्वों के उस अंश पर भी निर्भर करती है जो वास्तव में उपलब्ध होता है, इसे पादप उपयोग के लिए उपलब्ध मृदा पोषक तत्व भी कहते हैं। यह पोषक तत्व उपलब्धता अनेकों कारकों पर निर्भर करती है जिसमें मृदा pH सबसे महत्वपूर्ण कारक होता है। मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों के आकलन के लिए अनेकों रासायनिक विधियों का उपयोग किया जा सकता है और मृदा में उपलब्ध मृदा पोषक तत्वों के ऐसे मूल्यांकन को

मृदा उर्वरता मूल्यांकन कहते है। मृदा उर्वरता मूल्यांकन को करने के लिए दो मात्रात्मक संरूपण पेश किए गए हैं जिन्हें न्यूनतम का नियम तथा ह्रासमान प्रत्यावर्तन का नियम कहते हैं और इस तरह ये दी गई मृदा में किसी फसल के उत्पादन के लिए उर्वरक की आवश्यकता का आकलन करते हैं। यहां तक कि आदर्श स्थितियों में अधिकतम फसल उत्पादन का परिकलन भी किया जा सकता है।

किसी भी देश की समृद्धि काफी कुछ वहां की मृदा उर्वरता के स्तर तथा उसके प्रबंधन पर निर्भर करती है। मृदा उर्वरता को सिर्फ बनाए ही नहीं रखना चाहिए बल्कि उसमें निरंतर सुधार भी करते रहना चाहिए। किसी भी आवश्यक पोषण तत्व की यदि कमी हो तो उसे दूर कर दिया जाना चाहिए क्योंकि किसी भी पोषक तत्व की कमी फसल की उपज को कम कर देती है। उर्वरक तथा खादें मृदा की उर्वरता और उत्पादकता के स्तर को ऊंचा रखने के लिए आवश्यक होती हैं। केवल उर्वरकों को मिलाना ही काफी नहीं है, मृदा के उर्वरता स्तर का मूल्यांकन करने और फिर उचित उर्वरकों का उचित अनुपात में उपयोग करने की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन युक्त उर्वरकों के साथ यदि चूना ना डाला जाए तो उनसे इतना अम्ल बनता है कि कुछ ही वर्षो में उर्वर भूमि बंजर हो सकती है। इसके साथ ही मृदा, जलवायु, फसल तथा कृषि के तरीकों से संबन्धित अनेक कारकों पर भी विचार किया जाना चाहिए जिससे मृदा की उर्वरता का प्रबंधन किया जा सकें।

इसके अतिरिक्त फसल चक्रण के तरीके को भी अपनाना चाहिए जिससे कुछ मृदा जीवों की प्रतिकूल जनसंख्या वृद्धि को रोका जा सके और मृदा को अच्छी स्थिति में बनाए रखा जा सके। इस चक्रण को अनेकों तरीकों से नियोजित किया जा सकता है लेकिन फलीदार फसलों द्वारा चक्रण जो मृदा को नाइट्रोजन तथा कार्बनिक तत्वों की भी आपूर्ति करते हैं, उसे ही सामान्यतः अपनाया जाता है। मृदा की उत्पादकता बढ़ाने के लिए फार्म खाद का भी उपयोग किया जाना चाहिए।

3.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. किस स्थिति में कोई तत्व आवश्यक तत्व कहलाता है ?
2. फॉस्फेट की कमी की स्थिति में उगाई जाने वाली फलीदार फसलों में नाइट्रोजन की भी कमी पाई जाती है। समझाइए ऐसा क्यों होता है ?
3. मृत्तिका/ह्यूमस कोलॉइड में पोटैशियम की अपेक्षा विनिमयकारी कैल्शियम अधिक क्यों होता है ?
4. ह्रासमान प्रत्यावर्तन के नियम को समझाइए।
5. दिल्ली की एक मृदा में 0.67% कार्बन, 50 kg P_2O_5/ha उपलब्ध फॉस्फोरस तथा 125 kg K_2O/ha उपलब्ध पोटैशियम है। इसके लिए आप उर्वरक की कितनी मात्रा की संस्तुति करेंगे। उन कुछ उर्वरकों के भार का भी परिकलन कीजिए जिन्हें उस खेत में डाला जाना चाहिए। (**संकेत** : सारणी 3.4 तथा 3.5 का प्रयोग करें)
6. क्यों रासायनिक उर्वरकों के साथ कार्बनिक खाद भी मिलाई जानी चाहिए ?
7. फसल चक्रण किस प्रकार से मृदा प्रबंधन के लिए अच्छा है ?

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

3.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1. क) (i) विलंबित (ii) नाइट्रोजन
   ख) पोटैशियम
   ग) कैल्शियम
   घ) फॉस्फोरस

ङ) कार्बनिक अम्ल

च) मैग्नीशियम

छ) Al^{3+} तथा Mn^{2+}

ज) बोरोन

झ) Mn^{2+}

ङ) मैंगनीज़

2. क्योंकि आयरन, मैंगनीज, जिंक तथा कॉपर उदासीन से क्षारीय क्षेत्र में अवक्षेपित हो जाते हैं।

3. N के लिए कारक (0.9 बॉली) = 45.2/100 = 0.452

P_2O_5 के लिए कारक (1.9 बॉली) = 72.6/100 = 0.726

K_2O के लिए कारक (4.0 बॉली) = 93.6/100 = 0.936

मृदा कारक (5.0 बॉली) = 96.8/100 = 0.968

अधिक फसल उपज के लिए कारक = 0.452 × 0.726 × 0.936 × 0.968 = 0.297

अधिकतम फसल उपज निम्नलिखित होगी

मक्का = 0.297 × 225 बुशेल = 66.825 बुशेल

गेहूँ = 0.297 × 171.2 बुशेल = 50.84 बुशेल

गन्ना = 0.297 × 192 टन = 57.02 टन

चूंकि मृदा तथा K_2O अच्छी फसल के लिए पर्याप्त हैं, अतः नाइट्रोजन और फ़ॉस्फ़ोर को 3 बॉली से अधिक बढ़ाया जाना चाहिए।

मान लीजिए N = 3.5 तथा P = 4.0 बॉली

अधिकतम फसल उपज के लिए नया कारक = 0.909 × 0.936 × 0.936 × 0.968
= 0.771

अधिकतम फसल उपज निम्नलिखित होगी

मक्का = 0.771 × 225 बुशेल = 173.5 बुशेल

गेहूँ = 0.771 × 171.2 बुशेल = 132.0 बुशेल

गन्ना = 0.771 × 192 टन = 148.0 टन

अर्थात् बदलाव से क्रमशः मक्का, गेहूँ तथा गन्ना की अधिकतम उपज क्रमशः 173.5 बॉली, 132 बॉली तथा 148 टन हो जाएगी।

4. अधिक वर्षा मृदा का निक्षालन तथा उर्वरक पोषक तत्वों का क्षय करती है।

5. अमोनिया उत्पन्न करने वाले उर्वरक मृदा की अम्लता को बढ़ा देते हैं। अमोनिया द्वा बनने वाले अमोनियम आयन, मृदा वायु की उपस्थिति में H^+ आयन बनाते है जो मृ में अम्लता पैदा करते हैं।

MAADHYAM IAS

अंत में कुछ प्रश्न

1. कोई तत्व आवश्यक तत्व तब कहलाता है, यदि :

क) पादप अपना जीवनचक्र उसके बिना पूर्ण नहीं कर सकता है।

ख) वह तत्व पादप में अपने शरीरक्रियात्मक कार्य के लिए विशिष्ट होता है।

ग) उसकी अनुपस्थिति से पादप में विकसित होने वाली कमी को सिर्फ उसी तत्व को मिलाने से दूर किया जा सकता है।

2. *राइजोबियम (Rhizobium)* का जीवाणु फलीदार पादपों की जडों को संक्रमित (infect) करता है और जड ग्रंथिकाएं **(nodules)** बनाता है। ये जीव परपोषी पादप के जड़ ऊतकों से कार्बोहाइड्रेट लेते हैं और नाइट्रोजन यौगिकीकरण के लिए नाइट्रोजनी यौगिक बनाते हैं। *राइजोबियम* जीवाणु फ़ॉस्फ़ोरस की कमी वाली मृदा में नहीं आते हैं, जिसका अर्थ है कि फ़ॉस्फ़ोरस की कमी होने पर पादप की जड़ो में संक्रमण कम होगा और इसलिए कम ग्रंथिकाएं बनेंगी और इस तरह नाइट्रोजन यौगिकों का कम उत्सर्जन होगा। इससे मृदा में नाइट्रोजन की कमी हो जाएगी।

3. अम्लीय मृदा को छोड़कर जो नम क्षेत्रों में पाई जाती है, उसमें अत्यधिक निक्षालन **(leaching)** होने के कारण कैल्शियम की कमी हो जाती है, पर बाकी मृदाओं में कैल्शियम भरपूर होता **8**। अभ्रक (mica) जैसे **K-** खनिजों की तुलना में, **Ca-** युक्त

तथा K आयन अधिक विनिमयकारी होते हैं।

4. कमी वाले कारक में इकाई बढ़त से उपज में बढ़त अधिकतम से कमी के अनुपात में होती है (कृपया उपभाग 3.4.1 देखें)।

5. सारणी 3.5 का उपयोग करने पर इन मानों के लिए अनुशंसित मात्रा निम्नलिखित है:
N = 90 kg N/ha
P = 15 kg P_2O_5/ ha
K = 50 kg K_2O / ha
यदि चयन किए गए उर्वरक यूरिया, सुपरफ़ॉस्फ़ेट (एकल) तथा पोटैशियम सल्फेट हैं तो उनके द्रव्यमानों का परिकलन किया जा सकता है

$100/46 \times 90 \simeq$ 196 kg यूरिया (क्योंकि में ~ 46% N होती है)

$100/48 \times 50 \simeq$ 104 kg K_2O (क्योंकि K_2SO_4 में ~ 48% K_2O होता है)

$100/16 \times 15 \approx$ 94 kg P_2O_5 (क्योंकि सुपरफ़ॉस्फ़ेट (एकल) में ~ 16% P_2O_5 होता है)

प्रति हैक्टेयर खेत में इतनी मात्रा में उर्वरकों को मिलाकर डाला जाना चाहिए।

6. केवल रासायनिक उर्वरक के ही उपयोग से मृदा में से कार्बनिक तत्व और इस तरह से जीव खत्म हो जाएंगे। महत्वपूर्ण अभिक्रियाएं जैसे NH_4^+ तथा कार्बनिक नाइट्रोजन का नाइट्रेट में परिवर्तन तथा अन्य अनेकों अभिक्रियाएं संभव नहीं हो पाएंगी। इसके फलस्वरूप मृदा की उत्पादकता कम हो सकती है और मृदा की कणमय संरचना समाप्त हो सकती है और वह समय के साथ बंजर (arid) हो सकती है।

7. एक ही स्थान पर सालों तक एक फसल की खेती से उस विशेष प्रकार के सूक्ष्मजीव वहां जमा हो जाते हैं जो दूसरों पर प्रभावी होते हैं। इससे मृदा की उत्पादकता कम हो जाती है। फसल चक्रण इस प्रतिकूल जनसंख्या को खत्म कर देता है और मृदा की उत्पादकता को बनाए रखने में सहायक होता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इकाई 4 जल-स्रोत

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
4.2 भू-क्षेत्रफल और वृष्टि के मात्रक
4.3 विश्व में जल का वितरण
4.4 भारत में जल स्रोत
वार्षिक वृष्टि
हमारे देश में नदी-निकाय
नदी बेसिन
भौमजल उपलब्धता
4.5 जलीय चक्र
जलीय चक्र के चरण
जलीय चक्र के प्रचालन सहायक जल के अपसामान्य गुणधर्म
जलीय चक्र का महत्व
4.6 अलवण जल पारितंत्रों की द्रवगतिकी
4.7 जल-स्रोतों के संरक्षण और प्रबंधन से संबद्ध प्रमुख समस्याएं
जल उपलब्धता और उपयोगिता से संबंधित लक्षण
जल संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन की आवश्यकता
4.8 जल संरक्षण और प्रबंधन की विधियां
4.9 सारांश
4.10 अंत में कुछ प्रश्न
4.11 उत्तर

4.1 प्रस्तावना

जल की उपलब्धता और बहुत हद तक उसके समुचित उपयोग का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान होता है। यही कारण है कि पंचवर्षीय योजनाओं पर विचार करते समय जल संसाधन क्षेत्र के लिए पर्याप्त वित्तीय नियतन किया जाता है। प्रथम पंच वर्षीय योजना (1951-56) में कृषि, सिंचाई और विद्युत् परियोजनाओं को सर्वाधिक प्राथमिकता दी गई थी जबकि उनके लिए 44.6% निधि का नियतन किया गया था। हमारे देश में कृषि से 26% राष्ट्रीय आय और लगभग 64% रोजगार उत्पन्न होता है। वर्तमान समय में दुनिया के सभी देशों में भारत का सिंचित क्षेत्र सबसे अधिक है। इससे 1950 से 1997 की अवधि में खाद्यान्नों के उत्पादन में चार गुना वृद्धि करने में बहुत योगदान मिला। विभिन्न उत्पादन कार्यों के लिए जल की मात्रात्मक आवश्यकता की तुलना करना उपयुक्त रहेगा। अध्ययनों से पता लगता है कि एक एकड़ धान की फ़सल के लिए 47.5 लाख लिटर जल की आवश्यकता होती है। इस्पात संयंत्र में प्रतिटन इस्पात उत्पादन के लिए 83600 लिटर जल की आवश्यकता होती है। पेट्रोल के 200 लिटर बैरल के परिष्करण के लिए 3000 लिटर जल की आवश्यकता होती है। एक टन संश्लिष्ट रबर के उत्पादन के लिए, 22.8 लाख लिटर जल की

MAADHYAM IAS

आवश्यकता होती है। संक्षेप में किसी उद्योग का स्थान-निर्धारण, कच्चे पदार्थ के रूप में जल की उपलब्धता पर निर्भर करता है। इन सबका उल्लेख यह बताने के लिए किया गया है कि जल, राष्ट्रीय विकास का महत्वपूर्ण स्रोत है।

इस इकाई में विश्व में जल-वितरण तथा हमारे देश के जल-स्रोतों का संक्षिप्त उल्लेख किया जाएगा। यह बताया जाएगा कि किस प्रकार जल-उपलब्धता में क्षेत्रीय असंतुलन है। जलीय चक्र और अलवणीय जल पारितंत्रों के जलगति विज्ञान की चर्चा की जाएगी, इन लक्षणों की जानकारी से उपलब्ध जल स्रोतों का सर्वोत्तम संभावित उपयोग करने में सहायता मिलेगी। जल-स्रोतों के संरक्षण और प्रबंधन की आवश्यकता और विधियों का विस्तृत वर्णन किया जाएगा। हमारा उद्देश्य जल की न्यूनता के कारण उत्पन्न समस्याओं को हल करने के लिए अपनाए जाने वाले प्रतिकारी प्रत्युपायों पर ध्यान केन्द्रित करना है।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप

- जल को संसाधन के रूप में मानने के कारण बता सकेंगे;
- विश्व और राष्ट्रीय स्तर पर जल की उपलब्धता के मात्रात्मक पहलुओं को बता सकेंगे;
- जलीय चक्र की विभिन्न अवस्थाओं और महत्व की चर्चा कर सकेंगे;
- अलवणीय जल पारितंत्रों के जलगति विज्ञान के प्रमुख लक्षणों को बता सकेंगे;
- जल स्रोतों के संरक्षण और प्रबंधन की आवश्यकता का समर्थन कर सकेंगे; और
- जल संरक्षण और प्रबंधन के लिए अपनायी जाने वाली विधियों की व्याख्या कर सकेंगे।

4.2 भू-क्षेत्रफल और वृष्टि के मात्रक

आगामी अनुच्छेद में जाने से पहले हमें भू-क्षेत्रफल (सिंचित) और वृष्टि, हिमपात अथवा भू-स्रोतों से प्राप्त जल के आयतन के लिए प्रयुक्त कुछ मात्रकों की जानकारी होनी चाहिए।

भू-क्षेत्रफल के मात्रक :

1 हेक्टेयर = 2.47 ऐकड़ = 10^4 मीटर^2 = 10^4 m

(अर्थात् 1 हेक्टेयर = 10^4 मीटर^2)

100 हेक्टेयर = 10^6 मीटर^2 = 1 किलोमीटर^2 = 1 km

(अर्थात् 100 हेक्टेयर = 10^6 मीटर^2 किलोमीटर^2)

साथ ही, मिलियन हेक्टेयर = 10^{10} मीटर^2 = 10^{10} m^2

वृष्टिपात, हिमपात अथवा भौमजल के कारण प्राप्त जल के आयतन के मात्रक :

MAADHYAM IAS

1 लिटर = 0.22 गैलन

1000 लिटर = 1 मीटर^3 = 1 m^3

1 हेक्टेयर मीटर = 10^4 मीटर^3 = 10^4 m^3 .... (4.1)

(1 हेक्टेयर मीटर)

1 मिलियन हेक्टेयर मीटर 10^{10} मीटर^3 = 10 किलोमीटर^3 = 10^{13} लिटर .... (4.2)

= 10^{13} dm^3

(अर्थात् दस लाख हेक्टेयर मीटर)

वृष्टि के कारण प्राप्त जल के आयतन का परिकलन

क्षेत्रफल को मीटर^2 में और वृष्टि को मीटर में लें तो वृष्टि से प्राप्त जल का आयतन मीटर^3 में प्राप्त होगा, देखें समीकरण 4.3।

$$\left.\begin{array}{l}\text{वार्षिक वृष्टि के कारण प्राप्त जल}\\ \text{का आयतन, मीटर}^3\text{ मात्रक में}\end{array}\right\} = \left(\begin{array}{l}\text{पृष्ठ क्षेत्रफल}\\ \text{मीटर}^2\text{ मात्रक में}\end{array}\right) \times \left(\begin{array}{l}\text{औसत वार्षिक वृष्टि}\\ \text{मीटर मात्रक में}\end{array}\right) \quad \ldots (4.3)$$

वृष्टि से प्राप्त जल का आयतन मिलियन हेक्टेयर मीटर मात्रक में समीकरण 4.4 से परिकलित कर सकते हैं।

$$\left.\begin{array}{l}\text{वार्षिक वृष्टि के कारण प्राप्त}\\ \text{जल का आयतन, मिलियन}\\ \text{हेक्टेयर मीटर मात्रक में}\end{array}\right\} = \left(\begin{array}{l}\text{भू-क्षेत्रफल}\\ \text{मिलियन हेक्टेयर}\\ \text{मात्रक में}\end{array}\right) \times \left(\begin{array}{l}\text{औसत वार्षिक वृष्टि}\\ \text{मीटर मात्रक में}\end{array}\right) \quad \ldots (4.4)$$

उदाहरण 1

हमारे देश का भू-क्षेत्रफल 304 मिलियन हेक्टेयर है। आइए, इस भू-क्षेत्र में प्राप्त वार्षिक वृष्टि का आयतन परिकलित करें। औसत वृष्टि 110 सेन्टीमीटर (अर्थात् 1.10 मीटर है)। उत्तर को मिलियन हेक्टेयर मीटर, मीटर^3 और लिटर मात्रकों में परिकलित करें।

समीकरण 4.4 से,

हमारे देश के भू-क्षेत्रफल	= 304 × 1.10 मिलियन हेक्टेयर मीटर
में प्राप्त वार्षिक वृष्टि	= 334.4 मिलियन हेक्टेयर मीटर
का आयतन	= 3.344×10^{12} मीटर^3 (समीकरण 4.2 से)
	= 3.344×10^{15} लिटर

बोध प्रश्न 1

किसी स्थान का क्षेत्रफल 1483 किलोमीटर^3 है। औसत वार्षिक वृष्टि 60 सेन्टीमीटर। उस स्थान में प्राप्त वार्षिक वृष्टि मीटर^3, मिलियन हेक्टेयर मीटर और लिटर मात्रकों में परिकलित कीजिए।

....

....

....

4.3 विश्व में जल का वितरण

पृथ्वी का तीन चौथाई भाग जल से ढका है। ऐसा अनुमान है कि जल की कुल मात्रा 1.400×10^9 किलोमीटर^3 से अधिक है। यह मात्रा पृथ्वी को जल की 300 मीटर गहरी परत से ढ़कने के लिए पर्याप्त है। इस जल का 97.2% महासागरों में है शेष 2.8% अलवणी जल का 2.15% हिमनदों (glaciers) और बर्फ छत्रकों के रूप में जमा हुआ है। इस प्रकार तालाबों और नदियों का संपूर्ण जल, वायुमंडल, मृदा और वनस्पति की संपूर्ण नमी और संपूर्ण भूमिगत जल मिलाकर कुल जल का लगभग 0.65% है। इसका भी अधिकांश भाग भूमिगत जल के रूप में है जिसका आधा भाग भू-पृष्ठ के नीचे 1000 मीटर से भी नीचे है। लगभग 0.017% जल नदियों और अलवणी तालाबों में विद्यमान है।

यदि पृथ्वी में जल की कुल मात्रा 100 लिटर हो तो केवल 17 घन सेन्टीमीटर जल नदियों और तालाबों में अलवणी जल के रूप में विद्यमान है।

MAADHYAM IAS

4.4 भारत में जल-स्रोत

इस भाग में हम भारत में सभी स्रोतों से जल की उपलब्धता के बारे में पढ़ेंगे।

4.4.1 वार्षिक वृष्टि (Annual rainfall)

भू-पृष्ठ पर प्राकृतिक ढाल में वृष्टि के प्रवाह को वाह (run **off)** कहते हैं।

भारतीय अर्थव्यवस्था बहुत हद तक, दक्षिण-पश्चिम और उत्तर-पूर्व, इन दो मानसूनों से होने वाली वृष्टि पर निर्भर करती है। भारत में औसत वार्षिक वृष्टि 110 सेन्टीमीटर है जबकि विश्व का औसत 99.1 सेन्टीमीटर है। यदि समान आमाप वाले देशों की परस्पर तुलना की जाए तो भारत में सबसे अधिक वृष्टि होती है। किन्तु उसके स्थान और समय में भिन्नता है। उत्तर पूर्वी राज्यों और त्रिवेन्द्रम से मुम्बई तक पश्चिम तट में सबसे अधिक वृष्टि होती है। चेरापूंजी के पास मावसिनरम में सर्वाधिक वार्षिक वृष्टि, 900 सेन्टीमीटर होती है। कभी-कभी तो वह वर्ष में 1140 सेन्टीमीटर और 104 सेन्टीमीटर प्रतिदिन तक हो जाती है। इसके विपरीत जिन क्षेत्रों में वर्ष में 40 सेन्टीमीटर से कम वर्षा होती है उनमें
(i) पश्चिमी राजस्थान का थार-रेगिस्तान जो गुजरात में कच्छ तक फैला है और
(ii) जम्मू और काश्मीर का अधिकांश भाग है। बड़े राज्यों में राजस्थान में सबसे कम वर्षा होती है। हमारे देश में अधिकांश वृष्टि लगभग तीन महीने की अवधि में, विशेष रूप से 200 घंटों में होती है। इसकी आधी वृष्टि लगभग 30 घंटों में हो जाती है। फलस्वरूप बहुत अधिक जल बह जाता है। मानसून के मौसम में भी वृष्टि का होना सुनिश्चित नहीं है। भाग 4.2 में हमने वृष्टि का परिकलन देश के केवल भू-क्षेत्र में किया, जो 334.4 मिलियन हेक्टेयर मीटर था। पूरे देश में वर्षा से 395 मिलियन हेक्टेयर मीटर और हिमपात से 5 मिलियन हेक्टेयर मीटर जल प्राप्त होता है। दोनों को मिलाकर 400 मिलियन हेक्टेयर मीटर अलवणी जल हुआ। इस पूरे का उपयोग नहीं किया जा सकता है जिसके कारण उपभाग 4.7.1 में दिए गए हैं।

4.4.2 हमारे देश में नदी-निकाय

भारत में नदियों को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :

i) हिमालय से निकलने वाली नदियां,

ii) दक्कन की नदियां

iii) तटीय नदियां

iv) अंत:स्थलीय अपवाह बेसिन की नदियां।

हिमालय की नदियों को हिम और वर्षा दोनों से जल मिलता है। ये पूरे वर्ष बहती रहती हैं मानसून के महीनों में हिमालय में तीव्र वृष्टि होती है जिससे प्रायः बाढ़ आ जाती है। हिमालय की प्रमुख नदियां इस प्रकार हैं :

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

i) सिन्धु और उसकी सहायक नदियां (जैसे झेलम, चिनाब, राबी, व्यास और सतलुज आदि)।

अपवाह (drainage) : वह क्षेत्र जिसमें पृष्ठ जल प्रवाहित होता है।

ii) ब्रह्मपुत्र और बरक (जिसे मेघना भी कहते हैं)।

iii) गंगा और उसकी सहायक नदियां (जैसे यमुना, रामगंगा आदि)

दक्कन की नदियों में गोदावरी, कृष्णा, पेन्नार और कावेरी प्रमुख नदियां हैं। तटीय नदियों में मुख्यतः चार पश्चिमी तट (साबरमती, माही, नर्मदा और ताप्ती) में और तीन पूर्वी तट (सुबर्णरेखा, ब्राह्मणी और महानदी) में हैं।

अंत:स्थलीय अपवाह बेसिन की नदियों को मरूस्थली नदियां भी कहते हैं। वे कुछ दूर बहकर मरूस्थलों में लुप्त हो जाती हैं। वे शुष्क क्षेत्रों से बहती हैं जहां उद्‌वाष्पन, वृष्टि के बराबर होता है इसलिए पृष्ठ प्रवाह नहीं होता है। इसका उदाहरण लूनी नदी है जिसका उद्‌गम राजस्थान का नागौर जिले में होता है। कुल 482 किलोमीटर की दूरी तक बहने के बाद वह अंततः कच्छ के रन में लुप्त हो जाती है।

शुष्क क्षेत्र (arid area): वह भू-क्षेत्र जहां **25** से.मी. से कम वर्षा होती है जो कृषि के लिए अपर्याप्त है। वायु में नमी की मात्रा कम होने से (न्यून आर्द्रता) उद्‌वाष्पन दर अधिक होगी।

4.4.3 नदी बेसिन

जैसाकि सारणी 4.1 में दिखाया गया है भारतीय नदियों को, अपवाह के आधार पर तीन भागों में विभाजित किया गया है। बड़े नदी बेसिन, देश की 80% जनसंख्या की आवश्यकता को पूरा करते हैं। प्रमुख नदियों के नाम, उनके जल ग्रहण क्षेत्र और उनके नदी बेसिनों में आने वाले राज्यों के नाम सारणी 4.2 में दिए गए हैं। सारणी 4.2 में दिए गए प्रत्येक नदी बेसिन में प्रमुख नदियां और उनकी सहायक नदियां भी शामिल हैं। मध्यम और लघु नदी बेसिन के अंतर्गत कुल अपवाह क्षेत्र का 17% आता है और वे 15% प्रवाह में योगदान करते हैं। ब्रह्मपुत्र, गंगा और सिन्ध बेसिन तथा गोदावरी बेसिन मिलकर देश के आधे से अधिक भाग में फैले हैं। गुजरात में सूरत और तमिलनाडु में कन्याकुमारी के बीच फैला 1500 किलोमीटर लंबा पश्चिमी तट, 14 मध्यम और 18 छोटे नदी बेसिनों द्वारा संपोषित होता है। किन्तु मुम्बई, पणजी, कोचिन और त्रिवेन्द्रम आदि प्रमुख शहर इन बेसिनों में नहीं आते हैं।

विभिन्न सारणियों में दिए गए आंकड़े केवल आपकी सूचना के लिए हैं। उन्हें याद करने की आवश्यकता नहीं है।

सारणी 4.1: भारत के नदी-बेसिनों का वर्गीकरण

संवर्ग	बेसिन क्षेत्रफल/किमी^{2}	बेसिनों की संख्या	कुल अपवाह क्षेत्र का प्रतिशत	प्रवाह अंशदान का प्रतिशत
बड़ा	20,000 से अधिक	14	83	85
मध्यम	20,000 और 2000 के बीच	44	8	7
छोटा और रेगिस्तान	2000 से कम	55	9	8

प्रायद्वीपीय भारत के पूर्वी तट पर निम्नलिखित तीन क्षेत्र किसी भी प्रमुख नदी बेसिन में नहीं आते हैं :

i) उड़ीसा तट में महानदी और गोदावरी के बीच का क्षेत्र,

ii) पेन्नार और कावेरी बेसिन के बीच का क्षेत्र जिसमें चेन्नई और पांडिचेरी स्थित हैं।

iii) कावेरी के दक्षिण, अर्थात् मदुरै से कन्याकुमारी तक का क्षेत्र।

नदियों में बहने वाले जल के आधार पर निम्नलिखित पहलुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है :

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

- हमारे देश में चौदह बड़े, चवालीस मध्यम और पचपन छोटे नदी बेसिन हैं। बड़े बेसिन से लेकर छोटे बेसिन तक समुद्र में गिरने वाले जल की मात्रा में बहुत अंतर होता है। साथ ही एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में जल की गुणता में भी बहुत भिन्नता होती है।

अलग-अलग मौसमों में किसी नदी के जल-प्रवाह में भिन्नता का, उसके द्वारा मल के प्रक्षालन और तनु करने की दक्षता पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

- दक्षिणी और पश्चिमी भागों की अपेक्षा उत्तरी और पूर्वी भागों के जल संसाधन बहुत अच्छे हैं। चौदह प्रमुख नदी बेसिनों में केवल चार में, अर्थात् ब्रह्मपुत्र, गंगा, महानदी और बाह्मणी में, भारी वृष्टि के कारण सालभर जल रहता है। छः बेसिनों (कृष्णा, सिन्ध, गोदावरी, नर्मदा, तापी और सुबर्णरेखा) में मध्यम वृष्टि होती है। शेष चार (गंगा

और ब्रह्मपुत्र में जल प्रवाह में मौसमी भिन्नता 50:1 के अनुपात में होती है जबकि कावेरी और माही में वह 1000:1 के अनुपात में होती है।

- जल नदियों में वर्षा का जल बहता है तो उपचारित अथवा अनुपचारित औद्योगिक अपशिष्ट और घरेलू अपशिष्ट को बहा कर ले जा सकता है। शुष्क मौसम में जल इतना नहीं होता कि वह अपशिष्ट पदार्थों को बहा कर ले जा सके। अत: मानसून पूरित नदियों में कूड़ा-कचरा डालना हो तो, अपशिष्ट प्रबंधन पर गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए।

सारणी 4.2 में दिए गए प्रत्येक नदी बेसिन में मुख्य नदियों के साथ उनकी सहायक नदियां भी शामिल हैं।

सारणी 4.2: जल ग्रहण क्षेत्र और मुख्य बेसिनों में शामिल राज्य

क्रमांक	नदी बेसिन	जल ग्रहण क्षेत्र/किमी	राज्य, जिनमें जल-ग्रहण क्षेत्र आता है
1.	सिन्ध	3,28,000	जम्मू और काश्मीर, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान
2.	गंगा	8,60,000	उत्तरांचल, उत्तर प्रदेश, **हिमाचल** प्रदेश, पश्चिम बंगाल, **झारखंड, हरियाणा,** mum, मध्य प्रदेश, **बिहार,** दिल्ली।
3.	ब्रह्मपुत्र	1,87,000	अरूणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, त्रिपुरा, पश्चिम बगाल
4.	साबरमती	20,000	गुजरात, राजस्थान
5.	**माही**	30,000	गुजरात, मध्य प्रदेश, राजस्थान
6.	नर्मदा	98,000	**गुजरात,** मध्य **प्रदेश,** महाराष्ट्र
7.	तापी	60,000	**गुजरात,** मध्य **प्रदेश,** महाराष्ट्र
8.		19,000	बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल
9.	ब्राह्मणी	39,000	बिहार, मध्य प्रदेश, उड़ीसा
10.	महानदी	1,40,000	बिहार, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उडीसा
11.	गोदावरी	3,10,000	आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र
12.	कृष्णा	2,58,000	आन्ध्र **प्रदेश,** कर्नाटक, महाराष्ट्र
13.	पेन्नार	55000	आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक
14.	कावेरी	87000	कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु

जल ग्रहण क्षेत्र:

नदी तंत्र द्वारा प्रयुक्त क्षेत्र

4.4.4 भौमजल उपलब्धता

भौमजल उस जल को कहते हैं जो भू-पृष्ठ के नीचे पाया जाता है। भौमजल, वृष्टि का वह हिस्सा है जो छिद्रों द्वारा मृदा में चला जाता है और भूमि के नीचे गमन करता रहता है। यह प्राय: शैल समूह में पाया जाता है जिन्हें जलभृत् (acquifer) कहते हैं। हमारे देश के अधिकांश हिस्सों में वृष्टि, जल आपूर्ति का विश्वसनीय स्रोत नहीं हैं क्योंकि उसमें मौसम, स्थान आदि के अनुसार भिन्नता होती है। भौमजल की उपलब्धता एक बड़ी संपत्ति है जो कृषि और औद्योगिक क्षेत्रों को बहुत प्रभावित कर सकती है। कृषि में भौमगत जल का योगदान 50% तक होता है। ग्रामीण जल आपूर्ति का लगभग 80% और शहरी तथा औद्योगिक जल आपूर्ति का 50% से अधिक भाग भौमजल साधनों से पूरा किया जाता है। अनुमान है कि देश में 300 मीटर की गहराई पर भौमजल जल का निचय 3700 मिलियन हेक्टेयर मीटर है जो वार्षिक वृष्टि का नौगुना से अधिक है। किन्तु भौमजल का केवल 43.2 मिलियन हेक्टेयर मीटर उपयोग में लाया जा सकता है। वृष्टि की भांति भौमजल उपलब्धता भी अलग-अलग प्रदेशों में अलग-अलग होती है।

MAADHYAM IAS

भौमजल सिन्ध-गंगा मैदान में बहुत अधिक मात्रा में उपलब्ध है किन्तु पश्चिम और दक्षिण प्रदेशों में बहुत कम। भौमजल की निकासी की पूर्ति वृष्टि द्वारा होती है। किन्तु उपयोगिता की

दृष्टि से असमानता है। देश के विभिन्न भागों में भौमजल का न्यून उपयोग और अधिक उपयोग साथ-साथ होता है। न्यून उपयोग उन प्रदेश में होता है जहां सस्ता नहर-जल उपलब्ध होता है। अधिक उपयोगिता उन प्रदेशों की समस्या होती है जहां नहर जल-आपूर्ति नहीं होती अथवा अनिश्चित होती है अथवा जल-गहन कृषि उत्पादन विधि अपनाई जाती है। जल के अधिक उपयोग के कारण (i) जल-ताल के नीचे जाकर नमकीन जल की परतों तक पहुंच जाने से अथवा (ii) जहां जल-स्रोत समुद्र के पास हो तो वहां समुद्र-जल का भौमजल स्रोत में प्रवेश कर जाने से जल-गुणता का ह्रास हो जाता है। ऐसे निकृष्ट गुणता वाले जल का जीवों और कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

बोध प्रश्न 2

भारत में औसत वार्षिक वृष्टि, विश्व-औसत से बहुत अधिक है। इस तथ्य का अभिप्राय है कि भारत में जल-संसाधन बहुत हैं। इस कथन की, स्थान और समय को ध्यान में रखते हुए वृष्टि में विभिन्नता की दृष्टि से व्याख्या कीजिए।

....

....

....

बोध प्रश्न 3

भौमजल की अधिक उपयोगिता से उत्पन्न होने वाली समस्याओं का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

4.5 जलीय चक्र

उद्वाष्पन, बादलों का बनना, वृष्टि, हिमपात, जल निकायों का फिर भर जाना इस चक्रीय प्रक्रम को जलीय चक्र कहते हैं। उद्वाष्पन, सूर्य की गरमी के कारण महासागरों और अन्य जल स्रोतों से होता है। इसके फलस्वरूप बादल बनते हैं जो गैसीय रूप में अथवा सूक्ष्म क्रिस्टलों के साथ जल के बिन्दुओं के रूप में तैरते रहते हैं। अंततः जल, वर्षा अथवा हिम के रूप में, पृथ्वी में लौट आता है जिसे वर्षण (precipitation) कहते हैं। पृथ्वी पर पहुंचने के बाद कुछ अंश बहते हुए नदियों में चला जाता है और अंततः पुनः समुद्र में मिल जाता है। कुछ वर्षा-जल मृदा में अवशोषित होकर अंदर अंतःस्रावित होकर भौमजल बना लेता है। वर्षा-जल का एक अंश शीघ्र उद्वाष्पित होकर आकाश में चला जाता है।

जिस जल-वाष्प की अधिकतम सान्द्रता किसी दिए गए ताप पर वायु के नमूने में रह सके, उस जल वाष्प के वाष्प दाब को संतृप्ति वाष्प दाब कहते हैं। वायु की ताप वृद्धि से संतृप्ति वाष्प दाब में भी वृद्धि होती है। आपेक्षित आर्द्रता को प्रतिशत में व्यक्त किया जाता है। संतृप्ति वाष्प दाब के साथ आपेक्षिक आर्द्रता का संबंध निम्नलिखित समीकरण द्वारा व्यक्त किया जा सकता है :

प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता =

$$\frac{\text{वाष्प दाब}}{\text{संतृप्ति वाष्प दाब}} \times 100$$

बादलों के बनने और वर्षण के लिए आपेक्षिक आर्द्रता का उच्च मान होना चाहिए। साथ ही जब आपेक्षिक आर्द्रता में वृद्धि होती है तो जल उद्वाष्पन दर कम हो जाती है।

MAADHYAM IAS

4.5.1 जलीय चक्र के चरण

सूर्य और हवा संपूर्ण जलीय चक्र को नियंत्रित करते हैं। जलीय चक्र के समय पृथ्वी के चारों ओर ऊष्मा अंतरण होता है जिससे तापों की चरम अवस्थाओं का विमंदन हो जाता है। जलीय चक्र के विभिन्न चरण नीचे दिए गए हैं।

i) उद्वाष्पन (evaporation)

भू-पृष्ठ, तालाबों, सरोवरों, नदियों और महासागरों का जल, नमी में परिवर्तित हो जाता है। उद्वाष्पन को प्रभावित करने वाले कारक हैं : ताप, आपेक्षिक आर्द्रता, पवन-वेग, वृष्टि और हिमपात की मात्रा, जल की गुणता, जल स्रोत का पृष्ठ-क्षेत्रफल, धूप आदि।

200 फुट अथवा उससे भी ऊंचे वृक्ष में जल के आरोहण का कारण जल का एक असंगत गुणधर्म है जिसे उच्च पृष्ठ तनाव मान कहते हैं। अनेक द्रवों की तुलना में जल का उच्च पृष्ठ तनाव होता है। जल के उच्च पृष्ठ तनाव का कारण अंतराअणुक हाइड्रोजन आबंधन के फलस्वरूप उत्पन्न प्रबल संसजक बल है। ये बल, केशिका आरोहण द्वारा जल की ऊर्ध्व गति में सहायक होते हैं।

अनुमान लगाया गया है कि सभी प्रकार के ईंधनों को जलाकर, मनुष्य ने अब तक जितनी ऊर्जा पैदा की है, जलीय चक्र एक दिन में उससे अधिक ऊर्जा का उपयोग करता है।

भौमजल स्तर:

जल से पूर्णतः संतृप्त भूमि के हिस्से की ऊपरी सीमा

ii) वाष्पोत्सर्जन (transpiration)

पौधों की पत्तियों से वाष्प रूप में जल की हानि को वाष्पोत्सर्जन कहते हैं। मृदा से पादपों की जड़ों द्वारा लिया गया जल, वाष्पोसर्जित जल की पूर्ति करता है। एक प्रकार से वाष्पोत्सर्जन पंप की भाति कार्य करता है जिसमें भूमि से जल का अवशोषण होता है और वह वाष्प रूप में वायुमंडल में मुक्त हो जाता है।

iii) अपरोधन (interception)

घनी वनस्पति (पेड़ पौधों) अथवा झाड़ियों द्वारा वर्षा-जल को रोकने को अपरोधन कहते हैं और इनके द्वारा जल उद्वाष्पित होकर वायुमंडल में वापिस चला जाता है। घनी वनस्पति वाले स्थानों में अपरोधन के कारण बहुत कम वर्षा भूमि तक पहुंच पाती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में विशेष अपरोधन पर ध्यान दिया जाता है।

iv) वर्षण (precipitation)

जल, वायुमंडल से द्रवण, निक्षेपण और वर्षण द्वारा भूमि में लौट जाता है। जल वाष्प के द्रव अवस्था में (ओस की बूंदों के रूप में) परिवर्तन को द्रवण कहते हैं। निक्षेपण वह प्रक्रम है जिसके द्वारा जल-वाष्प का हिम क्रिस्टलों में परिवर्तन हो जाता है। वायुमंडल में जल की छोटी-छोटी बूंदों और हिम क्रिस्टलों से बादल बनते हैं। वर्षण का तात्पर्य और वृष्टिपात हिमपात है।

v) वाह जल (run off)

कुछ वाह जल के भूमि में शोषण से भौमजल बनता है। अतिरिक्त जल जमीन के ऊपर से बह जाता है जिसे वाह जल कहते हैं। वाह जल, तालाबों, सरिताओं और नदियों के लिए जल का मुख्य स्रोत है। वर्षा का जल बहकर अंततः समुद्र में चला जाता है। मिट्टी का चिकनापन तथा खड़ी ढाल, वाह-जल की दर और मात्रा को प्रभावित करते हैं।

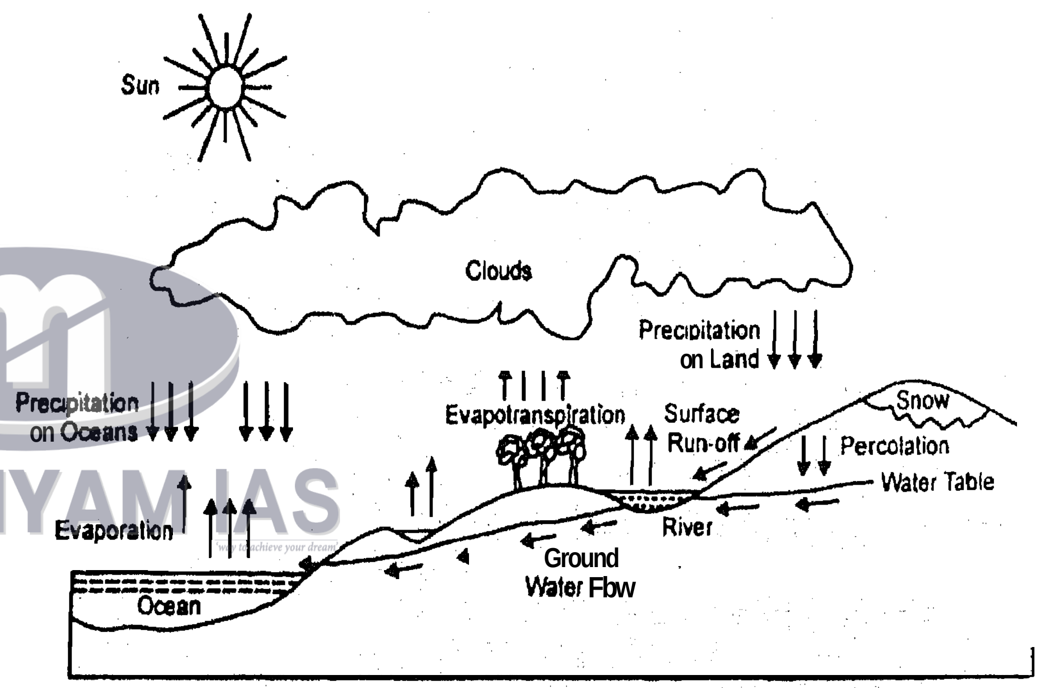

MAADHYAM IAS

चित्र 4.1: जलीय चक्र

vi) अंतःस्यंदन (infiltration)

मृदा की पृष्ठीय परतों द्वारा वर्षण के एक भाग के अवशोषण को अंतःस्यंदन कहते हैं।

अंत:स्यंदन के समय जल अनेक परतों से होते हुए ऊर्ध्वत: नीचे की ओर जाता है और अंतत: भौमजल बनता है। अंत:स्यंदित होने वाले जल की मात्रा, वृष्टिपात की तीव्रता, मृदा की पृष्ठीय स्थितियां, वनस्पति आवरण और उपलब्ध संचयन क्षमता पर निर्भर करता है। संपूर्ण चक्रीय प्रक्रम चित्र 4.1 में निरूपित किया गया है।

4.5.2 जलीय चक्र के प्रचालनों में सहायक जल के अपसामान्य गुणधर्म

उल्लेखनीय है कि जल

- के गलनांक, क्वथनांक और वाष्पन-ऊष्मा समान अणुभार के अधिकांश अन्य द्रवों की तुलना में अधिक होते हैं,
- की द्रव अवस्था की अपेक्षा ठोस अवस्था में कम घनत्व होता है,
- की उच्च ऊष्माधारिता होती है, और
- का उच्च पृष्ठ तनाव होता है।

इसका उच्च गलनांक, ध्रुवीय प्रदेशों में बर्फ छत्रकों को बनाए रखने में सहायक होता है। बर्फ के कम घनत्व के कारण वह जल की सतह पर तैरता रहता है। इससे महासागरों और अन्य जल निकायों में नीचे की परतें द्रव अवस्था में बनी रहती हैं यद्यपि सतह पर बर्फ जमी रहती है। इससे शीत प्रदेशों में भी जलीय जीवन बना रहता है। बसन्त ऋतु आरंभ होते ही सतही बर्फ पिघलने लगता है। कुल मिलाकर जल के ठोस और द्रव रूपों में लगातार गतिशीलता रहती है। यदि बर्फ का जल की अपेक्षा, कम घनत्व न होता तो गहरे महासागरों के अधिकांश भाग हमेशा बर्फ से जमे रहते। साथ ही विश्व में असहनीय ठंडा और गरम होता। इसके अलावा जल की उच्च ऊष्मा धारिता, सर्दियां और गर्मियां दोनों में ताप अवस्थाओं को नियमित करने में सहायता करती है। उच्च पृष्ठ तनाव, केशिका उन्नयन द्वारा पादपों और वृक्षों में जल के संचलन में सहायक होता है। पृष्ठ तनाव, पादपों और वृक्षों द्वारा उद्वार्ष्पोत्सर्जन के कारण नष्ट जल का प्रतिस्थापन करता है।

जल का उच्च, ऊष्मा धारिता मान होता है। इसका अर्थ है कि जल को गरम करते समय बहुत ऊष्मा की आवश्यकता होती है और ठंडा करते समय बहुत ऊष्मा मुक्त होती है। जल का यह विशेष गुण हमारे ग्रह में (पृथ्वी) और साथ ही पादपों, जन्तुओं तथा मनुष्यों में ताप अवस्थाओं के नियमन में सहायता करता है। जल के इस गुणधर्म के अभाव में हमारे ग्रह को गरमी और सर्दी की चरम अवस्थाओं का सामना करना पड़ता। कहा जाता है कि उद्योगों में भी 90% जल का उपयोग ठंडा करने और 10% का उपयोग अभिक्रियक अथवा विलायक के रूप में होता है।

गाद (silt) में निम्नलिखित पदार्थ होते हैं :

- अपक्षयित शैल के सूक्ष्म कण
- मिट्टी
- कार्बनिक पदार्थ

4.5.3 जलीय चक्र का महत्व

आइए, देखें कि जल का प्रावस्था रूपांतरण और जलीय चक्र के समय जलवाह का मानव जीवन पर किस प्रकार अनुकूल और प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है-

i) जलवायु और मानसून का जलीय चक्र के साथ सीधा संबंध होता है। वायुमंडल में जल वाष्प के गतिक प्रवाह का किसी स्थान विशेष की जलवायु स्थितियों में योगदान होता है।

ii) जलीय चक्र के विभिन्न क्रियाओं के कारण भू-पृष्ठ पर पदार्थों के भौतिक विघटन और रासायनिक अपघटन को अपक्षय अभिक्रिया (weathering reaction) कहते हैं। अपक्षय अभिक्रियाओं में जल की प्रमुख भूमिका होती है। चट्टानों की विदरिकाओं में फंसा वर्षाजल सर्दियों में जम जाता है। जल की अपेक्षा बर्फ के कम घनत्व के कारण, वह फैल जाता है और इस प्रकार चट्टानों और पर्वतों के टूटने में सहायक होता है। जब वर्षा का जल गिरता है तो अपनी ऊर्जा के एक भाग से चट्टानों और पर्वतों में अपरदन (erosion) उत्पन्न करता है। इस प्रकार बने बहुत सारे गाद को जलवाह, चट्टानों से अपने साथ ले जाता है जिससे घाटियां बन जाती हैं। खंड 1 की इकाई 1 में आपने पढ़ा कि गाद का स्वरूप कोलॉइडी होता है। समुद्र के निकट नमकीन जल के संपर्क में आने से उसके एक भाग का स्कंदन (coagulate) हो जाता है जिससे डेल्टा बनते हैं। डेल्टा में उर्वरक मृदा का निक्षेपण होता है। जो गाद अब भी शेष रह जाती है वह बहकर अंत में महासागरों में जमा हो जाती है। दूसरे शब्दों में, जलीय चक्र पर्वतों और चट्टानों को धीरी-धीरे तोड़कर, इस प्रकार बने गाद को महासागरों में भर देता है। यह पृष्ठ

अनुमान है कि सरिताएं प्रतिवर्ष लगभग 2.7 अरब टन गाद समुद्र में ले जाती हैं।

विदरिका (Crevices): चट्टानों में मौजूद सूक्ष्म, बारीक दरारें

यदि आप कोलॉइडों के स्कंदन के बारे में जानना चाहें तो भौतिक-रासायनिक (सीएचई-04) पाठ्यक्रम की इकाई 20 के उपभाग 20.6.5 का अध्ययन करें।

MAADHYAM IAS

समतलन का प्रक्रम है। इस प्रकार अपक्षय अभिक्रियाएं, पृथ्वी के निर्माण में सहायक होती हैं। इसके अलावा अपक्षय अभिक्रियाएं खनिजों के निर्माण में, महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। इस पहलू की जानकारी के लिए आप खंड 1 की इकाई 1 का अध्ययन करें। आगामी इकाई के भाग 5.3 में आप पढ़ेंगे कि जल की शैल पदार्थों के साथ होने वाली अपक्षयण अभिक्रियाओं से खनिज कैसे बनते हैं।

iii) तीव्र ढलान में जल के प्रवाह से पर्याप्त जल विद्युत् शक्ति उत्पन्न होती है। साथ ही मैदानी भागों में गुरूत्व समर्थित जलवाह द्वारा जल निकायों में नौचालन हो सकता है।

iv) कम समय में बहुत अधिक वृष्टि से बाढ़ आ सकती है क्रमशः दो वृष्टियों के बीच लंबे अंतराल से सूखे की स्थिति पैदा हो जाती है। बाढ़ और सूखा ऐसे उदाहरण हैं जो बतलाते हैं कि किस प्रकार जलीय चक्र प्रचालनों का जीवन परिस्थितियों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

पारितंत्र (Eco-system): जन्तुओं, पादपों और जीवाणुओं का समुदाय तथा अंत:संबंधित भौतिक और रासायनिक पर्यावरण

इस उप-अनुच्छेद में हमने पढ़ा कि किस प्रकार सभी जल-निकाय – महासागर, नदियां, वायुमंडल और हिमनद जलीय चक्र द्वारा परस्पर जुड़े हैं। आइए, अब तीन प्रमुख प्रकार के पेयजल पारितंत्रों के जलगतिक लक्षणों का अध्ययन करें।

बोध प्रश्न 4

उद्वाष्पोत्सर्जन और अपरोधन शब्दों की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

4.6 अलवण जल पारितंत्रों की द्रव गतिकी

जलगतिकी (Hydrodynamics): भौतिकी की एक शाखा जिसका संबंध जल की गति और उससे संबंधित अभिलक्षणों से होता है।

द्रव गतिकी में जल प्रवाह वेग, ऊर्ध्व मिश्रणन और स्तरण (स्तर विन्यास) पर विचार किया जाएगा। पहले जलीय निकायों पर **प्रवाह वेग** के प्रभाव के बारे में पढ़ेंगे। तीव्रगामी जलीय तंत्रों में बहुत अधिक प्रक्षोभ होता है और जल की परतों का विलोडन होता है। इस प्रक्रम से विलीन ऑक्सीजन की मात्रा को बढ़ाने में सहायता मिलती है। अनुरूपता के लिए प्रयोगशाला में किए जाने वाले उस अभ्यास को याद कीजिए जिसमें बीकर में रखी वस्तुओं का तीव्र गति से विलोडन किया जाता है ताकि विलायक में विलेय पदार्थ की अधिकतम मात्रा घुल सके। अब आप समझ सकते हैं कि प्रक्षुब्ध नदियों में ऑक्सीजन की उच्च मात्रा क्यों घुली होती है। मंदगामी नदियों में ऑक्सीजन, संतृप्ति मात्रा से बहुत कम होती है। ऊर्ध्व मिश्रणन और स्तरण इन दो शब्दों का परस्पर संबंध है। जल की धारा और प्रक्षोभ के कारण ऊपर से नीचे तक जल की परतों का मिश्रण हो जाता है जिसे **ऊर्ध्व मिश्रण** कहते हैं। ऊर्ध्व मिश्रण से, ऑक्सीजन आदि घुले पदार्थों के संबंध में, ताप और रासायनिक संघटन में एकरूपता आ जाती है। ऊर्ध्व मिश्रण के न होने से स्तरण हो जाता है। **स्तरण** का अर्थ है पृथक क्षैतिज परतों का बनना जिनका ताप, रासायनिक संघटन और जैव गुणधर्म भिन्न होते हैं। विभिन्न परतों के जैव अभिलक्षणों में भिन्नता का मुख्य कारण पोषक तत्वों की मात्रा और घुली ऑक्सीजन की मात्रा में भिन्नता है। स्तरण शब्द के अर्थ को समझने के लिए आप आगामी इकाई के अनुच्छेद 5.2 मे ताप के अंतर्गत लिखे अंश का अध्ययन करें। हम नीचे तीन अलवण जल पारितंत्रों के वेग, ऊर्ध्व मिश्रण और स्तरण की व्याख्या करेंगे।

प्रवाह वेग: जल-प्रवाह की गति।

MAADHYAM IAS

नदियां

नदियों की एकदिशिक धाराएं होती हैं जिनका अपेक्षाकृत उच्च प्रवाह औसतन 0.1 मीटर

सेंकड$^{-1}$ से 1.0 मीटर सेंकड$^{-1}$ तक, होता है। नदी प्रवाह समय के साथ अत्यंत परिवर्ती होता है जो जलवायु और अपवाह पैटर्न पर निर्भर करता है। सामान्य तौर पर प्रचलित धाराओं और प्रक्षोभ के कारण नदियों में पूर्ण और सतत् उर्ध्व मिश्रण होता है। पार्श्व मिश्रण प्रमुख संगम के बाद अनुप्रवाह में पर्याप्त दूरी पर होता है।

पार्श्व मिश्रण: नदी तल से समान ऊँचाई पर जल का मिश्रण।

संगम (Confluence): दो अथवा अधिक जलीय निकायों का विलय हो जाना।

सरोवर

सरोवरों का औसत धारा वेग कम [0.001 मीटर सेंकड $^{-1}$ से 0.01 मीटर सेंकड $^{-1}$ (पृष्ठ मान)] होता है। जल आवास समय एक माह से लेकर सैकड़ों वर्षों तक होता है। सरोवर की धाराएं बहुदिशीय होती हैं। अनेक सरोवरों के स्तरण और ऊर्ध्व मिश्रण की प्रत्यावर्ती आवर्तिता होती है जिसका नियमन जलवायु परिस्थितियों और गहराई द्वारा होता है।

भौमजल

भौमजल का प्रवाह-पैटर्न दिशा और वेग की दृष्टि से अपरिवर्ती होता है। जलभृतों (भौम जलाशयों) के औसत प्रवाह वेग 10^{-10} मीटर सेंकड$^{-1}$ से 10^{-3} मीटर सेंकड$^{-1}$ तक होते हैं। ये भू वैज्ञानिक पदार्थ की सरन्ध्रता और पारगम्यता द्वारा नियंत्रित होते हैं। फलस्वरूप मिश्रण-क्रिया बहुत कम होती है। भौमजल गतिकी में बहुत विविधता होती है जो स्थानीय भू-वैज्ञानिक लक्षणों पर निर्भर करती है।

जल निकायों के अनेक संक्रमण रूप भी होते हैं जो ऊपर वर्णित एक से अधिक के लक्षणों को निदर्शित करते हैं। यहां, इनकी विस्तृत चर्चा नहीं की जाएगी।

ऊपर वर्णित प्रवाह वेगों के परास के फलस्वरूप विभिन्न अन्त:स्थलीय जल निकायों के जल आवास समय में बहुत विविधता होती है। प्रत्येक प्रकार के जल निकाय के जल गतिक अभिलक्षण उसके आमाप और जल निकास बेसिन के जलवायु संबंधी परिस्थितियों पर निर्भर करते हैं। नदियों का नियंत्रण कारक उनकी विसर्जन विविधता है। सरोवरों का वर्गीकरण उनके जल आवास समय और स्तरण पर निर्भर करता है। भौमजल प्राय: निस्यंदन पर निर्भर करते हैं जिससे भौमजल निकाय फिर से भर जाता है।

बोध प्रश्न 5

दो महत्वपूर्ण जलगतिक अभिलक्षणों के नाम बताइए जिनका अलवण जल पारितंत्रों के लिए अध्ययन किया जाता है। उनके महत्व का कारण बताइए।

....

....

....

4.7 जल स्रोतों के संरक्षण और प्रबंधन से संबद्ध प्रमुख समस्याएं

MAADHYAM IAS

जल संरक्षण का अर्थ जल-स्रोतों का इस प्रकार विकास और रक्षा करना है कि जल की वर्तमान और भावी आवश्यकताएं पूरी हो सकें। जल-संरक्षण के अंतर्गत निम्नलिखित विषयों से संबंधित समस्याओं पर चर्चा की जाती है :

- जल संग्रहण
- मृदा में नमी की धारणता
- जल निकायों का निकासी-पुनर्भरण अनुपात बनाए रखना

जल स्रोतों के प्रबंधन का अर्थ है जल-उपयोग को अधिक दक्ष बनाने के लिए अपनाए जाने वाले उपाय। जल आपूर्ति को बढ़ाने के लिए बहुत अधिक धन निवेश की आवश्यकता होती है इसलिए जल प्रबंधन संकल्पना में उपलब्ध जल के दक्ष उपयोग पर जोर दिया जाता है। जल-प्रबंधन के अंतर्गत निम्नलिखित विषयों पर विचार किया जाएगा।

- उपभोग के सापेक्ष उत्पादन में वृद्धि करना।
- अपव्यय कम करना।

पहले हम उन पहलुओं की विस्तार से जांच करेंगे जिनका जल संरक्षण और प्रबंधन से संबद्ध समस्याओं को हल करते समय ध्यान रखा जाता है। इनकी व्याख्या निम्नलिखित उप-भाग में की गई है।

4.7.1 जल उपलब्धता और उपयोगिता से संबंधित लक्षण

इस संबंध में निम्नलिखित लक्षणों की चर्चा की जाएगी।

क) जल-स्रोतों की उपलब्धता में प्रादेशिक असंतुलन

हम पहले ही पढ़ चुके हैं कि हमारे देश के विभिन्न प्रदेशों में,

- वृष्टिपात में विविधता है (उप-भाग 4.4.1)।
- नदी-जल उपलब्धता में असंतुलन है (उप-भाग 4.4.3)।
- भौमजल की उपलब्धता और उपयोगिता दोनों की दृष्टि से असंतुलन है (उप-भाग 4.4.4)।

ख) उपयोज्य (usable) जल की सीमित उपलब्धता

जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है हमारे देश में वृष्टिपात और हिमपात दोनों से 400 मिलियन हेक्टेयर मीटर अलवण जल प्राप्त होता है। निम्नलिखित कारणों से इस पूरे को उपयोग में नहीं लाया जा सकता है।

1) उद्वाष्पन, पादप वाष्पोत्सर्जन, मृदा में अंत: स्रवण और अपरोधन के कारण हानि
2) निम्नलिखित स्थलाकृतिक (topographical) और जलीय लक्षणों के कारण व्यवरोध–
   - पर्वतों की ढालों पर गिरने वाली वृष्टि का अधिकांश भाग बह जाता है। (जैसे पश्चिमी घाट में)
   - तालाब आदि समुचित भंडारण व्यवस्था न होने से वर्षा का जल नालियों में बह जाता है।
   - अब तक बनाए गए बांधों की क्षमता, केवल 20% वृष्टि जल धारण करने की है जबकि 80% बह जाता है।

MAADHYAM IAS

नौवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारूप के अनुसार प्रतिवर्ष केवल 69 मिलियन हेक्टेयर मीटर पृष्ठ जल का लाभदायक उपयोग हो सकता है। साथ ही प्रतिवर्ष 43.2 मिलियन हेक्टेयर मीटर भौमजल का उपयोग होता है। इस प्रकार कुल 112.2 मिलियन हेक्टेयर मीटर जल का उपयोग होता है।

ग) जनसंख्या वृद्धि और प्रतिवर्ष प्रतिव्यक्ति जल की उपलब्धता में कमी

हमारे देश में जनसंख्या 1951 में 36.11 करोड़ से बढ़कर 1991 में 84.34 करोड़ और

2001 में 102.7 करोड़ हो गई थी। जनसंख्या वृद्धि का सीधा परिणाम प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति जल-उपलब्धता में कमी होना है। वार्षिक प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता को इस प्रकार परिकलित किया जा सकता है: आकलन किया गया है कि देश के नदी तंत्र में वार्षिक वाह जल 1869 किलोमीटर^3 है। प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता परिकलित करने के लिए इसे जनसंख्या से भाग करना होगा।

$$\left(\begin{matrix}\text{प्रतिवर्ष प्रतिव्यक्ति}\\ \text{जल-उपलब्धता}\end{matrix}\right)=\frac{\text{नदी में वार्षिक वाह जल}}{\text{जनसंख्या}}$$

$$=\frac{1869\times10^9\ \text{मीटर}^3}{\text{जनसंख्या}}\left(1\ \text{किमी}=10^9\ \text{मी}^3\right) \qquad \text{.... (4.5)}$$

तद्नुसार हमारे देश में प्रतिवर्ष aft व्यक्ति जल उपलब्धता 1951 में 5176 मीटर^3 से घटकर 1991 में 2216 मीटर^3 हो गई है। समीकरण 4.5 और ऊपर दिए गए जनसंख्या आंकडों का उपयोग कर आप इन मानों की जांच करें। 1991 के आंकड़ों के अनुसार विश्व में प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता 9231 मीटर^3 थी। यह आकलन किया गया है कि प्रति व्यक्ति 2000 मीटर^3 जल आपूर्ति न्यूनतम है और 1000 मीटर^3 बहुत कम है। भारत 2007 के बाद जलतंगी की स्थिति में पहुंच जाएगा। जल की तंगी से पारिस्थितिक ह्रास के अलावा उसका आर्थिक विकास पर भी प्रभाव पडेगा। 1990 में प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता की दृष्टि से 100 देशों में भारत का 42वां स्थान था।

घ) बड़े बांधों के निर्माण से संबंधित समस्याएं

निम्नलिखित कारणों से बड़े बांधों का निर्माण लाभदायक माना जाता है :

क) जलविद्युत् का उत्पादन,

ख) अधिक सिंचाई सुविधा और बाड़ों का नियंत्रण,

ग) उन्नत नगर निगम और औद्योगिक जल आपूर्ति।

साथ ही बड़े बांधों के निम्नलिखित विपरीत पारिस्थितिक और सामाजिक-आर्थिक परिणाम भी होते हैं :

- बांध के लिए स्थान को तैयार करने के लिए वनों की कटाई, भूमि कटाव और भू-स्खलन।
- भूकंपी गतिविधियां (अर्थात् भूचाल के लिए अधिक सुग्राही होना)।
- अवसादन (बांध में गाद की बहुत अधिक मात्रा का जमा होना)।
- जलाक्रांति और लवणता।
- निवासियों का विस्थापन (साथ ही कृषि और स्थानीय संसाधनों से संबंधित उनके मुख्य व्यवसाय की हानि)
- जल संक्रमण रोगों की महामारी का होना।

जलाक्रांति (Water logging) और लवणता (खारापन) शब्दों की व्याख्या उपभाग 4.7.2 में की जाएगी।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

यह विरोधाभास ही है कि हाल के वर्षों में बड़े बड़े बांधों के निर्माण से भारत में बाढ़-प्रवृत्त क्षेत्र दुगुना, अर्थात् 20 मिलियन हेक्टेयर से 40 मिलियन हेक्टेयर हो गया है। इसके अलावा ऊपर वर्णित विपरीत कारकों के निवारण के लिए किए जाने वाले कार्यों के फलस्वरूप बड़े बांधों की निर्माण लागत बहुत बढ़ गई है।

4.7.2 जल संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन की आवश्यकता

अब हम जल संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन की आवश्यकता पर विचार करेंगे।

क) सिंचाई, घरेलू, औद्योगिक और अन्य उपयोगों के लिए जल की मांग में वृद्धि

यह निश्चित है कि जनसंख्या वृद्धि से पेय जल, भोजन, मकान, उपभोज्य वस्तुओं आदि की मांग बढ़ जाती है। इस मांग से कृषि उत्पादन, उद्योग आदि के लिए अधिक सुविधाओं की आवश्यकता होती है। इस सबके लिए अधिक जल की आवश्यकता होती है जैसा कि भाग 4.1 में बताया गया है। जनसंख्या के आंकड़ों के आधार पर अनुमानतः वर्ष 2025 में सिंचाई, घरेलू तथा औद्योगिक कार्यों और पशुओं के अलवण जल की मांग 105 मिलियन हेक्टेयर मीटर हो जाएगी। इसका अर्थ हुआ कि देश के जल संसाधनों (112.2 मिलियन हेक्टेयर मीटर) की उपयोज्य क्षमता के 90% से अधिक का उपयोग करना होगा।

ख) जल का अभाव, महिला निरक्षरता और ग्रामीण पिछड़ापन

यदि शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में तुलना की जाए तो सार्वजनिक उपयोग के लिए जल-आपूर्ति पैटर्न में अत्यंत असमानता है। अनेक कस्बों और गांवों की तुलना में दिल्ली और मुम्बई जैसे महानगरों में प्रति व्यक्ति जल आपूर्ति बहुत अधिक है। एक अन्य विसंगति यह है कि जो लोग शहरों में नहरों के निकट रहते हैं उन्हें सरकारी आर्थिक सहायता पर जल मिलता है। दूसरी ओर अन्य लोगों को सिंचाई और घरेलू उपयोग हेतु जल प्राप्ति के लिए बहुत अधिक भुगतान करना होता है। अन्यथा उन्हें जल लाने के लिए बहुत समय देना पड़ता है। उल्लेखनीय है कि पेय जल आपूर्ति की कमी के कारण ग्रामीण महिलाओं को बचपन से ही जल लाने में बहुत समय लगाना पड़ता है। कभी-कभी तो उन्हें जल लाने के लिए कई किलोमीटर चलना पड़ता है। अन्य सामाजिक-सांस्कृतिक कारणों के अतिरिक्त ग्रामीण महिलाओं की निरक्षता और पिछड़ेपन का यह भी एक कारण है। यह माना जाता है कि सुनिश्चित जल आपूर्ति से विद्यालयों में बालिकाओं की संख्या बढ़ सकती है। इस बात पर भी बल दिया जाता है कि अधिक जल आपूर्ति से ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन निर्वाह की स्थितियों में सुधार हो सकता है।

ग) जल विद्युत शक्ति का उत्पादन बढ़ाने का आवश्यकता

हम अनुमानित जल विद्युत् क्षमता 75,400 मेगावट, का केवल 30% का उत्पादन कर रहे हैं। जल विद्युत् शक्ति उत्पादन की बहुत अधिक अप्रयुक्त क्षमता है।

घ) बाढ़ और सूखे के नियंत्रण की आवश्यकता

बाढ़ क्षेत्र (Flood plain): समतल भूमि जो बाढ़ के जल से ढकी हो।

किसी मौसम विशेष और स्थान विशेष में जल-उपलब्धता में अत्यंत भिन्नता का कारण प्रत्येक वर्ष देश के विभिन्न भागों में सूखा और बाढ़ का आना है। कुल 40 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में बाढ़ आने की संभावना रहती है। बाढ़ से फ़सल को नुकसान के अलावा मकानों और संपत्ति की क्षति तथा मनुष्यों और पशुओं की भी हानि होती है। पिछले 25 वर्षों में प्रत्येक वर्ष औसतन 9.3 लाख मकानों को नुकसान हुआ। साथ ही 1240 मनुष्यों और 77000 पशुओं की भी क्षति हुई। बाढ़ आने का कारण नदियों के मार्ग में हस्तक्षेप, प्राकृतिक जल प्रवाह में रुकावट, जनसंख्या में वृद्धि के कारण बाढ़कृत मैदान का अधिग्रहण है। प्रत्यक्ष हानि के अलावा बाढ़ से आर्थिक गतिविधियों में अस्थिरता आ जाती है। बाद की फ़सल के लिए भी कृषि कार्यों पर प्रभाव पढ़ता है। उल्लेखनीय है कि ब्रह्मपुत्र बेसिन में बाढ़ बहुत अधिक सम्भावना रहती हैं।

जब वर्षा सामान्य से बहुत कम होती है तो सूखा पड़ता है। जहां वर्षा, जल का प्रमुख स्रोत होता है वहां यदि कुछ माह भी वर्षा न हो तो जल-संकट पैदा हो जाता है। कृषि सूखा तब

MAADHYAM IAS

पड़ता है जब मृदा की आर्द्रता बहुत कम हो जाती है और उपज बहुत घट जाती है। हमारे देश के कुल क्षेत्रफल का 16% भाग सूखा सम्भावित क्षेत्र है जिसका 12% जनसंख्या पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

ङ) मत्स्यकी, अंतर्देशी जल यातायात और पर्यटन का विकास

मत्स्य संसाधनों में भारत बहुत संपन्न है। नदियों और समुद्र तटों में 1200 से अधिक प्रजातियां पाई जाती हैं। उनमें एक तिहाई बाजार में बिकती हैं। देश के जल संसाधनों का ठीक रखरखाव न होने से मछली पकड़ने का काम कम होता जा रहा है। हमारे देश में लगभग 14,5000 किलोमीटर नौसंचालनीय जल मार्ग हैं जिनके अंतर्गत नदियां, नहरें और पश्चजल (backwaters) आदि आते हैं। अब केवल 3000 किलोमीटर लंबे हिस्से का यातायात के लिए उपयोग होता है। बहुत अधिक सामान ले जाने के लिए नदी नौसंचालन, यातायात की सस्ती विधि है। इस क्षेत्र में विकास की बहुत क्षमता है जो फिर से जल संसाधनों के रखरखाव पर निर्भर करती है। पर्यटन के विकास में जल-निकायों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

च) जल के इष्टतम उपयोग की आवश्यकता

धन की भांति जल के लिए भी यह सही है कि 'जल बचाना ही जल पाना है'। हम निम्न उपायों से जल के उपयोग को इष्टतम कर सकते हैं :

i) वाष्पोत्सर्जन के कारण होने वाली हानि को कमकर के।

ii) कृषि और घरों में प्रयुक्त जल का अपव्यय रोक करके।

जल उपयोग दक्षता = $\frac{\text{प्रकाश संश्लेषण द्वारा उत्पन्न शुष्क पदार्थ का द्रव्यमान}}{\text{उसकी वृद्धि के समय प्रयुक्त जल का द्रव्यमान}}$

आइए, दूसरे पहलू पर विस्तार से चर्चा करें। कृषि क्षेत्र में परंपरागत सिंचाई (जिसे बाढ़ सिंचाई कहते हैं) द्वारा जल उपयोग दक्षता 40% से अधिक नहीं होती है। अध्ययन से ज्ञात होता है कि जापान की अपेक्षा भारत में प्रति एकड़ तीन गुना जल का उपयोग किया जाता है और केवल एक तिहाई चावल पैदा होता है। साथ अधिक अपस्राव से जलाक्रांति और लवणता (खारापन) हो जाता है जिसकी कुछ देर बाद चर्चा की जाएगी। विकासशील देशों के शहरों में जल-आपूर्ति में जल की हानि 50% अथवा उससे अधिक होती है। जल का अपव्यय निम्न कारणों से होता है :

- दोषपूर्ण सप्लाई लाइन
- अनियोजित नलसाजी
- फ्लशिंग पद्धति, वाशिंग मशीन, शावर हेड, नलों आदि का उपयोग क्योंकि ये जल के किफ़ायती इस्तेमाल को ध्यान में रखते हुए नहीं बनाए जाते हैं।

हमें सुदूर स्रोतों से बहुमूल्य जल प्राप्त करने और उसके शोधन में लगने वाली कीमत को भी ध्यान में रखना चाहिए। इसके अलावा नालियों में बहने वाले अधिक जल वाहित मल के निपटान के लिए अधिक धन व्यय करना होता है। अपशिष्ट जल के पुनर्चक्रण के लिए उपायों को अपनाने की आवश्यकता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

छ) पर्यावरण और पारितंत्र को बचाने की आवश्यकता

स्वच्छ पर्यावरण बनाए रखने के लिए जल संसाधनों का समुचित उपयोग आवश्यक है। भौमजल के अधिक उपयोग और बड़े बांधों के निर्माण का पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव की चर्चा पहले की जा चुकी है। इस संदर्भ में समुचित उपाय करने की आवश्यकता है।

- शहरों में जल-आपूर्ति के लिए जल, सुदूर नदियों से प्राप्त किया जाता है। नदियों द्वारा

अनुसरित प्राकृतिक मार्गों के अलावा अन्य मार्गों के उपयोग से पारितंत्र प्रभावित न हो यह सुनिश्चित करने के लिए रक्षात्मक उपाय अपनाए जाने चाहिए।

अगली इकाई के उपभाग 5.5.3 में हम जल निकायों पर शैवाल वृद्धि के विपरीत प्रभावों का अध्ययन करेंगे।

- आइए जलाक्रांति और लवणता के बुरे प्रभावों की व्याख्या करें।
  - अधिक रुद्धजल (stagnant water) के कारण पौधों की जड़ों के चारों ओर जल जमा हो जाता है। साथ ही भूमिगत जल का स्तर बढ़ सकता है। इससे पौधों के मूल-तंत्र में वायु प्रवाह प्रभावित हो सकता है। यह स्थिति शैवाल की वृद्धि के लिए भी सहायक हो सकती है जो जल की गुणता को खराब कर सकती है। इन पहलुओं को सामूहिक रूप से जलाक्रांति (water logging) कहते हैं।
  - शुष्क जलवायु में ऊपरी सतह के निकट जल के उद्‌वाष्पन से मृदा में लवणों की हानिकारक परतें जमा हो जाती हैं। इस प्रक्रम को लवणता कहते है और यह फ़सलों की वृद्धि में रुकावट डालती है।
- अनुपचारिक घरेलू मल और औद्योगिक बहि:स्राव को नदियों में बहा देने से उत्पन्न स्वास्थ्य संकट और इस संबंध में लिए जाने वाले रक्षक उपायों के बारे में आप इस पाठ्यक्रम की इकाई 6 और 14 में पढ़ेंगे।

बोध प्रश्न 6

बड़े बांधों के निर्माण से उत्पन्न विपरीत सामाजिक-आर्थिक प्रभाव बताइए।

....

....

....

4.8 जल संरक्षण और प्रबंधन की विधियां

अब हम जल संरक्षण और प्रबंधन की विधियों की चर्चा करेंगे।

1) पृष्ठ-जल का संरक्षण

पृष्ठ वाह जल के संरक्षण के लिए निम्नलिखित विधियों के अनुसरण का सुझाव दिया जाता है।

क) पर्यावरण का ध्यान रखते हुए बांधों का निर्माण

उप-भाग 4.7.1 में आपने बड़े बांधों के निर्माण से संबंधित पर्यावरण संकटों के बारे में पढ़ा। रक्षात्मक उपाय के रूप में भारत सरकार ने पर्यावरण (सुरक्षा) अधिनियम 1986 और पर्यावरण प्रभाव निर्धारण अधिसूचना 1994 जारी किए हैं। इन कानूनों में किसी परियोजना को आरंभ करने से पहले संबंधित सरकारी एजेंसी से पर्यावरण संबंधी अनुमति लेना आवश्यक होता है। साथ ही पर्यावरण सुरक्षा भी ली जाती है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण की सहायता से समृद्ध जैवविविधता के संरक्षण के लिए वनस्पति उद्यान विकसित करने की आवश्यकता है। पूरक वनरोपण उपायों के रूप में वृक्ष लगाना, चरागाह विकसित करना आदि वानस्पतिक उपायों को अपनाने की आवश्यकता है। मत्स्य प्रजनन के लिए विशेष सावधानी की आवश्यकता है ताकि मछलियां अनुप्रवाह और ऊर्ध्व प्रवाह में गमन कर सकें। परियोजनाओं से प्रभावित होने वाले लोगों का सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण किया जाता है। स्थानीय जनता के प्रतिनिधियों के परामर्श से पुनर्वास और पुन:स्थापन योजना तैयार की जाती है। आवास, रोजगार, सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थानों का निर्माण व्यावसायिक प्रशिक्षण, जल आपूर्ति, सामुदायिक सुविधाएं, ईंधन व्यवस्था आदि का विशेष ध्यान रखा जाता है। उल्लेखनीय है कि इस सब में बहुत धन व्यय होता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बहुत बड़े बांधों के निर्माण की हानियों को ध्यान में रखते हुए यह सुझाव दिया गया है कि विभिन्न स्थानों में जल आपूर्ति और विद्युत् उत्पादन के लिए छोटे बांधों और लघु जल विद्युत् परियोजनाओं का निर्माण किया जाए। इनका निर्माण और प्रबंध प्रयोगकर्ताओं को करना चाहिए। छोटे जलाशयों के समूह से जल-प्रवाह अधिक समय तक हो सकता है। जलाशयों के फैलाव से बाढ़ नियंत्रण अधिक प्रभावी रूप से किया जा सकता है।

ख) वर्षा-जल एकत्रीकरण (Rainwater harvesting)

वर्षा जल को जान बूझकर प्राकृतिक अथवा जल ग्रहण क्षेत्रों में इकट्ठा और संग्रहित करना वर्षा जल एकत्रीकरण कहलाता है। जल ग्रहण क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं :

i) कृत्रिम रूप से तैयार भू-पृष्ठ

ii) पर्वतों के ढाल अथवा शैलीय पृष्ठ

iii) भवनों के छतें

पहले दो की चर्चा यहां की जाएगी और तीसरे की बाद में भूमिगत जल संरक्षण के अंतर्गत की जाएगी।

i) कृत्रिम रूप से तैयार भू-क्षेत्र में जल ग्रहण

प्राचीन काल में कृत्रिम रूप से तैयार भू-पृष्ठों में बनाए गए तालाब सरोवर आदि वर्षा जल एकत्रीकरण संरचनाएं अब भी देश के अनेक भागों में पाई जाती हैं। अंग्रेजी शासन के आरंभ होते ही तालाब सिंचाई पद्धति की उपेक्षा होने लगी। अंग्रेज सरकार ने तालाब मरम्मत और रखरखाव के लिए स्थानीय कर जमा करने की पद्धति समाप्त कर दी। समुचित धन और अधिकारों के बिना स्थानीय समुदायों की जल संसाधन प्रबंध में रुचि समाप्त हो गई। इससे बहुत अधिक हानि हुई और अब भी वह पद्धति प्रभावपूर्ण रूप से पुन: सक्रिय नहीं हो पाई। निम्नलिखित कदम उठाकर तालाब सिंचाई को ठीक ढंग से विकसित करने की आवश्यकता है :

- गाद को पृथक करना,
- शैवाल, जल-हायासिन्थ आदि की वृद्धि रोककर जल गुणता को सुनिश्चित करना,
- तालाब के आस पास निर्माण कार्य, अतिक्रमण आदि को रोकना,
- तालाबों में घरेलू अपशिष्ट, बहि:स्राव आदि डालने पर कानूनी रोक।

कुछ समय बाद गाद धीरे-धीरे तालाबों में जमा हो जाती है और जल किनारों से छलक जाता है। इससे तालाब का उपयोगी जीवन-काल कम हो जाता है।

ii) पर्वतीय क्षेत्रों में वर्षाजल का एकत्रीकरण

पर्वतीय क्षेत्रों में विभिन्न सोपानों को इस प्रकार व्यवस्थित किया जा सकता है कि प्रत्येक सोपान में वर्षाजल को संग्रहित किया जा सके। चित्र 4.2 भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के बरहा पानी (मेघालय) स्थित केन्द्र से लिया गया आशुचित्र है जिसमें समोच्च खाइयां और बेंच वेदिकाएं दिखाई गई हैं। समोच्च खाइयां (Contour trouches) आयताकार गर्त है जिन्हें जल संग्रह के लिए बनाया गया है। बेंच बेदिकाएं (bench terraces), पर्वत की ढाल पर बने पदश: कटाव हैं। प्रत्येक सोपान में पर्याप्त स्थान छोड़ दिया जाता है ताकि वर्षा जल को ग्रहण कर सकें। यह तकनीक हिमालय क्षेत्र, उत्तर पूर्वी राज्यों तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूहों के लिए विशेष उपयोगी है जहां विस्तृत क्षेत्र में बहुत अधिक वर्षा होती है। वर्षा जल एकत्रीकरण के लिए निर्मित संरचनाओं के लाभ नीचे दिए गए हैं :

- भूमिगत जल के स्तर और गुणता में सुधार होता है,
- सूखे से बचने में सहायता करता है,

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

- शैल युक्त क्षेत्रों में मिट्टी के कटाव को कम कर देता है और पृष्ठ वाह कम हो जाता है,
- वर्षा के मौसम में सड़कों के ऊपर आने वाली बाढ़ को कम करता है,
- गहरे तल से भौमजल को ऊपर उठाने में विद्युत् की बचत करता है (भौमजल के तल में एक मीटर की वृद्धि से लगभग 0.40 किलोवाट घंटा विद्युत् की बचत होती है)।
- कृषि योग्य भूमि क्षेत्र कृषि उपज, चारा उत्पादन, पशु प्रजनन क्षमता को बढ़ाने में सहायता करता है संक्षेप में ग्रामीण अर्थव्यवस्थां में सुधार करता है।

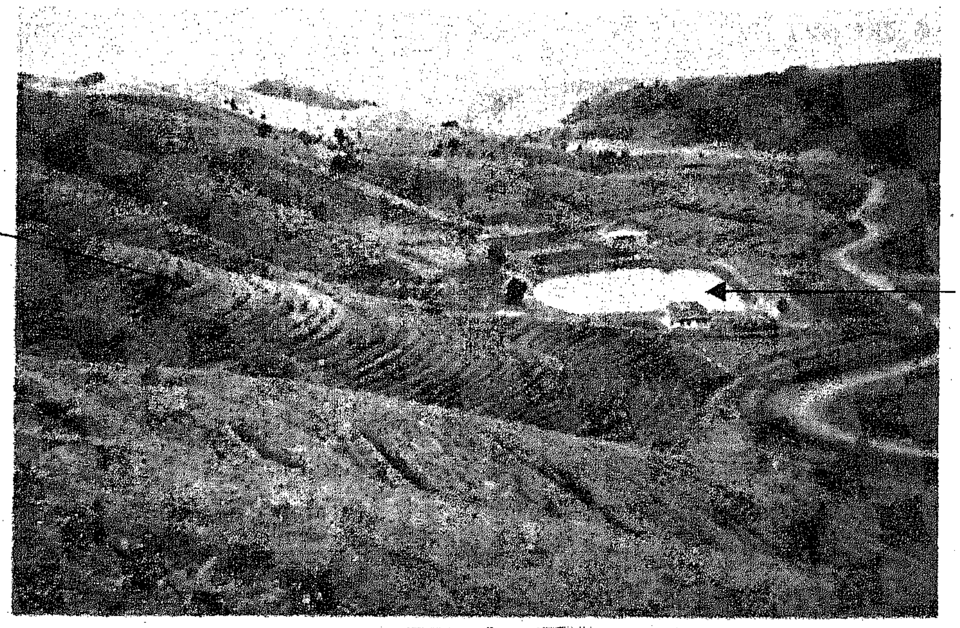

चित्र 4.2: पर्वतीय ढालों में जल एकत्रीकरण समोच्च खाई और बेंच वेदिका को ध्यान से देखें

2) भौमजल संरक्षण

उपभाग 4.4.4 में भौमजल के संरक्षण की आवश्यकता को स्पष्ट किया गया है। भौमजल प्रबंधन और संरक्षण की कुछ तकनीकों का उल्लेख नीचे किया गया है।

क) कृत्रिम पुनर्भरण

कृत्रिम पुनर्भरण के लिए गढ़े या कुओं को खोदा जाता है। इन कुओं में पृष्ठ से जल को जलभृतों में प्रविष्ट करते हैं। भौमजल के पुनर्भरण के लिए सरकार ने हाल में वर्षाजल एकत्रीकरण को कानूनी आवश्यकता बताया है। केन्द्रीय भौमजल बोर्ड और अन्य सरकारी संगठनों ने वर्षाजल एकत्रीकरण द्वारा ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में भौमजल के पुनर्भरण के लिए कुछ मॉडल बनाए हैं।

MAADHYAM IAS

वर्षाजल एकत्रीकरण के लिए कदम उठाते समय, उसकी नीचे दी गई सीमाओं को भी ध्यान में रखना चाहिए :

- मच्छरों का प्रजनन एक आम समस्या है
- अध्ययन से पता लगता है कि बहुत समय तक संग्रहित वर्षा जल में बैक्टीरिया पैदा हो सकते हैं

- वर्षाजल एकत्रीकरण व्यवस्था में पूंजी लगानी पड़ती है।

मच्छर और बैक्टीरिया वृद्धि की समस्याओं के दूर करने के लिए क्लोरीन और ब्लीचिंग पाउडर का मासिक अनुप्रयोग पर्याप्त माना जाता है। पुनर्भरण कुंओं को समुचित ढाल प्रदान कर जल रुद्धता से बच सकते हैं। उल्लेखनीय है कि रखरखाव की आवर्तक लागत कम होती है। समीकरण 4.6 से एकत्रित वर्षाजल का आयतन परिकलित किया जा सकता है।

$$\left.\begin{matrix}\text{एकत्रित हो सकने वाला}\\ \text{वर्षाजल का आयतन}\end{matrix}\right\} = \{\text{वर्षाजल आयतन}\} \times \{\text{जल संग्रहण दक्षता}\} \quad \ldots (4.6)$$

सामान्यतया वर्षाजल संग्रहण दक्षता भिन्न (fraction) में होती है जिसका मान 1 से कम होता है। वर्षाजल संग्रहण दक्षता को 100 से गुणा करने पर उसे प्रतिशत में प्राप्त किया जा सकता है।

अलवर स्थित तरुण भारत संघ और जोधपुर स्थित ग्रामीण विकास विज्ञान समिति नामक दोनों संस्थाएं राजस्थान में हैं। इन दोनों संस्थाओं ने वर्षा जल एकत्रीकरण की परंपरागत विधियों को पुनरुज्जीवित करने में प्रशसंनीय कार्य किया है। उनके प्रयत्नों से मानव उपभोग, कृषि कार्यों और पशु प्रजनन के लिए जल उपलब्धता को बढ़ाने में सहायता मिली है। वर्षा जल एकत्रीकरण से ग्रामीण अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण और राजस्थान के अनेक गावों में आत्मनिर्भरता को बढ़ाने में से संस्थाएं उपयोगी सिद्ध हुई हैं।

उदाहरण 2

एक वर्ष में हमारे देश के केवल भू-क्षेत्र में वर्षा से एकत्रित वर्षाजल का आयतन परिकलित कीजिए। भाग 4.2 के उदाहरण 1 में दिए गए आंकड़ों का उपयोग करें। मान लें कि जल संग्रहण दक्षता ½ है।

समीकरण 4.6 और ऊपर दिए गए आंकड़ों का उपयोग करने पर प्रतिवर्ष 167.2 मिलियन हेक्टेयर मीटर अथवा 1.672×10^{12} मीटर^3 वर्षाजल परिकलित किया जा सकता है।

ख) अंत: स्रवण टंकी विधि

कृत्रिम पुनर्भरण के लिए जलमार्ग के आरपार अंत: स्रवण टंकियों का निर्माण किया जाता है। महाराष्ट्र, राजस्थान, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक आदि अनेक राज्यों ने अंत: स्रवण टंकियों का उपयोग किया है। महाराष्ट्र में किए गए अनेक अध्ययनों से संकेत मिलता है कि औसतन प्रत्येक अंत: स्रवण टंकी के कारण,

- 1.2 किमी^{2} क्षेत्र प्रभावित होता है,
- भौमजल का तल 2.4 मीटर ऊपर उठता है और
- वार्षिक कृत्रिम पुनर्भरण 1.5 हेक्टेयर मीटर होता है।

भौमजल और पृष्ठ जल का संयुक्त उपयोग

यह महत्वपूर्ण है कि पृष्ठ जल और भौमजल संसाधन एक दूसरे के अभिन्न अंग हैं। जलाक्रांति और मृदा-लवणता को रोकने तथा फ़सलों के लिए पर्याप्त और सुनिश्चित जल आपूर्ति के लिए उनका विकास और उपयोग समन्वित रूप से होना चाहिए। केन्द्रीय जल आयोग और केन्द्रीय भौमजल बोर्ड ने दोनों संसाधनों के समग्र उपयोग के लिए मार्गदर्शी सिद्धांत तय किए हैं।

3) जल ग्रहण क्षेत्र रक्षण

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

जल ग्रहण क्षेत्र रक्षण योजनाओं को प्राय: जल विभाजक रक्षण योजनाएं (water shed protection plans) कहा जाता है। किसी जल विभाजक में जल की गुणता और मात्रा की रक्षा के लिए इन्हें महत्वपूर्ण उपाय के रूप में अपनाया जाता है। वाह जल को पर्वतीय क्षेत्र में ही रोक दिया जाता है। इससे जल के बहने में समय लगता है और जल को भूमि में रिसने के लिए अधिक समय मिल जाता है। इन विधियों का उपयोग उत्तरपूर्वी राज्यों में किया जाता है। जल और मृदा के संरक्षण के लिए जल ग्रहण क्षेत्र में वनरोपण किया जाता है।

4) जल का अंतराबेसिन स्थानांतरण

जल विभाजक:

उच्च भूमि क्षेत्र जो दो अथवा अधिक नदी तंत्रों को इस प्रकार विभाजित करता है कि एक ओर की सरिताएं एक नदी में तथा दूसरे ओर की सरिताएं दूसरी नदी में प्रवाहित हों।

उपभाग 4.4.3 में हमने पढ़ा कि उत्तरी और पूर्वी प्रदेश जल समृद्ध हैं तथा दक्षिणी और पश्चिमी प्रदेशों में जल संसाधन अपेक्षाकृत कम हैं। यह अनुभव किया गया है कि जल संसाधनों के समान वितरण के लिए नदी बेसिनों को परस्पर जोड़ना अनिवार्य है। जल संसाधन मंत्रालय ने 1980 में जल के विकास के लिए एक राष्ट्रीय परिदृश्य प्रतिपादित किया है जिसके दो घटक हैं।

क) हिमालय की नदियों का घटक

इसके मुख्य लक्षण नीचे दिए गए हैं :

i) बाढ़ नियंत्रण, जलविद्युत शक्ति उत्पादन और सिंचाई के लिए मानसून प्रवाह का संरक्षण करना,

ii) ब्रह्मपुत्र, गंगा और महानदी तंत्रों को परस्पर जोड़ना,

iii) हरियाणा, राजस्थान, पंजाब और गुजरात को अतिरिक्त सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध कराना,

iv) कलकत्ता बंदरगाह को अतिरिक्त प्रवाह उपलब्ध कराना और अंतर्देशी नौचालन सुविधाएं उपलब्ध कराना।

ख) प्रायद्वीपीय नदी घटक

इस परियोजना में महानदी-गोदावरी-कृष्णा, पेनार-कावेरी को परस्पर जोड़कर हिमालय की नदियों का अतिरिक्त जल उनमें स्थानांतरित करना है। इससे महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश और तमिलनाडु को अतिरिक्त सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध होंगी। इसके अलावा केरल में पश्चिम और पूर्व को बहने वाली नदियों को जोड़ने की योजना है जिससे केरल और तमिलनाडु को अतिरिक्त सिंचाई सुविधा प्राप्त होगी। इसके साथ ही मुम्बई के उत्तर में पश्चिमी तट के साथ बहने वाली तथा तापी के दक्षिणी में बहने वाली कुछ छोटी नदियों और यमुना की दक्षिणी सहायक नदियों, जैसे चम्बल और केन, को जोड़ने का भी प्रस्ताव है।

अंतराबेसिन स्थानांतरण को लागू करने में आने वाली प्रमुख चुनौतियां इस प्रकार हैं:

i) प्रादेशिक भावना के फलस्वरूप उत्पन्न गंभीर राजनैतिक विवाद पैदा हो सकते हैं जिनके निराकरण की आवश्यकता है।

ii) अत्यधिक वित्तीय निवेश की आवश्यकता है,

iii) तकनीकी कौशल के एकीकरण की आवश्यकता है।

बहुधा यह कहा जाता है कि अंतर्राज्य जल बंटवारे के निर्णय में विलंब से लगभग 20 मिलियन हेक्टेयर भूमि में फ़सलों पर बुरा प्रभाव पड़ता है। राज्यों के बीच नदी-जल के बंटवारे का निर्णय लेने के लिए विशेष अधिकरणों की नियुक्ति की गई है। विशेष रूप से मानसून की विफलता पर पड़ोसी राज्यों में जल बंटवारे के बारे में तनाव रहता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

पड़ोसी देशों के साथ नदी जल बंटवारा

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सहयोग की आवश्यकता के बारे में हम बी.जी. बर्घीज द्वारा लिखित 'वाटर्स ऑफ होप' नामंक पुस्तक में की गई चर्चा के आधार पर कुछ प्रकाश डालेंगे। गंगा, ब्रह्मपुत्र और बरक बृहद अंतराबद्धबेसिन का सहभाजन करते हैं जो भारत, भूटान, नेपाल, बंगलादेश और चीन का तिब्बत इन पांच देशों में फैला है। ये नदी तंत्र 214 मिलियन हेक्टेयर

मीटर जल समुद्र में ले जाते हैं और उनमें 2,50,000 मेगावट जल विद्युत् पैदा करने की क्षमता है। इसके बावजूद यह विडम्बना है कि ऐसी समृद्ध प्राकृतिक संसाधनों के बीच सबसे अधिक निर्धन लोगों की बहुत बड़ी संख्या रहती है। इस क्षेत्र में जल-संसाधनों के समुचित प्रबंधन से लोगों के जीवन-स्तर में सुधार हो सकता है। संक्षेप में कह सकते हैं कि दुनिया के इस भाग में जल उसी प्रकार का संसाधन है जिस प्रकार मध्य-पूर्व में पेट्रोलियन का इस क्षेत्र में जल विवादों को निपटाने के लिए भारत-बंग्लादेश संयुक्त नदी आयोग जैसी अंतर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना की गई है। सिन्ध नदी के जल के बंटवारे के लिए भारत और पाकिस्तान ने स्थायी सिन्ध आयोग की स्थापना की है।

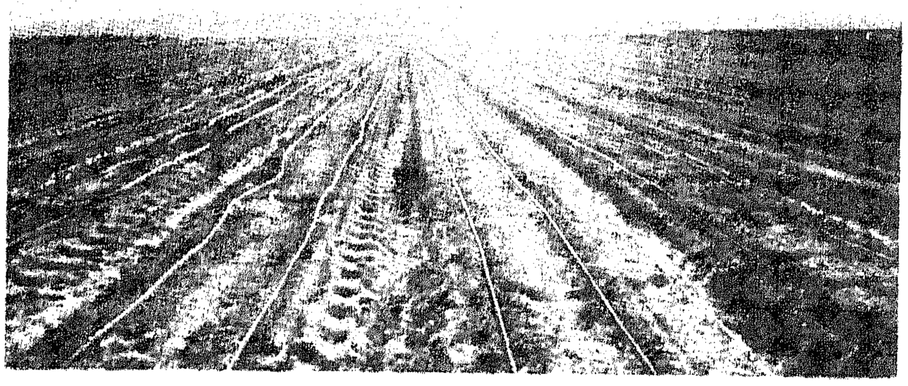

क)

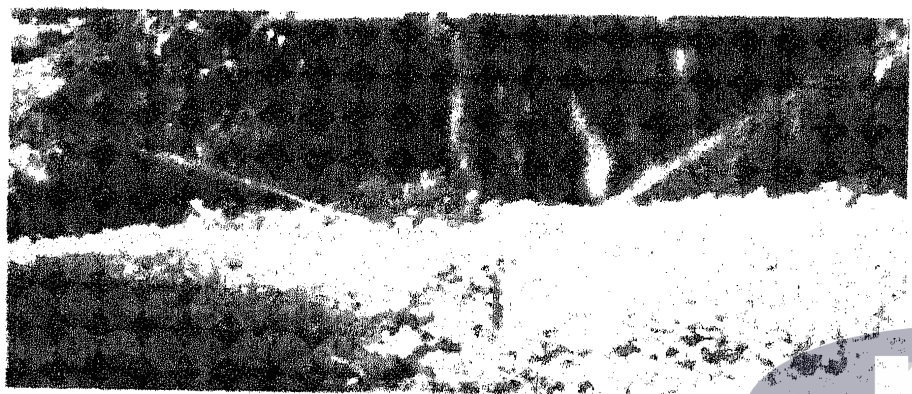

ख)

चित्र 4.3: क) खेत में समुचित रूप से बिछाए गए होज पाइप द्वारा ड्रिप्स सिंचाई
ख) छिड़काव सिंचाई

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

5) कृषि कार्यों में संशोधनों पर आधारित विधियां

कृषि कार्यों में उपयुक्त परिवर्तन कर जल का अधिक दक्षता के साथ उपयोग किया जा सकता है। इसके लिए कुछ सुझाव नीचे दिए गए हैं।

क) ड्रिप्स और छिड़काव सिंचाई

हमारे देश में परम्परागत रूप से प्रयुक्त पृष्ठ सिंचाई विधि जल-न्यून क्षेत्रों के लिए उपयुक्त नहीं है क्योंकि उसमें जल की बहुत अधिक मात्रा उद्वाष्पन और अंत:श्रवण द्वारा नष्ट हो

जाती है। पृष्ठ सिंचाई की अपेक्षा ड्रिप्स सिंचाई और छिड़काव सिंचाई अधिक उपयुक्त हैं। ड्रिप्स सिंचाई में जमीन पर बिछे छिद्र वाले पाइपों द्वारा जल को मृदा में सीधे मूल तंत्र के पास डाला जाता है जो शीघ्र जल का अवशोषण कर लेता है। यह विधि शुष्क प्रदेशों में विशेष उपयोगी होती है। छिड़काव विधि में खेत में विभिन्न दिशाओं में घूम रहे जल जेटों का उपयोग किया जाता है। अनुमान है कि जल-उपयोग दक्षता ड्रिप्स सिंचाई में 95%, पृष्ठ सिंचाई में 45% और छिड़काव सिंचाई में 75% होती है। ड्रिप्स सिंचाई घटिया जल अथवा नमकीन जल से भी की जा सकती है क्योंकि उसमें जल और पत्तियों का सीधा संपर्क नहीं होता है। कपास, टमाटर, तरबूज आदि कुछ फ़सलें 0.47% NaCl के तुल्य लवणता को सहन कर सकती हैं। केवल शर्त यह है कि खेती बलुई अथवा दुमट-बलुई मिट्टी में की जाए। मूलों के लगातार प्रधावन से मूल-तंत्र से लवणों के निष्कासन में सहायता मिलती है। ड्रिप्स सिंचाई में न्यूनतम उपचारित मल जल का उपयोग कर सकते हैं क्योंकि जल भूमि में दिया जाता है जिससे स्वास्थ्य को खतरा बहुत कम रहता है चित्र 4.3 (क) और (ख) में ड्रिप्स सिंचाई और छिड़काव सिंचाई विधि दिखाई गई हैं।

दुमट बलुई मिट्टी (Loamy **sandy** soil):
बलुई मिट्टी जिसमें क्षय वनस्पति पदार्थ मिला होता है जो फ़सलों को उगाने के लिए, बलुई मिट्टी की अपेक्षा अच्छी होती है। (खंड 1 की इकाई 2 भी देखें)।

ख) वर्धन पैटर्न का प्रबंधन और फसल की किस्म का चयन

जल-न्यून क्षेत्रों में फ़सल का चयन उसके द्वारा जल-उपयोगिता की दक्षता पर आधारित होना चाहिए। जल न्यून क्षेत्रों के लिए उपयुक्त कुछ पादप इस प्रकार हैं (i) लघु वृद्धि काल वाले पादप (ii) अधिक उपज वाले पादप जिन्हें अधिक जल आपूर्ति की आवश्यकता नहीं होती है (iii) गहरी मूलों वाले पादप (iv) पादप जो पृष्ठ सिंचाई सहन नहीं करते हैं। जल न्यून क्षेत्रों में गेहूं, धान, गन्ना आदि फसलें नहीं उगाई जाती हैं। उनके स्थान पर मोटे अनाज, मिलेट (ज्वार, बाजरा आदि), खाद्य तेल बीजों और दालों की खेती की जाती है। शुष्क अथवा रेगिस्तानी परिस्थितियों में पैदा होने वाली कुछ फ़सलों द्वारा वाष्पोत्सर्जन में जल की हानि कम होती है।

ग) पोषक-प्रबंधन

शुष्क भूमि फ़सलों की वाष्पोत्सर्जन-दर कम होती है।

पादप पोषकों में समायोजन की जल-दक्षता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। उदाहरण के लिए पोटैशियम, जल उपयोग दक्षता को बढ़ाने में सहायता करता है। जल प्रौद्योगिकी की केन्द्र कोयम्बटूर द्वारा किए गए प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि 0.5% पौटेशियम क्लोराइड के पर्णीय (**Foliar**) अनुप्रयोग से सोयाबीन, सोरघम और मूंगफली में आर्द्रता प्रतिबल कम हो जाता है।

घ) वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन कम करना

मृदा पृष्ठ से उद्वाष्पन और पादपों से वाष्पोत्सर्जन कम करके हानि कम की जा सकती है। शुष्क प्रदेशों में जहां आर्द्रता कम होती है, मृदा-पृष्ठ से उद्वाष्पन द्वारा पर्याप्त जल की हानि होती है। पादपों के चारों ओर भमि में पत्तियां. तण आदि बिछाकर इसे रोका जा सकता है। कागज, प्लास्टिक पर्णी अथवा धातु पर्णी आदि अरंध्री पदार्थों को खेतों में फैलाकर भी वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन द्वारा हानि को रोका जा सकता है। इसके अलावा बातरोधों (**wind breaks**) द्वारा फ़सल के ऊपर वायु की गति कम की जा सकती है। अन्य विधियां नीचे दी गई हैं :

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

- रासायनिक पदार्थों का अनुप्रयोग जिससे वाष्पोत्सर्जन कम हो जाता है,
- खेतों से अवांछित पौधों को नष्ट कर देना,
- फ़सल से अनुत्पादी पत्तियां निकाल देना,

- फ़सलों को ऐसी संरचनाओं द्वारा घेर देना जिससे वाष्पोत्सर्जित जल एकत्रित कर पुनः प्रयुक्त किया जा सके,

  जल-निकायों के ऊपर एकाण्विक (monomolecular) फिल्में प्रयुक्त करके।

6) घरेलू और औद्योगिक उपयोगों में किए जाने वाले परिवर्तनों पर आधारित विधियां

इस संदर्भ में तीन विधियों की चर्चा की जाएगी।

क) घरेलू और औद्योगिक स्रोतों से प्राप्त अपशिष्ट जल का पुनर्चक्रण

औद्योगिक स्रोतों से प्राप्त अपशिष्ट जल को समुचित उपचार के बाद सिंचाई और भौमजल के पुनर्भरण के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। पुनर्चक्रित जल का उपयोग करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रयोजन के अनुसार उसकी गुणता ठीक है। यदि पुनचक्रिय जल की उच्च गुणता हो तो उसे उद्योगों और यहां तक कि नगरपालिका आपूर्ति के लिए भी प्रयुक्त किया जा सकता है। उपचारित नगरपालिका अपशिष्ट जल का उपयोग उद्यानों और आसपास की कृषि भूमि को सींचने में किया जा सकता है। अनेक औद्योगिक इकाइयां समुचित उपचार के बाद अपशिष्ट जल का उपयोग कर रही हैं।

ख) घरेलू उपयोग में जल-संरक्षण

नगरपालिका और पंचायत प्रशासन इकाइयों को जल के किफ़ायती उपयोग के बारे में लोगों को जानकारी देनी चाहिए। वायुचालित शावर हेड, प्रवाह सीमक टोंटियां, अग्रभारित वाशिंग मशीन तथा वायुचालित शौचालय टंकी आदि जल की बचत करने वाली युक्तियां उपलब्ध होनी चाहिए।

ग) जल संरक्षण के लिए प्रोत्साहन

जल-संरक्षण के लिए किए जाने वाले प्रयत्नों के लिए प्रोत्साहनों की कमी है। सिंचाई और घरेलू उपयोग के लिए जन-संरक्षण उपायों का पालन करने वाले लोगों को करों में छूट देकर प्रोत्साहित करना चाहिए।

7) आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग

जल संरक्षण और प्रबंधन के लिए प्रयुक्त आधुनिक प्रौद्योगिकी की कुछ विधियां नीचे दी गई हैं :

क) उपग्रहों द्वारा जलभृतों का स्थान निर्धारण

उपग्रहों द्वारा नये जलभृतों की स्थिति, पर्वतों में हिम का संचय, मृदा अपरदन पहचान, जलनिकायों में प्रदूषण स्तर आदि बहुमूल्य सूचना प्राप्त होती है। इन आंकड़ों से बाढ़ और सूखे की पूर्व चेतावनी दी जा सकती है।

ख) खारे जल और समुद्री जल से अलवण जल की प्राप्ति

खारे जल को पेय जल में परिवर्तित करने के लिए अनेक विलवणन विधियां प्रयुक्त हो रही हैं। यहां केवल तीन विधियों के सिद्धांतों पर चर्चा की जाएगी।

i) बहु प्रभावी आसवन

यह विधि इस नियम, पर आधारित है कि दाब कम करने पर द्रव का क्वथनांक कम हो जाता है। इसमें अनेक संघनित्रों-वाष्पित्रों को श्रेणी में व्यवस्थित किया जाता है और एक के वाष्प का उपयोग अगले निम्न दाब के वाष्पित्र में मौजूद जल को उबालने के लिए किया जाता है।

वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन कम करने के लिए जब भी रासायनिक विधियों का उपयोग किया जाता है तो उसका पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव का भी सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया जाता है।

इज़राइल अपने सीमित जल संसाधनों का पता लगाने तथा उनका संरक्षण और प्रबंधन करने के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग करता है।

1) जल-संसाधनों का पता लगाने के लिए न्यूट्रॉन-प्रकीर्णन युक्तियों का उपयोग किया जाता है जो मृदा में उच्च गति वाले न्यूट्रॉनों का उत्सर्जन करती हैं। हाइड्रोजन परमाणु, जो जल-अणु का एक अवयव है, के संपर्क में आने वाला कोई भी न्यूट्रॉन, प्रयुक्त विशेष युक्ति में संकेत देता है जो मृदा में आर्द्रता की मात्रा का माप बतलाते हैं।
2) सिंचाई, कंप्यूटरों द्वारा नियंत्रित की जाती है जो ड्रिप्स और छिड़काव लाइनों को चालू करने के लिए क्रमादेशित रहते हैं।

खारा जल (Brackish water):
जल जिसमें पर्याप्त घुले लवण होते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

क्रमिक आसवनों से शुद्ध जल प्राप्त होता है। लागत कम करने के लिए इस संयंत्र को किसी ऊष्मा विद्युत् केन्द्र अथवा औद्योगिक प्रक्रम से प्राप्त न्यून दाब भाप के साथ परिचालित किया जाता है।

ii) उत्क्रमी परासरण

परासरण के दौरान अर्धपारगम्य झिल्ली द्वारा पृथक करने पर जल तनु विलयन से सान्द्र विलयन में प्रविष्ट करता है। उत्क्रमी परासरण में दाब प्रयुक्त करने पर जल, प्लास्टिक झिल्ली से होते हुए सान्द्र विलयन से तनु विलयन में प्रविष्ट करता है। विशेष उपचारित सेलुलोस ऐसीटेट, पॉलिमेथिलऐक्रिलेट आदि झिल्लियों का उपयोग किया जाता है। कम ऊर्जा उपभोग, झिल्ली चिरस्थायित्व आदि कारणों से उत्क्रमी परासरण संयंत्र का परिचालन व्यय कम होता है। आयननीय और गैर-आयननीय द्रव्य को और साथ ही कोलॉयडी और उच्च अणुभार कार्बनिक द्रव्य को पृथक करने के कारण यह शुद्ध जल प्राप्त करने की काफी लाभदायक विधि है।

उत्क्रमी परासरण (reverse osmosis) में जल, अर्धपारगम्य झिल्ली में निकल जाता है और घुले आयन पीछे रह जाते हैं। वैद्युत अपोहन (electrodialysis) *if* धनायन और ऋणात्मक वरणात्मक पारगम्य झिल्लियों में से निकल जाते हैं और शुद्ध जल पीछे रह जाता है।

iii) वैद्युत अपोहन

वैद्युत अपोहन में, शुद्ध जल की अल्प वैद्युत चालकता तथा अनुप्रयुक्त विद्युत् धारा की उपस्थिति में घुले हुए ठोस पदार्थों के आयनों के अभिगमन का वैद्युत अपोहन में उपयोग किया जाता है। यह खारे जल से आयनों को बाहर निकालने की झिल्ली प्रौद्योगिकी भी है। दो प्रकार की झिल्लियों का उपयोग किया जाता है– एक केवल धनायनों के लिए पारगम्य और दूसरी केवल ऋणायनों के लिए पारगम्य होती है। खारे जल के बृहद् परिमाण के शोधन के लिए दो प्रकार की झिल्लियों को वैकल्पिक रूप से प्रयुक्त किया जाता है। सल्फोनिक अम्ल समूह युक्त पॉलिस्टाइरीन बहुलक का धनायन वरणात्मक झिल्ली के रूप में उपयोग किया जाता है जब ऋणायन वरणात्मक झिल्ली में चतुष्क अमोनियम समूह होता है। धनायनों और ऋणायनों के अपनी वरणात्मक झिल्लियों में से गमन करने से समुद्र जल का विलवणन हो जाता है।

बोध प्रश्न 7

बड़े बांधों के निर्माण के समय सामाजिक-आर्थिक पहलुओं को सुरक्षित रखने के कुछ उपायों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

4.9 सारांश

MAADHYAM IAS

जल, देश का एक संसाधन है। कृषि उत्पादन, औद्योगिक विकास और सार्वजनिक स्वास्थ्य– ये सब पर्याप्त मात्रा और उत्तम गुणता वाले जल की उपलब्धता पर निर्भर करते हैं। इस इकाई में हमारे देश में नदी जल और भौमजल संसाधनों की विस्तार से चर्चा की गई है। सूर्य के प्रकाश और पवन की जल निकायों के साथ अभिक्रिया की विशिष्टता बतलाते हुए जलीय चक्र का संक्षिप्त वर्णन किया गया है। जल का उसकी तीन अवस्थाओं में लगातार अंतर्परिवर्तन, जलवायु, खनिज रचना, घाटियों और डेल्टाओं को बनाना, विद्युत् उत्पादन तथा बाढ़ और सूखा पड़ना आदि पर जल के प्रभाव का वर्णन किया गया है। जनसंख्या वृद्धि और आर्थिक विकास की दृष्टि से जल संरक्षण और प्रबंधन जैसे महत्वपूर्ण विषयों की चर्चा की गई है। अंतर्राज्य और अंतर्राष्ट्रीय जल बंटवारे से संबंधित पहलुओं पर भी विचार किया है। ग्रामीण जल न्यूनता के सामाजिक वैज्ञानिक पहलू का भी उल्लेख किया गया है जो महिला अशिक्षा और

ग्रामीण पिछड़ेपन का कारण है। जल के संरक्षण और प्रबंधन के लिए अपनाये जा सकने वाली विधियों का भी उल्लेख किया गया है।

इस इकाई में हमने जल संसाधनों के मात्रात्मक पहलुओं को प्रमुख स्थान दिया। इस खंड की आगामी दो इकाइयों में जल-संसाधनों की गुणता वाले पहलुओं पर चर्चा की जाएगी।

4.10 अंत में कुछ प्रश्न

1. किसी नदी में अल्प मात्रा में जल-प्रवाह, पर्यावरण को किस प्रकार प्रभावित करता है?
2. अपक्षयण अभिक्रियाओं के महत्व पर प्रकाश डालिए।
3. स्पष्ट कीजिए कि जल पृथ्वी में ताप स्थितियों को नियमित करने में किस प्रकार सहायक होता है।
4. क्या बहती हुई नदी में स्तरण हो सकता है? स्पष्ट कीजिए।
5. 1981 में भारत की जनसंख्या 68.63 करोड़ थी। उस वर्ष में वार्षिक प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता परिकलित कीजिए।
   वार्षिक वाह $= 1869 \times 10^9$ मीटर^3
6. ग्रामीण क्षेत्र जहां नहरें नहीं होती हैं, वहां जल-न्यूनता के विपरीत प्रभाव बताइए।
7. जलाक्रांति और लवणता शब्दों की व्याख्या कीजिए।
8. तालाबों को पुन: चालू करने के लिए किन संरक्षी उपायों की आवश्यकता होती है?
9. वर्षाजल एकत्रीकरण से संबंधित मुख्य स्वास्थ्य समस्याएं कौन-कौन हैं? उसके लिए कौन से प्रत्युपाय अपनाए जा सकते हैं?
10. उत्क्रमी परासरण और वैद्युत अपोहन में अंतर बतलाएं?

4.11 उत्तर

बोध प्रश्न

1. क्षेत्रफल $= 1483$ किमी^{2} $= 1.483 \times 10^9$ मी^{2}

   समीकरण 4.3 से वार्षिक वर्षाजल का आयतन $\left.\right\} = 1.483 \times 10^9 \times \frac{60}{100}$ मीटर^3

   $= 8.9 \times 10^8$ मीटर^3

   $= 8.9 \times 10^{-2}$ मिलियन हैक्टेयर मीटर (समी. 4.2 के उपयोग से)

   $= 8.9 \times 10^{11}$ लीटर

2. उत्तर पूर्वी राज्यों और पश्चिमी तट में भारी वर्षा होती है। इसके विपरीत पश्चिमी राजस्थान, गुजरात के एक भाग और जम्मू-काश्मीर राज्य के अधिकांश भाग में बहुत कम वर्षा होती है। हमारे देश में अधिकांश वर्षा 200 घंटों में हो जाती है और उसका आधा 30 घंटों में। फलस्वरूप जलवाह बहुत अधिक है।

3. अधिक उपयोग से जल-तंत्र घट जाता है और यदि स्रोत, समुद्र के निकट हो तो समुद्र का जल, भौमजल में प्रविष्ट कर जाता है। इससे जल गुणता का ह्रास हो जाता है। घटिया जल के उपयोग का जीवित प्राणियों और कृषि पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

MAADHYAM IAS

4. वनस्पति युक्त स्थान से जल हानि दोनों प्रकार से होती है उद्वाष्पन द्वारा और वार्ष्पोत्सर्जन द्वारा। इसे उद्वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन कहते हैं। घनी वनस्पति अथवा झाड़ियों द्वारा वर्षण को बनाए रखने को अपरोधन कहते हैं जो उद्वाष्पन द्वारा वायुमंडल में वापस चला जाता है।

5. प्रवाह वेग और स्तरण दो महत्वपूर्ण कारक हैं। प्रवाह-वेग ऑक्सीजन आदि गैसों की विलेयता को निर्धारित करता है। स्तरण से नीचे की परतो में ताप-परिवर्तन, रासायनिक संघटन और जैव गुणधर्मों का संकेत मिलता है।

6. निवासी विस्थापित हो जाते हैं। उन्हें कृषि और स्थानीय संसाधनों से संबंधित अपने मुख्य व्यवसाय को खोना पड़ता है।

7. परियोजना से प्रभावित लोगों का सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण करना पड़ता है। स्थानीय जनता के प्रतिनिधियों के परामर्श से पुनर्वास और पुनर्स्थापना योजनाएं तैयार करनी होती हैं। घर, रोजगार, व्यावसायिक प्रशिक्षण जल आपूर्ति, सामुदायिक सुविधाएं ईंधन आदि की व्यवस्था करनी होती है।

अंत में कुछ प्रश्न

1. सूखे मौसम में अपशिष्ट पदार्थों को बहा ले जाने के लिए पर्याप्त बहता जल नहीं होता है। मानसून की नदियों में कूड़े का ढेर लगाने से पहले अपशिष्ट प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

2. घाटियों और डेल्टाओं के बनने के लिए तथा गाद-निक्षेपण द्वारा समुद्रों के पृष्ठ समतलन के लिए अपक्षयण अभिक्रियाएं उत्तरदायी हैं। जल द्वारा शैल पदार्थों के रासायनिक अपघटन से खनिज बनते हैं।

3. जल की उच्च ऊष्मा धारिता यह सुनिश्चित करती है कि तापन और शीतल प्रक्रमों में पर्याप्त ऊष्मा शामिल रहती है। इसलिए पृथ्वी गर्मी और सर्दी की असह्य चरम अवस्थाओं से बची रहती है।

4. बहती हुई नदी में जल धारा और प्रक्षोभ के कारण सम्यक और सतत् ऊर्ध्व मिश्रण होता रहता है। ऐसी नदियों में स्तरण नहीं होता है।

5. समीकरण 4.5 के अनुसार वार्षिक प्रति व्यक्ति जल-उपलब्धता 2723 मी^{3} होनी चाहिए।

6. गांवों में रहने वाले जो लोग नहरों से दूर रहते हैं उन्हें सिंचाई और घरेलू इस्तेमाल के लिए जल प्राप्त करने के लिए भारी कीमत चुकानी पड़ती है। वैकल्पिक रूप से ग्रामीण लोगों, विशेषत: महिलाओं, को जल लाने में बहुत समय लगाना पड़ता है। जल-दुर्लभता, ग्रामीण महिलाओं की अशिक्षा और पिछड़ेपन का कारण है।

7. रुद्ध जल के संचय से मूल तंत्र में वायु प्रवाह नहीं हो पाता है। इससे शैवाल पैदा हो जाता है और जल गुणता नष्ट हो जाती है। इसे सामूहिक रूप से जलाक्रांति कहते हैं। शुष्क जलवायु में ऊपरी सतह के निकट जल उद्वाष्पित हो जाता है जिससे मृदा के ऊपर लवणों की क्षतिकारी परतें एकत्रित हो जाती हैं इस प्रक्रम को लवणता कहते हैं।

MAADHYAM IAS

8. गाद को समय-समय पर निकालते रहना चाहिए। शैवाल, जल हायासिन्थ आदि की अत्यधिक वृद्धि रोककर जल-गुणता को बनाए रखने के उपाय करने चाहिए। तालाब के आस पास अतिक्रमण नहीं होने देना चाहिए। घरेलू कूड़ा और बहि:स्राव को तालाब में नहीं डालना चाहिए।

9. मच्छरों का पैदा होना आम समस्या है। वर्षा जल से बैक्टीरिया पैदा हो सकते हैं। इन समस्याओं को हल करने के लिए प्रति माह क्लोरीन अथवा ब्लीचिंग पाउडर का अनुप्रयोग बहुत उपयुक्त रहता है।

10. उत्क्रमी परासरण में जल झिल्ली में से गुजरता है और आयन पीछे रह जाते हैं। वैद्युत अपोहन में नमकीन जल में मौजूद आयन झिल्ली से बाहर खिंच जाते हैं और शुद्ध जल पीछे रह जाता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 5 जल के अभिलक्षण

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
5.2 जल निकायों के भौतिक गुण
5.3 जल निकायों के रासायनिक अभिलक्षण
5.4 जल निकायों के जैविक गुण
5.5 जल गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले कारक
प्राकृतिक कारक
मानव गतिविधियां
जैविक रूपांतरण
5.6 जल में गैसों की विलेयता
5.7 कार्बोनेट साम्य
5.8 सारांश
5.9 अंत में कुछ प्रश्न
5.10 उत्तर

5.1 प्रस्तावना

इकाई 4 में आपने जल स्रोतों के बारे में पढ़ा था। इस इकाई में जल निकायों के अभिलक्षणों का विस्तार से वर्णन किया जाएगा। इसके अंतर्गत जल निकायों के भौतिक, रासायनिक और जैविक अभिलक्षणों की चर्चा की जाएगी। इन पहलुओं पर चर्चा करते समय जल अवयवों के साथ उनके संबंधों का उल्लेख भी किया जाएगा। जल अवयवों के लिए उत्तरदायी प्राकृतिक, मानवीय और जैविक कारकों का भी विस्तार से अध्ययन किया जाएगा। जलीय प्राणियों के लिए ऑक्सीजन और कार्बन डाइऑक्साइड के महत्व को ध्यान में रखते हुए इन गैसों की विलेयता की विस्तार से चर्चा की जाएगी। इस अध्ययन से जलीय प्राणियों के लिए अनुकूल परिस्थितियों को समझने में सहायता मिलेगी। इकाई के अंत में कार्बोनिक अम्ल की विभिन्न अवस्थाओं-बाइकार्बोनेट-कार्बोनेट साम्य का वर्णन किया जाएगा। इस इकाई में वर्णित सैद्धांतिक संकल्पनाओं का इस पाठ्यक्रम के प्रायोगिक भाग में किए जाने वाले प्रयोगों के साथ संबंध स्थापित करने का प्रयत्न किया गया है। इकाई 6 में आप विभिन्न उपयोगों के लिए जल गुणवत्ता के मापदंडों के बारे में पढ़ेंगे।

MAADHYAM IAS

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- जल निकायों के भौतिक, रासायनिक और जैव अभिलक्षणों का वर्णन कर सकेंगे,
- जल निकायों के अभिलक्षणों का उसके तत्वों के साथ संबंध स्थापित कर सकेंगे,
- जल निकायों में पाये जाने वाले अवयवों के लिए उत्तरदायी प्राकृतिक, मानवीय और जैविक कारकों की व्याख्या कर सकेंगे,

- जल में गैसों की विलेयता को निर्धारित करने वाले कारकों को बता सकेंगे, और
- कार्बोनिक अम्ल, बाइकार्बोनेट और कार्बोनेट आयन के परस्पर साम्य का उल्लेख कर सकेंगे।

5.2 जल निकायों के भौतिक गुण

इस अनुच्छेद में हम जल के उन भौतिक अभिलक्षणों की चर्चा करेंगे जिनका उपयोग विशेष प्रकार के जल की गुणवत्ता को निर्दिष्ट करने वाले प्राचलों के रूप में किया जाता है।

i) आविलता

अमरीका सार्वजनिक स्वास्थ्य संघ (American Public Health Association) द्वारा आविलता (turbidity) की परिभाषा निम्न प्रकार से दी गई है : "आविलता किसी जल के नमूने का प्रकाशिक गुण है जिसके कारण प्रकाश का नमूने में से सीधी रेखाओं में संचरण न हो कर प्रकीर्णन और अवशोषण हो जाता है।'' आविलता मुख्यत: अविलेय पदार्थों की निलंबित और कोलॉइडी रूप में उपस्थिति के कारण उत्पन्न होती है। अविलेय पदार्थों में अकार्बनिक ठोस (जैसे मृत्तिका, गाद तथा अन्य मृदा घटक) कार्बनिक पदार्थ, सूक्ष्मजीव, पादप रेशे, काष्ठ राख (wood ash) और कोयला धूलि हो सकते हैं। ये पृष्ठीय जल के सामान्य अवयव हैं। ये जिन कारकों के कारण उत्पन्न होते हैं उनकी चर्चा भाग 5.5 में की जाएगी। मृदा की निस्यंदन क्षमता के कारण भौम जल में निलंबित पदार्थ प्राय: नहीं पाए जाते हैं। यह माना जाता है कि निलंबित पदार्थ का अंश उस निस्यंदक से गमन नहीं करेगा जिसके रंध्र का व्यास 450 नैनोमीटर है। मौसम और वर्षा के पैटर्न के अनुसार आविलता में भिन्नता होती है। उदाहरण के लिए वर्षा ऋतु में गाद की मात्रा बढ़ जाती है जैसा कि उपभाग 5.5.1 में विस्तार से चर्चा की गई है। फलस्वरूप वर्षा ऋतु में नदी का जल अधिक आविल होता है।

कोलॉइड के लिए एक प्रावस्था के कणों का आकार 1 से 1000 nm तक होना चाहिए। स्थूल निलंबनों में, कणों का आकार हमेशा 1000 nm से अधिक होता है जबकि शुद्ध समांगी विलयनों के आयाम 1 nm से कम होते हैं। कोलॉइडों तथा उनके गुणों के विषय में अधिक जानकारी के लिए आप भौतिक रसायन (सी एच ई-04) पाठ्यक्रम की इकाई 20 को पढ़ सकते हैं।

आविलता का निर्धारण सेची डिस्क (Sechhi disc) द्वारा स्वयं जल निकाय में ही किया जा सकता है। सेची डिस्क, 20-30 cm व्यास की गोलाकार डिस्क होती है जिसमें सफेद रंग अथवा सफेद तथा काले रंग के खंड होते हैं। किसी जल निकाय की आविलता मापने के लिए डिस्क को अंशांकित केबल पर जल में डाला जाता है ताकि ये केबल विलुप्त हो जाए। जिस गहराई पर विलुप्त होकर वह फिर ऊपर उठ जाती है उसे पारदर्शिता गहराई के रूप में रिकार्ड कर लिया जाता है इस प्रकार मापी गई आविलता को जैकसन आविलता मात्रकों (JTU) में व्यक्त किया जाता है। प्रयोगशाला में यंत्रीय माप के लिए नेफेलोमिती विधि का उपयोग किया जाता है जो निलंबित कणों द्वारा प्रकीर्णित प्रकाश की तीव्रता को मापता है। इस प्रकार मापी गई आविलता का मात्रक नेफेलोमितीय आविलता मात्रक (NTU) होता है। सौन्दर्यशास्त्र की दृष्टि से नगरपालिका जल आपूर्ति में आविलता का ध्यान रखा जाता है क्योंकि वह एक महत्वपूर्ण प्राचल है। इसकी चर्चा आगामी इकाई में की जाएगी। आविलता मान से जल में प्रकाश की उपलब्धता का संकेत मिलता है। यह जल में प्रकाश संश्लेषण संबंधी क्रियाओं को नियंत्रित करने वाला प्रमुख कारक है। उपभाग 5.5.3 में आप पढ़ेंगे कि प्रकाश के प्रवेश न करने से जैव द्रव्य का निम्नीकरण हो जाता है।

सौन्दर्यशास्त्र का सामान्य अर्थ है सौन्दर्य अथवा उसकी मनोवैज्ञानिक अनुक्रियाओं का अध्ययन अथवा सिद्धांत। जल के सौन्दर्यशास्त्र का अर्थ होता है स्वच्छ जल जिसकी अरुचिकर गंध अथवा नमकीन स्वाद न हो ताकि उसे पीने, खाना बनाने या मनोरंजन के लिए इस्तेमाल किया जा सके।

जल में प्रकाश के प्रवेश पर आविलता और गाढ़े रंग का प्रभाव पड़ता है।

प्रकाश के प्रवेश न करने से जल में प्रकाश संश्लेषी क्रियाओं और घुली ऑक्सीजन की मात्राओं में कमी हो सकती है। ऑक्सीजन के कम घुले होने से उसका जलीय जीवन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

MAADHYAM IAS

ii) रंग

आविलता की भांति जल के नमूने का रंग भी प्रकाश प्रवेश करने की क्षमता को निर्धारित करता है। यह जल में संदूषण का दृश्य प्रमाण प्रस्तुत करता है और उपयोग के लिए उसकी स्वीकार्यता को बतलाता है। इसके अलावा गाढ़े रंग का जल, पर्याप्त मात्रा में ऊष्मा का अवशोषण करता है। जल का दृश्य रंग उन अनेक तरंगदैर्घ्यों का परिणाम है जिनका जल

अवशोषण नहीं करता है। रंग का कारण उसमें घुले पदार्थ और उपस्थित कणिकीय पदार्थ हैं। जल में वास्तविक और आभासी दोनों प्रकार के रंगों को मापा जा सकता है। फेरिक हाइड्रॉक्साइड जैसे प्राकृतिक खनिज और कार्बनिक पदार्थ जल को वास्तविक रंग प्रदान करते हैं। निलंबित पदार्थ, प्रकाश के अपवर्तन और परावर्तन के कारण आभासी रंग प्रदान करते हैं। इसलिए प्रदूषित जल का गहरा आभासी रंग होता है। रंग मापने के लिए जल के नमूनों की उस विलयन की विभिन्न तनुताओं से तुलना की जाती है जिसमें पोटैशियम क्लोरोप्लैटिनेट (K_2PtCl_6) और क्रिस्टलीय कोबाल्टस क्लोराइड की ज्ञात मात्राएं हों। इसका मात्रक प्लैटिनम-कोबाल्ट मात्रक है। प्राकृतिक जल का रंग अत्यंत शुद्ध जल में 5 से भी कम से लेकर गाढ़े पीटमय जल में 300 तक हो सकता है।

iii) गंध

जल निकायों की गंध हाइड्रोजन सल्फाइड, अमोनिया, मर्केप्टन आदि वाष्पशील अकार्बनिक अथवा कार्बनिक यौगिकों की उपस्थिति के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। क्षयमान जलीय पादप अथवा जैव पदार्थ, जैव निम्नीकरण के समय, इन दुर्गंधयुक्त गैसों को उत्पन्न करते हैं। इसकी व्याख्या उपभाग 5.5.3 में की गई है। जल में औद्योगिक और मानव अपशिष्टों के कारण सीधे अथवा जैव क्रियाओं के फलस्वरूप गंध पैदा होती है। सामान्यत: गंध मौजूद होने का अर्थ है सामान्य से अधिक जैव क्रियाओं का होना। ऊष्णकटिबंधी जलवायु में गंध का उत्पादन बढ़ जाता है जिससे उपापचयी और क्षय-उत्पाद प्राप्त होते हैं। pH में भिन्नता का भी रासायनिक अभिक्रिया की दर पर प्रभाव पड़ता है। कार्बनिक यौगिक, अकार्बनिक रसायन, तेल और ग्रीज भी जल को गंध प्रदान करते हैं। अधिक क्लोरीनन से पीने वाले जल में क्लोरीन की गंध आती है।

पीने के जल की विलेयता की जांच करने का गंध एक सरल परीक्षण है क्योंकि मनुष्य के सूंघने की शक्ति उसके स्वाद की शक्ति से अधिक सुग्राही होती है और न्यून सान्द्रता में भी उसका बोध हो जाता है। गंध को नमूने की सर्वाधिक तनुता के रूप में मापा जाता है अथवा यह ज्ञात किया जाता है कि न्यूनतम अवगम्य गंध प्राप्त करने के लिए उसे कितनी बार तनु किया जाए। ऐसी विधियों पर अलग-अलग लोगों की व्यक्तिपरक परिवर्तिता का प्रभाव पड़ता है।

iv) स्वाद

स्वाद का प्राय: गंध से संबंध होता है। इसलिए गंध के अध्ययन से प्राप्त परिणाम स्वाद के लिए भी सही होते हैं। किन्तु कुछ मामलों में स्वाद का गंध से कोई संबंध नहीं होता है। जल में घुले खनिज पदार्थों से स्वाद प्राप्त होता है किन्तु गंध प्राप्त नहीं होती है। उदाहरणार्थ कड़वा स्वाद लोहा, मैंगनीज, ऐलुमिनियम, सल्फेट अथवा अधिक चूने की उपस्थिति के कारण हो सकता है। जल में असामान्य रूप से अधिक नमक होने से उसका स्वाद खारा हो जाता है। जल में घुली गैसें और खनिज उसे पीने योग्य बनाते हैं। यह कहा जाता है कि सबसे अधिक स्वादिष्ट जल में नाइट्रेट और कार्बोनेट होते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

v) ताप

किसी जल निकाय का ताप बहुत हद तक उसकी जैव क्रियाओं को सुनिश्चित करता है। ठंडे जल में विविध जैव प्रजातियां होती हैं। कम ताप पर जैव क्रियाएं मंद गति से होती हैं। आवश्यक पोषक तत्वों की उपस्थिति में 10^{o} C ताप वृद्धि से जैव क्रियाओं की गति दुगुनी हो जाती है। अधिक ताप पर अधिक उपापचयी दर के कारण जिन जीवों की खाद्य पदार्थों के उपयोग और पुनरुत्पादन के लिए अधिक क्षमता होती है उनकी वृद्धि होती है जबकि दूसरे

घटकर नष्ट हो जाते हैं। ताप परिवर्तन का अभिक्रियाओं की दरों में तथा रासायनिक पदार्थों के विलेयता स्तर पर भी प्रभाव पड़ता है। प्राय: जिन रासायनिक अभिक्रियाओं में ठोस विलीन हो जाते हैं उनकी गति, ताप वृद्धि के साथ बढ़ जाती है। दूसरी ओर ताप वृद्धि से गैसों की विलेयता कम हो जाती है। किसी जल निकाय में जलीय जीवन और जैव अपयचन, घुली हुई ऑक्सीजन की पर्याप्त आपूर्ति पर निर्भर करते हैं इसलिए ऑक्सीजन विलेयता में कमी, वांछित नहीं है।

ताप के साथ जल के घनत्व में परिवर्तन के कारण तालाबों और जलाशयों में स्तरण (stratification) हो जाता है। आपको स्तरण की आरंभिक जानकारी पिछली इकाई के भाग 4.6 में दी गई थी। स्तरण का अर्थ है सरोवरों, तालाबों और जलाशयों आदि स्थिर जल निकायों में पृथक स्तरों का बनना। सौर विकिरण के कारण निचले स्तरों की अपेक्षा ऊपरी स्तर अधिक गरम हो जाता है। ठंडे जल की अपेक्षा गरम जल का घनत्व कम होता है इसलिए विभिन्न स्तर, परस्पर मिश्रित नहीं होते हैं और उनके बीच तापांतर बहुत रहता है। फलस्वरूप इन स्तरों के रासायनिक और जैव अभिलक्षण भिन्न होते हैं। निचले स्तरों की अपेक्षा ऊपरी स्तरों में घुली हुई ऑक्सीजन की मात्रा कम होती है क्योंकि ताप की वृद्धि के साथ ऑक्सीजन गैस की विलेयता घटती जाती है। यदि स्थिर जल निकाय में जलीय पादप और शैवाल अधिक हों तो दिन में ऊपरी स्तर में घुली ऑक्सीजन की मात्रा अधिक होगी। इसका कारण ऊपरी स्तर पर पहुंचने वाले सौर विकिरण की तीव्रता के फलस्वरूप होने वाला प्रकाश संश्लेषण है। इसके अलावा इस स्तर में विद्यमान रासायनिक प्रजातियां उपचयित रूप में होती हैं। इसके विपरीत दिन में निचले स्तरों के जल में घुली ऑक्सीजन कम होती है क्योंकि कम प्रकाश तीव्रता के कारण प्रकाश संश्लेषण की क्रिया कम होती है। इसके अलावा निम्न स्तरों में रासायनिक प्रजातियां अपचित रूप में होती हैं। ध्यान देने की बात है कि स्थिर जल निकाय के उच्चतर स्तरों पर विलीन ऑक्सीजन की अधिक मात्रा केवल दिन के समय पाई जाती है। रात के समय स्थिति भिन्न होती है क्योंकि जलीय प्रजातियां केवल श्वसन करती हैं जिसमें ऑक्सीजन की खपत होती है। उल्लेखनीय है कि ताप की वृद्धि के साथ जल का पृष्ठ तनाव (surface tension) और श्यानता (viscosity) कम हो जाते हैं। आइए, अब इन तीन अभिलक्षणों का जल की वैद्युत चालकता पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करें।

आइए देखें कि ताप किस प्रकार जल के घनत्व को प्रभावित करता है। जल का घनत्व 273K से 277K तक बढ़ता है तथा फिर कम हो जाता है, द्रवों में यह एक अनूठी परिघटना है। एक अधिकतम मान का होना विपरीत प्रभावों के होने को दर्शाता है। ताप की वृद्धि का परिणाम विस्तार के कारण आयतन की वृद्धि होता है, इसलिए घनत्व कम हो जाना चाहिए। लेकिन 273K तथा 277K के बीच विस्तार के कारण होने वाली वृद्धि की अपेक्षा हाइड्रोजन आबंध के टूटने से आयतन में कमी होती है। इस ताप पर नेट परिणाम आयतन में कमी तथा घनत्व में वृद्धि होता है।

vi) वैद्युत चालकता

किसी जल निकाय की वैद्युत चालकता का संबंध उसमें घुले ठोस पदार्थों से होता है। क्योंकि इस प्राचल को आसानी से मापा जा सकता है, इसलिए यह जल की गुणवत्ता की जांच करने का उपयोगी सूचक है। शुद्ध जल की वैद्युत चालकता बहुत कम होती है। ताप में वृद्धि से शुद्ध जल की चालकता 298 K पर $4.5 \times 10^{-8}\ \mu S\ cm^{-1}$ से बढ़कर 359 K पर $7.6 \times 10^{-6}\ \mu S\ cm^{-1}$ हो जाती है जिसका कारण इस प्रकार है। ताप की वृद्धि के साथ जल के घनत्व, पृष्ठ तनाव और श्यानता में होने वाली कमी के संयुक्त प्रभाव से धनायनों और ऋणायनों की गतिशीलता में वृद्धि होती है। इसका अर्थ हुआ कि अति शुद्ध जल के H^+ और OH^- आयनों की गतिशीलता में वृद्धि होती है। इसके कुल प्रभाव के कारण जल की चालकता और इसलिए उसका संक्षारक अभिलक्षण, सामान्य ताप की अपेक्षा उच्च ताप पर अधिक होता है। यह पहलू ऊष्मीय ऊर्जा संयंत्रों (thermal power plants) के लिए काफी महत्वपूर्ण है। वैद्युत चालकता के माप से जल निकायों के वर्गीकरण में भी सहायता मिलती है जो गुणवत्ता पर आधारित होता है जैसा कि सारणी 5.1 में दिखाया गया है। वैद्युत चालकता की माप के सैद्धांन्तिक पहलुओं का उल्लेख इस पाठ्यक्रम की इकाई 18 के भाग 18.5 में किया गया है। प्रयोग 2 में चालकता की माप संबंधी प्रक्रिया की चर्चा की गई है।

वैद्युत चालकता माइक्रोसीमेन्ज प्रति सेन्टीमीटर ($\mu S\ cm^{-1}$) अथवा माइक्रोमोज प्रति सेन्टीमीटर ($\mu mhos\ cm^{-1}$) में मापी जाती है

$1\ \mu S\ cm^{-1} = 1\ \mu mhos\ cm^{-1}$

जल की कम वैद्युत चालकता और अनुप्रयुक्त विद्युत क्षेत्र के अंतर्गत घुले लवणों के आयनों के संचलन का उपयोग वैद्युत अपोहन में किया जाता है – (देखिए, इकाई 4 का भाग 4.8), ये जल शोधन की विधि है।

MAADHYAMIAS

सामान्यत: वैद्युत चालकता को घुले हुए ठोस पदार्थों के रूप में अभिव्यक्त करने के लिए एक परिवर्ती कारक को लगाना पड़ता है। नमूने के प्रकार पर निर्भर करते हुए यह कारक 0.55 से 0.9 तक हो सकता है। वैद्युत चालकता के मापन द्वारा घुले हुए ठोसों का आकलन बहिस्राव विसर्जन की गुणवत्ता अथवा मल उपचार संयंत्र (sewage treatment plant) या बहि:स्राव उपचार संयंत्र (effluent treatment plant) में से निकलने वाले जल को जांचने में उपयोगी विधि है।

सारणी 5.1 : विशिष्ट चालकता के प्रति जल गुणवत्ता

विशिष्ट चालकता/$\mu S\ cm^{-1}$	जल गुणता
250 से कम	श्रेष्ठ
250 – 750	उत्तम
750 – 2000	अनुमेय
2000 – 3000	उपचार की आवश्यकता
> 3000	अधिकांश कार्यों के लिए अनुपयुक्त

(स्रोत : वाटर केमिस्ट्री - इंडस्ट्रियल एण्ड पावर स्टेशन वाटर ट्रीटमेंट, लेखक के.एस. वैंकटेश्वरलू, न्यू ऐज इंटरनेशनल, 1996, नई दिल्ली, पृष्ठ 11)

बोध प्रश्न 1

ताप की वृद्धि का जल के अभिलक्षणों पर क्या प्रभाव पड़ता है?

....

....

....

5.3 जल निकायों के रासायनिक अभिलक्षण

इस भाग में दोनों गुणात्मक और मात्रात्मक शब्दों में जल निकायों के रासायनिक अवयवों की चर्चा की जाएगी। पहले मात्रात्मक अभिलक्षणों के लिए प्रयुक्त मात्रकों पर ध्यान केन्द्रित करेंगे। विभिन्न स्रोतों से लिए गए जल के नमूनों में अल्प मात्राओं में विभिन्न विलेय अवयव होते हैं। **सभी प्रयोगात्मक कार्यों के लिए जल के नमूनों को विभिन्न अवयवों का तनु विलयन माना जा सकता है।** याद रखने की बात है कि मोलरता (M) सुविधाजनक मात्रक नहीं है क्योंकि जल के नमूनों में विलेयों की मात्राएं बहुत कम होती हैं। विभिन्न अवयवों के संबंध में जल के नमूने की सान्द्रता को प्राय: भाग प्रति दस लाख parts per million (ppm अथवा भाग प्रति अरब parts per billion (ppb) मात्रकों में व्यक्त किया जाता है। नीचे दिए गए विचार विमर्श से इन मात्रकों की परिभाषा देने तथा मोलरता और मोल अंश को भाग प्रति दस लाख मात्रक में रूपांतरित करने के लिए प्रयुक्त चरणों को समझने में सहायता मिलेगी। विलयनों की सान्द्रता को व्यक्त करने के लिए प्रयुक्त मात्रकों की अच्छी जानकारी के लिए आप भौतिक रसायन पाठ्यक्रम (सीएचई-04) की इकाई 10 के भाग 10.3 का अध्ययन करें।

यदि अवयवों की सान्द्रता कम हो तो जल के नमूने का घनत्व 1 ग्राम घन सेमी$^{-1}$ माना जा सकता है। ऐसा मानने से जल की मात्रा को किलोग्राम मात्रक के स्थान पर लीटर मात्रक में व्यक्त करने में सहायता मिलती है क्योंकि,

MAADHYAM IAS

1 किलोग्राम जल ≡ 1 लीटर जल

दूसरे शब्दों में 1 लीटर (अर्थात् 1000 घनसेमी) जल का (विलयन) द्रव्यमान 1 किलोग्राम (अर्थात् 1000 ग्राम) होता है।

- **भाग प्रति दस लाख (ppm)**

एक भाग प्रति दस लाख का अर्थ है किसी विलयन के (द्रव्यमान द्वारा) दस लाख भागों में घुले

अवयव के (m)1 भाग का उपस्थित होना।

1 भाग प्रति दस लाख = 1 मिलीग्राम/किलोग्राम (1mg/kg)
= 10^{-3}g/litre
= 1 mg/litre

- **भाग प्रति अरब (ppb)**

भाग प्रति अरब की परिभाषा इस प्रकार दी जाती है :

1 भाग प्रति अरब = 1 माइक्रोग्राम/किलोग्राम
= 1 माइक्रोग्राम/लीटर
= 10^{-6} g/litre
= 1 μg/litre

उल्लेखनीय है कि माइक्रो का अर्थ है 10^{-6} भाग। इसे यूनानी प्रतीक, μ से भी निरूपित किया जा सकता है जिसका उच्चारण 'म्यू' (mu) है।

- नीचे दिए गए संबंध द्वारा भी मोलरता को भाग प्रति दस लाख में परिवर्तित किया जा सकता है।

$$\text{मोलरता} = \frac{\text{घटक के मोलों की संख्या}}{\text{विलयन का आयतन (लीटर में)}}$$

$$= \frac{\text{घटक का द्रव्यमान (ग्राम में)}}{\text{घटक का मोलर द्रव्यमान (ग्राम मोल}^{-1}\text{ में)}} \times \frac{1}{(\text{विलयन का आयतन (लीटर में)})}$$

इसलिए,

$$\frac{\text{घटक का द्रव्यमान (ग्राम में)}}{\text{घटक का मोलर द्रव्यमान (लीटर में)}}$$

$$= (\text{मोलरता}) \times \left(\text{ग्राम मोल}^{-1}\text{ में घटक का मोलर द्रव्यमान}\right)$$

यदि विलयन (अर्थात् जल के नमूने) का आयतन 1 लीटर हो तो हम निम्न प्रकार लिख सकते हैं :

1 लीटर विलयन में घटक का द्रव्यमान (ग्राम में)
$= (\text{मोलरता}) \times [\text{ग्राम मोल}^{-1}\text{ में घटक का मोलर द्रव्यमान}]$

1 लीटर विलयन में घटक का द्रव्यमान (मिलीग्राम में)
$= (\text{मोलरता}) \times [\text{ग्राम मोल}^{-1}\text{ में घटक का मोलर द्रव्यमान}] \times 1000$

अर्थात् भाग प्रति दस लाख में सान्द्रता
$= (\text{मोलरता}) \times [\text{ग्राम मोल}^{-1}\text{ में घटक का मोलर द्रव्यमान}] \times 1000$ .... (5.1)

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

- जलीय विलयन में विलेय घटक के मोल अंश को भाग प्रति दस लाख में परिवर्तित करने के लिए निम्नलिखित चरणों का उपयोग किया जा सकता है

विशेष विलेय घटक का मोल अंश (x_i) =

$$\frac{(\text{विलेय के मोलों की संख्या i})}{\{(\text{विलायक के मोलों की संख्या}) + (\text{सभी विलेयों के मोलों की कुल संख्या})\}} \quad \text{.... (5.2)}$$

समीकरण 5.3 में x_i और n_i विलेय घटक i के क्रमश: मोल अंश और मोलों की संख्या को निर्दिष्ट करते हैं जबकि n_{H_2O} विलायक, जल के मोलों की संख्या को निर्दिष्ट करता है।

क्योंकि जल का नमूना, तनु विलयन है अत: जल के मोलों की संख्या की तुलना में सभी विलेय घटकों के मोलों की कुल संख्या नगण्य होगी। अत: समीकरण 5.2 को इस प्रकार लिख सकते हैं :

$$\therefore \quad x_i = \frac{n_i}{n_{H_2O}} \qquad .... (5.3)$$

यदि 1 लीटर विलयन लें तो वह, जैसा कि पहले बताया गया है, 1000 ग्राम जल के तुल्य होगा।

$$\therefore \quad n_{H_2O} = \frac{\text{जल का द्रव्यमान}}{\text{जल का मोलर द्रव्यमान}} = \frac{1000 \text{ ग्राम}}{18 \text{ ग्राम मोल}^{-1}} = 55.6 \text{ मोल}$$

समीकरण 5.3 में इसके उपयोग से,

$$\left.\begin{array}{l}\text{1 लीटर विलयन में घटक i} \\ \text{के मोलों की संख्या } (n_i)\end{array}\right\} = n_{H_2O}\, x_i = 55.6\, x_i$$

अर्थात्, विलयन की मोलरता = 55.6 x_i मोल लीटर$^{-1}$

समीकरण 5.1 में इस संबंध का उपयोग करने से,

विलयन में घटक की सान्द्रता (pprn) में

= (55.6 x_i) [घटक का मोलर द्रव्यमान (ग्राम मोल$^{-1}$ में)] × 1000

= (55.6 × 10^4 x_i) [घटक का मोलर द्रव्यमान (ग्राम मोल$^{-1}$ में)] .... (5.4)

उदाहरण 1

जल के एक नमूने में घुली ऑक्सीजन की सान्द्रता 3.125 × 10^{-4} M पाई गई। घुली ऑक्सीजन की मात्रा को ppm में व्यक्त कीजिए। O_2 का मोलर द्रव्यमान 32 ग्राम मोल$^{-1}$ है।

समीकरण 5.1 के उपयोग से,

घुली ऑक्सीजन की सान्द्रता = 3.125 × 10^{-4} × 32 × 1000 ppm

= 10 pprn

उदाहरण 2

यदि जल में क्लोराइड आयन की मोलरता 'M_2' से व्यक्त की जाए तो उस सामान्य व्यंजक की व्युत्पत्ति कीजिए जिसके द्वारा ppm मात्रक में क्लोराइड आयन की सान्द्रता परिकलित की जा सके। समीकरण 5.1 का उपयोग कीजिए। क्लोराइड का मोलर द्रव्यमान 35.45 ग्राम मोल$^{-1}$ है,

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

समीकरण 5.1 के उपयोग से,

जल के नमूने में क्लोराइड आयन की सान्द्रता = M_2 × 35.45 × 1000 pprn

= 3.545 × 10^4 M_2 ppm

इस भाग में बाद में समीकरण 5.20 की व्युत्पत्ति करते समय आप इस संबंध को प्राप्त करेंगे।

उदाहरण 3

जल **if** घुली ऑक्सीजन का मोल अंश 5.62×10^{-6} है। ppm मात्रक **if** उसकी सान्द्रता परिकलित कीजिए। ऑक्सीजन का मोलर द्रव्यमान 32 ग्राम मोल$^{-1}$ है।

समीकरण 5.4 से,

$$\text{घुली ऑक्सीजन की सान्द्रता} = 5.56 \times 10^4 \times 5.62 \times 10^{-6} \times 32 \text{ ppm}$$
$$= 10 \text{ ppm}$$

भाग 5.6 में वर्णित उदाहरण 4 में इस परिकलन का अनुप्रयोग किया जाएगा।

आपको उपर्युक्त सान्द्रता मात्रकों से परिचित होने की आवश्यकता है। विशेष रूप से आपका ध्यान समीकरण 5.1 की ओर आकर्षित किया जाता है क्योंकि मोलरता को ppm में परिवर्तित करने के लिए इसका उपयोग बहुत बार किया जाएगा। आइए, अब जल के नमूनों के निम्नलिखित रासायनिक प्राचलों की चर्चा करें। जल गुणवत्ता के प्रबंधन में इनका महत्व है।

i) कुल विलीन ठोस (Total dissolved solids (TDS)

जलीय चक्र (hydrological cycle) के कारण घुले पदार्थों **if** मुख्यत: कैल्शियम, मैग्नीशियम, सोडियम और पोटैशियम के बाइकार्बोनेट, कार्बोनेट, सल्फेट, क्लोराइड, नाइट्रेट और फॉस्फेट होते हैं। साथ ही, आयरन, मैंग्नीज और अन्य खनिजों की अति अल्प मात्राएं भी होती हैं। इसके अलावा मनुष्यों के कार्यकलापों से भी जल निकायों को घुले पदार्थ प्राप्त होते हैं। इसका विस्तृत वर्णन उपभाग 5.5.1 और 5.5.2 में किया गया है। TDS मानों पर आधारित जल निकायों के वर्गीकरण की एक विधि सारणी 5.2 में दी गई है।

सारणी 5.2 : जल गुणवत्ता के प्रति कुल घुले ठोस पदार्थ

जल गुणवत्ता	TDS/ppm
ताजा	1000 से कम
अल्प लवणीय	1000 – 3000
मंद लवणीय	3000 – 10,000
बहुत लवणीय	10,000 – 35,000
लवण जल (brine)	> 35000

(स्रोत : के.एस. वैंकटेश्वरलू, पृष्ठ 6; अन्य विवरण सारणी 5.1 के अनुसार)

निस्यंदित जल के ज्ञात आयतन का उद्वाष्पन कर और अवशिष्ट का भार ज्ञात कर TDS का आकलन किया जाता है। जैसा कि पहले बताया गया है घुले ठोस पदार्थों की सान्द्रता वैद्युत चालकता के रूप में भी मापी जा सकती है

जैसा कि बताया जा चुका है TDS और वैद्युत चालकता का परस्पर संबंध होता है। इकाई 6 के भाग 6.2 में आप **TDS** का मानव स्वास्थ्य, कृषि और उद्योग पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करेंगे।

MAADHYAM IAS

ii) क्षारता

क्षारता, जल में आयनों की वह मात्रा है जो H^+ आयनों को उदासीन करती है। इस प्रकार क्षारता, जल में विलेयों की क्षमता की माप होती है जो मिलाए गए अम्ल को उदासीन करती है। आपको ज्ञात होना चाहिए कि क्षारता (alkalinity) और क्षारकता (basicity) में भेद होता है। क्षारकता, **तीव्रता कारक** (intensity factor) होता है और विलयन के pH द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है। क्षारता **क्षमता कारक** (capacity factor) होता है और निर्दिष्ट करता है कि उदासीनीकरण प्रक्रिया के लिए कोई निकाय कितने H^+ आयन ग्रहण कर सकता है। आइए,

एक स्कंदक (coagulant) $Al_2(SO_4)_3 . 18H_2O$ के द्रव्यमान के परिकलन की विधि को देखें जो एक क्षारीय जल निकाय में से कोलॉइडी एवं निलंबित अपद्रव्यों को निकालने के लिए उपयोग में लाई जाती है। जलयोजित ऐलुमिनियम आयन अम्लीय होता है। जल में मिलाने पर वह क्षारक के साथ क्रिया कर जिलेटिनी ऐलुमिनियम हाइड्रॉक्साइड बनाता है जो निलंबित पदार्थ के साथ नीचे बैठ जाता है।

$$[Al(H_2O)_6]^{3+}(aq) + 3OH^-(aq) \rightarrow Al(OH)_3(s) + 6H_2O(l) \quad .... (5.5)$$

स्कंदन के लिए आवश्यक ऐलुमिनियम सल्फेट की मात्रा को जल की क्षारता के मान के आधार पर परिकलित किया जा सकता है क्योंकि यह एक प्रकार की अम्ल-क्षारक अभिक्रिया होती है।

जल की क्षारता के मान से निलंबित और कोलॉइडी अपद्रव्यों को पृथक करने के लिए मिलाए जाने वाले स्कंदक की मात्रा को निश्चित करने में सहायता मिलती है। क्षारता, जलीय जीवन को सहायता प्रदान करती है क्योंकि वह जलीय निकाय को बफरण क्षमता प्रदान करती है। जैवनिम्नीकरण अथवा पर्यावरणीय प्रदूषण (जैसे अम्ल वृष्टि) के कारण निर्मित अम्लों के साथ रसायनत: क्रिया कर क्षारता, जलीय निकाय की रक्षा करती है।

जल निकाय में क्षारता प्राय: HCO_3^-, CO_3^{2-} और OH^- आयनों के कारण उत्पन्न होती है। क्षारता के अन्य अल्प मात्रिक अवयव $HSiO_3^-, HPO_4^{2-}, HS^-$ और NH_3 आदि संयुग्मी क्षारक हैं। कभी-कभी कार्बनिक अम्लों के संयुग्मी क्षारक भी उपस्थित रहते हैं। ये आयन प्राय: अपक्षयण अभिक्रिया अथवा मानव गतिविधियों से प्राप्त होते हैं। HCO_3^-, CO_3^{2-} और OH^- आयनों के निर्माण की व्याख्या :

i) इस भाग के समीकरणों 5.21 से 5.25 में, और

ii) भाग 5.7 के समीकरण 5.56 और 5.64 से 5.68 में की गई है।

आप देख सकते हैं कि ये तीन आयन खनिजों की अपक्षयण अभिक्रिया और CO_2 के विलयन से प्राप्त होते हैं। आप जानते हैं कि वायुमंडल, जलीय प्रजातियों के श्वसन तथा मृत प्रजातियों और कार्बनिक पदार्थों के क्षय से जलीय निकायों में CO_2 उत्पन्न होती है। HS^- और NH_3 क्षारकों के निर्माण की व्याख्या उपभाग 5.5.3 में की गई है। पृष्ठीय जल और भौमजल में विभिन्न घुले हुए अवयवों में HCO_3^- सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।

चूने के पत्थर में पर्याप्त कार्बोनेट होते हैं। चूने के पत्थर वाले प्रदेशों में बहने वाले जल के नमूनों में पर्याप्त क्षारता होती है और बफरण क्षमता भी अच्छी होती है। दूसरी ओर ग्रेनाइट का क्षारता पैदा करने में कोई योगदान नहीं होता है। इसलिए जिन प्रदेशों में पर्याप्त ग्रेनाइट होता है वहां जल निकायों में अल्प क्षारता और बहुत कम बफरण क्षमता होती है।

इस पाठ्यक्रम के प्रयोग **8** में किसी जल के नमूने में OH^-, CO_3^{2-} और HCO_3^- आयनों को निर्धारित करने की कार्यविधि की चर्चा की गई है। यह सीएचई-03 (L) पाठ्यक्रम के प्रयोग 11 में बताए गए नियम पर आधारित है। **फीनॉल्फथेलीन अन्त्य बिन्दु के संगत, pH 8.3 पर OH- का उदासीनीकरण और CO_3^{2-} का HCO_3^- में अर्ध-उदासीनीकरण &%। अर्थात् OH^- का पूर्ण उदासीनीकरण और CO_3^{2-} का अर्ध-उदासीनीकरण होता है। इनकी तुलना में मेथिल आरेन्ज अन्त्य बिन्दु के संगत pH 4.5 पर OH^-, CO_3^{2-} और HCO_3^- तीनों आयन उदासीनीकृत हो जाते हैं,** अभिक्रियाओं को संक्षेप में इस प्रकार लिखा जा सकता है :

$$\left.\begin{array}{l} OH^- + H^+ \rightleftharpoons H_2O \\ CO_3^{2-} + H^+ \rightleftharpoons HCO_3^- \end{array}\right\} \text{फीनॉल्फथेलीन सूचक के साथ अन्त्य बिन्दु (फीनॉल्फथेलीन क्षारता)} \Bigg\} \text{मेथिल ऑरेन्ज सूचक के साथ अन्त्य बिन्दु (मेथिल आरेन्ज क्षारता)} \quad .... (5.6)$$

$$HCO_3^- + H^+ \rightleftharpoons H_2CO_3 \rightleftharpoons H_2O + CO_2$$

फीनॉल्फथेलीन अन्त्य बिन्दु के संगत परिकलित क्षारता को **फीनॉल्फथेलीन क्षारता (*P*)** कहते हैं। उसी प्रकार मेथिल आरेन्ज बिन्दु के संगत परिकलित क्षारता को **मेथिल आरेन्ज क्षारता** अथवा **कुल क्षारता (*T*)** कहते हैं। क्षारताओं का परिकलन, निम्नलिखित पदों के अनुसार किया जाता है।

MAADHYAM IAS

क) *P* और *T* का परिकलन

P और *T* के मान परिकलित करने के लिए जल के नमूने का मानक हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के साथ अनुमापन किया जाता है जिसमें उपर्युक्त सूचकों का उपयोग किया जाता है। क्षारता मानों को प्रायः $CaCO_3$ की सान्द्रता के रूप में व्यक्त किया जाता है। आप जानते हैं कि $CaCO_3$ के एक मोल को HCl के 2 मोल उदासीन करते हैं जैसा कि निम्न समीकरण में दिखाया गया है :

$$CaCO_3 + 2HCl \rightarrow CaCl_2 + H_2O + CO_2 \quad \text{.... (5.7)}$$

इसलिए क्षारता के मोलरता समीकरण को इस प्रकार लिख सकते हैं,

$$M_1V_1 = 2M_2V_2$$

जिसमें M_1 और V_1 HCl की मोलरता और आयतन है। M_2, जल के नमूने की $CaCO_3$ के रूप में, क्षारता की मोलरता है और V_2 जल के नमूने का आयतन है। फीनॉल्फथेलीन और मेथिल ऑरेन्ज क्षारता के मानों को परिकलित करने के लिए समीकरण 5.8 का उपयोग किया जाता है।

$$M_2 = \frac{M_1V_1}{2V_2} \quad \text{.... (5.8)}$$

समीकरण 5.8, मोलरता के रूप में $CaCO_3$ की सान्द्रता बतलाता है। $CaCO_3$ का मोलर द्रव्यमान 100 ग्राम मोल$^{-1}$ है। ppm मात्रक में मान प्राप्त करने के लिए आप समीकरण 5.1 का उपयोग कर सकते हैं।

$$\text{क्षारता (ppm में)} = M_2 \times 100 \times 10^3 = 10^5 M_2$$

M_2 के लिए समीकरण 5.8 का उपयोग करने पर

$$\text{क्षारता (ppm में)} = \frac{10^5 \times \text{HCl की मोलरता} \times \text{HCl का आयतन}}{2 \times \text{जल के नमूने का आयतन}} \quad \text{.... (5.9)}$$

जल के नमूने का pH 8.3 तक कम करने के लिए आवश्यक अम्ल की मात्रा के तुल्य, क्षारता अंश को फीनॉल्फथेलीन क्षारता कहते हैं।

जल के नमूने का pH 4.5 तक कम करने के लिए आवश्यक अम्ल की मात्रा के तुल्य, क्षारता अंश को कुल क्षारता अथवा मेथिल आरेन्ज क्षारता कहते हैं।

जल की फीनॉल्फथेलीन क्षारता (*P*) को $CaCO_3$ के ppm मात्रक के रूप में निर्धारित किया जा सकता है जिसके लिए समीकरण 5.9 में फीनॉल्फथेलीन सूचक के साथ अनुमापन के लिए आंकडों का उपयोग किया जाता है।

फीनॉल्फथेलीन क्षारता (*P*) (ppm 4)

$$= \frac{10^5 (\text{HCl की मोलरता})(\text{फीनॉल्फथेलीन अन्त्य बिन्दु पर HCl का आयतन})}{2 \times \text{जल के नमूने का आयतन}} \quad \text{....(5.10)}$$

उसी प्रकार समीकरण 5.11 से मेथिल आरेन्ज क्षारता (*T*) ज्ञात की जा सकती है। मेथिल आरेन्ज सूचक के साथ अनुमापन का मान, प्रतिस्थापित किया जाता है।

मेथिल ऑरेन्ज क्षारता (*T*) (ppm if)

$$= \frac{10^5 (\text{HCl की मोलरता})(\text{मेथिल आरेन्ज अन्त्य बिन्दु के लिए HCl का आयतन})}{2 \times \text{जल के नमूने का आयतन}} \quad \text{.... (5.11)}$$

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

ध्यान दें

समीकरणों 5.10 और 5.11 को प्रयुक्त करते समय सान्द्रता के लिए मोलरता अर्थात्, मोल प्रति लीटर (M) और आयतन के लिए घन सेन्टीमीटर (cc) मात्रकों का उपयोग किया जाता है। परिणाम ppm मात्रक में व्यक्त किया जाता है।

(ख) जल के नमूने के प्रकार को नियत करना

हम फीनॉल्फथेलीन क्षारता और मेथिल ऑरेन्ज क्षारता का OH^-, CO_3^{2-} और HCO_3^- क्षारताओं के साथ संबंध ज्ञात कर सकते हैं। आइए, OH^-, CO_3^{2-} और HCO_3^- की क्षारताओं को क्रमशः क, ख और ग से निर्दिष्ट करें।

क्षारता को मुख्यतः कार्बोनेट, बाइकार्बोनेट और हाइड्रॉक्साइड आयनों की उपस्थिति का सूचक माना जाता है।

i) यदि फीनॉल्फथेलीन क्षारता शून्य न हो तो कार्बोनेट आयन उपस्थित रहता है। (अर्थात्, $pH > 8.3$) तथा
क) फीनॉल्फथेलीन क्षारता कुल क्षारता के आधे से कम अथवा उसके आधे के बराबर हो
अथवा
ख) फीनॉल्फथेलीन क्षारता कुल क्षारता के आधे से अधिक किन्तु उससे (कुल क्षारता से) कम हो तो कार्बोनेट आयन उपस्थित रहता है।

ii) यदि फीनॉल्फथेलीन क्षारता, कुल क्षारता के आधे से अधिक हो अथवा कुल क्षारता के बराबर हो तो हाइड्रॉक्साइड आयन उपस्थित रहता है।

iii) यदि फीनॉल्फथेलीन क्षारता शून्य हो अथवा कुल क्षारता के आधे से कम हो तो बाइकार्बोनेट आयन उपस्थित रहता है।

सारणी 5.3 : ***P*** और ***T*** के रूप में OH^-, CO_3^{2-} और HCO_3^- क्षारताएं

प्रकार	***P*** और ***T*** का आपेक्षिक मान	OH^- (क)	CO_3^{2-} क्षारता (ख)	HCO_3^- क्षारता (ग)
स्थिति (i)	$P = O$ और $T > 0$	0	0	T
स्थिति (ii)	$P < ½ T$	0	$2P$	$T - 2P$
	(अथवा $T - 2P > 0$)			
(iii)	$P = T/2$	0	$2P$	0
	(अथवा $2P = T$)			
स्थिति **(iv)**	$P > ½ T$	$2P - T$	$2(T - P)$	0
	(अथवा $2P > T$)			
स्थिति (v)	$P = T$	T	0	0

समीकरण 5.6 से,

फीनॉल्फथेलीन क्षारता (P) = OH- क्षारता + (CO_3^{2-} क्षारता)/2 ....*(5.12)*

= (क + ख/2)

मेथिल ऑरेन्ज क्षारता अथवा कुल क्षारता (*T*) = $\left\{ \begin{array}{l} OH^- \text{ क्षारता } + \\ CO_3^{2-} \text{ क्षारता } + \\ HCO_3^- \text{ क्षारता} \end{array} \right\}$ = (क + ख + ग) ....(5.13)

MAADHYAM IAS

इस पाठ्यक्रम के प्रायोगिक भाग के अंतर्गत प्रयोग 8 को हम विस्तार से पढ़ेंगे कि सारणी 5.3 में दी गई प्रविष्टियों को प्राप्त करने के लिए समीकरणों 5.6, 5.12 और 5.13 का उपयोग कैसे किया जाता है। सारणी 5.3 के स्तंभ 2 की सहायता से *P* और *T* मानों की तुलना द्वारा जल के नमूने की किस्म के बारे में निर्णय लिया जाता है।

ग) OH^-, CO_3^{2-} और HCO_3^- आयनों के कारण उत्पन्न क्षारताओं का परिकलन

सारणी 5.3 में स्तंभ 3, 4 और 5 का उपयोग कर आप OH^-, CO_3^{2-} और HCO_3^- आयनों के कारण उत्पन्न क्षारताओं का परिकलन कर सकते हैं।

आइए, उपर्युक्त चरणों को संक्षेप में लिखें। क्षारताओं का परिकलन निम्नलिखित चरणों के अनुसार करें :

i) मेथिल ऑरेन्ज और फीनॉल्फथेलीन सूचकों का उपयोग करते हुए प्रयोग 8 में दी गई विधि के अनुसार जल के नमूने का मानकीकृत HCl के सम्मुख अनुमापन कीजिए।

ii) समीकरणों 5.10 और 5.11 का उपयोग कर P और T का मान परिकलित कीजिए।

iii) P और T मानों की तुलना कीजिए और सारणी 5.3 के स्तंभ (2) की सहायता से जल के नमूने की किस्म को निर्धारित कीजिए (स्थिति (i) से स्थिति (v) तक)।

iv) क्षारताओं का परिकलन करने के लिए उनके संगत स्तंभ 3, 4 और 5 में दी गई सूचना का उपयोग कीजिए।

pH माप के नियमों की चर्चा, इकाई 18 के भाग 18.2 और 18.3 में की गई है। प्रयोग 2 में pH निर्धारण की विधि दी गई है।

pH और OH^-, CO_3^{2-} तथा HCO_3^- आयनों की आपेक्षिक सान्द्रताओं के परस्पर संबंध को नीचे दिया गया है।

pH > 10; कार्बोनेट और हाइड्रॉक्साइड की पर्याप्त मात्राओं के कारण उत्पन्न क्षारता। हाइड्रॉक्साइड की मात्रा में pH के साथ वृद्धि होती है।

pH = 8.3 से 10; बाइकार्बोनेट और कार्बोनेट के कारण उत्पन्न क्षारता।

pH < 8.3; केवल बाइकार्बोनेट के कारण उत्पन्न क्षारता।

pH < 7; कार्बोनिक अम्ल अथवा कार्बन डाइऑक्साइड स्पीशीज़ बढ़ती जाती है।

pH = 4.3; कार्बोनिक अम्ल अथवा कार्बन डाइऑक्साइड स्पीशीज़ की प्रधानता रहती है।

इन पहलुओं को चित्र 5.1 में निर्दिष्ट किया गया है।

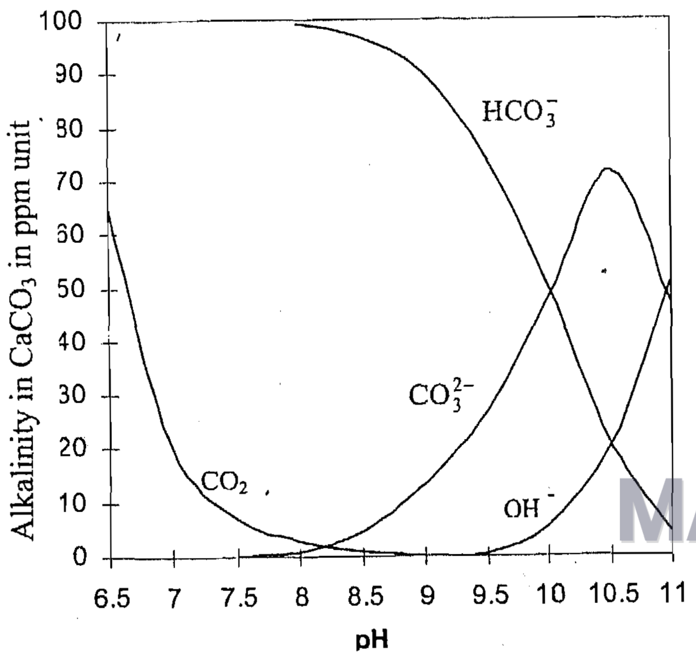

चित्र 5.1: pH और CO_2, HCO_3^-, CO_3^{2-} और OH^- की सान्द्रताओं के परस्पर संबंध, जल के लिए मानों को 25°C पर 100 पी.पी.एम. की कुल क्षारता के साथ परिकलित किया गया है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

जहां तक पृष्ठीय जल का प्रश्न है, उसका pH 6 और 8.5 के बीच होता है, बाइकार्बोनेट आयन की प्रधानता होती है और CO_3^{2-} आयन सामान्यतया नहीं होता है। भूमि के अंदर

गहराई में CO_2 सान्द्रता और उसका आंशिक दाब दोनों, वायुमंडल की वायु की अपेक्षा बहुत अधिक होते हैं। हेनरी के नियम के अनुसार यदि कार्बन डाइऑक्साइड का आंशिक दाब अधिक हो तो जल में उसकी विलेयता भी अधिक होती है। ऐसी मृदाओं में से बहने वाले जल में अधिक CO_2 घुल जाती है जिससे CO_3^{2-} और HCO_3^- आयनों की सान्द्रताएं बढ़ जाती हैं। पृष्ठीय जल की तुलना में भौमजल में बाइकार्बोनेटों और कार्बोनेटों की पर्याप्त सान्द्रता होती है।

गैसों की विलेयता के संबंध में हेनरी के नियम के उपयोग को समझने के लिए आप इस इकाई के भाग 5.6 का अध्ययन करें।

iii) सल्फेट

वर्षा जल में सल्फेट सान्द्रता केवल 2 ppm होती है। जल निकायों में सल्फेट आयनों के पाए जाने के निम्नलिखित कारण हैं :

- अधिकांश अवसादी शैलों में प्रायः सल्फेट युक्त खनिज पाए जाते हैं। अपक्षयण प्रक्रम में उनमें से अनेक जल में घुल जाते हैं। जिप्सम ($CaSO_4$) इसका उदाहरण है।
- जल निकायों में अधिकांश सल्फेट, सल्फाइड अयस्कों के ऑक्सीकरण और उनके घुलने से प्राप्त होते हैं। पायराइट (FeS_2) के ऑक्सीकरण से आयरन सल्फेट और सल्फ्यूरिक अम्ल प्राप्त होते हैं। यह रूपांतरण अपक्षयण और सूक्ष्मजीवों की अभिक्रियाओं के कारण होता है। सल्फ्यूरिक अम्ल की उपस्थिति के कारण सल्फाइड खानों से प्राप्त जल का pH कम होता है किन्तु वे बहुत संक्षारक होते हैं।

$$2FeS_2 + H_2O + 15\,[O] \rightarrow Fe_2(SO_4)_3 + H_2SO_4 \quad .... (5.14)$$

$$FeS_2 + 7\,[O] + H_2O \rightarrow FeSO_4 + H_2SO_4 \quad .... (5.15)$$

$$2FeSO_4 + H_2SO_4 + [O] \rightarrow Fe,\ (SO_4)_3 + H_2O \quad .... (5.16)$$

- जीवाश्म ईंधनों के दहन और धातुकर्मी प्रक्रमों में अयस्कों के भर्जन से वायुमंडल में सल्फर डाइऑक्साइड पाया जाता है। प्राकृतिक और मानवीय कारकों के कारण वायुमंडल में उपस्थित नाइट्रोजन के ऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड को सल्फर ट्राइऑक्साइड में परिवर्तन को उत्प्रेरित करते हैं, जो वर्षा के जल में घुलने पर सल्फ्यूरिक अम्ल बनाता है।

$$SO, + H_2O + [O] \xrightarrow{\text{नाइट्रोजन के ऑक्साइड}} H_2SO_4 \quad ... (5.17)$$

प्रयोग 10 में, जल में सल्फेट के आकलन की चर्चा की गई है। यह निम्नलिखित चरणों में किया जाता है :

- सोडियम सल्फेट का मानक विलयन तैयार किया जाता है। उससे ज्ञात सान्द्रताओं के तनु विलयन बनाए जाते हैं।
- ऊपर बनाए गए प्रत्येक विलयन से $BaSO_4$ के रूप में सल्फेट आयन अवक्षेपित किए जाते हैं। इसके लिए HCl माध्यम में $BaCl_2$ (बेरियम क्लोराइड) का उपयोग किया जाता है।

MAADHYAM IAS

- स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी द्वारा 420 नैनोमीटर पर प्रकाश के अवशोषण द्वारा निलंबन की आविलता अवशोषणांक के रूप में मापी जाती है।
- सल्फेट की सान्द्रता x-अक्ष पर और अवशोषणांक y-अक्ष पर लेकर अंशशोधन वक्र (calibrationcurve) आरेखित किया जाता है।

- जल के नमूने में सल्फेट को $BaSO_4$ के रूप में अवक्षेपित किया जाता है। उसका अवशोषणांक माप कर और वक्र में अंतर्वेशन से जल के नमूने में सल्फेट की सान्द्रता परिकलित की जाती है।

iv) क्लोराइड

लवण निक्षेपों के घुलने, बहि:स्रावों के विसर्जन, वाहित जल के मिल जाने, समुद्री जल के संदूषण और सिंचाई अपवाह (जैसे नारियल के वृक्षों के लिए मिलाए गए लवण का घुलना), के कारण जल के नमूने में क्लोराइड आयन पाए जाते हैं।

जल के नमूने में क्लोराइड की मात्रा का प्रयोग 9 में दी गई विधि के अनुसार आकलन किया जा सकता है। यहां विधि के नियम की चर्चा की जाएगी। क्लोराइड आयन का आमापन उदासीन अथवा किंचित क्षारीय विलयन (pH 7 और 8 के बीच) में किया जाता है। इसके लिए पोटैशियम क्रोमेट का सूचक के रूप में इस्तेमाल करते हुए मानक सिल्वर नाइट्रेट के साथ अनुमापन किया जाता है। सिल्वर क्रोमेट के लाल रंग के अवक्षेप का बनना अन्त्य बिन्दु को बतलाता है।

जल के नमूने में क्लोराइड के मोलों की संख्या = प्रयुक्त $AgNO_3$ के मोलों की संख्या

अर्थात् $$M_1V_1 = M_2V_2 \qquad .... (5.18)$$

जिसमें M_1, सिल्वर नाइट्रेट की मोलरता और V_1 उसका अनुमाप मान है। M_2, जल के नमूने में क्लोराइड की मोलरता और V_2, जल के नमूने का आयतन है।

अत: जल के नमूने में क्लोराइड की मोलरता $(M_2) = \dfrac{M_1V_1}{V_2}$ .... (5.19)

Cl^- आयन का मोलर द्रव्यमान 35.45 ग्राम मोल$^{-1}$ है। समीकरण 5.1 के उपयोग से,

जल के नमूने में क्लोराइड की सान्द्रता (ppm में) $= 3.545 \times 10^4 M_2$

$$= \frac{3.545\times10^4\left(AgNO_3 \text{ की मोलरता}\right)\left(AgNO_3 \text{ का आयतन}\right)}{\text{जल के नमूने का आयतन}} \qquad .... (5.20)$$

> कृपया ध्यान दें
>
> **समीकरण 5.20 को प्रयुक्त करते समय सान्द्रता के लिए मोलरता अर्थात् मोल लीटर$^{-1}$ (M) और आयतन के लिए घन सेन्टीमीटर (cc) मात्रकों का उपयोग किया जाता है। परिणाम, ppm मात्रक में व्यक्त किया जाता है।**

स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी से किसी पदार्थ की सान्द्रता मापने के लिए यह ज्ञात किया जाता है कि उसके द्वारा किसी विशेष तरंगदैर्घ्य वाले प्रकाश का अवशोषण कितनी मात्रा में होता है। बियर-लैम्बर्ट नियम का आधार के रूप में उपयोग किया जाता है। इस संबंध में आप सीएचई-01 के अंतर्गत परमाणु और अणु पाठ्यक्रम संबंधी इकाई 8 के भाग 8.11 का अध्ययन करें।

v) फ्लुओराइड

फ्लुओराइड प्राय: सभी प्राकृतिक जलों में पाया जाता है। फ्लुओराइड वर्णमिति अथवा विशिष्ट आयनमापी द्वारा मापा जाता है।

vi) नाइट्रेट

जल निकाय में नाइट्रेट, वायु की उपस्थिति में जैव द्रव्य के अपघटन से उत्पन्न होते हैं। देखिए उपभाग 5.5.3। नाइट्रेटों के अन्य स्रोत, घरेलू जल, रासायनिक उर्वरक, औद्योगिक बहि:स्राव आदि हैं।

MAADHYAM IAS

प्रयोग 11 में जल में नाइट्रेट के आकलन की चर्चा की गई है यह क्रिया निम्नलिखित चरणों में की जाती है :

- KNO_2 का मानक विलयन बनाया जाता है। इस विलयन से ज्ञात सान्द्रताओं के तनु विलयन तैयार किये जाते हैं।
- प्रत्येक विलयन में क्षारीय माध्यम में फीनॉल डाइसल्फोनिक अम्ल मिलाया जाता है ताकि गहरा पीला रंग प्राप्त हो जाए।
- 410 नैनोमीटर पर प्रत्येक विलयन का अवशोषणांक स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी की सहायता से मापा जाता है।
- सान्द्रता को x-अक्ष में और अवशोषणांक को y-अक्ष में लेकर अंशशोधन वक्र आरेखित किया जाता है।
- जल के साथ भी यही क्रिया की जाती है और क्षारीय माध्यम में फीनॉल डाइसल्फोनिक अम्ल मिलाकर पीला रंग उत्पन्न किया जाता है। उसका अवशोषणांक मापकर और वक्र के अंतर्वेशन द्वारा जल के नमूने में नाइट्रेट की सान्द्रता परिकलित की जाती है।

उपभाग 5.5.3 में जैव द्रव्य के जैविक उपचयन से नाइट्रेट के बनने की व्याख्या की गई है (5.57 समीकरण देखें।)

vii) धातु आयन

जल निकायों में धातुएं, घुली, कोलॉइडी और निलंबित रूप में पाई जाती हैं। शैल खनिजों में Na^+ की तुलना में K^+ अधिक पाया जाता है। कुछ मृदा खनिज और जिओलाइट, सोडियम के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। लवणीय भौमजल में Ca^{2+} और Mg^{2+} की अपेक्षा Na^+ की मात्रा कई गुना अधिक होती है।

आइए, अपक्षयण अभिक्रियाओं के कारण धातु आयनों से जल के नमूनों के समृद्धिकरण की व्याख्या करें। शैलों में विद्यमान कैल्सियम और मैग्नीशियम सिलिकेट, कार्बन डाइऑक्साइड, जल और सल्फ्यूरिक अम्ल के साथ अभिक्रिया से कार्बोनेटों में परिवर्तित हो जाते हैं। ध्यान देने की बात है कि इन परिवर्तनों के लिए आवश्यक सल्फ्यूरिक अम्ल, समीकरणों 5.14, 5.15 और 5.17 में निर्दिष्ट अभिक्रियाओं से प्राप्त होता है। कैल्सियम और मैग्नीशियम के कार्बोनेट और बाइकार्बोनेट उनके सिलिकेटों की अपेक्षा जल में, अधिक विलेय होते हैं। साथ ही Ca और Mg के बाइकार्बोनेट उनके कार्बोनेटों से अधिक विलेय होते हैं।

कैल्सियम और मैग्नीशियम सिलिकेटों के उनके कार्बोनेटों और बाइकार्बोनेटों में परिवर्तन से उनकी विलेयता क्रमशः बढ़ती जाती है।

$$CaSiO_3 + CO_2 + 2H_2O \rightarrow CaCO_3 + H_4SiO_4 \quad .... (5.21)$$

$$MgSiO_3 + CO_2 + 2H_2O \rightarrow MgCO_3 + H_4SiO_4 \quad .... (5.22)$$

$$MgCO_3 + H_2O + CO_2 \rightarrow Mg^{2+} + 2HCO_3^- \quad .... (5.23)$$

$$CaCO_3 + H_2SO_4 \rightarrow H_2CO_3 + CaSO_4 \quad .... (5.24)$$

$$CaCO_3 + H_2CO_3 \rightarrow Ca^{2+} + 2HCO_3^- \quad .... (5.25)$$

MAADHYAM IAS

हम स्पष्ट कर चुके हैं कि वायु की अपेक्षा गहरी मृदा में CO_2 का आंशिक दाब अधिक होता है। इसलिए गहरी मृदा में $CaCO_3$ की विलेयता अधिक होती है। लवण जल की उपस्थिति में, जबकि क्लोराइड की मात्रा अधिक होती है, कैल्सियम की सान्द्रता 70,000 ppm तक उच्च हो सकती है। $CaSO_4$ की तुलना में $MgSO_4$ बहुत अधिक विलेय होता है। जल के नमूनों में धातु की मात्राओं का आकलन स्पेक्ट्रप्रकाशमिति द्वारा किया जाता है।

viii) कठोरता

जल की साबुन के झाग को कम अथवा समाप्त करने की क्षमता को कठोरता कहते हैं। जल

की कठोरता की सामान्य अभिव्यक्ति, कठोर जल में कैल्सियम आयनों के साथ साबुन की अभिक्रिया से प्राप्त होने वाला थक्केदार सफेद अवक्षेप है।

$$2C_{17}H_{35}COO^{-}Na^{+}(aq) + Ca^{2+}(aq) \rightarrow Ca(C_{17}H_{35}COO)_2(s) + 2Na^{+}(aq)$$
(साबुन का घटक) .... (5.26)

जल की कठोरता, मृदा और अन्य भूवैज्ञानिक संरचनाओं के संपर्क से प्राप्त लवणों की उपस्थिति अथवा प्रदूषण के कारण उत्पन्न होती है। कठोरता उत्पन्न करने वाले प्रमुख धनायन कैल्सियम और मैग्नीशियम हैं। आयरन, ऐलुमिनियम, मैंगनीज, स्ट्रॉन्शियम और जस्ता भी अल्प मात्रा में कठोरता उत्पन्न करते हैं। प्राय: कठोरता का वर्गीकरण अस्थायी कठोरता और स्थायी कठोरता के रूप में किया जाता है। जो कठोरता जल को लंबे समय तक उबालने के बाद समाप्त हो जाती है उसे अस्थायी कठोरता कहते हैं। यह मुख्यत: कैल्सियम और मैग्नीशियम के बाइकार्बोनेटों के कारण उत्पन्न होती है। उबालने पर कैल्सियम कार्बोनेट अथवा मैग्नीशियम कार्बोनेट अवक्षेप के रूप में प्राप्त होता है और कार्बन डाइऑक्साइड गैस उत्पन्न होती है। उबालने के बाद भी जो कठोरता बनी रहती है उसे स्थायी कठोरता कहते हैं। यह कैल्सियम और मैग्नीशियम के क्लोराइडों और सल्फेटों के कारण होती है। सामान्य तौर पर भौमजल की तुलना में पृष्ठीय जल मृदु होते हैं। 'संपूर्ण कठोरता' कैल्सियम और मैग्नीशियम के आयनों की सान्द्रता को सूचित करता है। कठोरता, ppm मात्रक में कैल्सियम कार्बोनेट की सान्द्रता के रूप में व्यक्त की जाती है। ''संपूर्ण'' के मान के अनुसार जलों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जाता है।

0	-	75	.... मृदु
75	-	150	.... मंद कठोर
150	-	300	.... अति कठोर

प्रयोग 13 में आप संपूर्ण कठोरता और कैल्सियम तथा मैग्नीशियम आयनों की कठोरता का आकलन करेंगे। सी एच ई-3 (L) के प्रयोगों 9 और 10 में EDTA लवण (एथिलीन डाइऐमीन टेट्राऐसीटिक ऐसिड का डाइसोडियम लवण) और ऐरिओक्रोम ब्लैक-टी के उपयोग से स्थायी और अस्थायी कठोरता के आकलन के सिद्धांत की व्याख्या की गई है। कैल्सियम और मैग्नीशियम आयन (जिन्हें समीकरण 5.27 में M^{2+} के रूप में निरूपित किया गया है) EDTA के साथ 1:1 के मोलर अनुपात में अभिक्रिया करते हैं।

$$M^{2+} + EDTA \rightarrow [M(EDTA)]^{2+} \qquad .... (5.27)$$

अर्थात्, $$M_1V_1 = M_2V_2 \qquad .... (5.28)$$

जिसमें M_1 और V_1 EDTA की मोलरता और आयतन हैं। M_2, $CaCO_3$ के रूप में जल के नमूने की कठोरता की मोलरता है। V_2 जल के नमूने का (Ca^{2+} और Mg^{2+} आयनों के कारण) उत्पन्न आयतन है। संपूर्ण कठोरता तथा Ca^{2+} और Mg^{2+} आयनों से उत्पन्न कठोरता का परिकलन करने के लिए समीकरण 5.28 का उपयोग किया जाता है।

$$M_2 = \frac{M_1V_1}{V_2} \qquad .... (5.29)$$

समीकरण 5.29, मोलरता के रूप में $CaCO_3$ की सान्द्रता बतलाता है। समीकरण 5.1 से आप ppm मात्रक में कठोरता परिकलित कर सकते हैं। $CaCO_3$ का मोलर द्रव्यमान 100 ग्राम मोल$^{-1}$ है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

$$\text{ppm मात्रक में कठोरता} = M_2 \times 100 \times 1000 = 10^5 M_2 \quad \text{.... (5.30)}$$

संपूर्ण कठोरता के मापन के लिए $NH_4Cl - NH_4OH$ बफर और ऐरिओक्रोम ब्लैक-T सूचक की उपस्थिति में जल के नमूने और EDTA का परस्पर अनुमापन किया जाता है।

$$\left.\begin{matrix}\text{ppm में } CaCO_3 \\ \text{के रूप में कुल कठोरता}\end{matrix}\right\} = \frac{10^5 \begin{pmatrix}\text{EDTA} \\ \text{की मोलरता}\end{pmatrix}\begin{pmatrix}\text{ऐरिओक्रोम ब्लैक T अन्त्य बिन्दु के} \\ \text{लिए EDTA का आयतन}\end{pmatrix}}{\text{जल के नमूने का आयतन}} \quad \text{.... (5.31)}$$

कैल्सियम आयन के कारण उत्पन्न कठोरता निर्धारित करने के लिए म्यूरेक्साइड सूचक का उपयोग करते हुए जल के नमूने का pH 12 पर EDTA के साथ अनुमापन किया जाता है। pH 12 पर अवक्षेपण के कारण Mg^{2+} निष्क्रिय हो जाता है।

$$\left.\begin{matrix}\text{ppm में } CaCO_3 \\ \text{के रूप } Ca^{2+} \text{ के कारण} \\ \text{उत्पन्न कठोरता}\end{matrix}\right\} = \frac{10^5 \begin{pmatrix}\text{EDTA} \\ \text{की मोलरता}\end{pmatrix}\begin{pmatrix}\text{म्यूरेक्साइड अन्त्य बिन्दु के} \\ \text{लिए EDTA का आयतन}\end{pmatrix}}{\text{जल के नमूने का आयतन}} \quad \text{.... (5.32)}$$

$$\left.\begin{matrix}\text{ppm में } CaCO_3 \\ \text{के रूप } Mg^{2+} \text{ के} \\ \text{कारण उत्पन्न कठोरता}\end{matrix}\right\} = \begin{pmatrix}\text{कुल} \\ \text{कठोरता}\end{pmatrix} - \begin{pmatrix}Ca^{2+} \text{ आयन के कारण} \\ \text{उत्पन्न कठोरता}\end{pmatrix} \quad \text{.... (5.33)}$$

कार्बनिक पदार्थों को दो समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है अर्थात्, प्राकृतिक तथा सांश्लेषिक। प्राकृतिक कार्बनिक द्रव्य केवल घुली हुई ऑक्सीजन का ह्रास करते हैं। सांश्लेषिक कार्बनिक द्रव्य विषैले प्रभाव पैदा कर सकते हैं जिनकी प्रकृति अत्यधिक गंभीर हो सकती है।

> **कृपया ध्यान दें**
>
> **समीकरणों 5.31 और 5.32 का प्रयोग करते समय सान्द्रता के लिए मोलरता अर्थात् मोल लीटर $^{-1}$ (M) मात्रकों का और आयतन के लिए घन सेन्टीमीटर मात्रक का उपयोग किया जाता है। 5.31 से 5.33 तक तीनों समीकरणों के लिए परिणाम, $CaCO_3$ के रूप में ppm मात्रक में व्यक्त किये जाते हैं।**

ix) कार्बनिक द्रव्य

सुपोषण एक स्थिति है जो पोषकों के अंतर्प्रवाह से किसी जलीय निकाय की जल गुणवत्ता को प्रभावित करती है। यह शैवाल और जलीय हायासिन्थ की वृद्धि द्वारा निदर्शित होती है।

जल में कार्बनिक द्रव्यों के पाए जाने के निम्नलिखित कारण है :

i) औद्योगिक इकाइयों से मुक्त हुए कीटनाशी अवशिष्ट और कार्बनिक प्रदूषकों के बहने से

ii) जन्तुओं और घरेलू अपशिष्टों के मिश्रण से

iii) जल-वाह के साथ वाहित पादप रेशों और वनस्पति पदार्थ से

iv) सुपोषण (eutrophication) के कारण जैव द्रव्य के संचयन से (जैव द्रव्य में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन आदि आते हैं जो क्षयमान पादपों और जंतु अपशिष्ट के कारण जमा होते हैं।)

MAADHYAM IAS

जन्तुओं, पादपों और सूक्ष्मजीवों के अवशेषों का सामूहिक नाम "ह्यूमस" है। खंड 1 की इकाई 2 भी देखें।

अधिक जानकारी के लिए देखिए उपभाग 5.5.3।

मानव गतिविधियों के कारण हजारों कार्बनिक यौगिक जल निकायों में प्रविष्ट करते हैं। ऐसे प्रत्येक यौगिक को मॉनीटर करना संभव नहीं है। गैस वर्णमापी विधियों द्वारा कुछ चुनिन्दा यौगिकों को मापा जाता है। कार्बनिक यौगिकों के आकलन की तीन विधियां नीचे दी गई हैं। ये विधियां इस तथ्य पर आधारित हैं कि ऑक्सीकरणीय कार्बनिक द्रव्य के फलस्वरूप जल निकायों में घुली ऑक्सीजन का ह्रास हो जाता है। जल में अल्प विलेयता के कारण उसमें घुली

ऑक्सीजन की मात्रा बहुत कम होती है अत: ऑक्सीकरणीय कार्बनिक द्रव्य, जलीय जीवन के लिए हानिकारक होते हैं।

1) घुली हुई ऑक्सीजन (DO)

घुली हुई ऑक्सीजन

i) जल पृष्ठ के ऊपर वायु में मौजूद ऑक्सीजन के आंशिक दाब के अनुक्रमानुपाती होती है

ii) जलीय हरित पादपों द्वारा प्रकाश संश्लेषी दर के अनुक्रमानुपाती होती है

iii) सभी पादपों और जलीय प्राणियों के श्वसन से घट जाती है

iv) ताप के व्युत्क्रमानुपाती होती है।

v) प्रवाह वेग (velocity) और प्रक्षोभ (turbulence) के अनुक्रमानुपाती होती है।

दूसरे शब्दों में, घुली ऑक्सीजन, दिन के समय, जलीय पादप वृद्धि और प्रकाश तीव्रता पर निर्भर करती है। दिन में समय के साथ घुली ऑक्सीजन की मात्रा में विविधता को दैनिक परिवर्तन (diurnal variation) कहते हैं। दिन में घुली ऑक्सीजन की मात्रा अधिक होती है क्योंकि उस समय श्वसन दर की अपेक्षा प्रकाश संश्लेषी दर अधिक होती है। रात में केवल श्वसन की क्रिया होती है जिससे घुली ऑक्सीजन कम हो जाती है।

घुली ऑक्सीजन के आकलन का विस्तृत विवरण प्रयोग 12 में दिया गया है। इस विधि के नियमों को समझने के लिए आप सी एच ई-3 (L) पाठ्यक्रम के उपभाग 6.5.1 का अध्ययन करें। नीचे इस विधि के मुख्य चरणों की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है :

- जल के नमूने की मैंगनस सल्फेट, सोडियम हाइड्रॉक्साइड, पोटैशियम आयोडाइड और सोडियम ऐज़ाइड के साथ क्रिया की जाती है।
- $MnSO_4$ और NaOH की परस्पर अभिक्रिया से $Mn(OH)_2$ का सफेद अवक्षेप प्राप्त होता है।
- घुली ऑक्सीजन की $Mn(OH)_2$ के साथ अभिक्रिया से $Mn(OH)_3$ का भूरे रंग का अवक्षेप प्राप्त होता है।
- इस निकाय में सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल मिलाकर $Mn(OH)_3$ को $MnSO_4$ में परिवर्तित किया जाता है जिससे ऑक्सीजन मुक्त होती है।
- मुक्त ऑक्सीजन, मिलाए गए KI विलयन से तुल्य मात्रा में आयोडीन विस्थापित करती है।
- मानक थायोसल्फेट विलयन का और सूचक के रूप में स्टार्च का उपयोग कर इस प्रकार मुक्त आयोडीन का आकलन किया जाता है।

MAADHYAM IAS

इसकी अभिक्रियाएं निम्न प्रकार की होती हैं :

$$MnSO_4 + 2NaOH \longrightarrow Mn(OH)_2 + Na_2SO_4 \quad .... (5.34)$$

$$4Mn(OH)_2 + O_2 + 2H_2O \longrightarrow 4Mn(OH)_3 \quad .... (5.35)$$

$$4Mn(OH)_3 + 4H_2SO_4 \longrightarrow 4MnSO_4 + 10H_2O + 2(O) \quad .... (5.36)$$

$$4KI + 2H_2SO_4 + 2(O) \longrightarrow 2K_2SO_4 + 2H_2O + 2I_2 \quad .... (5.37)$$

$$4Na_2S_2O_3 + 2I_2 \longrightarrow 2Na_2S_4O_6 + 4NaI \quad .... (5.38)$$

समीकरणों 5.35 और 5.38 से निम्नलिखित समीकरण को निगमित किया जा सकता है।

$$\frac{Na_2S_2O_3 \text{ के मोलों की संख्या}}{O_2 \text{ के मोलों की संख्या}} = \frac{4}{1} \quad .... (5.39)$$

$$\frac{M_1V_1}{M_2V_2} = \frac{4}{1} \text{ or } M_2 = \frac{M_1V_1}{4V_2} \quad .... (5.40)$$

जिसमें M_1 और V_1 सोडियम थायोसल्फेट विलयन के क्रमशः मोलरता और आयतन हैं, V_2 जल के नमूने का आयतन और M_2 जल के नमूने में घुली ऑक्सीजन की मोलरता को व्यक्त करता है। समीकरणों 5.1 और 5.40 के उपयोग से,

$$\left.\begin{array}{l}\text{जल के नमूने में घुली ऑक्सीजन की}\\ \text{सान्द्रता ppm मात्रक में}\end{array}\right\} = M_2 \times O_2 \text{ का मोलर द्रव्यमान } \times 1000$$

$$= 32000\, M_2 \quad .... (5.41)$$

$$= \frac{8000\begin{pmatrix}\text{सोडियम थायोसल्फेट}\\ \text{विलयन की मोलरता}\end{pmatrix}\begin{pmatrix}\text{सोडियम थायोसल्फेट}\\ \text{विलयन का आयतन}\end{pmatrix}}{\text{जल के नमूने का आयतन}} \quad .... (5.42)$$

> कृपया ध्यान दें
>
> **समीकरण 5.42 का उपयोग करते समय सान्द्रता के लिए मोलरता अर्थात् मोल लीटर $^{-1}$ (M) मात्रक का और आयतन के लिए घन सेन्टीमीटर का उपयोग करें। परिणाम को ppm मात्रक में अभिव्यक्त करें।**

2) रासायनिक ऑक्सीजन मांग (COD)

रासायनिक ऑक्सीजन मांग (chemical oxygen demand), जल के नमूने में रासायनिक ऑक्सीजन के लिए सुग्राही कार्बनिक द्रव्य के उपचयन के लिए आवश्यक ऑक्सीजन का माप होता है। इस विधि का विस्तृत विवरण प्रयोग 14 में दिया गया है। उपचयन के लिए आवश्यक ऑक्सीजन के उत्पादन के लिए पोटैशियम डाइक्रोमेट और सल्फ्यूरिक अम्ल के मिश्रण का उपयोग किया जाता है। COD परिकलन का प्रमुख पहलू नीचे समीकरण में दिया गया है।

$$\begin{array}{l}\text{जल के नमूने में कार्बनिक द्रव्य}\\ \text{द्वारा अपेक्षित ऑक्सीजन}\\ \text{के मोलों की संख्या}\end{array} = \begin{array}{l}\text{उपचयन के समय प्रयुक्त}\\ K_2Cr_2O_7 \text{ द्वारा मुक्त } O_2\\ \text{के मोलों की संख्या}\end{array} \quad .... (5.43)$$

$$2K_2Cr_2O_7 + 8H_2SO_4 \rightarrow 2K_2SO_4 + 2Cr_2(SO_4)_3 + 3O_2 + 8H_2O \quad ....(5.44)$$

MAADHYAM IAS

$$\frac{\text{मुक्त } O_2 \text{ के मोलों की संख्या}}{\text{प्रयुक्त } K_2Cr_2O_7 \text{ के मोलों की संख्या}} = \frac{3}{2} \quad .... (5.45)$$

समीकरणों 5.43 और 5.45 के उपयोग से,

$$\begin{array}{l}\text{आवश्यक ऑक्सीजन}\\ \text{के मोलों की संख्या}\end{array} = \frac{3}{2}\begin{pmatrix}\text{प्रयुक्त } K_2Cr_2O_7\\ \text{के मोलों की संख्या}\end{pmatrix} \quad .... (5.46)$$

सान्द्र अम्ल विलयन में जल के नमूने का पोटैशियम डाइक्रोमेट के आधिक्य में पश्चवहन (reflux) किया जाता है। बचे हुए पोटैशियम डाइक्रोमेट का, फेरोइन (ferroin) को सूचक के

रूप में प्रयोग करते हुए, फेरस अमोनियम सल्फेट के साथ अनुमापन किया जाता है। अनुमाप मान से, उपचयन में प्रयुक्त पोटैशियम डाइक्रोमेट के तुल्य फेरस अमोनियम सल्फेट के आयतन (V_1) का परिकलन किया जाता है। उल्लेखनीय है कि फेरस सल्फेट, फेरस अमोनियम सल्फेट का रसायनतः सक्रिय भाग है।

$$6FeSO_4 + K_2Cr_2O_7 + 7H_2SO_4 \rightarrow 3Fe_2(SO_4)_3 + K_2SO_4 + Cr_2(SO_4)_3 + 7H_2O \quad .... (5.47)$$

$$\frac{\text{पोटैशियम डाइक्रोमेट के मोलों की संख्या}}{\text{फेरस अमोनियम सल्फेट के मोलों की संख्या}} = \frac{1}{6} \quad .... (5.48)$$

$$\left.\begin{array}{l}\text{उपचयन के समय प्रयुक्त}\\ K_2Cr_2O_7 \text{ के मोलों की संख्या}\end{array}\right\} = \frac{1}{6}\left\{\begin{array}{l}\text{कार्बनिक पदार्थ के उपचयन के समय}\\ \text{प्रयुक्त पोटैशियम डाइक्रोमेट के साथ}\\ \text{अभिक्रिया के लिए आवश्यक फेरस}\\ \text{अमोनियम सल्फेट के मोलों की संख्या}\end{array}\right\} \quad .... (5.49)$$

समीकरणों 5.46 और 5.49 को संयुक्त करने पर,

$$\left.\begin{array}{l}\text{उपयचन के लिए आवश्यक}\\ O_2 \text{ के मोलों की संख्या}\end{array}\right\} = \frac{1}{4}\left\{\begin{array}{l}\text{कार्बनिक पदार्थ के उपचयन के समय}\\ \text{प्रयुक्त पोटैशियम डाइक्रोमेट के साथ}\\ \text{अभिक्रिया के लिए आवश्यक फेरस}\\ \text{अमोनियम सल्फेट के मोलों की संख्या}\end{array}\right\} \quad .... (5.50)$$

अर्थात्, $$M_2V_2 = \frac{1}{4}M_1V_1 \quad .... (5.51)$$

जिसमें M_2, नमूने में ऑक्सीजन की मोलरता है, V_2 लिए गए जल का आयतन है, M_1 फेरस अमोनियम सल्फेट की मोलरता है और V_1 आमोनियम सल्फेट का आयतन है जो उपचयन के लिए प्रयुक्त $K_2Cr_2O_7$ के आयतन के साथ अभिक्रिया के लिए आवश्यक है।

$$M_2 = \frac{M_1V_1}{4V_2} \quad .... (5.52)$$

समीकरणों 5.51 और 5.52 के उपयोग से समीकरण 5.41 के समान ही लिख सकते हैं,

ppm मात्रक में रासायनिक ऑक्सीजन मांग $= 32000\, M_2$

अर्थात्, रासायनिक ऑक्सीजन मांग (ppm मात्रक में) $= \frac{M_1V_1}{4V_2} \times 32000$ .... (5.53)

(क्योंकि O_2 का मोलर द्रव्यमान = 32 ग्राम मोल $^{-1}$)

$$= \frac{8000\, M_1V_1}{V_2} \text{ ppm} \quad .... (5.54)$$

$$= \frac{8000\left(\begin{array}{l}\text{फेरस अमोनियम}\\ \text{सल्फेट विलयन}\\ \text{की मोलरता}\end{array}\right)\left\{\begin{array}{l}\text{उपचयन के समय प्रयुक्त पोटैशियम}\\ \text{डाइक्रोमेट के साथ अभिक्रिया के लिए}\\ \text{आवश्यक फेरस अमोनियम सल्फेट}\\ \text{विलयन का आयतन}\end{array}\right\}}{\text{जल के नमूने का आयतन}}$$

MAADHYAM IAS

> कृपया ध्यान दें
>
> **समीकरण 5.54 को अनुप्रयुक्त करते समय सान्द्रता के लिए मोलरता अर्थात् मोल लीटर$^{-1}$ (M) मात्रक का और आयतन के लिए घन सेन्टीमीटर (cc) का उपयोग किया जाता है। परिणाम को ppm मात्रक में व्यक्त किया जाता है।**

3) जैव ऑक्सीजन मांग (BOD)

दुनियां में BOD परीक्षण 20°C पर 5 दिन में किया जाता है। यूनाइटेड किंगडम जैसे देशों में, जहां सबसे पहले इस परीक्षण को विकसित किया गया था, कक्ष ताप लगभग 20°C पर रहता है तथा ऊष्मायित्र (incubator) द्वारा ताप को 20°C बनाए रखना आसान होता है।

जल के नमूने में मौजूद कार्बनिक द्रव्य के जैव उपचयन के लिए 27°C पर अंधेरे में 3 दिन की अवधि में उपयुक्त ऑक्सीजन की मात्रा को जैव ऑक्सीजन मांग (biological oxygen demand, BOD) कहते हैं। आइए, इस पद की विस्तार से व्याख्या करें। अनेक सूक्ष्मजीव अपने उपापचयी प्रक्रमों में ऊर्जा स्रोत के रूप में और वृद्धि के लिए आवश्यक रासायनिक पदार्थों की पूर्ति के लिए जल निकाय में मौजूद कार्बनिक यौगिकों का उपयोग करते हैं। इस उपापचयी रूपांतरण के समय सूक्ष्मजीव, जल निकाय में घुली ऑक्सीजन का उपयोग करते हैं। इससे जल निकाय में उपलब्ध सीमित ऑक्सीजन स्रोतों पर जैव ऑक्सीजन मांग प्रयुक्त होती है। जलीय निकाय की जैव ऑक्सीजन मांग निम्न कारकों पर निर्भर करती है :

- कार्बनिक यौगिकों की किस्में और मात्राएं
- जीवों की किस्में
- ताप
- pH और
- वृद्धि के लिए आवश्यक पोषकों और लेश तत्वों की उपस्थिति इत्यादि।

कोई जल निकाय, जैव ऑक्सीजन मांग को तब तक पूरा कर सकता है जब तक सूक्ष्मजीवों द्वारा प्रयुक्त ऑक्सीजन की, उसके हवा में घुलने से पूर्ति हो जाए। घुली ऑक्सीजन कम होने से मछलियों और अन्य जलीय प्रजातियों की जीवन-परिस्थितियों पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। जल निकाय में पर्याप्त ऑक्सीजन मांग वाले पदार्थों की उपस्थिति से घुली ऑक्सीजन का पूर्णतया क्षय हो सकता है। और सभी जलीय प्रजातियों की मृत्यु हो सकती है। इसके साथ ही घुली ऑक्सीजन की अनुपस्थिति से सूक्ष्मजीवों की वृद्धि हो सकती है जो जल निकाय में गन्दी गंध वाले पदार्थों जैसे, NH_3, H_2S इत्यादि, को उत्पन्न कर सकती है। जैव ऑक्सीजन मांग और घुली ऑक्सीजन का मुख्य उपयोग मत्स्य जीवन के लिए जल निकाय की उपयुक्तता के सूचक के रूप में और साथ ही उसके सौन्दर्यपरक मानों के लिए किया जाता है। इस पहलू पर विस्तृत चर्चा के लिए इकाई 6 के भाग 6.2 और 6.3 को देखें। हमारे देश में हाल ही में यह निर्णय लिया गया है कि जल के नमूने के दो घुली ऑक्सीजन की मापों से जैव ऑक्सीजन मांग की माप की जाती है। एक माप तुरंत और दूसरी 27°C पर तीन दिन तक ऊष्मायन (incubation) के बाद की जाती है (अर्थात् 3 दिन की जैव ऑक्सीजन मांग)। माप के लिए ताप का चयन करते समय, भारत में जल निकायों के यथार्थ जलीय ताप और ऊष्मायित्र द्वारा नमूने के ताप को बनाए रखने की सुगमता को ध्यान में रखा जाता है।

MAADHYAM IAS

$$BDO_3 = DO \text{ (प्रारंभिक)} - DO \text{ (3 दिन तक ऊष्मायन के बाद)} \quad \text{.... (5.55)}$$

बोध प्रश्न 2

जल के नमूने के दो हिस्सों में से प्रत्येक में 100 घन सेन्टीमीटर जल है। प्रत्येक का अलग-अलग M/20 HCl के साथ अनुमापन किया गया। एक में फीनॉल्फथेलीन सूचक का उपयोग किया गया और उसके उदासीनीकरण के लिए 12 घन सेन्टीमीटर अम्ल की

आवश्यकता हुई। दूसरे में मेथिल ऑरेन्ज सूचक का उपयोग किया गया। इसमें अम्ल का अनुमाप मान 20 घन सेन्टीमीटर था।

i) फीनॉल्फथेलीन क्षारता (P) और मेथिल आरेन्ज क्षारता (T) का मान ज्ञात कीजिए।

(**संकेत** : समीकरण 5.10 और समीकरण 5.11 का उपयोग करें)।

ii) क्षारता का प्रकार बताइए।

(**संकेत** : सारणी 5.3 के स्तंभ 1 और 2 का उपयोग करें)।

iii) OH^-, CO_3^{2-} और HCO_3^- क्षारताओं का परिकलन करें।

(**संकेत** : सारणी 5.3 के स्तंभ 3, 4 और 5 का उपयोग करें)।

....

....

....

बोध प्रश्न 3

प्राय: कार्बोनेट क्षारता, पृष्ठीय की अपेक्षा भौमजल में अधिक होती है। स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

बोध प्रश्न 4

ऐरिओक्रोम ब्लैक-T सूचक की उपस्थिति में 50 घन सेन्टीमीटर जल के नमूने को अनुमापन के लिए 0.01 M EDTA के 3.4 घन सेन्टीमीटर की आवश्यकता होती है। कुल कठोरता परिकलित कीजिए।

(**संकेत** : समीकरण 5.31 का उपयोग करें)।

....

....

....

बोध प्रश्न 5

50 घन सेन्टीमीटर जल के नमूने की अनुमापन के लिए 0.0141M $AgNO_3$ विलयन के 5.5 घन सेन्टीमीटर की आवश्यकता होती हैं। नमूने में क्लोराइड आयन की सान्द्रता परिकलित कीजिए।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

(**संकेत** : समीकरण 5.20 का उपयोग करें)।

....

....

....

5.4 जल निकायों के जैविक गुण

पेय जल में मौजूद सूक्ष्मजीवों के हानिकर प्रभाव की चर्चा आगामी इकाई में की जाएगी।

जल के जैविक गुण निम्नलिखित कारकों से निदर्शित होते हैं

- शैवाल, कवक, प्रोटोजोआ तथा बैक्टीरिया की अस्वाभाविक तथा आधिक्य में बढ़ोतरी की उत्पत्ति से।
- जल निकाय में आमतौर पर रहने वाली मछलियां, कछुए आदि जीवों के लोप होने अथवा उनकी संख्या में बहुत कमी।

इनमें से अनेक प्रजातियों की जलीय निकाय के अवयवों के प्रति संवेदनशीलता में बहुत भिन्नता होती है। जैविक अभिलक्षण, जलीय निकाय में मौजूद सभी आविषों के संयुक्त प्रभाव को प्रदर्शित करते हैं। उस दृष्टि से किसी जल निकाय के केवल रासायनिक अभिलक्षणों की तुलना में जैविक अभिलक्षणों का अध्ययन अधिक लाभदायक है। इस पहलू पर विस्तृत चर्चा के लिए इकाई 6 का, उप भाग 6.5.2 देखें। आइए, जलीय निकायों में पाई जाने वाली कुछ जैविक प्रजातियों का अध्ययन करें।

शैवाल

ये बहुत छोटे पादप प्राणी हैं जो प्रकाश संश्लेषण कर सकते हैं। इनका रंग, हरा, भूरा अथवा नीला-हरा होता है। ये प्रजातियां प्रकाश संश्लेषण के लिए घुली कार्बन डाइऑक्साइड अथवा बाइकार्बोनेट आयन का उपयोग कर सकती हैं। इससे जैव द्रव्य प्राप्त होती है। यद्यपि जैव द्रव्य में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन आदि होते हैं उसे $[CH_2O]$ के रूप में निरूपित किया जाता है।

$$2HCO_3^-(aq) + h\nu \rightarrow [CH_2O] + O_2(g) + CO_3^{2-}(aq) \qquad \text{.... (5.56)}$$

शैवाल द्वारा उत्पन्न कार्बोहाइड्रेटों, प्रोटीनों और ऑक्सीजन का उपयोग, अन्य जलीय प्रजातियां जीवित रहने के लिए करती हैं। इस प्रकार जलीय निकाय में शैवाल की उपस्थिति, अनेक अन्य प्रजातियों की उत्पत्ति के लिए अनुकूल परिस्थिति प्रस्तुत करती है। pH के संबंध में शैवाल द्वारा प्रकाश संश्लेषण के महत्व की व्याख्या भाग 5.7 में की जाएगी।

कवक

कवक प्रायः एककोशिकीय पादप होते हैं। ये प्रजातियां प्रकाश संश्लेषण नहीं कर सकती हैं और कार्बनिक पोषकों के लिए अन्य पादपों पर निर्भर करती हैं। अवशिष्टों से प्रदूषित जल निकायों में घटकों के रूप में कवक होते हैं।

प्रोटोज़ोआ

प्रोटोज़ोआ, एककोशिका वाले जीव होते हैं जो मृत कार्बनिक द्रव्य पर निर्भर करते हैं। ये अपमार्जक (scavengers) का काम करते हैं और बैक्टीरिया तथा शैवाल का भक्षण करते हैं।

MAADHYAM IAS

बैक्टीरिया

बैक्टीरिया निम्नलिखित पदार्थों को खाते हैं :

- अन्य जीवित जीवों द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट पदार्थ,
- मृत प्रजातियां, और
- विभिन्न स्रोतों से नदियों में मुक्त कोई भी जैवनिम्नीकरणीय अवयव।

बैक्टीरिया दो प्रकार के होते हैं। वायुजीवी बैक्टीरिया, घुली ऑक्सीजन का उपयोग कर उपापचयी परिवर्तन करते हैं। अवायुजीवी बैक्टीरिया, उपापचयी अभिक्रियाओं के लिए रसायनतः

बद्ध ऑक्सीजन का उपयोग करते हैं। इस उद्देश्य के लिए अवायुजीवी बैक्टीरिया सल्फेट, नाइट्रेट तथा फॉस्फेट यौगिकों का उपयोग करते हैं। उल्लेखनीय है कि उपापचयी अभिक्रियाओं का उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए होता है। उपभाग 5.5.3 में इन पहलुओं पर विचार करेंगे। हम यह भी स्पष्ट करेंगे कि शैवाल, बैक्टीरिया आदि की उपस्थिति से जल के जैविक गुणों का जल के रासायनिक अभिलक्षणों और उसकी उपयोगिता पर विपरीत प्रभाव कैसे पड़ता है।

जल के जैविक अभिलक्षणों के निर्धारण के लिए प्रायोगिक प्रक्रिया को समझने के लिए आप इस पाठ्यक्रम की इकाई 20 के भाग 20.2 का अध्ययन करें।

प्रत्येक प्रकार के सूक्ष्मजीव के आकलन के लिए अत्यधिक निपुणता की आवश्यकता होती है। यदि सूक्ष्मजैविक परीक्षण के स्रोत सीमित हों तो केवल ऐशरिकिया कोली (*E.coli*) का आकलन करना चाहिए। यह बैक्टीरिया के कोलीफार्म समूह का महत्वपूर्ण सदस्य है। यह आंतों में उत्पन्न होता है। यह विष्ठा (faecal matter) के घटक के रूप में विसर्जित होता है। किसी जल निकाय में *E.coli* की उपस्थिति से ज्ञात होता है कि घरेलू मल के कारण प्रदूषण हुआ है। यद्यपि यह स्वयं रोगाणु नहीं है किन्तु उसकी उपस्थिति बतलाती है कि जलीय निकाय में भी रोगाणु हो सकते हैं जो अनेक रोगों से ग्रस्त मनुष्यों और जंतुओं के शरीर क्रियात्मक तंत्र में स्रावित होते हैं। इस कारण *E.coli* को सूचक जीव कहते हैं। इसका आकलन दो विधियों द्वारा किया जा सकता है। पहला बैक्टीरिया की प्रायिकतम संख्या (most probable number, MPN) और दूसरा झिल्ली निस्यंदन (membrane filtration, MF) विधि। इन विधियों की विस्तृत चर्चा नहीं की जाएगी।

बोध प्रश्न 6

वायुजीवी बैक्टीरिया और अवायुजीवी बैक्टीरिया के कार्यों में भिन्नता बताइए।

....

....

....

5.5 जल गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले कारक

प्रकृति में जल, रसायनतः शुद्ध रूप में नहीं पाया जाता है। जब वर्षा का जल वायुमंडल से गिरता है तो वह गैसों और धूल के कणों को ग्रहण कर लेता है। जब वर्षाजल पृथ्वी पर पहुंचता है तो मिट्टी के साथ संपर्क से उसके संघटन में परिवर्तन हो जाता है। इसलिए वर्षाजल की अपेक्षा पृष्ठ जल में अधिक अपद्रव्य होते हैं। भौमजल में घुले अपद्रव्यों की मात्रा सर्वाधिक होती है क्योंकि वह जैसे जैसे जमीन के अन्दर बहता है उसमें खनिज द्रव्य घुलते चले जाते हैं। आइए, उन अपद्रव्या के उद्गम का अध्ययन करें जो जल गुणवत्ता को कम कर देते हैं।

5.5.1 प्राकृतिक कारक

आइए, जल के संघटन परिवर्तन में जलवायु कारकों और अपक्षयण अभिक्रियाओं की भूमिका की जांच करें।

क) जलवायु कारक

MAADHYAM IAS

आयनों, पादप समुदायों और मृदा की किस्मों के निर्माण में जलवायु कारकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उदाहरण के लिए, HCO_3^- आयन की उपस्थिति में पादप वृद्धि अधिक होती है। पादपों में निर्मित कुछ धातु आयनों की उच्च सान्द्रता होती है। पादपों के क्षय के समय ये धातुएं जल निकाय में प्रविष्ट कर जाती हैं। बहने वाले जल के आयतन में भिन्नता के कारण जल निकायों का संघटन भी भिन्न-भिन्न होता है। नदी के जल के कुछ अवयवों पर वर्षा के जल के प्रभाव को हमारे देश की प्रमुख नदियों में से एक के लिए प्राप्त डाटा का उपयोग करके समझाया जा सकता है।

इन आंकड़ों के अनुसार ग्रीष्म मौसम की तुलना में वर्षा से चालकता का मान कम हो जाता है और कैल्सियम और क्लोराइड आयनों की सान्द्रता कम हो जाती है जबकि बाइकार्बोनेट और गाद की सांद्रताओं में वृद्धि होती है। ये परिवर्तन, तनुकरण और अपक्षयण अभिक्रियाओं से उत्पन्न विपरीत प्रभावों के फलस्वरूप होते हैं।

ख) अपक्षयण अभिक्रियाएं

अपक्षयण में जल की अभिक्रियाशीलता और विलायक के अभिलक्षणों का उपयोग किया जाता है। विलयन, जल अपघटन, कार्बोनेटीकरण, जल योजन और उपचयन द्वारा जल, वायु और शैल खनिजों के घटकों के साथ अभिक्रिया करता है। इस पाठ्यक्रम की इकाई 1 के उपभाग 1.4.2 में शैलों के अपक्षयण की व्याख्या की गई है। भाग 5.3 में आपने जल की अपक्षयण अभिक्रियाओं के अनेक उदाहरणों का अध्ययन किया है; इन अभिक्रियाओं से जल में अविलेय और विलेय घटकों की उत्पत्ति को समझने में सहायता मिलती है।

5.5.2 मानव गतिविधियां

इकाई 4 में आपने पढ़ा कि बांधों के निर्माण, वनोन्मूलन और जल की दिशा को उसके प्राकृतिक रास्ते से बदलने से पर्यावरण तंत्र को क्षति पहुंचती है। आपने यह भी देखा कि जलमृतों को अधिक पंप करने से किस प्रकार खारा जल और उसके ऊपर मौजूद मीठा जल परस्पर मिश्रित हो जाता है। तटीय क्षेत्रों में इसके फलस्वरूप समुद्र जल अन्दर प्रवेश कर जाता है। इकाई 4 में विस्तार पूर्वक बताया गया है कि बढ़ती आबादी का जल की मांग पर क्या प्रभाव पड़ता है। उद्योगों से जल-स्रोत धीरे-धीरे समाप्त हो रहे हैं। हर बार जल का उपयोग करने से उत्पन्न गंदा जल, जल निकाय में मिल जाता है जिससे जल गुणवत्ता का ह्रास हो जाता है। इस पाठ्यक्रम के खंड 4 में आप इन सभी पहलुओं पर विस्तार से अध्ययन करेंगे।

आइए, देखें कि अपक्षयण अभिक्रियाओं के उत्पादों, बहुत अधिक वाहित तल, अत्यधिक उर्वरित खेतों के वाह जल और औद्योगिक बहि:स्राव के मिलने से नदी तंत्र की जल-गुणवत्ता पर क्या प्रभाव पड़ता है। याद रखिए, कि ये नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम, कार्बन तथा पादप वृद्धि के लिए आवश्यक अन्य पोषक तत्वों के समृद्ध स्रोत हैं।

5.5.3 जैविक रूपांतरण

पोषक संचयन और शैवाल, वायुजीवी तथा अवायुजीवी बैक्टीरिया की क्रियाओं का जलीय निकाय पर तीव्र प्रभाव पड़ता है। इस पहलू की व्याख्या निम्न प्रकार की जा सकती है।

सुपोषण

MAADHYAM IAS

जब किसी झील या जलाशय जैसे जल निकाय में घरेलू अपशिष्ट में मौजूद पोषक और कार्बनिक पदार्थ बड़ी मात्रा में प्रवाहित होकर मिलते हैं तो उसमें शैवाल और जल हायासिन्थ बहुत अधिक पैदा होते हैं। ऐसे जलीय निकाय को सुपोषण (eutrophication) की स्थिति में कहा जाता है। जिसका यूनानी अर्थ है "अच्छी तरह पोषित''। सुपोषण वह स्थिति है जिसमें पोषक तत्वों के अंत: प्रवाह के कारण जलीय निकाय की जल गुणवत्ता में अत्यधिक ह्रास हो जाता है।

आइए, अब कार्बनिक द्रव्य के जैवनिम्नीकरण के रूप में गुणवत्ता ह्रास के कारण की व्याख्या करें।

पोषक तत्व समृद्ध जल निकाय, समीकरण 5.56 के अनुसार, प्रकाश संश्लेषण द्वारा पर्याप्त पादप जैव द्रव्य उत्पन्न करता है। कुछ जन्तु जैव द्रव्य भी उत्पन्न होते हैं। अत्यधिक शैवाल वृद्धि के कारण जल परत में से सीमित प्रकाश वेधन होता है। इसके अलावा जल की आविलता से प्रकाश वेधन भी कम होता है और प्रकाश संश्लेषण प्रभावित होता है। शैवाल कोशिकाएं मरने लगती हैं। इससे जल निकाय पर अपघटनीय कार्बनिक द्रव्य भार बढ़ जाता है वायुजीवी बैक्टीरिया, घुली ऑक्सीजन का उपयोग कर कार्बनिक द्रव्य का अपघटन कर देते हैं।

$$\left[\text{कार्बनिक द्रव्य}\right] + O_2 \xrightarrow{\text{वायुजीव}} CO_2 + H_2O + NO_3^- + SO_4^{2-} + PO_4^{3-} + \text{ऊर्जा} \quad ....(5.57)$$

वायुजीवी उपचयन के कारण घुली ऑक्सीजन की सान्द्रता कम हो जाती है। जब घुली ऑक्सीजन की सान्द्रता बहुत कम हो जाती है तो अवायुजीवी बैक्टीरिया, कार्बनिक द्रव्य का अपघटन करता है। समीकरण 5.57 के अनुसार किसी जलीय निकाय में उत्पन्न नाइट्रेट, सल्फेट, फॉस्फेट आदि यौगिक और अपशिष्ट जल के अंतर्प्रवाह के कारण विद्यमान नाइट्रेट, सल्फेट, फॉस्फेट का अलग चरणों में अमोनिया, हाइड्रोजन सल्फाइड, फ़ॉस्फ़ीन आदि में रूपांतरण हो जाता है। ध्यान दीजिए कि नाइट्रेट का पहले नाइट्रोजन गैस में अपचयन होता है। अवायुजीवी बैक्टीरिया द्वारा नाइट्रोजन गैस के अपचयन से अमोनिया बनता है।

$$\left[\text{कार्बनिक द्रव्य}\right] + NO_3^- + SO_4^{2-} + PO_4^{3-} \xrightarrow{\text{अवायुजीव}} CH_4 + CO_2 + N_2 + PH_3 + H_2S + \text{ऊर्जा} \quad .... (5.58)$$

यदि कार्बनिक द्रव्य कार्बोहाइड्रेट, $[CH_2O]$, हो तो जल निकाय में अवायुजीवी बैक्टीरिया द्वारा अमोनिया और हाइड्रोजन सल्फाइड के निर्माण को इस प्रकार निरूपित कर सकते हैं। याद रखिए कि $[CH_2O]$ कार्बोहाइड्रेट का केवल प्रतीकात्मक निरूपण है। यह कार्बोहाइड्रेट का अणु सूत्र नहीं है।

i) अमोनिया के निर्माण के लिए समीकरण 5.58 के अनुसार उत्पन्न नाइट्रोजन अथवा वायुमंडल की नाइट्रोजन का उपयोग किया जाता है। यह जैविक नाइट्रोजन यौगिकीकरण का उदाहरण है।

$$3[CH_2O] + 2N_2 + 3H_2O \rightarrow 3CO_2 + 4NH_3 \quad .... (5.59)$$

ii) जल में मौजूद सल्फेट आयन का अवायुजीवी बैक्टीरिया द्वारा H_2S में अपचयन हो जाता है। H_2S के बाइकार्बोनेट आयन के साथ अम्ल-क्षारक साम्य द्वारा HS^- आयन प्राप्त होता है।

$$SO_4^{2-} + 2\left[CH_2O\right] \rightarrow 2HCO_3^- + H_2S \quad .... (5.60)$$

$$H_2S + HCO_3^- \rightarrow HS^- + CO_2 + H_2O \quad .... (5.61)$$

किसी जलीय निकाय के जैवनिम्नीकरण का कुल परिणाम यह है कि NH_3 और HS^- आदि क्षारकीय प्रजातियों के निर्माण से pH में वृद्धि हो जाती है। NH_3, H_2S और PH_3 जैसे अपघटन उत्पाद विषालु होते हैं जबकि NH_3 और H_2S में दुर्गंध भी होती है। यही कारण है कि जैवनिम्नीकरण से अति प्रभावित जल निकाय के आसपास दुर्गंध आती है। साथ ही आविषालुता के कारण मछली आदि जलीय प्रजातियों की बड़ी संख्या में मृत्यु हो जाती है। अगली अवस्था क्या हो सकती है? नीचे देखिए।

दलदल निर्माण

कुछ जल निकायों में तालाबों और जलाशयों के तल पर मृत जैवद्रव्य एकत्रित हो जाता है जहां इसका अंशतः क्षय हो जाता है। इससे C, N, P, K, Ca और Mg आदि पोषक तत्वों का

समीकरण 5.57 में कार्बनिक द्रव्य शब्द सामूहिक रूप से कार्बोहाइड्रेटों, प्रोटीनों और अन्य उपचयन कार्बनिक पदार्थों को निरूपित करता है जो जल निकाय में मौजूद होते हैं। समीकरण 5.57 सामान्य रूप से कार्बनिक द्रव्य के वायुजीवी उपचयन के उत्पादों को निरूपित करता है। वास्तविक उत्पाद कार्बनिक द्रव्य के संघटन पर निर्भर करते हैं। समीकरण 5.58 सामान्य तरीके से अवायुजीवी उपचयन के उत्पादों को निरूपित करता है।

किसी जलीय निकाय में विशेष रूप से दलदल वाले स्थान में जैवनिम्नीकरण के फलस्वरूप मेथैन के उत्पादन के कारण मेथैन को मार्श गैस कहते हैं।

मल की गहरी नालियों में मरम्मत अथवा सफाई के लिए प्रवेश करने वाले श्रमिकों को घुटन, शारीरिक क्षति, संक्रमण तथा घरेलू और औद्योगिक अपशिष्ट के संयुक्त प्रभाव से होने वाले खतरों का सामना करना पड़ता है। इन पदार्थों के वायुजीवी और अवायुजीवी उपचयन से (समीकरणों 5.57 से 5.61 के अनुसार) CO_2, CH_4, H_2S आदि यौगिक उत्पन्न होते हैं। इन गैसों के उत्पन्न होने से मल नालियों के अंदर ऑक्सीजन कम हो जाती है। सुरक्षा उपाय अपनाए बिना श्रमिक की मृत्यु भी हो सकती है। मृत्यु का मुख्य कारण दम घुटना है जबकि वे एक आवश्यक किन्तु सबसे अधिक उपेक्षित काम करते हैं।

MAADHYAM IAS

पुनर्चक्रण होता है। तल पर एकत्रित ठोस पदार्थ दलदल बनाते हैं जिससे जल निकाय की जल उपयोगिता नष्ट हो जाती है।

बोध प्रश्न 7

सुपोषण द्वारा जल निकाय किस प्रकार प्रभावित होता है?

....

....

....

5.6 जल में गैसों की विलेयता

जल में O_2, CO_2 आदि गैसों की विलेयता पर सावधानीपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है क्योंकि वह जल गुणवत्ता और जलीय जीवन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है साथ ही जल निकाय के अंदर और बाहर गैसों का स्थानान्तरण बहुत महत्वपूर्ण है उदाहरणार्थ कार्बनिक अपशिष्ट के बैक्टीरिया निम्नीकरण के कारण क्षय ऑक्सीजन की पूर्ति वायु से जल में स्थानांतरण द्वारा की जाती है ताकि जलीय जीवन बना रहे। इन प्रक्रमों को समझने के लिए गैस स्थानांतरण के नियमों को समझना आवश्यक है। आइए, इन पहलुओं की विस्तार से चर्चा करें।

i) जल में गैसों की विलेयता

भौतिक रासायन (सी एच ई-04) पाठ्यक्रम की इकाई 10 के भाग 10.5 में, गैसों के द्रवों में विलयनीकरण पर विस्तार से चर्चा की गई है। इस भाग से संबंधित मूल लक्षणों को समझने के लिए आप उसका अध्ययन करें।

जल में गैस की विलेयता निम्न कारकों पर निर्भर करती है :

क) ताप

ख) दाब

ग) गैस की प्रकृति

घ) विलायक तंत्र में अन्य पदार्थों की उपस्थिति।

क) ताप का प्रभाव

गैसों की विलेयता पर ताप का प्रभाव, ताप विद्युत घरों के निकट जल निकायों में देखा जा सकता है। निकटवर्ती जलीय निकाय में गर्म जल के विर्सजन से ताप बढ़ जाता है जिससे घुली ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है। इस तथ्य से समस्या और बढ़ जाती है कि गरम जल का घनत्व कम होता है और वह ठंडे जल के ऊपर तैरता है जिससे ऑक्सीजन का अंदर की ओर बेधन नहीं हो सकता है। इसका जलीय जीवन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

जल में गैस का विलयनीकरण ऊष्माक्षेपी (exothermic) प्रक्रम है। इसलिए भौतिक रसायन (सी एच ई-04) पाठ्यक्रम की इकाई 14 के भाग 14.8 में वर्णित ला-शातैलिए नियम के अनुसार द्रव में गैस की विलेयता ताप-वृद्धि के साथ घट जाती है। उदाहरण के लिए सारणी 5.4 में दिए गए आंकड़ों को देखिए।

सारणी 5.4: आसुत जल और समुद्री जल में ऑक्सीजन की विलेयता

ताप/^{0}C	O_2 की विलेयता/ppm	
	आसुत जल	समुद्री जल*
10	11.3	9.0
20	9.1	7.3
30	7.5	6.2

* यह माना गया है कि समुद्री जल में 20 ग्राम क्लोरीन है जो 1 किलोग्राम नमूने में कुल हैलाइड सान्द्रता के तुल्य है।

(स्रोत : एन्वाइरनमेन्टल इनआर्गेनिक केमेस्ट्री, इतामर बोडेक और अन्य द्वारा संपादित, परगामन, न्यूयार्क, 1998, पृष्ठ 10.6-9)

MAADHYAM IAS

ख) दाब का प्रभाव - हेनरी का नियम

द्रवों में गैसों की विलेयता पर दाब का बहुत प्रभाव पड़ता है क्योंकि घुलने पर गैसों के आयतन में बहुत परिवर्तन हो जाता है। 1803 में अंग्रेज रसायनज्ञ हेनरी ने ज्ञात किया कि किसी दिए ताप पर जैसे गैस का दाब बढ़ता है द्रव में गैस की विलेयता भी बढ़ जाती है। हेनरी नियम इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है :

स्थिर ताप पर विलयन के ऊपर गैस का आंशिक दाब विलयन में गैस की सान्द्रता के अनुक्रमानुपाती होता है।

गणितीयत: हेनरी नियम को इस प्रकार लिख सकते हैं :

$$p_i = Kx_i \qquad .... (5.62)$$

p_i और x_i गैस घटक के आंशिक दाब और मोल अंश है। K, हेनरी स्थिरांक कहलाता है और इसकी दाब की विमाएं होती हैं। हेनरी का नियम किसी द्रव में गैस के तनु विलयनों के लिए मान्य है– वह भी जब ये दोनों रसायनत: अभिक्रिया न करें। वास्तव में, जल निकायों में पाए जाने वाले गैसीय घटकों की सान्द्रताएं पर्याप्त कम होती हैं और हेनरी नियम प्रयुक्त किया जा सकता है। कुछ गैसों के हेनरी नियम स्थिरांक सारणी 5.5 में दिए गए हैं।

गैस की विलेयता की दाब पर निर्भरता का एक गंभीर परिणाम यह है कि गहरे समुद्री गोताखोरों के लहु में अधिक नाइट्रोजन गैस घुल जाती है। जब गोताखोर सतह पर वापिस आता है तो आधिक्य में घुली नाइट्रोजन झाग के रूप में उत्पन्न होती है, परिणामत: लहु धार में यह कई सारे बुलबुले बनाती है। ये बुलबुले नलिकाओं (संकरी नलियां जो लहु वितरित करती हैं) को अवरुद्ध कर सकते हैं। कोशिकाओं को पर्याप्त ऑक्सीजन प्राप्त नहीं होती है जिसके कारण एक दर्दनाक स्थिति पैदा होती है जिसे 'झुकाव' (bends) कहते हैं जो गंभीर अवस्थाओं में मृत्यु का कारण हो सकती है। झुकावों का खतरा कम किया जा सकता है, यदि गोताखोर की ऑक्सीजन आपूर्ति को तनु करने के लिए हीलियम का उपयोग किया जाए क्योंकि नाइट्रोजन की तुलना में हीलियम लहु में काफी कम विलेय होती है।

सारणी 5.5 : विलायक के रूप में जल के लिए 25°C पर हेनरी-नियम स्थिरांक

गैस	$K/10^9$ Pa
H_2	7.12
N_2	8.68
O_2	4.40
CO_2	5.80
CO	0.17

आइए, निम्नलिखित उदाहरण द्वारा समीकरण 5.62 के उपयोग को स्पष्ट समझें।

उदाहरण 4

25°C पर ऑक्सीजन गैस के लिए हेनरी नियम स्थिरांक 4.4×10^9 Pa है। यदि जल के ऊपर ऑक्सीजन गैस का आंशिक दाब 2.473×10^4 Pa हो तो घुली ऑक्सीजन की मात्रा परिकलित कीजिए।

समीकरण 5.62 के उपयोग से घुली ऑक्सीजन का मोल अंश $= \dfrac{P_i}{K} = \dfrac{2.473\times10^4 \text{ Pa}}{4.4\times10^9 \text{ Pa}}$

$$= 5.62 \times 10^{-6}$$

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

उपर्युक्त आंकड़ों के संगत घुली ऑक्सीजन की मात्रा का मान समीकरण 5.4 द्वारा 10 ppm के बराबर परिकलित किया जा चुका है। देखिए भाग 5.3 में, उदाहरण 3।

ग) गैस की प्रकृति

साधारणतया जो गैसें रसायनत: किसी विलायक के साथ अभिक्रिया करती हैं वे अन्य विलायकों की अपेक्षा उसमें अधिक विलेय होती हैं। उदाहरण के लिए, हाइड्रोजन क्लोराइड और आमोनिया, बेन्ज़ीन की अपेक्षा जल में अधिक विलेय हैं। साथ ही जिन गैसों को आसानी से

यदि dc/dt ऋणात्मक हो तो गैस, द्रव सतह से मुक्त हो जाती है क्योंकि वह जलीय निकाय में गैस की सान्द्रता की न्यूनता को निर्दिष्ट करता है। दूसरी ओर dc/dt का धनात्मक मान, अधिक मात्रा में गैस के विलीनीकरण को निर्दिष्ट करता है।

अपशिष्ट जल में से H_2S, NH_3 आदि हानिकारक गैसों को पृथक करने के लिए निकाय में से वायु का धमन किया जाता है। निकलने वाली वायु अपने साथ घुली गैसों को ले जाती है। वायुजीवी उपचार संयंत्र इस नियम के अनुसार काम करते हैं।

द्रवीकृत किया जा सकता है वे सामान्य विलायकों में अधिक विलेय होते हैं। अमोनिया इसका उदाहरण है जो आसानी से द्रवीकृत हो जाता है।

घ) अन्य घुले पदार्थों का प्रभाव

जल निकायों में मौजूद लवण, गैस विलेयता को पर्याप्त प्रभावित करते हैं। सामान्यतया N_2, O_2 आदि गैसों की विलेयता लवण सान्द्रता में वृद्धि से घट जाती है क्योंकि इन स्थितियों में अधिकांश जल, आयनों के साथ जलयोजन जल के रूप में संयुक्त रहता है। ऑक्सीजन गैस के लिए इसे सारणी 5.5 में दिया गया है।

अभी तक हमने गैसों की जल में विलेयता की चर्चा की। आइए, अब अंतरण दर के पहलुओं पर विचार करें।

ii) गैसों की अंतरण दर

द्रव में गैस की सान्द्रता को परिवर्तन दर से निर्दिष्ट किया जाता है। गैस की अंतरण दर को गणितीयत: dc/dt द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है जिसे इस प्रकार व्यक्त करते हैं :

$$dc/dt = k_a(c_s - c) \qquad .... (5.63)$$

जिसमें c_s और c द्रव में गैस के विलयन की क्रमश: संतृप्ति सान्द्रता और वास्तविक सान्द्रता हैं। k_a भौतिक स्थिति से संबंधित स्थिरांक है। उल्लेखनीय है कि यदि $c > c_s$ अर्थात् वास्तविक सान्द्रता, संतृप्ति मान से अधिक हो तो द्रव पृष्ठ से गैस मुक्त होती हैं। विपरीत मामले में गैस, द्रव पृष्ठ पर स्थानांतरित हो जाती है।

उदाहरण के लिए जलीय पादपों और शैवाल द्वारा प्रकाश संश्लेषण से शुद्ध ऑक्सीजन उत्पन्न होती है जिसका आंशिक दाब वायु में ऑक्सीजन के आंशिक दाब से अधिक होता है। हेनरी के नियम के अनुसार प्रकाश संश्लेषण के कारण घुली ऑक्सीजन सान्द्रता (c) संतृप्ति मान (c_s) से अधिक होती है। ऐसी स्थिति में जल निकाय से ऑक्सीजन मुक्त होती है क्योंकि dc/dt का ऋणात्मक मान होता है।

स्थिरांक k_a का मान पृष्ठ क्षेत्रफल के साथ बढ़ता और जल के आयतन के साथ घटता है। साथ ही k_a, ताप, जल पृष्ठ पर फिल्मों, प्रक्षेभ और जल में घुले अवयवों पर भी निर्भर करता है। इस संकल्पना के आधार पर सभी वायुजीवी उपचार संयंत्रों में वायु आपूर्ति के लिए यांत्रिकत: पृष्ठ-क्षेत्र बढ़ाया जाता है।

बोध प्रश्न 8

जल में नाइट्रोजन गैस की अपेक्षा अमोनिया गैस अधिक विलेय है। स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

5.7 कार्बोनेट साम्य

हम भाग 5.3 में कार्बोनेटों और बाइकार्बोनेटों की उत्पत्ति तथा जलीय निकायों की क्षारता को निर्धारित करने में उनकी जलीय भूमिका का उल्लेख कर चुके हैं। इस अनुच्छेद में इन आयनों से संबंधित साम्यों की चर्चा करेंगे। आइए, पहले उनके जैविक महत्व पर प्रकाश डालें।

आप जानते हैं कि कई जैविक गतिविधियों में pH बनाए रखना पड़ता है। जीव, आंतरिक pH में किसी परिवर्तन के विरुद्ध रक्षा साधन के रूप में बफर पद्धति का उपयोग करते हैं। फास्फ़ेट और बाइकार्बोनेट दो महत्वपूर्ण जैविक बफर हैं। फ़ॉस्फ़ेट बफर पद्धति में $H_2PO_4^{2-}$ तथा HPO_4^{2-} आयन होते हैं और वह सभी कोशिकाओं के साइटोप्लाज्म में क्रिया करता है। समीकरण 5.66 द्वारा निरूपित बाइकार्बोनेट बफर पद्धति, कार्बोनेट साम्य का एक भाग है जिसकी यहां चर्चा की जाएगी। जलीय निकायों और मानव रुधिर के pH को बनाए रखने के लिए बाइकार्बोनेट बफर पद्धति का बहुत महत्व है। OH^-, CO_3^{2-} तथा HCO_3^- के बीच साम्य नीचे दिए गए हैं।

CO_2 गैस का घुलना

$$CO_2\,(g) + H_2O\,(l) \rightarrow CO_2(aq) \qquad .... (5.64)$$

कार्बोनिक अम्ल का निर्माण

$$CO_2\,(aq) \rightarrow H_2CO_3(aq) \qquad .... (5.65)$$

कार्बोनिक अम्ल का वियोजन (बाइकार्बोनेट बफर पद्धति)

$$H_2CO_3(aq) \rightarrow H^+(aq) + HCO_3^{2-}\,(aq) \qquad .... (5.66)$$

बाइकार्बोनेट आयन का वियोजन

$$HCO_3^-\,(aq) \rightarrow H^+(aq) + CO_3^{2-}\,(aq) \qquad .... (5.67)$$

कार्बोनेट आयन का जल अपघटन

$$CO_3^{2-}\,(aq) + H_2O(l) \rightarrow HCO_3^-\,(aq) + OH^-\,(aq) \qquad .... (5.68)$$

शैवाल द्वारा प्रकाश संश्लेषण

$$2\,HCO_3^-\,(aq) + h\nu \rightarrow [CH_2O] + O_2(g) + CO_3^{2-}(aq) \qquad .... (5.56)$$

समीकरण 5.64 और 5.65, $CO_2(aq)$ और $H_2CO_3(aq)$ के बीच भिन्नता बतलाते हैं। $CO_2(aq)$ शिथिलत: जल योजित कार्बन डाइऑक्साइड को बतलाता है जबकि $H_2CO_2(aq)$ कार्बोनिक अम्ल को दर्शाता है। $CO_2(aq)$ का $H_2CO_3(aq)$ में परिवर्तन एक मंद प्रक्रिया है जिसका वैश्लेषिक रसायन और जैवरसायन में बहुत महत्व है।

वैश्लेषिक रसायन की दृष्टि से मंद अभिक्रिया प्रदर्शित करने के लिए फीनॉल्फथेलीन सूचक युक्त सोडियम हाइड्रॉक्साइड के तनु विलयन में कार्बन डाइऑक्साइड का संतृप्त विलयन मिलाया जाता है। गुलाबी रंग के लुप्त होने में कई सेंकंड लग जाते हैं जो यह बतलाता है कि उदासीनीकरण के लिए आवश्यक कार्बोनिक अम्ल, समीकरण 5.56 के अनुसार, शिथिलतः, जल योजित कार्बन डाइऑक्साइड से धीरे-धीरे निर्मित होता है। इसके विपरीत फीनॉल्फथेलीन सूचक युक्त सोडियम हाइड्रॉक्साइड के तनु विलयन में तनु ऐसीटिक अम्ल मिलाने से तत्काल उदासीनीकरण हो जाता है जैसा कि गुलाबी रंग के लोप से ज्ञात होता है। यह परिकलित किया गया है कि घुली कार्बन डाइऑक्साइड के 480 अणुओं में से केवल एक अणु, कार्बोनिक अम्ल में परिवर्तित होता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

रसायन के विद्यार्थी होने के नाते आप स्वीकार करेंगे कि समीकरण 5.68 के अनुसार कार्बोनेट आयन के जल अपघटन को अनुकूल नहीं माना जाता है क्योंकि यह उस मूल तथ्य के विरुद्ध है कि किसी दुर्बल अम्ल के लवण (HCO_3^- आयन) से प्रबल क्षारक (जैसे हाइड्रॉक्साइड आयन) ही दुर्बल क्षारक (जैसे CO_3^{2-} आयन) को प्रतिस्थापित कर सकता है। दूसरे शब्दों में केवल समीकरण 5.68 का अनुकूल होना ही अपेक्षित है किन्तु शैवाल द्वारा,

समीकरण 5.56 के अनुसार, प्रकाश संश्लेषण के लिए कार्बन के स्रोत के रूप में बाइकार्बोनेट आयन का उपयोग, समीकरण 5.68 द्वारा निरूपित अभिक्रिया को अग्र दिशा में संचालित करता है। फलस्वरूप OH^- आयन की सान्द्रता महत्वपूर्ण हो सकती है। **बहुत अधिक शैवाल वाले जल का pH 10 तक हो सकता है।**

आइए, अब साम्यों की जैव रसायन की दृष्टि से जांच करें। इस संदर्भ में श्वसन पर बाइकार्बोनेट बफर की भूमिका का विस्तृत अध्ययन आवश्यक है। H_2CO_3 और CO_3^- मिश्रण, जिसे बाइकार्बोनेट बफर कहते हैं, के कारण रुधिर धारा का pH 7.4 के आसपास नियंत्रित रहता है। यह समीकरणों 5.64 से 5.66 में दी गई अभिक्रियाओं अथवा उनके विपरीत के द्वारा होता है। मानव रुधिर सहित जैविक पद्धतियों में, *कार्बोनिक ऐनहाइड्रेज* नामक एन्जाइम इन समीकरणों द्वारा संचालित साम्यों को नियंत्रित करता हैं। अनुमान है कि एन्जाइम का एक अणु प्रति सेकंड $CO_2(g)$ के 6×10^5 अणुओं के $H_2CO_3\ (aq)$ में रूपांतरण को उत्प्रेरित कर सकता है। अभिक्रियाओं के क्रम को इस प्रकार समंजित किया जाता है कि $CO_2(g)$ प्राय: काय तरलों (body fluids) में $HCO_3^-(aq)$ के रूप में और निष्कासन से पहले फेफड़ों के वायु अंतरालों में $CO_2(g)$ के रूप में पाई जाए। H^+ सान्द्रता में वृद्धि (अर्थात् *अम्लता (acidosis)* की स्थिति) का अनेक अभिक्रियाओं द्वारा प्रतिकार किया जाता है जो समीकरणों 5.64 से 5.67 के के विपरीत में हैं से अभिक्रियाएं उल्टे क्रम में, समीकरण 5.67 से समीकरण 5.64 तक, होती हैं और अंतत: उच्छ्वसन (exhalation) के दौरान CO_2 की अतिरिक्त मात्रा का निष्कासन हो जाता है। उसी प्रकार किसी उपापचयी प्रक्रम (*क्षारमय* (*alkalosis*) की स्थिति) के कारण OH^- में वृद्धि का प्रतिकार H^+ द्वारा उदासीनीकरण से होता है। इसके बाद अग्रकर्षण होता है। यह समीकरण 5.64 से समीकरण 5.67 के क्रम में होता है। दूसरे शब्दों में, उदछ्वासिन $CO_2(g)$ की मात्रा कम हो जाती है। हमें याद रहना चाहिए कि अनेक शरीरक्रियात्मक कार्य विशेष रूप से जो एन्ज़ाइम गतिविधियों पर निर्भर करते हैं वे pH विशिष्ट होते हैं। यदि रुधिर का pH नियामक क्रियाविधि, बाह्य कारकों (पर्यावरणी आदि) अथवा शरीरक्रियात्मक कारकों (उपापचयी अम्लों का अधिक उत्पादन जैसे अनियंत्रित मधुमेह में होता है) अथवा दोनों के कारण पराभूत हो जाए तो उससे गंभीर स्वास्थ्य संकट उत्पन्न हो सकते हैं यहां तक कि मृत्यु भी हो सकती है।

बोध प्रश्न 9

किसी जल निकाय में शैवाल की तीव्र वृद्धि से pH में वृद्धि क्यों हो जाती है। स्पष्ट व्याख्या कीजिए।

....

....

....

MAADHYAM IAS

5.8 सारांश

इस इकाई में हमने जल निकायों के भौतिक, रासायनिक और जैव अभिलक्षणों की चर्चा की। प्राकृतिक कारकों, मानव गतिविधियों और जैवनिम्नीकरण के रूप में जल निकायों के अवयवों की उत्पत्ति की व्याख्या प्रस्तुत की गई। गैसों की विलेयता को निश्चित करने वाले कारकों का उल्लेख किया गया। $CO_2(g)$, $CO_2(aq)$, $H_2CO_3(aq)$, OH^-, HCO_3^- और CO_3^{2-} के परस्पर साम्य के विभिन्न पहलुओं को निर्दिष्ट किया गया। इस इकाई की सामग्री गुणवत्ता कसौटी को समझने में सहायक होगी जिनकी चर्चा आगामी इकाई में की जाएगी।

5.9 अंत में कुछ प्रश्न

1) नदी के जल में घुली ऑक्सीजन की मात्रा सर्दियों में 11 ppm और गर्मियों में 9.4 ppm होती है। स्पष्ट कीजिए।

2) क्षारता किस प्रकार जलीय निकायों को सहायता प्रदान करती है ?

3) 100 घन सेन्टीमीटर जल के नमूने को फीनॉल्फथेलीन सूचक की उपस्थिति में M/20 HCl के 10 घन सेन्टीमीटर की आवश्यकता हुई। उसी जल के नमूने के 100 घन सेन्टीमीटर को मेथिल आरेन्ज सूचक की उपस्थिति में M/20 HCl के 30 घन सेन्टीमीटर की आवश्यकता हुई। HCO_3^-, CO_3^{2-} और OH^- क्षारताओं को परिकलित कीजिए। बोध प्रश्न 2 में दिए गए चरणों और संकेतों का अनुसरण कीजिए।

4) यदि जल, वायु के संपर्क में हो जिसमें नाइट्रोजन का आंशिक दाब 7.81×10^4 पास्कल हो तो 20°C पर जल में नाइट्रोजन गैस की विलेयता परिकलित कीजिए। H_2 का हेनरी नियम स्थिरांक 8.68×10^9 पास्कल है (**संकेत:** समीकरणों 5.62 और 5.4 का उपयोग कीजिए।)

5) रासायनिक ऑक्सीजन मांग निर्धारित करते समय 20 घन सेन्टीमीटर जल के नमूने को अम्लीकृत पोटैशियम डाइक्रोमेट की आवश्यकता होती है जो 0.1 M फेरस अमोनियम सल्फेट विलयन के 29.9 घन सेन्टीमीटर के तुल्य है। रासायनिक ऑक्सीजन मांग परिकलित कीजिए। (**संकेत:** समीकरण 5.54 का उपयोग करें)।

6) घुली ऑक्सीजन का निर्धारण करते समय 50 घन सेन्टीमीटर जल के नमूने का अनुमाप मान 0.025 M सोडियम थायोसल्फेट विलयन का 2.8 घन सेन्टीमीटर प्राप्त होता है। घुली ऑक्सीजन परिकलित कीजिए। (**संकेत:** समीकरण 5.42 का उपयोग कीजिए)।

7) सल्फाइड खानों में से बहने वाला जल संक्षारक होता है। स्पष्ट कीजिए।

8) दलदल कैसे बनता है?

9) जलीय पादपों और शैवाल के प्रकाश संश्लेषण से जलीय निकाय वायुमंडल में ऑक्सीजन मुक्त करता है। गैस की अंतरण दर के संदर्भ में इसकी व्याख्या कीजिए।

5.10 उत्तर

बोध प्रश्न

1) ताप वृद्धि से उपापचयी अभिक्रिया दर में वृद्धि गैसों की विलेयता में कमी (उदाहरण के लिए घुली ऑक्सीजन की मात्रा में कमी) तथा परतों का स्तरण होता है। साथ ही जल निकाय की वैद्युत चालकता में वृद्धि होती है (जिससे यह अधिक संक्षारक प्रकृति का हो जाता है।)

2) i) समीकरण 5.10 से,

$$CaCO_3 \text{ के रूप में फीनॉल्फथेलीन क्षारता } (P) = \frac{10^5 \times 0.05 \times 12}{2 \times 100} \text{ ppm}$$

$$= 300 \text{ ppm}$$

समीकरण 5.11 से, $CaCO_3$ के रूप में मेथिल ऑरेन्ज क्षारता $(T) = \dfrac{10^5 \times 0.05 \times 20}{2 \times 100}$ ppm

$$= 500 \text{ ppm}$$

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

ii) क्योंकि $P > \frac{1}{2} T$ अत: सारणी 5.3 से निष्कर्ष निकलता है कि जल का नमूना स्थिति (iv) का है।

iii) इस सारणी के स्तंभ 3, 4 और 5 से, हम लिख सकते हैं कि,

$$CaCO_3 \text{ के रूप में } OH^- \text{ क्षारत्र} = (2 \times 300 - 500) \text{ ppm}$$
$$= 100 \text{ ppm}$$

$$CaCO_3 \text{ के रूप में } CO_3^{2-} \text{ क्षारता} = 2\,(500 - 300) \text{ ppm}$$
$$= 400 \text{ ppm}$$

$$CaCO_3 \text{ के रूप में } HCO_3^- \text{ क्षारता} = 0$$

3) वायुमंडल की अपेक्षा गहरी मृदाओं में CO_2 सान्द्रता और उसका आंशिक दाब बहुत अधिक होता है। हेनरी नियम के अनुसार भौमजल में अधिक CO_2 घुली होती है जिससे HCO_3^- और CO_3^{2-} की सान्द्रताएं बढ़ जाती हैं।

4) समीकरण 5.31 से,

$$CaCO_3 \text{ के रूप में कुल कठोरता} = \frac{10^5 \times 0.01 \times 3.4}{50} \text{ ppm}$$
$$= 68 \text{ ppm}$$

5) समीकरण 5.20 से,

$$\text{जल के नमूने में क्लोराइड आयन की सान्द्रता} = \frac{3.545 \times 10^4 \times 0.0141 \times 5.5}{50} \text{ ppm}$$
$$= 55 \text{ ppm}$$

6) वायुजीवी बैक्टीरिया घुली ऑक्सीजन का उपयोग कर उपापचयी परिवर्तन करते हैं। उपापचयी अभिक्रियाओं को करने के लिए अवायुजीवी बैक्टीरिया जल निकायों के सल्फेट, नाइट्रेट तथा फ़ास्फ़ेट यौगिकों से रसायनत: जुड़ी ऑक्सीजन का उपयोग करते हैं।

7) सुपोषण से घुली ऑक्सीजन की मात्रा में कमी, H_2S, NH_3 आदि दुर्गंधयुक्त और हानिकारक पदार्थों का निर्माण और pH में वृद्धि हो जाती है। संक्षेप में जल निकाय खराब हो जाता है।

8) जल के साथ अभिक्रिया करने वाली गैसें, दूसरी गैसों की अपेक्षा अधिक विलेय होती हैं। अमोनिया की जल के साथ अभिक्रिया से अमोनियम हाइड्रॉक्साइड प्राप्त होता है। दूसरा, अमोनिया गैस को आसानी से द्रवित कर सकते हैं। यह पहलू भी उच्च विलेयता में सहायक होता है। N_2 गैस न तो जल के साथ अभिक्रिया कर सकती है और न आसानी से द्रवित होती है।

9) शैवाल, HCO_3^- आयन का उपभोग कर जैव द्रव्य बनाता है। इसके द्वारा कार्बोनेट आयन का OH^- आयन में जल अपघटन हो जाता है जो अन्यथा प्रतिकूल अभिक्रिया है। इससे pH बढ़ जाता है।

MAADHYAM IAS

अंत में कुछ प्रश्न

1) घुली ऑक्सीजन, ताप के व्युत्क्रमानुपाती होती है।

2) जल निकाय की क्षारता बफर क्रिया द्वारा उसको pH परिवर्तन से बचाती है।

3) समीकरण 5.10 से,

$$CaCO_3 \text{ के रूप में फीनाल्फथेलीन क्षारता } (P) = \frac{10^5 \times 0.05 \times 10}{2 \times 100} \text{ ppm}$$

$$= 250 \text{ ppm}$$

समीकरण 5.11 से,

$$CaCO_3 \text{ के रूप में } (T) \text{ मेथिल ऑरेन्ज क्षारता} = \frac{10^5 \times 0.05 \times 30}{2 \times 100} \text{ ppm}$$

$$= 750 \text{ ppm}$$

ध्यान दीजिए कि $P < \frac{1}{2} T$. सारणी 5.3 के स्तंभ 1 और 2 से यह निष्कर्ष निकलता है कि जल के नमूने की स्थिति; (ii) है। इस सारणी के स्तंभों 3, 4 और 5 से,

$CaCO_3$ के रूप में OH^- क्षारता = 0 ppm

$CaCO_3$ के रूप में CO_3^{2-} क्षारता = 500 ppm

$CaCO_3$ के रूप में HCO_3^- क्षारता = 250 ppm

4) समीकरण 5.62 से N_2 का मोल अंश = 9×10^{-6}

N_2 का मोलर द्रव्यमान 28 ग्राम मोल$^{-1}$ है।

समीकरण 5.4 में इनके उपयोग से,

(जल के नमूने में N_2 की सांद्रता) = 14.01 ppm

5) समीकरण 5.54 से,

$$\text{रासायनिक ऑक्सीजन मांग} = \frac{8000 \times 0.1 \times 29.9}{20} \text{ ppm}$$

$$= 1196 \text{ ppm}$$

6) समीकरण 5.42 से,

$$\text{घुली ऑक्सीजन} = \frac{8000 \times 0.025 \times 2.8}{50} \text{ ppm}$$

$$= 11.2 \text{ ppm}$$

7) सल्फाइड अयस्कों के उपचयन से एक उत्पाद के रूप में सल्फ्यूरिक अम्ल का निर्माण होता है। इसके फलस्वरूप pH कम हो जाता है और जल निकायों की संक्षारक प्रकृति हो जाती है।

8) सुपोषण के बाद जल निकाय के तल पर मृत जीव मात्रा एकत्रित हो जाती है। इस प्रकार एकत्रित ठोस पदार्थ दलदल बनाते हैं।

9) पहले प्रकाश संश्लेषण के कारण जलीय पादपों द्वारा ऑक्सीजन जलीय निकाय में मुक्त की जाती है। जब जल निकाय की वास्तविक घुली ऑक्सीजन सान्द्रता, संतृप्ति सान्द्रता से अधिक होती है तो समीकरण 5.63 के अनुसार अंतरण दर का ऋणात्मक मान हो जाता है। दूसरे शब्दों में जल निकाय द्वारा ऑक्सीजन, वायुमंडल में मुक्त की जाती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इकाई 6 जल गुणवत्ता के मापदंड तथा उपयोग

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
उद्देश्य

6.2 जल गुणवत्ता के लिए सरोकार

6.3 विभिन्न उद्देश्यों के लिए जल गुणवत्ता के मापदंड
उद्देश्य, मापदंड तथा मानक–परिभाषा
जल निकायों के वर्गीकरण के लिए जल गुणवत्ता मापदंड एक आधार के रूप में
कारक जो जल गुणवत्ता के मापदंडों के निर्देशन को प्रभावित करते हैं
जल गुणवत्ता के मापदंडों के उपयोग

6.4 परिवीक्षण तथा मूल्यांकन एक परिचर्चा
जल संसाधन प्रबंधन के लिए जल गुणवत्ता परिवीक्षण
ज़ोखिम मूल्यांकन के लिए जल गुणवत्ता परिवीक्षण प्रणाली
नदी जल गुणवत्ता के नियंत्रण के लिए एक व्यापक योजना
परिवीक्षण कार्यक्रमों के उपयोग

6.5 जल गुणवत्ता के परिवीक्षण के लिए विश्लेषणात्मक तकनीकें
परिवीक्षण की भौतिक तथा रासायनिक विधियां
जैव परिवीक्षण
समाकलित परिवीक्षण क्रियाविधि की आवश्यकता

6.6 सारांश

6.7 अंत में कुछ प्रश्न

6.8 उत्तर

6.9 परिशिष्ट

6.1 प्रस्तावना

MAADHYAM IAS

जलाशयों के अनेक उपयोग हैं जैसे नगरपालिका उपयोग, कृषि, उद्योग, मत्स्य पालन, पुनर्रचना आदि के लिए। गुणवत्ता शब्द का उपयोग उसके संभावित उपयोग के सापेक्ष माना जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, पेयजल को शुद्ध तथा निलंबित अशुद्धियों अथवा हानिकारक पदार्थों से मुक्त होना चाहिए। नौकायन के लिए जल गुणवत्ता के नियम कम सख्त हो सकते हैं। मछली तथा समुद्र में उपस्थित अन्य जलीय जीवों के लिए उसका जल उचित गुणवत्ता का होता है क्योंकि उनकी प्रजातियों को अपने जीवन के लिए घुले हुए लवणों, लेश तत्वों (trace elements) तथा पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। समुद्री जल में रहने वाली प्रजातियाँ आसुत जल में लंबे समय तक जीवित नहीं रह पाती हैं, जिसे हम सामान्यत: उच्चतम गुणवत्ता का जल मानते हैं। इन उदाहरणों से, हम ये समझ सकते हैं कि "जल गुणवत्ता" के मतलब को उसके उपयोग के आधार पर ही समझा जा सकता है। इकाई 4 के उपभाग 4.7.2 में हमने उल्लेख किया था कि वर्ष 2025 तक, हमारे देश को 90% से भी अधिक उपयोगी जल

को इस्तेमाल में लाना होगा। इस संदर्भ में, जल गुणवत्ता का प्रबंधन उतना ही महत्वपूर्ण है जितनी कि उसकी मात्रा का। इस इकाई में हम विभिन्न उपयोगों के लिए जल गुणवत्ता के सरोकार तथा मापदंडों को समझाएंगें। हम जल गुणवत्ता के महत्व तथा उसके परिवीक्षण की विधियों की चर्चा करेंगे। हम इकाई का समापन जल गुणवत्ता के परिवीक्षण के लिए कुछ भारतीय प्रयासों की चर्चा करके करेंगे। अंतिम भाग को परिशिष्ट में दिया गया है।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद, आप

- जल गुणवत्ता को उसके विशेष उपयोगों के संदर्भ में परिभाषित करने की आवश्यकता का वर्णन कर सकेंगे;
- जल गुणवत्ता उद्देश्यों, मापदंडों तथा मानकों जैसे शब्दों को परिभाषित कर सकेंगे;
- उन कारकों की व्याख्या कर सकेंगे जो जल गुणवत्ता मानकों के निर्देशन को प्रभावित करते हैं;
- जल निकायों के वर्गीकरण के आधार की व्याख्या कर सकेंगे;
- मूल्यांकन, परिवीक्षण, जोखिम मूल्यांकन, जोखिम प्रबंधन तथा जल गुणवत्ता प्रबंधन जैसे शब्दों को परिभाषित कर सकेंगे;
- जल गुणवत्ता परिवीक्षण तंत्र स्थापित करने की आवश्यकता की व्याख्या कर सकेंगे;
- नदी जल गुणवत्ता नियंत्रण के लिए निकाय की स्थापना से संबंधित चरणों को सूचीबद्ध कर सकेंगे;
- जल गुणवत्ता परिवीक्षण कार्यक्रमों के उपयोगों की व्याख्या कर सकेंगे;
- भौतिक-रासायनिक तथा जीववैज्ञानिक परिवीक्षण विधियों के लाभ तथा हानियों को बता सकेंगे; तथा
- जल गुणवत्ता परिवीक्षण के लिए समाकलित अभिगम (integrated approach) की आवश्यकता की व्याख्या कर सकेंगे।

6.2 जल गुणवत्ता के लिए सरोकार

आइए, जल गुणवत्ता को विशेष संदर्भ में उपयोग के आधार पर परिभाषित करने की आवश्यकता की व्याख्या करें। पहले हम नगरपालिका उपयोग के लिए जल गुणवत्ता की आवश्यकताओं की चर्चा उसके कुछ घटकों के उपयोगी तथा हानिकारक प्रभावों को बताकर करेंगे।

कैलीफोर्निया आधारित एक अनुसंधान समूह द्वारा जल संबंधी रोगों के एक अध्ययन के अनुसार वर्ष 2020 तक, जल संबंधी रोग विश्वभर में 7.6 करोड़ लोगों की मृत्यु का कारण हो सकते हैं, यदि पर्याप्त उपाय नहीं किए गए।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

उन्नीसवीं शताब्दी तक, दुनिया के विभिन्न भागों में अक्सर जल जनित रोग हो जाया करते थे। विस्तृत अध्ययनों से जल जनित रोगों के कारणों का पता लगा। उदाहरण के लिए, सूक्ष्मजीवों तथा उनसे होंने वाले रोगों की सूची निम्नलिखित है।

विषाणु (virus)	-	हिपेटाइटिस (hepatitis), पोलियोमाइलिटिस (poliomyelitis)
जीवाणु (bacteria)	-	हैजा (cholera), टायफॉइड (typhoid)
प्रोटोजोआ (protozoa)	-	अमीबीय पेचिश (amoebic dysentery)
हेल्मिन्थ (helminth)	-	हुकवर्म (hookworm)

सूखे (drought) को लंबे समय तक औसत से कम मृदा नमी के तौर पर परिभाषित किया जा सकता है। इसके विपरीत शरीरक्रियात्मक सूखे के समय, मृदा नमी अधिक होती है लेकिन पादप जल को अवशोषित करने की स्थिति में नहीं होता है।

संक्षारण (corrosion): यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा धातु के परमाणु सतह पर अपने स्थान को छोड देते हैं तथा विलयनों में आयनों के रूप में स्थायीकृत हो जाते हैं।

उद्योग में 90% जल प्रशीतन के लिए उपयोग किया जाता है और केवल 10% अन्य कार्यों के लिए उपयोग में लाया जाता है।

सारणी 6.2: विभिन्न उपयोगों के लिए जल की गुणवत्ता के सरोकार

उपयोग का प्रकार	घटक अथवा पैरामीटर तथा प्रभाव
i) कृषि	1) **उच्च टी डी एस (high TDS):** इससे उच्च परासरणी दाब हो जाता है क्योंकि मृदा जड़ों द्वारा जल अवशोषण को रोक देती है, इसके कारण पादप के लिए शरीरक्रियात्मक सूखे की स्थिति हो सकती है, यद्यपि मृदा में नमी अधिक होती है। इसके कारण मृदा की लवणता कम हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप पादप वृद्धि तथा अनाज की उपज कम हो जाती है।
	2) **उच्च Na^+ की सान्द्रता** (high Na^+ concentration): यह ऊपर बताई गई मृदा लवणता की समस्या को बढ़ा देता है। यह मृदा को कठोर बनाकर उस की भौतिक संरचना को प्रभावित करता है। मृदा में से जल का अंतः स्पंदन (infiltration) प्रभावित होता है जिससे जल रुद्ध (stagnant) हो जाता है। इसके कारण बीज सड़ सकते हैं, फ़सल मुरझा सकती है तथा मच्छर संबंधी समस्याएं तथा रोग जैसे मलेरिया, फिलेरिएसिस आदि हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त, ये पर्णहरित (chlorophyll) को प्रभावित कर सकता है तथा पत्तियों का पीलापन, शुष्कन तथा जल्दी गिर जाना संभव कर सकता है।
	3) **उच्च सल्फेट तथा क्लोराइड सान्द्रता** (high sulphate and chloride concentration): ये दोनों पादप के लिए फॉस्फोरस तथा कार्बनिक अम्लों की उपलब्धता को कम कर देते हैं। उच्च क्लोराइड सान्द्रता भी क्लोरोफिल को प्रभावित करती है तथा पत्तियों का पीलापन, शुष्कन तथा जल्दी गिरना संभव कर सकती है।
	4) **उच्च बोरोन** (high boron): ये क्लोरोफिल को प्रभावित कर सकता है तथा पत्तियों का पीलापन, शुष्कन तथा जल्दी गिरना संभव कर सकता है।
	5) **अस्वाभाविक pH** (unusual pH): यह सिंचाई की पाइप लाइनों, स्प्रिंकलरों (sprinklers) आदि का संक्षारण कर सकता है।
ii) उद्योग	1) **उच्च टी डी एस सान्द्रता** (high TDS concentration): ये संक्षारण को बढ़ा सकता है।
	2) **उच्च बाइकार्बोनेट तथा सल्फेट सान्द्रता** (high bicarbonate and sulphate concentration): कैल्सियम तथा मैग्नीशियम के कार्बोनेटों (बाइकार्बोनेटों के अपघटन से बनते हैं) से बायलरों तथा पाइपों 4 पपडी (scale) जम जाती है। निक्षेपों के कारण ऊष्मा व्यर्थ होती है तथा चरम स्थितियों में विस्फोट तक हो सकता है।
	3) **उच्च डी ओ (high DO):** इससे गंभीर संक्षारण की समस्या होती 8।
	4) **कार्बनिक भार :** इसमें निम्न pH वाले अपघटन उत्पादों के कारण संक्षारण की समस्या हो जाती है। इससे झाग बन सकते हैं

MAADHYAM IAS

जो वाष्प के प्रवाह को प्रभावित करते हैं। ये आयन विनिमय के रेज़िनों को भी क्षति पहुंचाते हैं।

5) **सूक्ष्मजीव** (microorganisms): इंजीनियरी सयंत्रों पर क्रमिक संचयन से मशीनों के गतिशील भागों की कुशलता कम हो सकती है। ये जैव प्रदूषण कहलाता है। बिजली घरों में ये बिजली उत्पादन को प्रभावित कर देता है।

6) **क्लोराइड** (chloride): 250 ppm से ऊपर होने पर यह खाद्य संसाधन के लिए उपयुक्त नहीं होता, क्योंकि स्वाद प्रभावित हो जाता है। 1000 ppm से अधिक होने पर, यह अत्यधिक संक्षारी होता है, इतनी उच्च क्लोराइड सान्द्रता वाले जल के नमूनों का उपयोग औद्योगिक प्रशीतन के लिए नहीं किया जाता है।

iii) जलीय जीवन

1) **क्षारीयता तथा** pH (alkalinity and pH): क्षारीयता अपनी बफर क्रिया (buffering action) के द्वारा जलीय प्रजातियों को अम्लीय प्रदूषकों से बचाती है। 5 से कम तथा 9 से ऊपर के pH मान विषाक्त होते हैं।

2) **अमोनिया** (ammonia): लगभग 0.06 ppm अमोनिया में मछली गिल की क्षति से पीड़ित हो सकती हैं। 2 ppm से ऊपर होने पर मछली मर भी सकती है।

3) डी ओ (DO): जलीय जीवन के लिए न्यूनतम 4.5 ppm की आवश्यकता होती है। मछलियों की अच्छी फ़सल के लिए 9 ppm DO स्तर की आवश्यक्ता होती है। गर्मियों में, उपापचयी अभिक्रियाएं तेज गति से होती हैं तथा डी ओ 3 ppm से कम नहीं होना चाहिए। सर्दियों में, कम DO की आवश्यकता होती है।

4) **कार्बन डाइऑक्साइड**: यदि पर्याप्त क्षारीयता होती है, तो CO_2 उसके उदासीनीकरण में सहायक होती है। यदि जल का pH कम होगा, तो CO_2 सान्द्रण में थोड़ी सी भी वृद्धि जलीय जीवन को काफी क्षति पहुंचता सकती है: जलीय निकायों द्वारा इसके उदासीनीकरण की कोई गुंजाइश नहीं होती है। मछली की प्रजातियों द्वारा श्वसन प्रभावित हो जाएगा। बादल वाले दिन और भी हानिकारक हो सकते हैं, क्योंकि जलीय पादपों द्वारा प्रकाश संश्लेषण कम मात्रा में होगा। डी ओ उपलब्धता कम हो जाएगी। क्योंकि सभी जलीय प्रजातियों का श्वसन जारी रहेगा। अत: CO_2 का स्तर बहुत अधिक बढ़ जाएगा कम DO स्तर तथा अधिक CO_2 स्तर हानिकारक हो सकता है।

5) **तापमान** (temperature): उच्च तापमान DO स्तर को कम कर देता है, जो घातक हो सकता है।

6) **आविलता** (turbidity): ये मछली के गिलों को बंद करके उन्हें सीधे ही मार सकता है। प्रकाश का बेधन ना हो पाने के कारण जलीय पादपों द्वारा प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है। परिणामस्वरूप, जलीय पादप मर जाते हैं जिससे मछली की प्रजातियों के लिए भोजन की कमी हो जाती है। डी ओ स्तर भी कम हो जाता है। ये सभी जलीय जीवन के लिए प्रतिकूल होते हैं।

गिल (Gill):
मछली जैसे जलीय जीवों के सांस लेने में इस्तेमाल होने वाला अंग

उपापचयी दर (Metabolic rate) : वह दर है जिसके द्वारा उपापचयी अभिक्रियाऐं होती हैं। एक महत्वपूर्ण अभिक्रिया जिसकी चर्चा इकाई 5 की समीकरण 5.57 में की गई है, जहां पोषक तत्व घुली हुई ऑक्सीजन का उपयोग करके ऑक्सीजन उत्पाद तथा ऊर्जा प्रदान करते हैं। किसी भी रासायनिक अभिक्रिया की तरह की, उपापचयी अभिक्रिया की दर भी तापमान बढ़ने के साथ ही बढ़ जाती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

iv) मनोरंजन के उपयोग	**मनोरंजन की तीनों श्रेणियों के लिए समान*:** **1) नील हरित शैवाल, वाहित मल कवक आदि:** ये भौतिक असुविधा कर सकते हैं तथा सौंदर्यबोध के हिसाब से भी आपत्तिजनक होते हैं। **2) जलीय पादपों की अत्यधिक वृद्धि:** इससे तैराकों को दूर तक देखने में परेशानी होती है। ये पादप तैराकों के शरीर से उलझकर भी उन्हें पीड़ा पहुंचा सकते हैं। 3) **कार्बनिक पदार्थ, तेल, ग्रीज़ आदि:** ये पदार्थ भी देखने में बुरे लगते हैं तथा अवांछित रंग, गंध, स्वाद तथा फेन (foam) आदि उत्पन्न कर सकते हैं। ये विषाक्त भी हो सकते हैं। **सिर्फ तैराकी, नहाने तथा सर्फिंग के लिए :** **1) विषाक्त रसायन तथा रोगजनक जीव** (toxic chemicals **and pathogenic** organisms): आंख, नाक, कान, गले तथा त्वचा से संबंधित रोगों के संपर्क में आने का खतरा रहता है। **2) pH:** जल का **pH7.4** के आसपास होना चाहिए जो अश्रुद्रव (lachrymal fluid) के pH जितना ही है, अन्यथा इससे आंखों में जलन हो सकती है। **3) तापमान (temperature):** तापमान कक्ष तापमान से अधिक कम या ज्यादा नहीं होना चाहिए।

सर्फिंग (Surfing): धारा के बहाव के साथ तट की ओर विशेष तौर पर बहुत ही हल्की नौका (जिसे सर्फ नौका कहते हैं) पर चढ़कर आने का खेल

जल स्कीइंग (Water skiing): यह एक खेल है जिसमें बोर्ड पर स्थित व्यक्ति को तेजी से मोटरबोट द्वारा उछाला जाता है। स्की बोर्ड लंबे तार या चेन द्वारा मोटरबोट से मजबूती से जुड़ा रहता है।

अश्रुद्रव (Lachrymal fluid): आंखों में स्थित ग्रंथियों से होने वाला स्राव

*** नोट:** जलीय निकायों के मनोरंजन उपयोगों की तीन श्रेणियां हैं। पहली श्रेणी में जल से सीधे संपर्क की आवश्यकता होती है जैसे तैरने, नहाने तथा सर्फिंग में। दूसरी श्रेणी में जल से कम संपर्क होता है जैसे नौकायन, मछली पकड़ना तथा स्कीइंग। तीसरी श्रेणी में शरीर का जल से संपर्क नहीं होता है तथा इसका एक परिचित उदाहरण जलाशयों के आसपास का भ्रमण है। पहली श्रेणी के लिए, गुणवत्ता आवश्यकताएं कठोर होती हैं।

यद्यपि हमने जल के अलग-अलग घटकों तथा पैरामीटरों के उसके विभिन्न उद्देश्यों के लिए उपयोगों पर प्रभाव को सूचीबद्ध करने की कोशिश की है पर उनके संयुक्त प्रभाव काफी भिन्न हो सकते हैं। निम्नलिखित उदाहरणों को देखिए:

i) जब हम सिंचाई के जल में Na^+ आयन के विषाक्तन को समझने की कोशिश करते हैं आवश्यकता होती है। इसके लिए, हमें पद सोडियम अवशोषण अनुपात (sodium absorption ratio, SAR) को परिभाषित करना होगा।

सिंचाई कार्यों के लिए 10 से अधिक SAR मूल्य वाले जल का उपयोग नां करना उचित रहता है। उच्च SAR मान के जल से निरंतर सिंचाई करने से मृदा कठोर हो जाती है। Na^+ आयन जल के लिए मृदा की पारगम्यता को कम कर देते हैं।

$$\text{सोडियम अवशोषण अनुपात} = \frac{(Na^+)}{\sqrt{\left[\left(Ca^{2+} + Mg^{2+}\right)\right]/2}} \quad \text{.... (6.1)}$$

MAADHYAM IAS

(Na^+), (Ca^{2+}) तथा (Mg^{2+}) की सान्द्रताओं को तुल्य प्रति दस लाख (equivalents per million, epm) इकाई में अभिव्यक्त किया जाता है, जो मिली तुल्यांक प्रति लीटर (milliequivalents per litre) के समान होता है।

यद्यपि सिंचाई जल की उपयुक्तता निर्धारित करने के लिए और भी अनेक समान प्राचलों (parameters) पर विचार किया जाता है, हमने SAR का उल्लेख एक उदाहरण के रूप में किया है।

$$x\,\text{epm} = x\ \text{milliequivalents per litre}$$
$$= \frac{x\ \text{mg per litre (ppm)}}{\text{घटक का तुल्यांकी भार}} \quad \text{.... (6.2)}$$

10 से अधिक SAR मान के जल को कृषि कार्यों के लिए इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि इसमें Na^+ की मात्रा अधिक होती है तथा इससे सारणी 6.2 में बताई गई जल अंत:स्पंदन **(infiltration)** की समस्याएं हो जाती हैं। यदि जल में पर्याप्त मात्रा में Ca^{2+} तथा Mg^{2+} आयन होते हैं, तो मृदा की पारगम्यता **(permeability)** बनी रहती है। मृदा फिर Na^+ आयनों की बजाय इन आयनों को अवशोषित करती है। दूसरी ओर, जिस जल में HCO_3^- की सान्द्रता अधिक होती है; उसमें, कैल्सियम तथा मैग्नीशियम आयनों को मृदा की परत पर उनके कार्बोनेटों के रूप में अवक्षेपित करने की प्रवृत्ति होती है क्योंकि उनमें वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन **(evapotranspiration)** की प्रक्रिया होती है; पहले, बाइकार्बोनेट बनते हैं जो अपघटित होकर कार्बोनेट बनाते हैं। इसका मतलब है कि जल के नमूने का SAR मान बढ़ जाता है जो Na^+ आयनों के कारण संकट पैदा कर सकता है।

ii) एक प्रकार के घटकों की उपस्थिति अन्य प्रकार के घटकों की उपस्थिति को कम कर देती है, **यह विरोधी अभिक्रिया (antagonistic reaction)** कहलाती है। उदाहरण के लिए, उच्च सल्फेट अथवा क्लोराइड सान्द्रता वाले सिंचाई जल में पादपों के लिए फ़ॉस्फ़ोरस तथा कार्बनिक अम्लों की उपलब्धता वांछित स्तर से कम हो जाती है।

iii) ज्ञात सांद्रता में दो घटकों का संयुक्त प्रभाव अधिक विषाक्तता पैदा कर सकता है जबकि उनमें से प्रत्येक का अलग-अलग रूप से समान सांद्रता में प्रभाव कम होता है। यह **संकर्मी अभिक्रिया (synergistic reaction)** कहलाती है। उदाहरण के लिए, **5** के आस-पास **pH** तथा आयरन की 0.9 ppm सान्द्रता जलीय जीवन के लिए अलग-अलग अधिक विषाक्त नहीं होती हैं, लेकिन अगर ये दोनों स्थितियां एक साथ उपस्थित हों, तो मछली की प्रजातियां मर जाती हैं। दूसरा उदाहरण यह है कि जलीय जीवन के लिए अमोनिया के कारण विषाक्तता तापमान के बढ़ने के साथ अथवा DO स्तर के कम हो जाने के साथ बढ़ जाती है।

उपयुक्त चर्चा से, हमने देखा कि जल के प्रस्तावित उपयोग के आधार पर जल की गुणवत्ता पर विचार किया जाना चाहिए। **इसलिए हम जल की गुणवत्ता को "जल के उन भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक गुणों के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जिनके द्वारा उपयोगकर्ता जल की ग्रहणशीलता का मूल्यांकन करते हैं।"** अगले भाग में, हम जल गुणवत्ता मापदंडों पर प्रकाश डालेंगे।

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित मानों का उपयोग करके सोडियम अवशोषण अनुपात (SAR) की गणना कीजिए:
(Ca^{2+}) = 2.32 eprn, (Mg^{2+}) = 1.44 epm; (Na^+) = 7.73 epm.

....

....

बोध प्रश्न 2

सिंचाई के जल में उच्च बाइकार्बोनेट सान्द्रता के प्रभाव को बताइए।

....

....

बोध प्रश्न 3

जलीय जीवन के लिए जल की गुणवत्ता पर निरंतर बादल के मौसम के प्रभाव को बताइए।

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

6.3 विभिन्न उद्देश्यों के लिए जल गुणवत्ता के मापदंड

जल गुणवत्ता से संबंधित जानकारी को वैज्ञानिक तरीके से समझने के लिए, आपको उपयुक्त शब्दावली का ज्ञान होना चाहिए। आपको तीन पदों की जानकारी स्पष्ट रूप से होनी चाहिए– उद्देश्य, मापदंड तथा मानक।

6.3.1 उद्देश्य, मापदंड तथा मानक – परिभाषा

जल गुणवत्ता नियंत्रण में पद "उद्देश्य" उस लक्ष्य को बताता है जिसे प्राप्त किया जाना है अथवा उस आदर्श स्थिति को बताता है जो आप प्राप्त करना चाहते हैं। **उद्देश्य सामान्यीकृत वक्तव्य होते हैं जो गुणवत्ता नियंत्रण में वांछित परिणामों के बारे में बताते हैं।** जैसे, भारत सरकार ने वर्ष 1985 में "गंगा एक्शन प्लान/गंगा कार्य योजना (Ganga Action Plan)" को इस उद्देश्य के साथ शुरू किया था कि गंगा तथा उसकी सहायक नदियों का जल नहाने के स्तर का हो जाए। हमें ये समझ लेना चाहिए कि ये उद्देश्य ही अंतिम लक्ष्य है जिसके लिए संबद्ध संगठनों तथा एजेन्सियों को कार्य करना चाहिए। कई बार, उद्देश्य के रूप में निर्धारित किए गए लक्ष्य को प्राप्त करना कठिन हो जाता है, हालांकि प्रयास किए जाते हैं। यही नहीं, जल गुणवत्ता उद्देश्य जल निकाय की विशेषताओं को अथवा उसे प्राप्त करने के लिए अपनायी जाने वाली कार्यविधि को स्पष्ट रूप से बता नहीं पाते हैं।

उद्देश्यों को समझने के लिए, विशेषज्ञ तथा विशिष्ट उपयोगकर्ता समूह प्रत्येक विशेष कार्य के लिए जल के वांछित गुणों को वक्तव्य के रूप में परिभाषित करते हैं जिन्हें जल गुणवत्ता मापदंड (water quality criteria) कहते हैं। ये मापदंड जल के अभिलक्षण के रूप में निर्देश तथा सुरक्षा सीमाएँ प्रदान करते हैं। **जल गुणवत्ता मापदंड वे वक्तव्य होते हैं जो जल के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणों के लिए एवं उसके घटकों के लिए सुरक्षा सीमाओं को परिभाषित करते हैं।** किसी जल निकाय के गुणों की स्थापित मापदंडों के साथ तुलना बताती है कि वह जल निकाय उस विशेष उपयोग के लिए उपयुक्त है अथवा नहीं। सामान्यत: जल गुणवत्ता मापदंड सारणी के रूप में दिए रहते हैं जैसे सारणी 6.3 में दिखाए गए हैं। जल गुणवत्ता मापदंड वैज्ञानिक तथ्यों से बनाए जाते हैं जिन्हें अनेकों परीक्षणों के बाद प्राप्त किया जाता है। गुणवत्ता मापदंड सैंकड़ों पृष्ठों के आंकड़ों के सारतत्व होते हैं जिन्हें जल मृदा एवं वायु के विभिन्न घटकों तथा तापमान, pH आदि की स्थितियों के लिए कार्य कर रहे विशेषज्ञों द्वारा एकत्रित किया जाता है। मापदंड हमेशा के लिए स्थिर नहीं होते है, बल्कि आगे परीक्षण किए जाने पर उनमें परिवर्तन की भी गुंजाइश होती है।

अब हम पद जल मानक (water standards) को परिभाषित करेंगे। **जल मानक कुछ प्राधिकृत एजेन्सियों द्वारा उपयोग के प्रकार, गुणवत्ता मापदंड तथा अन्य गुणों जैसे प्रायोगिक प्राप्यता (practical attainability), लागत, स्थानीय स्थितियों, जन आवश्यकताओं आदि पर विचार करके प्रस्तावित किए जाते हैं।** यद्यपि सामान्यत: निर्धारित किए गए मानक गुणवत्ता मापदंडों के अनुरूप ही होते हैं, कभी-कभी किसी विशेष संगठन द्वारा अनुभव की गई आवश्यकताओं के आधार पर भिन्न भी हो सकते हैं। जैसे, भारत में, सामान्यत: निम्न चार ऐजेन्सियों द्वारा निर्धारित किए गए पेयजल मानक उपयोग में लाए जाते हैं :

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

1) बी आई एस/BIS (ब्यूरो ऑफ इंडियन स्टैण्डर्डस)
2) आई सी एम आर/ICMR (इंडियन कांउसिल ऑफ मेडीकल रिसर्च)
3) सी पी एच ई ई ओ/CPHEEO (सेन्ट्रल पब्लिक हेल्थ एंड एन्वायरमेन्टल इंजीनियरिंग ऑर्गनाइजेशन)
4) डब्ल्यू एच ओ/WHO (विश्व स्वास्थय संगठन/वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गनाइजेशन)

जल के औद्योगिक उपयोगों में, बताए गए मानक, उद्योग के प्रकार तथा उसकी विशिष्ट आवश्यकता पर निर्भर करते हैं।

पेयजल आपूर्ति तथा व्यर्थ जल के निपटान के लिए कार्य करने वाली एजेन्सियों के साथ तीन प्रकार के मानक सम्बन्ध होने चाहिए।

अभिकल्प मानक (Design Standards) जो जल आपूर्ति अथवा व्यर्थ जल निपटान की सुविधाओं के लिए बनने वाले संयंत्रों के प्रकार के संदर्भ में, उनकी क्षमता तथा उनके निर्माण में इस्तेमाल किए जाने वाले घटक पदार्थों के चयन की शर्तों के बारे में बताते हैं।

निष्पादन मानक (Performance standards) जो जल में घटकों की अंतिम सान्द्रता के संदर्भ में पाबंदी लगाते हैं जिसे ऊपर बताए गए संयंत्रों का उपयोग करके प्राप्त किया जाना चाहिए।

- प्रक्रियात्मक **मानक** (Procedural Standards) जल गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए अपनाए जाने वाले तरीकों के बारे में बताते हैं। प्रक्रियात्मक मानक निम्नलिखित के लिए अपनाए जाने वाली प्रक्रियाओं पर लागू होते हैं।
  - i) संयंत्रों के निर्माण तथा क्रियान्वयन के लिए लाइसेन्स तथा परमिट प्राप्त करने में,
  - ii) जल गुणवत्ता अथवा बहि:स्रावी (effluent) गुणवत्ता के संदर्भ में उनके निष्पादन का निरीक्षण करने में,
  - iii) एक तरफ नियामक ऐजेन्सियों जैसे प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (Pollution Control Boards) तथा स्वास्थ्य प्राधिकरणों के साथ तथा दूसरी तरफ नगरपालिका प्राधिकरणों (पेयजल आपूर्ति अथवा व्यर्थ जल के निपटान में) अथवा उद्योगों (बहि:स्राव के निपटान में) के साथ आंकड़ों के विनिमय तथा संप्रेषण के दौरान।

इन तीनों मानकों के अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए, परिवीक्षण का कार्य करने के लिए नियामक ऐजेन्सियों की आवश्यकता होती है।

6.3.2 जल निकायों के वर्गीकरण के लिए जल गुणवत्ता के मापदंड आधार के रूप में

यद्यपि जलीय निकायों के वर्गीकरण के लिए अनेक विधियां उपलब्ध हैं, पर केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सी पी सी बी) ने "अभिकल्पित श्रेष्ठ उपयोग" (designated best use) की संकल्पना पर एक विधि विकसित की है। इसके अनुसार, किसी जल निकाय विशेष के जितने भी उपयोग होते हैं, उनमें से जिस उपयोग के लिए श्रेष्ठतम गुणवत्ता वाले जल की आवश्यकता होती है उसे उसका "अभिकल्पित श्रेष्ठ उपयोग" कहते हैं, और उसी के अनुसार जल निकाय की रचना की जाती है। सी पी सी बी ने जल के लिए ऐसे पांच "अभिकल्पित श्रेष्ठ उपयोगों" की पहचान की है।

जल निकाय की अभिकल्पना: जल निकाय के जल का A, B, C, D, E के रूप में वर्गीकरण, जो उसके उपयोग पर निर्भर करता है जिसके लिए श्रेष्ठतम गुणवत्ता की आवश्यकता होती है। A उच्चतम गुणवत्ता को तथा E निम्नतम को दर्शाता है।

- उस जल निकाय का जल जिसका उपयोग बिना पारंपरिक उपचार के सिर्फ विसंक्रमित करके (क्लोरीनीकरण आदि) पीने के लिए किया जा सकता हो उसे 'A' वर्ग का जल कहते हैं।
- उस जल निकाय का जल जिसका उपयोग बाहर नहाने के लिए किया जा सकता है उसे 'B' वर्ग का जल कहते हैं।
- उस जल निकाय का जल जिसका उपयोग पारंपरिक उपचार के बाद पीने के लिए किया जा सकता है उसे 'C' वर्ग का जल कहते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

- उस जल निकाय का जल जिसका उपयोग वन्य जीवन तथा मत्स्य पालन के प्रवर्धन के लिए किया जाता है, उसे 'D' वर्ग का जल कहते हैं।
- उस जल निकाय का जल जिसका उपयोग सिंचाई, औद्योगिक प्रशीतन तथा नियंत्रित व्यर्थ जल निपटान के लिए किया जा सकता है उसे 'E' वर्ग का जल कहते हैं।

उन पांच में से प्रत्येक "अभिकल्पित श्रेष्ठ उपयोगों" के लिए, CPCB ने कुछ रासायनिक/जैविक अभिलक्षणों के आधार पर जल गुणवत्ता आवश्यकताओं की पहचान की है जिन्हें "प्राथमिक जल गुणवत्ता मापदंड" **(primary water quality criteria)** कहते हैं। "अभिकल्पित श्रेष्ठ उपयोग" तथा उनके प्राथमिक जल गुणवत्ता मापदंडों को सारणी 6.3 में दिया गया है।

कोलीफॉर्म समूह के बैक्टीरिया की उपस्थिति जल की बैक्टीरियायी गुणवत्ता का फैसला करती है। इस समूह का व्यापक रूप में पाया जाना वाला सदस्य *Escherichia coli* है।

सारणी 6.3 : जल निकायों का उपयोग आधारित वर्गीकरण तथा उनके मापदंड

अभिकल्पित श्रेष्ठ उपयोग	जल का वर्ग	मापदंड
पेयजल स्रोत बिना पारंपरिक उपचार पर रोगाणुनाशन के बाद (क्लोरीनीकरण आदि का उपयोग करके)	**A**	1. कुल कोलीफॉर्म जीव 50 MPN/100 ml अथवा कम 2. pH 6.5 से 8.5 के बीच 3. घुली हुई ऑक्सीजन 6 ppm या अधिक 4. जैवरासायनिक ऑक्सीजन मांग (3 दिन तथा 27°C) 2 ppm या कम
बाहर नहाने के लिए	B	1. कुल कोलीफॉर्म जीव 500 MPN/100 ml या कम 2. pH 6.5 से 8.5 के बीच 3. घुली हुई ऑक्सीजन 5 ppm या अधिक 4. जैवरासायनिक ऑक्सीजन मांग (3 दिन तथा 27°C) 3 ppm या कम
पारंपरिक उपचार के साथ पेयजल स्रोत	**C**	1. कुल कोलीफॉर्म जीव 5000 MPN/100 ml या कम 2. pH 6 से 9 के बीच 3. घुली हुई ऑक्सीजन 4 ppm या अधिक 4. जैवरासायनिक ऑक्सीजन मांग (3 दिन तथा 27°C) 3 ppm या कम
वन्य जीवन तथा मत्स्य पालन के प्रवर्धन के लिए	**D**	1. pH 6.5 से 8.5 के बीच 2. घुली हुई ऑक्सीजन 4 ppm या अधिक

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

		3. मुक्त अमोनिया मांग (N के रूप में) 1.2 ppm अथवा कम
सिंचाई, औद्योगिक प्रशीतन तथा नियंत्रित व्यर्थ जल निपटाना	ε	1. pH 6.0 से 8.5 के बीच 2. 25^oC पर वैद्युत चालकता 2250 μS/cm से कम 3. सोडियम अवशोषण अनुपात (SAR) 26 से कम 4. बोरोन 2 ppm से कम

नोट: MPN सबसे संभावित संख्या (most probable number) को दर्शाता है, इसकी गणना सांख्यिकीय प्रक्रिया के आधार पर की जाती है।

(स्रोत: भारत की जल गुणवत्ता सांख्यिकी, केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, दिल्ली, 1991)

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने देश के प्रमुख जल संसाधनों को उनके श्रेष्ठ अभिकल्पित उपयोगों के आधार पर वर्गीकृत किया है तथा जल उपयोग मानचित्र (Water Use Map) तैयार किया है। साथ ही निरीक्षण किए गए आंकड़ों के आधार पर जिन्हें राष्ट्रीय जल गुणवत्ता परिवीक्षण नेटवर्क द्वारा एकत्रित किया गया है। भारत का जल गुणवत्ता मानचित्र (Water Quality Map) तैयार किया गया है। जल गुणवत्ता मानचित्र को जल उपयोग मानचित्र पर अध्यारोपित करने का विचार है जिससे उन जल निकायों अथवा उनके भागों की पहचान की जा सके जिनमें सुधार (पुर्नस्थापन) किए जाने की आवश्यकता हो। उपलब्ध जानकारी से, 86 प्रदूषित नदियों के विस्तारों की पहचान की गई है। वर्तमान में, जल गुणवत्ता प्रबंधन पर लगभग सभी पॉलिसी तथा कार्यक्रम जिनमें गंगा एक्शन प्लान/गंगा कार्य योजना (Ganga Action Plan) तथा नेशनल रिवर एक्शन प्लान/राष्ट्रीय नदी कार्य योजना (National River Action Plan) सम्मिलित हैं, सभी आंशिक रूप से इस श्रेष्ठ अभिकल्पित उपयोग संकल्पना पर आधारित हैं।

6.3.3 कारक जो जल गुणवत्ता के मापदंडों के निर्देशन को प्रभावित करते हैं

विभिन्न वर्ग के जल उपयोगों के लिए गुणवत्ता मापदंडों को अंतिम रूप देते समय निम्नलिखित पहलुओं पर विचार किया जाता है।

i) प्रत्येक वर्ग के उपभोक्ताओं की विशिष्ट आवश्यकताएं तथा अभिलक्षण

भाग 6.2 में, हमने समझाया था कि किस प्रकार गुणवत्ता प्राचल (parameter) जल के विभिन्न उपयोगों के अनुसार भिन्न-भिन्न होते हैं। यहां तक कि जल उपयोग के एक वर्ग में भी उपभोक्ताओं द्वारा किसी दिए गए उद्दीपन (stimulus) के लिए प्रदूषक के रूप में विभिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाएं होती हैं। हम इस पहलू को जलीय जीवन के उदाहरण से समझा सकते हैं।

- जलीय जीवों को वैयक्तिक रूप से अथवा एक प्रजाति के रूप में प्रदूषकों के कारण समान स्तर की हानि नहीं होती है। उदाहरण के लिए, संवेदनशील मछलियां जैसे ट्राउट (Trout) तथा साल्मन (Salman) मछली NH_3 का स्तर 0.2 ppm के आसपास होने पर ही मरने लगती है, जबकि कार्प (Corp) जैसी मछलियां NH_3 का स्तर 2 ppm तक हो जाने पर भी सहन कर लेती हैं। किसी वर्ग के लिए गुणवत्ता मापदंड बनाते समय अधिक संवेदनशील प्रजातियों की प्रतिक्रिया आवश्यक होती है।
- जलीय खाद्य जाल (food web) परभक्षी तथा शिकार जीवों के बीच एक जटिल संबंध होता है। जल घटक जो किसी रूप में खाद्य जल के महत्वपूर्ण खंड को क्षति पहुंचा सकता

MAADHYAM IAS

इस इकाई के परिशिष्ट में दी गई सामग्री (भाग 6.9) उपभाग 6.4.2 तथा 6.4.3 में दी गई संकल्पनाओं के विवरण के लिए उपयुक्त है। जल गुणवत्ता के संबंध में हाइड्रोलॉजी परियोजना जोखिम मूल्यांकन की विस्तृत अध्ययन योजना का एक उदाहरण है। गंगा कार्य योजना नदी जल गुणवत्ता के नियंत्रण की एक व्यापक स्कीम को लागू करने का विवरण करती है।

में गंभीर अपसामान्यताएं पाई जाती हैं तो उपचार के तरीकों अथवा नियंत्रण की नीति के लिए उपाय किए जाने चाहिए। उपचार के तरीकों को लागू करने के लिए अपनायी जाने वाली प्रक्रिया **जोखिम प्रबंधन** (risk management) कहलाती है। जोखिम मूल्यांकन तथा जोखिम प्रबंधन की संयुक्त गतिविधियों को **जल गुणवत्ता प्रबंधन** (water quality management) के नाम से जाना जाता है। जोखिम प्रबंधन संगठन के संपूर्ण उद्देश्य पर निर्भर करता है– कि वह

- सुरक्षित जल आपूर्ति प्रदान करने के लिए है अथवा
- उपचारित नगरपालिका के व्यर्थ जल के विसर्जन (discharge) के लिए है, अथवा
- उद्योगों के बहि:स्रावों के विसर्जन के लिए है अथवा
- नदी निकाय की जल गुणवत्ता के नियंत्रण के लिए है।

परिवीक्षण जोखिम मूल्यांकन तथा जोखिम प्रबंधन दोनों के लिए आवश्यक है। यदि यह सिर्फ आवर्ती रूप से (periodically) जल निकाय के लिए जोखिम का पता करने के लिए हो तो, **कार्यों की योजना उपभाग 6.4.2 में दिए गए विवरणों के अनुसार की जाती है।** यदि किसी संगठन जैसे नदी प्राधिकरण का उद्देश्य, जल गुणवत्ता प्रबंधन करने का हो, तो जोखिम मूल्यांकन तथा जोखिम प्रबंधन दोनों के लिए व्यापक कार्य योजना की आवश्यकता होती है, **इसका विवरण उपभाग 6.4.3 में दिया गया है।**

6.4.2 जोखिम मूल्यांकन के लिए जल गुणवत्ता परिवीक्षण प्रणाली

आइए, हम मान लें कि किसी संगठन का उद्देश्य जोखिम मूल्यांकन के लिए नदी जल गुणवत्ता का परिवीक्षण करना है। संगठन को अपने लक्ष्य को पूरा करने के लिए काम करने वालों, अवसंरचना (infrastructure), उपकरण, कांच की वस्तुओं, रसायनों, प्रशिक्षण आदि के लिए बजट पर विचार करना होगा। इसमें लगने वाले समय का पता लगाना होगा तथा नमूने लेने (sampling) से लेकर निष्कर्षों की रिपोर्ट बनाने (reporting) तक के सभी कार्यों को उस समय सीमा में करना होगा, अन्यथा, परिवीक्षण के लिए किए प्रयासों के वांछित परिणाम नहीं दिखायी देंगे।

जोखिम मूल्यांकन के नदी जल गुणवत्ता परिवीक्षण प्रणाली को स्थापित करने के लिए निम्नलिखित आवश्यकताएं होती हैं:

i) परिवीक्षण की उपयोगिता का परीक्षण करने के लिए **मूल्यांकन अन्त्य बिंदु** (assessment endpoint) तथा **मापन अन्त्य बिंदु** (measurement endpoint) को विनिर्दिष्ट किया जाना चाहिए। मूल्यांकन अन्त्य बिंदु उस वास्तविक पर्यावरणीय मूल्य की औपचारिक अभिव्यक्ति है जिसकी सुरक्षा की जानी है। यह सामाजिक स्वीकार्यता सुरक्षित करने में सहायक होती है। पर्यावरणीय गुण ही जनता तथा निर्णय कर्ताओं द्वारा समझे और माने जाते हैं। मापन अन्त्य बिंदु से किसी संकट के लिए प्रेक्षित अथवा मापी गई प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति होती है। ये आसानी से मापा जा सकने वाला पर्यावरणीय गुण है जो मूल्यांकन अन्त्य बिंदु के रूप में चुने गए गुण के अनुरूप होता है। मापन अन्त्य बिंदु को परिवीक्षण मानक का निष्पादन मानक (performance standard) भी माना जा सकता है। उदाहरण के लिए, आइए, हम नदी में औद्योगिक बहि:स्रावों के विसर्जन की पर्यावरणीय समस्या पर विचार करें। प्रबंधन का उद्देश्य मान लीजिए कि, मछली को बिना स्वास्थ्य के जोखिम के खाने योग्य बनाना है। मूल्यांकन अन्त्य बिंदु है "मछली पालन की मात्रा में तथा जनता की मांग में कोई कमी नहीं की जाएगी।" मापन अन्त्य बिंदु, मछली में जैवसान्द्रता के लिए परीक्षण, विषाक्तता के दीर्घस्थायित्व के लिए परीक्षण, आदि के लिए हैं।

MAADHYAM IAS

ii) अध्ययन की रूपरेखा की योजना निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखकर की जानी चाहिए।
- आकलित किए जाने वाले भौतिक, रासायनिक तथा जैविक प्राचलों का चयन
- वांछित जल गुणवत्ता के मापदंड
- मापन की मानकीकृत विधियां
- नमूने लेने के स्थानों का चयन
- नमूने लेने की आवृत्तियां
- उपलब्ध अवसंरचना तथा प्रयोगशाला सुविधाएं, प्रशिक्षण तथा अन्य संसाधन
- सांख्यिकीय आवश्यकताएं आदि।

iii) स्थानिक तथा कालगत भिन्नता आदि के आकलन के लिए तथा मूल्यांकन अन्त्य बिंदु, मापन अन्त्य बिंदु, तथा अध्ययन योजना के चयन के लिए एक मार्गदर्शी अध्ययन किया जाना चाहिए।

स्थानिक भिन्नता (Spatial variance): किसी क्षेत्र के साथ होने वाली भिन्नता

iv) नमूनों को मानक कार्यविधियों के अनुसार एकत्रित किया जाए। नमूनों से संबंधित संपूर्ण विवरणों (जैसे स्थान, आंकड़े, नमूने लेने की विधि आदि) को एकत्रित किया जाए।

कालगत भिन्नता (Temporal variance): समय के साथ होने वाली भिन्नता

v) सभी विश्लेषणों को मानक कार्यविधियों के अनुसार किया जाए तथा परिणामों के उचित रूप से दस्तावेज बनाए जाएं।

vi) आंकड़ों का विश्लेषण सांख्यिकीय कार्यविधियों का उपयोग करके किया जाए।

vii) निष्कर्षों को मूल्यांकन अन्त्य बिंदु तथा मापन अन्त्य बिंदु पर विचार करके निकाला जाना चाहिए।

viii) जल गुणवत्ता समस्याओं, जल गुणवत्ता को सुधारने के लिए अपनायी जाने वाली सुधार क्रियाओं तथा चरण (i) तथा (ii) में उल्लेख किए गए संशोधनों को दिखाते हुए एक विस्तृत रिपोर्ट तैयार की जानी चाहिए।

यह रिपोर्ट जोखिम मूल्यांकन रिपोर्ट का काम करती है।

6.4.3 नदी जल गुणवत्ता के नियंत्रण के लिए एक व्यापक योजना

आइए, अब हम क्रियाओं के उस क्रम का निरीक्षण करें किसका अनुसरण जल गुणवत्ता नियंत्रण में दिलचस्पी रखने वाले नदी प्राधिकरण को करना चाहिए। नदी प्राधिकरण को अपने उद्देश्य निर्धारित करने चाहिए तथा जोखिम मूल्यांकन एवं जोखिम प्रबंधन दोनों के लिए बजट का प्रावधान बनाना चाहिए।

नीचे सुझाए गए चरणों की क्रमबद्ध शृंखला दी जा रही है :

- नदी के स्तर का पता लगाने के लिए उपभाग 6.4.2 के बताए गए विवरणों के अनुसार एक नदी जल गुणवत्ता परिवीक्षण प्रणाली निर्मित और लागू की जानी चाहिए। जांच के लिए एक जोखिम मूल्यांकन रिपोर्ट तैयार की जानी चाहिए।
- संगठन को जोखिम मूल्यांकन रिपोर्ट का परीक्षण कर लेना चाहिए तथा अपने कार्यों की योजना
  - ❖ प्रदूषण के कारण उत्पन्न होने वाले पर्यावरणीय मुद्दों,
  - ❖ प्रदूषण की प्रबलता (यानि उद्भासन मूल्यांकन), तथा
  - ❖ पर्यावरण को होने वाली क्षति की मात्रा (यानि प्रभाव मूल्यांकन) के आधार पर बनानी चाहिए।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

वाहितमल (Sewage) उपचार संयंत्र: नगरपालिका के व्यर्थ जल का पुन: उपयोग करने से पहले अथवा उसे नदी निकाय में मिलाने से पहले उसमें से हानिकारक पदार्थों को निकालने की संपूर्ण सुविधाएं।

बहि:स्राव (Effluent) उपचार संयंत्र: औद्योगिक व्यर्थ जल को पुन: उपयोग करने से पहले अथवा उसे नदी तंत्र में मिलाने से पहले उसमें से हानिकारक पदार्थों को निकालने की संपूर्ण सुविधाएं।

- यदि सुधारों की आवश्यकता हो, तो नीचे दिए गए जोखिम प्रबंधन कार्यविधि के अनुसार कार्य किया जाना चाहिए:
  - ❑ वांछित स्थानों पर वाहित मल उपचार संयंत्र (Sewage Treatment Plants, STPs) तथा बहि:स्राव उपचार संयंत्र (Effluent Treatment Plants, ETPs) संबंधित नगरपालिका प्राधिकरणों अथवा औद्योगिक इकाइयों द्वारा बनाए जाने चाहिए।
  - ❑ प्रदूषण के अन्य पहलुओं जैसे निम्न लागत की सफाई योजनाओं के द्वारा मुक्त मलोत्सर्ग की समस्या का निस्तारण तथा उचित सड़क प्रकाश व्यवस्था! आदि की व्यवस्था के लिए उपाय किए जाने चाहिए।
  - ❑ जैसा कि उपभाग 6.3.1 में बताया गया है, नगरपालिका तथा औद्योगिक इकाइयों द्वारा STPs तथा ETPs के निर्माण तथा क्रियान्वयन में अभिकल्प मानक, निष्पादन मानक तथा कार्यविधि संबंधी मानक का पालन अवश्य किया जाना चाहिए।
  - ❑ तकनीकी, वैज्ञानिक तथा प्रशासनिक स्तरों पर नदी प्राधिकरण द्वारा STPs तथा ETPs का नियमित परिवीक्षण किया जाना चाहिए जिससे ये सुनिश्चित किया जा सके कि उपर्युक्त तीनों मानकों को लागू किया जा रहा है। इन कार्यों के लिए प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की विशेषज्ञ सेवाओं का उपयोग किया जाना चाहिए।
  - ❑ समुदाय स्तर पर नदी प्रदूषण को रोकने की जरूरत के लिए जनता में जागरूकता पैदा करने के प्रयास किए जाने चाहिए।
  - ❑ उचित वित्तीय प्रबंधन आवश्यक है, यह जनता का भरोसा बनाए रखने में सहायक होता है।
  - ❑ जनता की भागीदारी सुनिश्चित करना उचित रहता है, यह लंबे समय तक कार्यक्रम की सफलता को सुनिश्चित करने में सहायक होता है।

6.4.4 परिवीक्षण कार्यक्रमों के उपयोग

व्यवहार में, परिवीक्षण कार्यक्रमों से प्राप्त आंकड़ों का उपयोग सामान्यत: विभिन्न कार्यों के लिए किया जाता है, जैसे नीचे बताया गया है :

- ➢ नियंत्रण उपायों को विकसित करने के लिए जल गुणवत्ता की अवस्था तथा उसकी प्रवृत्तियों की पहचान करना प्रमुख रूप से महत्वपूर्ण है। जल गुणवत्ता परिवीक्षण संपूर्ण जल गुणवत्ता प्रबंधन तथा जल संसाधन विकास का एक महत्वपूर्ण पहलू है। यह जल निकाय में पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने के लिए बचाव तथा सुधार उपायों का निर्धारण करने में सहायक होता है। यदि किसी नदी अथवा जल निकाय के सतह जल का उपयोग जन जल आपूर्ति के लिए किया जाता हो तो किसी उद्योग द्वारा बिना उम्मीद के अचानक होने वाले विसर्जन के कारण होने वाले प्रदूषण की ओर इंगित करने वाले परिवीक्षण कार्यक्रम के द्वारा दी जाने वाली आरंभिक चेतावनी विशेषरूप से महत्वपूर्ण होती है।
- ➢ नदियों में प्रदूषण की पहचान दो देशों की सीमाओं अथवा अंतर्राष्ट्रीय जल निकायों में विशेष रूप से महत्वपूर्ण होती है। उस स्थिति में, मानकों का अनुपालन उन जल गुणवत्ता उद्देश्यों से संबंधित होता है जो राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय दोनों प्रकार के मानकों में प्रस्तावित होते हैं।

MAADHYAM IAS

- पर्यावरणीय कानूनों को सफलतापूर्वक लागू करने के लिए परिवीक्षण आवश्यक होता है यह ये सुनिश्चित करने में सहायक होता है कि नियामक ऐजेन्सियों द्वारा बनाए गए नियमों तथा मानकों का नियमित आधार पर पालन हो रहा है।
- आंकड़ों का उपयोग विभिन्न परियोजनाओं के लिए किया जा सकता है जिसमें अनुसंधान भी सम्मिलित हैं।

बोध प्रश्न 6

जल गुणवत्ता परिवीक्षण कार्यक्रम में मार्गदर्शी अध्ययन के महत्व को बताइए।

....

....

....

6.5 जल गुणवत्ता परिवीक्षण के लिए विश्लेषणात्मक तकनीकें

इसके लिए दो प्रमुख विश्लेषणात्मक तकनीकें है :

- भौतिक तथा रासायनिक विधियां तथा,
- जैविक विधियां।

6.5.1 परिवीक्षण की भौतिक तथा रासायनिक विधियां

पारंपरिक रूप से, जल गुणवत्ता का मूल्यांकन भौतिक तथा रासायनिक विधियों द्वारा किया जाता है। इन विधियों में जल निकाय – चाहे सतह जल हो अथवा व्यर्थ जल निकाय – के भौतिक गुणों तथा रासायनिक घटकों के मानकों तथा सीमाओं को निर्दिष्ट करना सम्मिलित है। वर्तमान समय में, विश्लेषणात्मक कार्यविधियाँ काफी उन्नत हो गई हैं जिससे विभिन्न जल घटकों का निम्न सान्द्रता में होने पर भी आकलन किया जा सकता है। हमने इनमें से कुछ विधियों के नियमों को पिछली इकाई में समझाया था।

भौतिक तथा रासायनिक विधियों के परिवीक्षण के लाभ

- सामान्यत: विधियां अपनाए जाने के लिए सरल हैं।
- मूल्यांकन के लिए तकनीक स्थापित हो चुकी है।
- स्पष्ट संख्यात्मक मानक उपलब्ध हैं।
- आंकड़े शीघ्रता से प्राप्त किए जा सकते हैं।

भौतिक तथा रासायनिक विधियों द्वारा परिवीक्षण से जुड़ी समस्याएं

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

भौतिक-रासायनिक विश्लेषण कार्यविधियों में तेजी से विकास के बावजूद निम्नलिखित कारणों की वजह से समस्याएं रहती हैं :

- जल निकायों में उपस्थित अनेकों रासायनों के पारिस्थितिकीय प्रभाव ppm अथवा ppb स्तर पर ज्ञात नहीं होते हैं। उनके लंबी अवधि के पारिस्थितिकीय प्रभावों पर काफी कम अध्ययन हुआ है।
- प्रदूषकों की संयुक्त क्रिया के पर्यावरणीय प्रभाव पर अध्ययन काफी कम हुए हैं। ये क्रिया औद्योगिक बहि:स्रावों के मिश्रण, नगरपालिका के व्यर्थ जल तथा सतही जल के अन्य निवेशों (जैसे कृषि वाह जल) में हो सकती है।

इसका अर्थ है कि सिर्फ भौतिक तथा रासायनिक विधियों पर आधारित अध्ययन से ही जल निकायों पर प्रदूषकों के प्रभाव पर व्यापक अध्ययन संभव नहीं है।

6.5.2 जैव परिवीक्षण

किसी स्वच्छ जल निकाय के अंदर के तथा आसपास के पारिस्थितिक निकाय में सामान्यत: जीवों की अनेक प्रजातियां पाई जाती हैं। यह जैविक प्रजातियों की विविधता अथवा जैव विविधता कहलाती है। यह जल निकाय के स्वस्थ होने का सूचक माना जाता है। जलीय जीवों की विविधता में कोई भी कमी प्रदूषकों की उपस्थिति को दर्शाती है। जलीय जीव विज्ञान पर प्रदूषकों का प्रभाव दो प्रकार का हो सकता है :

- जल मार्गों (Water courses) में अस्वाभाविक तथा अत्यधिक वृद्धि हो जाना (आपको याद होगा जो आपने उपभाग 5.5.3 में सुपोषण के बारे में पढ़ा था।)
- कुछ जीवन प्रकारों का गायब हो जाना अथवा उनकी संख्या में बहुत कमी आ जाना (समय-समय पर हम समाचार पत्रों में किसी क्षेत्र में मछली अथवा कछुओं या अन्य जलीय जीवों की व्यापक स्तर पर मृत्यु के बारे में रिपोर्ट पढ़ते हैं, सामान्यत: इसका एक कारण प्रदूषण को बताया जाता है)।

जैविक मापनों के द्वारा जलीय जीवन पर प्रदूषण के प्रभाव का अध्ययन जैव परिवीक्षण (biomonitoring) कहलाता है, जो जीव विज्ञानी परिवीक्षण का लघुरूप है। जैव परिवीक्षण जैविक जीवन का जल निकाय के विभिन्न स्थानों पर परीक्षण करने और उसमें पाई जाने वाली प्रजातियों तथा विविधता की उस प्रकार के किसी जल मार्ग के "मानक" के साथ तुलना करने को कहते है। अन्य कारकों जैसे वर्ष की ऋतु, भौगोलिक पहलू, जल मार्गों के प्रकार के अभिलक्षणों आदि का भी ध्यान रखा जाना चाहिए।

हम दो प्रकार के जैव परिवीक्षण की चर्चा करेंगे,

- जैव संचय परिवीक्षण (bioaccumulation monitoring)
- पारिस्थितिक निकाय परिवीक्षण (ecosystem monitoring)

i) जैव संचय परिवीक्षण

इसमें जैविक पदार्थों में रासायनिक सान्द्रता को मापा जाता है। परीक्षण किए गए जल निकाय तथा उस जल निकाय के लिए अनुशासित मूल्य के बीच तुलना के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

ii) पारिस्थितिकी निकाय परिवीक्षण

यह किसी समुदाय की संरचना में तथा विभिन्न उन प्रजातियों के कार्यों में परिवर्तन का निरीक्षण करके किया जाता है, जो उस स्थान के जल निकाय की विशेषता हो। प्रजातियों के संघटन, घनत्व, विविधता, जैविक प्रक्रियाओं की दर आदि में परिवर्तन पर्यावरणीय विक्षोभों (disturbances) से संबद्ध होते हैं।

MAADHYAM IAS

इस नियम का उपयोग करके बनी तीन विधियों की नीचे चर्चा की गई है :

क) सूचक जीव विधि (indicator organism method) इस नियम पर आधारित 6 कि जीवों की विविध किस्मों की जल गुणवत्ता परिवर्तनों के लिए संवेदनशीलताएं भिन्न होती हैं। जल गुणवत्ता का मूल्यांकन जल निकाय में प्रत्येक प्रकार की प्रजाति की जनसंख्या के अध्ययन तथा उसकी तुलना प्रदूषकों के प्रभाव के लिए उपलब्ध आंकड़ों के साथ तुलना करके किया जा

सकता है। सरिताओं में प्लवकों (plankton) का विश्लेषण लघु अवधि आधारित जानकारी प्रदान करता है, क्योंकि ये सरिताओं के साथ बह जाते हैं। नदी की तली में पाई जाने वाली प्रजातियों का विश्लेषण लंबी अवधि के लिए जानकारी प्रदान करता है क्योंकि ये प्रजातियां अपने स्थान पर लगभग स्थिर होती हैं। साथ ही इनकी आयु से और भी अधिक जानकारी प्राप्त हो जाती है। ऐसे सूचक जीव प्राथमिक स्तर पर प्रदूषण के पर्यावरणीय प्रभाव पर जानकारी देते हैं। कीट, लार्वा, पक्षी तथा अन्य वनस्पतिजात् (flora) एव प्राणिजात् (fauna) प्रदूषण के द्वितीयक प्रभावों की जानकारी देते हैं। सूचक जीव विधि की कमी यह है कि जैविक जीवन में भिन्नताएं समय के साथ तथा स्थान के साथ बिना प्रदूषकों के हस्तक्षेप के भी हो सकती हैं।

प्लवक: जल में निलंबित जीव, जो मुख्यत: छोटे पादप अथवा जंतु होते हैं, कुछ बड़े रूप भी सम्मिलित होते हैं जिसकी गतिशीलता कम शक्ति की होती है।

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड जल गुणवत्ता मूल्यांकन के लिए कुछ समूह के जीवों की जनसंख्या तथा कार्बनिक भार (BOD के रूप में अभिव्यक्त) के बीच संबंध के आधार पर एक प्रणाली विकसित की है। यह विधि "जैविक जल गुणवत्ता मूल्यांकन प्रणाली" (Biological Water Quality Evaluation System, BWQES) कहलाता है। इसका विवरण इस इकाई के परिशिष्ट भाग में दिया गया है, यह भाग एक अतिरिक्त पाठ्य सामग्री है और यदि आपने पहले जीव विज्ञान का अध्ययन किया है तो आपको यह भाग पसंद आएगा। यदि आप परिशिष्ट में दी गई संबंधित सामग्री को नहीं समझ पाते हैं तो भी आपको परेशान होने की आवश्यकता नहीं है।

वनस्पति जात : किसी विशिष्ट क्षेत्र अथवा समय के पादप

प्राणिजात : किसी विशिष्ट क्षेत्र अथवा समय के जंतु

सूचक जीव विधि के विकल्प के रूप में, परिस्थिति विज्ञानियों ने जल गुणवत्ता के परिवीक्षण के लिए जैविक विविधता अध्ययनों को सूचक जीव विधि के साथ मिला दिया है। इन नियमों पर आधारित दो पारिस्थितिकी तंत्र (ecosystem) परिवीक्षण विधियों, जिनका उद्योगों द्वारा उपयोग किया जाता है नीचे दी गई हैं।

ख) किसी औद्योगिक संयंत्र के आसपास संयंत्र के लगाए जाने के पहले और बाद में जलीय जीवन के व्यापक विश्लेषण की तुलना से दोनों स्थितियों में सूचक प्रजातियों, जनसंख्या तथा विविधता के पहलुओं का पता चलता है। इस अध्ययन से औद्योगिक इकाई पर पर्यावरणीय प्रभाव से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो जाती है।

ग) जल निकाय में औद्योगिक इकाई से बहि:स्राव विसर्जन के बिंदु के ऊपर और नीचे जलीय जीवन के परीक्षण करने का एक अन्य तरीका है। यदि जैविक अभिलक्षण दोनों स्थानों पर समान हैं, तो इसका अर्थ है कि जल निकाय पर बहि:स्राव का कोई प्रभाव नहीं है। इसके विपरीत, विविधता अथवा सूचक जीव की जनसंख्या में कोई भी बदलाव से पता चलता है कि जल की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ा है।

जैव परिवीक्षण के लाभ

भौतिक-रासायनिक परिवीक्षण की तुलना में जैव परिवीक्षण विधियों के कई लाभ होते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

1) सबसे पहले, घटक की उपस्थिति तथा उसकी सान्द्रता को पारिस्थितिकी परिवर्तन के साथ संबद्ध करने की संभावना पैदा होती है।

2) जैविक मापन आविषाक्तों (toxicants) की परस्पर क्रियाओं के तथा पर्यावरण पर उनके संयुक्त प्रभाव का अध्ययन करने का एकमात्र तरीका प्रदान करते हैं।

3) जैव परिवीक्षण विधियां पर्यावरण की विपरीत स्थितियों का पता करने के लिए रासायनिक विश्लेषण से अधिक सही तथा संवेदनशील होती हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि जैविक प्रतिक्रिया समाकलनात्मक (integrative) तथा संचयी (accumulative) प्रकृति की होती हैं।

4) जैव परिवीक्षण स्थान तथा समय दोनों में मापनों की संख्या को कम करने में सहायक हो सकता है।

जैव परिवीक्षण की हानियां

ऐसा संभव है कि जैव परिवीक्षण विधियों का ऐसे व्यक्तियों के द्वारा दुरुपयोग अथवा अतिसरलीकरण हो जाए जो जीव विज्ञान की पृष्ठभूमि के ना हों। जैव परिवीक्षण की कमियों की ओर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

- जैविक प्रतिक्रिया तभी दिखाई देती है यदि विक्षोभ (disturbance) करने वाले कारक (प्रदूषक) की प्रबलता तथा उद्‌भासन अवधि जैविक तंत्र की संवेदनशीलता तथा प्रतिक्रिया दर से मेल खाती है।
- यद्यपि जैविक निरीक्षण से पारिस्थितिकी परिवर्तन का पता चल जाता है जो जल गुणवत्ता में परिवर्तन का परिचायक होता है, लेकिन उससे इस परिवर्तन के विशिष्ट कारण का पता नहीं चल पाता है। विषाक्त प्रदूषण की स्थिति में पूरक विधि के रूप में रासायनिक विश्लेषण के द्वारा कारण का पता किया जाता है।
- सभी जल गुणवत्ता मापदंडों तथा अनेक भिन्न प्रदूषकों के परिवीक्षण के लिए, पारिस्थितिकी तंत्र/परिवीक्षण में आदर्श रूप से समुदाय के सभी घटकों को सम्मिलित किया जाना चाहिए। इतना व्यापक मूल्यांकन व्यवहारिक नहीं होता है। व्यवहार में, कम व्यापक मूल्यांकन अधिकांश प्रदूषण प्रकारों के लिए पर्याप्त होता है।
- पारिस्थितिकी तंत्र परिवीक्षण द्वारा उत्पन्न आंकडे गैर जीव विज्ञानी लोगों द्वारा आसानी से नहीं समझे जाते हैं। इसके लिए अधिक स्वीकार्य श्रेणीकरण (acceptable gradation) प्रदान करने के लिए मूल आंकड़ों को संसाधित करने की आवश्यकता होती है।
- यद्यपि पारिस्थितिकी तंत्र परिवीक्षण से पारिस्थितिक परिवर्तनों का पता चल जाता है, तंत्र की कमजोरी यह है कि इसमें प्रेक्षित परिवर्तनों को जल गुणवत्ता के संदर्भ में समझाना पड़ता है।
- जैव परिवीक्षण की विधियां सार्वभौमिक रूप से मानकीकृत नहीं भी हो सकती हैं।

6.5.3 समाकलित परिवीक्षण क्रियाविधि की आवश्यकता

भौतिक-रसायानिक परिवीक्षण तथा जैव परिवीक्षण विधियों को एक दूसरे का पूरक माना जाना चाहिए। जैविक प्राचल पूर्व तथा वर्तमान प्रदूषण के उद्‌भासन के "प्रभावों" को प्रत्यक्ष रूप से संचित करते हैं, भौतिक-रासायनिक भिन्नताएं इसके बारे में महत्वपूर्ण सुराग देते हैं अथवा "कारण" बताते हैं जिसकी वजह से पारिस्थितिकी तंत्र में प्रेक्षित भिन्नताएं दिखाई देती हैं। समाकलित अधिगम से कीमत की बचत होती है। उदाहरण के लिए, विभिन्न प्राचलों के अध्ययन के लिए समान नमूने लेने की प्रक्रिया से कार्य की कीमत कम हो जाती है। जैसा कि पहले बताया गया है, भले ही भौतिक-रासायनिक परीक्षणों से कुछ प्राचलों के लिए असामान्य मान आएं, जैविक मूल्यांकन से उद्योग को बहिःस्रावों के उपचार के संदर्भ में कीमत कम करने में मदद मिलेगी, यदि उससे यह पता चलता है कि पारिस्थितिकी तंत्र पर कोई स्पष्ट प्रभाव नहीं पड़ रहा है। यही नहीं, जैव परिवीक्षण मानक आकलनों की संख्या को कम करने में भी सहायक होता है।

MAADHYAM IAS

बोध प्रश्न 7

रासायनिक परिवीक्षण की तुलना में जैव परिवीक्षण के लाभों को बताइए?

....

....

....

6.6 सारांश

जल गुणवत्ता का निर्धारण करने वाले कारक विशाल तथा आपस में जुड़े होते हैं। संख्यात्मक रूप से जल निकायों के स्तर का वर्णन करने के लिए अनेकों भिन्नताओं (variables) की आवश्यकता होती है। जल गुणवत्ता के बारे में हमारी समझ पिछली शताब्दी में जल उपयोग आवश्यकताओं के विस्तार तथा जल के गुणों को मापने की क्षमता तथा जल के अभिलक्षणों को समझने के साथ ही विकसित हुई है। जल गुणवत्ता मूल्यांकन की प्रक्रिया जल के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक अभिलक्षणों के मूल्यांकन के द्वारा की जाती है। औद्योगिकीकरण तथा बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ-साथ, जल की आवश्यकता भी बढ़ गई है। साथ ही अब उच्च गुणवत्ता के जल की मांग बढ़ती जा रही है। प्रत्येक जल उपयोग के लिए विशिष्ट जल गुणवत्ता आवश्यकताएं होती हैं। विभिन्न उपयोगों के लिए जल गुणवत्ता आवश्यकताएं जल गुणवत्ता मापदंडों के द्वारा विनिर्दिष्ट होती हैं। जल गुणवत्ता को परिवीक्षण तथा मूल्यांकन के द्वारा बनाए रखा जाना चाहिए। भौतिक-रासायनिक तथा जैविक परिवीक्षण विधियों का उपयोग करके परिवीक्षण के एक समाकलित प्रणाली को विकसित करने की आवश्यकता है।

6.7 अंत में कुछ प्रश्न

1) जल के नमूने के SAR मूल्य का महत्व बताइए।
2) विरोधी क्रिया तथा संकर्मी क्रिया का एक-एक उदाहरण दीजिए, जो जल गुणवत्ता के मापदंड का निर्धारण करने के लिए महत्वपूर्ण हों।
3) उन जल गुणवत्ता कारकों को बताइए जो उसके मनोरंजन में उपयोग के सौन्दर्यबोध को नष्ट कर देते हैं।
4) **i)** नगरपालिका जल आपूर्ति **4,** तथा

   ii) औद्योगिक जल आपूर्ति में

   कार्बनिक पदार्थों की उपस्थिति किस प्रकार हानिकारक होती है?
5) जल गुणवत्ता मापदंड को परिभाषित कीजिए।
6) जल गुणवत्ता के मापदंड कैसे प्राप्त किए जाते हैं?
7) समाकलित परिवीक्षण क्रियाविधि का होना किस लिए लाभदायक है?

6.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1) समीकरण **6.1** में प्रतिस्थापित करके, SAR = 5.64
2) उच्च HCO_3^- सान्द्रता वाले जल में कैल्सियम तथा मैग्नीशियम आयनों को वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन की प्रक्रिया के कारण उनके कार्बोनेटों के रूप में मृदा की परत पर अवक्षेपित करने की प्रवृत्ति होती है। इससे जल नमूने का SAR मूल्य बढ़ जाता है जिससे सोडियम संकट पैदा हो जाता है।
3) बादल छाए वाले दिन जल निकाय को काफी हद तक प्रभावित करते हैं क्योंकि इससे जलीय पादपों में प्रकाश संश्लेषण नहीं हो पाता है तथा सिर्फ श्वसन जारी रहता है, जिससे जल का DO स्तर कम हो जाता है तथा CO_2 का स्तर बढ़ जाता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

4) i) प्रत्येक वर्ग के उपभोक्ताओं की विशिष्ट आवश्यकताएं तथा अभिलक्षण
   ii) जैव सान्द्रता
   iii) विरोधी तथा संकर्मी अभिक्रियाएं
   iv) प्रजाति द्वारा अनुकूलन

5) जल गुणवत्ता के मापदंड किसी विशेष उपयोग के लिए जल की उपयुक्तता की जांच करने में सहायक होते हैं। गुणवत्ता के मापदंड बहि:स्रावों के मानकों को प्राप्त करने का आधार निर्मित करते हैं। ये जल निकाय को लंबी अवधि की सुरक्षा प्रदान करने के लिए निर्मित किए जाते हैं।

6) मार्गदर्शी अध्ययन हमें जल गुणवत्ता में भिन्नताओं के बारे में सूचना प्रदान करते हैं जो किसी क्षेत्र में तथा किसी काल में पाई जाती हैं। ये मूल्यांकन अन्त्य बिंदु, मापन अन्त्य बिंदु तथा परिवीक्षण कार्यक्रम के अध्ययन अभिकल्प के चयन में सुधार करने में हमारी मदद करते हैं।

7) जैव परिवीक्षण हमें घटकों की उपस्थिति तथा उनकी सान्द्रता में पारिस्थितिकी परिवर्तन को संबद्ध करने में मदद करता है। यह विभिन्न प्रदूषकों के बीच परस्पर क्रिया के अध्ययन में सहायक होता है। जैव परिवीक्षण रासायनिक विधियों की अपेक्षा अधिक सटीक होते हैं क्योंकि जैविक प्रतिक्रिया की प्रकृति संख्यात्मक तथा संचयी होती है। जैव परिवीक्षण काल तथा स्थान दोनों में मापनों की संख्या को कम करने में सहायक हो सकता है।

अंत में कुछ प्रश्न

1) सामान्यत: 10 से अधिक SAR मान के जल का उपयोग कृषि कार्यों के लिए नहीं करना चाहिए, क्योंकि उसमें Na^+ की उच्च मात्रा होती है। Na^+ की उच्च मात्रा होने से पादपों द्वारा जल का अवशोषण कम हो जाता है। मृदा की पारगम्यता कम हो जाती है तथा मृदा लवणता की समस्याएं भी हो जाती हैं।

2) **विरोधी अभिक्रिया का उदाहरण :**

   सिंचाई के जल में सल्फेट या क्लोराइडों की अधिक मात्रा पादपों के लिए फॉस्फोरस तथा कार्बनिक अम्लों की उपलब्धता को कम कर देते हैं।

   संकर्मी अभिक्रिया का उदाहरण :

   अलग-अलग रूप से, 5 के आसपास pH वाले अथवा 0.9 ppm आयरन सान्द्रता वाले जल के नमूने जलीय जीवन के लिए इतने विषाक्त नहीं होते हैं; लेकिन यदि ये दोनों स्थितियां एक साथ उपस्थित होती हैं, तो मछली की प्रजातियां मर जाती हैं।

3) i) पादपों तथा नील हरित शैवाल, वाहित मल कवक आदि की वृद्धि।
   ii) कार्बनिक भार, तेल, ग्रीज आदि जो गंध, रंग अथवा झाग उत्पन्न करते हैं।

4) i) कुछ कार्बनिक पदार्थों के कारण कैंसर तक हो सकता है अथवा क्लोरीनीकरण के बाद ये संकट पैदा कर सकते हैं (क्लोरोफोर्म जैसे पदार्थ के बन जाने के कारण)। इनके कारण DO कम हो सकता है तथा दुर्गंधयुक्त एवं हानिकारक पदार्थ जैसे NH_3, H_2S आदि उत्पन्न हो सकते हैं।
   ii) कार्बनिक भार के कारण संक्षारण की समस्या हो सकती है तथा ये आयन विनिमय रेजिनों को भी क्षति पहुंचा सकते हैं।

MAADHYAM IAS

5) जल गुणवत्ता मानक वे वक्तव्य होते हैं जो जल के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक अभिलक्षणों तथा घटकों के लिए सुरक्षा सीमाओं को बताते हैं।

6) जल गुणवत्ता के मापदंड उन वैज्ञानिक तथ्यों से प्राप्त किए जाते है जो असंख्य प्रयोगों से प्राप्त होते हैं। गुणवत्ता के मापदंड सैंकड़ों पृष्ठों के आंकड़ों का सारतत्व होते हैं जिन्हें जल, मृदा तथा वायु के विभिन्न घटकों तथा तापमान, pH आदि की स्थितियों के लिए कार्य करने वाले अनेक विशेषज्ञों द्वारा एकत्रित किया जाता है।

7) जैविक पैरामीटर पूर्व तथा वर्तमान प्रदूषण के उद्भासन के प्रभावों को सूचित करते हैं, भौतिक रासायनिक भिन्नाएं पारिस्थितिक तंत्र में भिन्नताएं पैदा करने वाले "कारणों" के बारे में महत्वपूर्ण सुराग प्रदान करते हैं। समाकलित उपगमन से कीमत में भी कमी आ सकती है क्योंकि इससे वांछित नमूनों तथा आवश्यक मापनों में कमी की जा सकती है।

6.9 परिशिष्ट

आइए, अब हम अपने देश में सरकारी स्तर पर जल गुणवत्ता परिवीक्षण की दिशा में किए जा रहे प्रयासों पर ध्यान देते हैं। प्राथमिक रूप से जल गुणवत्ता को नगरपालिका तथा औद्योगिक व्यर्थ जल के कानूनों के द्वारा नियंत्रित किया जाता है। अन्य अनेक देशों की भांति ही, जल गुणवत्ता के रखरखाव के संबंध में कानून पास किए गए हैं। इनमें से कुछ नीचे दिए गए हैं :

- जल (प्रदूषण की रोकथाम तथा नियंत्रण) एक्ट-1974 तथा 1988 का संशोधन

  The water (Prevention and control of Pollution) Act – 1974 and 1988 Amendment

- जल (प्रदूषण की रोकथाम तथा नियंत्रण) कर एक्ट-1977

  The water (Prevention and Control of Pollution) Cess Act-1977

- पर्यावरण (सुरक्षा) एक्ट-1986

  The Environment (Protection) Act-1986

- पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन अधिसूचना-1994

  Environment Impact Assessment Notification-1994

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इन सभी कानूनों के द्वारा, जल निकायों की सुरक्षा के लिए कारगर प्रावधान बनाए गए हैं। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड तथा राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड जल एक्ट के परिणामस्वरूप ही बनाए गए थे। ये निकाय जल प्रदूषण के नियंत्रण के लिए नियामक एजेन्सियों की तरह कार्य करते हैं। 1988 में किए गए संशोधन ने इन बोर्डों को प्रदूषणकारी औद्योगिक इकाइयों को बंद तक कर देने का अधिकार दे दिया है। जल गुणवत्ता परिवीक्षण के क्षेत्र में केन्द्र तथा राज्य सरकारों के अनेक संगठन सम्मिलित हैं जैसा कि नीचे बताया गया है:

- केन्द्रीय जल आयोग (Central Water Comission) 877 में से 319 निरीक्षण केन्द्रों (Observation Stations) के द्वारा देशभर में नदी जल गुणवत्ता का परिवीक्षण करता है (IX पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज के अनुसार)

- केन्द्रीय भौमजल बोर्ड (Central Ground Water Board) 14995 केन्द्रों के द्वारा जिन्हें भौमजल गुणवत्ता के परिवीक्षण के लिए बनाया गया है (IX पंचवर्षीय योजना दस्तावेज के अनुसार)

- केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (Central Pollution Control Board) तथा राज्य नियंत्रण बोर्ड (State Pollution Control Board) देशभर if स्थापित 784 केन्द्रों के द्वारा (CPCB 2003 की सांख्यिकी के अनुसार)

- राज्य सरकारों के सिंचाई, भौमजल, नगरपालिका तथा अन्य जन स्वास्थ्य प्राधिकरण, जल तथा मल व्यवस्था बोर्ड, आदि।

अनेक मामलों में, आंकड़ों तथा सूचनाओं के विनिमय की तथा संसाधनों एवं मानवशक्ति की साझीदारी की भी आवश्यकता होती है जिससे समय तथा कीमत की बचत हो सके।

अब, हम जल गुणवत्ता के परिवीक्षण के कुछ गुणों पर प्रकाश डालने के लिए दो केस अध्ययन (case studies) करेंगे। पहला एक जलविज्ञान परियोजना (Hydrology Project) पर है, जिसे जल गुणवत्ता परिवीक्षण आंकड़ों को प्राप्त करने के लिए एक विस्तृत योजना के निर्देशन के लिए शुरू किया गया था। दूसरा, गंगा कार्य योजना (Ganga Action Plan), एक ऐसा कार्यक्रम है जिसे नदी की जल गुणवत्ता को सुधारने के लिए कार्यान्वित किया गया है। आखिर में, हम जैविक जल गुणवत्ता मूल्यांकन प्रणाली (Biological Water Quality Evaluation System - BWQES) से संबंधित विवरण भी देंगे।

केस अध्ययन 1 : जलविज्ञान परियोजना

भारत सरकार ने सितम्बर 1995 में छह वर्ष की अवधि के लिए विश्व बैंक तथा नीदरलैण्ड्स की सरकार की सहायता से एक जलविज्ञान परियोजना आरंभ की थी। इसका उद्देश्य जलविज्ञानी सूचना प्रणाली [Hydrological Information System (HIS)] को विकसित करना था, यह एजेन्सी (जैसे CPCB आदि), राज्य तथा राष्ट्र के स्तर पर जल से संबंधित व्यापक आंकड़े एकत्रित करने के कार्य को प्रदर्शित करती है। HIS निम्नलिखित से संबंधित आंकडों को एकत्रित करने में सहायक हैं।

- वर्षा तथा अन्य मौसम प्राचल
- सतह जल की गुणवत्ता तथा मात्रा तथा
- भौमजल की गुणवत्ता तथा मात्रा

परियोजना से केन्द्रीय जल आयोग, केन्द्रीय भौमजल बोर्ड तथा राज्य सरकारों की सिंचाई एवं भौमजल एजेन्सियों की प्रयोगशालाओं की अवसंरचना तथा कर्मचारियों की क्षमताओं को सुधारने के लिए मजबूत आधार प्रदान किए जाने की उम्मीद की गई थी। वांछित परिणाम के रूप में, इन संगठनों को जल गुणवत्ता परिवीक्षण तथा जल संसाधनों के मूल्यांकन के लिए आंकड़ों को एकत्रित करने तथा संसाधित करने के लिए प्रशिक्षित किया जाता था। परियोजना के तहत् होने वाली गतिविधियों की सूची निम्नलिखित है-

- जलविज्ञान संबंधी तथा मौसम के आंकड़ों को एकत्रित करने के लिए अवसंरचना को उन्नत करना

MAADHYAM IAS

- उपकरणों तथा सामग्रियों के लिए प्रावधान
- प्रशिक्षण मॉड्यूलों (modules) का निर्माण

  (जिनमें महत्वपूर्ण भौतिक-रासायनिक तथा जैविक प्राचलों के आकलन के लिए विस्तृत प्रक्रम दिए गए हैं)
- संगठनों के मानव संसाधनों को सुधारने के लिए प्रशिक्षण देना
- भागीदारी करने वाली एजेन्सियों में परस्पर क्रियात्मक कंप्यूटरीकृत डाटा बैंकों का विकास।

भौमजल आंकड़ों की विपुल मात्रा को संगठित करने के लिए कंप्यूटर सॉफ्टवेयर भी विकसित किया गया था।

इस प्रकार, जलविज्ञान परियोजना ने जल गुणवत्ता के परिवीक्षण तथा मूल्यांकन के लिए तकनीकी ढांचा प्रदान करने के साथ ही मूल सामग्री सहायता भी प्रदान की है। आइए, अब हम जल गुणवत्ता के परिवीक्षण तथा प्रबंधन के लिए गंगा नदी तथा उसकी सहायक नदियों के लिए होने वाले व्यापक स्तर के कार्य की विशेषताओं के बारे में जानें।

केस अध्ययन 2 : गंगा कार्य योजना

गंगा वह नदी है जिससे इस देश के लोग भावनात्मक तथा आध्यात्मिक रूप से जुड़े हैं, अकेले बनारस में ही वर्ष में लाखों श्रृद्धालु नहाते हैं। जनसंख्या वृद्धि तथा औद्योगिक विकास के कारण गंगा नदी एवं उसकी सहायक नदियों में लगभग 500 करोड़ लीटर व्यर्थ जल प्रतिदिन [million liters per day; mld] मिलता है। इसके अतिरिक्त, कृषि वाह जल के साथ कीटनाशक तथा उर्वरक भी विभिन्न स्थानों पर नदी में आकर मिलते हैं। नदी के तट पर स्थित एक धार्मिक स्थल पर हजारों जले हुए तथा अधजले मानव शवों के साथ-साथ जानवरों के शव भी नदी में फेंक दिए जाते हैं। यहां स्पष्ट रूप से यह दिखाई पड़ता है कि नदी तंत्र की जैव विविधता काफी अधिक प्रभावित हो गई है। नदी के प्रदूषण स्तर को नहाने के स्तर (वर्ग B) तक लाने के लिए केन्द्र सरकार ने जनवरी 1985 में गंगा कार्य योजना/गंगा एक्शन प्लान (GAP) की शुरुआत की। इसके संबंध में निर्मित की गई कुछ संस्तुतियां नीचे दी गई हैं :

- वाहित मल का अपरोधन (interception) तथा विपथन (diversion)
- वाहित मल उपचार संयंत्रों का निर्माण
- मुक्त मलोत्सर्ग (open defecation) की समस्या से निपटने के लिए कम कीमत के सफाई तंत्रों को निर्मित करना।
- बिना जले या अधजले शवों आदि के लिए विद्युत् तथा उन्नत काष्ठ शवदाह गृह (crematoria) निर्मित करना।
- जल गुणवत्ता का परिवीक्षण

MAADHYAM IAS

हम अपना ध्यान सिर्फ गंगा कार्य योजना के जल गुणवत्ता परिवीक्षण के पहलू पर ही केन्द्रित करेंगे। जल गुणवत्ता को नहाने के स्तर पर लाने के उद्देश्य से निम्नलिखित मानकों को तीन प्राचलों के प्राप्य स्तर (attainable level) के लिए मानकीकृत किया गया था :

घुली हुई ऑक्सीजन (Dissolved oxygen) : 5 ppm से कम नहीं

जैव रासायनिक ऑक्सीजन मांग (Biochemical oxygen demand) : 3 ppm से अधिक नहीं

जीवाण्वीय भार (*कॉलीफॉर्म* काउण्ट, Bactarial load, *coliform* count) : प्रति 100 ml में 10000 MPN से अधिक नहीं

नोट कीजिए कि सारणी 6.3 के अनुसार, बाहर नहाने के लिए उपयोग किए जाने वाले जल निकाय के लिए कुल *कॉलीफॉर्म* का मापदंड प्रति 100 मिलि 500 MPN है।

भारत सरकार के वैज्ञानिक विभाग के लेखा परीक्षण के मुख्य निदेशक ने परियोजना पर रिपोर्ट तैयार की है। रिपोर्ट में परियोजना को कार्यान्वित करने का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। रिपोर्ट निम्नलिखित वेबसाइट पर उपलब्ध है।

Ganga Action Plan - http://www.cagindia.org/reports/scientific/2000-book2/ganga actionplan.htm

स्वयं को जल गुणवत्ता पहलुओं तक ही सीमित रखते हुए, हम एक प्रमुख बात नोट कर सकते हैं। अध्ययन किए गए प्राचलों से पता चलता है कि 1993-1999 की अवधि के दौरान अनेक स्थानों पर गंगा नदी की जल गुणवत्ता में अधिक सुधार नहीं आया था। परियोजना से सीख ली जा सकती है कि जल गुणवत्ता प्रबंधन कार्यक्रम को सफलतापूर्वक क्रियान्वित करने के लिए, तकनीकी तथा प्रशासनिक परिवीक्षण को मजबूत करने की तथा उपयुक्त तकनीकी सहयोग की सुविधा प्रदान करने की आवश्यकता है।

जैविक जल गुणवत्ता मूल्यांकन प्रणाली

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) ने जल गुणवत्ता के मूल्यांकन के लिए एक पद्धति विकसित की है जिसे जैविक जल गुणवत्ता मूल्यांकन प्रणाली (Biological Water Quality Evaluation System, BWQES) कहते हैं। यह प्रणाली जल गुणवत्ता को कुछ जीवों के कुलों की जनसंख्या को कार्बनिक भार (BOD के रूप में अभिव्यक्त प्रणाली) से संबद्ध करके बताता है। यह अंशांकन अध्ययन (calibration study) पर आधारित है जिसे यमुना नदी से एकत्रित किए गए आंकडों का उपयोग करके कुछ जीवों के वितरण (distribution) का पता लगाने के लिए किया जाता है। किसी खास जल निकाय निष्कर्षों को दर्शाने का तरीका आसानी से समझ में आने वाला है इसमें सूचक जीवों के बाहुल्यता विस्तार (abundance ranges) का उनके BOD विस्तार के संदर्भ में अंशाकन किया जाता है। विभिन्न प्रकार के जीवों की जनसंख्या के आधार पर, जिनकी प्रतिक्रिया जल के प्रदूषण भार के अनुसार भिन्न होती है, जल गुणवत्ता अवनति (deterioration) को निम्नलिखित पांच भिन्न वर्गों में वर्गीकृत किया गया है : स्वच्छ, हल्का सा प्रदूषित, मध्यम रूप से प्रदूषित, अधिक प्रदूषित तथा गंभीर रूप से प्रदूषित। इस श्रेणीकरण के अनुसार ही सूचक जीवों को भी पांच भिन्न वर्गों में रखा गया है। जैविक प्राचलों के मापन के आधार पर भारत में प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों के द्वारा जल निकायों का जैव मानचित्रण (biomapping) किया जाता है। जैव मानचित्रण जल निकायों की जल गुणवत्ता के बारे में निष्कर्ष निकालने में काफी सहायक होता है। जैव मानचित्रण की प्रक्रिया के दौरान, सारणी क-I में दिए गए विवरण के अनुसार जल गुणवत्ता अवनति की पांच भिन्न श्रेणियों को सूचित करने के लिए रंग संकेतन पद्धति (color coding system) का उपयोग किया जाता है। नोट कीजिए कि यह सारणी उन जीवों का भी संकेत देती है जो जल प्रदूषण के लिए संवेदनशील या फिर सहनशील हैं। बाहुल्यता संकेतन (abundancy notation, **A** से G) के लिए व्याख्या सारणी के फुटनोट के रूप में दी गई है।

MAADHYAM IAS

सारणी क-1 : सूचक जीवों की जनसंख्या के संबंध में जल गुणवत्ता अवनति की विभिन्न श्रेणियां

जीव	जल गुणवत्ता	(BOD विस्तार)/ppm	बाहुल्यता*	वर्ग	सूचक रंग
एफीमेरॉप्टेरा (Ephemeroptera) ट्राइकोप्टेरा (Trichoptera) प्लेकॉप्टेरा (Plecoptera)	स्वच्छ	< 1	C - D	I	नीला
ओडोनेटा (Odonata)	हल्का सा प्रदूषित	1 - 5	A - E	II	हल्का नीला
क्रस्टेशिया (Crustacea) हेमीप्टेरा (Hemiptera) कोलिओप्टेरा (Coleoptera)	मध्यम रूप से प्रदूषित	1 - 10	A - E	III	हरा
डिप्टेरा (Diptera) मोलस्का (Mollusca) हीरूडिनिया (Hirudenia)		1 - 15	**A - E**	IV	नारंगी
डिप्टेरा (Oligochaeta) कोई जंतु नहीं	Tm रूप से प्रदूषित	20 - 30	A - C	V	लाल

* N.B : बाहुल्यता वर्गों को निम्न प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है :

बाहुल्यता	जनसंख्या स्तर	संख्या
A	एकल	1
B	कम	2 – 10
C	सामान्य	11 – 50
D	सामान्य से अधिक	51 – 100
E	प्रभावी	101 – 1000
F	अत्यधिक	1001 – 10,000
G	सिर्फ यही प्रजाति	10,000 से अधिक

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 7 वायुमंडल - प्रकृति तथा महत्व

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

7.2 वायुमंडल की उत्पत्ति

7.3 वायुमंडल के क्षेत्र

रासायनिक संयोजन पर आधारित क्षेत्र

तापमान पर आधारित क्षेत्र

भौतिक एवं रासायनिक गुणों पर आधारित क्षेत्र

7.4 वायुमंडल का संयोजन

ऊँचाई के साथ गैसीय संयोजन में परिवर्तन

अक्षांश तथा ऋतु के साथ गैसीय संयोजन में परिवर्तन

7.5 वायुमंडलीय प्रभाव तथा अभिक्रियाएं

वायुमंडल में अभिक्रियाएँ

7.6 वायुमंडल में जल

जल वाष्प

वर्षण

वर्षण की प्रक्रिया

7.7 पादपगृह गैसें तथा भूमंडलीय तापन

जल वाष्प

कार्बन डाइऑक्साइड

मेथैन

नाइट्रस ऑक्साइड

क्लोरोफ्लुओरोकार्बन

ओज़ोन

अन्य पादपगृह गैसें

पादपगृह गैसों की भूमंडलीय तापन की क्षमता

ऊर्जा तथा पादपगृह गैसों का उत्सर्जन

7.8 ओज़ोन परत तथा इसका ह्रास

ओज़ोन परत के ह्रास के प्रभाव

ओज़ोन परत का ह्रास तथा भूमंडलीय तापन

ओज़ोन परत के ह्रास का वायु प्रदूषण पर प्रभाव

7.9 सारांश

7.10 अंत में कुछ प्रश्न

7.11 उत्तर

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

7.1 प्रस्तावना

वायुमंडल पृथ्वी को घेरे हुए एक गैसीय आवरण है जो पृथ्वी ग्रह पर तापमान एक उचित स्तर पर बढ़ाकर जीवन के विकास तथा निरंतर उसके बने रहने के लिए उत्तरदायी है। यदि हम इस स्थिति की निकटतम दो ग्रहों यानि कि शुक्र तथा मंगल से तुलना करें तो पाएँगे कि वहाँ

क्रमशः अत्यधिक उच्च तथा अत्यधिक निम्न तापमान के कारण जीवन संभव नहीं है। वास्तव में वायुमंडल आज समूचे भूमंडल के लिए मुख्य पर्यावरणीय विषय है क्योंकि इसके घटक जीवन के निर्वाह के लिए उत्तरदायी हैं; वायुमंडल में उपस्थित जीवनदायी गैस, O_2 के विषय में बताने की शायद आवश्यकता नहीं है। जल वाष्प तथा कुछ गैसें जो पादपगृह गैसें कहलाती हैं, वायुमंडल की महत्वपूर्ण घटक हैं और वायुमंडल के जलवायवीय परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। मनुष्यों की चाही व अनचाही गतिविधियों द्वारा इसके संघटन में कई परिवर्तन हुए हैं। इसलिए इस खंड की पहली इकाई वायुमंडल के परिदृश्य से आरंभ होती है जिसमें वायुमंडल की उत्पत्ति, रासायनिक संयोजन तथा विभिन्न क्षेत्रों की चर्चा की गई है। आप पादपगृह गैसों के संयोजन व वायुमंडल का तापमान बढ़ाने में उनकी भूमिका के विषय में पढ़ेंगे। वायुमंडल में ओज़ोन परत को उसके पर्यावरणीय सरोकार के कारण विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है और कई तरीकों से इसके ह्रास तथा इस ह्रास के मनुष्य, पशु, पादप, पदार्थ तथा वायु प्रदूषण पर प्रभाव की विस्तार से चर्चा की गई है। वायुमंडल के ये सभी पहलू वायु प्रदूषण से संबंधित हैं जिसकी चर्चा इस खंड की बाद की इकाई में की गई है। अगली इकाई वायु प्रदूषण के मौसम विज्ञान संबंधी पहलुओं के विषय में है।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- वायुमंडल को परिभाषित कर सकेंगे तथा इसकी उत्पत्ति की व्याख्या कर सकेंगे,
- वायुमंडल को विभिन्न क्षेत्रों में वर्गीकृत कर सकेंगे,
- वायुमंडल के संयोजन तथा ऊँचाई, अक्षांश तथा ऋतु के संगत इसके परिवर्तन की व्याख्या कर सकेंगे,
- वायुमंडल में जल वाष्प के महत्व का वर्णन कर सकेंगे,
- वर्षण की प्रक्रिया तथा प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे,
- पादपगृह गैसों को परिभाषित व उनके प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे, तथा
- ओज़ोन परत के ह्रास की व्याख्या तथा जैवमंडल पर इसके प्रतिघात की व्याख्या कर सकेंगे।

7.2 वायुमंडल की उत्पत्ति

आप जानते होंगे कि पृथ्वी को घेरे वायुमंडल जीवन के अस्तित्व एवं विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वायुमंडल, जो सामान्यतः वायु कहलाता है, गैसों मुख्यतः नाइट्रोजन तथा ऑक्सीजन के साथ-साथ जल वाष्प तथा ऐरोसॉल (aerosol, वायु में निलंबित छोटे ठोस तथा द्रव कण) द्वारा संयोजित होता है। अपने सामान्य संयोजन पर वायुमंडल पृथ्वी के तापमान के नियमन के लिए महत्वपूर्ण है तथा इसे पराबैंगनी किरणों जैसी छोटी तरंगदैर्ध्य वाली सौर्य विकिरणों से बचाता है। वायुमंडल, जो पृथ्वी को गुरूत्वाकर्षण के आकर्षण द्वारा घेरे हुए है, पृथ्वी के साथ एक संकुलित पैटर्न में घूर्णन करता है। इस वायुमंडल के भौतिक व रासायनिक गुण तथा गतिकी (dynamics) **मौसम विज्ञान** (meteorology) संबंधी विषय को बनाते हैं, जिसके विभिन्न पहलुओं की चर्चा विस्तार से इकाई 8 में की गई है। वायुमंडल अत्यधिक संपीडित (compressed) होता है (घनत्व = 1.2 kg/m^3) तथा पृथ्वी की सतह पर लगभग 1013 mb (मिलीबार) का उच्च दाब लगाता है। ऊँचाई के साथ दाब तथा घनत्व घातीय रूप से (exponentially) घटते हैं तथा 6 km की उच्चता (altitude) पर दोनों समुद्री स्तर के मान का केवल आधा होते हैं। यह ज्ञात है कि पृथ्वी का वायुमंडल 600 km से अधिक विस्तार पर है लेकिन वायुमंडल का आधे से अधिक द्रव्यमान पृथ्वी की सतह से 5 km के नीचे तथा 90% से अधिक 29 km के नीचे विद्यमान होता है।

वायुमंडल तथा वायु पद एकसमान रूप से उपयोग में लाए जाते हैं।

मौसम विज्ञान: मौसम संबंधी विज्ञान; वायुमंडलीय दाब, ताप, पवन प्रबलता, आर्द्रता इत्यादि स्थितियों का अध्ययन।

1 mb = 10^3 $dynes/cm^2$

MAADHYAM IAS

इस बात पर आम सहमति है कि आरंभ में पृथ्वी का कोई वायुमंडल नहीं था। ऐसा विश्वास है कि वर्तमान वायुमंडल पृथ्वी के अंतस्थ से उत्सर्जित गैसों द्वारा बना। विशेष रूप से, जल वाष्प तथा कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) मुक्त हुए जिसके फलस्वरूप महासागर तथा अत्यधिक मात्रा में चूने का पत्थर यानि कैल्सियम कार्बोनेट बने। जल वाष्प के संघटन तथा उस समय विद्यमान सीमित पादपों के प्रकाश संश्लेषण दोनों द्वारा कुछ ऑक्सीजन का निर्माण हुआ। वस्तुत: ऊपरी वायुमंडल में ओज़ोन परत के बनने के लिए काफी ऑक्सीजन इकट्ठी हो गई। चूँकि यह परत एक पराबैंगनी निस्यंदक के समान कार्य करती है, जो पृथ्वी की सतह पर पहुँचने से पहले सौर्य विकिरण के हानिकारक पराबैंगनी हिस्से को अवशोषित कर लेती है, भूमि तथा महासागर दोनों की सतह पर जीवन का विस्तार संभव हुआ। फिर, प्रकाश संश्लेषण से ऑक्सीजन का उत्पादन बढ़ सका। वायुमंडल में नाइट्रोजन पृथ्वी के अंतस्थ से विकसित हुई तथा अपने वर्तमान स्तर तक इकट्ठी हो गई। एक महत्वपूर्ण सराहनीय बात यह है कि वायुमंडल का अधिविकास, जो इतना साधारण प्रतीत होता है, 3 से 5 विलियन सालों में हुआ। केवल पिछले कुछ करोड़ वर्षों में संसार के आज विद्यमान ऑक्सीजन और नाइट्रोजन के स्तर का विकास हुआ। अब हम वायुमंडल के उन मुख्य क्षेत्रों की चर्चा करेंगे जिनमें यह विभाजित है।

7.3 वायुमंडल के क्षेत्र

जैसा कि पहले बताया गया है, वायुमंडल का विस्तार पृथ्वी की सतह से 600 km से अधिक है। निम्नलिखित के आधार पर इसे विभिन्न क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है।

- रासायनिक संयोजन
- तापमान
- भौतिक एवं रासायनिक गुण

इनकी निम्नलिखित उपभागों में चर्चा की गई है।

7.3.1 रासायनिक संयोजन पर आधारित क्षेत्र

रासायनिक संयोजन (chemical composition) पर आधारित वायुमंडल को मोटे तौर पर दो सामान्य क्षेत्रों, **सम मंडल** (homosphere) एवं **विषम मंडल** (heterosphere), में विभाजित किया गया है। **सम मंडल** क्षेत्र में वायुमंडल का संयोजन लगभग समान रहता है। दूसरी तरफ जैसा कि इसके नाम से विदित है **विषम मंडल** में वायुमंडलीय संयोजन एक जगह से दूसरी जगह बदलता रहता है। मौसम विज्ञान संबंधी अध्ययन पारंपरिक रूप से सम मंडल से संबंधित होता है जो सामान्यत: **निम्न वायुमंडल** कहलाता है।

सम मंडल पृथ्वी की सतह से 90 km ऊपर की ओर विस्तृत होता है। सम मंडल में जल वाष्प के अलावा अन्य रासायनिक घटकों का संयोजन लगभग समान होता है। जल वाष्प की सान्द्रता में काफी विस्तार से परिवर्तन होता रहता है। ऐसा वायुमंडल के निचले क्षेत्रों में पवन (wind) द्वारा वायु के लगातार प्रक्षुब्ध (अनियमित, turbulent) मिश्रण के कारण होता है।

विषम मंडल में प्रक्षुब्ध मिश्रण से अधिक आण्विक **संवहन** (diffusion) होता है।

सममंडल के ऊपर के क्षेत्र को विषम मंडल कहते हैं। विषम मंडल को चार और विभेदनीय स्तरों में उपविभाजित किया गया है। विषम मंडल के निम्नतम स्तर में मुख्यत: आण्विक नाइट्रोजन होती है। ये पृथ्वी की सतह से लगभग 90 से 200 km तक विस्तृत होता है। इसके ऊपर परमाण्विक ऑक्सीजन स्तर 200 से 1125 km तक विस्तृत होता है। तीसरे स्तर में भरपूर मात्रा में हीलियम होती है और इसका विस्तार 1125 से 3200 km तक होता है। चौथा स्तर हाइड्रोजन स्तर होता है और यह पृथ्वी की सतह से 3200 km से 10000 km तक

MADHYAM IAS

या उससे अधिक विस्तार में होता है। यद्यपि विषम मंडल में वायुमंडल के कुल द्रव्यमान का 0.01% से कम होता है, पृथ्वी पर जीवन के लिए इसकी उपस्थिति अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। यह सूर्य की किरणों के अति ऊर्जामय हिस्से को पृथ्वी की सतह पर आने से रोकती है जो अन्यथा जीवित कार्बनिक पदार्थ को आयनित करता या उसे जला देता।

7.3.2 तापमान पर आधारित क्षेत्र

तापमान के ऊर्ध्वाधर वितरण (vertical distribution) के आधार पर, वायुमंडल को चार वि[redacted]ों में वर्गीकृत किया गया है नामत: **क्षोभमंडल** (troposphere), **समतापमंडल** (stratosphere), **मध्यमंडल** (mesosphere) तथा **बाह्य** वायुमंडल (thermosphere), ग ——
@& **क्षोभमंडल** (troposphere)& $। सौर्य विकिरणों में अक्षांशों (latitudinal) तथा ऋतुकालिक (seasonal) परिवर्तनों के कारण क्षोभ मंडल का विस्तार 8-17 km तक होता है। यहाँ ऊँचाई के साथ तापमान घटता है तथा उच्चता के साथ तापमान के परिवर्तन की दर को **ह्रास दर** (lapse rate) कहते है। ह्रास दर के विषय में विस्तार से आप इकाई 8 में पढ़ेंगे। सामान्य वायुमंडल के लिए ह्रास दर 0.64°C प्रति 100 m होती है। क्षोभ मंडल की ऊपरी सीमाओं में तापमान में लगभग – 56°C तक की कमी होती है। क्षोभ मंडल की ऊपरी सीमा **क्षोभ सीमा** (tropopause) कहलाती है। सौर्य विकिरण के समान परिवर्तन के लिए, शीत ऋतु में क्षोभ सीमा की ऊँचाई पृथ्वी के ध्रुव पर समीप तथा ग्रीष्म ऋतु में भूमध्य रेखा पर दूरस्थ होती है।

क्षोभ मंडल (troposphere) के ऊपर, ओजोन द्वारा सौर्य विकिरण के अवशोषण एवं प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाओं के कारण ऊँचाई के साथ तापमान बढ़ता है। इस स्तर में, जो 48 km तक विस्तृत होता है, क्षोभ मंडल के ऊपर स्थायीकृत वायु एक स्तरित (stratified) आवरण बनाती है जो इसके **समताप मंडल** (stratosphere) नाम का आधार बनाती है। समताप मंडल में तापमान –2°C तक बढ़ता है (क्षोभ सीमा में – 56°C से) क्षोभ मंडल तथा समताप मंडल के बीच संक्रमण क्षेत्र (transition region) अर्थात् क्षोभ सीमा, समताप वितरण का क्षेत्र होता है। समताप मंडल अपने तापमान (222' से 205°K) तथा संवहनी वायु धाराओं (convective air currents) की अनुपस्थिति द्वारा अभिलक्षणित होता है। समताप के ऊपरी स्तर को **समताप सीमा** (stratopause) कहते हैं।

संवहन (convection) की प्रक्रिया में अणुओं के समूहों के एक स्थान से दूसरे पर संवहन द्वारा ऊष्मा का संचरण होता है, उदाहरण: जल तथा वायु में।

MAADHYAM IAS

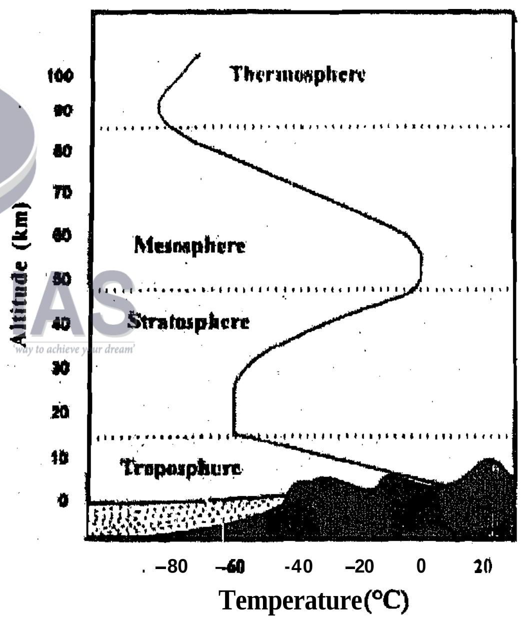

चित्र 7.1: तापमान के वितरण पर आधारित वायुमंडलीय क्षेत्र

अगला स्तर **मध्य मंडल** (mesosphere) है जहाँ तापमान घटता है और लगभग 180°K (–93°C) तक गिर जाता है। यह स्तर लगभग 85 km तक विस्तृत होता है तथा इसकी ऊपरी सीमा को **मध्य** सीमा (mesopause) कहते हैं।

वायुमंडल का सबसे ऊपरी स्तर **बाह्य वायुमंडल** (thermosphere) है जहाँ तापमान बढ़ता है और 1200°C तक भी पहुँच सकता है। इस उच्चता (altitude) पर वायु अत्यधिक अपर्याप्त मात्रा में होती है और अणुओं की गति (गतिज ऊर्जा, kinetic energy) उच्च हो जाती है और फलस्वरूप तापमान उच्च हो जाता है। तापमान के परिवर्तन पर आधारित क्षेत्रों को आरेख के रूप में चित्र 7.1 में दर्शाया गया है।

7.3.3 भौतिक एवं रासायनिक गुणों पर आधारित क्षेत्र

भौतिक एवं रासायनिक गुणों के आधार पर वायुमंडल को दो क्षेत्रों में विभाजित किया गया है: **रसोमंडल (chemosphere)** तथा **आयनमंडल** (ionosphere)। रसोमंडल अणुओं, परमाणुओं तथा मूलकों द्वारा संयोजित होता है। इसमें ओज़ोन स्तर सम्मिलित होता है, परमाण्विक ऑक्सीजन तथा हाइड्रोजन और हाइड्रॉक्सिल मूलक अन्य सक्रिय स्पीशीज़ होती हैं।

आयन मंडल (ionosphere) में अपेक्षाकृत अधिक संख्या में आयन होते हैं और यह रेडियो तरंगों को परावर्तित (reflect)/* (transmit) करने की योग्यता से पहचाना जाता है। आयन मंडल में कई स्तरों की पहचान की गई है। उनकी ऊँचाई व मोटाई सूर्य के कोण और आयनों के जीवन समय पर निर्भर करती है। निम्नतम स्तर **केनेडी-हीविसाइड स्तर** (Kennedy - Heaviside layer) अथवा D **स्तर** कहलाता है। अन्य स्तरों को **E, F1, F2** तथा **G** नाम दिया गया है। स्तरों में आयनों की संख्या 10^3 से 10^6 प्रति घन मीटर तक होती है।

वायुमंडल के क्षेत्रों के विषय में पढ़ने के बाद आइए अब वास्तविक संयोजन के बारें में जानें। वास्तविक संयोजन के बारे में सीखने से पहले निम्नलिखित बोध प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न कीजिए।

बोध प्रश्न

1) निम्नलिखित क्षेत्रों को उनके उचित वर्णन के साथ मिलाइए :

i)	सम मंडल	ह्रास दर से संबंधित
ii)	विषम मंडल	रेडियो तरंगों के संचरण के लिए उत्तरदायी
iii)	क्षोभ मंडल	अधिकतम तापमान
iv)	समताप मंडल	सूर्य से उच्च ऊर्जा विकिरणों को रोकने के लिए उत्तरदायी
v)	बाह्य मंडल	स्थायी वायु स्तर का स्तरित आवरण बनाता है।
vi)	आयन मंडल	मौसम विज्ञान संबंधी अध्ययन के लिए उचित है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

7.4 वायुमंडल का संयोजन

हमारा वायुमंडल बड़ी संख्या में गैसों तथा ऐरोसॉलों का मिश्रण है। नाइट्रोजन, ऑक्सीजन तथा ऑर्गन मुख्य घटक हैं जो वायुमंडल में स्थायी रूप से हैं तथा गैस के कुल आयतन के स्थिर अनुपात में होते हैं जबकि अन्य गैसें समय-समय पर तथा एक स्थान से दूसरे पर भिन्न-भिन्न मात्रा में होती हैं। शुष्क वायु (बिना जल वाष्प के) की विभिन्न गैसों की आपेक्षित सान्द्रताएँ सारणी 7.1 में दी गई हैं।

सारणी 7.1 : शुष्क वायु में मुख्य वायुमंडलीय गैसों का संयोजन

घटक	वायु में आयतन का प्रतिशत		सान्द्रता (प्रति मिलियन) हिस्से (ppm)
स्थिर अनुपात वाली गैसें			
नाइट्रोजन (N_2)	78.084	99.964%	780840
आक्सीजन (O_2)	20.946		209460
ऑर्गन (Ar)	0.934		9340
निऑन (Ne)	0.00182		18.2
हीलियम (He)	0.000524		5.24
मेथैन (CH_4)	0.000150		1.50
क्रिप्टॉन (Kr)	0.000114		1.14
हाइड्रोजन (H_2)	0.000050		0.50
परिवर्तनीय अनुपात वाली गैसें			
जल वाष्प (H_2O)	0 - 5		0 - 5000
* कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2)	0.0340		340
कार्बन मोनोऑक्साइड (CO)	0.010		< 100
सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2)	≤ 0.010		0 - 1
नाइट्रोजन डाइऑक्साइड (NO_2)	-		0 - 0.2
ओज़ोन (O_3)	-		0 - 10

* कार्बन डाइऑक्साइड समान रूप से वितरित होती है लेकिन यह 1.5 ppm की दर से प्रति वर्ष बढ़ रही है।

लेश गैसों में थोड़े से परिवर्तन के अलावा सम मंडल में शुष्क वायु का संयोजन इतना समान रहता है कि इसके औसत आण्विक भार को 28.96 के बराबर माना जा सकता है। यह 80 km की उच्चता तक मान्य होता है। इसके ऊपर संयोजन धीरे-धीरे हल्की गैसों की ओर परिवर्तित हो जाता है तथा पृथ्वी की सतह से 640 km की दूरी पर आण्विक भार 16.8 होता है।

इन सब में नाइट्रोजन तथा ऑक्सीजन सबसे अधिक बाहुल्य में पाई जाने वाली गैसें होती हैं तथा ऑर्गन के साथ संयोजित होने पर वायु के 99.96% संयोजन के लिए उत्तरदायी है। अन्य सारे अवयव कम मात्रा में होते हैं तथा उनकी सान्द्रताओं को प्रतिशत की अपेक्षा प्रति मिलियन हिस्से (ppm) के रूप में अधिक सरलता से अभिव्यक्त किया जाता है। कम मात्रा वाली गैसों में से कार्बन डाइऑक्साइड सबसे अधिक बाहुल्य में होती है तथा समय तथा स्थान के साथ इसकी सांद्रता परिवर्तित होती है। औसत रूप में यह 1983 में 340 ppm तथा 1994 में 358 ppm थी। प्रति वर्ष यह 1.5 ppm की दर से बढ़ती जा रही है। बची हुई वायुमंडलीय गैसें लेश मात्रा में उपस्थित होती हैं।

प्रति मिलियन हिस्सा (ppm): 1ppm का अर्थ है किसी घटक के एक हिस्से (द्रव्यमान के रूप में) को विलयन (द्रव्यमान के रूप में) के एक मिलियन हिस्से में घोलना।

MAADHYAM IAS

7.4.1 ऊँचाई के साथ गैसीय संयोजन में परिवर्तन

हाइड्रोजन और हीलियम जैसी हल्की गैसों की केवल ऊपरी वायुमंडल में अधिक बाहुल्यता में होने की अपेक्षा की जाती है लेकिन सतह के कुछ दस किलोमीटर ऊपर की ऊँचाइओं तक भी

अनियमित वायुमंडलीय गति के कारण बड़ी मात्रा में गैसों के प्रक्षुब्ध मिश्रण (turbulent mixing) से ऐसा संवहनी पृथक्करण संभव नहीं होता। गैसीय मिश्रण के ऊँचाई के साथ परिवर्तन दो मुख्य एवं अस्थायी गैसों नामत: जल वाष्प और ओज़ोन के स्रोत के स्थान से संबंधित है।

क्षोभ सीमा के ऊपर पराबैंगनी विकिरण और उसके बाद के रसायन द्वारा अणुओं के वियोजन के कारण वायुमंडल के संयोजन में परिवर्तन होता है। उदाहरण के लिए, वायुमंडल में O_2 के वियोजन से O_3 स्तर उत्पन्न होता है (भाग 7.8 देखें)। ओज़ोन मुख्यत: 15 से 35 km के क्षेत्र में इकट्ठी होती है। सतह के 100 km ऊपर O_2 का पराबैंगनी वियोजन इतना अधिक होता है कि N_2 तथा O मुख्य वायुमंडलीय घटक हो जाते हैं। निम्न समताप मंडल में ऐरोसॉलों (aerosols) का भी एक स्तर होता है जो प्राथमिक रूप से सल्फ्यूरिक अम्ल तथा धूल के कणों का बनो होता है। सल्फर गैसों के उपचयन और जल वियोजन द्वारा सल्फ्यूरिक अम्ल उत्पन्न होता है। शुक्र ग्रह पर हाल में देखे गए सल्फ्यूरिक अम्ल के अत्यधिक घने बादलों का संभव स्रोत (कई गुना अधिक रूप में) यही प्रक्रिया है।

सतह के समीप जल वाष्प कुल वायुमंडल के आयतन का केवल 4% (भार के हिसाब से 3%) होता है। वायुमंडल में इसकी आपूर्ति जल सतहों के वाष्पीकरण (evaporation) तथा पादपों के वाष्पोत्सर्जन (transpiration) 8 होती है तथा वायुमंडलीय विक्षोभ द्वारा ऊपर की ओर परिवहन होता है।

7.4.2 अक्षांश तथा ऋतु के साथ गैसीय संयोजन में परिवर्तन

अक्षांश: पृथ्वी की वक्रीय सतह से मापी गई भूमध्य रेखा से किसी केन्द्र की दूरी।

अक्षांश तथा ऋतु के साथ वायुमंडल के गैसीय संयोजन में परिवर्तन जल वाष्प तथा ओज़ोन के लिए मुख्यत: महत्वपूर्ण है। खास तौर से वसंत ऋतु में ओज़ोन की सान्द्रता भूमध्य रेखा के ऊपर निम्न तथा अक्षांश (50° उत्तरी दिशा में) के ऊपर उच्च होती है। भूमध्य रेखा के समीप जून के महीने में प्रकाश रासायनिक प्रक्रियाओं के कारण ओज़ोन का अधिकतम उत्पादन होता है फिर भी ध्रुव की ओर परिवहन के कारण वितरण पैटर्न अनियमित होता है। निम्न अक्षांशों में यह वहन दृश रूप में उच्चतर क्षेत्रों (30-40 km) से होता है तथा शीत महीनों में उच्चतर अक्षांशों में यह निम्नतर क्षेत्रों (20-25 km) की ओर होता है। यहाँ, ध्रुवीय रातों के समय ओज़ोन इकट्ठी होती है जिससे वसंत ऋतु के आरंभ में ओज़ोन से भरपूर परत उत्पन्न होती है। दक्षिणी गोलार्ध में भी ऐसा ही वितरण होता है लेकिन ध्रुवों का अधिकतम उत्तरी गोलार्ध की तुलना में अपेक्षाकृत कम प्रबल होता है।

अपनी रासायनिक प्रकृति के कारण वायुमंडल के घटकों में आपस में अन्योन्यक्रिया हो सकती है। अगले भाग में इन प्रभावों व अन्योन्यक्रियाओं का वर्णन किया गया है। उस पर बढ़ने से पहले कृपया निम्नलिखित बोध प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न करें।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बोध प्रश्न

2) निम्न दिए उत्तरों में से सही उत्तर चुनिए।

वायुमंडल का दाब तथा घनत्व

i) ऊँचाई के साथ बढ़ते हैं।

ii) ऊँचाई के साथ घटते हैं।

iii) ऊँचाई के साथ कोई परिवर्तन नहीं दर्शाते हैं।

7.5 वायुमंडलीय प्रभाव तथा अभिक्रियाएं

यदि पृथ्वी का वायुमंडल न होता तो भूस्थल का औसत तापमान लगभग 256°K अथवा – 17°C होता। वायुमंडल की उपस्थिति पृथ्वी की सतह को काफी गर्म बनाती है। इस गर्मी का कारण पादपगृह प्रभाव है जिसकी व्याख्या भाग 7.7 में की गई है। वायुमंडल न केवल पृथ्वी से विकिरण लेता है बल्कि समान मात्रा की विकिरण का उत्सर्जन करता है और इस प्रकार इसके औसत तापमान की स्थिरता को कायम रखता है। वायुमंडल विकिरण के कुछ हिस्से को अंतरिक्ष में उत्सर्जित करता है लेकिन इसका कुछ हिस्सा वापस पृथ्वी पर उत्सर्जित होकर वहाँ अवशोषित हो जाता है। इसलिए भूस्थल न केवल सूर्य से विकिरण प्राप्त करता है बल्कि इसका कुछ हिस्सा वायुमंडल से भी प्राप्त होता है और इसलिए, वायुमंडल की अनुपस्थिति में होने वाले तापमान की तुलना में इसका तापमान काफी अधिक होता है। इसे ही **वायुमंडलीय प्रभाव** कहा जाता है।

बादलों द्वारा परावर्तित (reflected) विकिरणों के अलावा वायुमंडल अधिकतर आने वाली सौर्य विकिरणों की लघु तरंगों (short wave) के प्रति पारदर्शी (transparent) होता है लेकिन पृथ्वी की सतह से उत्सर्जित दीर्घ तरंगों (long wave) वाली विकिरणों के प्रति अपारदर्शी (opaque) होता है, इसलिए पृथ्वी की अधिकतम विकिरणों को वायुमंडल अवशोषित कर लेता है। इसे **पादपगृह प्रभाव** (greenhouse effect) कहते हैं। इस अतिरिक्त विकिरणी ऊर्जा (additional radiant energy) के कारण पृथ्वी $7 सतह का तापमान – 17°C के **vv** पर + 15°C होता है। यहाँ यह बताना महत्वपूर्ण है कि पादपगृह प्रभाव की परिघटना, जो पृथ्वी पर तापमान को बनाए रखने तथा जीवन को निरंतर बने रखने के लिए इतनी महत्वपूर्ण है, **भूमंडलीय तापन** (global warming) के लिए पिछले कुछ दशकों से पर्यावरणीय चिंता का विषय होने के कारण काफी ध्यान आकर्षित कर रही है। भाग 7.7 में पादपगृह गैसों व भूमंडलीय तापन पर उनके प्रभाव की चर्चा विस्तार से की गई है। आइए, वायुमंडल में हो रही विभिन्न प्रकार की अभिक्रियाओं पर एक नज़र डालें।

7.5.1 वायुमंडल में अभिक्रियाएँ

जैसा कि पहले बताया गया है, वायुमंडल में गैसीय व कणीय घटक होते हैं। रासायनिक घटकों एवं वायुमंडल में हो रही उनकी रासायनिक एवं प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाओं को स्तर के अनुरूप संक्षेप में सारणी 7.2 में दिखाया गया है।

सारणी 7.2 : घटकों का स्तर के अनुरूप वितरण तथा वायुमंडल में हो रही रासायनिक तथा प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाएँ।

MAADHYAM IAS

उच्चता (km)	घटक		अभिक्रियाएँ	
500 km	$H > He$ $He > O$ $O > N_2O_2$ विषम मंडल	H He		बाह्य सीमा
200 km 100 km	$N_2 > O_2 > O$	O_2, N_2, O	$N + O_2 \rightarrow NO + O$ $N + NO \rightarrow N_2 + O$	मध्य सीमा
85 km	सम मंडल	OH NO H_2O	$H_2O + h\upsilon \rightarrow OH + H$	समताप सीमा

50 km	मिश्रण $O > O_3$ $O_3 = O$ $O_3 > O$	$N_2 \rightarrow N + N$ $N_2O \rightarrow N_2 + O$ $H_2O \rightarrow OH + O$ $H_2 + O \rightarrow OH + H$ $CH_4 + O \rightarrow OH + CH_3$	क्षोभ सीमा
15 km	अधिक मात्रा में कम मात्रा में N_2 – 78% CO_2, O_3 O_2 – 21% CH_4, NO_2 Ar – 1% N_2O, CO H_2, H_2O		

अब हम वायुमंडल के एक महत्वपूर्ण अवयव की चर्चा करेंगे जो मौसम विज्ञान (meteorology) की दृष्टि से अत्यंत महत्व रखता है। वह है जल।

7.6 वायुमंडल में जल

जल थोड़ी मात्रा में ही सही (0.001%) लेकिन वायुमंडल का अत्यंत महत्वपूर्ण घटक है। वायुमंडल में जल की प्रकृति एवं मात्रा कई कारकों पर निर्भर करती है जैसे, तापमान, ऊँचाई तथा स्थान इत्यादि। वास्तव में, वायुमंडल में जल, पृथ्वी की सतह में उपस्थित जल के साथ एक प्रकार का साम्य बनाए रखता है। यह कई अत्यधिक गतिशील प्रक्रियाओं द्वारा संभव होता है जिसे **जल-चक्र** (water cycle) (भाग 4.5, इकाई 4) के रूप में निरूपित किया जाता है। जल के कुछ बहुत असामान्य गुण होते हैं जो भूमि जल और वायुमंडलीय जल के बीच साम्य बनाए रखने में योगदान देते हैं। इन गुणों को संक्षेप में यहाँ वर्णित किया गया है। पहला, कई पदार्थो के विपरीत जमने (freezing) के ठीक पहले व जमने के समय जल का विस्तार (expands) होता है। इसका अर्थ है कि द्रव जल की तुलना में ठोस जल (बर्फ) का घनत्व कम होता है। इसके परिणामस्वरूप, जल में डूबने के बजाय बर्फ इस पर तैरती है। यदि बर्फ एक प्ररूपी पदार्थ (typical substance) के समान व्यवहार दर्शाता तथा जमने पर इसका घनत्व बढ़ जाता तो झीलें ऊपर से जमने की जगह तली से जमती और शीत ऋतु में जल के अंदर रहने वाले पादपों एवं जीवो के लिए जीवित रहना कठिन हो जाता।

आपको याद होगा कि जल एक त्रिविमीय पिंजरानुमा संरचना (three dimensional caged network) बनाता है।

1 ग्राम पदार्थ के तापमान को 1°C बढ़ाने के लिए आवश्यक ऊर्जा की मात्रा को उस पदार्थ की ऊष्मा धारिता के रूप में परिभाषित किया जाता है।

जल का दूसरा असामान्य गुण उसकी उच्च **ऊष्मा धारिता** (heat capcity) है। अमोनिया के अलावा अन्य सभी प्राकृतिक पदार्थों से यह अधिक है। अधिक ऊष्मा धारिता वाले पदार्थ को निम्न ऊष्मा धारिता वाले पदार्थ की तुलना में दी गई मात्रा का तापमान बढ़ाने के लिए अधिक ऊष्मीय ऊर्जा की आवश्यकता होती है। इस प्रकार जल का तापमान 1°C बढाने के लिए 4.18 J ऊष्मा की आवश्यकता होती है। इसके परोक्ष, समान ऊष्मा की मात्रा 1 ग्राम वायु का तापमान 4°C से अधिक बढ़ा देती है। जल की उच्च ऊष्मा धारिता के कारण ही बसंत में बड़ी झीलें तथा महासागर धीरे-धीरे गर्म तथा पतझड़ में धीरे-धीरे ठंडे होते हैं।

MAADHYAM IAS

जल के अन्य अद्भुत गुण इसकी उच्च **गलन की लुप्त ऊष्मा** (latent heat of fusion) तथा **वाष्पण की लुप्त ऊष्मा** (latent heat of vapourisation) हैं। 1 ग्राम बर्फ को 0°C तापमान पर पिघलाने के लिए 334 J ऊष्मा तथा वाष्पित करने के लिए 2495 J ऊष्मा की आवश्यकता होती है। प्ररूपी सतही दाबों पर, अधिकतर पदार्थों की ऊष्माओं की तुलना में ये मान काफी अधिक हैं। ये मान वायुमंडल में ऊर्जा के स्थानांतरण में काफी महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करते हैं। वायुमंडल में जल तीनों भौतिक रूपों में विद्यमान रहता है अर्थात् ठोस, द्रव एवं गैस। आइए इन रूपों की उत्पत्ति, उनके बनने की प्रक्रियाओं एवं उनके महत्व के विषय में समझें।

गलन की लुप्त ऊष्मा: 1 g बर्फ को पिघलाने के लिए आवश्यक ऊष्मा की मात्रा।

वाष्पण की लुप्त ऊष्मा: 1 g जल के वाष्पण के लिए आवश्यक ऊष्मा की मात्रा।

7.6.1 जल वाष्प

वायुमंडल में जल वाष्प झील, सागर तथा अन्य स्रोतों के जल के वाष्पीकरण तथा हिमनद (glaciers) की बर्फ के ऊर्ध्वपातन (sublimation) 8 उत्पन्न होता है। इन प्रक्रियाओं की दर तथा विस्तार तापमान पर निर्भर करते हैं और किसी दिए गए तापमान पर जल तथा उसके वाष्प में साम्य होता है। साम्य पर द्रव की सतह से निकलने वाले अणुओं की संख्या वाष्पीकरण (evaporation) द्रव की सतह पर पुन: संघनित होने वाले वाष्प के अणुओं की संख्या के बराबर होती है। इस साम्य अवस्था पर वाष्प दाब (vapour pressure) **संतृप्ति वाष्प दाब** (saturation vaour pressure) कहलाता 8 तथा इस साम्य पर वाष्प संपूर्ण वायु **संतृप्त** (saturated) कही जाती है। जल वाष्प बादल, ओस (dew) और वर्षण (precipitation) के बनने के लिए उत्तरदायी होता है जिसमें निम्नलिखित महत्वपूर्ण नमी के चर सम्मिलित होते हैं।

संतृप्ति मिश्रण अनुपात (saturation mixing ratio): सतृप्त वायु और शुष्क वायु के एक नमूने में जल वाष्प के द्रव्यमान के अनुपात को संतृप्ति मिश्रण अनुपात कहते हैं। इसे शुष्क वायु के प्रति किलोग्राम में जल वाष्प के ग्राम में अभिव्यक्त किया जाता है।

$w = m_w / m_d = 0.622\ e_a/p_d$ (चूंकि $p_d = p - c_a << p$)

जहाँ, m_w = जल वाष्प का द्रव्यमान

m_d = शुष्क वायु का द्रव्यमान

e_a = जल का वास्तविक वाष्प दाब

p = दाब

p_d = शुष्क वायु का दाब

वायुमंडल में सामान्यत: पाए जाने वाले तापमान के विस्तार में (– 20°C से + 30°C) संतृप्ति मिश्रण अनुपात प्रत्येक 10°C तापमान की बढ़ोतरी पर लगभग दुगुना हो जाता है। यह दर्शाता है कि ठंडी वायु की तुलना में ऊष्ण वायु में अधिक जल वाष्प ठहर सकता है और अधिक जल वाष्प की उपलब्धता के कारण अधिक जल वर्षण के लिए उपलब्ध होता है। यह व्याख्या करता है कि जब वायु गर्म होती है तो गरमियों में वर्षा की संभवता क्यों होती है तथा जब तापमान कम होता है तो अधिक वर्षण संभव क्यों नहीं होता।

सापेक्ष आर्द्रता (relation humidity, RH) : यह वास्तविक वाष्प दाब और संतृप्त वाष्प दाब के अनुपात द्वारा परिभाषित की जाती है अथवा वास्तविक मिश्रण अनुपात और संतृप्ति मिश्रण अनुपात के अनुपात को 100 से गुणा करने पर प्राप्त होती है।

ओसांक का तापमान (dew point temperature, T_d): यह वह तापमान है जिस पर वायु को संतृप्ति तक लाने के लिए ठंडा किया जाता है। यदि वायु को ओसांक तक ठंडा किया जाए तो जल वाष्प का संघनन (condensation) हो सकता है। यदि वायु को किसी वस्तु की सतह के समीप ठंडा किया जाए तो यह ओस बनती है। यदि पृथ्वी की सतह से दूर वायु को उसके ओसांक तक ठंडा किया जाए तो संघनन से बाद की बूँदें मिलती हैं। ओसांक के तापमान का मौसम के पूर्वानुमान (forecasting) में बहुत महत्व होता है। वायु के ठंडा होने की मात्रा की जानकारी ओस, कुहरा (fog), बादल तथा वर्षण की प्रागुक्ति करने में अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। न्यूनतम तापमान की प्रागुक्ति के लिए भी ओसांक का तापमान आवश्यक है। ओसांक प्रागुक्त न्यूनतम तापमान होता है क्योंकि ओसांक के तापमान पर पहुँचने के बाद संघनन द्वारा मुक्त लुप्त ऊष्मा (latent heat) वायु को और अधिक ठंडा होने से रोक देती है।

MAADHYAM IAS

उपरोक्त चर्चित चर वायुमंडल में जल के दो अन्य रूपों, द्रव तथा ठोस, के अस्तित्व को प्रभावित करते हैं। आइए समझें, कैसे ?

7.6.2 वर्षण

वायुमंडल में जल के सभी रूप; अर्थात् गैस, द्रव अथवा **ठोस जल-उल्का** (hydrometeors) के जैसे वर्गीकृत होते हैं। इनमें से द्रव अथवा ठोस जल कण सभी रूप जो वायुमंडल से गिरकर भूस्थल तक पहुँचते है **वर्षण** (precipitation) कहलाते हैं। वर्षण के दो रूप होते हैं नामत: द्रव **(liquid)** तथा हिमशीतित **(frozen)** वर्षण जैसा कि निम्न वर्णित है।

बादल, कुहरा, ओस इत्यादि वर्षण से भिन्न है क्योंकि वर्षण गिरकर भूस्थल तक पहुँचता है।

द्रव वर्षण : यह द्रव कणों के वायुमंडल से भूस्थल पर गिरने से संबंधित है। द्रव वर्षण के दो वर्ग **f;** बूँदा-बाँदी **(drizzle)** तथा वर्षा **(rain), 0.5 mm** से कम व्यास वाली जल की बूँदों को बूँदा-बाँदी तथा बड़े आकार वाली बूदों को वर्षा की बूँदें माना जाता है। बूँदा-बाँदी सामान्यत: **आल्टो-क्युमुलस/आल्टो-स्ट्रेटस** (alto-cumulus/alto-stratus) जैसे मध्य उच्चता वाले बादलों से गिरती है। ये बूँदें आकार में काफी समान तथा संख्या में काफी अधिक होती हैं, लेकिन उनके छोटे आकार के कारण ये बहुत थोड़ी वर्षा उत्पन्न करती हैं। दूसरी तरफ, बूँदों का आकार 0.5 mm से 5 mm के व्यास से अधिक हो सकता है। ये अधिकतर निम्न उच्चता वाले बादलों से गिरती हैं।

आल्टो-क्युमुलस: नर्म बादल का बनना, जिसमें छोटे-2 सफेद अथवा सलेटी रंग के बादल होते हैं जो झुंडों अथवा कतारों में पाए जाते हैं।

हिमशीतित वर्षण (frozen **precipitation**) : यह जल के ठोस कणों के वायुमंडल से भूस्थल पर गिरने से संबंधित है। ये कई प्रकार के तरीकों से गिरते हैं। बर्फ के क्रिस्टल **(ice crystals),** हिम **(snow),** हिम कण **(snow grain),** हिम गोली **(snow pellets),** बर्फ की गोली **(ice pellets)** तथा ओला **(hail)**।

आल्टो-स्ट्रेटस: एक स्ट्रेटस (बड़ा व गहरे रंग का निम्न बादल) बादल जो 2 से 3 मील की मध्यम ऊँचाई पर पाया जाता है।

एकल **बर्फ के क्रिस्टल (ice crystals)** सामान्यत: सपाट **षट्भुजीय** प्लेटों **(flat six sided plates),** षट्कोणीय शाखीय डेन्ड्राइटों **(hexagonal branched dendrites),** बर्फीली सुइयों **(ice needles)** अथवा षट्कोणीय प्रिज्मों **(hexagonal prisms)** के रूप **if** होते हैं। कभी-कभी डेन्ड्राइट क्रिस्टल लगभग पूर्ण षट्कोणीय सममिति **(hexagonal symmetry)** वाले अत्यधिक सुन्दर एवं जटिल पैटर्नों के बने होते हैं।

जब बर्फ के क्रिस्टल एक दूसरे से संघटन (collision) करते हैं तथा एक दूसरे से चिपक जाते हैं तो **हिम** (snow) उत्पन्न होता है। कई बार प्रत्येक हिम का हल्का टुकड़ा **(snowflake)** कुछ अकेले-अकेले क्रिस्टलों का बना होता है। कभी-कभी खास तौर से जब भूस्थल का तापमान 0°C से ठीक थोड़ा कम होता है, बहुत सारे बर्फ के क्रिस्टल मिलकर बड़े हिम के हल्के टुकड़े बनाते हैं।

हिम कण (snow grains) बर्फ के छोटे, सफेद, अपारदर्शी **(opaque)** कण होते हैं। ये सामान्यत: चपटे तथा लम्बाकार होते हैं तथा इनका व्यास 1mm से कम का होता है। इन्हें बूँदा-बाँदी का शीतित तुल्य **(frozen equivalent)** माना जा सकता है तथा सामान्यत: उप हिमकारी **(subfreezing)** तापमानों की स्थितियों में गिरता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

हिम गोली (snow pallets) लगभग गोलाकार या कभी-कभी कोनरूपी सफेद, अपारदर्शी बर्फ के कण होते हैं जिनका **2-5 mm** का व्यास होता है। जब हिम गोली एक सख्त सतह से टकराती है, ये उछलती है और कभी-कभी टूट जाती है। इस पहलू से यह हिम कणों से अलग होती है जो भूस्थल से टकराने पर ना ही उछलते है न ही टूटते हैं। हिम गोली सामान्यत: अधिकतर हिमपात के समय थोड़े समय की बौछारों में गिरती है।

बर्फ की गोली (ice pellets), पारदर्शी **(transparent)** तथा अपारदर्शी (transluscent) बर्फ के कणों से बनी होती है जिसका 5 mm से कम का व्यास होता है। इनका आकार गोलाकार, कोनरूपी अथवा अनियमित हो सकता है। ये ठोस बर्फ की होने के कारण हिम गोली से अधिक सख्त होती है और सख्त सतह पर टकराने से शीघ्र ही उछलती है। बर्फ की गोली उस प्रकार के बादलों से बनती है जो वर्षा उत्पन्न करते हैं।

ओले के कण (hail particles) गोले, दीर्घवृत्तज (ellipsoid), कोन (cone) अथवा अनियमित द्रव्यमान के रूप में बर्फ के बने होते हैं। ये बर्फ की गोली से अपने आकार, (5 mm से 10 mm तक के व्यास) के कारण भिन्न होते हैं। ओले के कणों, विशिष्ट रूप से बड़े कणों का विशेष लक्षण यह है कि ये क्रमांतर रूप से (alternate) अपारदर्शी (opaque) तथा स्पष्ट बर्फ के स्तरों के बने होते हैं।

विभिन्न प्रकार के वर्षणों के विषय में सीखने के बाद आइए वर्षण परिघटना में सम्मिलित प्रक्रियाओं को समझें।

7.6.3 वर्षण की प्रक्रिया

वास्तविकता में सभी वर्षण वाले बादल वायु की ऊपर की ओर गति के कारण बनते हैं जो निम्नलिखित साधनों में से किसी से भी या सभी से किया जा सकता है।

संवहन (convection): इसमें कुछ किलोमीटर ऊपर तक वायु का अंश (parcel) आर-पार होकर (spanning) ऊपर उठता है और संवहनी धारा के कारण वायु के बड़े अंश के लिए जगह बनाकर नीचे की तरफ खींचता है।

संक्षिप्त अभिसरण (synoptic convergence) : यहाँ बडे क्षेत्र को घेरे हुए वायु का आवरण (air blanket) ऊपर की ओर गति करता है तथा लम्बी दूरियों पर अन्दर की ओर तथा बाहर की ओर बहाव (inflow and outflow) द्वारा क्षति पूर्ति करता है।

पर्वतीय गति (orographic motion) : इसमें नम वायु (moist air) पर्वतीय विस्तार तथा तटीय रेखा (coastal line) जैसी पर्वतीय रोक के ऊपर की ओर उठती है।

ऊपर दिए गए ऊर्ध्वाधर गति के प्रकारों 4 अनुसार, वर्षा को **संवहनी** (convective), **संक्षिप्त** (synoptic) अथवा **पर्वतीय** (orographic) में वर्गीकृत किया जाता है। इनमें से किसी भी तरीके से ऊपर की ओर बढ़ती वायु का विस्तार होता है तथा निम्न दाब के स्तर की तरफ

प्रक्रियाओं का योगदान होता है।

- संघनन
- संलयन
- निक्षेपण

संघनन (condensation) : जब वायु ओस बिन्दु से नीचे के तापमानों तक ठंडी होती है, जल वाष्प वायु में छोटे कणों पर संघनित होकर संघनन नाभिक (condensation nuclei) बनाते हैं तथा बादल की बूँदें बनती हैं। ये नाभिक अधिकतर सल्फेट तथा समुद्री लवण के कण होते हैं। एक प्ररूपी बादल की बूँद का व्यास 2 से 50 μ तक होता है। इनकी सान्द्रता प्रति cm^3 लगभग 100 बूँदें तक होती है। वायु के बढते क्षेत्र की संघनन क्रियाविधि (condensation mechanism) बूँदों के आकार के स्पेक्ट्रम को संकरा बना देती है क्योंकि बड़ी बूँदों की तुलना में छोटी अधिक तेजी से बढती हैं।

1μ (माइक्रॉन) $=10^{-6}$ मीटर

MAADHYAMIAS

संलयन (coalescence) : जैसा कि नाम से विदित है संलयन कणों के आपस में जुड़ने से होता है। ऐसा तब होता है जब गुरूत्वाकर्षण के प्रभाव से कुछ कण औरों की तुलना में अधिक तेजी से गति करते हैं। इससे वर्षण कणों के आकार में बढोतरी होती है।

निक्षेपण (deposition) : इस प्रक्रिया में जल वाष्प सीधे वायु के ठोस कणों पर निक्षेपित हो जाते हैं।

संघनन एवं संलयन प्रक्रियाओं के संयोजन से वर्षा उत्पन्न हो सकती है बशर्ते कि बड़ी संख्या में उपस्थित छोटी बूँदों की तुलना में कुछ बादल की बूँदें कई गुणा बड़े आकार की हों। उदाहरण के लिए 100μ व्यास की 10^6 में एक बूँद के कारण वर्षा हो सकती है। ऐसा ज्ञात है कि उष्णकटिबंधी अक्षांशों (tropical latitudes) के ऊपर, विशेष रूप से महासागरों के ऊपर. संघनन-संलयन क्रियाविधि वर्षण के आरंभन तथा उत्पन्न होने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। कुछ अवसरों पर, भूस्थल से कुछ सौ मीटर ऊपर, वायु स्तर के तापमान हिमीभूत (freezing) होने से ऊपर होते हैं चाहे पृथ्वी के समीप के तापमान हिमांक (freezing point) 8 नीचे हों। ऐसी परिस्थितियों में वर्षण भूस्थल पर अतिशीतित वर्षा की बूँदों के रूप में पहुँचता है। इसके परिणामस्वरूप हिमकारी वर्षा (freezing rain) होती है। जब बूँदें ठोस वस्तुओं से टकराती हैं, ये जम जाती है और साफ बर्फ की परत बनाती हैं।

कभी-कभी पृथ्वी पर पहुँच कर ठोस पारदर्शी बर्फ के कण बनाने से पहले अतिशीतित (supercooled) वर्षा की बूँदें फिर से हिमीभूत होती हैं। ऐसे में वर्षण बर्फ की गोलियों (ice pellets) के रूप में होता है। ओलों को विशेष प्रकार की बर्फ की गोली का रूप सोचा जा सकता है। इसे अतिशीतित बादल की गहरी परतों और ऊपर गति करती वायु की प्रबल धारा (ऊपर की ओर झोंका, updraft) की उपस्थिति की आवश्यकता होती है। ऐसी स्थिति ऊर्ध्वाधर के रूप 'if केवल गर्जन मेघों (thunder clouds) में पाई जाती है।

आज के युग में बढ़ती हुई जनसंख्या तथा उद्योग अधिक से अधिक जल की मांग करते हैं। वर्षण क्षेत्रीय जल आवश्यकता का महत्वपूर्ण स्रोत है तथा मनुष्य और अन्य जैव निकायों की भलाई के लिए इसका उचित वितरण आवश्यक है। भारत जैसे उष्णकटिबंधी देशों की अधिकतर जनसंख्या कृषि पर निर्भर करती है जिसे स्थान व समय दोनों में परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप से बराबर वितरण की आवश्यकता होती है। इसलिए केवल प्राकृतिक वर्षण प्रक्रियाओं पर ही निर्भर न करते हुए इस प्राकृतिक स्रोत को एकत्रित करने के प्रयास बहुत प्रबल तरीके से किए गए है।

अगला भाग वायुमंडल के एक अन्य महत्वपूर्ण अवयव से संबंधित है जो पूरे भूमंडल में विशेष रूप से भूमंडलीय तापन (global warming) के मुद्दे के कारण एक वास्तविक वायुमंडलीय सरोकार का विषय बन गया है। उस भाग को पढ़ने से पहले निम्नलिखित बोध प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयत्न कीजिए।

बोध प्रश्न

3) निम्नलिखत में सही उत्तर का चयन कीजिए।

वायुमंडलीय प्रभाव

i) पादपगृह प्रभाव भी कहलाता है।

ii) वायुमंडल के स्थिर तापमान के लिए उत्तरदायी है।

iii) पृथ्वी पर बढ़े हुए तापमान का वह प्रभाव है जो वायुमंडल की अनुपस्थिति में न होता।

iv) पृथ्वी पर सौर्य विकिरण के अवशोषण के लिए उत्तरदायी है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

4) निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों द्वारा भरिए।

i) अपनी गैसीय अवस्था में वायुमंडल में जल ...., ... अथवा .... रूप में विद्यमान रहता है जबकि .... तथा .... क्रमश: द्रव एवं ठोस अवस्थाएं होती है।

ii) वायु को ओसांक के तापमान से नीचे ठंडा करने पर वायु में उपस्थित जल वाष्प छोटे-छोटे कणों पर संघनित हो जाते हैं जिन्हें .... कहा जाता है।

iii) बर्फ की पिंजरानुमा चतुष्फलकीय संरचना के कारण जल की तुलना में बर्फ का घनत्व .... होता है।

7.7 पादपगृह गैसें तथा भूमंडलीय तापन

भाग 7.5 में आपने पढ़ा कि वायुमंडल की उपस्थिति पृथ्वी पर एक औसत तापमान बनाए रखने में सहायता करती है जिससे जीवन निरंतर बना रहता है। यह वायुमंडल के पादपगृह प्रभाव के कारण प्राप्त किया जाता है। वायुमंडल की गैसें जैसे जल वाष्प, कार्बन डाइऑक्साइड, क्षोभमंडलीय ओज़ोन, नाइट्रस ऑक्साइड तथा मेथैन जो सौर्य विकिरण के प्रति पारदर्शी मगर दीर्घ तरंग विकिरण के प्रति अपारदर्शी होती हैं; **पादपगृह गैसें** (greenhouse **gases, GHG**) कहलाती हैं। उनकी क्रिया पादपगृह के काँच के समान होती है। वायुमंडल के निम्न स्तरों के पृथ्वी-वायुमंडल निकाय से ये दीर्घ तरंगदैर्ध्य (long wavelength) को अपने पाश (trap) में ले लेती हैं जो अन्यथा अंतरिक्ष में वापस चली जातीं। फलस्वरूप सतह पर कुछ ऊर्जा के पुन: विकीर्णन से सतह का तापमान इन गैसों की अनुपस्थिति में होने वाले तापमान की तुलना में उच्च होता है। एक चिन्ता का विषय यह है कि मनुष्य जनित क्लोरोफ्लुओरो-कार्बनों के साथ-साथ इन पादपगृह गैसों के कारण पादपगृह प्रभाव बढ़ सकता है जिसके फलस्वरूप सतह का तापमान बढ़ जाएगा। पृथ्वी की सतह पर तापमान की इस वृद्धि को **भूमंडलीय तापन** (global warming) कहते हैं। इन गैसों की सान्द्रता में विशेषकर पिछले **50** वर्षों में वृद्धि देखी गई है जो **मानवोद्भवी** (anthropogenic) गतिविधियों, विशेषकर जीवाश्मी ईंधनों (fossil fuels) के दहन, के कारण होता है। परिणामस्वरूप उत्पन्न पादपगृह प्रभाव एक चिंता का कारण है। वायुमंडल में सबसे महत्वपूर्ण पादपगृह गैसों की सूची सारणी 7.3 में दी गई है और निम्नलिखित उपभागों में विस्तार से इनकी चर्चा की गई है।

मानवोद्भवी गतिविधियाँ: मानव द्वारा उत्पन्न या रची गई गतिविधियाँ।

सारणी 7.3 : पादपगृह गैसें तथा उनकी सान्द्रता तथा वृद्धि की वार्षिक दर

पादपगृह गैस	वायुमंडलीय सान्द्रता (ppbv)	वृद्धि की वार्षिक दर (%)
कार्बन डाइऑक्साइड	358,000	0.4
मेथैन	1,650	1.0
नाइट्रस ऑक्साइड	304	0.25
मेथिल क्लोरोफॉर्म, CH_3CCl_3	0.13	7.0
ओजोन	परिवर्तनशील	-
CFC-11, $CFCl_3$	0.23	5.0
CFC-12, CF_2Cl_2	0.4	5.0
कार्बन टेट्राक्लोराइड	0.125	1.0
कार्बन मोनोक्साइड	परिवर्तनशील	0.2

ppbv = parts per billion by volume
(आयतन के अनुसार प्रति बिलियन हिस्से)

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

7.7.1 जल वाष्प

भाग 7.6 में आपने जल के विभिन्न रूपों की उपस्थिति के बारे में पढ़ा जिसमें जल वाष्प एक गैसीय रूप है। वर्तमान जलवायु में जल वाष्प मुख्य पादपगृह गैस के रूप में है। फिर भी निम्न वायुमंडल में जल वाष्प के स्तर का निर्धारण वाष्पण तथा वर्षा के बीच संतुलन द्वारा किया जाता है। जल वाष्प का सबसे अधिक पादपगृह प्रभाव होता है क्योंकि ये प्रबलता से IR विकिरणों का अवशोषण करते हैं।

वास्तव में, वायुमंडलीय अवशोषण का लगभग 90% वायुमंडल में जल वाष्प, बादल तथा कार्बन डाइऑक्साइड के कारण होता है। [redacted] 10% कुछ अन्य गैसों के कारण होता है जैसे ओज़ोन, मेथैन तथा नाइट्रस ऑक्साइड। जल पृथ्वी के ऊष्मा संतुलन को प्रबलता से प्रभावित करता है। बादलों के रूप 3, यह सूर्य 'h4 रोशनी को परावर्तित (reflect) करता 8, इस प्रकार पृथ्वी पर निम्न तापमान प्रभाव का कारण होता है। रात में जल वाष्प पृथ्वी द्वारा उत्सर्जित IR विकिरणों का अवशोषण करते हैं। इसके अलावा, जल के संघनन तथा वाष्पण के समय ऊर्जा परिवर्तन भी वायुमंडल के ऊर्जा स्थानांतरण को प्रभावित करते हैं (उपभाग 7.6.1)। जलवायवी निकाय (climatic system) में क्षोभमंडल (troposphere) में जल वाष्प 'h4 सान्द्रता का निर्धारण आंतरिक तरीके से होता है और मानवोद्‌भवी **स्रोत** (sources) एवं **विलयगर्त** (sink) द्वारा बिल्कुल नाम मात्र को प्रभावित होता है। भविष्य में भूमंडलीय तापन के फलस्वरूप जल वाष्प बढ़ने की अपेक्षा की जाती है जो बदले में भूमंडलीय तापन का कारण होगा।

स्रोत: जहाँ से उत्पत्ति होती है।

विलयगर्त: वह क्रियाविधि जिससे कोई अवयव अवशोषित अथवा नष्ट होता है।

7.7.2 कार्बन डाइऑक्साइड

वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड प्राकृतिक रूप में भूमंडलीय स्तर पर होती है और सबसे सामान्य पादपगृह गैस होती है क्योंकि वायुमंडल में लगभग 50% ग्रहणित ऊष्मा के लिए यह उत्तरदायी होती है। कार्बन डाइऑक्साइड 12500 से 17000 mm के बैंड पर प्रबलता से अवरक्त विकिरणों (infrared radiation) का अवशोषण करती है। करीब-करीब सभी जीवों में यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मनुष्य एवं जन्तु इसको बाहर निकालते हैं जबकि पादप इसे श्वसन द्वारा अंदर लेकर इसमें उपस्थित कार्बन को अपने लिए आवश्यक कार्बोहाइड्रेट के उत्पादन के लिए इस्तेमाल करते हैं। 18वीं शताब्दी में संरक्षित बर्फ में पाश (trap) वायु के विश्लेषण से पता चलता है कि पिछली शताब्दी से कार्बन डाइआक्साइड की सान्द्रता बढ़नी आरंभ हुई और तब से आज तक बढ़ती जा रही है। संयुक्त रूप से औद्योगिकीकरण के आरंभ से कार्बन डाइऑक्साइड की सान्द्रता लगभग 25% बढ़ गई है। बिना किसी शंका के इसका मुख्य कारण जीवाश्मी ईंधन (fossil fuels) का दहन है जिससे ईंधन में उपस्थित कार्बन उपचयित होकर कार्बन डाइआक्साइड बनाता है और जो वायुमंडल में मुक्त हो जाती है। वन भूमि के नाश का भी इस वृद्धि में योगदान है क्योंकि जब कृषि के लिए भूमि को साफ किया जाता है तो इस पर लगे वृक्ष को सामान्यत: जला दिया जाता है।

उपरोक्त के अलावा, कार्बन डाइऑक्साइड जीवाश्मी ईंधनों के निष्कर्षण तथा वितरण के समय भी उत्सर्जित होती है। जब खानों में से कोयला खोदा जाता है तब भी CO_2 निकलती है अथवा जब कुओं से तेल पंप द्वारा बाहर निकाला जाता है। जब ईंधनों को परिवहित किया जाता है तब और अधिक मात्रा में ये वायुमंडल में मुक्त होती है जैसा कि गैस की पाइपों में होता है। एक साथ, ये सारी गतिविधियाँ मानव कृत कार्बन डाइऑक्साइड के कुल वार्षिक उत्सर्जनों के लगभग एक प्रतिशत के लिए उत्तरदायी होती हैं। जब पेट्रोलियम भंडारों से प्राकृतिक गैस 'प्रदीप्त' (flare) होती है तब भी वायुमंडल में CO_2 मुक्त होती है। प्राकृतिक गैस तथा तेल अक्सर एक साथ निक्षेपणों (deposits) में पाए जाते हैं। कभी कभी तेल ड्रिल (oil drilling) करने से गैस सीधे वायुमंडल में प्रदीप्ति (flare) अथवा जल उठती है, विशेष रूप से यदि गैस पाइपलाइनों अथवा सक्रिय गैस पाइपलाइनों अथवा गैस का सक्रिय इस्तेमाल करने वालों से कुँआ दूर हो। 1970 के मध्य में गैस प्रदीप्ति CO_2 का भूमंडलीय उत्सर्जन सबसे ऊँचा पहुँच गया तथा तब से कम हो गया है। जो गैस पहले प्रदीप्त हो रही थी अब ऊँचे दामों और गैस की अधिक माँग के कारण ईंधन के रूप में इस्तेमाल किए जाने के लिए प्रग्रहित (capture) की जा रही है और उत्पादन उपकरण में सुधार किया जा रहा है। इस स्रोत से CO_2 के भूमंडलीय उत्सर्जन (1989) को 202 मिलियन टन के बराबर आंका गया है जो मानवकृत CO_2 के कुल उत्सर्जनों का 0.8% है।

अफ्रीका और एशिया के तेल उत्पादन करने वाले देशों और पूर्व सोवियत संघ में गैस प्रदीप्ति से अधिकतम उत्सर्जन होता है।

MAADHYAM IAS

वायुमंडल से CO_2 प्राकृतिक विलयगर्त (sinks) के एक संकुल नेटवर्क द्वारा निकाली जाती है। अधिकतर आंकलन यह सुझाते हैं कि वर्तमान में मुक्त CO_2 का लगभग 40% महासागरों द्वारा अवशोषण हो जाता है। एक दूसरा महत्वपूर्ण विलयगर्त प्रकाश संश्लेषण है। फिर भी, जब पादप प्लवक (plankton) सड़ते हैं अथवा जन्तुओं द्वारा खाए जाते हैं CO_2 दुबारा मुक्त होती है। इसका केवल थोड़ा सा अंश स्थायी रूप से हटाया जा सकता है। यह मानना सुरक्षित है कि वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड का केवल लगभग आधा हिस्सा मुक्त होता है और वहीं रहता है तथा दूसरा आधा महासागरों एवं पादप जीवों द्वारा अवशोषित हो जाता है।

क्या होता है जब कार्बन डाइऑक्साइड वायुमंडल में मुक्त होती है? यह प्रक्रिया बहुत जटिल है। औसत कार्बन परमाणु अपना जीवन एक स्थान से दूसरे में इधर से उधर जाने में व्यतीत करता है – जीवाश्मी ईंधन से वायु तक, वायु से महासागरों तक (घुले हुए कार्बोनेटों के रूप में) महासागरों से मछली तथा अन्य समुद्री जीवों तक, उनसे समुद्री संस्तर तक, वहाँ से फिर से सतह तक और अंततः वायुमंडल में जहाँ यह पादपों द्वारा उपयोग में लाया जा सकता है, मृदा में जाता है और अंततः फिर से जीवाश्मी ईंधन के रूप में परिवर्तित हो जाता है। यह चक्र फिर आरंभ हो जाता है। यह संपूर्ण प्रक्रिया 'कार्बन चक्र' के द्वारा दर्शाई जा सकती है, चित्र 7.2।

कार्बन डाइऑक्साइड के वायुमंडलीय स्तर पर जीवाश्मी ईंधन के दहन के प्रभाव का मूल्यांकन सही-सही तरीके से तभी किया जा सकता है जब कि पूरे कार्बन चक्र के कार्यान्वयन को एकदम पूरे तरीके से समझा जा सकेगा। अब जब कि वायुमंडलीय CO_2 अपने प्राकृतिक स्तर से काफी ऊपर उठ चुकी है, इस जटिल कार्बन चक्र के कई पहलू बदल रहे हैं। पृथ्वी की जलवायु का भविष्य इस पर निर्भर करता है कि आने वाले समय में CO_2 तथा अन्य लेश गैसों की सान्द्रताएं कितनी बढ़ती हैं।

भूमंडलीय कार्बन चक्र के एक हाल के मॉडल ने प्रागुक्ति की है कि कार्बन डाइऑक्साइड के भविष्य में स्तर क्रमशः निम्न और ऊपर की सीमाओं के लिए 367 तथा 531 ppmv पहुँच जाएगा। इसका अर्थ है कि कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर 2050 तक पूर्व औद्योगिक स्तर के 1.4 से 2.0 गुणा अधिक हो जाएंगे। कई प्राधिकरणों द्वारा ऐसी सहमति है कि कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर के दोगुणां होने से अधिकतम जलवायवीय अनियमितता हो जाएगी जो भविष्य के मानव समाजों को स्वीकार्य होगी। फिर भी अन्य पादपगृह गैसें भी जलवायवीय परिवर्तन उत्पन्न कर सकती हैं जिसका अर्थ है कि कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर पूर्वऔद्योगिक स्तरों के 1.5 से 1.7 गुणा के अंदर होने चाहिए।

MAADHYAM IAS

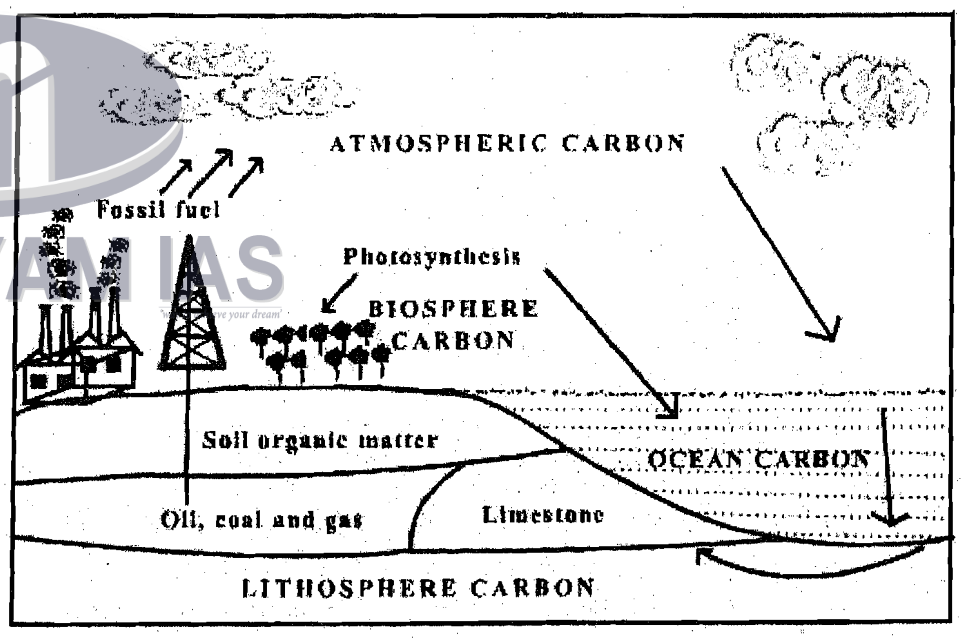

चित्र 7.2: कार्बन चक्र

7.7.3 मेथैन

वायुमंडल में उपस्थित एक अन्य महत्वपूर्ण पादपगृह गैस मेथैन है जो 1.8 ppm तक विस्तृत होती है। वायुमंडल में इसके स्तर पिछले दशकों में लगभग 1.1% के वार्षिक दर से बढते जा रहे हैं। पिछले 600 सालों में मनुष्यों की जनसंख्या की वृद्धि और मेथैन के स्तर ने काफी करीब से एक-दूसरे का अनुसरण किया है। मेथैन के वायुमंडल में भविष्य में स्तर के बारे में अधिकतर प्रागुक्तियाँ यह मानती हैं कि इसका जनसंख्या वृद्धि के साथ सहसंबंध इसी प्रकार बना रहेगा। जुगाली (rumination), धान की खेती (rice farming), जीवाश्मी ईंधन दहन का लगभग समान मात्रा में सबसे अधिक योगदान प्रतीत होता है और दलदली स्थान (marshy place) तथा कोयले के खनन (coal mining) बचा हुआ अधिकांश हिस्सा बनाते हैं। प्रत्येक वर्ष वायुमंडल में औसतन 425 मिलियन टन मेथैन मुक्त होती है। मनुष्य की गतिविधियाँ मेथैन के स्तर को कई प्रकार से प्रभावित करती हैं। भूमि को कृषि के लिए परिवर्तित करने से मेथैन मुक्त होती है विशेषकर धान की खेती से। इसी प्रकार वन की कटाई, कोयले का खनन तथा निष्कर्षण और प्राकृतिक गैस के उपयोग से होता है। उत्तरध्रुवीय (arctic) क्षेत्र भी एक स्रोत के समान कार्य कर सकते हैं यदि किसी गतिविधि से बर्फ में शीतित मेथैन मुक्त हो जाये क्योंकि मेथैन के प्राकृतिक स्रोतों को भली प्रकार नहीं समझा गया है। जलवायवीय परिवर्तन में इसकी भूमिका अब काफी अनिश्चित है। CO_2 के विपरीत दूसरे रासायनों (chemicals) तथा वायुमंडल में उपचयन द्वारा मेथैन नष्ट होती है जिससे इसका जीवन काल लगभग 10 साल हो जाता है।

मनुष्य की गतिविधि भी इन विलयगार्त अभिक्रियाओं में दखल दे सकती है और मेथैन की सांद्रता में और वृद्धि करती है।

कार्बन डाइऑक्साइड के समान, तेल तथा गैस के कुँओं और पाइपों से प्राकृतिक गैस के निकलते समय मेथैन भी निकलती है। प्राकृतिक गैस 85 से 95% मेथैन ही होती है। भूमि के अंदर के भंडार से पाइपों और पात्रों के द्वारा लोगों तक परिवहन के समय निश्चित रूप से गैस रिसती रहती है। दुर्घटनाओं और खराब रख रखाव तथा उपकरण चालन के कारण और अधिक रिसाव होता है। अच्छी तरह सील किए नए पाइपलाइन तंत्रों से 0.1 % से भी कम रिसाव होता है जबकि पुराने तंत्रों से गैस का 5% तक रिसाव भी हो सकता है। वैसे तो कुछ ही मापन किए गए हैं लेकिन वर्तमान अनुमान के अनुसार तेल व गैस के कुँओं से लगभग 10 मिलियन टन मेथैन प्रति वर्ष रिस जाती है। पाइपलाइनों से वार्षिक उत्सर्जन 10-20 मिलियन टन के लगभग होता है जो मनुष्य कृत कुल उत्सर्जनों का 2-5% है।

मेथैन कोयले के खनन और प्रक्रिया के समय भी मुक्त होती है। यह जीवाश्मी निष्कर्षण (fossil extraction)% समय उत्सर्जित मेथैन होती है। ऐसा लगता 3 कि कोयले में मेथैन के पॉकिट (pockets) होते हैं और दाब तथा कोयले की अंदर की सूक्ष्मदर्शी सतह पर रासायनिक आकर्षण के कारण मेथैन के अणु भी इससे जुड़ जाते हैं। कोयले की ये गैस की पॉकिटें और कोयले की चट्टाने जब कोयलें के खनन करने वालों द्वारा तोड़ी जाती हैं तो मेथैन वायुमंडल में मुक्त होती है। कोयले को चूर-चूर तथा और अधिक चूर्णन (pulverise) करके भी मेथैन गैस की छोटी-छोटी पॉकिटें टूट जाती हैं तथा कोयले में अवशोषित मेथैन मुक्त होती है। खननित कोयले से निकलने में अवशोषित मेथैन गैस को कई दिन अथवा महीने भी लग जाते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

प्रति इकाई कोयले से निकलने वाली मेथैन की मात्रा कोयले के प्रकार एवं खनन के तरीके पर निर्भर करती है। सामान्यत: उच्च गुणवत्ता वाले कोयले जैसे बिटुमिनस (bituminous) तथा ऐन्थ्रासाइट (anthracite) कोयले की तुलना में निम्न गुणवत्ता के कोयले जैसे 'भूरा कोयला' (brown) अथवा लिग्नाइट (lignite) में मेथैन की मात्रा कम होती है। इसके अलावा, सतह के खनन से प्राप्त कोयले की प्रति इकाई से भूमि के नीचे खनन से प्राप्त कोयले की तुलना में औसतन केवल 10% मेथैन मुक्त होती है। भूमि के अंदर गहरे में उच्च दाब पर

कोयले से मेथैन के उत्सर्जन के लिए चीन, पूर्व सोवियत संघ तथा अमरीका तीनों देश मिलकर संसार के दो तिहाई के लिए उत्तरदायी है।

दबे कोयले में अधिक मेथैन रहती है और भूमि के भीतर खनन की तकनीकों द्वारा निकाले नहीं गए कोयले और कोयले की चट्टान दोनों से मेथैन निकलती है।

उपचयन तथा अन्य प्रक्रियाएं जो मेथैन को नष्ट करती हैं प्रति वर्ष लगभग 375 मिलियन टन के लिए उत्तरदायी हैं जिसमें वार्षिक 50 मिलियन टन का आधिक्य अलग है। ये मेथैन के वार्षिक रूप से बढ़ने वाले स्तर हैं। मेथैन की सान्द्रताएं 0.7 के पूर्वऔद्यागिक स्तर से बढ़कर लगभग 1.65 ppmv हो गई है। यह मानते हुए कि भविष्य में भी मेथैन के स्तर एवं जनसंख्या के बीच संबंध यही रहेंगे, मेथैन के स्तर 2050 वर्ष तक 2.5 ppmv हो जाएंगे। फिर भी काफी कुछ इस पर निर्भर करेगा कि वायुमंडल में उन रासायनों के स्तर क्या होंगे जो मेथैन के उपचयन की दर का नियंत्रण करते हैं।

7.7.4 नाइट्रस ऑक्साइड

मेथैन के समान नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O), प्राकृतिक एवं अप्राकृतिक दोनों तरीकों से उत्पन्न हो रही है और इसकी सान्द्रता बढ़ रही है, यद्यपि यह मेथैन की तुलना में धीमी गति से बढ़ रही है तथा इसका जीवन-काल करीब-करीब 170 साल का है। नाइट्रस ऑक्साइड की वर्तमान वायुमंडलीय सान्द्रता लगभग 0.3 ppmv है तथा ये मानव गतिविधि के अपरोक्ष परिणामस्वरूप बढ़ रही है। यह मृदा में सूक्ष्मजीवी क्रिया (microbial action) के कारण उत्पन्न होती है। इसके मुक्त होने की दर कृषि के लिए नाइट्रोजन वाले खनिज उर्वरकों के इस्तेमाल करने से त्वरित होती है। साल में 12 से 15 मिलियन तक मुक्त नाइट्रस ऑक्साइड का लगभग 10% शायद उर्वरकों के उपयोग के कारण होता है। प्राकृतिक सूक्ष्मजीवी गतिविधि, कृषि का विस्तार, लकड़ी का दहन, फ़सल अवशेष तथा जीवाश्मी ईंधन बाकी के लिए उत्तरदायी हैं। इसकी भविष्यवाणी करना कठिन है क्योंकि पिछले दशक में नाइट्रस ऑक्साइड का उत्सर्जन बहुत तेजी से बढ़ा है। यह मानना बुद्धिमानी नहीं है कि सीमित जीवाश्मी ईंधनों और कृषि योग्य भूमि के कारण यह वृद्धि अनिश्चित रूप से होती रहेगी। इसके अलावा नाइट्रस ऑक्साइड का वायुमंडल से रुके रहने का समय इतना है कि एक स्थायी अवस्था, जिसमें वायुमंडल में नाइट्रस ऑक्साइड के स्तर बढ़ना बन्द कर देते हैं, अगले 200 सालों तक भी नहीं पहुँच पाएगी चाहे अब इसके उत्सर्जन बन्द भी हो जाएं। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2050 में नाइट्रस ऑक्साइड के स्तर लगभग 0.375 ppmv हो जाएंगे जो पूर्वऔद्योगिक स्तरों की कुल 34% वृद्धि है।

7.7.5 क्लोरोफ्लुओरोकार्बन

MAADHYAM IAS

क्लोरोफ्लुओरोकार्बन (chlorofluorocarbons, CFCs) बहुत शक्तिशाली पादपगृह गैसें हैं जिनका स्तर तेजी से बढ़ रहा है (वर्ष में – 5%)। ये समताप मंडल (stratosphere) में ओज़ोन को नष्ट करती है। CFCs का उपयोग प्रशीतन में द्रवों, ऐरोसॉलों में नोदकों (propellants) के जैसे, विलायक के रूप में तथा प्लैस्टिकों के उत्पादन if. झाग उत्पन्न करने वाले कर्मकों के रूप में होता है और इसलिए इनके उत्सर्जनों से उत्पन्न होते हैं। अन्य पादपगृह गैसों के विपरीत ये प्राकृतिक रूप से उत्पन्न नहीं होती हैं तथा वायुमंडल में इनकी उपस्थिति पूर्ण रूप से औद्योगिक उत्पादन के कारण होती है। वास्तविक रूप में संपूर्ण CFC उत्पादन अंततः वायुमंडल में लम्बे समय काल के लिए रह जाता है।

ऊपरी वायुमंडल में CFC क्लोरीन गैस मुक्त करते हैं जो ओज़ोन के विघटन का कार्य करती है। भाग 7.8 में इससे संबंधित मुक्त मूलक अभिक्रिया दी गई है। इस प्रकार ये ओज़ोन परत के लिए एक ख़तरा है जो पराबैंगनी विकिरणों के हानिकारक प्रभावों से पृथ्वी पर जीवन की रक्षा करती है। समताप मंडल में ओज़ोन (जो एक पादपगृह गैस है) को नष्ट करके CFC परोक्ष रूप से जलवायु को उन तरीकों से प्रभावित करते हैं जिनकी समझ अभी तक नहीं बन

पायी है। इस कारण विश्व भर में CFCs के उत्पादन को कम करने के लिए कई सख्त प्रतिबंध लागू किए गए हैं। चूँकि CFCs का लंबा वायुमंडलीय समय काल होता है और उनके प्रभावों को कई वर्षों तक महसूस किया जाएगा; वायुमंडल में CFC की इस बढ़ती हुई सान्द्रता की प्रवृति को शीघ्रता से रोकना या कम करना पड़ेगा।

7.7.6 ओज़ोन

ओज़ोन वायुमंडल का एक प्राकृतिक घटक है और पृथ्वी पर जीवन इसकी उपस्थिति पर निर्भर करता है। इसकी सान्द्रता, ऊँचाई, उच्चता, ऋतु तथा दिन के समय के साथ परिवर्तित होती है जिससे ओज़ोन सान्द्रता, की बदलती हुई सान्द्रता का संसूचन बहुत मुश्किल हो जाता है। ओज़ोन सान्द्रताएं निम्न वायुमंडल में बढ़ती हुई प्रतीत होती हैं जहाँ ये एक पादपगृह गैस के जैसे कार्य करती हैं। यह अन्य अणुओं, जैसे कार्बन मोनोआक्साइड, गाड़ी के धुएँ से निकले नाइट्रोजन के ऑक्साइड, मेथैन तथा अन्य हाइड्रोकार्बनों की सान्द्रता के बढ़ने के कारण होती है। ये उस अभिक्रिया को उत्प्रेरित करती है जिसमें ऑक्सीजन से ओज़ोन प्राप्त होती है। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि निम्न वायुमंडल में ही ओज़ोन एक पादपगृह गैस की मुख्य भूमिका निभाती है। 9 km की ऊँचाई तक ओज़ोन के स्तर वर्ष में शायद लगभग 0.25% तक निरंतर बढ़ते रहेंगे। इससे अधिक ऊँचाई पर यह प्रभाव कम हो जाता है और 27 km पर शून्य हो जाता है। इससे भी ऊपर CFCs तथा अन्य गैसों की सान्द्रताओं के कारण ओज़ोन के स्तर काफी मात्रा में कम हो जाते हैं।

7.7.7 अन्य पादपगृह गैसें

अन्य पादपगृह गैसों में हाइड्रोक्लोरोफ्लुओरोकार्बन **(hydrochloroflurocarbons, HCFC)** अन्य हाइड्रोकार्बन तथा हेलोन सम्मिलित हैं। इन गैसों के उत्सर्जन आज तक कम महत्वपूर्ण हैं लेकिन औद्योगिक प्रक्रियाओं के बदलने से ये अधिक महत्वपूर्ण हो सकते हैं। यह HCFCs के लिए सत्य है। **मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल** (Montreal Protocol) के परिणामस्वरूप CFCs को प्रतिस्थापित करके जिनके स्तरों की शीघ्रता से बढ़ने की अपेक्षा है।

पृथ्वी बढ़ते हुए पादपगृह प्रभाव का परिमाण न केवल उष्ण पृथ्वी है बल्कि अधिक नम वायुमंडल भी है। इसका नेट परिणाम भूमंडलीय तापन की परिघटना है। अगले उपभाग में आइए इन गैसों की भूमंडलीय तापन की क्षमता (global warming potential) के बारे में पढ़ें। उस पर जाने से पहले निम्नलिखित बोध प्रश्नों को हल करने का प्रयत्न कीजिए।

ओज़ोन की परत का ह्रास करने वाले पदार्थों पर **मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल** 1987 में आरंभ हुआ जो ओज़ोन परत की रक्षा के लिए संयोजन द्वारा किया गया था। यह 1997 में बदला गया जिसका उद्देश्य मानव कृत उन पदार्थों को हटाना या कम करना है जो ओज़ोन परत का ह्रास करते हैं।

बोध प्रश्न

5) नीचे कुछ पादपगृह गैसों की सूची व उनके सामने उनके स्रोतों के लिए रिक्त स्थान दिए गए है। प्रत्येक के लिए कम से कम तीन स्रोत लिखिए।

पादपगृह गैस	स्रोत
कार्बन डाइऑक्साइड	....
मेथैन	....
नाइट्रस ऑक्साइड	....
क्लोरोफ्लुओरोकार्बन	....
ओज़ोन	....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बोध प्रश्न

6) निम्नलिखित में सही उत्तर चुनिए।
निम्न स्तर की ओजोन निम्नलिखित तरीके से उत्पन्न होती है।
 i) कार्बन तथा नाइट्रोजन के ऑक्साइडों
 ii) मेथैन जैसे हाइड्रोकार्बनों
 iii) CFCs
 iv) उपरोक्त तीनों
 v) केवल i) तथा ii)

7.7.8 पादपगृह गैसों की भूमंडलीय तापन की क्षमता

किसी विशेष पादपगृह गैस की सान्द्रता में शीघ्र वृद्धि गैस के आण्विक गुणों तथा वायुमंडल में पहले से उपस्थित इसकी मात्रा पर निर्भर करती है। पादपगृह गैस के गुण यह निर्धारित करते हैं कि वे कितनी अवरक्त विकिरण (infrared radiation) की मात्रा और किस तरंगदैर्ध्य पर अवशोषण करती है। इसके अलावा हमें यह जानने की आवश्यकता भी है कि जैसे-जैसे ये वायुमंडल में गति करती हैं तो इन तरंगदैर्ध्यों से ये कितनी ऊर्जा प्राप्त करती हैं। मान लीजिए कि आप एक साफ तैरने के तालाब में थोड़ी मिट्टी डालते हैं तो इसका प्रभाव शीघ्र ही दिखाई देगा। लेकिन यदि समान मात्रा में कीचड़ एक गन्दे तालाब में डालें तो कोई परिवर्तन नज़र नहीं आएगा क्योंकि तालाब पहले ही अपारदर्शी था। इसी प्रकार, चूँकि CO_2 प्राकृतिक रूप में विद्यमान होती है तो वायुमंडल CO_2 द्वारा अवशोषित तरंगदैर्ध्य के प्रति आंशिक रूप से अपारदर्शी होता है। इससे CO_2 उत्सर्जनों का सीधा प्रभाव कम हो जाता है। अंतिम की तुलना में CO_2 के संकलित प्रत्येक किलोग्राम का प्रभाव थोड़ा कम होता है क्योंकि उपयुक्त तरंगदैर्ध्य ठीक उसी प्रकार रोक लगा देती है जिस प्रकार गन्दे तालाब में फालतू कीचड़ डालने से उसमें देखने से कोई खास अंतर नहीं दिखाई पड़ता। दूसरी तरफ वायुमंडल में पहले CFC विद्यमान नहीं थे जब तक ये मानव द्वारा नहीं लाए गए और इनकी मात्रा में थोड़ी वृद्धि से भी काफी प्रभाव पड़ता है।

CO_2 के लिए जीवन काल लगभग 50-200 साल मेथैन के लिए 10 साल तथा नाइट्रस ऑक्साइड के लिए 150 साल हैं।

विभिन्न पादपगृह गैसों की 'प्रबलताओं' में काफी अंतर होता है। 1990 में पाँच मुख्य पादपगृह गैसों के कुल उत्सर्जनों में CO_2 का उत्सर्जन भार के रूप में 98% से अधिक था (इसमें ओज़ोन को छोड़ दिया गया है क्योंकि इसका प्रभाव अधिक तो है लेकिन मात्रा का पता लगाना कठिन है)। वर्तमान पादपगृह गैस उत्सर्जनों का भविष्य की पादपगृह गैस की सान्द्रताओं पर विभिन्न तरीकों से प्रभाव पड़ेगा जो प्रत्येक गैस के विशिष्ट जीवन-काल पर निर्भर करता है। सारी पादपगृह गैसों में से CFC का जीवन-काल सबसे सरल होता है। वायुमंडल को इनसे छुटकारा मिलने का केवल एक तरीका है वह है समताप मंडल में सूर्य के प्रकाश से इनका नाश। फिर भी इनका जीवन-काल बहुत लम्बा होता है। उदाहरण के लिए, CFC-11 का जीवन काल 65 साल है जबकि अन्य CFCs के लिए यह 90 से 400 साल तक हो सकता है। CFC के प्रतिस्थापित करने वाले HCFCs का जीवन-काल काफी कम होता है; अधिकतर लगभग 15 साल। अन्य गैसों के जीवन-कालों को परिभाषित करना बड़ा कठिन है क्योंकि उनके जीवन-काल इतने जटिल हैं कि उन्हें साधारण अपक्षय प्रक्रिया द्वारा अभिलक्षणित नहीं किया जा सकता।

पादपगृह गैस उत्सर्जन के सापेक्ष महत्व को उनकी **भूमंडलीय तापन की क्षमता ((global warming potential, GWP)** के रूप if आंका जा सकता है। भूमंडलीय तापन क्षमता का उपयोग विभिन्न पादपगृह गैसों की वायुमंडल में ऊष्मा पाश करने की योग्यताओं की तुलना करने में किया जाता है। GWP प्रत्येक गैस की CO_2 के सापेक्ष विकीर्णन क्षमता (ऊष्मा

MAADHYAM IAS

अवशोषण की योग्यता) और साथ ही साथ प्रत्येक गैस के CO_2 के सापेक्ष क्षय की दर (दिए गए वर्षों की मात्रा में से निष्कासित मात्रा) पर आधारित होती है। उदाहरण के लिए, मेथैन की GWP को 1 kg CO_2 (मुक्त) के प्रभाव के सापेक्ष, 1 kg मुक्त मेथैन के वायुमंडल के **ऊर्जा बजट** (energy budget) पर संयुक्त परोक्ष प्रभाव के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इस संयुक्त प्रभाव का परिकलन करने के लिए हमें किसी विशेष गैस का प्रभाव जानने के लिए सही समय-स्थिति को बताना आवश्यक है। समय-स्थिति का चयन प्रत्येक गैस के वर्तमान उत्सर्जनों को दिए गए सापेक्ष महत्व को अत्यधिक प्रबलता से प्रभावित करता है। GWPs को सामान्यत: तीन संदर्भ समय स्थितियों के लिए परिकलित किया जाता है; 20, 100 तथा 500 साल के लिए। 20 सालों वाली स्थिति छोटे समय के प्रभावों के लिए लागू है जैसे मौसम के पैटर्न में परिवर्तन; 100 साल की स्थिति लम्बे समय-काल के लिए लागू होती है जैसे समुद्र स्तर में वृद्धि; जबकि 500 साल की स्थिति सबसे लम्बे समय-काल को निरूपित करती है। छोटे समय पैमाने पर CO_2 के उत्सर्जन प्रभावों के लगभग आधे का योगदान करते हैं तथा मेथैन 30% से अधिक का करती है। फिर भी, क्योंकि मेथैन का इतना छोटा जीवन-काल होता है कि लम्बी समय स्थिति के लिए 1990 के मेथैन उत्सर्जनों का सापेक्ष महत्व काफी कम हो जाता है। सबसे अधिक जीवन वाला CFC, CFC12 लम्बे समय पैमाने पर सापेक्ष रूप में अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है।

ऊर्जा बजट: वायुमंडल में अवशोषण तथा पुन:विकिर्णन द्वारा पृथ्वी की सतह पर तापमान का संतुलन।

GWP का परिकलन करने के लिए, पादपगृह गैसों की आपस में तथा उनके विलयगर्त के साथ अन्योन्यक्रिया का एक मॉडल तैयार करना आवश्यक है। विकिरण का अवशोषण करने के तरीके को लेकर पादपगृह गैसें एक दूसरे में दखलअंदाजी करती हैं। उदाहरण के लिए, मेथैन द्वारा अवशोषित कुछ तरंगदैर्ध्य नाइट्रस ऑक्साइड द्वारा भी अवशोषित होती हैं, इसलिए उनके क्रमश: विकिरणी प्रभावों के परिकलन के लिए दोनों गैसों की सान्द्रताओं को ध्यान में रखना आवश्यक है। बादल, ऐरोसॉलों (छोटी-छोटी बूँदें तथा कण) तथा अन्य गैसों के साथ अन्योन्यक्रियाओं के कारण अपरोक्ष प्रभाव भी महत्वपूर्ण होते हैं; यद्यपि इनकी मात्रा का पता लगाना अधिक कठिन है।

वर्तमान जानकारी पर आधारित GWP के आकलनों को संसूचित करने वालों के रूप में ही माना जाना चाहिए तथा कोई भी पॉलिसी बनाने से पहले बहुत ध्यानपूर्वक उपयोग में लाने चाहिए। पॉलिसियों के प्रभाव जो एक पादपगृह गैस तथा दूसरी के बीच व्यापार से संबंधित हैं, काफी अनिश्चित होते हैं, जैसे कि कोयले की जगह प्राकृतिक गैस का उपयोग जिससे CO_2 तो कम हो जाएगी मगर मेथैन का उत्सर्जन बढ़ जाएगा। इसलिए भविष्य में GWP को दुहराना आवश्यक हो सकता है। चित्र 7.3 में मुख्य पादपगृह गैसों के 1990 के उत्सर्जनों के प्रभावों को दर्शाया गया है (इसमें ओज़ोन के पूर्ववर्ती (precursor) को छोड़ दिया गया है)। ये वायुमंडलीय ऊर्जा बज़ट के अगले 20 एवं 500 सालों के संयुक्त परोक्ष प्रभावों को दर्शाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

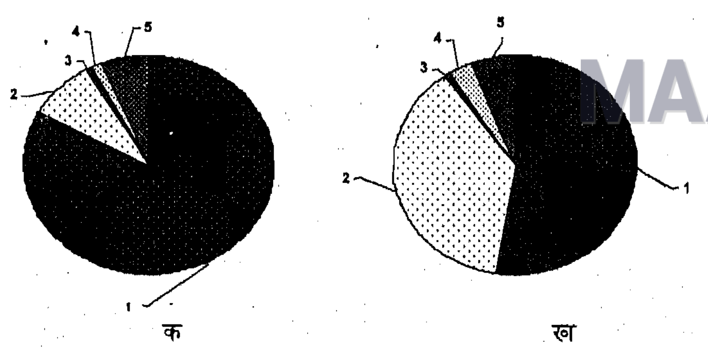

चित्र 7.3 : मुख्य पादपगृह गैसों के 1990 उत्सर्जन के प्रभाव: क) 20 साल तथा ख) 500 साल की समय स्थिति के लिए [1-CO_2, 2-मेथैन, 3-नाइट्रस ऑक्साइड, 4-CFC-II, 5-CFC-12]

7.7.9 ऊर्जा तथा पादपगृह गैस उत्सर्जन

भूमंडलीय जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण ऊर्जा का क्षेत्र है क्योंकि जीवाश्मी ईंधन के दहन से अधिकतम पादपगृह गैसें मुक्त होती हैं। ऊर्जा के अतिरिक्त ये ईंधन कई उपउत्पाद (byproducts), जल वाष्प तथा कार्बन डाइऑक्साइड उत्पन्न करते हैं।

यदि ईंधन को पूर्ण रूप से जला दिया जाए, तो कार्बन वाला उपउत्पाद केवल कार्बन डाइऑक्साइड होगा। लेकिन चूँकि ज्वलन अधिकतर अपूर्ण रहता है कार्बन वाली अन्य गैसें भी उत्पन्न होती हैं जिनमें कार्बन मोनोक्साइड, मेथैन तथा अन्य हाइड्रोकार्बन सम्मिलित हैं। जब ईंधन अथवा वायु से नाइट्रोजन वायु की ऑक्सीजन के साथ संयुक्त होती है तब नाइट्रस ऑक्साइड तथा अन्य नाइट्रोजन ऑक्साइडें भी मुक्त होती हैं।

ऊर्जा का उपयोग मानव के कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जनों के लगभग तीन चौथाई मेथैन का पाँचवा हिस्सा तथा काफी अधिक नाइट्रस ऑक्साइड के लिए उत्तरदायी है। ये नाइट्रोजन ऑक्साइड (NO_x), हाइड्रोकार्बन (HCs) तथा कार्बन मोनोक्साइड भी उत्पन्न करती हैं जो अपने आप में पादपगृह गैसें नहीं हैं लेकिन वायुमंडल में उन रासायनिक चक्रों को प्रभावित करती हैं जो क्षोभमंडलीय ओज़ोन तथा अन्य पादपगृह गैसों को उत्पन्न करती हैं या नष्ट करती हैं।

बोध प्रश्न

7) निम्नलिखित कथन को पूर्ण कीजिए।

भूमंडलीय तापन क्षमता को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया जाता है।

....

....

....

....

....

7.8 ओज़ोन परत तथा इसका ह्रास

ओज़ोन (O_3) एक विषैली गैस है जो श्वसन तंत्र के लिए खतरनाक तरीके से उत्तेजित करने वाली (irritating) होती है।

MAADHYAM IAS

वायुमंडल में ओज़ोन अधिकतर 90% समतापमंडल में, पृथ्वी की सतह से 12 से 50 km ऊपर पाई जाती है तथा **ओज़ोन परत** (ozone layer) बनाती है। वायुमंडल के निचले हिस्से (सतह से 12 km) की ओज़ोन के साथ ये विशाल छतरी के समान कार्य करती है जो सूर्य से आ रही अत्यधिक हानिकारक पराबैंगनी विकिरणों से पादपों और जन्तुओं की रक्षा करती है। ओज़ोन के बिना, पृथ्वी पर विकसित जीवों के रूप पनप नहीं सकते थे। फिर भी, ओज़ोन वायुमंडल का छोटा सा घटक है। यदि भूमि के स्तर से कुछ 60 km तक की ऊँचाई की ओज़ोन को भूमि की सतह पर इकट्ठा किया जा सकता तो यह केवल 3 mm मोटाई की गैस की परत बनाती जिसका भार लगभग 3500 मिलियन टन होता।

चित्र 7.4 में 200 से 900 नैनोमीटर के विस्तार की तरंगदैर्ध्य के विकिरण स्पेक्ट्रम के अभिलक्षणों की व्याख्या की गई है। जैसा कि ग्राफ़ में देखा जा सकता है, ओज़ोन द्वारा आंशिक रूप से अवशोषित सूर्य की पराबैंगनी विकिरण का हिस्सा 290 और 320 नैनोमीटर के बीच की तरंगदैर्ध्य में होता है जिसे UV-B कहते हैं, और स्पेक्ट्रम का ये हिस्सा धूप-झुलस (sunburn), हिमांधता (snow blindness), नेत्र हानि आदि का कारण होता है।

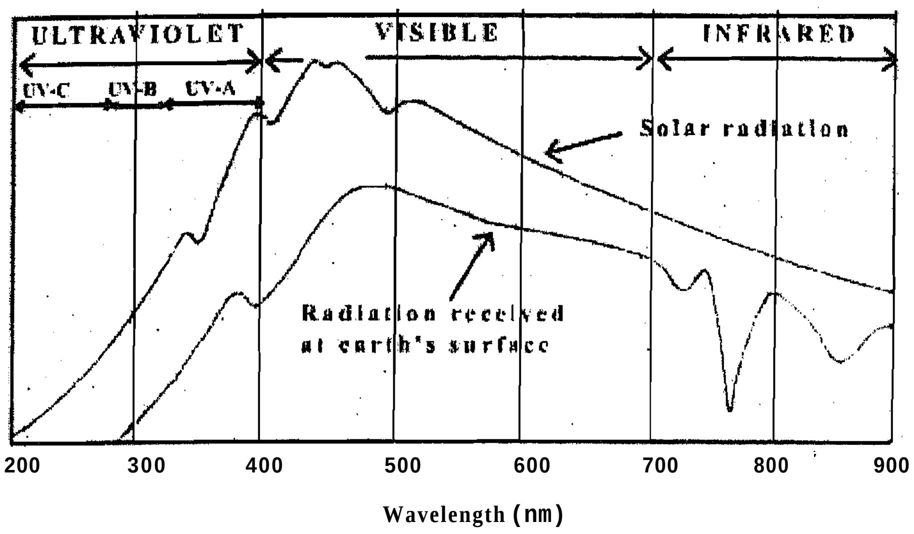

चित्र 7.4 : 200 से 900 नैनोमीटर के विस्तार का विकिरण स्पेक्ट्रम दर्शाता ग्राफ़

निम्न समतापमंडल में ओज़ोन के बनने और नष्ट होने में सम्मिलित रासायनिक अभिक्रियाएं निम्नलिखित हैं।

1) **ओज़ोन का बनना (formation)**

$$O_2 \xrightarrow[180\text{-}240\,nm]{UV} O + O$$

$$O + O_2 \longrightarrow O_3$$

2) **ओज़ोन का टूटना (break down)**

$$O_3 \xrightarrow[200\text{-}320\,nm]{UV} O_2 + O$$

3) क्लोरीन (CFCs से प्राप्त, उपभाग **7.7.5)** द्वारा ओजोन का **उत्प्रेरी नाश** (catalytic **destruction)**

$$Cl + O_3 \longrightarrow ClO + O_2$$

$$O + ClO \longrightarrow Cl + O_2$$

$$O + O_3 \longrightarrow 2O_2$$

4) नाइट्रिक ऑक्साइड (हवाई जहाज से) तथा नाइट्रोजनी उर्वरकों द्वारा ओज़ोन का उत्प्रेरी **नाश (catalytic destruction)**

$$NO + O_3 \longrightarrow NO_2 + O_2$$

$$NO_2 + O \longrightarrow NO + O_2$$

$$O + O_3 \longrightarrow 2O_2$$

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

जैसा कि पहले बताया जा चुका है पिछले 60 वर्षों से ओज़ोन दर का ह्रास करने वाले पदार्थों, विशेषकर CFC तथा हेलोन, के कारण रक्षण ओज़ोन परत धीरे-धीरे खत्म हो रही है। ओज़ोन की सान्द्रता को प्रभावित करने वाली कुछ लेश मात्र गैसों (trace gases) का विस्तार सारणी 7.4 में दिया गया है।

सारणी 7.4 : ओज़ोन की सान्द्रता को प्रभावित करने वाली लेश मात्र गैसें

गैस		वायुमंडल में औसत जीवन काल (साल)	औसत भूमंडलीय सान्द्रता (ppbw)	वृद्धि की वार्षिक दर (%)
CFC 11	$CFCl_3$	75	0.23	5.00
CFC 12	CF_2Cl_2	110	0.40	5.00
CFC 13	$C_2F_3Cl_3$	90	0.02	7.00
1301	CF_3Br	110	बहुत कम	11.00
	N_2O	150	304.00	0.25
कार्बन मोनोक्साइड	CO	0.4	परिवर्तनीय	0.20
कार्बन डाइऑक्साइड	CO_2	7	344,000	0.40
मेथैन	CH_4	11	1,650	100

स्रोत : ओज़ोन परत UNEP GEMS पर्यावरण पुस्तकालय संख्या - 2, 1987

ओजोन परत का ह्रास (ozone layer depletion) आज एक महत्वपूर्ण वायुमंडलीय सरोकार 8 क्योंकि ओज़ोन का कम होना, अधिकतर पृथ्वी की सतह पर पहुँचने वाली पराबैंगनी विकिरणों के बढ़ते हुए स्तर के परोक्ष परिणामस्वरूप, विश्व भर में महसूस किया जा रहा है। आइए, ओजोन परत के ह्रास के प्रभावों के बारे में जानकारी प्राप्त करें।

7.8.1 ओज़ोन परत के ह्रास के प्रभाव

ओज़ोन परत के ह्रास के प्रभाव कई प्रकार के हैं। मानव स्वास्थ्य तथा ग्रहीय जीवन को यह कई गंभीर जोखिम देती हैं। इसमें निम्नलिखित सम्मिलित हैं।

- चर्म कैंन्सर, रतौंधी (cataract) तथा मानसिक तनाव (depression) के कारण उत्पन्न बीमारियों से उत्पन्न स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं,
- समुद्री खाद्य श्रृखला (marine food chain) फ़सल तथा प्लैस्टिकों जैसे पदार्थ तथा बाहर इस्तेमाल होने वाले पेन्टों की हानि,
- बढ़ी हुई भूमंडलीय तापन तथा वायु प्रदूषण की क्षमता,
- वंशीय उत्परिवर्तन (genetic mutation)।

MAADHYAM IAS

जैसे-जैसे समताप मंडलीय ओज़ोन कम होती है पृथ्वी की सतह अधिक से अधिक कम तरंगदैर्ध्य के प्रकाश जो जीवों को हानि पहुँचाता है, के प्रति उद्भासित (exposed) होती है। आपको याद होगा कि कम तरंगदैर्ध्य की पराबैंगनी विकिरणें रासायनिक अभिक्रिया आरंभ करती हैं जिससे धूम कुहरा (smog) तथा अम्ल वर्षा बढ़ जाते हैं और श्वसनी समस्याओं को बढ़ाते हैं। इसके अलावा कई पौधों की वृद्धि धीमी हो सकती है तथा कुछ बौने रह सकते हैं, कुछ फ़सलों की बीज (yield) गिर सकती है तथा वनों का नाश हो सकता है। महासागरों में अतिरिक्त विकिरणों से मछली केकड़े तथा श्रिम्प के किशोर रूपों की मृत्यु या नुक़सान हो सकता है। प्लवकों की जनसंख्या, जो समुद्री खाद्य जाल का आधार है, भी गंभीर रूप से प्रभावित हो सकती है। इन जीवों की CO_2 (एक मुख्य पादपगृह गैस) अवशोषित करने की क्षमता को कम करके, और अधिक विकिरणें पादपगृह उष्णता को बढ़ा सकती हैं।

प्लवक: जल में निलंबित निम्न पादप और जन्तु

इसके अतिरिक्त ओज़ोन परत के ह्रास से कई पदार्थों का निम्नीकरण और अधिक तेजी से हो सकता है। बाहर इस्तेमाल होने वाले प्लैस्टिकों का जीवन काल और भी कम होगा चाहे कम तरंगदैर्ध्य की पराबैंगनी विकिरण में बिल्कुल कम वृद्धि हुई हो। खिड़की व दरवाजों की

चौखटों, पाइपों, गटरों इत्यादि में लगे पॉलीवाइनिल क्लोराइड (polyvinyl chloride, PVC) $ निम्नीकरण की संभावना अधिक होती है। इसके साथ-साथ केबल का आवरण, पॉलीकार्बोनेट तथा एक्रिलिक चमक तथा स्तरीकरण तथा बाहर लगें पैनलों, जल टैंक तथा पाइपों में असंतृप्त पॉलीएस्टर का भी निम्नीकरण होता है। ओज़ोन परत के निरंतर ह्रास से रबर उत्पाद, पेन्ट, लकड़ी, कागज तथा कपड़ों का भी निम्नीकरण शीघ्रता से होगा।

चूँकि ओजोन की वायुमंडलीय रसायन if लम्बा समय अंतराल (long lag time) होता 6 (सारणी 7.4), इस शताब्दी में ओज़ोन परत का निरंतर ह्रास निश्चित है। इसके अलावा, अब तक प्रागुक्त ओज़ोन की हानि की तुलना में भविष्य में ओज़ोन की हानि काफी अधिक होगी क्योंकि प्रेक्षित हानि की तुलना में प्रागुक्त हानियाँ काफी कम मात्रा में आँकी जाती हैं। ऐसा शायद इसलिए होता है क्योंकि तैयार किए मॉडल में उच्च अक्षांशों (high altitudes) के समतापमंडल if बने बादलों के प्रभाव अथवा मध्य अक्षांशों (mid altitudes) में ऐरोसॉलों के कणों को ध्यान में नहीं रखा जाता। चाहे अब ओज़ोन का ह्रास करने वाले सभी पदार्थों पर रोक भी लगा दी जाए तब भी वायुमंडल में पहले से मुक्त लम्बे जीवन काल वाले रासायनिक पदार्थो के कारण इस पूरी शताब्दी में अब भी ओज़ोन का नाश होकर ही रहेगा।

7.8.9 ओज़ोन परत का ह्रास तथा भूमंडलीय तापन

ओज़ोन परत के ह्रास से UV विस्तार में बढ़ी विकिरणों के कारण महासागर के संस्तर में पादप प्लवक (phytoplankton) की मृत्यु हो जाएगी। इससे पादपगृह उष्णता की दर एवं पैमाना बढ़ने की संभावना है क्योंकि परत के ह्रास से महासागर में कार्बन डाइऑक्साइड विलयगर्त की प्रभावशीलता कम हो जाती है। वर्तमान स्थिति में महासागर में उपस्थित पादप प्लवक वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड का आधा हिस्सा अवशोषित कर लेते हैं। फिर भी ऐसा जाना जाता है कि यह गतिविधि पराबैंगनी विकिरणों के थोड़ा बढ़ने से भी कम हो जाती है जब ये छोटे-छोटे जीव इस बढ़ी हुई विकिरण से उद्भासित होते हैं। पादप प्लवक की कार्बन का स्थिरीकरण (fixing) करने वाली किसी भी गतिविधि से बिना किसी शंका के भूमंडलीय जलवायु प्रभावित होगी। यह वायुमंडल से अधिक CO_2 की उपस्थिति से होती है और भूमंडलीय तापन को बढ़ा देती है। महासागरों द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड का 10% कम अवशोषण वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की उतनी मात्रा कर देगा जितना जीवाश्मी ईंधन के दहन से होता है। इसके अलावा, महासागरों द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड के अवशोषण की मात्रा उतनी नहीं बढ़ेगी जितना कि भूमि पर उत्सर्जन की बढ़ी हुई मात्रा से अपेक्षित है। यदि वायुमंडलीय CO_2 10% बढ़ती है तो महासागरों में केवल 1% अधिक का अवशोषण होगा।

बढ़ी हुई पराबैंगनी विकिरणें भूमि के पारिस्थितिक निकाय (ecosystem) को गड़बड़ा देंगी। सूक्ष्मजीवियों (microorganisam) की नाइट्रोजन - स्वांगीकरण (nitrogen assimilating) गतिविधियों पर UV-B के प्रभवों के कारण चावल उत्पादन अत्यधिक कम हो जाएगा छोटे-छोटे सायनोबैक्टीरिया (cyanobacteria) जैसे जीव जल में घुली वायुमंडलीय नाइट्रोजन के स्थिरीकरण द्वारा पारिस्थितिक तंत्र को नाइट्रोजनी पदार्थ प्रदान करते हैं। ये कार्य सामान्यतः उच्च पादप नहीं करते हैं। ओज़ोन परत के कम होने से इन जीवों का समूह काफी प्रभावित होगा। इसका अर्थ है कि उष्ण कटिबंधीय धान की खेती जैसे पारिस्थितिक तंत्रों को प्राकृतिक नाइट्रोजन की आपूर्ति बहुत कम हो जाएगी जिसके गंभीर परिणाम हो सकते हैं।

अंतिम लेकिन कोई कम नहीं आइए समझें कि ओज़ोन परत के ह्रास का वायु प्रदूषण पर क्या प्रभाव होता है। वायु प्रदूषण जो एक मुख्य भूमंडलीय पर्यावरणीय सरोकार है इस खंड की इकाई 9 में विस्तार से चर्चित है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

7.8.3 ओज़ोन परत के ह्रास का वायु प्रदूषण पर प्रभाव

ओज़ोन एक विषैली गैस है जो भूमि के समीप पेड़ पौधों (vegetation) और जन्तुओं को प्रभावित करती है। यदि समतापमंडलीय ओज़ोन कम हो जाती है, क्षोभ मंडल पर पहुँचने वाली अधिक UV-B के कारण अधिक रासायनिक क्रियाशीलता होगी और इसलिए उच्च नाइट्रोजन ऑक्साइड के स्तर वाले शहरी एवं ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में ओज़ोन का उत्पादन बढ़ जाएगा। दूरस्थ क्षेत्र जहाँ नाइट्रोजन ऑक्साइड के स्तर काफी कम हैं संभवत: वर्तमान से अधिक साफ वायु का आनंद उठा पाएंगे क्योंकि मानवकृत उत्सर्जनों से उत्पन्न नाइट्रोजन ऑक्साइडों की अनुपस्थिति में, बढ़ी हुई पराबैंगनी विकिरणों के बावजूद, ओज़ोन का उत्पादन होना कठिन होता है।

हाइड्रॉक्सिल मूलक (•OH) क्षोभमंडलीय ओज़ोन तथा अन्य हानिकारक प्रदूषकों के बनने को प्रेरित (stimulate) करते हैं जिसमें हाइड्रोजन परॉक्साइड, सल्फ्यूरिक अम्ल तथा अन्य अम्ल सम्मिलित हैं। इनमें से कई प्रदूषक कारखानों से उत्सर्जित रासायनिक पदार्थों, वाहनों एवं अन्य स्रोतों से प्राप्त होते हैं।

धूम कुहरा (smog) अन्य उपचयित कार्बनिक रासायनों, जैसे फार्मल्डिहाइड के बनने का कारण होता है। UV-B के अवशोषण से ये अणु अभिक्रियाशील हाइड्रोजन मूलक उत्पन्न करते हैं। जैसे-जैसे UV-B में वृद्धि होती है वायु में उतने अधिक अभिक्रियाशील हाइड्रोजन मूलक होते हैं जो और अधिक धूम कुहरा (smog) तथा अम्ल वर्षा उत्पन्न करते हैं।

शहरी क्षेत्रों में ओज़ोन परत के 10% ह्रास से 10-20% क्षोभमंडलीय ओज़ोन में वृद्धि होती है। यह समस्या उत्सर्जन के बहुत कम नियंत्रण वाले अत्यधिक प्रदूषित शहरी क्षेत्रों में और खराब हो सकती है, लेकिन उत्सर्जन के अत्यधिक नियंत्रण वाले शहरी क्षेत्र भी प्रभावित हो सकते हैं क्योंकि वायुमंडल की बढ़ी हुई रासायनिक क्रियाशीलता के कारण नियंत्रण कार्यक्रम की प्रभावशीलता कम हो जाती है।

ग्रामीण क्षेत्र भी अधिक धूम कुहरे एवं अम्ल वर्षा से पीड़ित हो सकते हैं क्योंकि नए प्रदूषण फैलाने वाले रासायनों को अभिक्रियाशील रासायनों द्वारा बनाने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में उपस्थित काफी मात्रा में वायुमंडलीय नाइट्रोजन ऑक्साइड तथा हाइड्रोकार्बन यौगिक निर्माण खंड प्रदान करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के मध्य अक्षांशों में समतापमंडलीय ओज़ोन के 20 प्रतिशत कम होने से क्षोभमंडलीय ओज़ोन के 10% प्रतिशत बढ़ने की संभावना है।

बोध प्रश्न

8) निम्नलिखित में सम्मिलित अभिक्रियाएं लिखिए।

i) ओज़ोन के बनने में

....

....

....

ii) ओज़ोन के नष्ट होने में

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

9) ओज़ोन परत के ह्रास का निम्नलिखित पर क्या प्रभाव होगा?

i) मानव स्वास्थ्य

....

ii) जलीय जन्तु एवं पादप

....

iii) धूम कुहरा बनने में

....

iv) भूमि के पादपों में

....

7.9 सारांश

वायुमंडल हमारी पृथ्वी को घेरे एक गैसीय आवरण है। अपने रासायनिक संयोजन, तापमान तथा गुणों के आधार पर इसे कई क्षेत्रों में विभाजित किया गया है। वायुमंडल मुख्यत: नाइट्रोजन, ऑक्सीजन तथा ऑर्गन गैसों द्वारा संयोजित होता है तथा अन्य कई गैसें भी इसमें लेश मात्रा में उपस्थित होती हैं। संयोजन, ऊँचाई, अक्षांश तथा ऋतु के साथ बदलता है। भौतिक एवं रासायनिक वायुमंडल का अस्तित्व तापमान में परिवर्तन तथा अन्य कारकों द्वारा दर्शाया जाता है। जल वायुमंडल का एक मुख्य घटक है तथा ऊष्मा संतुलन, बादल निर्माण और वर्षण में इसकी भूमिका के अतिरिक्त ये प्राकृतिक स्रोत के लिए उत्तरदायी है। अपने अवयवों में अन्योन्यक्रिया के कारण वायुमंडल में कई भौतिक एवं रासायनिक अभिक्रियाएं होती हैं।

जल वाष्प, CO_2, क्षोभमंडलीय ओज़ोन, नाइट्रस ऑक्साइड तथा मेथैन पादपगृह गैसें कहलाती हैं। इन गैसों के प्राकृतिक एवं मानव जनित दोनों स्रोत होते हैं तथा भूमंडलीय तापन की परिघटना में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ओज़ोन समताप मंडल (UV विकिरण से मनुष्य तथा अन्य जीवों को बचाती है) तथा क्षोभ मंडल (विषैली होने के कारण हानिकारक होती है) दोनों का एक महत्वपूर्ण घटक है। इसका बनना तथा नष्ट होना पादपगृह गैसों पर निर्भर करता है जो प्राकृतिक रूप से विद्यमान रहती हैं अथवा मानव द्वारा कृत होती हैं। ओज़ोन परत के ह्रास का भूमंडलीय तापन पर परोक्ष प्रभाव होता है और ये मनुष्य, पादप, जन्तु तथा पदार्थ सबको प्रभावित करती है। यह वायु प्रदूषण को बढ़ावा देती है जो अपरोक्ष रूप से पृथ्वी पर जीवन को प्रभावित करता है।

7.10 अंत में कुछ प्रश्न

1) क्षोभमंडल की ऊँचाई भूमध्य रेखा से ध्रुव की ओर किस प्रकार परिवर्तित होती है?
2) जल उल्का तथा वर्षण के बीच क्या अंतर है?
3) संघनन क्या होता है?
4) पादपगृह गैसों के मुख्य अभिलाक्षणिक लक्षण क्या हैं?
5) मौसम पूर्वानुमान में ओसांक के तापमान का क्या महत्व है?
6) कौन सी गैसें निम्न वायुमंडल में ओज़ोन उत्पन्न करने के लिए उत्तरदायी हैं?
7) कार्बन डाइऑक्साइड के कौन से मुख्य विलयगर्त हैं?
8) कृषि में मेथैन का मुख्य स्रोत क्या है?

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

9) ओज़ोन का महत्व क्या है और वायुमंडल में अधिकतर ये कहाँ पाई जाती है?

10) ओज़ोन परत के ह्रास के कारण पादपों पर मुख्य प्रभाव क्या है?

11) अपनी सामान्य जानकारी से बताइये वे कौन से ईंधन हैं जिनमें कार्बन नहीं होता?

7.11 उत्तर

बोध प्रश्न

1) i) मौसम विज्ञान संबंधी अध्ययन के लिए उचित
   ii) सूर्य से उच्च ऊर्जा किरणों को रोकने के लिए उत्तरदायी
   iii) पतन दर से संबंधित
   iv) स्थायी वायु परत का स्तरित आवरण बनाता है
   v) अधिकतम तापमान होता है
   vi) रेडियो तरंग के संचारण के लिए उत्तरदायी

2) ii) ऊँचाई के साथ कम होता है

3) iii)

4) 3 कुहरा, ओस तथा बादल गैसीय अवस्थाएँ हैं जबकि वर्षा तथा हिम क्रमश: द्रव एवं ठोस अवस्थाएं हैं।
   ii) संघनन नाभिक
   iii) कम

5) i) जीवाश्म ईंधन दहन, प्राकृतिक गैस प्रदीप्ति, प्राकृतिक रूप में विद्यमान
   ii) जुगाली, जीवाश्म ईंधन दहन, कोयले का खनन
   iii) उवर्रक, फसलों के अंतिम उत्पाद, लकड़ी जलाने से
   iv) शीतलक, नोदक, विलायक
   v) गाड़ी के धुएं से CO तथा नाइट्रोजन ऑक्साइड, प्राकृतिक रूप में विद्यमान

6) iv)

7) किसी पादपगृह गैस के एक किलोग्राम मुक्त होने से दूसरी किसी पादपगृह गैस के सापेक्ष विशिष्ट समय अंतराल पर वायुमंडल के ऊर्जा बजट पर प्रभाव।

8) ओज़ोन का बनना

$$O_2 \longrightarrow O + O$$

$$O + O_2 \longrightarrow O_3$$

MAADHYAM IAS

ओज़ोन का नष्ट होना

क्लोरीन से

$$Cl + O_3 \longrightarrow ClO + O_2$$

$$O + ClO \longrightarrow Cl + O_2$$

$$O + O_3 \longrightarrow 2\,O_2$$

नाइट्रिक ऑक्साइड से

$$NO + O_3 \longrightarrow NO, + O_2$$

$$NO_2 + O \longrightarrow NO + O_2$$

$$O + O_3 \longrightarrow 2O_2$$

9) i) चर्म का कैन्सर, रतौंधी, मानसिक तनाव

ii) जलीय जन्तुओं तथा पादपों की मृत्यु

iii) गैसों की बढ़ी हुई बढ़ी हुई क्रियाशीलता के कारण अधिक धूम कुहरे का बनना

iv) फ़सल तथा पादप उत्पादन में कमी

अंत में कुछ प्रश्न

1) कम होती है।

2) वायुमंडल में उपस्थित जल के सभी रूप जल उल्का कहलाते हैं जबकि वर्षण भूमि पर गिरने वाला जल है।

3) विद्यमान बादल के कणों का मिलना संघटन कहलाता है।

4) ये गैसें सूर्य की छोटी तरंग विकिरणों के प्रति पारदर्शी तथा तरंग की विकिरणों के प्रति अपारदर्शी होती हैं।

5) ओसांक दिन के न्यूनतम तापमान को दर्शाता है।

6) CO, नाइट्रोजन ऑक्साइड तथा हाइड्रोजन ओज़ोन उत्पन्न करते हैं। ये गैसें उन अभिक्रियाओं को उत्प्रेरित करती हैं जिनमें ओज़ोन का ऑक्सीजन से उत्पादन होता है।

7) महासागर तथा प्रकाश संश्लेषण

8) धान की खेती

9) ओज़ोन जैव मंडल को सूर्य की अत्यंत हानिकारक पराबैंगनी विकिरणों से बचाती हैं तथा ये अधिकतम लगभग 90% समताप मंडल में पाई जाती है जो भूस्थल से 12-50 km ऊपर है।

10) धीमी विकास की दर, प्राप्त मात्रा में कमी तथा खाद्य गुणवत्ता में कमी

11) हाइड्रोजन गैस तथा उत्तेजनशील (exotic) ईंधन जैसे हाइड्रैज़ीन।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इकाई 8 वायु प्रदूषण के मौसम संबंधी पहलू

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
8.2 वायु प्रदूषण का पारिस्थितिकी तंत्र
8.3 प्राथमिक मौसस संबंधी प्राचल
पवन गति तथा पवन दिशा
तापमान
वायुमंडलीय स्थिरता
मिश्रित ऊँचाई
8.4 द्वितीयक मौसम संबंधी प्राचल
आर्द्रता तथा वर्षण
दृश्यता
दाब
सौर्य विकिरणें
8.5 स्तंभ उत्सर्जनों पर स्थिरता का प्रभाव
8.6 औद्योगिक स्थान में मौसम संबंधी कारक
8.7 शहरी मौसम विज्ञान
8.8 सारांश
8.9 अंत में कुछ प्रश्न
8.10 उत्तर

8.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने वायुमंडल की प्रकृति एवं उसके महत्व के बारे में पढ़ा। आपको याद होगा कि वायुमंडल भूमंडल को चारों ओर घेरे एक गैसीय आवरण है जो अपने सारे गुणों जैसे, तापमान, आर्द्रता तथा वायु को भूमि की सतह से प्राप्त करता है। आपने यह भी पढ़ा कि यह वायुमंडल अथवा वायु विभिन्न मानव गतिविधियों द्वारा प्रदूषित हो रहा है। इस इकाई में हम वायु प्रदूषण पर मौसम संबंधी कारकों (meteorological factors) के प्रभाव की चर्चा करेंगे। मौसम विज्ञान वायुमंडल का विज्ञान है और उन सब आधारभूत भौतिक नियमों से संबंधित है जो वायुमंडलीय परिघटनाओं पर लागू होती हैं। यद्यपि मौसम विज्ञान का विज्ञान सारे ग्रहीय वायुमंडल से संबंधित होता है, इस इकाई में हम अपना अध्ययन भूमि के वायुमंडल, वह भी हमारे करीब का, तक ही सीमित रखेंगे।

MAADHYAM IAS

मौसम संबंधी उन प्राचलों की चर्चा की जाएगी, जो वायुमंडल में परिवर्तन के लिए उत्तरदायी हैं तथा उन सब कारकों की भी जो स्तंभ (stack) उत्सर्जनों के परिवहन (transport) तथा संवहन (diffusion) को प्रभावित करते हैं। कुछ महत्वपूर्ण मौसम संबंधी पहलुओं, जो उद्योगों के स्थान के लिए ध्यान में रखे जाने चाहिए, की भी व्याख्या की गई है। अत्यधिक शहरी जनसंख्या और प्रदूषण को ध्यान में रखते हुए, शहरी मौसम विज्ञान की भी चर्चा की गई है। वायुमंडलीय प्रदूषण के सभी जीवों पर प्रभाव की चर्चा विस्तार से अगली इकाई में की गई है।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- विभिन्न प्राथमिक एवं द्वितीयक मौसम संबंधी प्राचलों की सूची बना सकेंगे तथा उनकी व्याख्या कर सकेंगे,
- वायु प्रदूषण के पारिस्थिकी तंत्र में मौसम विज्ञान की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे,
- वायुमंडल की स्थिरता और इसलिए प्रदूषण के परिवहन पर मौसम संबंधी कारकों के प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे,
- उन मौसम संबंधी कारकों का वर्णन कर सकेंगे जिन्हें औद्योगिक स्थानों के लिए ध्यान में रखना चाहिए, तथा
- स्थानीय वायु प्रदूषण पर शहरीकरण के प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे।

8.2 वायु प्रदूषण का पारिस्थितिकी तंत्र

पिछली इकाई में आपने सीखा कि वायुमंडल का संयोजन मानव जनित कारकों के कारण परोक्ष तथा अपरोक्ष रूप में बदल रहा है। कुछ पदार्थ, जो अन्यथा वायु के अवयव नहीं हैं अथवा वायुमंडल के सामान्य अवयवों के बढ़े हुए स्तर जो अनैच्छिक शरीरक्रियात्मक अथवा पर्यावरणीय प्रभाव दर्शाते हैं, उनकी उपस्थिति वायु को 'प्रदूषित' (pollute) करती है। वायु प्रदूषण (air pollution) एक गंभीर सरोकार का मुद्दा है क्योंकि यह पृथ्वी ग्रह पर रहने वाले वासियों (inhabitants) पर काफी समय तक रहने वाले प्रभावों का कारण हो सकता है तथा आज विद्यमान जीवन के निरंतर बने रहने के लिए यह एक भय का कारण हो सकता है। **पारिस्थितिकी तंत्र** (ecosystem) पर इसका हानिकारक प्रभाव होता है।

पारिस्थितिकी तंत्र ऐसी इकाई है जिसमें ऐसे जीव सम्मिलित होते हैं जो एक क्षेत्र में एक साथ कार्य करते हैं तथा भौतिक पर्यावरण के साथ अन्योन्यक्रिया करते हैं। 'पारिस्थिति' (eco) शब्द का अर्थ पर्यावरण होता है।

वायु प्रदूषण के पारिस्थितिकी तंत्र में तीन प्रावस्थाएँ (phases) होती हैं ; वायु प्रदूषकों का स्रोत से मुक्त होना अर्थात् **उत्सर्जन प्रावस्था** (emission phase), वायुमंडल में **परिवहन** तथा **संवहन** (transport and diffusion) और वायु प्रदूषकों का कम सांद्रण पर लोगों, पादपों, जन्तुओं अथवा निर्जीव वस्तुओं द्वारा **ग्रहण (reception)**। इन तीनों प्रावस्थाओं को चित्र 8.1 में दिए गए रैखिक निरूपण द्वारा दर्शाया गया है।

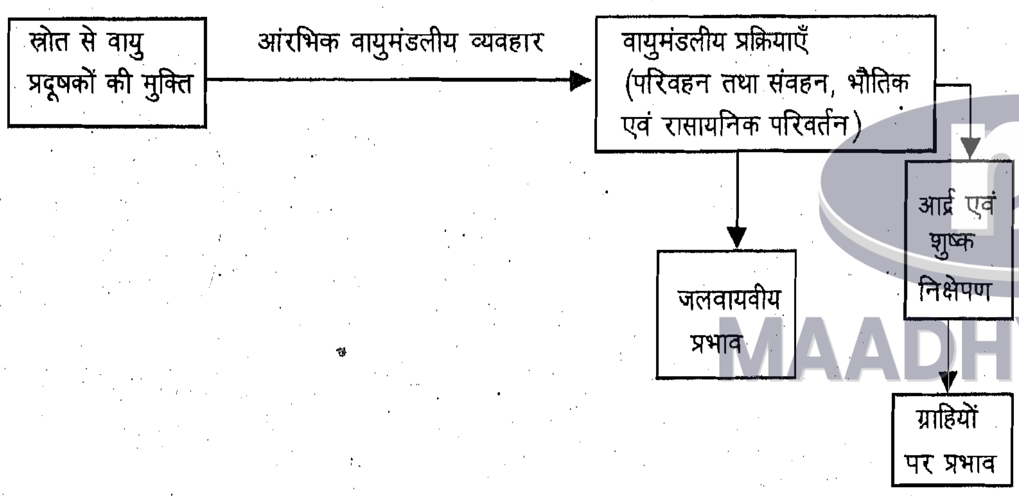

MAADHYAM IAS

चित्र 8.1: वायु प्रदूषण के पारिस्थितिकी तंत्र का रैखिक निरूपण

वायुमंडल की गतियाँ (movements) स्थान तथा समय में काफी परिवर्तनशील होती हैं तथा वायु प्रदूषकों के परिवहन तथा संवहन (diffusion) के लिए उत्तरदायी हैं। ये मौसम संबंधी कारकों द्वारा काफी प्रभावित होती हैं। मौसम विज्ञान का अधिकतम प्रभाव संवहन तथा परिवहन प्रावस्था में होता है। इन प्रभावों द्वारा छोटे समय (short term) के परिवर्तन **मौसम** (weather) कहलाते हैं जो तापमान, आर्द्रता (humidity), दाब, इत्यादि से प्रभावित होते हैं।

दूसरी तरफ लम्बे समय के परिवर्तन जो एक भौगोलिक क्षेत्र (geographical region) विशेष के लिए होते हैं **जलवायु** (climate) कहलाते हैं। ये परिवर्तन सामान्यतः मौसमी प्रकृति (seasonal nature) के होते हैं। तापमान, आर्द्रता, दाब इत्यादि मौसम संबंधी प्राचल कहलाते हैं। वायुमंडल को प्रभावित करने के तरीके पर निर्भर करते हुए इन्हें प्राथमिक एवं द्वितीयक प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है। आइए, विभिन्न प्रकार के मौसम संबंधी प्राचलों (parameters) एवं वायु प्रदूषण पर उनके प्रभावों के विषय में पढ़ें।

वास्तव में वायुमंडल भी मौसम संबंधी कारकों को प्रभावित करता है।

8.3 प्राथमिक मौसम संबंधी प्राचल

वायुमंडल में प्रदूषक के विसर्जन (discharge) का प्रभाव विद्यमान मौसमी परिस्थितियों जैसे, वायु की गति तथा दिशा, तापमान, आर्द्रता, इत्यादि से काफी प्रभावित होता है। महत्वपूर्ण मौसम संबंधी प्राचलों को मुख्यतः दो समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है; प्राथमिक तथा द्वितीयक प्राचल। प्राथमिक प्राचल प्रदूषकों की गति को परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं जबकि द्वितीयक प्राचल प्राथमिक प्राचलों में परिवर्तन करके अपरोक्ष रूप से अपना प्रभाव दर्शाते हैं। इन दोनों प्रकार के कारकों को निम्नलिखित दिया गया है।

प्राथमिक मौसम संबंधी प्राचल	द्वितीयक मौसम संबंधी प्राचल
पवन दिशा तथा गति	वर्षण
तापमान	आर्द्रता
वायुमंडलीय स्थिरता	सौर्य विकिरण
मिश्रित ऊँचाई	दृश्यता

आइए, प्राथमिक मौसम संबंधी कारकों का वायु प्रदूषकों के उनकी उत्पत्ति के स्थान से विसर्जन पर प्रभाव को समझें।

8.3.1 पवन गति तथा पवन दिशा

बहती हुई या गतिशील वायु (air) को पवन (wind) कहते हैं। पवन, प्रदूषकों को एक स्थान से दूसरे तक परिवाहित करती है। यद्यपि वायु की गति त्रिविमीय (three dimensional) होती 8, उसकी दिशा एव गति के लिए केवल समांतर (horizontal) अवयव को लिया जाता है। लम्ब रूप (vertical) में गति करती वायु को **वायु धारा** (air current) कहते हैं। उत्पत्ति के स्थान पर प्रदूषकों की तनुता (dilution) पवन दिशा एव गति पर निर्भर करती है। पवन की दिशा प्रदूषकों के वहन की दिशा को दर्शाती है, जबकि पवन गति प्रदूषक के उसके स्रोत से विसर्जन की तीव्रता को निर्धारित करती है। अन्य चीजें समान हों तो प्रदूषकों की स्रोत से नीचे की ओर आती सांद्रता पवन गति के व्युत्क्रमानुपाती (inversely proportional) होती 8; चित्र 8.2।

MAADHYAM IAS

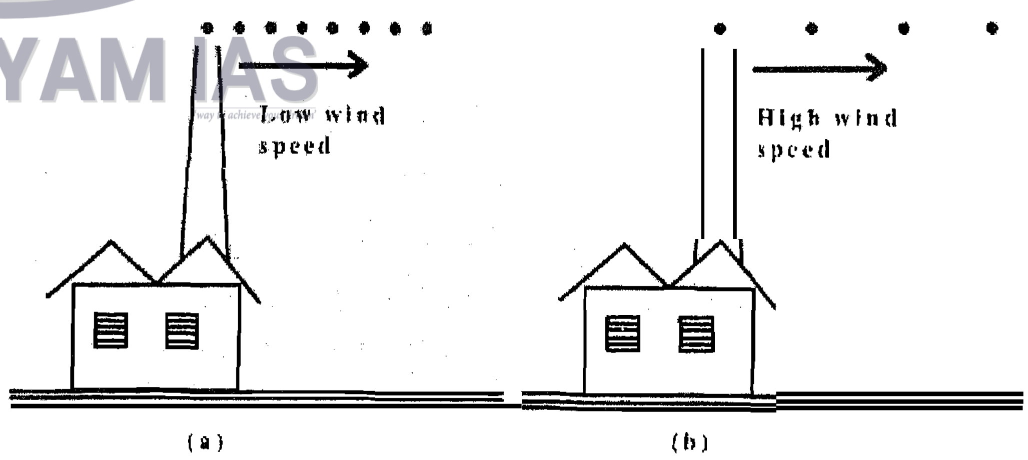

चित्र 8.2: प्रदूषकों की सांद्रता का पवन गति के साथ परिवर्तन

बहुत भिन्न पैमाने और अंतराल (scale and periods) वाली पवन की अनियमित गतियाँ जो प्रदूषकों के औसत नीचे के पथ की ओर की गति और संवहन के लिए उत्तरदायी हैं, वायुमंडलीय विक्षोभ (turbulence) कहलाती हैं। सतह 8 पास **विक्षोभ में** अचानक वृद्धि, जो ग्रीष्म ऋतु में सूर्योदय के थोड़ी देर बाद होती है, एक अति महत्वपूर्ण कारक है जो वायु प्रदूषकों के सामान्य व्यवहार को काफी प्रबलता से परिवर्तित करती है।

पेड़ों, झाडियों (shrubs) भवनों एवं अन्य मैदानी लक्षणों से सतह के खुरदरेपन (roughness) के कारण ऊपर गति करती वायु से वायुमंडल में भँवर (eddy) प्रेरित होते हैं तथा **यांत्रिक विक्षोभ** (mechanical turbulence) उत्पन्न करते हैं। सामान्यत: यांत्रिक विक्षोभ उतना अधिक होगा जितना कि असमानता पैदा करने वाले तत्व। इसके अतिरिक्त यांत्रिक विक्षोभ पवन गति के साथ भी बढ़ता है। वायुमंडल की स्थिरता (stability) ऊष्मीय विक्षोभ (thermal turbulence) को प्रेरित करती है। जब पृथ्वी की सतह सौर्य विकिरण द्वारा ऊष्मित होती है, वायुमंडल की निम्न परत अस्थिर हो जाती है तथा वायु के मिश्रण के लिए उत्तरदायी होती है। इसे **ऊष्मीय विक्षोभ** कहा जाता है। यह विशेष रूप से हल्की पवन की स्थितियों में बढ़ जाता है। हल्की पवन वाली स्पष्ट रातों में पृथ्वी की सतह से ऊष्मा का विकीर्णन (radiation) होता है। इन स्थितियों में विक्षोभ सबसे कम होता है।

भँवर : जल अथवा वायु की धारा जो मुख्य धारा के विपरीत दिशा में वृत्तीय गति दर्शाती है।

ये यांत्रिक एवं ऊष्मीय विक्षोभ भंवर रूपी धाराएँ (eddy currents) उत्पन्न करते हैं जो प्रदूषकों के विसर्जन को प्रभावित करते हैं। यदि गति की माप अर्थात् भँवर का आकार पास के प्रदूषक **पिच्छक** (pollutant plume) के आकार से अधिक होता है तो भँवर पिच्छक के उस हिस्से को हटा लेगा। यदि भँवर पिच्छक से छोटा होता है, इसका प्रभाव पिच्छक को विसरित (diffuse) अथवा फैलाने का होता है। भँवर की गति के द्वारा यह विसरण वायुमंडल में काफी परिवर्तनीय होता है और इसका कुछ अंश वायुमंडल की निम्न परतों में तापमान के लंब वितरण (vertical distribution) पर निर्भर करता है।

पिच्छक : वायु तथा जल में ऐसा स्थान जिसमें स्रोत से मुक्त प्रदूषक होते हैं।

पवन गति और दिशा कई कारकों द्वारा प्रभावित होते हैं। इन्हें निम्नलिखित अनुच्छेदों में समझाया गया है।

ऊँचाई और सतह की असमानता

पवन की गति ऊँचाई के साथ बढ़ती है तथा पवन की दिशा पृथ्वी की सतह के साथ घर्षण (friction) के प्रभावों के कारण, ऊँचाई के साथ घूम जाती है (दक्षिणावर्त (clockwise) घूमती है)। गति तथा दिशा के घूमने की मात्रा काफी परिवर्तनशील होती है तथा काफी सीमा तक सतह की असमानता (roughness) तथा वायुमंडलीय स्थिरता (stability) से संबंधित होती **है**। पवन गति का ऊँचाई के साथ परिवर्तन चित्र 8.3 में दर्शाया गया है।

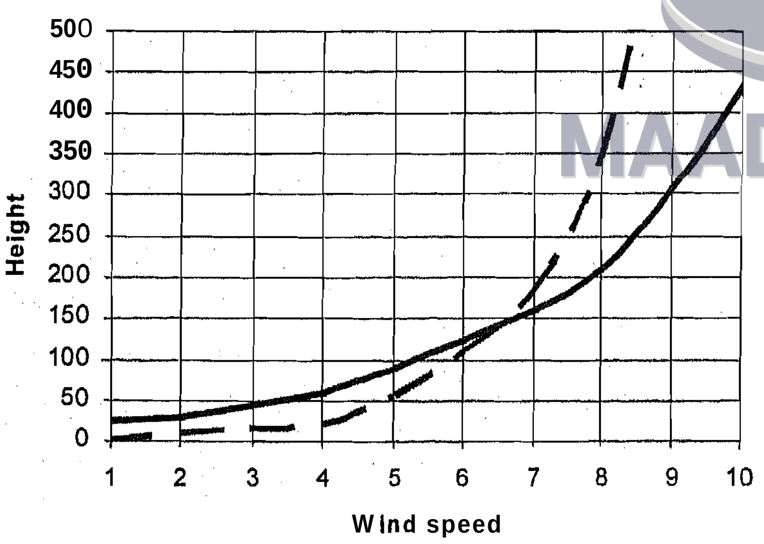

चित्र 8.3: पवन गति का ऊँचाई के साथ परिवर्तन (दिन के समय----) तथा (रात के समय ——)

MAADHYAM IAS

पवन गति का ऊँचाई के साथ परिवर्तन दिन के समय पर निर्भर करता है। दिन के समय, सौर्य उष्णता के कारण अधिकतम विक्षोभ होता है तथा प्रबलतम लंब गतियाँ होती हैं। इसके कारण वायुमंडल में विभिन्न स्तरों के बीच त्वरण विनिमय (momentum exchange) की अधिकतम मात्रा होती है। इसी कारण से दिन के समय में पवन गति का ऊँचाई के साथ परिवर्तन सबसे कम होता है। औसत क्षेत्र के ऊपर ऊँचाई के साथ घूमने की मात्रा भी न्यूनतम होती है। लंबवत् विनिमय के कारण दिन के समय घर्षण की परत की मोटाई भी सबसे अधिक होती है। दूसरी तरफ, रात के समय लंबवत् गतियाँ न्यूनतम होती हैं और घर्षण का प्रभाव दिन के समय की तुलना में उतनी गहरी परत पर महसूस नहीं होता है। इन परिवर्तनों को **दैनिक परिवर्तन** (diurnal variations) कहते हैं।

घाटी प्रभाव

जब सामान्य बहाव हल्का हो तो, घाटी का स्थान पवन बहाव को महत्वपूर्ण तरीके से प्रभावित करता है। घाटी अक्ष पर चल रहे सामान्य बहाव को रास्ता देने का प्रयास करती है और द्विदिशीय पवन आवृत्ति वितरण **(bidirectional wind frequency distribution)** प्रदान करती है। जब सामान्य पवन बहाव हल्का होता है तथा आकाश स्पष्ट **(clear)** होता है, घाटी के तल और किनारों के विभिन्न हिस्सों के गर्म व ठंडे होने की दरों में परिवर्तन के कारण हल्के घनत्व और दाब परिवर्तन उत्पन्न होते हैं जिनके कारण छोटे-छोटे परिसंचरण **(circulations)** उत्पन्न होते हैं। शाम के समय, पृथ्वी की सतह से विकिरण और परिणामस्वरूप उत्पन्न समीप की भूमि तथा वायु के ठंडे होने के अंतर के कारण घनत्व में परिवर्तन होते हैं। अधिक घनत्व की वायु ढलान के साथ-साथ बहने का प्रयत्न करती है। यह **ढलान वायु** (slope wind) कहलाती है। इसके अतिरिक्त, यदि घाटी के तल पर तापमान अथवा दाब में कुछ क्रमिकता **(gradient)** होती है तो वायु घाटी के अक्ष के साथ-साथ गति करेगी। यह सामान्यत: **घाटी पवन (valley wind)** कहलाती है।

व्युत्क्रम ऊँचाई के नीचे वायु प्रदूषकों का पाश **(trapping)** घाटी में होने वाली एक समस्या है। ऐसे में अवतलन व्युत्क्रम **(subsidence inversions,** जिनकी व्याख्या उपभाग **8.3.3** में की गई है) विशेष सरोकार रखते हैं क्योंकि ये सामान्यत: धीमी गति वाले होते हैं। विशेष रूप से व्युत्क्रम के नीचे की वायु इतनी अस्थिर हो जाती है कि भू-स्तर पर ऊँचे उठे हुए स्रोतों से प्रदूषक आसानी से मिल जाते हैं तो अधिक सान्द्रण हो जाता है।

समुद्र अथवा झील का प्रभाव

भूमि तथा जल की सतह और उनके ऊपर वायु के गर्म तथा ठंडे होने के अंतर के परिणामस्वरूप परिसंचरण **(circulations)** उत्पन्न होते हैं। गर्मियों में दिन के समय स्पष्ट बादल तथा हल्की पवन के कारण जल निकाय के गर्म होने की तुलना में बड़ी सी झील अथवा समुद्र के समीप की भूमि की सतह काफी शीघ्रता से गर्म हो जाती है। इसके कारण तापमान परिवर्तन हो जाते हैं तथा परिणामस्वरूप भूमि सतह के ठीक ऊपर की वायु और जल के ऊपर की वायु के बीच घनत्व तथा दाब में अन्तर उत्पन्न होते हैं। दाब क्रमिकता बलों **(pressure gradient forces)** के कारण, भूमि की तरफ जाते जल की पवन के साथ स्थानीय परिसंचरण उत्पन्न होते हैं। इसे **समुद्री** अथवा **झील की हवा (sea or lake breeze)** कहते हैं। रात के समय भूमि के तीव्र विकिरणी शीतलन के कारण जल के ऊपर की तुलना में भूमि के सतह के ऊपर निम्न तापमान होते हैं। इस प्रकार, एक व्युत्क्रमी बहाव **(reverse flow), भूमि हवा** (land breeze) उत्पन्न होती है। भूमि हवा का वेग **(velocity)** सामान्यत: उतना अधिक नहीं हो पाता जितना कि झील हवा का, और सामान्यत: समुद्री और झील की हवा की तुलना में कम गहरी होती है।

अगले उपभाग में हम एक अन्य अत्यधिक महत्वपूर्ण मौसम संबंधी प्राचल की चर्चा करेंगे, वह है तापमान। आगे बढ़ने से पहले निम्नलिखित बोध प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न करें।

MAADHYAM IAS

बोध प्रश्न

1) उचित शब्दों से निम्न रिक्त स्थानों को भरिए।

i) मौसम संबंधी कारक वायु प्रदुषण पारिस्थितिकी तंत्र को .... प्रावस्था में प्रभावित करते हैं।

ii) .... के समय पर अधिकतम विक्षोभ होता है जबकि .... के समय हल्की पवन के प्रभाव में यह न्यूनतम होता है।

iii) पवन गति में वृद्धि के साथ प्रदूषकों की सांद्रता .... होती है।

iv) रात के समय .... हवा विद्यमान होती है जबकि .... हवा दिन के समय पाई जाती है।

8.3.2 तापमान

तापमान एक अन्य बहुत ही महत्वपूर्ण मौसम संबंधी कारक होता है जो प्रदूषकों के विसर्जन (dispersion) तथा फैलाव को प्रभावित करता है। तापमान सूर्य से पृथ्वी और उसके वायुमंडल पर विकिरण या विद्युतचुंबकीय तरंगों द्वारा ऊष्मा के स्थानांतरण के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है।

वायुमंडलीय तापमान समतलीय (horizontally) तथा लंबवत् (vertically) दोनों रूपों में परिवर्तित होता है तथा पवन की गति एवं दिशा को प्रभावित करता है (जैसा कि उपरोक्त चर्चित है)। आइए समझें कि वायुमंडल में तापमान किस प्रकार परिवर्तित होता है तथा प्रदूषकों के विसर्जन में यह किस प्रकार योगदान प्रदान करता है?

ऊँचाई के साथ परिवर्तन

ऊँचाई के फलन के रूप में तापमान के परिवर्तन की चर्चा इकाई 7 (उपभाग 7.3.2) में की गई थी। आपको याद होगा कि जैसे-जैसे हम पृथ्वी की सतह से दूर जाते हैं वायुमंडल का तापमान जटिल तरीके से परिवर्तित होता है। वास्तव में, तापमान में परिवर्तन के आधार पर वायुमंडल को चार विशिष्ट क्षेत्रों में वर्गीकृत किया गया है, जो हैं क्षोभ मंडल (troposphere), समताप मंडल (stratosphere), मध्य मंडल (mesosphere), तथा ताप मंडल (thermosphere)। फिर भी, वर्तमान संदर्भ में हमारा सरोकार वायुमंडल के निम्न क्षेत्रों से है जो सतह से लगभग 2 km तक के विस्तार पर हैं। यहाँ, तापमान का वितरण नीचे की सतहों के अभिलक्षणों तथा सतह पर विकीर्णन पर निर्भर करते हुए काफी विस्तृत तरीके से परिवर्तित होता है। यद्यपि क्षोभमंडल में ऊँचाई के साथ तापमान कम होता है, इस निम्न क्षेत्र में तापमान ऊँचाई के साथ घट या बढ़ सकता है। अपेक्षित कमी के विपरीत तापमान में वृद्धि व्युत्क्रम (inversion) कहलाती है और इसका वर्णन उपभाग 8.3.3 में किया गया है।

वायु प्रदूषण संबंधी मौसम विज्ञान में निम्न क्षोभ मंडल का क्षेत्र सबसे अधिक रुचि का है।

निम्न क्षेत्र के आगे, बचे हुए क्षोभ मंडल के तापमान में ऊँचाई के साथ सामान्य कमी होती है जो प्रति km 6.5°C होती है।

समतलीय परिवर्तन

तापमान समतल रूप में भी परिवर्तित होता है विशेष रूप से अक्षांश (latitude) के साथ क्योंकि ये ध्रुव के समीप ठंडा और भूमध्य रेखा (equator) के समीप गर्म होता है। फिर भी, परिवर्तनीय तापमानों पर महाद्वीपों (continents) तथा महासागरों (oceans) का काफी प्रभाव

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इस प्रकार का व्युत्क्रम सामान्यतः सर्दियों में तथा उन घाटी क्षेत्रों में जहाँ समतली गति कम होती है, होता है। यह **विकिरण व्युत्क्रम** (radiation inversion) कहलाता है। एक अन्य प्रकार का व्युत्क्रम **अवतलन व्युत्क्रम** (subsidence inversion) कहलाता है जो निम्न दाब क्षेत्रों से घिरे उच्च दाब क्षेत्रों में पाया जाता है। यहाँ नीचे आती वायु संपीडित हो जाती है तथा गर्म होकर उष्ण घनी परत बनाती है। यह घनी परत एक टोप सा बना देती है जो प्रदूषकों की ऊपर की ओर की गति को रोकता है।

जब विकिरण व्युत्क्रम तथा अवतलन व्युत्क्रम दोनों साथ-साथ प्रदर्शित होते हैं, इसे **दोहरा व्युत्क्रम** (double **inversion**) **कहते हैं।**

विकिरण व्युत्क्रम विशेष रूप से भारत जैसे देश में बहुत देर तक नहीं रुकता जहाँ सूर्य की तीव्र विकिरणें दिन के समय ठहरी हुई वायु की परत को स्पष्ट कर सकने योग्य होती हैं। अवतलन व्युत्क्रम, जो मध्यम उच्चता पर पाया जाता है, कई दिनों तक रुका रहता है।

8.3.4 मिश्रित ऊँचाई

संवहन ऐसी क्रियाविधि है जिसके द्वारा अनियमित तापमान परिवर्तन होते हैं। ये वायु के बडे द्रव्यमान (गर्म अथवा ठंडा) के एक क्षेत्र के आर-पार गति करने से उत्पन्न होते हैं।

संवातन गुणांक किसी स्थानीय जगह के वायु प्रदूषण क्षमता का निर्धारण करता है।

मिश्रित ऊँचाई (mixing height) एक अन्य मौसम संबंधी कारक है जो प्रदूषकों के लंबवत् फैलाव को रोकता है, मिश्रित ऊँचाई वह सीमा है जिस तक दिन के समय में संवहनी गतिविधि (convective activity) का विस्तार होता है। यह वायुमंडलीय परत की वह मोटाई है जिसे सतह से ऊपर की ओर मापा जाता है जिसके द्वारा यह माना जाता है कि सतह पर दिन के समय की उष्णता के कारण संवहन से प्रदूषकों का मिश्रण होता है। प्रबल पवन वाली निम्न मिश्रित ऊँचाइयों के प्रदूषण परिवहन पर हल्की पवन वाली उच्च मिश्रित ऊँचाइयों के समान प्रभाव होते हैं। वायु प्रदूषण क्षमता के पूर्वानुमान में संवातन गुणांक (ventilation coefficient) का सामान्यतः उपयोग होता है। संवातन गुणांक मिश्रित ऊँचाई और परत में पवन की औसत गति का गुणांक (product) होता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में रात के समय में मिश्रित ऊँचाइयाँ अनुपस्थित होती हैं लेकिन इसके स्थान पर भूमि आधारित तापमान व्युत्क्रम होते हैं जिनमें लंबवत् मिश्रण न्यूनतम होता है। शहरी क्षेत्रों के ऊपर मिश्रित ऊँचाइयाँ दैनिक रूप से परिवर्तित होती हैं जिनका परिमाण सौ गुणा से अधिक होता है। मिश्रित ऊँचाइयों को परोक्ष रूप से कभी-कभी मापा जाता है लेकिन लंबवत् तापमान वितरण से इनका निर्धारण किया जाता है।

द्वितीयक मौसम संबंधी प्राचलों के विषय में पढ़ने से पहले निम्नलिखित बोध प्रश्नों को हल करने का प्रयत्न कीजिए।

बोध प्रश्न

2) निम्नलिखित को सही तरीके से मिलाइए

i) अति-रूद्धोष्म	1) उदासीन वायुमंडल
ii) उप-रूद्धोष्म	2) अस्थिर वायुमंडल
iii) समतापीय	3) स्थिर वायुमंडल

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बोध प्रश्न

3) उचित उत्तर का चयन करके निम्नलिखित कथन को पूर्ण कीजिए :
पतन दर को निम्न रूप से परिभाषित किया जाता है
   i) ऊँचाई के साथ तापमान के पतन की दर।
   ii) ऊँचाई के साथ तापमान में परिवर्तन की दर।
   iii) किसी एक समय पर तापमान में परिवर्तन की दर।

8.4 द्वितीयक मौसम संबंधी प्राचल

जैसा कि भाग 8.3 में बताया कया है द्वितीयक मौसम संबंधी प्राचल प्राथमिक प्राचलों को प्रभावित करके वायु प्रदूषकों के संचारण को प्रभावित करते हैं। आइए, इनके बारे में निम्नलिखित उपभागों में पढ़ें।

8.4.1 आर्द्रता तथा वर्षण

आपने पिछली इकाई में पढ़ा कि जल, वाष्प, द्रव तथा बर्फ के रूप में वायुमंडल में विद्यमान रहता है और हमारे वायुमंडल में जल वाष्प की बढ़ती हुई मात्रा भूमंडलीय उष्णता का एक कारण बनती जा रही है। वायु के जल वाष्प की मात्रा **आर्द्रता** (humidity) कहलाती है और जब विद्यमान जल वाष्प की मात्रा को वायु द्वारा ग्रहण की गई उस ताप पर उसकी अधिकतम मात्रा के अनुपात के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है तो यह **सापेक्ष आर्द्रता** (relative humidity) कहलाती है। वायुमंडल में द्रव जल बादलों (clouds) के रूप में उपस्थित होता है और वर्षण (precipitation) के लिए उत्तरदायी होता है।

वर्षण अथवा वर्षा (rainfall) वायुमंडल में प्राकृतिक निष्कासन (removal) तथा शोधन (cleaning) की सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। बादल के कणों में उपस्थित प्रदूषक वर्षा की बूँदें बनाते हैं जो सतह पर वर्षण (precipitation) के रूप में पहुँचते हैं। जैसा कि पिछली इकाई में चर्चित था, कई छोटे-छोटे कण संघनन के नाभिक (nuclei) के जैसे कार्य करते हैं और इस प्रकार वर्षा में निष्कासित हो जाते हैं। गिरते समय जब वर्षण अपने साथ प्रदूषकों को ले जाते हैं, निष्कासन की प्रक्रिया को **प्रक्षाल वाटिका (wash out)** कहते हैं। इसमें कोई शंका नहीं कि कुछ बड़े कण अपने गिरने के समय वर्षा की बूँदों द्वारा इकट्ठे होकर प्रक्षालित हो जाते हैं। इस प्रकार की वर्षा क्रिया के द्वारा शोधन इस प्रकार बड़े कणों तक ही सीमित है।

8.4.2 दृश्यता

दृश्यता (visibility) की व्याख्या ऐसी धुन्ध (haze) के रूप में की जाती है जो वायुमंडल की स्पष्टता, वर्ण तथा गठन को कम कर देती है। रात के समय साफ आकाश के नीचे निकलती हुई विकिरण के कारण भूमि काफी ऊष्मा खो देती है, इसलिए भूमि के संपर्क में वायु ठंडी हो जाती है। यदि ऐसे में वायु काफी आर्द्र (humid) होती है तो शीतलन से वायु संतृप्तांक (saturation point) पर आ जाती है, फलस्वरूप कुहरा (fog) बनता है। इसे **विकिरण कुहरा** (radiation fog) कहते हैं और यह घाटी स्थानों में काफी सामान्य होता है। कुहरे की सबसे ऊपरी परत आवश्यकत: एक काले पिंड (blackbody) के जैसे विकीर्णन करती है और अधिक ठंडी हो जाती है, इस प्रकार कुहरे के ठीक ऊपर व्युत्क्रम परत (inversion layer) बन जाती है। जैसे-जैसे पृथ्वी अवरक्त (infra red) क्षेत्र में निरंतर विकीर्णन करती है, कुहरे की छोटी बूँदें इस ऊष्मा को करीब-करीब सारा अवशोषित कर लेती हैं क्योंकि बूँदों के आकार का वितरण विकिरण की तरंगदैर्ध्यों (wavelengths) के बराबर होता है।

धुन्ध (haze): यह वायुमंडलीय, आर्द्रता, धूल, धुँआ तथा वाष्प होता है जो वायुमंडल की दृश्यता को कम करता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

ये परिवर्तन वायुमंडलीय स्थिरता (stability) को बदलते हैं और इस तरह प्रदूषकों के विसर्जन को प्रभावित करते हैं। जब कुहरे की ऊपरी परत रात के समय विकीर्णन करती है, भीतरी परत समय के साथ अधिक अस्थिर हो जाती है। यह नीचे की ओर से अधिक लंबवत् मिश्रण का कारण होती है लेकिन कुहरे की परत के ऊपर व्युत्क्रम के कारण टोपीनुमा आवरण बना देती है। चूँकि वायु संतृप्त होती है, एक अस्थिर पतन दर विद्यमान होगी यदि ऊँचाई के साथ तापमान में कमी शुष्क रूद्धोष्म पतन दर की तुलना में आर्द्र अथवा आभासी रूद्धोष्म पतन दर (pseudo-adiabatic lapse rate) से अधिक होगी।

वायुमंडल

वर्णकहीनता *(albedo):* किसी पिंड अथवा सतह की परावर्तिता का माप; यह परावर्तित विद्युतचुंबकीय विकिरण (reflected electromagnetic radiation) और उस पर आपात विकिरण (incident radiation) की मात्रा का अनुपात होता है।

कणमय: वायु में फैले हुए ठोस तथा द्रव कण

वह प्रदूषक जो रात के समय मूलत: स्थिर परत पर ऊँचाई में उत्सर्जित होते हैं तथा सुबह होने तक सामान्यत: भूमि तक नहीं पहुँचते, रात के बढ़ने के साथ-साथ कुहरे की परत में ही रह जाते हैं और अपेक्षाकृत उच्च सांद्रताओं में भूमि पर आ पाते हैं।

दिन निकलने के बाद, सूर्य के पूर्ण प्रकाश में कुहरा कई घंटों तक अथवा पूरे दिन भर के लिए रहता है। यह गहरे कुहरे (औसत 50% तथा 85% तक भी हो सकता है) की उच्च परावर्तिता (reflectivity), वर्णकहीनता *(albedo)* के कारण होता है। इससे भूमि की उष्णता देर से और कम हो जाती है और उसके फलस्वरूप कुहरे की बूँदों का वाष्पण भी कम हो जाता है। यह भी वायुमंडल की स्थिरता को प्रभावित करता है। कुहरे की परत के ऊपर अस्थिर पतन दर हो सकती है लेकिन सतह-के गर्म न होने के कारण परतों के बीच व्युत्क्रम हो सकता है। **कणमय प्रदूषकों** (particulate pollutants) की उच्च सान्द्रताओं की उपस्थिति में, यह निर्धारित करना कठिन है कि ठीक किस समय कुहरा छँटा है क्योंकि कणमय (particulates) दृश्य प्रकाश को अच्छी प्रकार से प्रकीर्णित (scatter) तथा अवशोषित करते हैं और दृश्यता काफी सीमा तक रुकी रहती है।

8.4.3 दाब

निम्न (चक्रवातीय, cyclonic) am उच्च दाब (प्रतिचक्रवातीय, anticyclonic) निकाय साथ होने वाली वायुमंडलीय स्थिरता के कारण वायु प्रदूषण की क्षमता को प्रभावित करते हैं।

चक्रवातों (cyclones) के निम्नलिखित अभिलक्षण होते हैं :

- वायु का ऊपर उठना
- सामान्य तूफ़ानी मौसम
- तेजी से गति करने वाले निकाय-उच्च पवनों के लिए मध्यम

उपरोक्त सारे कारक अच्छे विसर्जन तथा वायुमंडल में मुक्त प्रदूषकों के प्राकृतिक निष्कासन के लिए सहायक हैं।

प्रतिचक्रवातों (anticyclones) के अभिलक्षण निम्नलिखित हैं :

- वायु का अवतलन (subsidence) अर्थात् अवतलन व्युत्क्रम (subsidence inversion)
- सामान्यत: साफ मौसम,
- धीरे गति करता या रुका हुआ तंत्र-सतह की हल्की से शांत वायु।

उपरोक्त सभी कारक किसी क्षेत्र के ऊपर वायुमंडल में मुक्त प्रदूषकों के बनने में सहायक होते हैं।

MAADHYAM IAS

8.4.4 सौर्य विकिरण

जैसा कि पहले बताया गया है, पृथ्वी और उसके वायुमंडल के लिए सौर्य विकिरण, ऊर्जा का मुख्य स्रोत हैं। विकिरणों का अधिकतम ऊर्जा संचारण (tmnsmision) विद्युतचुंबकीय स्पेक्ट्रम के दृश्य विस्तार (400-750 nm) में होता है लेकिन पराबैंगनी (ultraviolet) तथा अवरक्त (infrared) क्षेत्रों में भी काफी ऊर्जा मुक्त होती है।

स्थान पर निर्भर करते हुए सौर्य विकिरण का वायुमंडल में हो रही रासायनिक अभिक्रियाओं के प्रकार और दर पर काफी प्रभाव होता है। कुछ अवशोषित विकिरणों का बादल के सबसे ऊपर तथा पृथ्वी की भूमि तथा जल की सतहों से परावर्तन (reflected) हो जाता है। सामान्य परावर्तिता को वर्णकहीनता ***(albedo)*** कहा जाता है जो पृथ्वी-वायुमंडल तंत्र के लिए 36%

होती है और पृथ्वी के ऊपर बादल बनने की औसत स्थितियों को प्रभावित करती है। परावर्तिता तरंगदैर्ध्यों के दृश्य विस्तार में सबसे अधिक होती है। जब प्रकाश की विकिरण प्रकाश की तरंगदैर्ध्य से कम व्यास के कणों वाले पदार्थ से गुजरती है तो इस विकिरण के एक अंश का प्रकीर्णन (scattering) होता है। छोटी तरंगदैर्ध्य अधिक सरलता से प्रकीर्णित होती है और आकाश के नीले रंग के लिए उत्तरदायी होती हैं।

पृथ्वी अपने तापमान के समानुपात में ऊर्जा का पुन: विकीर्णन करती है। पृथ्वी के तापमान के कारण, सबसे अधिक उत्सर्जन लगभग 10,000 nm पर होता है जो स्पेक्ट्रम के अवरक्त क्षेत्र में होता है। जल वाष्प 5500 तथा 7000 nm के बीच और 27,000 nm से अधिक पर प्रबलता से अवशोषण करते हैं पर 8000 से 13,000 nm तक आवश्यकत: पारदर्शी (transparent) होता है। कार्बन डाइऑक्साइड 13,000 और 17,500 के बीच प्रबल अवशोषण करती है। सौर्य विकिरण की तुलना में वायुमंडल द्वारा अत्यधिक स्थलीय (terrestrial) विकिरण के अवशोषण के कारण पृथ्वी की कुछ ऊष्मीय ऊष्मा संरक्षित (conserved) हो जाती है। जैसा आपने पिछली इकाई में पढ़ा यह प्रभाव "पादपगृह प्रभाव" (greenhouse effect) कहलाता है।

बोध प्रश्न

4) सही कथनों के सामने (✓) का चिन्ह तथा गलत के सामने (×) का चिन्ह लगाइए।

   क) वायुमंडल में जल तीनों अवस्थाओं अर्थात्, ठोस, द्रव तथा गैस, सब में विद्यमान होता है।

   ख) वायुमंडल के शोधन के प्राकृतिक स्रोतों के लिए उच्च दाब महत्वपूर्ण होते हैं।

   ग) सौर्य विकिरण की दृश्य विस्तार की तरंगदैर्ध्य पर वर्णकहीनता सबसे अधिक होती है।

   घ) निम्न दाब तंत्रों के कारण तूफानी मौसम होता है।

8.5 स्तंभ उत्सर्जनों पर स्थिरता का प्रभाव

स्तंभ उत्सर्जनों का विसरण (diffusion) मुख्यत: वायुमंडल की स्थिरता का फलन होता है। स्तंभ से प्रदूषक **पिच्छक (plume)** के रूप में उत्सर्जित होते हैं। मुक्त हुई गैसों द्वारा लिया गया पथ तथा आकार पिच्छक कहलाता है। ऊँचाई के साथ तापमान के विभिन्न परिवर्तन अथवा वायुमंडलीय स्थिरता तथा स्तंभ की ऊँचाई पर निर्भर करते हुए विभिन्न प्रकार के पिच्छक उत्पन्न होते हैं। प्रदूषक स्रोत का परिवेशी (ambient) तापमान पिच्छक के ऊपर उठने को प्रभावित करता है। स्तंभ के ऊपर उठने वाला पिच्छक स्तंभ गैस के तापमान और परिवेशी वायु के तापमान के बीच अंतर के परोक्ष समानुपाती (directly proportional) होता है। विभिन्न प्रकार के पिच्छकों को रैखिक रूप में चित्र 8.6 में दर्शाया गया है और निम्न दिए अनुच्छेदों 4 इनकी संक्षेप में व्याख्या की गई है।

स्तंभ : चिमनी या लंबवत् विसर्जन पाइप

परिवेशी : आस-पास के क्षेत्र का

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

छल्लेदार पिच्छक (looping)

पिच्छक, जिनका तरंग रूपी व्यवहार होता है, 'छल्लेदार' (looping) कहलाते हैं तथा अति-रूद्धोष्म पतन दर (super adiabatic lapse rate) वाले अत्यधिक अस्थिर वायुमंडल में पाए जाते हैं। ऐसी स्थितियों में अस्थिर वायु में बड़े ऊष्मीय भँवर उत्पन्न होते हैं और कम समय अंतराल के लिए स्तंभ उत्सर्जन भूमि पर लाए जा सकते हैं। फिर भी, लम्बे समय अंतरालों में यदि विसरण अच्छा हो तो, प्रबल सौर्य ऊष्णता के साथ हल्की पवन में छल्लेदार पिच्छक बनते हैं। दूसरी तरफ बादलों के बनने से अथवा अधिक पवन, ऐसी अस्थिर स्थितियों के बनने को रोकते हैं।

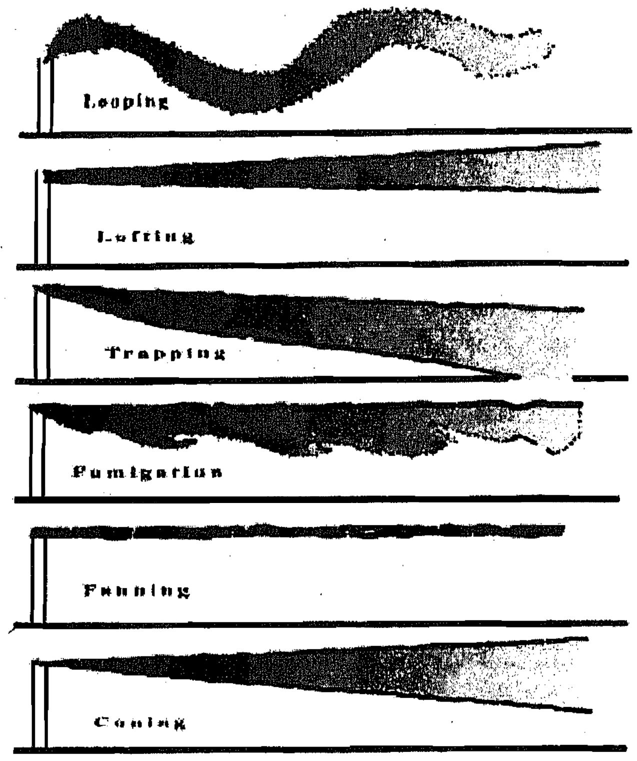

चित्र 8.6: पिच्छक का व्यवहार दर्शाता रैखिक आरेख

शंक्वाकार पिच्छक (coning)

शंकु (cone) के आकार में पिच्छक वायुमंडल की हल्की अस्थिरता की स्थितियों में उत्पन्न होते हैं जो किसी रूद्धोष्म और समतापीय तापमान वितरण के बीच लंबवत् तापमान क्रमिकता (gradient) के कारण होते हैं। इससे समतली तथा लंबवत् मिश्रण होते हैं। लेकिन छल्लेदार पिच्छक स्थितियों के जितने गहरे नहीं। फलस्वरूप छल्लेदार पिच्छक की तुलना में ये पिच्छक भूमि पर अधिक दूरी तक पहुँचते हैं।

पंखाकार पिच्छक (fanning)

ऐसे पिच्छक तापमान व्युत्क्रम की स्थितियों में बनते हैं। जैसे-जैसे ऊपर की ओर तापमान बढ़ता 8, वायु स्थिर होती 6 और लंबवत् विक्षोभ (turbulence) दब जाता 6। इसलिए पिच्छक समतल में फैल जाता है और बहुत थोड़ा लंबवत्। समतली मिश्रण उतना नहीं होता जितना कि शंक्वाकार, पिच्छक में लेकिन फिर भी यह होता तो है। पिच्छक की सान्द्रता अधिक होती है लेकिन इस स्थिति में ऊँचे स्रोतों से थोड़े ही उत्सर्जन भूमि पर पहुँचते हैं। ऐसा तब नहीं होता जब सतह के गर्म होने के कारण व्युत्क्रम टूट जाता है या पिच्छक के उठने पर कोई क्षेत्र सामने आ जाए। पंखाकार पिच्छक के लिए रात के समय मंद पवन वाले स्पष्ट बादल अनुकूल होते हैं।

MAADHYAM IAS

सुगम्य पिच्छक (lofting)

सुगम्य पिच्छक तब बनते हैं जब भूमि आधारित व्युत्क्रम के ऊपर अति-रूद्धोष्म परत हो। ऐसी स्थिति में ऊपर की ओर विसरण तीव्र होता है लेकिन नीचे की ओर विसरण व्युत्क्रम को भेद नहीं पाता। इन स्थितियों में गैसें सतह तक नहीं पहुँच पातीं लेकिन अच्छे अवसाद वेगों (settling velocities) वाले कण व्युत्क्रम पार करके गिर जाते हैं। खुले देश में स्पष्ट शाम में करीब-करीब सूर्यास्त का समय सबसे अनुकूल होता है। सामान्यत: सुगम्य पिच्छक एक संक्रमण स्थिति (transition situation) होती है जो व्युत्क्रम बढने के साथ पंखाकार पिच्छक में बदल जाती है।

धूमन पिच्छक (fumigation)

सौर्य उष्णता बढ़ने के साथ-साथ निम्न परतें गर्म हो जाती हैं तथा परत में और अधिक अंदर जाते अति-रूद्धोष्म पतन दर उत्पन्न होती है। जब परत इतनी गहरी हो कि पंखाकार पिच्छक उत्पन्न हो जाए तब ऊष्मीय विक्षोभ के कारण पिच्छक की उच्च सान्द्रता उसकी पूरी लम्बाई के साथ-साथ भूमि स्थल तक पहुँचती हैं। इसके कारण मंद पवन और स्पष्ट बादल होते हैं और बढ़ी हुई उष्णता के कारण गर्मियों में अधिक बार होने के लिए एकदम उचित हैं।

पाशन पिच्छक (trapping)

इसमें पिच्छक दो व्युत्क्रमों के बीच पाश (trap) में आ जाता है और इसलिए इसके विसरण की सीमा कुछ ऊँचाई के विस्तार तक ही होती है।

बोध प्रश्न

5) निम्नलिखित स्थितियों में पिच्छक के व्यवहार का नाम लिखिए।

क) जब सतह व्युत्क्रम के ऊपर एक अति-रूद्धोष्म परत होती है।

ख) जब अति-रूद्धोष्म मन्द पवन तथा प्रबल ध्रुवीय ऊष्णता वाली स्थिति होती है।

ग) जब रूद्धोष्म स्थिति होती है तथा यह आकार पर आधारित होता है।

8.6 औद्योगिक स्थान में मौसम संबंधी कारक

उद्योग इस तेज़ी से विकास करते विश्व का अभिन्न हिस्सा हैं। इसके साथ-साथ इन उद्योगों की प्रत्येक प्रकार के प्रदूषण के मुख्य स्रोत होने के कारण निन्दा की जाती है। इनमें होने वाले प्रदूषणों में वायु प्रदूषण एक महत्वपूर्ण घटक है। इसलिए यह बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है कि किसी उद्योग को आरंभ करने से पहले या पुराने प्रदूषण फैलाने वाले उद्योग को पुनर्स्थापित करने से पहले उचित ध्यान रखना चाहिए। उपरोक्त चर्चित मौसम संबंधी प्राचलों की जानकारी कोई भी निर्णय लेने में काफी सहायक होती हैं। किसी उद्योग को लगाने के लिए निम्नलिखित पहलू अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं।

- स्थान का चयन (selection of location)
- औद्योगिक रूपरेखा (design) तथा संचालन (operation)

स्थान का चयन

औद्योगिक उपयोग के लिए क्षेत्र की परियोजना करने अथवा विद्यमान प्रदूषण समस्या के असामयिक कारकों की पहचान करने और वायु गुणवत्ता के मापदंडों को प्रतिस्थापित करने में मौसम तथा जलवायु कारकों को ध्यान में रखना होता है। क्षेत्रीय तथा स्थानीय दोनों के मौसम व जलवायु के प्रभाव को ध्यान में रखना चाहिए। एक क्षेत्र में पवन काफी मंद तथा विसरण (diffusion) धीमा हो सकता है, दूसरे में इसके विपरीत स्थिति हो सकती है जिसमें मुख्यतः प्रबल तथा परिवर्तनीय पवन तथा तीव्र विसरण होते हैं यदि किसी नए औद्योगिक प्लांट के लिए स्थल का चयन करना हो तो देश के उस भौगोलिक क्षेत्र का चयन करके प्रदूषण संकट को बिल्कुल कम किया जा सकता है जिसमें वायुमंडलीय विसरण के लिए अनुकूल जलवायु हो। किसी क्षेत्र के महत्वपूर्ण अभिलक्षण एकल निरूपणीय मौसम मानचित्रों पर लम्बे अन्तराल रिकॉर्ड का विशलेषण करके पता किया जा सकता है।

एक बार उचित भौगोलिक क्षेत्र के चयन के बाद **सूक्ष्म मौसम विज्ञान संबंधी** (micrometeorology) जाँच करनी चाहिए। इसमें प्लांट के विभिन्न स्थानों के मौसम तथा

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

जलवायु के स्थानीय लक्षण सम्मिलित होते हैं। मौसम तथा जलवायु के विस्तार का अंदाज कभी-कभी होता है। किसी शहर के विभिन्न स्थानीय क्षेत्रों में कोसों मील दूर स्थित दो शहरों के बीच की तुलना में अधिक मौसम संबंधी (meteorological) तथा जलवायु संबंधी (climatological) अंतर हो सकते हैं। ये स्थानीय अंतर स्थलाकृति (topography), मृदा की स्थिति, प्रकार तथा वनस्पति विस्तार (vegetation cover), निर्माण के क्षेत्र, इत्यादि पर निर्भर करते हैं। यदि उपर्युक्त डाटा उपलब्ध न हो तो कोई और विकल्प न होकर एक या दो स्थानों पर प्रेक्षण का प्रोग्राम लेने की आवश्यकता होती है। यदि प्लांट के स्थान का चयन पहले ही कर लिया गया हो तो निर्माण आरंभ करने से पहले यह वांछनीय है कि प्रदूषकों की विद्यमान सांद्रता और संबंधित मौसम संबंधी स्थितियों के माप आरंभ कर दिए जाएँ। ये नये प्लांट के उत्पादन में जाने के बाद उसके स्थानीय प्रदूषण पर योगदान का आंकलन करने के लिए आधार रेखा प्रदान करेंगे। ये माप प्लांट के निर्माण के समय निरंतर किए जाने चाहिए और उत्पादन आरंभ होने के बाद कम से कम पूरे एक वर्ष के लिए ताकि वास्तविक प्रदूषण तथा इसके भविष्य की संभव सीमा का निर्धारण किया जा सके।

सूक्ष्म मौसम विज्ञान: स्थानीय मौसम संबंधी स्थितियों से संबंधित है।

औद्योगिक रूपरेखा तथा संचालन

प्लांट की रूपरेखा और संचालन के निर्णय लेने में भी मौसम विज्ञान का योगदान रहता है। प्लांट के भवन का आकार और अभस्थिति (orientation) महत्वपूर्ण होता है। कुछ प्लांटों के पास स्तंभ की गैसें नीचे की ओर प्रक्षालित (downwash) होती है जब पवन गति कुछ क्रांतिक मानों से अधिक हो जाती है। ये क्रांतिक गतियाँ प्लांट की संरचनाओं के वायुगतिक गुणों (aerodyanamic properties) और दिशा के साथ बदलती हैं। प्रबल पवन की आवृत्ति, काल तथा दिशा संबंधी वितरण के जलवायवीय अध्ययन से प्लांट की रूपरेखा (design) तथा अभस्थिति (orientation) इस समस्या को कम कर सकने के लायक हो जाते हैं। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि किसी भवन के अस्त-व्यस्त बहाव का क्षेत्र उसकी ऊँचाई का सामान्यत: दुगुना होता है और पवन के नीचे की ओर की दिशा में इसकी ऊँचाई का 5 से 10 गुना होता है। यह जानना भी दिलचस्प है कि किसी आयताकार संरचना के आस-पास अधिकतम नीचे की ओर प्रक्षालन तब होता है जब संरचना के मुख्य अक्ष से पवन की दिशा 45° के कोण पर होती है और न्यूनतम प्रक्षालन संरचना के मुख्य अक्ष से पवन के समानान्तर बहने से होता है जैसा कि चित्र 8.7 में दर्शाया गया है।

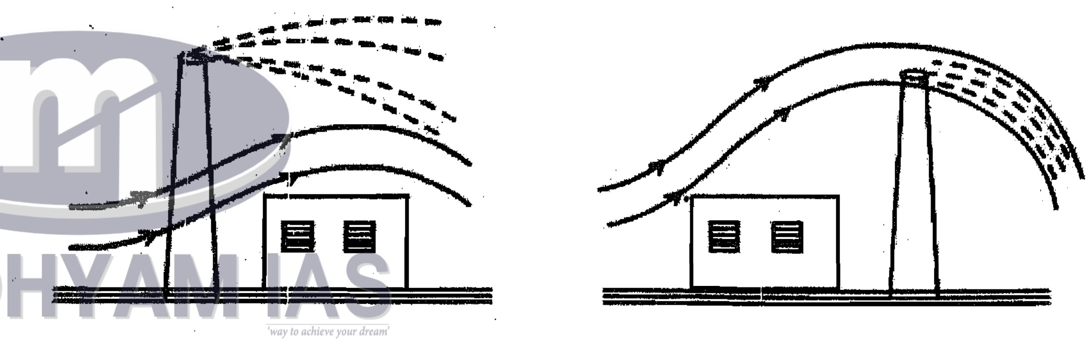
MAADHYAM IAS

क   ख

चित्र 8.7: पवन के बहाव पर भवन का प्रभाव क) कम प्रक्षालन ख) अधिक प्रक्षालन

चपटी छतों पर बाहुल्य में निकलते उत्सर्जन मुक्त वायुमंडलीय पवन के बहाव के विपरीत दिशा में बहते हैं। ऐसा भवनों के ऊपर छत के साथ विक्षोभ के विपरीत दिशा में बहाव के कारण होता है। स्तंभों तथा भवनों से वायु प्रदूषकों के मुक्त होने पर वायुगतिक (aerodynamic) प्रक्षालन के प्रभाव के अलावा यह भी आवश्यक है कि मौसम संबंधी यंत्रों को भवनों के ऊपर उद्भासित (expose) करते समय भी वायुगतिक प्रक्षालन को ध्यान में रखना चाहिए ताकि निरूपक माप निश्चित रूप से हो सकें।

बडे ऊर्जा संयंत्र (power plants) इतनी अधिक ऊष्मा उत्सर्जित करते हैं कि संयंत्र को घेरे वायु में ऊपर चक्रीय पैटर्न बन जाते हैं। "**2½ का नियम**" (भवन की ऊँचाई के 2½ गुना ऊपर पिच्छक मुक्त होता है) नीचे की ओर के प्रक्षालन (downwash) को खत्म करने का प्रयत्न करेगा तथा स्तंभ गैस का **'413 का नियम"** (पिच्छक का निकास वेग (exit velocity) लंबवत् पवन गति की तुलना में 4/3 गुना अधिक) प्रदूषकों के स्तंभ के मार्ग में संरोपण (entrainment) को खत्म करने का प्रयत्न करेगा। प्रदूषण का संकट ऊँचे स्तंभों द्वारा कम किया जा सकता है। स्तंभ की ऊँचाई के साथ कीमत भी बढ़ जाती है और स्तंभों में कई अन्य कमियाँ हो सकती हैं विशेषकर हवाई अड्डों के पास। संयंत्र की रूपरेखा में एक समस्या है स्तंभ की ऊँचाई के चयन की जो प्रदूषण को बिल्कुल कम कर दे और महँगा भी न हो। व्युत्क्रम की गहराई और उत्पन्न होने की आवृत्ति (frequency) की जानकारी स्तंभों की रूपरेखा तैयार करने में सहायक होती है। सामान्यत: स्तंभ की ऊँचाई के बढ़ने के साथ समान मौसम संबंधी स्थितियों में पवन के नीचे की दिशा की ओर किसी भी केन्द्र पर भूमि स्तर के प्रदूषक की सान्द्रताओं में कमी होगी। स्तंभ की ऊँचाई को वास्तव में प्रभावी स्तंभ ऊँचाई (effective stack height) के रूप **if** मापा जाता है।

प्रभावी स्तंभ ऊँचाई स्तंभ की भौतिक ऊँचाई, H और निकास वेग (exit velocity), h*v* के कारण ऊँचाई अवकलन (height differential, *ht*) का योग होता है। ht तथा h*v* का गुणाक **उत्प्लावन** (buoyancy) कहलाता है। यदि निकास वेग बाहरी पवन के कम से कम 4/3 के गुणनखंड से अधिक उच्च होता है तो उत्प्लावन धनात्मक होगा। यदि स्तंभ की गैस W तापमान, जो पिच्छक के उत्प्लावन का निर्धारण करता है परिवेशी वायु (**ambient air**) के तापमान से अधिक होता है तो गुणनखंड *ht* धनात्मक होगा। इस अवस्था में; जल वाष्प के संघनन के कारण ऊष्मा का अवशोषण प्रभावी स्तंभ ऊँचाई को कम कर सकता है। जब *ht* ऋणात्मक होता है तो नीचे की ओर प्रक्षालन का कारण होता है। स्तंभ की ऊँचाई, निकास वेग को बढ़ाकर, स्तंभ गैस के तापमान को बढ़ाकर अथवा लम्बा स्तंभ बनाकर बढ़ाई जा सकती है। यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि तनुता (dilution) वायु के उस आयतन का फलन (function) है जिसमें प्रदूषक का मिश्रण होता है।

उत्प्लावन (*ht.hv*): किसी द्रव में डुबाई वस्तु पर ऊपर की ओर लगने वाला बल जो द्रव के विस्थापित भार के बराबर होता है।

औद्योगिक क्षेत्र के आस पास 1-2 km की दूरी तक हरित क्षेत्रों के विकास की भी वायु गुणवत्ता के प्रबंधन में मुख्य भूमिका होती है। ऐसा करने से न केवल विक्षोभ बढ़ेगा बल्कि यह पवन को भी कम कर देगा। लम्बी झाड़ियाँ भी ध्वनि एवं वायु प्रदूषण के लिए निस्यंदक का कार्य करती हैं।

बोध प्रश्न

6) प्रभावी स्तंभ ऊँचाई क्या होती है? प्रदूषकों के नीचे की ओर प्रक्षालन को यह किस प्रकार प्रभावित करती है?

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

8.7 शहरी मौसम विज्ञान

इस बात से सभी सहमत हैं कि पदार्थ का अंतर्भेदन (material injection, जल वाष्प, वाष्पशील कार्बनिक यौगिक तथा कण), ऊष्मा अंतर्भेदन, सतह के वर्णकहीनता परिवर्तन (विभिन्न परावर्तन गुणों वाले भवन तथा सड़कें) तथा खुरदरेपन (roughness) **if** परिवर्तन शहरीकरण (urbanisation) तथा औद्योगिकीकरण (industrialisation) का परिणाम है। शहरी समूहन

समूहन : पिंड के रूप में इकट्ठा होने की प्रक्रिया।

ऊपर की ओर झोंका : ऊपर की ओर प्रबल वायु की धारा।

महानगरीय विस्तार : शहरों एवं नगरों के उन झुण्डों के लिए इस पद का इस्तेमाल किया जाता है जो एक क्षेत्र या ज़ोन के अंतर्गत तो आते हैं मगर फिर भी उस क्षेत्र की एक आत्मनिर्भर इकाई के रूप में व्यवहार दर्शाते हैं।

(urban agglomerations) तापमान बढ़ाते हैं, निम्न स्तर पतन दर को गहरा करते हैं, समतल पवनों को धीमा करते हैं और ऊपर की ओर झोंके (updraft) को प्रेरित करते हैं। शहरीकरण से विक्षोभ, बादल का बनना तथा कुहरा अधिक होता है और यह सतह के समीप आर्द्रता को कम करता है। प्रदूषकों का एक से कई गुणा परिमाप बढ़ जाता है। वे सौर्य विकिरण की तीव्रता, दृश्यता को कम करते हैं तथा सूर्य प्रकाश के काल को घटाते हैं। उनका बादलों के बनने तथा शहरों पर व आस-पास वर्षा पर प्रभाव अब तक अनिश्चित सा हैं लेकिन प्रमाण वर्षण के संदीपन के कुछ-कुछ मामले तथा कुछ उसकी रोक के मामले दर्शाते हैं। यद्यपि शहर के प्रदूषण पिच्छकों की कभी-कभी कई सौ किलोमीटरों तक जानकारी रखी जाती है, वर्तमान में कुछ किलोमीटर या कुछ दसियों किलोमीटर तक भी शहर का मौसम संबंधी चरों (variables) पर प्रभाव प्रभावित रूप में नहीं देखा गया है। लेकिन जब शहर महानगरीय विस्तार (conurbations) में विकसित होते हैं तब यह पहले ही देखा जा सकता है कि इनमें काफी क्षेत्रीय मौसम के प्रभाव देखे जा सकते हैं।

आइए, शहरीकरण के विभिन्न मौसम संबंधी प्राचलों पर प्रभावों को समझने का प्रयत्न करें जो वायु प्रदूषण (अथवा इसके प्रबंधन) के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण हैं। यह निम्न चर्चित सभी कारकों का ग्रामीण क्षेत्रों के प्रति एक तुलनात्मक वर्णन करता है।

तापमान

शहरी क्षेत्रों में हरियाली की कमी होती है और मनुष्य की गतिविधियों के कारण विकसित CO_2 जैसी ऊष्मा अवशोषित करने वाली कई गैसें होती हैं। इसके परिणामस्वरूप शहरों में ऊष्मा के गुम्बद से बन जाते हैं जो वायुमंडल में एक गर्म टोप के समान होते हैं। इनके तापमान आस-पास के क्षेत्र के तापमान की तुलना में करीब-करीब 5°C अधिक होते हैं और ऐसे शहरों को **उष्ण द्वीप** (heat islands) कहा जाता है। पुणे, मुम्बई, कोलकत्ता तथा दिल्ली के चलते-फिरते सर्वेक्षणों (mobile surveys) तथा शहरी जलवायवीय प्रेक्षणों (climatological observations) के नेटवर्क के प्रेक्षणों के समतापीय विश्लेषण से गर्म पॉकिटों एवं ठंडे तालाबों की उपस्थिति का पता चलता है। उष्ण द्वीप की तीव्रता जनसंख्या तथा शहर के आकार का फलन होती है। गर्म पॉकिटों की तीव्रता, आकार तथा आकृति और स्थिति का पवन गति और दिशा के संदर्भ में अध्ययन किया गया है।

यह भली प्रकार ज्ञात है कि शहर का केन्द्र जो उष्ण द्वीप बनाता है, अपने ग्रामीण पर्यावरण की तुलना में अधिक गर्म है। सूर्यास्त के बाद ऊष्मा उत्पन्न होती है। उष्ण द्वीप का विकास और तीव्रता शहरी और ग्रामीण पर्यावरण की शीतलन की दरों पर निर्भर करता है। अत्यंत भिन्न सतहों के कारण शहरी-ग्रामीण पर्यावरण का शीतलन एक दूसरे से काफी भिन्न होता है और उष्ण द्वीप की तीव्रता रात के समय के साथ परिवर्तित होती है जो न्यूनतम तापमान के समय अधिकतम हो जाती है। दिन के समय विशेषकर सूर्योदय और दोपहर के समय शहरी और गैर शहरी दोनों तापमान लगभग समान होते हैं। तापमान का ऊँचाई के साथ परिवर्तन विशेषकर रात के समय काफी भिन्न होता है। खुले प्रदेश में विकिरण व्युत्क्रम रात के समय विद्यमान होते हैं जिसमें पतन स्थितियों के ऊपर विकिरण व्युत्क्रम परत होती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

आर्द्रता

परम आद्रता : वायु के प्रति इकाई आयतन में जल वाष्प की मात्रा, सामान्यतः प्रति घन मीटर में किलोग्राम के रूप में अभिव्यक्ति की जाती है।

शहरों में आंशिक रूप से उच्च तापमान के कारण कम सापेक्ष आद्रताएँ (relative humidities) होती हैं, लेकिन शहरों में वर्षण के तीव्रता से बह जाने के कारण परम आद्रता (absolute humidity) भी कम होती है। शहरों में विद्यमान कम वनस्पति से भी वाष्पोत्सर्जन प्रक्रियाओं (evapotranspiration processes) द्वारा प्राप्त नमी कम हो जाती है। विद्यमान तापमान का फलन होने के कारण सापेक्ष आर्द्रताएँ, सामान्यतः शहरी उष्ण द्वीपों की स्थानीय तीव्रता के व्युत्क्रमी संबंध में होती हैं। औसतन शहरी-ग्रामीण भिन्नताएँ 5% के बराबर होती हैं लेकिन भिन्न-भिन्न रातों में ये अन्तर 20-30% तक हो सकते हैं।

वर्षण

वर्षण सबसे अधिक परिवर्तनशील मौसम संबंधी प्राचल होता है इसलिए शहरी तथा गैर शहरी क्षेत्रों में महत्वपूर्ण अंतर स्थापित करना कठिन होता है। फिर भी, कई अध्ययनों से पता चला है कि शहर के अंदर वर्षण की अधिक मात्रा और/अथवा वर्षण की आवृत्ति अधिक होती है। कुछ अध्ययनों के अनुसार सप्ताह के अन्य दिनों की तुलना में रविवार के दिन कम बढ़ोतरी होती है।

शहरों के ऊपर बढ़े हुए वर्षण का मुख्य संभव कारण है शहरों के ऊपर वायु प्रदूषकों के कारण संघनन नाभिक (condensation nuclei) का बनना तथा सतह के खुरदरेपन और शहर से ऊष्मा की मुक्ति दोनों के कारण शहर के ऊपर बढ़े विक्षोभ के कारण। यद्यपि वायु में जल वाष्प संघनन स्रोतों से संकलित होते हैं फिर भी इससे मुख्य प्रभाव लाने लायक महत्वपूर्ण वर्षण जल के संकलन की अपेक्षा नहीं की जाती है।

बदली (cloudiness)

जलवायवीय रिकॉर्डों से पता चलता है कि बादल आवरण थोड़े से बढ़े हुए हैं - ये प्रेक्षण काफी व्यक्तिनिष्ठ (subjective) होते हैं। कोई भी वृद्धि मुख्यत: शहरी कुहरे के कारण हो सकती है, क्योंकि प्रात: काल के बादल का आवरण सबसे अधिक दिखता है। लगभग सभी बड़े शहरों के स्पष्ट दिन प्रेक्षित आस-पास के ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में कम होते जाते हैं। प्राथमिक प्रभाव वायु प्रदूषण द्वारा संकलित संघनन नाभिकों के बनने तथा अतिरिक्त जल वाष्प के मुक्त होने के कारण अपेक्षित होते हैं।

पवन (wind)

शहरी जलवायु पवन द्वारा काफी प्रभावित होती है। तटों पर स्थित शहर भूमि एवं समुद्र की हवाओं से प्रभावित होते हैं। अंतर्देशीय स्टेशन अवरोही (katabatic) अर्थात् नीचे की ओर जाती / आरोही (anabatic) अर्थात् ऊपर की ओर जाती पवनों द्वारा प्रभावित हो सकते हैं यदि वे पहाड़ियों के अथवा अन्य वायु बहावों के पैटर्नों के समीप हों। यह भूस्थल के लक्षणों तथा आस-पास की भूमि, जल तथा वनस्पति के वितरण पर निर्भर करता है। इन स्थानीय पवन प्रभावों पर अध्यारोपित (superimposed) हैं विद्यमान पवन के प्रभाव जो समय-समय पर निम्न दाब क्षेत्रों, अवनमन (depressions) अथवा तूफानों जैसे संक्षिप्त तंत्रों (synoptic systems) द्वारा रूपांतरित बड़े पैमाने के परिसंचरणों (circulations) का एक हिस्सा होती हैं। आराम के दृष्टिकोण से पवन शहरी जलवायु को प्रभावित कर सकती है। उदाहरण के लिए, सर्दी के दिन प्रबल पवन 'पवन शीतलन' (wind chill) प्रभाव द्वारा असुविधा को बहुत अधिक बढ़ा सकती है। दूसरी तरफ, गर्म तेज सूर्य वाले दिन अच्छी हवा वाष्पण शीतलन (evaporative cooling) करके मनुष्य को काफी आराम पहुँचा सकती है। शहर में सुबह-सुबह बहने वाली मंद पवन सर्दी के मौसम में उष्ण द्वीप के विस्तार और तीव्रता को परिवर्तित कर सकती है।

संक्षिप्त तंत्र : वायुमंडल के काफी बड़े क्षेत्र पर लगभग समकालिक (simultaneous) रूप से प्राप्त डाटा या उससे संबंधित।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

शहर के ऊपर सामान्यत: विद्यमान पवन के प्रभाव के अलावा वायु के बहाव के कुछ और पहलुओं को भी ध्यान में रखना होता है। शहरी पर्यावरणों में ऐसी संरचनाएँ होती हैं जो एक रोक का कार्य करती हैं और वायु के बहाव के पैटर्न को परिवर्तित करके भँवर (eddies) उत्पन्न कर सकती हैं जिससे एकदम पड़ोस का क्षेत्र प्रभावित होता है। इसलिए शहरी जलवायु पर वायु का बहाव एक जटिल समस्या है और विशिष्ट शहरों के संदर्भ में विस्तृत अध्ययनों की आवश्यकता है।

विकिरण

शहरों के अंदर ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में सौर्य विकिरण में कमी 15% से 20% की होती है। यह वायुमंडल में कणों के अवशोषण, परावर्तन (reflection) तथा प्रकीर्णन (scattering) तथा गैसों के अवशोषण के कारण होता है। ये कण तथा गैसें मुख्यत: वायु प्रदूषण के कारण उत्पन्न होते हैं। इससे पराबैंगनी विकिरणें सबसे अधिक और अवरक्त विकिरणें सबसे कम प्रभावित होती हैं। यह पराबैंगनी विकिरणों के बैक्टीरियानाशक (bactericidal) प्रभाव के कारण महत्वपूर्ण होता है। शहरी क्षेत्रों में सूर्य की रोशनी 5 से 15% तक कम हो जाती है।

दृश्य विस्तार (visual range)

शहरी क्षेत्रों में दृश्यता (visibility) का कम होना संभवत: शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच स्पष्ट मौसम संबंधी भिन्नताओं के कारण है। शहर और ग्रामीण स्थानों की स्पष्टता के प्रेक्षणों की तुलना से प्रदर्शित होता है कि शहरों में पड़ोसी ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक कुहरा, धूम तथा निम्न दृश्यता होती है। हाल के अध्ययनों से पता चला है कि कई शहरों में दृश्यता कम होने की प्रवृत्ति प्रदर्शित हुई है। खत्म होती दृश्यता के मुख्य कारण बढ़ता औद्योगिकीकरण एवं बढ़ी हुई जनसंख्या है।

बोध प्रश्न

7) निम्नलिखित को उपयुक्त उत्तर का चयन करके पूर्ण कीजिए।
   उष्ण द्वीप को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया जा सकता है।
   i) अत्यंत तापमान वाला द्वीप
   ii) ऐसा क्षेत्र जिसका तापमान आस पास के क्षेत्र से अधिक होता है तथा जनसंख्या तथा शहर के आकार पर निर्भर करता है।
   iii) विशेषकर शहरी क्षेत्रों में हरियाली के बिना क्षेत्र

बोध प्रश्न

8) बताइए कि आस पास के ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में शहरी इलाकों के कुहरा उच्च आवृत्तियों में बनता है अथवा निम्न आवृत्तियों में। कारण भी बताइए।

8.8 सारांश

मौसम विज्ञान वायुमंडल का विज्ञान है और उसमें सम्मिलित भौतिक नियमों से संबंधित है। विभिन्न प्राथमिक तथा द्वितीयक मौसम संबंधी कारक वायु प्रदूषण को काफी सीमा तक प्रभावित करते हैं तथा इस प्रकार पृथ्वी पर सारे जीवों को प्रभावित करते हैं। प्राथमिक प्राचलों में पवन दिशा तथा गति, तापमान, वायुमंडलीय स्थिरता और मिश्रित ऊँचाई सम्मिलित हैं। आर्द्रता, वर्षण, दाब तथा सौर्य विकिरण द्वितीयक प्राचल बनाते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

किसी भी नए उद्योग की योजना बनाने के लिए उस क्षेत्र के ऊपर विद्यमान मौसम संबंधी कारक अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं और उन्हें स्थान, रूपरेखा तथा परिचालन के दृष्टिकोण से ध्यान में रखना चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में शहरी क्षेत्रों में शहरीकरण तथा विभिन्न मौसम संबंधी प्राचलों के वितरण का प्रभाव काफी सुस्पष्ट होता है तथा शहरी क्षेत्रों में वायु प्रदूषण को कम करने के लिए विचाराधीन तरीके से इनका ध्यान रखने की आवश्यकता है।

8.9 अंत में कुछ प्रश्न

1) शुष्क रूद्धोष्म पतन दर का लगभग मान कितना होता है? पर्यावरणीय पतन दर से यह किस प्रकार भिन्न है ?
2) यांत्रिक तथा ऊष्मीय विक्षोभ के बीच अंतर स्पष्ट कीजिए।
3) दिन के समय की पवन के विशिष्ट लक्षणों को लिखिए।
4) वर्षा प्रक्षालन और प्रक्षाल वाटिका के बीच अंतर स्पष्ट कीजिए।
5) भूमि और समुद्री हवा के मुख्य कारण क्या हैं?
6) संवातन गुणांक क्या है?
7) प्रभावी स्तंभ ऊँचाई को बढ़ाने के संभव तरीके लिखिए।
8) सापेक्ष आर्द्रता और प्रदूषकों पर शहरीकरण का क्या प्रभाव होता है?
9) मनुष्य की सुविधा के दृष्टिकोण से सर्दियों और गर्मियों में उच्च पवन गति की भूमिका क्या है?
10) पिच्छक के ऊपर बढ़ने पर परिवेशी तापमान का क्या प्रभाव होता है?

8.10 उत्तर

बोध प्रश्न

1) i) संवहन तथा परिवहन
   ii) दिन, रात
   iii) कम
   iv) भूमि, समुद्री
2) i) 2)
   ii) 3)
   iii) 1)
3) ii)
4) क) ✓ ख) × ग) ✓ घ) ✓
5) क) सुगम्य पिच्छक
   ख) छल्लेदार पिच्छक
   ग) शंक्वाकार पिच्छक

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

6) प्रभावी स्तंभ ऊँचाई भौतिक स्तंभ ऊँचाई और निकास वेग के कारण ऊँचाई गुणांक का योग होता है। यदि ऊँचाई गुणांक ऋणात्मक है (अर्थात्, स्तंभ गैस का तापमान परिवेशी तापमान की तुलना में कम होता है), जल वाष्प के वाष्पीकरण से प्रभावी स्तंभ ऊँचाई में वृद्धि होती है और यह नीचे की ओर प्रक्षालन का कारण होता है।
7) ii)
8) उच्च आवृत्तियाँ। औद्योगिकीकरण और बढ़ी हुई जनसंख्या उच्च आवृत्तियों का कारण होते हैं।

अंत में कुछ प्रश्न

1) 1°C / 100 m शुष्क रूद्धोष्म पतन दर वायुमंडल में ऊपर की ओर बढ़ते अथवा नीचे की ओर जाते वायु के अंश के तापमान के परिवर्तन की दर होती है जबकि पर्यावरणीय पतन दर किसी दिए गए समय पर वायु के तापमान में परिवर्तन होती है।

2) यांत्रिक विक्षोभ : यह नीचे की सतहों के खुरदरेपन अथवा असमानता के कारण प्रेरित होते हैं।

   ऊष्मीय विक्षोभ : यह वायुमंडल की स्थिरता से प्रेरित होता है।

3) रात के समय की तुलना में दिन के समय में पवन की गति में परिवर्तन तथा ऊँचाई के साथ घुमाव कम होते हैं क्योंकि दिन के समय अधिक लंबवत् मिश्रण होता है।

4) प्रक्षाल वाटिका वायुमंडल से गिरती हुई वर्षा की बूँदों द्वारा कणमय के अपरोधन (interception) और फलस्वरूप उनके निकल जाने के कारण होती है। जबकि वर्षा का प्रक्षालन वायुमंडल से बादल के कणों द्वारा कणमय के विकसित होने और वर्षा की बूँदों के रूप में गिरने से पहले उसके इकट्ठे होने और फलस्वरूप उनके निकलने के कारण होता है।

5) भूमि और जल की विभिन्न ऊष्मा क्षमता।

6) यह परत में मिश्रित ऊँचाई और औसत पवन गति का गुणांक होता है।

7) इसे पिच्छक के निकास वेग को बढ़ाकर किया जा सकता है जिससे स्तंभ गैस के तापमान में वृद्धि और लम्बा स्तंभ बन जाता है।

8) यह सापेक्ष आद्रता को कम करता है और वायु प्रदूषण को बढ़ाता है।

9) सर्दियों में उच्च पवन गति पवन शीतलन से असुविधा पहुँचाती है जबकि गर्मियों में इसके कारण ही वाष्पीकरणी शीतलन होता है और मनुष्य को काफी आराम पहुँचता है।

10) स्तंभ के ऊपर पिच्छक की वृद्धि स्तंभ गैस के तापमान और परिवेशी वायु के तापमान के बीच अंतर के समानुपाती होती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इकाई 9 वायु प्रदूषक

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
9.2 वायु प्रदूषण परिघटना
वायु प्रदूषक : सामान्य रूप
9.3 वायु प्रदूषकों का वर्गीकरण
प्राकृतिक और मानवजनिक प्रदूषक
कणिकीय और गैसीय प्रदूषक
प्राथमिक और द्वितीयक प्रदूषक
स्थिर और गतिशील स्रोत प्रदूषक
परिवेश वायु और भीतरी वायु प्रदूषक
9.4 मानव स्वास्थ्य पर वायु प्रदूषकों का प्रभाव
कार्बन मोनोक्साइड
नाइट्रोजन के ऑक्साइड
हाइड्रोकार्बन
सल्फर के ऑक्साइड
निलंबित कणिकीय पदार्थ
9.5 जानवरों पर वायु प्रदूषकों का प्रभाव
आर्सेनिक
फ्लुओराइड
सीसा
कीटनाशी और पीड़कनाशी
9.6 वनस्पति पर वायु प्रदूषकों का प्रभाव
सल्फर डाइआक्साइड
ओज़ोन
नाइट्रोजन डाइआक्साइड
पेरॉक्सी ऐसीटिल नाइट्रेट
फ्लुओराइड
ऐथिलीन
9.7 पदार्थों पर वायु प्रदूषकों का प्रभाव
फेरस धातुएं
ऐलुमिनियम और ऐलुमिनियम मिश्रातु
तांबा और चाँदी
भवन सामग्री
चमड़ा
कागज
वस्त्र
9.8 दृश्यता पर वायु प्रदूषकों का प्रभाव
9.9 सारांश
9.10 अंत में कुछ प्रश्न
9.11 उत्तर
परिशिष्ट - वायु प्रदूषण घटनाएं

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

9.1 प्रस्तावना

इस खंड की पहली इकाई में आपने वायुमंडल के स्वभाव और महत्व का अध्ययन किया। वायुमंडल अथवा वायु एक महत्वपूर्ण साधन है जो पृथ्वी में जीवन को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। मनुष्य जीवित रहने के लिए पूर्णतया वायु पर निर्भर करता है। औसत वयस्क को प्रतिदिन 1.5 किग्रा भोजन और लगभग 2 किग्रा जल की आवश्यकता होती है किन्तु वायु की आवश्यकता बहुत अधिक, लगभग 14 किग्रा प्रति दिन होती है। यदि तीनों का मिलना बंद हो जाए तो हवा की कमी सबसे अधिक खतरनाक होगी। अनुमान है कि मनुष्य भोजन के बिना 5 सप्ताह तक, जल के बिना 5 दिन तक किन्तु हवा के बिना 5 मिनट ही जीवित रह सकता है। यदि हवा के कुछ घटकों की मात्रा एक सीमा से कम अथवा अधिक हो जाए तो वायु प्रदूषित हो जाती है और ऐसे घटकों को वायु प्रदूषक कहते हैं। पिछली इकाई में आपने उन मौसम विज्ञान संबंधी कारकों के बारे में पढ़ा जो इन प्रदूषकों के विसरण और परिवहन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इस इकाई में हम विभिन्न प्रकार के वायु प्रदूषकों तथा मानव स्वास्थ्य, जानवरों, वनस्पति और अन्य पदार्थों पर पड़ने वाले उनके प्रभावों का अध्ययन करेंगे। इस खंड की अगली और अंतिम इकाई में वायु प्रदूषकों के मानीटरन और नियंत्रण का उल्लेख किया गया है जो मनुष्यों और अन्य जीवित प्राणियों के कल्याण के लिए आवश्यक है।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप,

- वायु प्रदूषण परिघटना की व्याख्या कर सकेंगे,
- वायु प्रदूषकों के विभिन्न रूपों की परिभाषा दे सकेंगे,
- विभिन्न प्रदूषकों का उनके स्वभाव, उद्गम, स्रोत आदि के आधार पर वर्गीकरण कर सकेंगे,
- मनुष्यों, जानवरों, वनस्पति, पदार्थों और दृश्यता पर वायु-प्रदूषकों के प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे।

9.2 वायु प्रदूषण परिघटना

वायु प्रदूषण का अर्थ 6 बाहरी वायुमंडल में धूल, धूम, गैस, धूमिका (mist), गंध, धुआं अथवा वाष्प की उपस्थिति जिसकी मात्रा अथवा अवधि इतनी अधिक हो कि वह मनुष्यों, पौधों, जानवरों अथवा संपत्ति के लिए हानिकारक हो अथवा जीवन या संपत्ति के उपयोग में अनावश्यक रूप से बाधा उत्पन्न करें। जो वायु सामान्य अवयवों के निष्कासन से कम उपयोगी हो जाती है उसे भी प्रदूषित वायु कहते हैं। इसके अलावा घर के अंदर की वायु भी प्रदूषित होती है जो घर के अंदर की परिस्थितियों पर निर्भर करती है। इसका अध्ययन आप अनुवर्ती भाग में करेंगे।

MAADHYAM IAS

वायु प्रदूषण नई परिघटना नहीं है। प्रारंभ में गुफाओं में रहने वाले आदमी ने भी गर्म रहने और पकाने के लिए आग की खोज की तो उसे भी अवांछित धुएं के कारण सांस लेने में कठिनाई हुई। इसके कारण उसने गुफा छोड़ दी और रहने के लिए हवादार (संवातित) झोपड़ी बनाई तथा अवांछित धुएं के निकलने का मार्ग बनाकर आग का पूरा लाभ उठाया। शहरीकरण और उद्योगों के आरंभ होने तक यह समस्या का आसान हल था। किन्तु उसके बाद समस्या अंदर से बाहर आ गई अर्थात् प्रदूषण की समस्या घर की न रहकर शहर की हो

गई। संवातन के बाद वायु को स्वच्छ रखने के लिए अगला प्रयास चिमनियों की ऊँचाई बढ़ाना था ताकि धुआं अधिक ऊँचाई पर बाहर निकले और विसरित होकर दूर बह जाए। किन्तु जनसंख्या में तेजी से वृद्धि, औद्योगिकीकरण और वाहनों के बढ़ते उपयोग ने वायुमंडल की धुआं अवशोषित करने की क्षमता कम कर दी है। आज वायु प्रदूषण की मात्रा बढ़ने से संकट की स्थिति पैदा हो गई है। इससे शहरों में लोगों का स्वास्थ्य और कल्याण खतरे में है बल्कि दुनियाभर में इसका प्रभाव पड़ रहा है। जैसा पिछली इकाई में बताया गया है ओज़ोन की परत के ह्रास से भूमंडल गर्म हो रहा है। वायु-प्रदूषण अनेक पौधों और जानवरों के अस्तित्व के लिए खतरा बन गया है जिससे अंततोगत्वा मानव जाति का अस्तित्व ही संकट में पड़ सकता है।

वायु प्रदूषकों को स्रोतों, वर्गीकरण और प्रभावों के बारे में पढ़ने से पहले आइए उनके सामान्य रूपों की जानकारी प्राप्त करें।

9.2.1 वायु प्रदूषक : सामान्य रूप

वायु प्रदूषकों की सूची बहुत लंबी है। इसके अंतर्गत धुआं, धूल, धूमिका और अन्य कणिकीय पदार्थ, सल्फर डाइआक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड, ऑक्सीकारक तथा अन्य गैसें आदि परंपरागत प्राचलों के अलावा ध्वनि, गर्मी अथवा सर्दी, कुहरा, रेडियोऐक्टिवता, आधिक्य विकिरण (पराबैंगनी, दृश्य और माइक्रोवेव) आदि प्राचल भी होते हैं जो नीचे दी गई वायु प्रदूषकों की परिभाषा को संतुष्ट करते हैं।

वायु संदूषक अथवा प्रदूषकों के सामान्य रूप नीचे दिए गए हैं :

$1\mu m = 10^{-6}$ मीटर

ऐरोसॉल (aerosols) : वायु अथवा गैस जिसमें साधारणत: 500 μm अथवा 0.5 mm से कम व्यास के कण निलंबित रहते हैं।

धूल (dust) : चट्टान, अयस्क, धातु, ऊन, लकड़ी, अनाज आदि कार्बनिक अथवा अकार्बनिक पदार्थों के इस्तेमाल, दलन, पेषण, तीव्र संघट्टन के अधिस्फोटन से उत्पन्न ठोस कण। धूल केवल स्थिर वैद्युत बलों के प्रभाव से उर्णित होती है अन्यथा नहीं। वह वायु में भी विसरित नहीं होती है बल्कि गुरूत्व के प्रभाव से नि:सादित हो जाती है।

फ्लाई ऐश (fly ash): ये राख के कण होते हैं जो दहन गैसों में आरूढ़ होकर वायु में चले जाते हैं।

कुहरा (fog) : भूमि के पास द्रव की छोटी-छोटी बूंदों का ऐरोसॉल। यह बादलों से भिन्न है जो भू-पृष्ठ से बहुत ऊपर बनते हैं।

धूम (fumes): गलित धातुओं आदि के वाष्पन के बाद गैसीय अवस्था से संघनन द्वारा उत्पन्न ठोस कण जिनके साथ ऑक्सीकरण आदि रासायनिक अभिक्रिया होती है। धूम उर्णित (flocculate)और कभी-कभी सम्मिलित हो जाते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

गैसें : आकाररहित तरल जो बंद स्थान को घेरते हैं जिन्हें दाब बढ़ाकर और ताप घटाकर द्रव अथवा ठोस रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। गैसों का विसरण होता है।

धुंध (haze) : वायु में अवमाइक्रोमीटर आमाप वाले कणों का निलंबन जो दूरवर्ती बडी वस्तुओं को अदृश्य बना देता है।

धूमिका (mist) : गैसीय अवस्था से द्रव अवस्था में संघनन अथवा द्रव को परिक्षिप्त अवस्था में विभक्त करने से उत्पन्न निलंबित द्रव की बूँदें। यह विभाजन बौछार, फेनन अथवा कणीकरण से होता है।

dB पैमाना, डेसिबेल पैमाना है जो ध्वनि की तीव्रता और प्रबलता को मापने के लिए प्रयुक्त होता है।

$$1\,dB = 10 \log_{10} = \frac{\text{मापी गई तीव्रता}}{\text{संदर्भ तीव्रता}}$$

रव (noise): वायुमंडलीय दाब के द्रुत और स्थानीय उच्चावचन के कारण कान में पड़ने वाले प्रभाव को ध्वनि कहते हैं। अवांछित ध्वनि को रव कहते हैं। उसकी अवधि, तारत्व और प्रबलता मनुष्यों में अशान्ति उत्पन्न करते हैं। सामान्यतया मनुष्य के कान 0 dB से 150 dB तक, ध्वनि स्तर के लिए सुग्राही होते हैं। 70 से 80 dB का ध्वनि का स्तर उत्तेजना और शारीरिक विक्षोभ उत्पन्न करता है। 0 dB पर मनुष्य को सुनाई देना आरंभ होता है अर्थात् इस स्तर पर उत्पन्न सबसे हल्की ध्वनि को मनुष्य के कान सुन सकते हैं।

विकिरण : वैद्युत चुंबकीय विकिरण और वे कणिकामय उत्सर्जन जो 'किरणों' के वर्ग में आते हैं।

रेडियोऐक्टिवता : परमाणुओं का नाभिकीय विघटन जिससे आयनकारी विकिरण प्राप्त होते हैं।

स्मेज (smaze): धुएं और धुंध का मिश्रण। इस शब्द का प्रयोग प्रकाश रासायनिक धूम-कुहरा के लिए किया जाता है किन्तु अधिक प्रयुक्त नहीं होता है।

धूम-कुहरा (smog): धूम और कुहरे का मिश्रण। इस शब्द का निर्माण इंगलैंड में हुआ। आजकल इसका प्रयोग लास एंजेल्स में प्रेक्षित प्रकाश रासायनिक ऐरोसॉलों के लिए किया जाता है।

धुआं : कोयला, तेल, डामर और तंबाकू आदि कार्बनमय पदार्थों के अपूर्ण दहन से उत्पन्न कार्बन अथवा काजल के कण (जिनका व्यास प्राय : <0.1 मिमी से कम होता है।)

बोध प्रश्न

1) दिए गए विकल्पों में से सबसे उपयुक्त उत्तर का चयन कीजिए।

वायु प्रदूषित कहलाती है, यदि,

i) वायुमंडल कुहारायुक्त दिखाई दे और कम दृश्यता हो,

ii) वायुमंडल के अवयवों की आवश्यकता से अधिक सान्द्रता हो,

iii) कारखानों की चिमनियों से बहुत अधिक धुआं निकले,

iv) मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पडे।

9.3 वायु प्रदूषकों का वर्गीकरण

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

पदार्थ का कोई भी प्राकृतिक अथवा कृत्रिम रूप जो वायु में विद्यमान हो सकता है, प्रदूषक होता है। प्रदूषक ठोस कणों, द्रव बूँदों, गैसों अथवा इन रूपों के अधिमिश्रण के रूप में पाए जाते हैं। वायु प्रदूषकों के वर्गीकरण की कोई विशिष्ट विधि नहीं है। संदर्भ और परिप्रेक्ष्य के अनुसार उन्हें निम्नलिखित मानदंडों के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। यद्यपि विस्तृत सूची उपलबध नहीं है, अपितु वर्गीकरण की सर्वाधिक प्रयुक्त विधियां इस प्रकार हैं :

- उत्पत्ति
- भौतिक अवस्था
- उत्पादन
- स्रोत का प्रकार
- प्रभाव क्षेत्र

इन विधियों के अंतर्गत आने वाले मानदंडों और संवर्गों की चर्चा निम्नलिखित उप-भाग में की गई है।

9.3.1 प्राकृतिक और मानवजनिक प्रदूषक

उद्‌गम के आधार पर वायु प्रदूषकों को मोटेतौर पर दो संवर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

प्राकृतिक प्रदूषक

ये प्राकृतिक गतिविधियों से प्राप्त होते हैं, जैसे,

- पादपों से प्राप्त पराग कण और वाष्पशील कार्बनिक यौगिक
- जीवाणु
- ज्वालामुखी उद्‌गार और कार्बनिक पदार्थों के क्षय से उत्पन्न सल्फर डाइआक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड गैस।
- जंगलों में आग लगने, मृदा अपरदन और समुद्र से प्राप्त कण।
- प्राकृतिक रेडियोऐक्टिवता

उल्लेखनीय है कि प्राकृतिक प्रदूषकों की सान्द्रता बहुत अधिक नहीं होती है और वे वायुमंडल में थोड़े समय तक रहते हैं। इसलिए उनसे वायुमंडल की स्थायी क्षति नहीं होती है।

कभी-कभी स्वयं प्रकृति वायु-प्रदूषण स्रोतों को उत्पन्न करने की दोषी होती है। यह राहत की बात है कि वह सब प्रदूषण-स्रोतों के लिए उत्तरदायी नहीं है।

मानवजनिक प्रदूषक (anthropogenic pollutants)

ये मानव गतिविधियों के कारण उत्पन्न होते हैं जैसे काजल धूम-कुहरा **(soots smog)** आदि। ये मनुष्य द्वारा संचालित औद्योगिक कार्यों से उत्पन्न होते हैं। इनके अधिक सान्द्रित होने से मनुष्य के लिए संकट बढ़ जाता है

यह अनुमान है कि मानवजनिक गतिविधियों के कारण विश्व में लगभग 2 अरब मीट्रिक टन उत्सर्जन होता है।

9.3.2 कणिकीय और गैसीय प्रदूषक

आमाप और भौतिक अवस्था के आधार पर वायु-प्रदूषकों को मोटेतौर पर दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है अर्थात् कणिकीय पदार्थ जो ठोस अथवा द्रव हो सकता है और गैसीय प्रकार जिसमें अनेक गैसें आती हैं।

कणिकीय प्रदूषक (Particulate pollutants)

कणिकीय प्रदूषक परिक्षिप्त पदार्थ होते हैं। ये ठोस अथवा द्रव होते हैं जिनके पुंज अणुओं से बड़े होते हैं (लगभग 0.0002 μm व्यास के किन्तु 500 μm से छोटे)। कणिकीय पदार्थों में ऐरोसॉल, धूम, धूल, धूमिका और काजल शामिल हैं। इनके कणों का व्यास 0.1 μm होता है जो लगभग जीवाणु का आमाप है। बिना चश्में के मनुष्य के आँख की विभेदन क्षमता लगभग 100 μm होती है। 0.1 μm से छोटे कण यादृच्छिक गति (ब्राउनी गति) करते हैं। स्कंदन से कण का आमाप बढ़कर 0.1 μm से अधिक हो जाता है। 10 μm से बड़े कण धूल के रूप में नीचे बैठ जाते हैं। 10μm आमाप वाले कण का निःसादन वेग लगभग 18 सेमी प्रति मिनट होता है। 1 μm से छोटे कण दहन के बाद वाष्पित पदार्थ के संघनन से प्राप्त होते हैं। जबकि 10 μm से बड़े कण पेषण, अपरदन आदि यांत्रिक प्रक्रमों से प्राप्त होते हैं।

MAADHYAM IAS

100 μm से कम व्यास वाले **कणिकीय पदार्थ @articulatematter) (पी.एम.)** वायु में लंबे समय तक निलंबित रहते हैं। उन्हें **निलंबित कणिकीय पदार्थ (suspended particulate matter) (एस.पी.एम.)** कहते हैं। 10 μm से कम व्यास के निलंबित कण मनुष्यों के श्वसन नली और फुफ्फुसी तंत्र में प्रविष्ट कर जाते हैं। इन्हें **श्वसनीय कणिकीय पदार्थ** (respirable **particulate matter) आर.एस.पी.एम. अथवा पी.एम.$_{10}$ (PM_{0})** कहते हैं।

शहरों में कणिकीय पदार्थ में **लोहा**, **ताँबा**, **निकैल** और **सीसे** के कण भी होते हैं। इन कणों का श्वसन तंत्र पर शीघ्र प्रभाव पड़ता है तथा पुराने श्वसन रोगियों को सांस लेने में कठिनाई होती है। लेड गैसोलीन के जलने से वायु में मौजूद सीसा मनुष्यों और अन्य जीवित प्राणियों के ऊतकों और अस्थियों में जमा हो जाता है। जब कणों का अंतश्र्वसन (inhale) किया जाता है तो उनका पड़ने वाला प्रभाव श्वसन पथ में उनके निक्षेपण स्थल पर निर्भर करता है जो स्वयं ऐरोसॉलों के भौतिक अभिलक्षणों पर निर्भर करता है।

गैसीय प्रदूषक

कार्बन आक्साइड : इनमें कार्बन डाइआक्साइड (CO_2) और कार्बन मोनोक्साइड (CO) आते हैं जो कार्बनयुक्त ईंधनों के दहन के समय बहुत अधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं। ये रंगहीन, गंधहीन और स्वादहीन गैसें हैं। कार्बन मोनोक्साइड मनुष्य के रुधिर में हीमोग्लोबिन की ऑक्सीजन वहन क्षमता में रुकावट डालता है जिससे कार्बोक्सिल विषाक्तन (carboxyl poisoning) हो जाता है। प्रति वर्ष 1 अरब मैट्रिक टन CO उत्सर्जित होती है। कार्बन डाइआक्साइड प्रकृति में पाई जाती है जिसका भूमंडलीय तापन और संबंधित परिघटनाओं पर दीर्घकालीन प्रभाव पड़ता है।

गंधक यौगिक : गंधक युक्त ईधनों के दहन से सल्फर डाइआक्साइड (SO_2) की बहुत अधिक मात्रा और सल्फर ट्राइआक्साइड (SO_3) की अल्प मात्रा प्राप्त होती है। जब ईंधनों को जलाया जाता है प्रायः गंधक, सल्फर डाइआक्साइड के रूप में परिवर्तित हो जाता है और उसकी बहुत कम मात्रा सल्फर ट्राइआक्साइड के रूप में परिवर्तित होती है। सल्फर डाइऑक्साइड की तीखी गंध होती है। प्रति वर्ष 11.4 करोड़ मीट्रिक टन सल्फर डाइआक्साइड उत्सर्जित होती है। अनेक औद्योगिक प्रक्रमों में और अपशिष्ट निपटान से हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S) उत्पन्न होती है।

नाइट्रोजन यौगिक : सबसे अधिक मात्रा में उत्पन्न और मुक्त होने वाले नाइट्रोजन यौगिक नाइट्रिक ऑक्साइड (NO), नाइट्रोजन डाइऑक्साइड (NO_2) और अमोनिया (NH_3) हैं। पहले दो यौगिक प्रकृति में जीवाणुओं द्वारा मृदा से मुक्त किए जाते हैं और साथ ही वायुमंडलीय आक्सीजन और नाइट्रोजन डाइआक्साइड की अपेक्षाकृत कम सान्द्रताएं ऊतकों को उत्तेजित करती हैं। इसकी शहरों में पाई जाने वाली सान्द्रताओं से तीव्र श्वसन रोग में वृद्धि हो जाती है। ये दोनों ऑक्साइड (NO_2) और (NO) वायुमंडलीय प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाओं में भाग लेते हैं जिसका विशेष महत्व है। प्रतिवर्ष 23 करोड़ मीट्रिक टन नाइट्रोजन ऑक्साइडों का उत्सर्जन होता है।

9.3.3 प्राथमिक और द्वितीयक प्रदूषक

उत्पादन विधि के आधार पर वायु प्रदूषकों को निम्नलिखित दो संवर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

प्राथमिक प्रदूषक

ये सीधे अभिज्ञेय स्रोतों (identifiable sources) से उत्सर्जित होते हैं तथा रासायनिक गुणधर्मों, भौतिक प्रावस्थाओं और मात्राओं के आधार पर उनका वर्गीकरण किया जाता है। इस प्रकार के प्रदूषण का मुख्य स्रोत औद्योगिक गतिविधियां और परिवहन है।

प्राथमिक प्रदूषकों के अंतर्गत वे पदार्थ (धूल, गैसें, द्रव और ठोस) आते हैं जो वायुमंडल में प्राकृतिक और मनुष्य द्वारा की जाने वाली घटनाओं द्वारा वायुमंडल में प्रविष्ट करते हैं। भार में उत्सर्जन के क्रम में वायुमंडल को प्रभावित करने वाले प्रमुख प्राथमिक प्रदूषक इस प्रकार हैं : कार्बन मोनोक्साइड, सल्फर के ऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड. वाष्पशील कार्बनिक

यौगिक, कणिकीय पदार्थ। प्रदूषक ऑक्साइडों और कणिकीय पदार्थों की चर्चा उप-भाग 9.3.2 में की गई है।

वाष्पशील कार्बनिक यौगिक (volatile organic compounds): वे कार्बनिक अणु जो मुख्यत: कार्बन और हाइड्रोजन परमाणुओं के बने होते हैं। उन्हें हाइड्रोकार्बन कहते हैं। वायुमंडल में मुक्त होने वाला प्रमुख वाष्पशील कार्बनिक यौगिक मेथेन हैं। मेथेन मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए कोई सीधा खतरा प्रस्तुत नहीं करती है। किन्तु यह **ग्रीनहाउस प्रभाव** (इकाई 7, भाग 7.6) द्वारा **भूमंडलीय तापन** (global warming) में योगदान करता है। वायुमंडल में मुक्त होने वाले अन्य वाष्पशील कार्बनिक यौगिक बेन्जीन और फार्मेल्डिहाइड **कैन्सरजन** (carcinogenic) होने के कारण मानव स्वास्थ्य के लिए बहुत खतरनाक हैं।

द्वितीयक प्रदूषक

ये वायु में दो अथवा अधिक प्राथमिक प्रदूषकों के परस्पर अभिक्रिया से अथवा सामान्य वायुमंडलीय अवयवों के साथ अभिक्रिया से उत्पन्न होते हैं। जिसमें अभिक्रियाएं प्रकाश सक्रियण हो भी सकता है और नहीं भी। आबादी क्षेत्र के ऊपर कुल प्रदूषण वायु द्रव्यमान रसायनत: और भौतिकत: अस्थायी होता है। इस प्रदूषित वायु में कुछ प्रदूषक सरल और जटिल अभिक्रियाओं द्वारा द्वितीयक प्रदूषक उत्पन्न करते हैं। इसके विशिष्ट उदाहरण हैं : ओज़ोन का बनना, प्रकाश रासायनिक धूम, कुहरा और अम्ल निक्षेपण द्वितीयक प्रदूषक गंभीर समस्या उत्पन्न करते हैं। आइए, पढ़ें कि वे कैसे बनते हैं?

ओज़ोन : ओज़ोन सौर ऊर्जा द्वारा होने वाला द्वितीयक वायुमंडलीय अभिक्रियाओं का उत्पाद है। आपने इकाई 7 में ओज़ोन परत और विश्व परिघटना के रूप में उसके क्षय होने के बारे में पढ़ा। ओज़ोन के दो प्रकार होते हैं। जो इस बात पर निर्भर करता है कि वह कहाँ पाया जाता है। **उत्कृष्ट ओज़ोन** प्राकृतिक तौर पर पृथ्वी के ऊपरी वायुमंडल (10-15 km) में पायी जाती है। उसे उत्तम ओज़ोन कहने का कारण यह है कि वह रक्षा परत बनाती है जो सूर्य की हानिकारक पराबैंगनी किरणों से हमारी रक्षा करती है। **निकृष्ट ओज़ोन** निचले वायुमंडल में बनता है जबकि विभिन्न स्रोतों से उत्पन्न प्रदूषक सूर्य की रोशनी में रसायनत: अभिक्रिया करते हैं। संबंधित अभिक्रियाए नीचे प्रकाश रासायनिक धूम-कुहरा के अंतर्गत दी गई हैं।

प्रकाश रासायनिक धूम-कुहरा (photochemical smog): कोयले के जलने से उत्पन्न धुआं और सल्फर डाइआक्साइड, कुहरे के संयुक्त होकर औद्योगिक **धूम-कुहरा** (industrial smog) बनाते हैं। उच्च सान्द्रताओं में औद्योगिक धूम-कुहरा, मनुष्यों और अन्य जीवित प्राणियों के लिए अत्यंत आविषालु होता है। औद्योगिक धूम कुहरे से संबंधित घटनाओं के लिए लंदन, दुनिया भर में प्रसिद्ध है। आजकल कोयले के स्थान पर अन्य जीवाश्म ईंधन, परमाणु शक्ति और जलविद्युत के उपयोग से औद्योगिक धूम कुहरे का बनना बहुत कम हो गया है किन्तु गैसोलीन आदि अन्य जीवाश्म ईंधनों के जलने से अल्प प्रदूषण समस्या उत्पन्न हो जाती है जिसे **प्रकाश रासायनिक धूम-कुहरा** कहते हैं। प्रकाश रासायनिक धूम कुहरे की स्थिति तब आती है जब प्राथमिक प्रदूषक, सौर विकिरण के प्रभाव में 180°C से अधिक ताप पर परस्पर क्रिया करते हैं। इसमें शामिल प्राथमिक प्रदूषक, नाइट्रोजन आक्साइड और वाष्पशील कार्बनिक यौगिक हैं जिनका संबंध औद्योगिकीकरण और परिवहन से है। प्रकाश रासायनिक धूम कुहरा के आविषालु घटक **ओज़ोन (O_3)** और **पेराक्सी ऐसीटिल नाइट्रेट** (peroxy acetyl nitrate) **(पी.ए.एन.)** हैं।

लंदन में प्रसिद्ध धूम कुहरा घटना दिसम्बर 1952 में हुई जब 5 दिन तक कुहरे का मौसम रहा तथा आविषालु वायुमंडल के कारण लगभग 4000 लोगों की मृत्यु हुई।

MAADHYAM IAS

जब वायुमंडल में मौजूद ओज़ोन अथवा ऑक्सीजन के साथ नाइट्रिक ऑक्साइड अभिक्रिया करता है तो नाइट्रोजन डाइआक्साइड बनता है। नाइट्रिक ऑक्साइड (NO) वायुमंडल में ओज़ोन के साथ अभिक्रिया करता है। यह क्रिया अप्रदूषित वायुमंडल में होती है।

$$O_3 + NO \rightarrow NO_2 + O_2$$

$$O_3 + NO \rightarrow NO_2$$

दूसरी ओर सूर्य की रोशनी में नाइट्रोजन डाइआक्साइड का इस प्रकार विभाजन हो जाता है:

$$NO_2 + \text{सूर्य की रोशनी} \rightarrow NO + O$$

इस प्रकार प्राप्त ऑक्सीजन परमाणु (O) वायुमंडल में मौजूद ऑक्सीजन अणु के साथ क्रिया करके (वायुमंडल का 20.94% ऑक्सीजन होता है।) ओज़ोन उत्पन्न करता है।

$$O + O_2 \rightarrow O_3$$

नाइट्रोजन डाइआक्साइड वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों से उत्पन्न मूलकों के साथ क्रिया करके फार्मेल्डिहाइड, एक्रोलीन, पेरॉक्सी ऐसीटिल नाइट्रेट (पी.ए.एन.) आदि आविषालु उत्पाद बनाता है।

$$NO_2 \xrightarrow[\text{यौगिकों से प्राप्त मूलक}]{\text{वाष्पशील कार्बनिक}} \underset{\text{फॉर्मेल्डिहाइड}}{CH_2O} + \underset{\text{ऐक्रोलीन}}{CH_2 = CHCHO} + \underset{\text{पी.ए.एन.}}{CH_3COOONO_2}$$

प्रकाश रासायनिक धूम कुहरा का संबंध विशिष्ट जलवायु परिस्थितियों और उच्च जनसंख्या वाले स्थानों से है। लॉस एन्जलेस, न्यूयार्क, सिडनी और बैन्कोबर शहरों में प्रकाश रासायनिक धूम कुहरे की घटनाएं बहुधा होती रहती हैं।

अम्ल निक्षेपण (acid deposition): अम्ल निक्षेपण नई परिघटना नहीं है। 17वीं शताब्दी में वैज्ञानिकों ने वनस्पति और मनुष्यों पर उद्योग और अम्लीय प्रदूषण के दुष्प्रभावों को देखा। 1960 में जब मछुवारे ने देखा कि उत्तरी अमेरिका और यूरोप में मछलियों की संख्या में कमी आ गई है और अनेक तालाबों में विविधता दृष्टिगोचर हो रही है तो अम्ल निक्षेपण की समस्या अंतर्राष्ट्रीय समस्या बन गई। अम्ल निक्षेपण को अम्ल वर्षण अथवा प्रायः **अम्ल वृष्टि** (acid rain) भी कहते हैं। इस शब्द का उपयोग अम्ल प्रदूषण के आर्द्र रूपों के वर्णन के लिए किया जाता है जो बारिश, बर्फ, कुहरा और बादल वाष्प में पाया जाता है। वर्षण का पी.एच. सामान्यतया 5.0 से 5.6 होता है क्योंकि प्राकृतिक वायुमंडलीय अभिक्रियाओं में कार्बन डाइआक्साइड शामिल रहती है।

अम्ल वृष्टि शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम 19वीं शताब्दी में किया गया था जब 1872 में एंगस स्मिथ ने 'Acid Rain' नामक पुस्तक प्रकाशित की थी।

अम्ल निक्षेपण, द्वितीयक प्रदूषकों के कारण होता है जो **नाइट्रोजन के ऑक्साइडों (NO)**, अथवा **सल्फर के डाइआक्साइड (SO_2)** गैसों के ऑक्सीकरण से बनते हैं। ये गैसें वायुमंडल में मुक्त होती हैं। ये प्रदूषक क्रमशः नाइट्रिक अम्ल अथवा सल्फ्यूरिक अम्ल में परिवर्तित हो जाते हैं। इन गैसों को अम्लों में परिवर्तित करने में अनेक दिन लगते हैं और इस अवधि में ये प्रदूषक अपने मूल स्रोत से सैंकड़ों किलोमीटर दूर स्थानांतरित हो जाते हैं। कभी-कभी सीधे वायुमंडल में निष्कासित हाइड्रोक्लोरिक अम्ल भी इन प्रदूषकों के लिए उत्तरदायी होता है।

MAADHYAM IAS

सल्फर डाइआक्साइड का उत्सर्जन पूरे विश्व में 60-70% अम्ल निक्षेपण के लिए उत्तरदायी है। वायुमंडल में 90% से अधिक गंधक का स्रोत मनुष्य है। सल्फर डाइआक्साइड निम्नलिखित अभिक्रियाओं द्वारा अम्ल उत्पन्न करता है जो आर्द्र निक्षेपण के उत्पादों में सम्मिलित हैं।

$$SO_2 + H_2O \rightarrow H_2SO_3$$

$$H_2SO_3 + \tfrac{1}{2}O_2 \rightarrow H_2SO_4$$

निम्नलिखित वायुमंडलीय रासायनिक अभिक्रियाओं द्वारा नाइट्रोजन ऑक्साइडों से अम्ल बनते हैं:

$NO + ½O_2 \rightarrow NO_2$

$2NO_2 + H_2O \rightarrow HNO_2 + HNO,$

$NO_2^+ + OH- \rightarrow HNO_3$

अम्ल निक्षेपण, पर्यावरण को अनेक प्रकार से प्रभावित करता है। जलीय निकाय में अम्ल निक्षेपण से पारितंत्र का पी.एच. कम कर देता है।

वनस्पति पर अम्ल निक्षेपण के प्रभाव की तीव्रता उस मृदा की किस्म पर निर्भर करती है जिसमें पादपों की वृद्धि होती है। सिलिकामय बालू अथवा अपक्षीण अम्लीय आधार शैल की बनी मृदाओं की अपेक्षा चूना युक्त मृदाएं अम्लों को उदासीन करने के लिए उपयुक्त होती हैं। इसके प्रभाव से वृद्धि दर पुष्पन क्षमता और उपज कम होती है। इसके कारण पादप रोगों, कीटों, सूखे और तुषार के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं। अम्ल निक्षेपण का मनुष्य के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। आविषालु घटक पीने के पानी, फ़सलों, मछलियों में प्रविष्ट कर जाते हैं जिनका मनुष्य उपभोग करते हैं। इसका मनुष्य के स्वास्थ्य पर विषैला प्रभाव पड़ता है। अम्ल निक्षेपण का निर्जीव संरचनाओं पर भी प्रभाव पड़ता है, चूने के पत्थर से बनी इमारतों और लोहे तथा इस्पात की संरचनाओं पर अम्ल आसानी से आक्रमण करते हैं। कारों के पेन्ट की अम्ल-निक्षेपण के साथ क्रिया से पेन्ट का रंग फ़ीका पड़ जाता है।

आप आगरे के ताजमहल और दिल्ली में कुतबमीनार के निकट लौह स्तंभ के खराब हो जाने के बारे में सुना होगा।

बोध प्रश्न

2) नीचे प्रकाश रासायनिक धूम-कुहरे में प्रमुख रासायनिक प्रदूषकों के नाम दिए गए हैं। इन प्रदूषकों के स्रोतों को लिखिए।

रासायनिक प्रदूषक	स्रोत
नाइट्रोजन आक्साइड (NO और NO_2)	....
वाष्पशील कार्बनिक यौगिक (वी.ओ.सी.)	....
ओज़ोन (O_3)	....
पेरॉक्सी ऐसीटिल नाइट्रेट (पी.ए.एन.)	....

9.3.4 स्थिर और गतिशील स्रोत प्रदूषक

स्रोत के प्रकार के आधार पर वायु प्रदूषकों को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

स्थिर स्रोत प्रदूषक

जैसा कि नाम से स्पष्ट है ये प्रदूषक उन संरचनाओं के उत्सर्जन से उत्पन्न होते हैं जो किसी स्थान पर स्थिर रहते हैं। उत्सर्जन निम्नलिखित स्रोतों से होता है :

- औद्योगिक प्रक्रमण जैसे ईंधन दहन (कोयला, तेल, गैस)
- घरेलू ईंधन का जलना
- विद्युत् संयंत्र
- ठोस अपशिष्ट का खुले स्थान में जलना

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

गतिशील स्रोत प्रदूषक

ये गतिशील संरचनाओं के उत्सर्जन से उत्पन्न होते हैं। इनके अंतर्गत निम्नलिखित आते हैं :

- सड़क पर चलने वाली सभी प्रकार के मोटर वाहन
- राजमार्गों पर चलने वाहन जैसे ट्रक
- रेलगाड़ियां
- वायुयान

9.3.5 परिवेश वायु और भीतरी वायु प्रदूषक (Ambient air and indoor air pollutants)

प्रभाव क्षेत्र के आधार पर वायु प्रदूषकों का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकारों में किया जा सकता है।

परिवेश वायु प्रदूषक

ये वायुमंडल में असामान्य रूप से उच्च सान्द्रता में पाए जाते हैं। वे पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य को हानि पहुँचा सकते हैं। प्रमुख परिवेश वायु प्रदूषकों और उनके स्रोतों की सूची सारणी 9.1 में दी गई है।

सारणी 9.2 : प्रमुख परिवेश वायु प्रदूषक और उनके स्रोत

परिवेश वायु प्रदूषक	स्रोत
गंधक यौगिक (SO_2, SO_3, H_2S)	गंधक युक्त ईंधनों का दहन जैसे जीवाश्म ईंधन, कोयला, कागज निर्माण, नगरपालिका भस्मीकरण, धातु निष्कर्षण प्रक्रम
कार्बनिक यौगिक (संतृप्त और असंतृप्त, ऐलिफेटिक और ऐरोमेटिक हाइड्रोकार्बन)	ईंधनों, जैवसंहति का दहन, गैसोलीन टंकियों से उद्वाष्पन ; वाहितमल की सूक्ष्म जीवाणु क्रिया, कुछ औद्योगिक प्रक्रम; विलायक उद्वाष्पन
नाइट्रोजन ऑक्साइड (NO, NO_2)	ईंधनों और जैव संहति का जलना, उर्वरक उत्पादन, औद्योगिक प्रक्रम
कार्बन के ऑक्साइड (CO, CO_2)	कोयला, तेल, जैवसंहति आदि कार्बनमय ईंधनों का जलना; महासागरों में ठोस अपशिष्ट निपटान सूक्ष्मजैविक क्रिया, पौधों द्वारा प्रकाश संश्लेषण
हैलोजन यौगिक (फ्लुओराइड, क्लोरोफ्लुओरो कार्बन,	ऐरोसॉल फुहार, प्रशीतन, फोम प्लास्टिक, ज्वालामुखी उद्‌गार
एस.पी.एम. (धूल, मृदा सल्फेट लवण, भारी धातु लवण, अग्नि कण, कार्बन, द्रव फुहार, कुहासा	ईंधन, निर्माण, खनन, पत्थर दलन, औद्योगिक प्रक्रम, जंगली आग

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

भीतरी वायु प्रदूषक

ये मकानों/घरों के अंदर पाए जाते हैं। बड़े औद्योगिक शहरों में भी बाहर की वायु की अपेक्षा अंदर की वायु बहुत अधिक प्रदूषित हो सकती है। सारणी 9.3 में प्रमुख भीतरी वायु प्रदूषकों और उनके स्रोतों की सूची दी गई है।

सारणी 9.3: भीतरी वायु प्रदूषकों के स्रोत

प्रमुख भीतरी प्रदूषक	स्रोत
तबाकू का धुआं	सिगरेट, सिगार और पाइप।
कार्बन मोनोक्साइड	गैस साधित्रों का ठीक काम न करना, लकड़ी और कोयले का जलना।
नाइट्रोजन ऑक्साइड	गैस साधित्रों का ठीक काम न करना।
कार्बनिक रसायन	ऐरोसॉल फुहार, विलायक, ग्लू, अपमार्जक, कीटनाशी, पेन्ट, शलभ प्रतिकर्षी, वायु फ्रेशनर और उपचारित जल
फार्मेल्डिहाइड	दाबित काष्ठ उत्पाद जैसे प्लाइवुड और बोर्ड, फर्नीशिंग, वालपेपर, वस्त्र
श्वसनीय कण	सिगरेट, वुड स्टोव, अंगीठी, ऐरोसॉल फुहार और घर की धूल
जैव कर्मक (जीवाणु, वाइरस, कवक, माइट (बरूथी)	घर की धूल, पालतू जानवर, बेडिंग, एअर कंडीशनर जिनका रखरखाव ठीक नहीं, आर्द्र अथवा नम रचनाएं, फर्नीशिंग
ऐस्बेस्टॉस	क्षतिग्रस्त अथवा विकृत रोधन, अग्निसह्यन।
सीसा (lead)	लेड पेन्ट का खुली ज्वाला में जलना, घर की धूल
रेडॉन	इमारतों के नीचे मृदा, कुछ भू व्युत्पन्न निर्माण सामग्री और भौम जल

विश्व स्तर प्रदूषण (global scale pollution)

विश्व वायु प्रदूषण वायुमंडल की ऊपरी परतों विशेष रूप से समतापमंडल (stratosphere) में पाया जाता है। विश्व स्तरीय प्रदूषण का प्रमुख रूप भूमंडलीय तापन की समस्या है जो पिछले कुछ वर्षों में सर्वाधिक चर्चा का विषय रहा है। आपने इकाई 7 में भूमंडलीय तापन के बारे में पढ़ा। आपको याद होगा कि भूमंडलीय तापन का अर्थ है पृथ्वी का गरम होना जिससे ताप में वृद्धि होती है। अधिक ताप का हमारे पर्यावरण और जलवायु पर तीव्र प्रभाव पड़ता है। इस परिघटना के लिए ग्रीन हाउस गैसें उत्तरदायी हैं जिनमें कार्बन डाइऑक्साइड मेथेन, नाइट्रस ऑक्साइड और क्लोरोफ्लुओरोकार्बन (सी.एफ.सी.) शामिल हैं।

MAADHYAM IAS

ग्रीन हाउस प्रभाव वायु प्रदूषकों के कारण ऊष्मा के ऊपरी वायुमंडल में फंस जाने को ग्रीन हाउस प्रभाव कहते हैं। ये वायु प्रदूषक वायुमंडल को ऊष्मारोधी बना देते हैं।

भूमंडलीय तापन के परिणाम हैं, अधिक उग्र मौसम, बारिश के मौसम अधिक वर्षा का होना अधिक समय तक सूखा पड़ना तथा तीव्र और शक्तिशाली तूफान आना। यह भी कहा जाता है भूमंडलीय तापन से ध्रुवीय प्रदेशों में बर्फ पिघलने से तटीय शहरों में बाढ़ आने का भी खतरा है।

बोध प्रश्न

3) आगे सारणी में स्तंभ 'क' में दिए गए प्रदूषकों का स्तंभ 'ख' में संबंधित संवर्ग के साथ मिलान कीजिए।

क	ख
i) कणिकीय पदार्थ	i) प्राथमिक प्रदूषक
ii) सल्फर डाइआक्साइड	ii) परिवेश वायु प्रदूषक
iii) औद्योगिक क्षेत्र के ऊपर प्रदूषक गैसें	iii) द्वितीयक प्रदूषक
iv) कोयले के जलने से गैसीय प्रदूषक	iv) गतिशील स्रोत वाले प्रदूषक
v) कार चलाते समय रेचक गैसें	v) मानवजनिक प्रदूषक
vi) चिमनी से निकलने वाले गैसीय धूम	vi) अंदरी प्रदूषक
vii) घर के अंदर कोयले के जलने से उत्पन्न कार्बन आक्साइड	vii) स्थिर स्रोत प्रदूषक

4) सफेद संगमरमर का बना विश्व प्रसिद्ध आगरे का ताजमहल पिछले कुछ वर्षों से धुंधला पड़ गया है। इस विकार का मुख्य कारण बताइए।

....

....

....

9.4 मानव स्वास्थ्य पर वायु प्रदूषकों का प्रभाव

वायु में मौजूद प्रदूषक कई प्रकार से मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। मनुष्यों पर वायु प्रदूषण के सामान्य प्रभाव और उनके कारणों का संक्षिप्त उल्लेख नीचे किया गया है।

- श्वसन पथ में उत्तेजन (ऐरोसॉलों, काजल, आदि के कारण)
- फुफ्फुस (फेफड़ा) क्षति (SO_2 और SO_3 से उत्पन्न सल्फ्यूरिक अम्ल के कारण)
- मस्तिष्क और वृक्क क्षति (औद्योगिक और वाहन सीसा उत्सर्जन के कारण होने वाला सीसा विषाक्तन)
- तेज सिरदर्द और चक्कर आना (कार्बन मोनोक्साइड के कारण यदि 100 पी.पी.एम. की कम सान्द्रता हो)
- आँख और त्वचा उत्तेजन (नाइट्रोजन ऑक्साइडों, फार्मेल्डिआइड, ऐक्रोलीन भले ही 1 पी.पी.एम. की कम सान्द्रता हो)
- फुफ्फुस कैंसर (lung **cancer**) (बिन्जोपाइरीन आदि कैंसरजनों के कारण)
- दमा और श्वसनी शोथ (श्वसन पथ में रुकावट डालने वाले अनेक प्रदूषकों के कारण)

सतत् वायुमंडलीय प्रदूषण से चिरकारी अस्वस्थता और विकारों में वृद्धि हो रही है। अनेक गैसीय प्रदूषणों को सूंघकर पहचाना जा सकता है और मनुष्य कुछ सीमा तक अपने को उनके प्रभाव से बचा सकता है (यद्यपि यह सदैव संभव नहीं है)। अन्य प्रदूषकों को सूंघ कर नहीं पहचाना जा सकता है और अनजाने ही मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है। अतः आवश्यक है कि ऐसे प्रदूषकों से बचा जाए।

MAADHYAM IAS

पृथक प्रदूषकों के प्रभाव की तीव्रता अलग-अलग होती है। मनुष्य वायु में इन प्रदूषकों की उपस्थिति को एक निश्चित मात्रा तक ही सह सकता है।

अनुमेय स्तर जिसके प्रभाव में एक स्वस्थ मनुष्य किसी विपरीत प्रभाव के बिना प्रतिदिन आठ घंटे तक रह सकता है। यह देहली सीमा मान (throeshold limit values) कहलाता है। सारणी 9.3 में प्रमुख रासायनिक प्रदूषकों के देहली सीमा मान दिए गए हैं।

वायुमंडल में आविषालु प्रदूषकों का

सारणी 9.3 : सामान्य वायु प्रदूषक और उनकी देहली सीमाएं

प्रदूषक	देहली सीमा		गंध का देहली मान (पी.पी.एम.)	जीवन को तीव्र खतरा
	पी.पी.एम.	mg/m^3		
अमोनिया (NH_3)	5	35	5	500 पी.पी.एम.
कार्बनडाइआक्साइड (CO_2)	5,000	9,000	अज्ञात	20% आयतन से
कार्बनमोनोआक्साइड (CO)	50	55	अज्ञात	0.3% आयतन से
क्लोरीन (Cl_2)	1	3	0.02-0.05	900 पी.पी.एम.
(HCHO)	5	6	–	650 पी.पी.एम.
(HCl)	5	7	–	1000 पी.पी.एम.
सायनाइड (HCN)	10	11	2–5	3000 पी.पी.एम.
हाइड्रोजन फ्लुओराइड (HF)	3	2	–	–
हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S)	10	15	0.1	700 पी.पी.एम.
सीसा (Pb)	–	0.2	–	–
नाइट्रोजन डाइआक्साइड	5	9	1.3	200 पी.पी.एम.
ओज़ोन (O_3)	0.1	0.2	0.015	–
परक्लोरोएथिलीन (CCl_2CCl_2)	100	670	50	–
फीनॉल (C_6H_5OH)	5	19	0.5	–
फास्जीन ($COCl_2$)	0.1	0.4	0.5	50% पी.पी.एम.
सल्फर डाइआक्साइड (SO_2)	5	13	3.4	400 पी.पी.एम.
ट्राइक्लोरोट्राइफ्लुओरोएथेन $CFCl_2CF_2Cl$	1,000	7,600	–	–
जिंक आक्साइड (ZnO)	–	5	–	–

आइए, महत्वपूर्ण वायु प्रदूषकों को एक-एक करके लें और उनके उद्भासन से संबंधित खतरों (प्रभावों) को समझें। सारणी 9.2 में दिए गए आँकड़ों के साथ यह सूचना वायु प्रदूषण समस्या की गंभीरता को समझने में सहायता करेगी।

MAADHYAM IAS

9.4.1 कार्बन मोनोक्साइड

कार्बन मोनोक्साइड (CO), ऑक्सीजन की अपेक्षा, हीमोग्लोबिन के साथ 210 गुना शीघ्रता पूर्वक संयुक्त होकर कार्बोक्सी हीमोग्लोबिन (COHb) बनाता है। दूसरी ओर COHb, ऑक्सीजन की अपेक्षा कम शीघ्रता के साथ वियोजित होता है। यह मस्तिष्क और अन्य महत्वपूर्ण अंगों की कोशिकाओं तक ऑक्सीहीमोग्लोबिन पहुँचाने में रुकावट डालता है।

COHb की बनने वाली मात्रा CO की सान्द्रता, उद्भासित समय तथा श्वसन दर पर निर्भर करती है। ऊँच स्थानों, हृदवाहिका रोग से पीड़ित मनुष्यों, अरक्तता से पीड़ित मनुष्यों और

धूम्रपान करने वाले व्यक्तियों पर CO का अधिक स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। धूम्रपान न करने वाले व्यक्तियों (लगभग 0.5%) की तुलना में धूम्रपान करने वाले व्यक्तियों (लगभग 5.0%) का उच्च पृष्ठभूमि स्तर होता है। अध्ययन से पता लगा है कि 2.5% के अल्प COHb स्तर पर भी स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। 20% COHb सान्द्रता से सिरदर्द और अन्य लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। 15 पी.पी.एम. CO में 8 घंटे के उद्भासन से 2.5% COHb स्तर प्राप्त हो जाता है। CO का 100 पी.पी.एम. सान्द्रता में लंबे समय तक उद्भासन से मृत्यु हो सकती है।

9.4.2 नाइट्रोजन के ऑक्साइड

उच्च ताप अवस्था if (1100°C से ऊपर) जैसे दहन के समय प्राप्त ताप पर वायुमंडलीय नाइट्रोजन और ऑक्सीजन संयुक्त होकर अधिकांशत NO (नाइट्रिक आक्साइड) और अल्प मात्रा में NO_2 (नाइट्रोजन डाइआक्साइड) बनाते हैं। नाइट्रेजन डाइआक्साइड तीव्र उत्तेजक का काम करता है और बराबर सान्द्रताओं में NO से अधिक हानिकर होता है। किन्तु वायुमंडल में प्राप्त सान्द्रताओं में किंचित उत्तेजक होता है और चिरकारी फुफ्फुसी तंतुमयता (pulmonary fibrosis) से संबंधित रहता है। शहरों if पाई जाने वाली NO, की सान्द्रताएं तीव्र श्वसनीय रोगों से संबंधित होती हैं।

0.01 पी.पी.एम. से कम सान्द्रताओं से 2-3 वर्ष के शिशुओं में श्वसनीशोध में वृद्धि होते देखा गया है। बिना जले हाइड्रोकार्बनों के साथ नाइट्रोजन के ऑक्साइड, धूम कुहरा बनाते हैं। पेरॉक्सी ऐसीटिल नाइट्रेट आदि प्रकाश रासायनिक ऑक्सीकारक मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकर प्रकाश रासायनिक धूम कुहरा के घटक होते हैं।

9.4.3 हाइड्रोकार्बन

हाइड्रोकार्बन, कार्बन और हाइड्रोजन के बने यौगिक होते हैं जैसे मेथेन (CH_4), एथेन (C_2H_6) और एथिलीन (C_2H_4)। हाइड्रोकार्बनों के प्राकृतिक स्रोत प्राय: जैविक होते हैं जिनसे दुनिया में प्रतिवर्ष 3×10^8 टन मेथेन और 4.4×10^8 टन वाष्पशील टर्पीन और आइसोप्रीन प्राप्त होते हैं।

गैर शहरी वायु में 1.0 से 1.5 पी.पी.एम. मेथेन और अन्य हाइड्रोकार्बनों में से प्रत्येक की 0.1 पी.पी.एम. से कम मात्राएं होती हैं। मेथेन निष्क्रिय होती है अत: उसे हाइड्रोकार्बनों की कुल मात्रा में से घटा देते हैं। हाइड्रोकार्बनों के कुछ वर्गों का कैन्सर जनता के लिए अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि काजल और तारकोल (tar) में पाए जाने वाले कुछ ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बनों का उद्भासन चिन्ता का विषय है। वायु के अभिनिर्धारणीय कैन्सरजन पदार्थ प्राय: बहुनाभिकीय ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बन होते हैं। बिना जले हाइड्रोकार्बन, नाइट्रोजन के ऑक्साइडों के साथ सूर्य की रोशनी में प्रकाश रासायनिक ऑक्सीकारक, प्रकाश रासायनिक धूम कुहरा के यौगिक बनाते हैं जिससे मानव स्वास्थ्य पर त्वचा उत्तेजना, आँखों में आँसू आना आदि विपरीत प्रभाव पड़ते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

9.4.4 सल्फर के ऑक्साइड

सल्फर के आक्साइडों से प्राय: श्वसन तंत्र में उत्तेजना हो जाती है। चिरकारी फुफ्फुस रोग अथवा हृदय विकार वाले व्यक्तियों और युवाओं तथा वृद्धों सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। दमा, श्वसनीशोथ जैसे अवरुद्ध वायुपथ वाले रोगी जब सल्फर के डाइआक्साइड के अंतर्श्वसन करते हैं तो उनका वायुपथ संकीर्ण हो जाता है जबकि स्वस्थ्य व्यक्तियों पर उसका कोई प्रभाव नहीं होता है। संकीर्ण वायुपथ वाले रोगियों द्वारा उत्तेजकों के अंतर्श्वसन से वायुपथ और संकीर्ण हो जाता है जिसके गंभीर परिणाम हो सकते हैं। यदि SO_2 के साथ कणिकीय पदार्थ भी विद्यमान हों तो प्रभाव 3 अथवा 4 गुना बढ़ जाता है। इस प्रकार वायु गुणता मानकों में प्रयुक्त मान SO_2 और कणिकीय स्तर दोनों पर निर्भर करता है।

9.4.5 निलंबित कणिकीय पदार्थ (Suspended particulate matter)

कणिकीय पदार्थ और सल्फर डाइऑक्साइड की उच्च सान्द्रताओं के कारण गंभीर वायु प्रदूषण संबंधी समस्याएं और खतरे पैदा हो जाते हैं। महामारी संबंधी अध्ययन से पता लगा है कि दमा, श्वसनी शोथ (bronchitis), वातस्फीति (emphysema) जैसे श्वसनी रोगों से होने वाली मृत्यु दर तथा आवासीय इलाके में औसत कणिकीय स्तर के बीच संबंध होता है। यदि कणिकीय पदार्थ का औसत ज्यामितीय माध्य स्तर 80 $\mu g/m^3$ से अधिक हो जाए तो स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

सीसा, वायुमंडलीय प्रदूषक है जो मुख्यत: वाहनों के रेचक उत्सर्जन से प्राप्त होता है। वायुमंडल में 90% सीसा इसी के कारण प्राप्त होता है। अधिकांश कणों का बहुत छोटा आमाप (0.5 μm अथवा इससे भी कम) होता है और वे बहुत दूर तक आसानी से वितरित रहते हैं। इसका वृक्क के कार्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है और विशेष रूप से बच्चों के मस्तिष्क को क्षति पहुँच सकती है।

सिलिका आदि का अंतर्श्वसन पर कोई गंभीर प्रभाव नहीं पड़ता है किन्तु उसके कण फुफ्फुस के ऊतक में जमा हो जाते हैं। दीर्घकालीन उद्भासन के बाद सिलिका कण फुफ्फुस ऊतक की अभिक्रिया को प्रेरित करते हैं जिससे उसकी क्षति होती है। फुफ्फुस ऊतक में इन क्षतियों के बार-बार होने से घाव हो जाते हैं। फुफ्फुस ऊतकों में घाव होने से गैस विनिमय में और फेफड़ों में ठीक काम करने में रुकावट होती है।

अनेक अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि एस्बेस्टॉस के कणों के बीच काम करने वाले लोगों में श्वसनी कैंसर की घटनाएं अधिक होती हैं। इसके अलावा छाती और उदर की झिल्लियों में होने वाले कैंसर का भी ऐस्बेस्टॉस महत्वपूर्ण कारक है।

बेरिलियम भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है यह तीव्र और चिरकारी दोनों प्रकार के घातक अंतर्श्वसन प्रभाव पैदा करता है जिससे त्वचा और आँखों को क्षति पहुँचती है। अधिकांश घटनाएं व्यावसायिक उद्भासन से होती हैं।

धात्विक पारद वाष्प (mercury vapours) के उद्भासन से केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र और वृक्कों को क्षति पहुँचती है। इसके अलावा पारद, शरीर में भी एकत्रित हो जाता है जिससे मस्तिष्क क्षति हो सकती है।

बोध प्रश्न

5) एक आदमी बंद कमरे में सोया है। कमरे को गरम करने के लिए कोयला जल रहा है। उस व्यक्ति की दम घुटने से मृत्यु हो सकती है। क्यों? स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

9.5 जानवरों पर वायु प्रदूषकों का प्रभाव

जानवरों पर वायु प्रदूषकों की क्रियाविधि, मनुष्यों की क्रियाविधि से भिन्न है। मनुष्यों के मामले में औद्योगिक संयंत्रों के संदूषित वायुमंडल में काम करने वाले लोगों में उत्पन्न समस्या प्रदूषकों के अंतर्श्वसन से होती है जबकि जानवरों में यह द्विपदीय प्रक्रम होता है : पहला वायु में मौजूद संदूषक वनस्पति और चारे में एकत्रित हो जाते हैं और फिर इस संदूषित वनस्पति को खाने से जानवरों में विषाक्तन हो जाता है। उदाहरण के लिए किसी सीमित स्थान पर 8 घंटों तक काम करने वाले व्यक्तियों के लिए फ्लुओराइड की अधिकतम परिमेय सह्यता वायु में 3 पी.पी.एम. है जबकि जानवरों के विषाक्तन के लिए यह सान्द्रता कुछ ही भाग प्रति करोड़ अथवा उससे भी कम है। जानवरों में खतरा प्रदूषित वायु के अंतर्श्वसन से नहीं बल्कि वायु में मौजूद फ्लुओराइड से संदूषित चारे के खाने से है।

पशुधन की हानि के लिए उत्तरदायी तीन प्रदूषक हैं - आर्सैनिक, फ्लुओरीन और सीसा।

9.5.1 आर्सैनिक

आर्सैनिक अपद्रव्य के रूप में अनेक अयस्कों, कोयला और फसलों पर की जाने वाले फुहारों में पाया जाता है। आर्सैनिक का कुछ कीटनाशियों में, आर्सैनिक ट्राइआक्साइड और लेड आर्सैनेट के रूप में उपयोग किया जाता है। पादपों पर ऐसे पदार्थों की धूल अथवा फुहार से पशुओं में विषाक्तन हो सकता है यहां तक कि तीव्र विषाक्तन भी हो सकता है यद्यपि किसी एक स्रोत से प्रभावित क्षेत्र प्रायः सीमित होता है।

आर्सैनिक का अवशोषण त्वचा, जठरांत्र पथ अथवा फुफ्फुस द्वारा हो सकता है। तीव्र विषाक्तन से मांसपेशियों में ऐंठन, कंपन, गतिभ्रम (ataxia) और दस्त हो सकते हैं। यह प्रभाव उद्भासन के कुछ घंटे बाद से कुछ दिन बाद तक हो सकता है। यदि उद्भासन त्वचा से हुआ हो तो तीव्र स्थानीय उत्तेजन, और लोभशातन तथा शुष्कन हो सकता है।

आर्सैनिक का केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र पर अवसादी प्रभाव होता है किन्तु आरंभिक अवस्था में अति उत्तेजनीयता हो सकती है। जानवर सुस्त पड़ जाएगा, भूख कम हो जाएगी जिससे भार घट जाएगा। इससे चिरकारी एक्जीमा, त्वचा का मोटा होना, अरक्तता और गर्भपात अथवा बंध्यता भी सकते हैं। चिरकारी विषाक्तन से लकवा अथवा मृत्यु भी हो सकती है।

9.5.2 फ्लुओराइड

MAADHYAM IAS

फ्लुओराइड अयस्कों, कोयला, मृत्तिका और मृदा में अल्प मात्रा से लेकर पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। ऐलुमिनियम, ईंटें, फास्फेट रासायन और उर्वरक तथा इस्पात के निर्माण के समय वायुमंडल में फ्लुओराइड मुक्त होते हैं। सामान्य दहन प्रक्रिया में भी फ्लुओराइड निकलते हैं तथा सर्दियों में किसी भी शहर में कोयला जलने से वायु में फ्लुओरीन की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है।

वायु प्रदूषण से होने वाला एक व्यापक पशुओं का रोग-चिरकारी फ्लुओराइड विषाक्तन अथवा फ्लुओरोसिस है। फार्म जानवरों में पशु और भेड़ फ्लुओरीन विषाक्तन के लिए सर्वाधिक सुग्राही होते हैं। घोड़ों में फ्लुओरीन विषाक्तन के मामले कम होते हैं क्योंकि उनमें रोधक क्षमता होती है। कुक्कुट सर्वाधिक फ्लुओरीन रोधी होते हैं और उनके साथ फ्लुओरोसिस की कोई समस्या नहीं होती है।

9.5.3 सीसा

धात्विक सीसा प्राप्त करने के लिए सीसा अयस्कों का प्रगलन किया जाता है। कोयला में सीसा अपद्रव्य के रूप में पाया जाता है। यह अपद्रव्यता 54 पी.पी.एम. तक होती है। सीसा प्रदूषण के औद्योगिक स्रोतों, जैसे प्रगालक, कोक अवन, और अन्य कोयला दहन प्रक्रमों के अलावा सीसे का उपयोग धूल और फुहारों में लेड आर्सेनेट के रूप में भी किया जाता है। आविषालुता विज्ञान में अन्य महत्वपूर्ण सीसा यौगिक, लेड आक्साइड, सफेद सीसा और लेड ऐसीटेट हैं। तीव्र लेड विषाक्तन से प्रभावित जानवरों में उदासी (depressed), गोल-गोल घूमना, दाँत किटकिटाना और चीखना जैसे रोग हो जाते हैं। सीसा संचयी विष हैं। थोड़ी थोड़ी मात्रा में रोज लेने से अंततः वह आविषालु मात्रा बन जाएगी। यदि किंचित संदूषित घास रोज दी जाए जिसमें सीसे की धूल अथवा फुहार की गई हो तो मृत्यु में कई महीने लग सकते हैं। किन्तु भारी फुहारण वाले उद्यानों की घास खाने से 24 घंटों के अंदर मृत्यु हो सकती है।

उपर्युक्त तीन प्रमुख प्रदूषकों के अतिरिक्त वायु में मौजूद कीटनाशियों और पीड़कनाशियों का जानवरों पर हानि का प्रभाव होता है।

9.5.4 कीटनाशी और पीड़कनाशी (Insecticides and pesticides)

पक्षी और छोटे स्तनधारी कभी कभी वायुयान की फुहार से विषाक्तित हो जाते हैं जिसमें एल्ड्रिन, डाइएल्ड्रिन, क्लोरडेन, हेप्टाक्लोर और टेक्साफोन होते हैं जिन्हें कीटों और पीड़कों के नियंत्रण के लिए प्रयुक्त किया जाता है। पीड़कनाशी अपने स्वभाव और वितरण के कारण वन्यजीवन के खाद्य स्रोतों को संदूषित कर देते हैं।

कीटनाशी: कीटों को मारने वाले; **पीड़कनाशी**: पीड़कों को मारने वाले

केंचुओं के लिए डी.डी.टी. के प्रयोग से उन्हें खाने वाले पक्षी विषाक्तित हो जाते हैं। यदि सड़ा गला मांस खाने वाले स्पीशीज़ ऐसे पक्षियों को खाते हैं तो श्रृंखला आगे बढ़ जाती है।

क्लोरीनेटित हाइड्रोकार्बन कीटनाशी केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को उद्दीपित करते हैं जिससे तंत्रिका पेशीय अभिव्यक्ति (neuro muscular manifestation) जैसे लक्षण उत्पन्न होते हैं।

9.6 वनस्पति पर वायु प्रदूषकों का प्रभाव

वायु प्रदूषकों के कारण अनेक खाद्य पदार्थ, चारा, सजावटी फसलें क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। पर्ण-क्षति, वृद्धि रोक, फलों के आमाप और पैदावार में कमी तथा फूलों का नष्ट होना, वायु प्रदूषकों के कारण ही होता है। कुछ पादप प्रजातियां, विशिष्ट प्रदूषकों के प्रति संवेदनशील होती हैं अतः उनका उपयोग वायुगुणता को मानीटर करने के लिए किया जाता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

वायु प्रदूषण से पादपों की हानि उनकी पर्ण संरचना में होती है जिसका कारण यह है कि पर्ण में पूरे पादप की निर्माण क्रियाविधि होती है। पत्तियों की बाहरी संरक्षी पर्त में, जिसे बाह्य त्वचा (epidermis) कहते हैं, छिद्र होते हैं जिन्हें स्टोमाटा (रंध्र) कहते हैं। ये रंध्र मध्य पर्ण (mesophyll) तक जाते हैं। मध्य पर्ण, पर्ण का केन्द्रीय भाग होता है जिसमें कोशिकाओं की दो पर्तें होती हैं जिन्हें पैलिसेड (palisade) और स्पंजी पैरेन्काइमा (spongy parenchyma) कहते हैं। गैस और वाष्प, स्टोमाटा से होते हुए पर्ण-संरचना के अंदर और बाहर जाते हैं। पर्ण की शारीरिक रचना चित्र 9.1 में दर्शाई गई है। वायु प्रदूषकों का पर्णसमूह पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। वायु प्रदूषकों की उपस्थिति बताने वाले चार पर्णित (foliar) चिन्ह इस प्रकार हैं :

1) पत्तियों के किनारों का ऊतक क्षय (पर्ण संरचना का भृत क्षेत्र) तथा अंतराशिरीय क्षेत्रों का विरंजन।

2) पर्ण पृष्ठ का रजतन (silvering)।
3) क्लोरोफिल हानि (हरिताहीनता)
4) ऊपरी पर्ण पृष्ठ का कर्बुरण

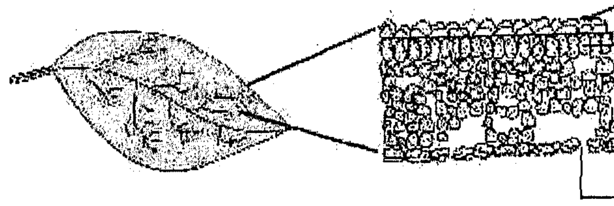

चित्र 9.1: पर्ण की शारीरिक रचना को दर्शाती पर्ण संरचना

वनस्पति के लिए सर्वाधिक आविषालु गैसें सल्फर डाइआक्साइड, ओज़ोन, नाइट्रोजन डाइआक्साइड, पेरोक्सी ऐसीटिल नाइट्रेट (पी.ए.एन.), फ्लुओराइड और एथिलीन हैं। आइए, एक-एक करके उनके प्रभाव का अध्ययन करें।

9.6.1 सल्फर डाइआक्साइड

वायुमंडल में सल्फर डाइआक्साइड की अधिकता के कारण पहले मध्य पर्ण के स्पंजी पैरेन्काइमा क्षेत्र में कोशिका क्षति होती है। उसके बाद पैलिसेड क्षेत्र को क्षति पहुँचती है।

सल्फर डाइआक्साइड द्वारा लगातार उद्भासन से पत्तियों की शिराओं के बीच क्लोरोफिल की हानि हो जाती है जिससे वह हल्की पीली दिखाई देती है। धूमन (fumigation) के समय अथवा शीघ्र बाद चिन्ह नहीं होते हैं किन्तु लंबी अवधि तक उद्भासन से दृष्टिगोचर होते हैं। लक्षण कुछ दिन बाद भी दिखाई देते हैं।

एक देहली मान है जिसके नीचे पत्ती बिना क्षति के गैस ग्रहण कर लेती है। एक देहली मान 0.3 पी.पी.एम. (785 $\mu g/m^3$) है जो 4 घंटों तक लगातार उद्भासन के लिए है। कई दिनों तक 0.3 से 0.5 पी.पी.एम. की सान्द्रताओं से संवेदनशील पौधों को क्षति पहुँचती है। पालक, सलाद आदि पत्तीदार सब्जियां और कपास तथा आल्फाल्फा सर्वाधिक संवेदनशील होते हैं। चीड़ की सुईदार पत्तियों पर भी प्रभाव पड़ता है। सुई की नोक अथवा पूरी सूई का रंग भूरा हो जाता है।

9.6.2 ओज़ोन

उद्भासित पादपों की पत्तियों पर चार प्रकार के ओज़ोन प्रेरित चिन्ह दिखाई देते हैं; कर्बुरण, फ्लेकन, ऊतकक्षयी धब्बे, और हरिताहीनता।

MAADHYAM IAS

कर्बुरण (stipple): में पत्ती के ऊपरी पृष्ठ पर काले बिन्दुदार निशान पड़ जाते हैं जो स्थूलन अथवा पैलिसेड कोशिकाओं की दीवारों में वर्णकन से हो जाता है।

फ्लेकन (flecking): में पत्ती के ऊपरी पृष्ठ पर हल्के रंग के विक्षत हो जाते हैं जो कर्बुरण से वर्णित विक्षतों से बड़े होते हैं। यह प्रभावित क्षेत्र में पैलिसेड कोशिकाओं के विरंजन से हो जाता है। यह तम्बाकू, चुकंदर, स्मार्टवीड (पालगोनम) और कभी-कभी मूंगफली में ओज़ोन क्षति के अभिलाक्षणिक होता है।

नेक्रोटिक (ऊतकक्षयी) धब्बों का व्यास 1 मिमी, या उससे अधिक होता। ये पूरी पत्ती में होते हैं और अंतराशिरीय होते हैं। ये आल्फाल्फा, स्टेविया, आलू, पालक, तम्बाकू और जिरेनियम में होते हैं। टमाटर, कोलियस और शकरकन्द में हरिताहीनता और पुरानी पत्तियों की असामयिक जीर्णता देखी गई है।

9.6.3 नाइट्रोजन डाइआक्साइड

यदि नाइट्रोजन डाइआक्साइड परिवेश वायुमंडल में सामान्य से अधिक सान्द्रता में हो तो मध्यपर्णी कोशिकाओं को क्षति पहुँचा सकती है।

NO_2 के तीव्र उद्भासन से मटर और टमाटर की पत्तियों के शीर्ष और किनारों के ऊतक नष्ट हो जाते हैं। बाद में यह क्षेत्र ऊतकक्षयी और विरंजित हो जाता है जो सल्फर डाइआक्साइड और ओज़ोन के कारण उत्पन्न तीक्ष्ण चिन्हों से मिलता है।

2 से 10 पी.पी.एम. के परास की सान्द्रता से अत्यंत संवेदनशील वनस्पति पर प्रभाव पड़ता है। 4 घंटे के उद्भासन के लिए देहली स्तर अनुमानत: 2.5 पी.पी.एम. (4700 $\mu g/m^3$) होता है। इस बात के प्रमाण हैं कि लंबे समय तक 0.5 पी.पी.एम के स्तर पर नाइट्रोजन डाइआक्साइड, वृद्धि दर को कम कर देता है। अनियमित सफेद और भूरे विक्षतों के रूप में प्रभाव दिखाई देता है।

9.6.4 पेरॉक्सी ऐसीटिल नाइट्रेट

पेरॉक्सी ऐसीटिल नाइट्रेट उन स्पंजी पैरेन्काइमा कोशिकाओं पर आक्रमण करता है जो उस वायु क्षेत्र के चारों ओर होते हैं जिसमें स्टोमाटा खुलते हैं। इसका प्रभाव निचले पर्ण क्षेत्र के रजतन और कांस्यन (bronzing) के रूप में दृष्टिगोचर होता है। क्षति के लिए देहली सान्द्रता मान 6 घंटों के लिए अनुमानत: 0.01 पी.पी.एम. है यद्यपि पिटूनिया 8 घंटों के उद्भासन से 0.005 पी.पी.एम पर भी प्रभावित हो जाते हैं। पक्वता के शब्दों में नवीनतम पत्तियां सर्वाधिक संवेदनशील होती हैं।

9.6.5 फ्लुओराइड

हाइड्रोजन फ्लुओराइड (HF) अथवा सिलिकन टेट्राफ्लुओराइड (SiF_4) आदि गैसीय फ्लुओराइड संभवत: वनस्पति और कृषि को प्रभावित करने वाले सर्वाधिक आविषालु प्रदूषक हैं। गैसीय फ्लुओराइडों को पत्तियां अपने स्टोमाटा और उपत्वचा द्वारा शीघ्र अवशोषित कर लेते हैं। यदि पर्याप्त नमी हो तो विलेय फ्लुओराइडों का भी शीघ्र अवशोषण हो जाता है।

फ्लुओराइड पादपों के लिए संचयी विष का काम करते हैं। अत्यंत कम सान्द्रता पर उद्भासित करने पर भी पौधों में इतना संचित हो जाता है कि वह पर्ण ऊतकों को क्षति पहुँचाने के लिए पर्याप्त होता है। आरंभ में अग्र नोक और किनारे जल जाते हैं। फ्लुओराइड स्टोमाटा के द्वारा प्रविष्ट करता है और सामान्य जल प्रवाह द्वारा अग्र नोक और किनारों तक पहुँचता है। कोशिकाओं के सूखने से क्षतिग्रस्त क्षेत्र भूरा और कत्थई रंग का हो जाता है। मृत ऊतकों की लाल भूरे रंग की रेखा ऊतकक्षयी क्षेत्र को स्वस्थ क्षेत्र से पृथक करती है।

पत्तियों की अपेक्षा जड़ तना और फल वायुमंडलीय फ्लुओराइड को कम ग्रहण करती हैं इसलिए अपर्णीय अंगों में संचयन का अर्थ होगा कि मृदा और पृष्ठ संदूषण में विलेय फ्लुओराइडों का अपेक्षाकृत उच्च स्तर है। आड़ू, अंगूर और ग्लैडिओलस फ्लुओराइडों के लिए अत्यंत सुग्राही होते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

पादप जातियों में वायुमंडलीय फ्लुओराइडों के प्रति सुग्राहितर में बहुत अंतर होता है। यह अंतर एक ही प्रजाति की विभिन्न किस्मों में भी दिखाई देता है। कपास की पत्तियां बिना क्षति के 5,000 पी.पी.एम संचित कर सकती हैं जबकि ग्लैडिओलस के ऊतकों में 50 पी.पी.एम. से भी कम फ्लुओराइड से विद्युत् उत्पन्न हो जाते हैं।

पादपों की फ्लुओराइड के प्रति सुग्राहिता का संबंध अन्य कारकों जैसे ऊतकों की आयु, पोषण स्थिति, ताप, जल उपलब्धता और अन्य शारीरिक और पर्यावरणी कारकों से भी होता है।

9.6.6 एथिलीन

एथिलीन कार्बनिक ईंधनों और प्राकृतिक गैस के दहन से अथवा रासायनों के निर्माण के समय उत्पन्न होता है। यह पौधों का उपापचयी उत्पाद भी है। यह अत्यंत पादप आविषालु गैस है विशेषत: फूलों की फसल, आर्किड फूलों के बाह्यदल 5 पी.पी.एम. वायुमंडलीय सान्द्रता से भी क्षतिग्रस्त हो जाते **6**। 0.001 से 0.5 पी.पी.एम. की न्यून सान्द्रताएं कुछ संवेदनशील पादपों को क्षति पहुँचाती हैं।

उच्च सान्द्रताओं पर एथिलीन के सामान्य प्रभाव हैं : वृद्धि का रुकना, प्ररोहों और पत्तियों का अधोकुंचन (epinasty), पत्तियों और फूल की पंखुडियों का अलग होना, और कुछ पौधों में पिटिकाओं (intumescences)का उत्पन्न होना। टमाटर, नार्सिसस, ट्यूलिप, स्नैपड्रेगन, कार्नेशन, सूरजमुखी, वकव्हीट और स्वीट पी अलग-अलग मात्राओं में सुग्राहिता प्रदर्शित करते हैं।

एथिलीन के कारण फूलों का गिरना तथा पत्तियों का ठीक प्रकार न खुलना भी होता है। आर्किड और कपास को क्षति पहुँचना स्पष्ट है। निर्देश के रूप में 6 घंटों तक उद्भासन के लिए 0.05 पी.पी.एम. का देहली मान निर्धारित किया गया है।

बोध प्रश्न

6) निम्नलिखित में किस प्रदूषक का संचयी प्रभाव होता है :

क) जानवरों

....

ख) पादपों

....

9.7 पदार्थों पर वायु प्रदूषकों का प्रभाव

MAADHYAM IAS

वायु प्रदूषक, संरचनात्मक धातुओं, इमारती पत्थरों, पृष्ठीय विलेपों, वस्त्रों, चमड़े की वस्तुओं और अन्य व्यापार की वस्तुओं को क्षति पहुँचा सकते हैं। इसका कारण अम्ल धूमिका (acid mists) विभिन्न प्रकार के ऑक्सीकारक, हाइड्रोजन सल्फाइड तथा दहन और औद्योगिक प्रक्रमण से उत्पन्न कणिकीय पदार्थ हैं। द्वितीयक प्रदूषकों का भी पर्याप्त योगदान होता है। उदाहरण के लिए ओज़ोन सभी प्रकार के रबर के सामान और वस्त्रों को शीघ्र और पर्याप्त क्षति पहुँचाती है।

वायु प्रदूषक पांच प्रकार की क्रियाओं से क्षति पहुँचाते हैं :

- **अपघर्षण** (abrasion): उच्च वेग से गमन करने वाले बड़े आमाप के ठोस कणों द्वारा अपघर्षण से क्षति पहुँचती है।

- **निक्षेपण और निष्कासन:** पृष्ठ पर निक्षेपित ठोस और द्रव कण स्वयं पदार्थों को कोई क्षति अथवा परिवर्तन नहीं करते हैं, केवल वह देखने में ठीक नहीं लगता हैं। किन्तु उनके निराकरण से क्षति पहुँच सकती है।
- **प्रत्यक्ष रासायनिक क्रिया:** कुछ वायु प्रदूषक पदार्थ के साथ सीधे अनुत्क्रमणीय अभिक्रिया करते हैं जिससे वह विकृत हो जाता है। उदाहरण के लिए हाइड्रोज़न सल्फाइड द्वारा चांदी का बदरंग होना।
- **अप्रत्यक्ष रासायनिक क्रिया:** कुछ पदार्थ प्रदूषकों का अवशोषण करने के बाद क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। जिसमें प्रदूषकों का रासायनिक परिवर्तन हो जाता है। उदाहरण के लिए, चमड़े द्वारा सल्फर डाइऑक्साइड के अवशोषण से वह (SO_2) सल्फ्यूरिक अम्ल में परिवर्तित हो जाता है जो चमड़े को विकृत कर देता है।

o **वैद्युत रासायनिक संक्षारण** (electrochemical corrosion): वायुमंडल में फेरस धातु की विकृति वैद्युतरासायनिक प्रक्रम द्वारा होती है।

आइए, विभिन्न प्रकार के पदार्थों पर वायु प्रदूषकों के प्रभाव का अध्ययन करें।

9.7.1 फेरस धातुएं

फेरस धातुओं पर क्षतिकारक प्रदूषकों की क्रिया दर को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक, नमी, ताप, सूर्य की रोशनी और वायु गति है।

नमी : यदि धातु स्वच्छ और शुष्क हो (नमी रहित) तो अत्यधिक प्रदूषित पर्यावरण में भी वायुमंडलीय संक्षारण बहुत कम अथवा बिल्कुल नहीं होगा। अनेक धातुओं के लिए क्रांतिक वायुमंडलीय आर्द्रता होगी जिसके ऊपर संक्षारण दर में तीक्ष्ण वृद्धि होगी। किन्तु यदि जल पृष्ठ पर एकल आण्विक पर्त के रूप में भी मौजूद हो तो वैद्युतरासायनिक संक्षारण आरंभ हो जाता है। यदि जल, वायु प्रदूषकों से संदूषित हो तो उच्च वैद्युत चालकता के कारण संक्षारण तीव्र गति से होगा।

सल्फर डाइआक्साइड और कणिकीय पदार्थ से प्रदूषित वायु में, केवल सल्फर डाइआक्साइड से प्रदूषित वायु की अपेक्षा, संक्षारण तीव्र गति से होगा। कणिकीय पदार्थ का भौतिक कार्य होता है और वे अवशोषण द्वारा सल्फर डाइआक्साइड की सान्द्रता बढ़ा देते हैं।

ताप : अल्प पृष्ठीय ताप से पदार्थ के क्षतिग्रस्त होने की संभावना बढ़ जाती है। यदि पृष्ठीय ताप ओसांक (dew point) से कम हो जाए तो पृष्ठ आर्द्र हो जाता है तथा संक्षारक प्रदूषकों की उपस्थिति, जिनकी सान्द्रता ताप प्रतीपन के प्रभाव में बढ़ रही है, पदार्थ के क्षतिग्रस्त होने में सहायक होती है।

सूर्य की रोशनी : सूर्य की रोशनी के कारण कुछ पदार्थ सीधे क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। रबर के विदरण (cracking) तथा रंजकों के ग्लानन के मामले में सूर्य का रोशनी से हुई क्षति और ओज़ोन द्वारा हुई क्षति में भेद नहीं किया जा सकता है।

MADHYAM IAS
way to achieve your dream

पवन वेग : ठोस और द्रव कर्मकों के कारण ऊर्ध्व पृष्ठों के बैठ जाने क्षैतिज पृष्ठों के धंस जाने और अपघर्षण उत्पन्न करने में पवन गति का महत्व है। जब आसपास के मुक्त प्रदूषकों द्वारा विकार उत्पन्न होता है तो पवन की दिशा एक महत्वपूर्ण कारक होत है। यदि वायु सल्फर डाइआक्साइड द्वारा संदूषित हो तो वायु गति उन स्थानों में बहुत हानि पहुँचा सकती है जहाँ चमड़े की जिल्द वाली पुस्तकें संग्रहित हों। वायु की गति से पुस्तकों के चमड़े वाले पृष्ठ को लगातार सल्फ़र डाइआक्साइड मिलती है।

9.7.2 ऐलुमिनियम और ऐलुमिनियम मिश्रातु

अपेक्षाकृत न्यून आर्द्रताओं पर सल्फर डाइआक्साइड आदि गैसीय प्रदूषकों का ऐलुमिनियम के संक्षारण को प्रभावित नहीं करते हैं तथा धातु पृष्ठ पर कोई परिवर्तन नहीं दिखाई देता है, किन्तु उच्च आर्द्रताओं (72 से 85%) पर ऐलुमिनियम का तीव्र गति से संक्षारण होता है तथा पृष्ठ पर ऐलुमिनियम सल्फेट का सफेद चूर्ण निक्षेपित हो जाता है। फेरस पदार्थ की अपेक्षा ऐलुमिनियम मिश्रातु उत्तम संक्षारण रोधी होते हैं क्योंकि पृष्ठ पर धीरे-धीरे एक मजबूत संरक्षी फिल्म बन जाती है।

9.7.3 ताँबा और चाँदी

पैटिना : कुछ धातुओं के पृष्ठ पर बनने वाली हरी, काली अथवा भूरी परत

नम वायुमंडल में ताँबा और चाँदी के मिश्रातुओं के पृष्ठ पर पतली, स्थायी फिल्म बन जाती है जिसके कारण आगे संक्षारण नहीं होता है। आरंभिक वायुमंडलीय संक्षारण प्रायः कापर ऑक्साइडों और सल्फाइडों की भूरे रंग की फिल्म होती है जो बाद में काले रंग की बन जाती है। कुछ वर्ष बाद सुपरिचित हरे रंग का पैटिना बन जाता है जो क्षारकीय कॉपर सल्फेट अथवा समुद्री वायुमंडल में क्षारकीय कॉपर क्लोराइड होता है। ये दोनों ही आगे वायुमंडलीय क्रिया के लिए अत्यंत प्रतिरोधी होते हैं। सौन्दर्य और आगे की क्रिया की दृष्टि से यह प्रभाव कितना भी वांछनीय क्यों न हो किन्तु वे (अभिक्रिया उत्पाद) ताँबे के बने वैद्युत संपर्कों के लिए अवांछनीय होते हैं। क्योंकि उनसे संपर्कों के विद्युत प्रतिरोध में परिवर्तन हो जाता है।

हाइड्रोजन सल्फाइड की उपस्थिति में ताँबा और चाँदी शीघ्र बदरंग हो जाते हैं। यदि ताँबे को पर्याप्त समय तक अप्रदूषित वायु में उद्भासित कर दिया जाए तो वह हाइड्रोजन सल्फाइड के प्रभाव का प्रतिरोध कर सकता है। चाँदी पर हाइड्रोजन सल्फाइड के प्रभाव के लिए नमी और ऑक्सीजन दोनों की उपस्थिति आवश्यक है। खुले ताँबे और चाँबी के वैद्युत संपर्कों पर बना सल्फाइड का विलेप बंद स्थिति में उनके (संपर्कों के) आरपार प्रतिरोध बढ़ा देता है और बंद स्थिति में संपर्कों को वेल्ड भी करना पड़ता है।

9.7.4 भवन सामग्री

सामान्य अपक्षयण (weathering) प्रक्रम के अलावा वायु प्रदूषण द्वारा निर्माण सामग्री का संक्षारण और विरूपण हो जाता है। धुंआ और कोलतारी, चिपचिपे ऐरोसॉल पत्थर, ईंट और अन्य पृष्ठों पर चिपक जाते हैं जिससे पृष्ठ बदसूरत दिखाई देते हैं।

तीव्र पवन गति से हवा में बड़े कण संरोहित हो सकते हैं। इससे बालू घर्षण (sand blast) की भाँति इमारतों के पृष्ठों का धीरे-धीरे अपरदन हो जाता है। इससे रासायनिक प्रदूषकों के कारण होने वाली क्षति से भी बड़ी क्षति होती है।

MAADHYAM IAS

सल्फर डाइआक्साइड और सल्फर ट्राइआक्साइड आदि अम्लीय गैसें नमी की उपस्थिति में चूने के पत्थर के साथ क्रिया कर $CaSO_4$ और जिप्सम, $CaSO_4.2H_2O$ बनाते हैं। ये दोनों यौगिक जल में विलेय हैं। नमी की उपस्थिति कार्बन डाइआक्साइड कार्बोनिक अम्ल बनाता है जो चूने के पत्थर को जल विलेय बाईकार्बोनेट में परिवर्तित कर देता है जिसका निक्षालन हो जाता है।

ग्रेनाइट, बालूकाइम आदि जिनके कण कार्बोनेट रहित पदार्थों के साथ जुड़े रहते हैं उन पर वायुमंडल में सल्फर डाइआक्साइड का कोई प्रभाव नहीं होता है।

9.7.5 चमड़ा

सल्फर डाइआक्साइड के कारण चमड़े की मजबूती समाप्त हो जाती है और अंततः वह अपघटित हो जाता है। कुर्सियों पर चमड़े की अपहोल्सटरी का खराब होने का कारण वायु में

गंधक के यौगिकों की उपस्थिति है। पुस्तकालयों में चमड़े के जिल्द वाली पुस्तकों का संग्रह एक गंभीर समस्या हो सकती है। प्रदूषित वायु वाले खुले कमरों में रखी पुस्तकों की जिल्द, बंद स्थान में अथवा कांच के बक्स में रखी पुस्तकों की अपेक्षा, अधिक शीघ्र खराब हो जाती हैं।

पुस्तक जिल्दसाजी के रासायनिक क्षय में पहले पुस्तक के ऊपरी किनारे में दरार पड़ जाती है। ये दरार जैसे-जैसे धीरे-धीरे फैलती है। चमड़े की प्रत्यास्थता समाप्त हो जाती है और वह लाल-भूरे चूर्ण के रूप में अपघटित हो जाता है। कुछ समय बाद पुस्तक का पूरा ही चमड़े वाला भाग अलग हो जाता है।

9.7.6 काग़ज़

आधुनिक कागज में धात्विक अपद्रव्यों की अल्प मात्राएं भी, नमी की उपस्थिति में, अवशोषित सल्फर डाइआक्साइड को शीघ्र सल्फ्यूरिक अम्ल परिवर्तित कर देती हैं। कुछ काग़ज़ों में सल्फ्यूरिक अम्ल की मात्रा 1% तक होती है जो काग़ज़ को अत्यंत भंगुर बना देती है। पुस्तकों और लिखने के लिए प्रयुक्त कागज को 10 दिन तक सल्फर डाइआक्साइड की 2 से 9 पी.पी.एम. सान्द्रता द्वारा उद्‌भासित करने से कागज भंगुर हो जाता है और उसका वलन-रोध (मुड़ने की शक्ति) कम हो जाती है।

आपेक्षिक आर्द्रता का काग़ज़ द्वारा ली गई सल्फर डाइआक्साइड की मात्रा पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है। आपेक्षिक आर्द्रता का केवल पहले 28 घंटों में ग्रहण की गई सल्फर डाइआक्साइड मात्रा पर प्रभाव पड़ता है। बाद में दीर्घकालिक उद्‌भासन के लिए भी दर स्थिर रहती है और गैस प्रावस्था सल्फर डाइआक्साइड की सान्द्रता के वर्गमूल के समानुपाती रहती है।

9.7.7 वस्त्र

सल्फर आक्साइड प्राकृतिक और कुछ संश्लिष्ट वस्त्र रेशों को विकृत कर देता है। कागज की भाँति कपास भी सेलुलोस तन्तु है और सल्फर डाइआक्साइड से कमजोर हो जाता है। जब उद्‌भासित वस्त्र पर अम्ल ऐरोसॉल निक्षेपित होते हैं तो वे ग्लूकोसाइड बंधों पर सेलुलोस श्रृंखला पर आक्रमण कर उसे कमजोर कर देते हैं। यह देखा गया है कि अवशोषित सल्फर डाइआक्साइड अथवा सल्फ्यूरिक अम्ल की छोटी बूंदों वाले बहुत छोटे वायुमंडलीय कण नाइलॉन होज में प्रयुक्त पतले नाइलॉन रेशों के साथ संयुक्त हो जाते हैं और तनाव के कारण रेशे विकृत हो जाते हैं।

कमीज, पोशाक आदि के लिए प्रयुक्त नाइलॉन वस्त्र, नाइलॉन होज की अपेक्षा बहुत अधिक व्यास के रेशों से बुने जाते हैं। इसलिए वे तनाव में नहीं होते हैं। वे सल्फर डाइआक्साइड की बहुत अधिक सान्द्रताओं पर ही क्षतिग्रस्त होते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

नाइलॉन बहुलकों का नाइट्रोजन ऑक्साइडों और अन्य आक्सीकारकों द्वारा भी ऑक्सीकरण होता है। ऑक्सीकरण से नाइलॉन रेशों की कुछ प्रकार के रंजकों के लिए बन्धुता कम हो जाती है। नाइलॉन वस्त्रों को लंबे समय तक कारखानों के पर्यावरण में उद्‌भासित नहीं करना चाहिए। जहाँ ट्रकों से धूम उत्सर्जित होते हैं।

लिनेन, सन, कपास और रेयान आदि अम्ल द्वारा आसानी से क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। सल्फ्यूरिक अम्ल, सेलुलोस रेशों के साथ क्रिया कर जल विलेय उत्पाद बनाता है जिसकी तनन शक्ति बहुत कम होती है।

प्रदूषित क्षेत्रों में परदों पर प्रदूषकों का बुरा प्रभाव पड़ता है क्योंकि वे खुली खिड़कियों में लटककर धूल, काजल और अम्ल की बूंदों के लिए निस्यंदक का काम करते हैं। इस प्रकार

परदे कमजोर होकर तहों के साथ समांतर रेखाओं में फट जाते हैं। इन तहों में प्रतिबल का आघात होता है क्योंकि उन स्थानों में परदा खुला रहता है और वहां पर टकराने वाले अम्लीय पदार्थों को भीतरी रेशों तक पहुँचने का अवसर मिलता है।

ऊन, फर और बाल आदि जान्तव रेशे, संश्लिष्ट रेशों की अपेक्षा, वायुमंडलीय प्रदूषण के अधिक प्रतिरोधी होते हैं क्योंकि उनमें नाइट्रोजनी और सल्फर यौगिक होते हैं जो स्पष्ट रूप से अम्ल ऐरोसॉलों के अधिक प्रतिरोधी होते हैं।

9.8 दृश्यता पर वायु प्रदूषकों का प्रभाव

प्रदूषित वायु के कारण दृश्यता (visibility) में कमी सबसे पहले ज्ञात और आजकल आसानी से प्रेक्षित प्रदूषण प्रभाव है। दृश्यता में कमी न केवल देखने में अप्रिय लगता है बल्कि उससे सुरक्षा को भी खतरा होता है। दृश्यता, किसी निश्चित दिशा में वह अधिकतम दूरी है जिस पर 1) दिन में कोई अदीप्त वस्तु और 2) रात में अफोकसित साधारण तीव्र प्रकाश स्रोत दिखाई दे।

वायु में मौजूद गैस अणुओं और कणों द्वारा प्रकाश के अवशोषण और प्रकीर्णन द्वारा दृश्यता कम हो जाती है। गैसे अणुओं और कणों द्वारा प्रकाश के निश्चित तरंगदैर्घ्यों का अवशोषण, वायुमंडल के रंगीन होने के लिए उत्तरदायी होता है। किन्तु दृश्यता अवरोध के लिए प्रकाश प्रकीर्णन की घटना अधिक उत्तरदायी होती है। प्रकाश प्रकीर्णन का अर्थ है वायु में विद्यमान पदार्थों द्वारा प्रकाश के गमन की दिशा को विचलित करना। पर्याप्त प्रकाश-प्रकीर्णन से दृश्यता कम हो जाती है क्योंकि वायुमंडल में प्रेक्षक और वस्तु के बीच में मौजूद कण, सूर्य और आकाश में अन्य स्रोतों से आने वाली रोशनी का (प्रेक्षक की दृष्टि रेखा से) प्रकीर्णन कर देते हैं। इससे वस्तु और आकाश के बीच विषमता कम हो जाती है जिससे दृश्यता घट जाती है।

प्रकाश अवरोध की मात्रा का संबंध कण आमाप, ऐरोसॉल घनत्व, प्रभावित वायु संहति की मोटाई और कुछ सूक्ष्म भौतिक कारकों से होता है। इस परिघटना के लिए उत्तरदायी कण या तो कोयला, धुंआ प्राथमिक प्रदूषक अथवा प्रकाश रासायनिक धूम कुहरा आदि द्वितीयक प्रदूषक होते हैं। कभी-कभी अमरीका, यू.के. और एशिया के अनेक शहर, वायु प्रदूषण के कारण दृश्यता में कमी से अधिक प्रभावित हो जाते हैं कि यातायात तथा नगरपालिकाओं की अन्य गतिविधियों को बन्द करना पड़ता है।

MAADHYAM IAS

बोध प्रश्न

7) रिक्त स्थानों में उन प्रदूषकों के नाम लिखिए जिनके कारण निम्नलिखित रोग होते हैं।

i) मनुष्यों में दमा आदि फुफ्फुस रोग ....

ii) कैन्सरजन स्वभाव वाले प्रदूषक ....

iii) वायुमंडल में अपर्याप्त दृश्यता ....

iv) वृक्क संबंधी समस्याएं ....

v) जानवरों में फ्लुओरोसिस ....

vi) पौधों में हरिताहीनता ....

vii) जानवरों में वृहदांत्र (colic) समस्या ....

viii) ताँबे और चाँदी का बदरंग होना ....

9.8 सारांश

वायु प्रदूषण पूरे संसार में चिन्ता का विषय बन गया है। इसका कारण सभी जानदार और बेजानदार वस्तुओं पर वायु प्रदूषकों का विपरीत प्रभाव है।

वायु प्रदूषकों के अनेक रूप हैं जो द्रव्य की तीनों अवस्थाओं यानी ठोस, द्रव और गैस में पाए जाते हैं। वे प्रकृति में एक-दूसरे के साथ पाए जाते हैं तथा उनके अवयवों और आमाप के आधार पर उनमें भेद किया जा सकता है। वायु प्रदूषकों के सामान्य रूप, गैसें, धूम, बादल, धूमिक, कुहरा, धूम कुहरा, धुंध, धूल, ऐरोसॉल, धुंआ आदि हैं।

किसी एक लक्षण के आधार पर सभी वायु प्रदूषकों का वर्गीकरण नहीं किया जा सकता है। उनका वर्गीकरण उनके उद्‌गम, भौतिक अवस्था, उत्पादन, स्रोत की किस्म तथा प्रभाव क्षेत्र के आधार पर किया जा सकता है। इन संवर्गों के आधार पर वायु प्रदूषकों का वर्गीकरण, प्राकृतिक/मानवजनित, प्राथमिक/द्वितीयक, कणिक/गैस, परिवेश/भीतरी/व्यापक, स्थिर/गतिशील रूप में किया जा सकता है।

वायु प्रदूषकों की एक सीमा से अधिक सान्द्रता होने पर वायु प्रदूषण होता है। इन सान्द्रताओं को उनके देहली मान के रूप में मापा जाता है जो अलग-अलग प्रदूषकों के लिए अलग-अलग होते हैं। इन मानों के बाद प्रदूषक मनुष्यों के लिए घातक हो सकते हैं। सबसे बड़ी समस्या आविषालु प्रदूषकों के अंत:श्वसन से श्वसन-पथ में उत्पन्न होती है। चरम अवस्था में दमा और अन्य रोग हो जाते हैं। उनमें से कुछ आँखों और त्वचा के लिए हानिकर होते हैं और उनके कारण कैन्सर भी हो सकता है। आर्सेनिक, सीसा, फ्लुओराइड, कीटनाशियों और पीड़कनाशियों का जानवरों पर उतना उग्र प्रभाव होता है जितना मनुष्यों पर।

उसी प्रकार सभी प्रकार के पौधों और फ़सलों पर SO_2, O_3, NO_2, पी.ए.एन., फ्लुओराइडों और एथिलीन का प्रभाव होता है। पौधों में, उनकी पत्तियाँ प्रदूषकों से सबसे अधिक प्रभावित होती हैं क्योंकि उनमें स्टोमाटा होते हैं।

वायु प्रदूषकों द्वारा बेजानदार वस्तुएं भी प्रभावित होती हैं, प्रभावित होने वाले धातुओं और पदार्थों में फेरस, ऐलुमिनियम, ताँबा, चाँदी, निर्माण सामग्री, चमड़ा, काग़ज़ और वस्त्र प्रमुख हैं।

वायु प्रदूषण का प्रत्यक्ष प्रभाव दृश्यता पर पड़ता है जिसे देखा जा सकता है। वायुमंडल में सभी प्रदूषकों के मिश्रण के कारण दृश्यता पर अत्यधिक विपरीत प्रभाव पड़ता है।

वायु प्रदूषकों के प्रभाव उसकी तीव्रता को बतलाते हैं जिन्हें यदि समय रहते नियंत्रित न किया गया तो समस्या बढ़ सकती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

9.9 अंत में कुछ प्रश्न

1) वायु प्रदूषकों के वर्गीकरण के विभिन्न आधार कौन-कौन है?
2) कुहासा, धुंआ, धूम और धूल में एक-दूसरे से अंतर बताइए।
3) मनुष्यों की तुलना में जानवरों पर वायु-प्रदूषण का कैसे भिन्न प्रभाव पड़ता है?
4) प्रकाश रासायनिक धूम कुहरा क्या होता है? वह कैसे उत्पन्न होता है?
5) लंबे सूखे मौसम के बाद होने वाली बारिश क्यों हानिकर मानी जाती है?
6) वह कौन सी क्रियाविधि है जिसके द्वारा पौधों पर वायु प्रदूषण का प्रभाव पड़ता है?

9.10 उत्तर

बोध प्रश्न

1) ii)

2) क) वाहनों और उद्योग दोनों में तेल, कोयला और गैस का दहन, मृदा में जीवाणुक क्रिया; वन आग, ज्वालामुखी की क्रिया और तड़ित।

ख) विलायकों का उद्वाष्पन; ईधनों का उद्वाष्पन, जीवाश्म ईंधनों का अपूर्ण दहन।

ग) NO_2 के प्रकाश-अपघटन से बनता है; कभी-कभी समतापमंडल के ओज़ोन अंतः ान से भी बनता है।

घ) वी.ओ.सी. के साथ NO_2 की अभिक्रिया से बनता है (कुछ पर्यावरणों में प्राकृतिक रूप से भी बनता है)

3) i) - iiii
ii) - i)
iiii - ii)
iv) - v)
v) - vi)
vi) - vii)
vii) - vi)

4) SO_2, CO_2 आदि अम्ल उत्पादक गैसें H_2SO_4 और H_2CO_3 बनाती हैं जो चूना पत्थर $CaCO_3$ के साथ क्रिया करके $CaSO_4$ और बाइकार्बोनेट बनाता है। इस प्रकार पदार्थ निक्षालन से पीला पड़ जाता है।

5) कोयले के जलने से CO बनता है जो एक विषैली गैस है। यह रुधिर में मौजूद हीमोग्लोबिन से संयुक्त हो जाता है और ऑक्सीजन को संयुक्त नहीं होने देता है। कमरे में निर्गमद्वार न होने पर स्थिति गंभीर हो जाती है जिसके घातक परिणाम हो सकते हैं।

6) क) सीसा ख) फ्लुओराइड

7) i) नाइट्रोजन डाइआक्साइड और गंधक
ii) ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बन
iii) कणिकीय पदार्थ
iv) कणिकीय पदार्थ में सीसा
v) सल्फर डाइआक्साइड
vii) आर्सेनिक
viii) हाइड्रोजन सल्फाइड

MAADHYAM IAS

अंत में कुछ प्रश्न

1) वायु प्रदूषकों का वर्गीकरण उनके उद्गम, उत्पादन, भौतिक अवस्था, स्रोत और प्रभाव क्षेत्र के आधार पर किया जाता है। वर्गीकरण के आधार पर उन्हें प्राथमिक/द्वितीयक, प्राकृतिक/मानवजनित, परिवेश वायु/भीतरी वायु, स्थिर/गतिशील और कणिकीय/गैसीय समूहों में विभाजित किया जाता है।

2) **धूमिका** गैसीय प्रदूषकों के द्रव में संघनन से उत्पन्न होता है और वायु में निलंबित रहता है।

धुंआ कार्बनिक पदार्थ के जलने से बनता है। उसमें काजल और भस्म के कण होते हैं।

धूम गलित धातुओं के गैसीय पदार्थ के ठोस कणों में संघनन से बनते हैं।

धूल में कार्बनिक और अकार्बनिक यौगिकों के दलन से उत्पन्न ठोस कण होते हैं।

3) मनुष्य वायु प्रदूषकों के श्वसन से प्रभावित होते हैं जबकि जानवरों पर अप्रत्यक्ष रूप प्रभाव पड़ता है। वे उन पौधों को खाते हैं जो वायु प्रदूषकों से प्रभावित हो चुके हों।

4) प्रकाश रासायनिक धूम कुहरा, नाइट्रोजन ऑक्साइडों, फार्मैल्डिहाइड एक्रोलीन और पी.ए.एन. का मिश्रण होता है। जब O_2 की उपस्थिति में नाइट्रोजन गैस का पहल NO में और फिर NO_2 में आक्सीकरण होता है। प्राप्त NO_2 से परमाण्विक ऑक्सीजन मुक्त होता है जो O_2 के साथ संयुक्त होकर O_3 बनाता है। ओजोन और NO_2 अत्यंत ऑक्सीकारक होने के कारण वायु में हाइड्रोकार्बनों के साथ क्रिया करके फॉर्मैल्डिहाइड, ऐक्रोलीन और पी.ए.एन. बनाते हैं।

5) S और N के ऑक्साइड वायुमंडल में संचित होते हैं। वे वायु में मौजूद नमी के साथ संयुक्त होकर सल्फ्यूरिक अम्ल और नाइट्रिक अम्ल बनाते हैं। ये अम्ल बारिश के साथ नीचे आते हैं और बारिश के जल का पी.एच. कम कर देते हैं जो जीवित पदार्थों और अन्य पदार्थों के लिए हानिकारक होते हैं।

6) पत्तियां वायु प्रदूषण द्वारा प्रभावित होने वाला पौधों का सबसे अधिक महत्वपूर्ण भाग है। पत्तियों में छोटे छिद्र होते हैं जिन्हें स्टोमाटा कहते हैं जिनमें से गैसें और अन्य प्रदूषक पदार्थ प्रविष्ट कर पादप तंत्र में चले जाते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

परिशिष्ट

वायु प्रदूषण संबंधी दुर्घटनाएं

हाल के वर्षों में वायु-प्रदूषित संबंधी अनेक दुर्घटनाएं हुई हैं। जो उच्च प्रदूषण के कारण होने वाले खतरों की ओर संकेत करती हैं। इन दुर्घटनाओं से होने वाली मृत्युओं का हिसाब लगाने के लिए किसी इलाके में सामान्यतः विशेष अवधि में होने वाली मृत्युओं की, दुर्घटनाओं के समय हुई मृत्युओं से तुलना की जाती है। दोनों के अंतर को 'अतिरिक्त मृत्युएं' कहा जाता है।

सबसे बड़ी दुर्घटना दिसम्बर 1952 में लंदन में हुई जिसमें धूम कुहरे (SO_2 और कणिकीय पदार्थ) के कारण 4000 अतिरिक्त मृत्युएं हुईं। मृत्यु संख्या में हुई वृद्धि के 84% के लिए हृदय और श्वसन रोग उत्तरदायी थे। लंदन के देहात के एक छोटे से इलाके में दमा से मरने वालों की संख्या दस गुना हो गई जो धूम-कुहरा के पहले सप्ताह में 74 थी और धूम कुहरे वाले सप्ताह में 704 हो गई। सबसे अधिक मृत्यु उन लोगों की हुई जो पहले से श्वसन अथवा हृदय रोगों से पीड़ित थे।

नीचे दी गई सारणी में पूरी दुनिया में हुई वायु प्रदूषण संबंधी दुर्घटनाओं का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

वर्ष	तिथि	स्थान	प्रदूषण का कारण	अतिरिक्त मृत्युएं
1880	जनवरी 26-29	लंदन	-	1,176
1892	दिसम्बर 20-30	लंदन	-	779
1948	अक्टूबर 27-31	डोनोरा, पेन्सिलवानिया	ताप प्रतीपन में फंसे	20
1948	नवम्बर 26 दिसम्बर 1	लंदन	एस.पी.एम. : 2800 g μ/m^3 SO_2 : 0.75 पी.पी.एम.	700-800
1952	दिसम्बर 5-9	लंदन	एस.पी.एम. : 4500 g μ/m^3 SO_2 : 1.34 पी.पी.एम. 5 दिन ताप प्रतीपन	4,000
1956	जनवरी 3.6	लंदन	एस.पी.एम. : 2400 g μ/m^3 SO_2 : 0.55 पी.पी.एम.	1,000
1962	दिसम्बर 5-10	लंदन	SO_2 : 1.98 पी.पी.एम. औसत/घंटा	700
193	जनवरी 29 फरवरी 12	न्यूयार्क	ताप प्रतीपन	200-400
1984	दिसम्बर 3	भोपाल, भारत	मेथिल आइसोसायनेट गैस का रिसाव	>2500
1986	अप्रैल 28	चेर्नोबिल पूर्व य.एस.एस.आर.	न्यूक्लीय विस्फोट	2,000

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

नीचे दी गई सूची में वायु प्रदूषण संबंधी दुर्घटनाओं के प्रमुख अभिलक्षण दिए गए हैं (पर्यावरण सुरक्षा एजेंसी 1971 क)

1) कम पवन-वेग और ताप प्रतीपन के कारण उत्पन्न स्थिर वायु

2. धुंआ, SO_2, कणिकीय पदार्थ और अन्य प्रदूषकों की सान्द्रताओं में वृद्धि से खांसी, आँखों में जलन और अन्य रोग बढ़ जाते हैं।

3) प्रदूषण उच्च स्तर पर पहुँचने से मृत्यु संख्या में वृद्धि हो जाती है।

4) आयु बढ़ने से अतिरिक्त मृत्यु संख्या बढ़ जाती है।

5) सभी आयु वर्गों में मृत्यु और बीमारी होती है।

6) मृत्यु मुख्यतया श्वसन और हृदय संबंधी समस्याओं से होती है।

7) अनेक प्रदूषणों के संयुक्त प्रभाव का स्वास्थ्य पर शीघ्र असर पड़ता है।

8) दुर्घटना 2-7 दिन तक होती है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 10 वायु गुणवत्ता मानीटरन तथा नियंत्रण

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
10.2 वायु गुणवत्ता
भीतरी और बाहरी वायु गुणवत्ता
वायु गुणवत्ता प्रबंधन पद्धति और मानक
वायु गुणवत्ता के माप
10.3 वायु गुणवत्ता मानीटरन
राष्ट्रीय परिवेश वायु प्रबंधन कार्यक्रम
परिवेश वायु प्रतिचयन
परिवेश वायु विश्लेषण की विधियां
सामान्य वायु प्रदूषकों का विश्लेषण
10.4 वायु प्रदूषण नियंत्रण
10.5 सारांश
10.6 अंत में कुछ प्रश्न
10.7 उत्तर

10.1 प्रस्तावना

हाल ही में राष्ट्रीय राजधानी के प्रमुख समाचार पत्रों में केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सी.पी.सी.बी) की एक रिपोर्ट प्रकाशित हुई थी जिसका शीर्षक था - '2050 तक काला ताजमहल'। यह वायु प्रदूषण की निराशाजनक स्थिति को व्यक्त करता है। विश्वस्वास्थ्य संगठन का अनुमान है कि शहरी वायु प्रदूषण के कारण प्रत्येक वर्ष लगभग 800,000 लोगों की मृत्यु होती है तथा 46 लाख आयु वर्षों की हानि होती है। इस खंड की पिछली इकाइयों में वायु प्रदूषण और उसके हानिकारक प्रभावों के बारे में पढ़ते हुए आपने अनुमान लगाया होगा कि वायु प्रदूषण के बहुत विध्वंसक प्रभाव होते हैं। सरकारी और अनेक गैर-सरकारी एजेंसियों के लिए यह अनिवार्य है कि वे वायु गुणवत्ता मानकों का प्रतिपादन करें। यह भी आवश्यक है कि उनके पास विश्वसनीय मानीटरन कार्यक्रम हों तथा वे उपयुक्त नियंत्रण मापों का अनुसरण करें ताकि विश्वभर में रहने वाले करोड़ों लोगों के लिए उत्तम स्वास्थ्य सुनिश्चित किया जा सके। सही युक्तियों के अनुसरण का और सर्वोच्च न्यायालय के हस्तक्षेप का प्रमुख महानगरों में वायु की गुणवत्ता पर कुछ प्रभाव पड़ा है। आगे और भी सुधार की गुंजाइश है।

इस खंड की अंतिम इकाई में हमारे देश में, विस्तृत परिप्रेक्ष्य में, वायु गुणवत्ता मानीटरन संबंधी आवश्यकताओं का उल्लेख किया गया है। इस संदर्भ में वायु गुणवत्ता प्रबंधन व्यवस्था से संबंधित शब्दों जैसे वायु गुणवत्ता, वायु गुणवत्ता मानक, वायु गुणवत्ता मानीटरन आदि की व्याख्या की गई है। मानीटरन और नियंत्रण की संकल्पनाओं को समझने के लिए अत्यंत खतरनाक वायु प्रदूषकों के लिए प्रयुक्त कुछ मानीटरन विधियों के नियमों का वर्णन किया गया है। उनसे खंड 7 में वर्णित वायु प्रदूषण से संबंधित प्रयोगों में निहित संकल्पनाओं की जानकारी प्राप्त होगी।

MAADHYAM IAS

अगले खंड में वायुमंडल के अन्य दो घटकों, जल और मृदा, के प्रदूषणों का उल्लेख किया गया है।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप,

- वायु गुणवत्ता की परिभाषा दे सकेंगे और उसके महत्व की व्याख्या कर सकेंगे,
- विश्व में और भारत में अपनाए जाने वाले वायु गुणवत्ता मानकों का उल्लेख कर सकेंगे,
- वायु गुणवत्ता प्रबंधन पद्धति की व्याख्या कर सकेंगे;
- सामान्य वायु प्रदूषकों की मानीटरन विधियों में निहित नियमों का वर्णन कर सकेंगे, और
- सामान्य वायु प्रदूषकों के नियंत्रण उपायों की व्याख्या कर सकेंगे।

10.2 वायु गुणवत्ता

पिछली इकाई में आपने विभिन्न प्रकार के वायु प्रदूषकों तथा उनके द्वारा जीवित प्राणियों और पदार्थों पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों के बारे में पढ़ा। आपको याद होगा कि हानिकारक स्वास्थ्य प्रभाव वाले वायु प्रदूषकों में नाइटोजन, सल्फर के ऑक्साइड, CO, हाइड्रोकार्बन और ऐरोसॉल आदि आते हैं। इसके अलावा जलवायु की दृष्टि से महत्वपूर्ण गैसों, जैसे CO_2, मेथेन, और नाइट्रस आक्साइड का वायुमंडल के ग्रीन हाऊस प्रभाव में योगदान होता है जिसे विश्व तापन और अन्य जलवायु संबंधी परिवर्तन होते हैं। भारत में बढ़ती आबादी, शहरीकरण, और औद्योगिकीकरण के कारण नई दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई और कोलकाता आदि शहरों की गणना दुनियां के सबसे अधिक प्रदूषित शहरों में की जाती है। दुनिया में प्रत्येक वर्ष घर के अंदर और बाहर के वायु प्रदूषण के कारण लगभग 30 लाख लोगों की अकाल मृत्यु होती है। इनमें सबसे अधिक मृत्यु भारत में होती है। इसलिए सार्वजनकि स्वास्थ्य और संपदा की रक्षा के लिए वायु गुणवत्ता के वांछित स्तर को बनाए रखने हेतु मानक निर्धारित करना आवश्यक है जिनमें समुचित सुरक्षा हो। वायु गुणवत्ता की परिभाषा वायु गुणवत्ता के मानकों और कसौटियों के शब्दों में दी जाती है जिसकी चर्चा उप-भाग 10.2.2 में की गई है।

औसत व्यस्क प्रतिदिन 3000 गैलन वायु का श्वसन करता है। बच्चे प्रति पाऊड शरीर भार अधिक श्वसन करते हैं जिससे वायु प्रदूषण के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं।

घर के अंदर और घर के बाहर पर्यावरण में वायु प्रदूषण के कारण और वायु गुणवत्ता की आवश्यकताएं भिन्न-भिन्न होती हैं। आइए, घर अंदर और बाहर वायु गुणवत्ता संबंधी बातों का अध्ययन करें।

10.2.1 भीतरी और बाहरी वायु गुणवत्ता

घर के अंदर वायु गुणवत्ता का संबंध किसी भवन, अथवा संस्थागत क्षेत्र अथवा व्यापारिक संस्थान के अंदर वायु में भौतिक रासायनिक और जैव अभिलक्षणों से है। यह घर के अंदर वायु में गैसों अथवा की कणिकाओं की सान्द्रता की माप होता है जो प्रदूषण के लिए उत्तरदायी होते हैं। यह अपर्याप्त वातायन, उच्च ताप और आर्द्रता के कारण होता है। वातायन की कमी से बाहर की वायु पर्याप्त मात्रा में अंदर नहीं आती है जिससे अंदर के स्रोतों से प्राप्त उत्सर्जनों का तनूकरण नहीं होता है। साथ ही भवन के अंदर मौजूद प्रदूषक बाहर नहीं जा सकते हैं। विकासशील देशों में 60-80% घरों में भोजन बनाने के ठोस जैवसंहित आदि परंपरागत ईंधनों का उपयोग किया जाता है। उसमें सबसे अधिक भीतरी प्रदूषण होता है। भीतरी प्रदूषण के निम्नलिखित कारण हैं:

- भवन के अंदर दहन से गैसों का विमोचन,
- कालीन, आसंजक, पेन्ट, सफाई के लिए प्रयुक्त पदार्थों आदि से वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों का विमोचन,

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

- भवन के बाहर से खुले दरवाजों और खिड़कियो में से गैसों और कणिकीय पदार्थों का अंत:स्यंदन।
- भवन के भीतरी भागों और वातायन पद्धतियों को संदूषित करने वाले सूक्ष्मजीव।

भीतरी वायु प्रदूषण के शीघ्र और दीर्घकालिक प्रभाव होते हैं। शीघ्र होने वाले प्रभावों में आँख, नाक और गले में जलन, सिरदर्द, चक्कर और थकान आदि शामिल हैं। दीर्घकालिक प्रभाव, उद्‌भासन के कई वर्ष बाद प्रकट होते हैं जिनमें श्वसन रोग, हृदय रोग और कैंसर आदि आते हैं।

1992 में विश्व बैंक ने बताया कि विकासशील देशों में अंदरी प्रदूषण चार सबसे अधिक संकटपूर्ण पर्यावरण समस्याओं में से एक है।

दूसरी ओर बाहरी वायु गुणवत्ता, जिसे परिवेशी वायु गुणवत्ता भी कहते हैं, का संबंध वायुमंडल में वायु प्रदूषकों की माप से हैं। इसमें निम्नलिखित छः मुख्य घटकों का ध्यान रखा जाता है।

- निलंबित कणिकीय पदार्थ (suspended particulate matter) (एस.पी.एम.) श्वसनीय निलंबित कणिकीय पदार्थ (respirable suspended perticulate matter) (आर. एस. पी.एम.)
- कार्बन मोनोक्साइड
- नाइट्रोजन के ऑक्साइड
- ओज़ोन, और
- सीसा

बाहरी वायु गुणवत्ता का विशेष महत्व है क्योंकि उसका प्रभाव सभी जीवित प्राणियों, पदार्थों और वस्तुओं पर पड़ता है। उत्सर्जन स्रोत, स्थानीय मौसम और वायु प्रदूषण निर्धारण से परिवेशी वायु गुणवत्ता की स्थिति की जानकारी प्राप्त होती है। परिवेशी मानकों/लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रदूषण नियंत्रण उपायों की जानकारी के लिए मॉडल बनाने की आवश्यकता होती है। वांछित परिवेशी वायु गुणवत्ता को मानीटर करने और प्राप्त करने का उत्तम, सक्षम और सस्ता उपाय है - एक वायुगुणवत्ता प्रबंधन पद्धति विकसित करना, आइए हमारे देश में प्रचालित / प्रयुक्त वायु गुणवत्ता प्रबंधन पद्धति के बारे में बढ़ें। आगे बढ़ने से पहले निम्नलिखित बोध प्रश्न का उत्तर देने का प्रयास करें।

बोध प्रश्न

1) निम्नलिखित में सबसे उपयुक्त उत्तर का चयन कीजिए।

वायु गुणवत्ता का संबंध निम्नलिखित की माप की जाती है।

क) वायु के विभिन्न घटकों की सान्द्रता।

ख) वायु में प्रदूषण करने वाले विभिन्न घटकों की सान्द्रता।

ग) विभिन्न स्रोतों से उत्सर्जन।

घ) वायु प्रदूषण के कारण स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

10.2.2 वायु गुणवत्ता प्रबंधन पद्धति और मानक

वायु गुणवत्ता प्रबंधन पद्धति (air quality management systems) (ए.क्यू.एम.एस.) का अर्थ है परिवेशी वायु गुणवत्ता मानकों अथवा लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रदूषक उत्सर्जन की मात्रा, स्थान और समय को नियमित करना। इसके अंतर्गत प्रचलित उत्सर्जन नियंत्रण कार्यक्रमों का मूल्यांकन किया जाता है ताकि वायु गुणवत्ता के परिणाम निर्धारित किए जा

सकें। इसमें प्रौद्योगिकी संभावनाओं और मितव्यय आदि प्रतिबंधों को ध्यान में रखते हुए वायु गुणवत्ता लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए वैकल्पिक उत्सर्जन नियंत्रण कार्यक्रमों का प्रतिपादन भी किया जाता है।

ए.क्यू.एम.एस. वायु गुणवत्ता की समस्या से निपटने की युक्ति है। यह वायु गुणवत्ता में लगातार सुधार करने, विशेष रूप से स्थानीय समस्याओं के लिए, अत्यंत प्रभावकारी है।

वायु प्रदूषण के प्रतिकूल प्रभावों से मानव स्वास्थ्य, वनस्पति और अन्य जीवित प्राणियों, सम्पत्ति तथा पर्यावरण को बचाने के लिए केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, नई दिल्ली (Central Pollution Control Board) (सी.पी.सी.बी.) की स्थापना की गई है और राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता मानकों (एन.ए.ए.क्यू.एस.) को अधिसूचित किया गया है। वायु गुणवत्ता सुधार के लिए अल्पकालिक और दीर्घकालिक लक्ष्यों को निर्धारित करने तथा उनकी प्राप्ति हेतु युक्ति बनाने के लिए ये मानक आवश्यक होते हैं जो इन युक्तियों को मानीटर और निर्धारण करने के लिए भी संकेतक का काम करते हैं। मात्रा प्रभाव और मात्रा अनुक्रिया के संबंधों के आधार पर विभिन्न वायु प्रदूषकों के लिए राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता मानक विकसित किये गये हैं जो वायु गुणवत्ता प्रबंधन पद्धति के आवश्यक अंग हैं। सल्फर डाइआक्साइड (SO,), नाइट्रोजन आक्साइड (NO,), निलंबित कणिकीय पदार्थ (एस.पी.एम.), श्वसनीय कणिकीय पदार्थ (आर.पी.एम.) (<10 μm), सीसा (Pb) और अमोनिया (NH_3) के मानक वार्षिक और 24 घंटों के औसत के रूप में निर्धारित किए जाते हैं जबकि कार्बन मोनोक्साइड (CO)

ार और प्रमुख लक्षण इस प्रकार हैं :

- सार्वजनिक स्वास्थ्य, वनस्पति और सम्पत्ति की रक्षा के लिए वायु गुणवत्ता मानकों को निर्धारित करते समय सुरक्षा के लिए समुचित सुरक्षा का ध्यान रखा जाता है।
- दीर्घकालिक मानकों को (वार्षिक औसत) जनसंख्या की उच्चस्तरीय प्रदूषण के लगातार उद्भासन से रक्षा करने के लिए निर्धारित किया जाता है। इनका निर्धारण पूरे वर्ष में कम से कम 104 मापों के गणितीय माध्य के रूप में किया जाता है जिन्हें सप्ताह में दो बार (24 घंटेवार) समान अंतरालों पर लिया जाता है।
- दूसरी ओर अल्पकालिक मानकों (1/8/24 घंटों के औसत) का निर्धारण कम अवधियों के लिए उच्च प्रदूषण-स्तर के उद्भासन से उत्पन्न तीव्र प्रभावों को नियंत्रित करने के लिए होता है। इनका अनुभव एक वर्ष में 98% बार होता है और दो क्रमिक दिनों में अधिक नहीं होना चाहिए।
- i) औद्योगिक क्षेत्रों, ii) आवसीय, ग्रामीण और अन्य क्षेत्रों तथा iii) संवेदनशील क्षेत्रों के लिए विभिन्न मानक निर्धारित किए गए हैं जो भूमि उपयोग पैटर्न पर निर्भर करते हैं।

सारणी 10.1 में औद्योगिक, आवासीय (ग्रामीण और अन्य) तथा संवेदनशील क्षेत्रों के लिए SO_2, नाइट्रोजन आक्साइड (NO,), निलंबित कणिकीय पदार्थ (एस.पी.एम.) श्वसनीय कणिकीय पदार्थ (आर.पी.एम.) (<10μm), CO, Pb और NH_3 के राष्ट्रीय परिवेश वायु गुणवत्ता मानक दिए गए हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

सारणी 10.1: कुछ प्रदूषकों के लिए राष्ट्रीय परिवेश वायु गुणवत्ता मानक

प्रदूषक	**सल्फर डाइ आक्साइड SO_2**		नाइट्रोजन आक्साइड (NO_2)		निलंबित कणिकीय द्रव्य (एस.पी.एम.)		श्वसनीय कणिकीय पदार्थ (आर.पी.एस.)		कार्बन मोनोक्साइड **CO**		**सीसा Pb**	
समय भार औसत	वार्षिक औसत ($\mu g/m^3$)	**24 घंटे औसत** ($\mu g/m^3$)	वार्षिक औसत ($\mu g/m^3$)	24 घंटे औसत ($\mu g/m^3$)	वार्षिक औसत ($\mu g/m^3$)	24 घंटे औसत ($\mu g/m^3$)	वार्षिक औसत ($\mu g/m^3$)	24 घंटे औसत ($\mu g/m^3$)	वार्षिक औसत ($\mu g/m^3$)	24 घंटे औसत ($\mu g/m^3$)	वार्षिक औसत ($\mu g/m^3$)	24 घंटे औसत ($\mu g/m^3$)
औद्योगिक क्षेत्र	80	120	80	120	360	500	120	150	5.0	10.0	1.0	1.5
आवासीय (ग्रामीण और अन्य)	60	80	60	80	140	200	60	100	2.0	4.0	0.75	1.0
संवेदनशील क्षेत्र	15	30	15	30	70	100	50	75	1.0	2.0	0.50	0.75

वायु प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण को कानूनी आधार देने के लिए एक केन्द्रीय कानून बनाया गया है जिसे वायु (प्रदूषण रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम 1981 [Air (Prevention and Control of Pollution) Act 1981] अथवा केवल वायु अधिनियम 1981 कहते हैं।

किसी स्थान में वायु गुणवत्ता को वायु गुणवत्ता सूचकांक और अतिरेक कारक आदि प्राचलों द्वारा व्यक्त किया जाता है। आइए, इन प्राचलों के अभिप्राय और महत्व को समझने का प्रयास करें।

10.2.3 वायु गुणवत्ता के माप

आपने देखा होगा कि स्थानीय वायु गुणवत्ता में दिन प्रतिदिन अथवा प्रत्येक घंटे में परिवर्तन होता रहता है। समाचार पत्रों आकाशवाणी और दूरदर्शन में मौसम पूर्वानुमान और उसकी जानकारी नियमित रूप से प्रकाशित व प्रसारित की जाती है। दैनिक वायु गुणवत्ता की जानकारी के अंतर्गत अनेक वायु प्रदूषकों के आंकड़े दिए जाते हैं। वायु-गुणवत्ता का वर्गीकरण कुछ मात्रात्मक प्राचलों के आधार पर किया जाता है जो दिए गए नमूने में प्रदूषकों के वास्तविक और अनुमेय (अथवा मानक) मानों पर निर्भर करते हैं। ऐसे दो प्राचल हैं।

- वायु गुणवत्ता सूचकांक (air quality index) (ए.क्यू.आइ.) जो पर्यावरण रक्षा एजेंसी (Environmental Protection Agency) (इ.पी.ए.) यू.एस.ए. द्वारा दिया जाता है।
- अतिरेक कारक [Exceedence Factor (EF)] जो केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, भारत द्वारा दिया जाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

वायु गुणवत्ता सूचकांक

वायु के नमूने में किसी प्रदूषक की वास्तविक सान्द्रता को व्यक्त करने वाली संख्या है। इसे, प्रदूषक के अनुमेय मान को 100 मानकर निर्धारित किया जाता है। इसे निम्न सूत्र द्वारा परिकलित किया जा सकता है।

$$\text{ए.क्यू.आइ} = \frac{\text{वायु में किसी प्रदूषक की वास्तविक सान्द्रता}}{\text{उसी प्रदूषक का अनुमेय मान}} \times 100$$

ए.क्यू.आई. वायु प्रदूषण स्तर के अनुलोमानुपाती (directly proportional) होता है। उच्च मान स्वास्थ्य के लिए अधिक चिन्ता का विषय होता है। इ.पी.ए. द्वारा उपलब्ध वायु गुणवत्ता

सूचकांक में संख्या-परास गुणवत्ता मानों को निरूपित करता है। सूचकांक से ज्ञात प्रदूषण स्तर के अनुसार स्वास्थ्य पर पड़ने वाला प्रभाव और संगत उपचार उपायों की जानकारी भी मिलती है। ए.क्यू.आइ. में पाँच प्रमुख वायु प्रदूषकों अर्थात् ओज़ोन, कणिकीय पदार्थ, कार्बन मोनोक्साइड, सल्फर डाइ आक्साइड और नाइट्रोजन डाइआक्साइड के बारे में सूचना होती है। पाँच प्रदूषकों में से प्रत्येक का मान निर्धारित होने के बाद सबसे अधिक मान को उस दिन का प्रदूषक मानक सूचकांक माना जाता है।

ए.पी.ए. द्वारा ए.क्यू.आई. को छः वर्गों में विभाजित किया गया है जो स्वास्थ्य के भिन्न स्तरों के संगत होते हैं। उन्हें भिन्न रंगों द्वारा निरूपित किया जाता है। सारणी 10.2 में इन संवर्गों, उनके मान, स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों और रंग सूचकों को दर्शाया गया है।

सारणी 10.2 : इ.पी.ए. (यू.एस.ए.) के अनुसार ए.क्यू.आई के विभिन्न संवर्ग

संवर्ग का नाम	ए.क्यू.आई. मान	संबंधित स्वास्थ्य प्रभाव	रंग कोड
अच्छा	0–50	संतोषजनक, कोई खतरा नहीं	हरा
मध्यम	51–100	स्वीकार्य, कुछ प्रदूषकों के लिए सामान्य स्वास्थ्य समस्या, बहुत कम लोगों को जो ओज़ोन के लिए अभिक्रियाशील होते हैं, श्वसन रोग हो सकते हैं। सामान्य लोग पर कोई प्रभाव नहीं	पीला
संवेदनशील वर्ग	101–150	अभिक्रियाशील वर्ग के सदस्य प्रभावित के लिए अस्वास्थ्यकर होते हैं। फेफड़े रोगी अथवा हृदयरोगी को अधिक खतरा रहता है।	नारंगी
अस्वास्थ्यकर	151–200	सबके लिए स्वास्थ्य की चिंता	लाल
बहुत अस्वास्थ्यकर	201–300	स्वास्थ्य चेतावनी / स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव	जामुनी
खतरनाक	301–500	संपूर्ण जनसंख्या प्रभावित 400 से अधिक ए.क्यू.आइ. पर आपातकालीन चेतावनी। सभी लोगों विशेषत: वृद्ध लोगों को चेतावनी	मरून

अतिरेक कारक (exceedence factor)

भारत में सी.पी.सी.बो. ने राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों (एस.पी.सी.बी.) के सहयोग से वायु प्रदूषण को तीन क्रांतिक प्रदूषकों, यानी सल्फर डाइआक्साइड, नाइट्रोजन डाइआक्साइड और निलंबित कणिकीय पदार्थों की दृष्टि से संवर्गित किया गया है। ये संवर्ग, अतिरेक कारक (इ.एफ.) नामक प्राचल पर आधारित हैं जिसका परिकलन इस प्रकार किया जाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

$$\text{अतिरेक कारक} = \frac{\text{क्रांतिक प्रदूषण की प्रेक्षित वार्षिक माध्य सान्द्रता}}{\text{उसी प्रदूषक और क्षेत्र वर्ग का वार्षिक मान}}$$

अतिरेक कारक के आधार पर वायु गुणवत्ता को चार प्रमुख संवर्गों में रखा जा सकता है। ये सारणी 10.3 में दिए गए हैं।

सारणी 10.3: सी.पी.सी.बी. भारत के अनुसार वायु गुणवत्ता संवर्ग

वायु गुणवत्ता संवर्ग	संवर्ग कोड	अतिरेक कारक मान
1. क्रांतिक प्रदूषण	C	> 1.5
2. उच्च प्रदूषण	H	1.0 – 1.5
3. मध्यम प्रदूषण	M	0.5 – 1.0
4. अल्प प्रदूषण	L	< 0.5

भारत के औद्योगिक और आवासीय शहरों में आपेक्षिक वायु गुणवत्ता स्थिति का सारणी 10.4 में पुनरीक्षण किया गया है।

सारणी 10.4: भारत के औद्योगिक और आवासीय शहरों में आपेक्षिक वायु गुणवत्ता स्थिति

प्रदूषण स्तर	वार्षिक माध्य सान्द्रता परास ($\mu g/m^3$)			
	औद्योगिक		आवासीय	
	SO_2 और NO_2	एस.पी.एम.	SO_2 और NO_2	एस.पी.एम.
अल्प (L)	0 – 40	0 – 180	0 – 30	0 – 70
मध्यम (M)	40 – 80	180 – 360	30 – 60	70 – 140
उच्च (H)	80 – 120	360 – 540	60 – 90	140 – 210
क्रांतिक (C)	> 120	> 540	> 90	> 210

वायु प्रदूषकों के वांछित स्तर सुनिश्चित हो जाने के बाद उन स्तरों को प्राप्त करने के लिए प्रयास करना आवश्यक हो जाता है। वायु गुणवत्ता को मानीटर करना ऐसे उपायों का अनिवार्य अंग हो जाता है। आइए, यह पढ़ें कि वायु गुणवत्ता को कैसे मानीटर किया जाता है। अगले भाग में जाने से पहले निम्नलिखित बोध प्रश्न का उत्तर दें।

बोध प्रश्न

2) रिक्त स्थानों में उपयुक्त शब्द लिखिए।

वायु गुणवत्ता के दीर्घकालिक मानक ____________ वर्ष में, सप्ताह में _________ बार _________ घंटों तक लिए गए मापों के आधार पर व्यक्त किए जाते हैं जबकि लघुकालिक मानक प्रतिदिन __________, __________ और __________ घंटों के आधार पर व्यक्त किए जाते हैं।

10.3 वायु गुणवत्ता मानीटरन

MAADHYAM IAS

शहरी क्षेत्रों में बढ़ते वायु प्रदूषण के कारण वायु गुणवत्ता में होने वाले दीर्घकालिक और लघुकालिक परिवर्तनों को निर्धारित करने के लिए लगातार मानीटर करने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार के और इस परिमाण के कार्यक्रम के लिए जनता को सचेत करने और प्रेरित करने की आवश्यकता है। भारत में वायु गुणवत्ता का मानीटरन 1960 के दशक के बाद में आरंभ किया गया। आरंभ में यह सल्फर डाइआक्साइड, नाइट्रोजन आक्साइड और निलंबित कणिकीय पदार्थों के लिए ही किया गया। आजकल श्वसनीय कणिकीय पदार्थ (आर.पी. एम) का भी मानीटरन प्रारंभ हो गया है। बहुनाभिकीय ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बनों, (polynuclear aromatic hydrocarbon) (पी.ए.एच.), ओज़ोन, CO और बेंज़ीन आदि का विस्तृत और नियमित मानीटरन अभी भी नहीं हो रहा है।

पूरे देश में किए जाने वाले कार्यक्रम में, जिसे राष्ट्रीय परिवेश वायु मानीटरन कार्यक्रम **(National Ambient Air Monitoring** Programme **(NAMP)** (एन ए.एम पी.) कहते हैं, सी पी.सी.बी. ने अनेक परिवेश वायु गुणवत्ता मानीटरन केन्द्रों को स्थापित किया है। इस कार्यक्रम को 1984 में 7 शहरों में फैले 28 मानीटरन केन्द्रों के साथ आरंभ किया गया था। आजकल केन्द्रों की संख्या 295 हो गई है जो 24 राज्यों और 4 केन्द्र प्रशासित प्रदेशों के 92 शहरों में फैले हैं। एन.ए.एम.पी. कार्यक्रम के समान ही अनेक राज्य बोर्डों ने भी अपने परिवेश वायु गुणवत्ता मानीटरन **(Ambient Air Quality Monitoring)** (ए ए क्यू.एम) के अंतर्गत परिवेश वायु गुणवत्ता मानीटरन केन्द्र स्थापित किए हैं। इसके अलावा राष्ट्रीय पर्यावरण इंजीनियरी अनुसधान संस्थान **(National Environmental Engineering Research Institute) (NEERI)** (एन.इ.इ.आर.आइ.) **10** प्रमुख शहरों में फैले **30** मानीटरन केन्द्रों में परिवेश वायु गुणवत्ता मानीटर करता है। कुछ प्रमुख उद्योगों ने भी कानूनी बाध्यता के कारण अपने मानीटरन केन्द्र स्थापित किए हैं।

एन.ए.एम.पी. और ए.ए.क्यू.एम. केन्द्र NO_2, SO_2 और एस.पी.एम. प्रदूषकों तथा पवन-गति, पवन-दिशा, ताप और आर्द्रता आदि मौसमी प्राचलों को मानीटर करते हैं। दूसरी ओर एन.इ. इ.आर.आइ. इन परंपरागत प्राचलों के अलावा NH_3, H_2S, आर.एस.पी.एम., बहुनाभिकीय ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (polynuclear aromatic **hydrocarbon) और** भारी धातुएं जैसे विशिष्ट प्राचलों को मानीटर करता है। हाल में सी.पी.सी.बी. ने अपने दिल्ली स्थित कुछ मॉनीटरन केन्द्रों में सीसा, बहुनाभिकीय ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (polynuclear **aromatic hydrocarbon),** भारी धातुए, ओज़ोन **और CO** का मानीटरन आरंभ किया है। इस प्रकार के वायु गुणवत्ता मानीटरन कार्यक्रमों के उद्देश्य इस प्रकार हैं :

- उन्नत पद्धतियाँ अपनाकर वर्तमान वायु मानीटरन विधि को मज़बूत करना,
- स्थान विशेष के अनुसार प्रदूषकों को मानीटर करना,
- वर्तमान वायु गुणवत्ता स्थिति और प्रवृत्ति निर्धारित करना,
- उद्योग स्थापित करने और शहरी योजना की आवश्यकता के अनुसार वायु गुणवत्ता आंकड़े प्रदान करना, और
- वायु गुणवत्ता मानकों को प्राप्त करने के लिए उद्योगों और अन्य स्रोतों से प्राप्त प्रदूषण को नियंत्रित और नियमित करना।

10.3.1 राष्ट्रीय परिवेश-वायु गुणवत्ता प्रबंधन कार्यक्रम

जैसा कि ऊपर बताया गया है राष्ट्रीय परिवेश-वायु गुणवत्ता मानीटरन (एन.ए.एम.पी.) कार्यक्रम पूरे देश का वायु मानीटरत नेटवर्क है। इस कार्यक्रम में अनेक एजेंसियां शामिल हैं। ये हैं :

- केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सी.पी.सी.बी.), दिल्ली में
- विभिन्न राज्यों में राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (एस.पी.सी.बी.)
- केन्द्र प्रशासित प्रदेशों में प्रदूषण नियंत्रण कमेटियां
- 10 शहरों में राष्ट्रीय पर्यावरण इंजीनियरी अनुसंस्थान संस्थान (एन.इ.इ.आर.आइ.)
- नागपुर में विश्वेश्वरया क्षेत्रीय इंजीनियरी कालेज
- पुणे विश्वविद्यालय
- के.टी.एच.एम. कालेज, नासिक
- वालचंद प्रौद्योगिकी संस्थानी, सोलापुर

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इन एजेंसियों के साथ समन्वय करने का काम सी.पी.सी.बी. का है ताकि समानता, सामन्जस्य और संगतता बनी रहे। मानीटरन केन्द्रों को चलाने के लिए सी.पी.सी.बी इन एजेंसियों को तकनीकी और आर्थिक सहायता भी देता है। सी.पी.सी.बी. द्वारा प्रदूषकों को मापने की विधियां परिवेश वायु गुणवत्ता मानकों में अभिनिर्धारित और अभिसूचित की जाती है। परिवेश वायु गुणवत्ता मानकों के प्रलेख में SO_2, NO_2, एस.पी.एम.,आर.एस.पी.एम., श्वसनीय सीसा और CO आदि वायु प्रदूषकों के बारे में सूचना होती है। ये मानक लोगों के स्वास्थ्य की वायु प्रदूषकों के विपरीत प्रभावों से रक्षा करना तथा उन्हें सुरक्षा की उचित सीमा तक रखने का आधार प्रदान करते हैं। इन मानीटरन केन्द्रों से प्राप्त वायु गुणवत्ता आंकड़ों का संकलन वार्षिक रिपोर्ट में प्रकाशित किया जाता है ताकि नीति निर्धारक, अनुसंधान कर्ता और आम जनता लाभ उठा सके।

एन.ए.एम.पी. और ए.ए.क्यू.एम. के अधीन होने वाले अधिकांश मानीटरन कार्यक्रम औद्योगिक, आवासीय और व्यापारिक क्षेत्रों तक सीमित रहते हैं किन्तु मानीटरन कार्यक्रमों को आरक्षित वनों और वन्य जीवों के लिए स्थापित करने की आवश्यकता है।

वायु गुणवत्ता के मानीटरन के महत्व की और विभिन्न स्तरों पर किए जाने वाले विभिन्न कार्यक्रमों की जानकारी के बाद आइए ज्ञात करें कि मानीटरन का कार्य कैसे किया जाता है? वायु गुणवत्ता मानीटरन में पहला कदम वायु के नमूने का संग्रह है। आइए, इसके लिए प्रयुक्त विधियों और उपकरणों को समझने का प्रयत्न करें। अपनी समझ के आकलन के लिए निम्नलिखित बोध प्रश्न का उत्तर दें।

बोध प्रश्न

3) स्तंभ क में प्रदूषकों की सूची दी गई है। स्तंभ ख में उनके केन्द्रों अथवा संस्थानों के नाम लिखिए जहाँ उन्हें मानीटर किया जाता है।

	क	ख
1)	राज्य स्तर पर NO_2, SO_2 और एस.पी.एम.	
2)	NH_3,H_2S, आर.एस.पी.एम. पी.ए.एच., भारी धातुएं	
3)	सीसा, बहुनाभिकीय ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बन, भारी धातुएं ओज़ोन और CO	
4)	राष्ट्रीय स्तर पर NO_2, SO_2, एस.पी.एम. और मौसम विज्ञान संबंधी प्राचल	

10.3.2 परिवेश वायु प्रतिचयन (Sampling)

MAADHYAM IAS

अपने स्वभाव के कारण वायु के नमूने का विश्लेषण करना कठिन होता है। कठिनाइयों का कारण वायु में प्रदूषकों के स्वभाव में भिन्नता; निर्धारित किए जाने वाले पदार्थों की अल्प सान्द्रताएं; समय और स्थान के अनुसार सान्द्रता परिवर्तन; ताप, पवन, आर्द्रता आदि मौसम विज्ञान संबंधी कारकों में परिवर्तन आदि हैं। अन्य समस्या स्वयं नमूने के एकत्र करने के बारे में है क्योंकि वांछित प्रतिचयन स्थल वहां से दूर हो सकता है।

वायु प्रतिचयन में सामान्य सावधानियां

वायु नमूना, स्थान विशेष और समय विशेष का वास्तविक निरूपक होना चाहिए। प्रतिचयन प्रक्रिया के समय त्रुटियों की संभावना रहती है इसलिए वायु का नमूना लेते समय कुछ मूल नियमों का अनुसरण आवश्यक है। उन्हें नीचे दिया गया है:

नमूने का आमाप (sampling size): सार्थक वैश्लेषिक निर्धारण के लिए आवश्यक नमूने का आमाप प्रदूषक की संभावित सान्द्रता तथा विश्लेषण के लिए प्रयुक्त तकनीक की संवेदनशीलता पर निर्भर करता है। इसलिए प्रदूषक के ठीक-ठीक निर्धारण के लिए नमूने का आमाप पर्याप्त होना चाहिए। सामान्यतया नमूने का आमाप $1 - 10\ m^3$ होता है।

प्रतिचयन की दर (rate of sampling): प्रतिचयन युक्ति की प्रवाह दर ऐसी होनी चाहिए कि एकत्र करने में अधिकतम दक्षता हो। वायु की प्रतिचयन दर सामान्यतया प्रयुक्त प्रतिचयित्र (sampler) पर निर्भर करती है। अधिकांश प्रतिचयन युक्तियों की दर $0.003 - 3\ m^3/min$ के अनुमेय परास में होती है। प्रतिचयन युक्ति द्वारा पुनरुत्पादनीय नमूनों को कम से कम 75% दक्षता के साथ एकत्रित करना चाहिए। प्रतिचयन दक्षता, युक्ति पर निर्भर करती है और उसे प्रयोग द्वारा निर्धारित करना चाहिए।

प्रतिचयन अवधि (sampling duration) : प्रदूषकों की सान्द्रता, समय और अवधि के अनुसार बदलती रहती है अतः प्रतिचयन का समय (कब ?) और अवधि (कितने समय तक ?) प्राप्त परिणामों को प्रभावित करते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि प्रतिचयन का समय और अवधि आवश्यक सूचना के स्वभाव के आधार पर निश्चित की जा सकती है। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वायु विश्लेषण के परिणाम, प्रतिचयन अवधि में प्रदूषकों की औसत सान्द्रता को प्रदर्शित करते हैं। निरूपक नमूने का इष्टतम समय लगभग तीन घंटा होता है।

संग्रहण और हस्तन (storage and handling) : यथासंभव वायु नमूनों का संग्रहण नहीं करना चाहिए। नमूने को एकत्र करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह प्रयुक्त युक्ति के अन्य अवयवों के साथ अभिक्रिया न करे। दूसरे शब्दों में प्रतिचयन प्रक्रम से प्रदूषकों के रासायनिक और भौतिक गुणधर्मों में परिवर्तन नहीं होना चाहिए।

वायु प्रतिचयन युक्तियां (air sampling devices)

विभिन्न प्रकार की प्रतिचयन युक्तियां उपलब्ध हैं। प्रतिचयन युक्ति का चयन एकत्रित किए जाने वाले नमूने की किस्म पर निर्भर करता है। सामान्यतया वायु प्रतिचयन युक्ति में निम्नलिखित अवयव होते हैं :

संग्राहक (collector) : जैसा कि नाम से स्पष्ट है इसका उपयोग नमूने के संग्रहण के लिए किया जाता है। संग्राहक कोई **निस्यंदक** होता है (जो रंध्रमय कांच अथवा सिरेमिक, कागज, सेलुलोस फाइबर अथवा ऐस्बेस्टास आदि का बना होता है), कोई **मार्जक** (scraber) (जो आगलित कांच का बना होता 3) अथवा आघट्टक (impinger) होता है। कभी-कभी संग्राहक संयोजन का उपयोग किया जाता है। संग्राहक को अनभिक्रियक होना चाहिए अतः वह इस्पात, काँच अथवा क्वार्ट्ज का बना होता है।

मापन युक्ति (metering device): एकत्रित नमूने की मात्रा को मापने के लिए प्रयुक्त एक युक्ति जिसे प्रवाह मापी भी कहते हैं। मापन युक्ति में संग्रहित गैस का ताप और दाब ज्ञात करने के लिए तापमापी और दाबमापी भी लगा होता है। दो प्रकार के प्रवाहमापी उपलब्ध हैं। एक प्रकार के प्रवाहमापी में वायु प्रवाह की दर मापी जाती है जबकि दूसरे में एकत्रित नमूने का आयतन प्राप्त होता है। दरमापियों में दो प्राचलों की माप की जाती है अर्थात् दर और समय जबकि आयतनमापी में सीधे एकत्रित नमूने का आयतन प्राप्त होता है जैसे रोटामापी, शुष्क और आर्द्र परीक्षण गैसमापी। प्रयुक्त मापन युक्ति का उपयोग से पहले ठीक प्रकार से अंशांकन कर लेना चाहिए।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

चूषण युक्ति (suction device) : इस उपयोगं वायु नमूनों के संग्रहण के लिए किया जाता है। इसमें मोटर अथवा हस्त चालित निर्वात् पंप का उपयोग किया जाता है।

नमूना संग्रह युक्तियों 4 संपूर्ण अनुक्रम को प्रतिचयन-पंक्ति (sampling train) कहते हैं। प्ररूपी प्रतिचयन पंक्ति को चित्र 10.1 में दिखाया गया है।

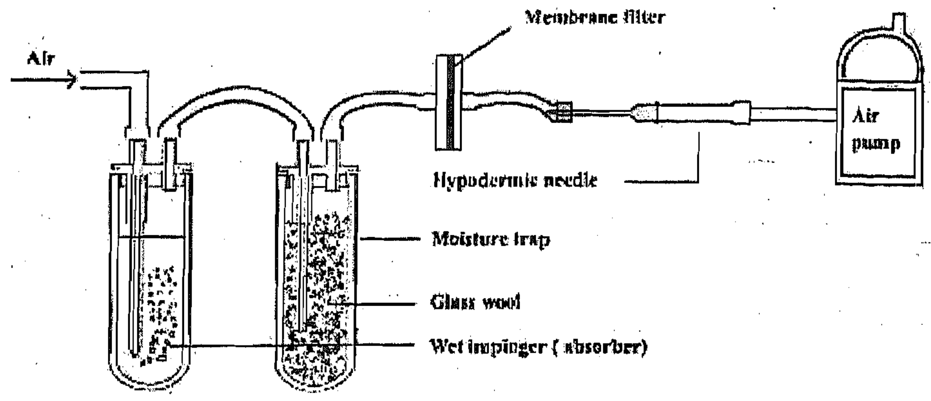

चित्र 10.1: प्रतिचयन पंक्ति का रेखाचित्र

कणिकीय पदार्थ युक्त नमूने के संग्रह के लिए निस्यंदन, आघट्टन (impinging)(द्रव और ठोस नमूनों के लिए) अथवा अवक्षेपण की आवश्यकता होती है जबकि गैसों और वाष्पों के लिए नमूने को ठोस पृष्ठ पर अधिशोषण द्वारा किसी द्रव में अवशोषण अथवा हिमीकरण द्वारा (अथवा संघनन) द्वारा अथवा किसी निर्वातित पात्र में भरकर एकत्र किया जाता है। इनका उल्लेख दो शीर्षकों के अंतर्गत किया गया है।

- कणिकीय पदार्थ का संग्रहण
- गैसीय अथवा वाष्पीय नमूनों का संग्रहण

क) कणिकीय पदार्थ का संग्रहण

कणिकीय पदार्थ (द्रव अथवा वाष्प) का संग्रहण अनेक विधियों द्वारा किया जाता है। आमतौर पर प्रयुक्त कुछ विधियां नीचे दी गई हैं।

निस्यंदन (filteration): इस विधि में निस्यंदन के लिए उच्च आयतनी प्रतिचयित्र (high volume sampler) का उपयोग करते हैं **(चित्र** 10.2) **यह** किसी वायु नमूने से कणिकीय पदार्थ को एकत्रित करने की सर्वाधिक प्रयुक्त विधि है। इसके लिए अनेक प्रकार के निस्यंदकों का उपयोग किया जाता है जो कणिकाओं के स्वभाव पर निर्भर करता है। धातुओं और ऋणायनों को

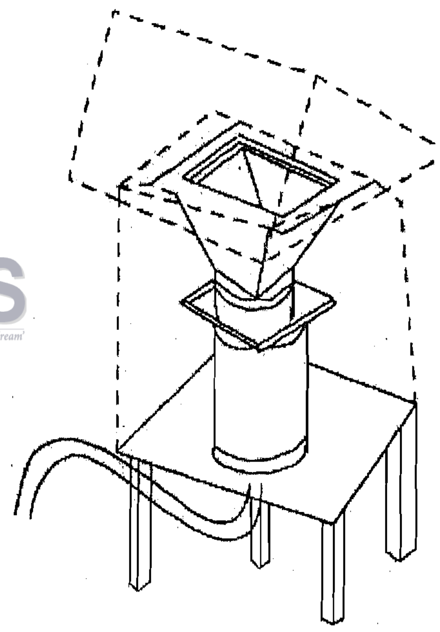

MAADHYAM IAS

चित्र 10.2: एस.पी.एम. को एकत्रित करने के लिए उच्च आयतनी प्रतिचयित्र का रेखाचित्र

सेलुलोस निस्यंदन पत्र में निस्यंदित किया जाता है जब कि कार्बनिक यौगिकों को काँच तंतुओं अथवा सिलिका नमदाओं (felts) की मदद से एकत्रित किया जाता है। सूक्ष्मयांत्रिक अकार्बनिक स्पीशीज़ को सिलिका नमदाओं में से निस्यंदित कियां जाता है। आजकल प्राय: झिल्ली निस्यंदकों का उपयोग किया जाता है क्योंकि उनका उच्च प्रवाह दर होता है।

जड़त्वीय विधि (inertial method) : इस विधि में कणिकीय पदार्थयुक्त वायु नमूने की धारा का सपाट पृष्ठ के साथ आघट्टन किया जाता है। आघट्टक दो प्रकार के होते हैं। आर्द्र आघट्टक और शुष्क आघट्टक। आर्द्र आघट्टकों में वायु की धारा का किसी द्रव में निमज्जित सपाट पृष्ठ के साथ संघट्टन किया जाता है जबकि शुष्क आघट्टों में शुष्क पृष्ठों का उपयोग किया जाता है। इस विधि की दक्षता एकत्रित किए जाने वाले कणों के आमाप पर निर्भर करती है। ये संग्राहक 1 μm से अधिक व्यास वाले कणों के लिए उपयुक्त रहते हैं। छोटे कणों के लिए धारा के वेग में पर्याप्त वृद्धि की जाती है।

अपकेन्द्री विधि (centrifugal method) : इस विधि में कणिकीय पदार्थयुक्त नमूने को उच्च वेग से बेलनाकार काँच कोष्ठ में प्रविष्ठ किया जाता है। इससे एक प्रकार की चक्रवातीय गति उत्पन्न होती है जिसमें उपकेन्द्री क्षेत्र के कारण कण पृथक होकर अवसादन कोष्ठ (sedimentation chamber)में एकत्रित हो जाते हैं। यह विधि 5 p m अथवा अधिक व्यास के कणों तक सीमित है। इससे शुष्क और रासायनतः शुद्ध नमूना प्राप्त होता है।

प्रवणता विधि (gradient method): इस विधि **if** कणिकीय पदार्थ की वैद्युत गतिशीलता, तापीय गतिशीलता और विसरण आदि विभिन्न भौतिक गुणधर्मों का उपयोग किया जाता है जिसमें 0.001 से 0.01 μm आमाप के कण एकत्रित किए जाते हैं। इसके लिए स्थिरवैद्युत और तापीय प्रतिचयित्रों का उपयोग किया जाता है। स्थिरवैद्युत प्रतिचयित्र में कण उच्च विभवांतर (30,000 V) पर दो इलेक्ट्रोडों के बीच विद्युत् विसर्जन में से प्रविष्ट करते हैं। कण, आवेशों को ग्रहण कर विपरीत आवेश के इलेक्ट्रोडों की ओर गमन करते हैं, जहाँ वे अपना आवेश खो देते हैं और इलेक्ट्रोड पर चिपक जाते हैं। इन संचित कणिकाओं को प्राप्त कर उनका विश्लेषण किया जाता है। एक स्थिरवैद्युत प्रतिचयित्र का चित्र 10.3 में दर्शाया गया है।

तापीय प्रतिचयित्रों में कणों को तापीय प्रवणता में से गुज़ारा जाता है जहाँ वे कम ताप वाले क्षेत्रों की ओर जाते हैं। ये कम ताप वाले क्षेत्रों में संचित हो जाते हैं। ये प्रतिचयित्र 0.001 μm आमाप के ऐरोसॉल कणों के लिए ठीक रहते हैं। इन प्रतिचयित्रों के बड़े रूपांतरों का उपयोग कणिकाओं के उत्सर्जन को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

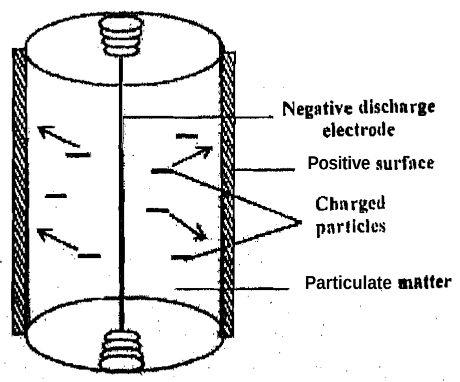

चित्र 10.3: वायु नमूने में एस.पी.एम एकत्रित करने के लिए स्थिरवैद्युत प्रतिचयित्र का रेखाचित्र

ख) गैस अथवा वाष्प नमूनों का संग्रहण

गैस नमूना संग्रह भिन्न प्रकार से किया जाता है जिसके अंतर्गत निम्नलिखित प्रक्रम आते हैं :

अवशोषण (absorption): इस विधि में गैसों को द्रव अवशोषित्रों में प्रविष्ट किया जाता है जहाँ वे अवशोषित हो जाती हैं। अवशोषण, अवशोषक के पृष्ठीय क्षेत्रफल, अवशोषण समय तथा अवशोषक और गैस के बीच अभिक्रिया-दर पर निर्भर करता है। यह प्रक्रम अन्य यौगिकों के अलावा कार्बन, गंधक और नाइट्रोजन के आक्साइडों के अवशोषण के लिए उपयुक्त है। उदाहरण के लिए CO, अमोनियामय क्यूप्रस क्लोराइड 8; SO_2,, हाइड्रोजन परॉक्साइड if; CO_2, ऐल्कोहाली पोटैश में; और ओज़ोन, पोटैशियम आयोडाइड में अवशोषित होते हैं।

अधिशोषण (adsorption): इस विधि में गैस नमूने को अधिशोषण स्तंभों में रखे ठोस-पृष्ठ पर अधिशोषित किया जाता है। ठोस पृष्ठ में सिलिका जेल, Al_2O_3, सक्रियित चारकोल, अणु चालनी अथवा कुछ अन्य उपयुक्त कर्मक होते हैं। वायु को अधिशोषण स्तंभ अथवा नली में प्रविष्ट किया जाता है जिसमें अधिशोषक पदार्थ होता है। उपयुक्त अवधि तक नमूने को एकत्रित करने के बाद अधिशोषक को एकत्रित को CS_2 आदि उपयुक्त विलायक के साथ धो लिया जाता है। इससे प्रदूषक विलयन में चले जाते हैं जिनका गैस-वर्णलेखिकी द्वारा विश्लेषण किया जाता है। यह प्रक्रम ओज़ोन और हल्के हाइड्रोकार्बनों के लिए लागू होता है।

संघनन अथवा शीत पिंजरन (condensation or cold trapping): इस विधि द्वारा दिए गए नमूने में वाष्पशील पदार्थों को शीतलकों द्वारा संघनित किया जाता है। गैस को ठंडा करने के लिए बर्फ, द्रव वायु, द्रव नाइट्रोजन आदि विभिन्न शीतलकों का उपयोग किया जाता है। क्योंकि ये शीतलक विभिन्न मात्राओं (तापों) में ठंडा करते हैं जिससे पृथक वाष्पशील घटक पृथक होते हैं जिससे प्रभात्री संघनन होता है। वायु के नमूने में गैसीय प्रदूषकों को एकत्रित करने के लिए प्रयुक्त युक्ति का रेखाचित्र चित्र 10.4 में दर्शाया गया है।

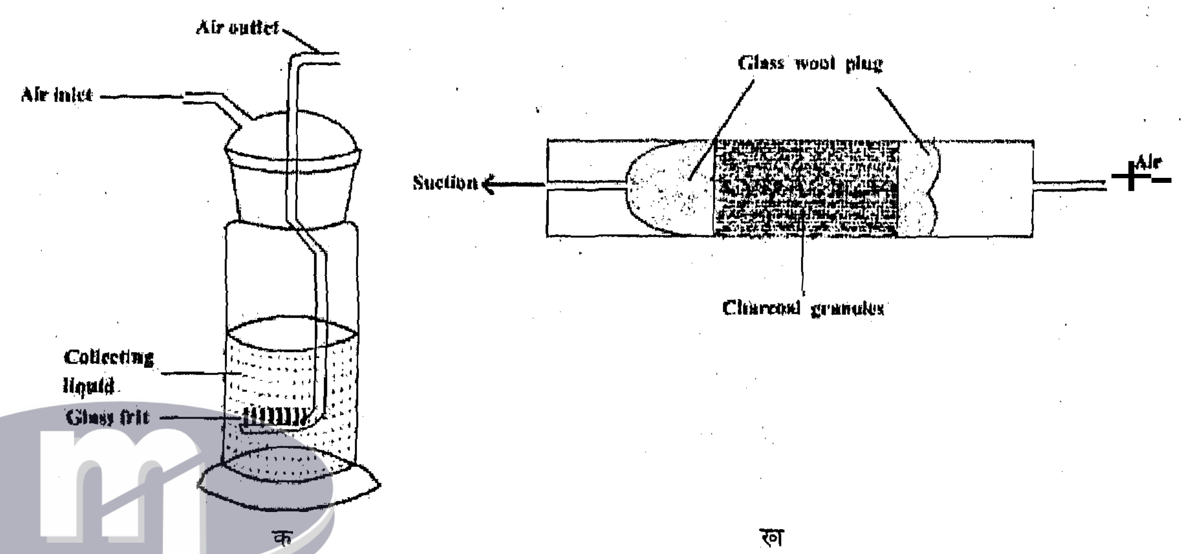

चित्र 10.4: वायु नमूने में गैसीय प्रदूषकों को एकत्रित करने के लिए प्रयुक्त युक्तियां क) मार्जक (scrubber) ख) चारकोल अधिशोषण नली

MAADHYAM IAS

आइए, परिवेश वायु के एकत्रित नमूनों के विश्लेषण के लिए प्रयुक्त विधियों की चर्चा करें।

10.3.3 परिवेश वायु विश्लेषण की विधियां

जिन विभिन्न घटकों का मानीटरन अथवा विश्लेषण करना है उनके संग्रहण के बाद वास्तविक वायु गुणवत्ता विश्लेषण किया जाता है। पहले गुणात्मक विश्लेषण करना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित हो जाए कि जिस घटक का आकलन करना चाहते हैं वह संग्रहित नमूने में मौजूद हो। इसके बाद मात्रात्मक विश्लेषण किया जाता है जिसमें विभिन्न प्रदूषकों की मात्राओं के विश्लेषण के लिए विभिन्न विधियों का उपयोग किया जाता है। आप प्रयोगशाला में प्रमुख प्रदूषकों के लिए गुणात्मक विश्लेषण और मात्रात्मक विश्लेषण दोनों करेंगे। इन प्रयोगों

का उल्लेख इस पाठ्यक्रम के खंड 7 में किया गया है। जिसमें आकलन की विस्तृत प्रक्रिया दी गई है। यहाँ किसी विशिष्ट प्रदूषक के लिए प्रयुक्त प्रमुख विधि में शामिल नियम की ही चर्चा की जाएगी, ये आकलन निलंबित कणिकीय पदार्थ, सल्फर डाइआक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड, कार्बन ऑक्साइड और ओज़ोन के लिए दिए गए हैं।

आमतौर पर वायु नमूने के विश्लेषण के लिए प्रयुक्त विधियाँ तीन प्रकार की होती हैं। ये हैं; रासायनिक विधियां, यंत्रीय विधियाँ, और जैविक विधियाँ नीचे प्रत्येक का संक्षिप्त वर्णन किया गया है।

रासायनिक विधियां (chemical method)

आप इन विधियों से परिचित होंगे और पिछली प्रयोगशालाओं में उनका उपयोग किया होगा। इनके अंतर्गत निर्धारित किए जाने वाले प्रदूषक और उपयुक्त अभिकर्मक के बीच रासायनिक अभिक्रिया की जाती है। इनमें निम्नलिखित तकनीकें शामिल हैं।

आयतनी माप (volumetric measurements): इनका संबंध आयतन माप से है। ये निम्न प्रकार के होते हैं जो उदासीनीकरण, आक्सीकरण-अपचयन अथवा अवक्षेपण आदि अभिक्रियाओं की किस्म पर निर्भर करता है।

भारात्मक निर्धारण (gravimetric determinations): इनका संबंध द्रव्यमान की माप से है। इनमें विश्लेष्य (विश्लेषित किया जाने वाला प्रदूषक) को ठोस अवक्षेप में परिवर्तित कर उसका द्रव्यमान माप लिया जाता है। प्राप्त अवक्षेप का द्रव्यमान प्रदूषक की सान्द्रता का माप होता 8।

वर्णमापी निर्धारण (colorimetric determinations) : इनका संबंध रंगीन घटकों bit सान्द्रता के प्रकाशिक निर्धारण से है। इनमें विश्लेष्य, अभिकर्मक के साथ रंगीन उत्पाद उत्पन्न करता है। विलयन का प्रकाशिक घनत्व, उत्पाद की सान्द्रता का माप होता है।

आविलतामापी और नेफेलोमापी निर्धारण (turbidimetric and nephelometric derminations) : यह निलंबन से गुजरने वाले प्रकाश के माप से संबंधित है।

वर्णलेखी निर्धारण (chromatographic determinations) : यह अवशोषण और अधिशोषण परिघटनाओं पर आधारित है जिसमें कागज, स्तंभ आदि का उपयोग किया जाता है।

यंत्रीय विधियां (instrumental methods)

इन विधियों में अनेक स्पेक्ट्रम प्रकाश मापी तकनीकों का उपयोग किया जाता है। इनमें निहित मूल नियम का नीचे संक्षेप में वर्णन किया गया है। विस्तृत विवरण खंड 6 की इकाई 19 में दिया गया है।

उत्सर्जन स्पेक्ट्रममिति (emission spectrometry) : धात्विक तत्वों का उच्च ताप पर गर्म करने से उत्तेजन होता है। जिससे अभिलक्षणिक तरंगदैर्ध्य के विकिरण उत्सर्जित होते हैं। उत्सर्जित विकिरण की तीव्रता का संबंध मौजूद तत्व की मात्रा से होता है। किसी तत्व के स्पेक्ट्रम में किसी तरंगदैर्ध्य पर उत्सर्जित ऊर्जा, उत्तेजित परमाणुओं की संख्या और तद्नुसार नमूने में तत्व की सान्द्रता के समानुपाती होती है। इस प्रकार उत्सर्जन स्पेक्ट्रममिति द्वारा गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों प्रकार के आकलन किए जा सकते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अवशोषण स्पेक्ट्रममिति (absorption spectrometry) : यह अवशोषण स्पेक्ट्रममापी विधि पर आधारित है जिसमें वैद्युतचुंबकीय विकिरण के निश्चित परास का दृश्य, पराबैंगनी और अवरक्त क्षेत्रों में अवशोषण होता है। अवशोषित विकिरण की मात्रा, अवशोषक स्पीशीज की सान्द्रता के अनुलोमानुपाती होता है।

परमाण्विक अवशोषण स्पेक्ट्रमिकी (atomic absortion spectroscopy) (ए.ए.एस.) : इसका नियम परमाणु उत्सर्जन स्पेक्ट्रमिति के समान है। इसमें विकिरण का अवशोषण विशिष्ट तरंगदैर्ध्य पर निम्नतम अवस्था (वाष्प) में मौजूद परमाणुओं द्वारा किया जाता है। अवशोषित और उत्सर्जित ऊर्जा की मात्रा विद्यमान परमाणुओं की संख्या का फलन होता है। अतः इस विधि द्वारा सूक्ष्ममात्रिक परमाणुओं का मात्रात्मक आकलन किया जा सकता है। यह प्रदूषण विश्लेषण की सुग्राही विधि है।

जैव विधियां (biological methods)

ये अप्रत्यक्ष विधियां हैं। इसमें किसी पादप अथवा जन्तु को संक्रमित करने वाले प्रदूषक को स्रोत से निष्कर्षित कर उसका विश्लेषण किया जाता है। इस विधि द्वारा निलंबित कणिकीय पदार्थ और गैसीय प्रदूषकों का आकलन किया जा सकता है।

एन.ए.ए.क्यू.एम. द्वारा विभिन्न प्रदूषकों के लिए प्रयुक्त मानीटरन विधियों का सारणी 10.5 में संकलन किया गया है।

सारणी 10.5: एन.ए.ए.क्यू.एम. द्वारा प्रयुक्त वायु प्रदूषण मानीटरन विधियां

क्रमांक	प्रदूषक	प्रयुक्त विधि
1.	एस.पी.एम	उच्च आयतन प्रतिचयित्र
2.	आर.एस.पी.एम.	संलग्न साइक्लोन सहित उच्च आयतन प्रतिचयित्र
3.	SO_2	वर्णमिति
4.	NO_2	वर्णमिति
5.	CO	अपरिक्षेपी आइ.आर. स्पेक्ट्रमिकी
6.	Pb	अम्ल पाचन और फिर ए.ए.एस विश्लेषण
7.	बहुनाभिकीय ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बन	विलायक निष्कर्षण और फिर जी.सी.+एफ.आइ.डी विश्लेषण
8.	H_2S	वर्णमिति
9.	NH_3	वर्णमिति

आइए, कुछ प्रमुख वायु प्रदूषकों के विश्लेषण की विधियों का अध्ययन करें।

MAADHYAM IAS

बोध प्रश्न

4) नीचे दिए गए कथनों में सही के सामने (✓) और गलत के सामने (×) का चिन्ह लगाइए।

क) वायु नमूने का विश्लेषण करना कठिन होता है क्योंकि उसके साथ रासायनिक अभिक्रिया की संभावना नहीं होती है।

ख) कणिकीय पदार्थ प्रायः निस्यंदन विधियों द्वारा संग्रहित किया जाता है।

ग) उत्सर्जन स्पेक्ट्रमिकी, वायु प्रदूषक द्वारा किसी विशिष्ट विकिरण के अवशोषण के नियम पर आधारित है।

घ) वायु के नमूने में SO_2 विश्लेषण के लिए प्रयुक्त अनुमापन विधियों में ऑक्सीकरण स्वभाव का उपयोग किया जाता है।

10.3.4 सामान्य वायु प्रदूषकों का विश्लेषण

इस भाग में सामान्य वायु प्रदूषकों के विश्लेषण की विधियां दी गयी हैं। इन विधियों का विस्तार से वर्णन खंड 7 में किया है।

निलंबित कणिकीय पदार्थ

एस.पी.एम. का विश्लेषण उच्च आयतन विधि द्वारा किया जाता है। इसमें वायु कणों के वृहत आयतन को एकत्रित करने के लिए प्रतिचयित्र के उच्च आयतन का उपयोग किया जाता है। नमूने को पहले से तोले गए निस्यंदक द्वारा 24 घंटे तक संग्रहित किया जाता है। कणिकों का भार ज्ञात करने के लिए निस्यंक को फिर से तोल लिया जाता है। निम्न समीकरण द्वारा कणिकीय पदार्थ की मात्रा का परिकलन किया जाता है।

$$\text{एस.पी.एम.} = \frac{(w_f - w_i)}{V} \times 10^6 \mu g/m^3$$

जिसमें, w_i = निस्यंदक का आरंभिक भार, ग्राम में

w_f = निस्यंदक की आरंभिक भार, ग्राम में

V = वायु नमूने का आयतन, m^3 में

w_i = g से μg में रूपांतरण गुणक

कार्बन मोनोक्साइड

CO आकलनों के लिए अपरिक्षेपी अवरक्त स्पेक्ट्रमिकी (non-dispersive infrared spectoscopy) (एन.डी.आइ.आर.) का उपयोग किया जाता है क्योंकि CO, 4.7 μm तरंगदैर्ध्य के आसपास अवरक्त विकिरण का अवशोषण करता है, जब जल-वाष्प की अनुपस्थिति में (जल वाष्प अवरक्त विकिरण का अवशोषण करता है) परिवेशी वायु रखी किसी लंबी कोष्ठिका (100 cm) में अवरक्त विकिरण प्रविष्ट किया जाता है तो उसका एक भाग अवशोषित हो जाता है। विकिरण के अवशोषण की मात्रा, कार्बन मोनोक्साइड की मात्रा की माप होता है। इस प्रक्रिया को निम्न प्रकार दर्शा सकते हैं।

विकल्पत: CO की माप, ज्वाला आयतन संसूचक का उपयोग करते हुए गैस वर्णलेखिकी की सहायता से भी की जा सकती है।

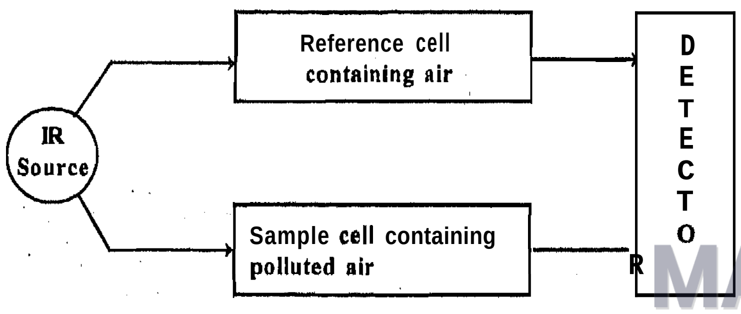

MAADHYAM IAS

ये CO के निर्धारण के लिए आमतौर पर प्रयुक्त विधियां हैं। यदि यंत्र उपलब्ध नहीं तो एक रासायनिक विधि का उपयोग भी किया जा सकता है। रासायनिक विधि में सिल्वर नाइट्रेट का अमोनियामय विलयन का उपयोग कर CO का संसूचन किया जा सकता है। अवक्षेपित रजत से इस गैस की उपस्थिति का संकेत मिलता है।

$$CO + 2OH^- \rightarrow CO_2 + H_2O + 2e^-$$
$$2Ag^+ + 2e^- \rightarrow 2Ag\downarrow$$
$$CO + 2Ag^+ + 2OH^- \rightarrow CO_2 + H_2O + 2Ag^-$$

रासायनिक विधि की विस्तृत चर्चा खंड 7 के प्रयोग 16 में की गई है।

नाइट्रोजन ऑक्साइड

NO_2 के रूप में नाइट्रोजन आक्साइडों के विश्लेषण के लिए दो विधियों का उपयोग किया जाता है।

1) **रासायनिकि संदीप्ति** (chemiluminescence) : रासायनिक संदीप्ति परिघटना, रासायनिक अभिक्रिया के कारण उत्पन्न वैद्युत उत्तेजित स्पीशीज़ से प्रकाश के उत्सर्जन के फलस्वरूप होती है। यह नाइट्रोजन ऑक्साइडों के निर्धारण की मानक विधि है। इसका मूल सिद्धांत यह है कि NO की O_3 के साथ अभिक्रिया से इलेक्ट्रोनिकत: उत्तेजित NO_2 अणु प्राप्त होते हैं जो 600 – 3000 nm के परास में विकिरण उत्सर्जित करते हैं।

$$NO + O_3 \rightarrow NO, + O_2$$

$$NO, \rightarrow NO, + h\nu$$

उत्सर्जित विकिरण की माप प्रकाश इलेक्ट्रान संवर्धक द्वारा की जाती हैं तीव्रता, NO_2 की सान्द्रता की माप होती है। नाइट्रोजन आक्साइडों में NO और NO_2 शामिल रहते हैं। वायु नमूने में केवल NO_2 भी हो सकता है जिसे इस रूप में नहीं मापा जा सकेगा क्योंकि ये अणु मूल अवस्था में होते हैं। इसलिए वायु नमूने को तापीय परिवर्तित में प्रवाहित कर उन्हें NO में परिवर्तित कर दिया जाता है। चित्र 10.5 में रासायनिक संदीप्ति संयुक्त का रेखाचित्र दर्शाया गया है।

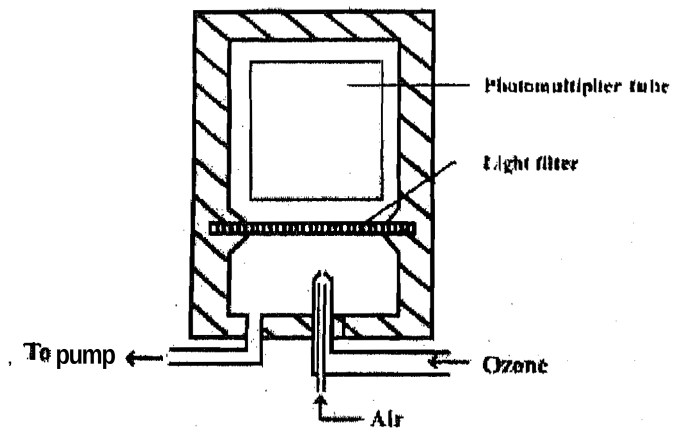

चित्र 10.5: रासायनिक संदीप्ति संयुक्त का रेखाचित्र

MAADHYAM IAS

2) **स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति** (spectrophotornetry): इस विधि में वायु के नमूने का सोडियम हाइड्रॉक्साइड और सोडियम आर्सेनाइट के विलयन में बुदबुदन किया जाता है। जिससे उत्पन्न नाइट्राइट आयन एकत्रित हो जाएं। NO_2 आयनों का निर्धारण वर्णमितीयत:, फास्फोरिक अम्ल, सल्फैनिलैमाइड और N-(1- नैफ्थिल) एथिलीन डाइऐमीन डाइहाइड्रोक्लोराइड (एन.इ.डी.ए.) के साथ अभिक्रिया द्वारा किया जाता है। प्राप्त गाढ़े लाल-बैंगनी रंग के ऐजो रंजक के अवशोषणांक की माप 540 nm पर स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी द्वारा की जाती है। इस विधि द्वारा घंटे तक 200 cm^3 min^{-1} के प्रतिचयन दर से मापी गई NO_x का सान्द्रता परास 0.01 –0.40 ppm होता है।

सल्फर डाइआक्साइड

SO_2 की मात्रा के निर्धारण के लिए अनुमापन, अपचयन, भारमिति और प्रकाशमिति आदि अनेक विधियों का उपयोग किया जाता है।

1) **अनुमापन :** SO_2 युक्त वायु के नमूने का हाइड्रोजन पराक्साइड में बुद्‌बुदन किया जाता है जिससे H_2SO_4 उत्पन्न होता है। H_2SO_4 को मानक क्षार के साथ अनुमापन द्वारा मापा जा सकता है।

$$SO, + H_2O_2 \rightarrow H_2SO_4$$

इस अभिक्रिया का उपयोग SO_2 का चालकतामितीयत: निर्धारण करने के लिए भी किया जा सकता है क्योंकि अंम्ल के बनने से चालकता में वृद्धि हो जाएगी। वैकल्पिक रूप से SO_2 युक्त वायु नमूने का KI विलयन में बुद्‌बुदन किया जाता है और इस प्रकार मुक्त आयोडीन का (रेडॉक्स अनुमापन में) सोडियम थायोसल्फेट के मानक विलयन के साथ अनुमापन किया जाता है।

स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति : यह सर्वाधिक विश्वसनीय विधि है। इसमें SO_2 को पोटैशियम टेट्राक्लोरोमर्क्यूरेट, K_2HgCl_4 (टी.सी.एम.) के विलयन में प्रविष्ट किया जाता है जिससे अत्यंत स्थायी संकुल प्राप्त होता है। इस संकुल की पैरासेसेनिलीन और फॉर्मेल्डिहाइड के साथ अभिक्रिया की जाती है जिससे गहरे रंग का पैरारोसेनिलीन मेथिल सल्फोनिक अम्ल प्राप्त होता है। विलयन के अवशोषणांक की माप 560 nm तरंगदैर्ध्य पर उपयुक्त स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी द्वारा की जाती है। इस विधि द्वारा 25 – 1050 $\mu g/m^3$ के परास में सल्फर डाइआक्साइड की सान्द्रता मापी जा सकती है। 25 $\mu g/m^3$ से कम सान्द्रता की माप के लिए वायु के वृहत आयतनों को प्रतिचयनों के रूप में लिया जाता है। इस विधि का विस्तृत विवरण खंड 7 के प्रयोग 18 में किया गया है।

वायु प्रतिचयन —(फॉर्मेल्डिहाइड / TCM)→ पैरारोसेनिलीन मैथिल सल्फोनिक अम्ल ——→ स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति (560 nm)

10.4 वायु प्रदूषण नियंत्रण

वायुमंडल में प्रदूषकों के स्तर को मानीटर करने और ज्ञात करने के बाद अगला कदम नियंत्रण उपाय आरंभ करना है। वायु प्रदूषण नियंत्रण के लिए बहुमुखी नीति अपनाई जाती है जिसमें कानूनी, प्रौद्योगिकी और आर्थिक पहलू शामिल हैं, यदि प्रदूषकों की सान्द्रताएं, वांछित सीमाओं के अंदर हों तो उन्हें अपनाए रखने के उपाय किए जाते हैं। यदि वे अधिक हों तो उपयुक्त क्षति नियंत्रण उपाय करने होते हैं। ज्वालामुखी, पराग फैलाव आदि प्राकृतिक परिघटनाओं पर नियंत्रण करना कठिन होता है, किन्तु प्रकृति में मानवोद्‌भवी वायु प्रदूषकों का नियंत्रण स्रोत पर ही किया जा सकता है। इसकी अनेक विधियां हैं जिनमें कुछ नीचे दी गई हैं;

- नियंत्रण उपस्कर को स्रोत पर स्थापित करना ताकि प्रदूषकों का विसर्जन कम हो।
- कच्ची सामग्री, प्रचालन अथवा उपस्कर बदलकर प्रक्रम में परिवर्तन करना।
- ईंधन बदलना जिससे उत्सर्जन कम हो।
- विसर्जन कम करने के लिए चिति-ऊँचाई बढ़ाना।
- प्रदूषक का निष्कासन यद्यपि प्रदूषकों का पूर्ण निराकरण कठिन होता है।
- प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों को दूसरे स्थानों में स्थापित करना।

इनमें नियंत्रण उपस्कर द्वारा स्रोत पर प्रदूषक विसर्जन कर करना सर्वाधिक प्रभावकारी विधि है। नियंत्रण उपस्कर द्वारा एस.पी.एम. और गैसीय वायु प्रदूषण को कम करने की सामान्य विधियां निम्नलिखित पैराग्राफ में दी गई हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

निलंबित कणिकीय पदार्थ

एस.पी.एम. का नियंत्रण निम्नलिखित विधियों द्वारा किया जा सकता है।

निस्यंदकों के उपयोग से : एस.पी.एम. के निष्कासन के लिए प्रयुक्त निस्यंदकों में, वस्त्र, स्क्रीन अथवा फेल्ट पैड हो सकते हैं। ये गुरूत्वकर्षी अवस्थापक अथवा ऊष्मीय अवक्षेपक हो सकते हैं। जैसा कि पहले बताया गया है ऊष्मीय अवक्षेपक ताप प्रवणता पर काम करते हैं।

स्थिरवैद्युत अवक्षेपित्र (इ.एस.पी.) के उपयोग से : ये उच्च ताप पर भी कार्य करते हैं और एस.पी.एम. के निष्कासन के लिए उपयुक्त हैं। किन्तु दहनशील कणिकाओं के लिए उपयोगी नहीं है।

जड़त्वीय संग्रह : यह सबसे सस्ती विधि है। 10 μm आमाप के बड़े कणों के लिए चक्रवात विधि का उपयोग किया जाता है, वक्रता-त्रिज्या परिवर्तन, कण आमाप और व्यास तथा गैस प्रवाह चक्रवात के कार्य को प्रभावित करते हैं। आर्द्र मार्जकों द्वारा आर्द्र-संग्रहण भी संभव है।

गैसीय वायु प्रदूषक

गैसीय प्रदूषकों को अप्रदूषक रूप में परिवर्तित कर देना उनके नियंत्रण की सर्वोत्तम विधि है। सामान्यतया इन प्रदूषकों के लिए प्रयुक्त प्रतिचयन विधियां उनके नियंत्रण के लिए भी उपयुक्त हैं। ये हैं :

अवशोषण : गैसीय प्रदूषकों को आर्द्र मार्जक में अवशोषण किया जाता है जिसके लिए कोई उपयुक्त द्रव प्रयुक्त होता है। SO_2, H_2S, HCl, Cl_2 और NH, को उपयुक्त द्रव में अवशोषित कर एकत्रित किया जाता है जबकि हैलोजनों के लिए जल का उपयोग भी किया जा सकता है।

- **अधिशोषण** : प्रदूषक, ठोसों के पृष्ठ पर अधिशोषित होते हैं, अधिशोषण के लिए ऐलुमिना, सिलिका, सक्रियित कोयला आदि सांध्र पदार्थों का उपयोग किया जाता है। गरम करके उन्हें पुनः उत्पन्न किया जा सकता है।
- **दहन** : यदि एकत्रित किए जाने वाले गैस अथवा वाष्प कार्बनिक हों तो ज्वाला दहन अथवा उत्प्रेरकी दहन जैसे दहन प्रक्रमों का उपयोग किया जाता है।
- **संघनन** : ऐरोसॉलो और संघनित की जा सकने वाली गैसों के लिए इस विधि का उपयोग किया जाता है। इसमें ताप कम करने के लिए शीतलक इस्तेमाल होता है।

SO,, H_2S और **HF** जैसे गैसीय प्रदूषकों के नियंत्रण के लिए आमतौर पर प्रयुक्त अवशोषकों और अवशोषक विलयनों को सारणी 10.6 में दिखाया गया है।

सारणी 10.6: गैसीय प्रदूषकों के लिए आमतौर पर प्रयुक्त अवशोषक और अवशोषक विलयन

गैसीय प्रदूषक	प्रयुक्त अवशोषक	प्रयुक्त अवशोषक विलयन
SO_2	चूर्णित चूना पत्थर अथवा डोलोमाइट	डाइमेथिलऐनिलीन, एथेनॉलेनीन, सोडियम सल्फाइट, $Ca(OH)_2$ का निलंबन अथवा जल आदि
H_2S	आयरन आक्साइड	NaOH और फीनॉल का मिश्रण (3 : 2 मोल अनुपात में), सोडा क्षार अथवा एथेनोलैमीन आदि।
HF	चूना पत्थर पिंड	जल, NaOH
नाइट्रोजन आक्साइड	सिलिका जेल	जल, तनु नाइट्रिक अम्ल
कार्बनिक विलायकों के वाष्प	सक्रियित कार्बन	—

MAADHYAM IAS

वैकल्पिक ईंधन का प्रयोग आटोमोबाइल स्रोतों से रेचक उत्सर्जन के लिए प्रयुक्त सर्वोत्तम नियंत्रण विधि है। इन उत्सर्जनों के नियंत्रण में सीसा रहित पेट्रोल का उपयोग अन्य विधि है। यह CO और NO/NO_2 गैसों के स्तर को कम कर देता है जो प्रकाश रासायनिक धूम कुहरा के निर्माण के लिए उत्तरदायी है।

10.5 सारांश

जीवित और अजीवित पदार्थ को प्रभावित करने वाले वायु प्रदूषकों के कारण यह आवश्यक हो जाता है कि हम उस वायु की गुणवत्ता के बारे में जानें जिसमें सांस लेते हैं। दोनों भीतरी और बाहरी वायु की गुणवत्ता जानना आवश्यक है। भीतरी वायु गुणवत्ता का अर्थ है किसी भवन अथवा संस्थागत क्षेत्र अथवा व्यापारिक सुविधा के भीतरी पर्यावरण में वायु के भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक अभिलक्षण। दूसरी ओर बाहरी अथवा परिवेश वायु गुणवत्ता का तात्पर्य वायुमंडल में वायु प्रदूषकों की माप से है। वायु गुणवत्ता को विभिन्न प्रदेशों के लिए निर्धारित कसौटियों अथवा मानकों द्वारा सुनिश्चित किया जाता है। दोनों भीतरी और बाहरी वायु गुणवत्ता के मानक महत्वपूर्ण होते हैं और उन्हें पूरा करना होता है।

वायु गुणवत्ता प्रबंध पद्धति (ए.क्यू.एम.एस.) वांछित परिवेशी वायु गुणवत्ता मानीटर करने और उसे प्राप्त करने की सक्षम और सस्ती विधि है। भारत में केन्द्रीय प्रदूषणं नियंत्रण बोर्ड, सी.पी.सी.बी., परिवेश वायु गुणवत्ता मॉनीटर करने नियंत्रित करने के लिए उत्तरदायी है। इस उद्देश्य से बोर्ड ने अल्पकालिक और दीर्घकालिक लक्ष्य प्राप्त करने के लिए अधिसूचित राष्ट्रीय परिवेश वायु गुणवत्ता मानकों (एन.ए.ए.क्यू.एस.) का निर्धारण किया है। वास्तविक वायु गुणवत्ता को वायु गुणवत्ता सूचकांक (ए.क्यू.आइ.) और अतिरेक कारक जैसे प्राचलों में व्यक्त किया जाता है।

परिवेश वायु की गुणवत्ता को सी.पी.सी.बी. द्वारा स्थापित परिवेश वायु गुणवत्ता मॉनीटरन केन्द्रों के राष्ट्रीय नेटवर्क द्वारा राष्ट्रीय परिवेश-वायु मानीटरन (एन.ए.एम.पी.) कार्यक्रम के अंतर्गत मानीटर किया जाता है। इसके अलावा अनेक राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (एस.पी.सी.वी.) अनुसंधान संस्थान, गैर सरकारी संगठन और उद्योग भी परिवेश वायु गुणवत्ता मानीटरन का कार्य कर रहे हैं। वायु गुणवत्ता के मानीटरन में उपयुक्त नमूनों को एकत्रित कर उनका रासायनिक, यंत्रीय और जैविक विधियों द्वारा विश्लेषण किया जाता है। वायु गुणवत्ता की स्थिति निर्धारित हो जाने के बाद वायु गुणवत्ता का वांछित स्तर और स्वच्छ वायु सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त नियंत्रण उपाय किए जाते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

10.6 अंत में कुछ प्रश्न

1) वायु गुणवत्ता का क्या अर्थ है? प्रमुख वायु गुणवत्ता दोषों का उल्लेख कीजिए।
2) राष्ट्रीय स्तर पर वायु गुणवत्ता मानीटरन के लिए कौन सी एजेंसी उत्तरदायी है? उसके प्रमुख उद्देश्य क्या हैं?
3) विभिन्न मानीटरन एजेंसियों द्वारा मानीटर किए गए वायु घटकों के नाम बताइए।
4) कणिकीय पदार्थ प्रतिचयन और गैसीय प्रदूषक प्रतिचयन के लिए प्रयुक्त प्रमुख विधियाँ कौन सी हैं?
5) निम्नलिखित के लिए सर्वोत्तम विधि बताइए :

   i) CO विश्लेषण, ii) SO_2 विश्लेषण, iii) NO_2 विश्लेषण
6) एस.पी.एम. और गैसीय वायु प्रदूषकों के नियंत्रण की विभिन्न विधियों को सूची बद्ध कीजिए।

10.7 उत्तर

बोध प्रश्न

1) ख

2) 24, दोबार, एक, एक, आठ, 24

3) क) ए.ए.क्यू.एम., एस.पी.सी.बी.

ख) एन.इ.इ.आर.आइ.

ग) सी.पी.सी.बी., दिल्ली

घ) एन.ए.उम.पी., सी.पी.सी.बी.

4) क) ×

ख) ✓

ग) ×

घ) ✓

अंत में कुछ प्रश्न

1) वायु गुणवत्ता वायु प्रदूषकों के लिए निर्धारित कसौटियों और मानकों द्वारा सुनिश्चित की जाती है। वह ऐसी होनी चाहिए कि जीवित और अजीवित पदार्थों के लिए बहुत अधिक दुष्प्रभाव पैदा न करे। भीतरी और बाहरी वायु गुणवत्ता दो प्रमुख विचारणीय विषय हैं।

2) राष्ट्रीय स्तर पर केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, वायु गुणवत्ता मानीटरन के लिए उत्तरदायी है। उसका मुख्य उद्देश्य वायु मानीटरन पद्धतियों को मजबूत करना, प्रदूषकों को स्थान के आधार पर, नियमित रूप से मानीटर करना, वर्तमान वायु गुणवत्ता स्थिति और प्रवृत्ति निर्धारित करना तथा उद्योगों और अन्य स्रोतों से उत्पन्न प्रदूषण को नियंत्रित और नियमित करना है।

3) मानीटर किए जाने वाले वायु घटक SO_2, CO, NO_2 एस.पी.एम., पी.ए.एच., ओज़ोन, भारी धातुएं और मौसम विज्ञान संबंधी प्राचल हैं।

4) कणिकीय पदार्थों के लिए जड़त्वीय, अपकेन्द्री और प्रवणता विधियों का उपयोग किया जाता है। गैसीय प्रदूषक, अधिशोषण, अवशोषण और संघनन द्वारा संग्रहित किए जाते हैं।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

5) i) अपरिक्षेपी अवरक्त स्पेक्ट्रमिकी

ii) स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी

iii) रसायन संदीप्ति

6) एस.पी.एम. को निस्यंदकों, इ.एस.पी. और जड़त्वीय संग्रहण द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। गैसीय प्रदूषकों के लिए अवशोषण, अधिशोषण, दहन और संघनन विधियों का उपयोग किया जा सकता है।

इकाई 11 औद्योगिक बहि:स्राव

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
- उद्देश्य

11.2 औद्योगिक बहि:स्राव: प्रदूषण-प्राचल और उपचार विधियां
- प्रदूषण-प्राचल
- उपचार विधियां

11.3 खाद्य उद्योगों और खाद्य संसाधन उद्योगों से उत्पन्न बहि:स्राव- डेरी उद्योग अपशिष्ट
- अपशिष्ट के स्रोत
- अपशिष्ट-जल की मात्रा कम करने की विधियां
- डेरी अपशिष्टों का उपचार

11.4 पेट्रोरसायन उद्योग से उत्पन्न बहि:स्राव
- पेट्रोरसायन उद्योग
- अपशिष्टों के अभिलक्षण
- अपशिष्ट निपटान उपचार

11.5 वस्त्र उद्योग से उत्पन्न बहि:स्राव
- वस्त्र उद्योग
- वस्त्र-उद्योग अपशिष्टों के अभिलक्षण
- वस्त्र-उद्योग अपशिष्ट-जल समस्याएं
- वस्त्र-उद्योग अपशिष्ट उपचार

11.6 लुगदी और कागज उद्योग से उत्पन्न बहि:स्राव
- लुगदी और कागज उद्योग
- लुगदी और कागज उद्योग से उत्पन्न बहि:स्रावों की प्रकृति
- बहि:स्रावों के अभिलक्षण
- निलंबित ठोस न्यूनीकरण
- आपंक निर्जलीकरण और निपटान
- कार्बनिक पदार्थों के न्यूनीकरण की विधियां
- सिंचाई और अवस्रवण द्वारा भूमि निपटान

11.7 चर्म संस्कार से उत्पन्न बहि:स्राव
- चर्म उद्योग
- चर्म संस्कारशाला से उत्पन्न अपशिष्टों के अभिलक्षण
- चर्म संस्कारशाला से उत्पन्न अपशिष्टों का उपचार

11.8 खतरनाक अपशिष्ट
- खतरनाक अपशिष्टों की उत्पत्ति
- खतरनाक अपशिष्टों का प्रबंधन

11.9 सारांश

11.10 अंत में कुछ प्रश्न

MAADHYAM IAS

11.11 उत्तर

11.12 अध्ययन के लिए अन्य पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

सरिताओं, सरोवरों और तटीय जल का प्रदूषण, जल प्रदूषण की प्रमुख समस्या बन गई है। प्रदूषण के कारण ये जल संसाधन मानव उपयोग के साथ-साथ तैरने, नौका-विहार करने आदि मनोरंजन कार्यों के लिए भी उपयुक्त नहीं रह गए हैं। **औद्योगिक अपशिष्ट, नगरपालिका मलजल तथा घरेलू अपशिष्ट** सरिता प्रदूषण के प्रमुख स्रोत हैं। उन **कृषि संबंधी गतिविधियों** के कारण भी जल-प्रदूषण होता है जो मृदा से अत्यधिक मात्रा में गाद अथवा रासायनिक द्रव्यों का निक्षालन अथवा धावन करती हैं।

लगभग सभी निर्माण उद्योगों से अपशिष्ट जल उत्पन्न होता है। उद्योगों में अनेक कार्यों के लिए जल का बहुत अधिक मात्रा में उपयोग होता है। प्रयुक्त जल का बहुत कम हिस्सा निर्माण प्रक्रम में प्रयोग होता है और अधिकांश संयंत्र से बाहर निकल जाता है। संयंत्र से मुक्त जल, उसमें प्रयुक्त पदार्थों से संदूषित रहता है। इन संदूषकों में, कच्ची सामग्री, उससे संबंधित अवांछनीय पदार्थ, निर्मित पदार्थ, मध्यवर्ती पदार्थ, उपोत्पाद और प्रक्रिया में प्रयुक्त अन्य पदार्थ शामिल हैं। ये सभी पदार्थ ग्राही जल निकायों के प्रदूषण में योगदान करते हैं।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद,

- आप औद्योगिक बहि:स्रावों की परिभाषा दे सकेंगे और उनके, भौतिक-रासायनिक अभिलक्षणों का वर्णन कर सकेंगे,
- औद्योगिक बहि:स्रावों के उपचार की विधियों की व्याख्या कर सकेंगे,
- डेरी अपशिष्ट उपचार की विभिन्न विधियों की व्याख्या कर सकेंगे,
- पेट्रोरसायन उद्योगों में अपशिष्ट जल स्रोतों का वर्णन कर सकेंगे,
- परिष्करणशालाओं और पेट्रोरसायन उद्योगों के लिए प्रयुक्त अपशिष्ट निपटान विधियों को समझा सकेंगे,
- परिष्करणशालाओं में प्रयुक्त आपंक निपटान विधियों की व्याख्या कर सकेंगे,
- लुगदी और कागज उद्योग से प्राप्त बहि:स्रावों के अभिलक्षणों और उनके उपचार की विधियों का वर्णन कर सकेंगे,
- चर्म संस्कारशालाओं के मुख्य प्रक्रमों और उनसे उत्पन्न अपशिष्टों के अभिलक्षणों का वर्णन कर सकेंगे,
- खतरनाक अपशिष्टों की परिभाषा दे सकेंगे तथा उनके स्रोतों और प्रबंधन का वर्णन कर सकेंगे, और
- खतरनाक अपशिष्टों के उपचार और निपटान के बारे में बता सकेंगे।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

11.2 औद्योगिक बहि:स्राव: प्रदूषण-प्राचल और उपचार विधियाँ

औद्योगिक बहि:स्रावों की विशेषता उनकी समानताओं से नहीं बल्कि भिन्नताओं से बताई जाती है। प्रत्येक संयंत्र की पृथक समस्या होती है, किन्तु कुछ प्राचल समान होते हैं जिनसे प्रदूषण का मूल्यांकन किया जा सकता है। साथ ही कुछ सामान्य उपचार विधियां हैं जो समानता के

कारण किसी भी उद्योग के संयंत्रों के लिए लागू होती हैं। विशिष्ट उद्योगों के अभिलक्षणों और उपचार क्रिया-पद्धतियों का अध्ययन करने से पहले सामान्य प्राचलों और उपचार विधियों को समझने की आवश्यकता है। इस भाग में हम अपशिष्ट जल के अध्ययन में सामान्यतया प्रयुक्त भौतिक-रासायनिक प्राचलों की चर्चा करेंगे।

11.2.1 प्रदूषण प्राचल

प्राकृतिक जल शुद्ध नहीं होता है। उसमें घुले अथवा निलंबित रूप में ऐसा प्रत्येक पदार्थ उपस्थित रहता है जिसके वह सम्पर्क में आता है। यदि जल में एक अथवा अधिक पदार्थ इतनी मात्रा में विद्यमान हों कि वे कोई आपत्तिजनक अभिलक्षण पैदा न करें तो उसे प्रदूषण नहीं माना जाता है। 'प्रदूषण' शब्द केवल तब प्रयुक्त होता है जब अपद्रव्यों की आपत्तिजनक मात्रा विद्यमान हो। सरिता प्रदूषण का मात्रात्मक मूल्यांकन, सरिता में उपस्थित विशिष्ट अपद्रव्यों अथवा अपद्रव्यों के पहचान करने योग्य समूहों की सान्द्रता पर आधारित है। इन सान्द्रताओं का संबंध क्रमश: सरिता में विसर्जित अपशिष्ट जल की संगत सान्द्रताओं से होता है। सान्द्रताओं को प्राय: मिलिग्राम प्रति लिटर ($mg\ L^{-1}$) अथवा भाग प्रति दस लाख (parts per million, ppm) में व्यक्त किया जाता है। प्रवाह को प्राय: घन मीटर प्रति सेकंड (cubic metre per second) (संक्षेप में क्यूमेक, cumec) में व्यक्त किया जाता है। प्रदूषण को सान्द्रता के बजाय कुल मात्रा में व्यक्त करना वांछनीय होता है।

i) **संपूर्ण निलंबित ठोस (Total Suspended Solids, TSS): संपूर्ण निलंबित ठोस** अथवा **अनिस्यंदनीय अवशिष्ट, फिल्टर में बचे अवशिष्ट के शुष्क भार को कहते हैं।** स्पष्ट है कि यह कणिकीय पदार्थ होता है न कि घुले हुए अपद्रव्य। अति-सूक्ष्म कणिकीय पदार्थ और

निलंबित द्रव्य में अंतर किया जा सकता है। निरूपण के तौर पर स्थूल ठोस और प्लवी (floating) ठोसों का प्रतिचयन असंभव है, इसलिए प्रतिदर्श में उन्हें नहीं लेना चाहिए। औद्योगिक और नगरपालिका बहि:स्राव में इस प्रकार के अपशिष्ट नहीं होने चाहिए। वे खाद्य संसाधन संयंत्रों, वस्त्र मिलों और अन्य उद्योगों में होते हैं किन्तु उन्हें विसर्जन से पहले अपशिष्ट धारा से शीघ्र पृथक कर लिया जाता है।

संपूर्ण निलंबित ठोसों के बारे में मुख्य आपत्ति यह है कि उनकी उपस्थिति से सरिता देखने में अच्छी नहीं लगती है। यदि रंग असामान्य न हो तो वे गाद और अन्य प्राकृतिक निलंबित द्रव्य से भिन्न नहीं होते हैं। निलंबित द्रव्य से सरिता में प्रकाश वेधन भी कम हो जाता है जिसका प्रकाश संश्लेषण द्वारा ऑक्सीजन के पुनरुत्पादन पर प्रभाव पड़ता है।

ii) **नि:सादनीय ठोस (Settleable Solids):** संपूर्ण निलंबित द्रव्य का वह भाग जो शांत नि:सादन द्वारा पृथक किया जा सकता है, विशेष रूप से महत्वपूर्ण होता है। नि:सादन से सरिता का जल स्वच्छ हो जाता है किन्तु अधस्तल में निक्षेप जमा हो जाता है अथवा किनारों पर गाद जमा हो जाता है। इन निक्षेपों में जैव पदार्थ होते हैं जिनके अपघटन से आपत्तिजनक गंध उत्पन्न होती है और सरिता से ऑक्सीजन भी समाप्त हो जाती है। **अवसादन** (sedimentation) द्वारा विशिष्ट डिज़ाइन वाले उपस्कर में द्रव्य को पृथक करना, अपशिष्ट उपचार की सबसे अधिक लाभदायक विधि है। इसका उपयोग अपरिष्कृत अपशिष्ट से नि:सादनीय द्रव्य को और अपशिष्ट उपचार प्रक्रम के समय अनि:सादनीय संदूषकों से उत्पन्न नि:सादनीय द्रव्य को पृथक करने के लिए किया जाता है। इम्हॉफ शंकु अथवा उसके जैसे पात्र द्वारा नि:सादनीय द्रव्य को आयतनात्मक रूप से निर्धारित किया जा सकता है। इसे बहुधा भार द्वारा निर्धारित किया जाता है और यह प्रयोगशाला नि:सादन के पहले और बाद में जल में संपूर्ण निलंबित ठोसों के बीच का अंतर होता है।

इम्हॉफ शंकु का वर्णन 'नगरपालिका और घरेलू अपशिष्ट' विषय के अंतर्गत इकाई 13 में किया गया है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

iii) **संपूर्ण घुले ठोस (Total Dissoloved Solids, TDS) :** संपूर्ण निलंबित ठोस पदार्थों से भिन्न, घुले ठोस अथवा निस्यंदनीय अवशिष्ट, 'अवशिष्ट' का वह भाग है जो विलयन रूप में अथवा जल में बने सूक्ष्म निलंबन के रूप में निस्यंदक में से निकल जाता है।

iv) **आविलता (Turbidity):** यह निलंबित अथवा कोलॉइडी द्रव्यों द्वारा प्रकाश पर और उसके फलस्वरूप अवशिष्ट जल की प्रतीति पर होने वाले प्रभाव की माप होती है। इसका स्वच्छता की दृष्टि से सरिता में और उससे प्राप्त नगरपालिका जल आपूर्ति में विशेष महत्व होता है। आविलता के कारण जल नगरपालिका आपूर्ति और खाद्य, पेय और कागज निर्माण संबंधी उद्योगों के लिए उपयुक्त नहीं होता है।

v) **तेल :** प्राकृतिक जल में तेल और अन्य तैरने वाली परतों (फ़िल्मों) की उपस्थिति अत्यंत आपत्तिजनक होती है। उनकी उपस्थिति से न तो जल देखने में सुन्दर लगता है और उनसे जल-मार्ग को भी क्षति होती है। उनके कारण सरिता का वातन नहीं हो पाता है जिससे मछलियां मर जाती हैं। सघन तेल-फिल्मों के कारण जल पक्षी और भूमि के वन्यजीव फंसकर मर जाते हैं। पुलों के खंभों और अन्य संरचनाओं पर तेल की फिल्मों के विलेपन से अच्छे न प्रतीत होने वाले निक्षेप जमा हो जाते हैं जिन्हें हटाना कठिन हो जाता है। विलेय और कोलॉइडी तेल कम कष्टदायक होते हैं किन्तु सरिता में रासायनिक और जैव क्रिया से वे मुक्त तेलों में परिवर्तित हो सकते हैं।

vi) **रंग :** अनेक सरिताओं का जल स्वाभाविक रूप से रंगीन होता है। अनूप-जल पीला अथवा भूरा होता है जबकि लौह-युक्त जल का रंग भूरा होता है। औद्योगिक बहि:स्रावों के कारण भी जल रंगीन हो जाता है। खनन-क्षेत्रों में अम्ल खान-जल और प्राकृतिक अपवाह में बहुधा अत्यधिक लोहे के कारण विरंजन होता है। कभी-कभी टैनिक अम्ल और समान प्राकृतिक अवयवों के कारण जल और भी विकृत हो जाता है। रंजक द्रव्य निर्माण, कागज मिल तथा वस्त्र रंजक स्थानों से उत्पन्न रंजक अपशिष्ट अवांछनीय होते हैं। अनेक उद्योगों के अपशिष्ट रंगीन होने के कारण अवांछनीय होते हैं। रंगीन जल, उपचार बिना, सार्वजनिक जल आपूर्ति के लिए उपयुक्त नहीं होता है। उपचार की विधि बहुधा जटिल और मंहगी होती है। कुछ उद्योगों के लिए तो वे प्रयुक्त हो ही नहीं सकते। रंग, स्वयं हानिरहित हो सकता है किन्तु इसकी उपस्थिति अवांछनीय होती है और रंग अधिक हानिकारक प्रदूषण जैसे आविषाणु पदार्थ का सूचक हो सकता है।

vii) **स्वाद :** पेय जल में तथा मत्स्य-पालन के लिए प्रयुक्त जल में प्रदूषण के कारण उत्पन्न स्वाद महत्वपूर्ण होते हैं। मछली के मांस में जल के स्वाद-उत्पादक संदूषक पदार्थ एकत्रित हो जाते हैं। फ़ीनॉल आदि अनेक रासायनिक पदार्थों और उसके व्युत्पन्नों से खराब स्वाद उत्पन्न होता है। जल-उपचार में क्लोरीनन से फ़ीनॉल का औषधीय स्वाद और बिगड़ जाता है। कभी-कभी फ़ीनॉल प्रकृति में अनूप जल में उपस्थित टैनिन यौगिकों के अपघटन के कारण पाए जाते हैं। जल में उनकी उपस्थिति के लिए कोक और गैस निर्माण, पेट्रोलियम परिष्करण तथा रासायनिक पदार्थों और प्लास्टिकों का उत्पादन करने वाले उद्योगों को उत्तरदायी माना जाता है।

MAADHYAM IAS

viii) **गंध :** गंध, अपरिष्कृत अपशिष्ट की अभिलाक्षणिक हो सकती है। वह अपशिष्ट में अथवा ग्राही सरिता में अन्य प्रदूषकों के अपघटन से भी उत्पन्न हो सकती है। गंध, स्रोत से समुचित दूरी पर भी अरुचिकर होती है। बड़े पैमाने पर खाना बनाना आदि कार्य गंधयुक्त पर्यावरण में नहीं किए जा सकते हैं। गंध से युक्त कुछ गैसें इमारतों और संरचनाओं के लिए क्षतिकारक होती हैं। वे रासायनिक संक्षारण अथवा पेन्ट का विरंजन भी कर देती हैं।

ix) **अम्लता, क्षारता और pH :** अनेक औद्योगिक अपशिष्टों का, विशेषरूप से अकार्बनिक उद्योगों से प्राप्त अपशिष्टों का, हानिकारक अभिलक्षण, उनमें अम्ल अथवा क्षारक की मात्रा की विद्यमानता को बतलाता है। अधिक अथवा कम pH से मछलियां मर सकती हैं, प्राकृतिक सरिताओं में अनुर्वरता (sterility) उत्पन्न हो सकती है तथा मलजल उपचार प्रक्रमों में आवश्यक सूक्ष्मजीव निष्क्रिय हो सकते हैं। न्यून pH वाले अपशिष्ट, जलमार्गों अथवा मल व्यवस्था संयंत्रों में स्टील और कंक्रीट के लिए संक्षारक होते हैं। अपशिष्ट जल में रासायनिक उदासीनीकरण द्वारा उचित pH बनाए रखा जाता है। इस प्रक्रम को नियंत्रित किया जा सकता है और अंतिम बहि:स्राव को सरिता अथवा मलप्रणाल में विसर्जन के लिए उपयुक्त बनाया जा सकता है।

परंपरा के अनुसार अम्लता और क्षारता दोनों को तुल्य प्रति लिटर (equivalent per litre) कैल्सियम कार्बोनेट के मिलिग्रामों में व्यक्त किया जाता है। अम्लीयता अथवा क्षारीयता की तीव्रता pH मान द्वारा व्यक्त की जाती है जिसका अम्लता अथवा क्षारता की अपेक्षा अपशिष्ट के अधिक प्रदूषणकारी प्रभावों के साथ सीधा संबंध होता है। मछलियों की मृत्यु, अनुमापनीय अम्लता की उच्च सान्द्रता के कारण न होकर न्यून pH की वजह से होती है। वैद्युतमापी तकनीक द्वारा pH की माप अपेक्षाकृत आसान होती है। विसर्जन के समय अपशिष्ट उदासीन, अर्थात् 6–9 के pH परास में होना चाहिए यद्यपि ग्राही सरिता और मलजल के अनुसार उसमें भिन्नता हो सकती है।

किसी विशिष्ट pH तक अम्लता अथवा क्षारता का निर्धारण अनुमापन द्वारा किया जा सकता है। साधारणतया उनके निर्धारण के लिए फ़ीनॉलफ़्थैलीन और मेथिल ऑरेन्ज का उपयोग किया जाता है जिनके अन्त्य बिन्दु क्रमश: 8.3 और 4.3 हैं। इन अनुमापनों से उपचार के लिए आवश्यक उदासीनीकारक पदार्थ की मात्रा का संकेत मिलता है, जो ग्राही सरिता में पहले से उपस्थित हो सकता है अथवा जिसे अपशिष्ट उपचार के लिए बाद में मिलाया जा सकता है।

x) **क्लोराइड :** सोडियम क्लोराइड लवण जल, अपरिष्कृत पेट्रोलियम उत्पादन तथा धोने का सोडा और अन्य रासायनिक पदार्थों के निर्माण में, अपशिष्ट उत्पादों के रूप में प्राप्त होता है। प्राकृतिक जल में क्लोराइड की सान्द्रताएं 500 mg L^{-1} तक स्वीकार्य होती हैं। कभी-कभी इससे बहुत अधिक मात्राएं भी अनुमेय होती हैं किन्तु अनेक सरिताओं में लवण जल के अनियंत्रित विसर्जन से उपयुक्त सीमा पार हो सकती है। क्लोराइडों के निराकरण का कोई व्यावहारिक उपचार नहीं है। अत: समस्या का सामान्य हल यह है कि क्लोराइडों को अवरुद्ध कर धीरे-धीरे सरिता में उन्हें छोड़ा जाए ताकि उपयुक्त तनुता बनी रहे। कुछ स्थानों में उन्हें सीधे समुद्र में छोड़ा जा सकता है और अन्य स्थानों पर भूमि के अंदर निर्मित रचनाओं में मुक्त किया जा सकता हैं। किन्तु क्लोराइड अपशिष्ट, उद्योगों की मुख्य समस्या है जिसका हल नहीं निकल पाया है। क्लोराइडों को उत्क्रम परासरण (reverse osmosis) अथवा वैद्युत अपोहन (elcctro dialysis) द्वारा पृथक किया जा सकता है किन्तु ये तकनीकें सस्ती नहीं होती हैं।

xi) **कठोरता :** सभी प्रकार के प्राकृतिक जल में कुछ न कुछ मात्रा में कठोरता होती है जो मुख्यत: कैल्सियम और मैग्नीशियम की उपस्थिति के कारण होती है। कठोरता, चाहे कितनी भी मात्रा में क्यों न हो, महंगी पड़ती है क्योंकि उसके कारण पपड़ी जमा हो जाती है, साबुन का खर्च बढ़ जाता है और अवक्षेप अथवा मलफेन बन जाते हैं। कठोरता उत्पन्न करने वाले औद्योगिक बहि:स्राव में अनेक रासायनिक उद्योगों से उत्पन्न कैल्सियम क्लोराइड लवण जल तथा जल उपचार संयंत्रों, लुगदी मिलों और चर्म संस्कार शालाओं जैसे चूना उपभोगी उद्योगों से निकले अपशिष्ट शामिल हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

xii) **पृष्ठ सक्रियक :** पृष्ठ सक्रिय रासायनिक पदार्थ, जिनमें संश्लिष्ट अपमार्जक भी शामिल हैं, फेन बनाने के कारण मलजल उपचार संयंत्रों और प्राकृतिक सरिताओं में कठिनाई उत्पन्न करते हैं। परंपरागत ऐल्किलबेन्ज़ीन सल्फोनेट पृष्ठ सक्रियकों के स्थायी और उच्च-तापसह होने के कारण समस्या और भी बढ़ जाती है। कार्बनिक रचना के बावजूद वे प्राकृतिक सरिता के जीवों द्वारा विभंजित हो जाते हैं परंतु धीरे-धीरे। अपमार्जक निर्माण उद्योग अब जैवनिम्नीकरणीय अपमार्जक बना रहे हैं। प्राकृतिक सरिता पर्यावरण

में जब तक पृष्ठ-सक्रियक गुणधर्म नष्ट नहीं हो जाएंगे फेन बनना जारी रहेगा। भले ही फेन सौन्दर्यात्मिक न हो किन्तु वह हानिकारक नहीं होता है और घरेलू प्रदूषण की उपस्थिति का संकेत करता है जो उसका लाभ है।

xiii) **अन्य विलेय :** उद्योग में प्रयुक्त प्रत्येक रासायनिक पदार्थ कुछ न कुछ मात्रा में अपशिष्ट जल के साथ निकल जाता है। उनमें अपरिष्कृत पदार्थ, मध्यवर्ती, अंतिम् उत्पाद, उपोत्पाद और प्रक्रम में प्रयुक्त पदार्थ शामिल हैं। सबसे अधिक परेशानी सल्फेट, नाइट्रेट, अमोनियम यौगिक और भारी धातुओं के लवणों के कारण होती है।

xiv) **रेडियोऐक्टिवता :** रेडियोऐक्टिव अपशिष्टों से प्रदूषण की संभावना बहुत अधिक रहती है। आजकल औद्योगिक कार्यों और अन्य उपयोगों के लिए रेडियो-समस्थनिकों का विस्तृत उपयोग हो रहा है और उनके विसर्जन स्थलों की संख्या भी बढ़ गई है। उच्च ऊर्जा वाले विकिरणों को उत्सर्जित करने के कारण वे खतरनाक होते हैं, ऐसे जल का उपयोग पीने अथवा भोजन बनाने के लिए किया जाए तो खतरा और भी बढ़ जाता है। यदि परिक्षेपित रेडियोऐक्टिव प्रदूषक रासायनिक अवक्षेपण अथवा सूक्ष्मजीवों आदि जीवों की क्रिया द्वारा सान्द्रित हो जाएं तो खतरा बहुत ही बढ़ जाता है। साधारणतया रेडियो-ऐक्टिवता नष्ट नहीं की जा सकती है किन्तु रेडियोऐक्टिव अपशिष्ट का निपटान करने से पहले या तो उसे इतना तनु कर दिया जाता है कि उसका उपयोग सुरक्षित हो जाए अथवा सान्द्रित कर तब तक अलग से सुरक्षित स्थान पर रख दिया जाता है जब तक वह प्राकृतिक रूप से नष्ट न हो जाए। प्रयुक्त की जाने वाली तकनीक का चयन, अवशिष्ट के आयतन और सान्द्रण तथा अन्य कारकों पर निर्भर करता है।

घुली ऑक्सीजन के निर्धारण के लिए प्रतिदर्श का उपयोग करते समय कोई परिवर्तन नहीं होने देना आदि अनेक सावधानियों की आवश्यकता होती है। विश्लेषण प्रतिचयन स्थल पर ही करना चाहिए। कम से कम रासायनिक स्थायीकरण तक तो प्रतिचयन स्थल पर ही करना चाहिए। वास्तविक विश्लेषण में, घुली ऑक्सीजन का ताजे अवक्षेपित मैंगनस हाइड्रॉक्साइड में अवशोषण, आयोडीन लवण से मुक्त आयोडीन की तुल्य सान्द्रता का मोचन और आयोडीन का मानक सोडियम थायोसल्फेट के साथ अनुमापन किया जाता है। यद्यपि यह विधि जटिल है किन्तु इस पूरी प्रक्रिया का भली-भांति मानकीकरण कर लिया गया है और किसी भी विश्लेषक के लिए यह साधारण नित्यक्रम सा बन गया है।

xv) **घुली ऑक्सीजन :** सरिता में घुली ऑक्सीजन की मात्रा प्रदूषण की सर्वाधिक स्वीकृत एकल कसौटी है। अनुकूल गैर-प्रदूषित अवस्थाओं में, यह संतृप्ति मान के लगभग होती है और कभी-कभी प्रकाश संश्लेषण के कारण अथवा सरिता में ऑक्सीजन उत्पादन के कारण यह संतृप्ति मान से भी अधिक हो जाती है। घुली ऑक्सीजन का संतृप्ति मान, ताप पर निर्भर करता है। कार्बनिक अवशिष्टों के जैव-ऑक्सीकरण के लिए उपलब्ध ऑक्सीजन का भंडार अधिक नहीं होता है और उसका आसानी से क्षय हो जाता है। सरिता में ऑक्सीजन की वापसी प्रकाश संश्लेषण द्वारा (जो आन्तरायिक होता है) तथा वायुमंडल से अवशोषण द्वारा (सीमित दर में) होती है। अतिप्रदूषित सरिता में घुली ऑक्सीजन नहीं होती है। इस स्थिति की जानकारी मछलियों के मरने, जल के खराब दिखाई देने तथा दुर्गंध से मिलती है। यदि सरिता के सभी भागों में घुली ऑक्सीजन की मात्रा 2 mg L^{-1} बनाए रखी जा सके तो अवांछनीय स्थितियों से बचा जा सकता है। स्वस्थ आबादी के लिए 4-6 mg L^{-1} की उच्च सान्द्रता आवश्यक है।

xvi) **जैव-रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता (Biochemical Oxygen Demand, BOD):** किसी सरिता में कार्बनिक अपशिष्टों का प्रमुख प्रदूषण प्रभाव, सूक्ष्मजीवों के प्रभाव में उनके द्वारा घुली ऑक्सीजन का उपभोग है। ऑक्सीजन ह्रास की दर और मात्रा का मूल्यांकन साधारणतया जैव-रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता परीक्षण द्वारा किया जाता है। यह कार्बन की मात्रा की प्रत्यक्ष माप नहीं होता है बल्कि ऑक्सीजन के उपभोग की क्षमता का माप होता है जो एक महत्वपूर्ण प्रदूषण संबंधी अभिलक्षण है। इसे ऑक्सीजन के mg L^{-1} में व्यक्त किया जाता है।

जैव-रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता परीक्षण में, सबसे पहले जिस अपशिष्ट जल का अध्ययन किया जा रहा हो, उसके प्रतिदर्श में आरंभ में विद्यमान घुली ऑक्सीजन की माप की जाती है। यह प्रदूषित सरिता का प्रतिदर्श हो सकता है

xvii) **रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता (Chemical Oxygen Demand, COD):** बी. ओ. डी. परीक्षण अनेक प्रकार से उपयोगी होता है किन्तु उसमें पूर्णता के लिए 20°C पर 5 दिन अथवा 27°C पर 3 दिन लगते हैं। अपशिष्ट जल में कार्बनिक द्रव्य का मानांकन सी. ओ. डी. परीक्षण द्वारा कुछ ही घंटों में किया जा सकता है। यह बी. ओ. डी.

MAADHYAM IAS

परीक्षण को नही दोहराता है। इसका बी. ओ. डी. के साथ संगत अनुपात हो सकता है और नही भी हो सकता। बी. ओ. डी. परीक्षण का कोई पूर्णतया मान्य प्रतिस्थापी परीक्षण नहीं है किन्तु सी. ओ. डी. परीक्षण एक यथेष्ट प्रतिस्थापी परीक्षण है। दोनों परीक्षणों द्वारा कार्बनिक द्रव्य की माप की जाती है। कुछ प्रकार के कार्बनिक यौगिक प्रत्येक परीक्षण के लिए प्रतिरोधी होते हैं, किन्तु यह प्रतिरोधकता एक ही प्रकार की नहीं होती है।

प्राचलों के अध्ययन के बाद, आइए उपचार विधियों का अध्ययन करें।

11.2.2 उपचार विधियां

औद्योगिक अपशिष्ट जल, संयंत्रों से ग्राही जल-निकायों में विसर्जित किया जाता है जिनमें किसी हद तक प्रदूषण को स्वांगीकृत करने की क्षमता होती है। स्वांगीकरण की मात्रा **उपलब्ध तनुता के अनुपात, जल अनुप्रवाह उपयोग** तथा **अपशिष्ट के अभिलक्षणों** पर निर्भर करती है। यह उपयुक्त और उचित ही है कि सरिता की स्वांगीकारक शक्ति का पूरा लाभ उठाया जाए बशर्ते उसकी उपयोगिता और सौन्दर्यता कम न हो। अवशिष्ट परिवहन के ऐसे तर्क संगत उपयोग को प्रदूषण नहीं मानना चाहिए।

जब औद्योगिक अपशिष्ट को नगरपालिका मल प्रणाल (sewer) में प्रवाहित किया जाता है तो लगभग ऐसी ही परिस्थिति पैदा होती है। यह निपटान की आसान विधि है, किन्तु इससे पड़ने वाले संभावित प्रभावों पर विचार करना पड़ता है। अधिकांश नगरपालिकाएं उन औद्योगिक अपशिष्टों पर पाबंदी लगा देती हैं जो मल व्यवस्था के लिए हानिकर होते हैं। यह हानि मल प्रणाल और संयंत्र उपस्कर के संक्षारण अथवा मल उपचार संयंत्र और प्रक्रम के साथ व्यतिकरण (interference) से हो सकती है। औद्योगिक अपशिष्ट संदूषक, जलमल उपचार से नष्ट हो सकते हैं, वे उपचार में बाधा डाल सकते हैं अथवा वे मल व्यवस्था तंत्र से, बिना परिवर्तन के, प्रवाहित हो जाते है। अंतिम स्थिति में वे नगरपालिका अपशिष्ट जल द्वारा तनु हो जाते हैं। यदि सरिता अथवा मल व्यवस्था की स्वांगीकारी क्षमताएं पर्याप्त न हों तो औद्योगिक अपशिष्ट को मूल रूप में प्रवाहित नहीं करना चाहिए। इस स्थिति में, विसर्जन से पहले अपशिष्ट का उपचार आवश्यक है। उपचार की अनेक पद्धतियां हैं। कुछ का संबंध वाहित मल उपचार प्रक्रमों से है जबकि अन्य को औद्योगिक अपशिष्टों के लिए विकसित किया गया है। इनकी चर्चा नीचे की गई है। अपशिष्ट को निर्माण संयंत्र में उपचार से पहले स्रोत पर ही अलग करना अथवा उसकी मात्रा कम करना सस्ता रहता है। इंजीनियरी प्रक्रियाओं और सामान्य समझदारी पर आधारित अनेक तकनीकें उपलब्ध हैं।

1) अंत: संयंत्र उपाय

3 **प्रक्रम परिवर्तन :** प्रदूषण समस्या को हल करने के लिए निर्माण प्रक्रम में परिवर्तन करना असामान्य नहीं है। इस प्रकार के अनेक उदाहरण मिलते हैं और जैसे-जैसे प्रदूषणरोधी प्रयत्न जारी रहेंगे ऐसे परिवर्तन आम रूप से होने लगेंगे। ऐसा ही एक परिवर्तन है- संश्लिष्ट अपमार्जक का निर्माण अर्थात् कठोर अपमार्जकों से जैव-निम्नीकरणीय पदार्थों का निर्माण जिससे घरेलू धुलाई अपशिष्ट कम कठिनाई करेंगे। आजकल प्रदूषण को कम करने के लिए स्वच्छ तकनीकें विकसित की जा रही हैं।

ii) **पदार्थ पुनर्प्राप्ति :** कच्चे पदार्थ और उत्पाद दोनों निर्माणकर्ता के लिए बहुमूल्य होते हैं किन्तु दोनों में से प्रत्येक का कुछ अंश सरिता में चला जाता है। यह आर्थिक हानि है और प्रदूषण को रोकने के लिए उन्हें पृथक करने के लिए भी खर्च करना पड़ता है। यदि ऐसे पदार्थों का निर्माण में पुन: उपयोग किया जा सके अथवा किसी अन्य कार्य के लिए

अथवा उस जल का प्रतिदर्श हो सकता है जिसमें अपशिष्ट की ज्ञात मात्रा मिलायी गई हो। उसके बाद मिश्रित जल के अन्य प्रतिदर्शों को, उपयुक्त सूक्ष्मजीवों और पोषकों की उपस्थिति में और समुचित पर्यावरण में प्रायः 20°C पर 5 दिन तक अथवा 27°C पर 3 दिन तक ऊष्मायित किया जाता है। उसके बाद, शेष घुली ऑक्सीजन की माप की जाती है। परीक्षण के दौरान उपभुक्त घुली ऑक्सीजन की गणना की जाती है तथा अपशिष्ट की ऑक्सीजन आवश्यकताओं को जैव-रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता के रूप में व्यक्त किया जाता है। यदि ऊष्मायन अवधि में संपूर्ण घुली ऑक्सीजन उपभुक्त हो जाए तो कोई भी मात्रात्मक रिपोर्ट नहीं बनाई जा सकती है। किन्तु अपशिष्ट को तनु बनाकर प्रयोग के लायक आंकड़े प्राप्त किए जा सकते हैं। जैव-रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता परीक्षण में अनेक व्यतिकरण (interferences) हो सकते हैं। आविषालु पदार्थ उसे पूरी तरह अमान्य कर देते हैं। इसलिए मान्य करने के लिए या तो उन्हें गैर-आविषालु किया जाता है अथवा इतना तनु कर दिया जाता है कि उनका प्रभाव नगण्य हो जाए। अकार्बनिक अथवा अपचायक रासायनिक पदार्थों द्वारा उपभुक्त ऑक्सीजन का मान 'तात्कालिक ऑक्सीजन आवश्यकता' **(Immediate Oxygen Demand)** के रूप में व्यक्त किया जाता है और तब वह कार्बनिक संदूषकों की मंद जैव-अभिक्रियाओं के साथ व्यतिकरण नहीं करेगा।

MADHYAM IAS
way to achieve your dream

उपयोग किया जा सके तो उससे आर्थिक लाभ होगा। अपशिष्ट से अनेक पदार्थों को पुन: प्राप्त किया जाता है अथवा सरिता में प्रवेश से पहले उन्हें अलग किया जा सकता है। उपोत्पादों की पुनर्प्राप्ति के भी लाभ हैं और यह कुछ उद्योगों में लाभदायक सिद्ध हो रहा है।

सी. ओ. डी. परीक्षण में अपशिष्ट जल की डाइक्रोमेट की ज्ञात मात्रा के साथ क्रिया की जाती है। फिर उत्थित ताप पर पाचन द्वारा कार्बनिक द्रव्य को ऑक्सीकृत किया जाता है। तत्पश्चात्, अनुपभुक्त डाइक्रोमेट का 'फेरोइन' सूचक की उपस्थिति में मानक फेरस अमोनियम सल्फेट के साथ अनुमापन किया जाता है। उपभुक्त डाइक्रोमेट के ऑक्सीजन तुल्य को सी. ओ. डी. माना जाता है। डाइक्रोमेट के साथ अभिक्रिया करने के कारण, क्लोराइड त्रुटि के सर्वाधिक महत्पूर्ण स्रोत हैं; अपितु उनके लिए संशोधन किया जा सकता है अथवा प्रतिदर्श में मर्क्यूरिक सल्फेट मिलाकर क्लोराइड व्यतिकरण समाप्त किया जा सकता है।

iii) **जल का पुन: उपयोग :** अधिकांश उद्योगों में जल का बहुत अधिक मात्रा में उपयोग होता है किन्तु अंतिम उत्पाद में जल बहुत कम या न के बराबर उपस्थित होता है। इसका अधिकांश अथवा संपूर्ण भाग, प्रदूषण वाहक अपशिष्ट के रूप में विसर्जित हो जाता है। जल कीमती होता है और उद्योगों के लिए उपयुक्त गुणता-जल प्रतिवर्ष कम होता जा रहा है। कभी-कभी प्रयुक्त जल को आंशिक शोधन के बाद एक अथवा अनेक बार निर्माण कार्य में पुन: उपयोग में लाया जा सकता है। प्रयुक्त शीतलन जल विशेष रूप से पुन: उपयोग में लाया जा सकता है किन्तु संदूषित अपशिष्ट जल को भी उपयोगी बनाया जा सकता है। यदि जल प्रत्यक्ष पुन: उपयोग के लिए उपयुक्त न हो तो उसे ऐसे कार्यों में प्रयुक्त किया जा सकता है जिनमें गुणता की अधिक आवश्यकता न हो। किसी उत्पाद के अंतिम प्रक्षालन के लिए लगभग शुद्ध जल की आवश्यकता होती है किन्तु उपभुक्त प्रक्षाल जल, प्राथमिक प्रक्षालन के लिए उपयोगी हो सकता है अथवा मध्यवर्ती शोधन के बिना प्रक्षालों के प्रतिधारा श्रेणी में प्रयुक्त हो सकता है। आजकल **शून्य विसर्जन** (zero discharge) की संकल्पना को लागू किया जा रहा है जिसका अर्थ है– जल का पूर्णतया पुनर्चक्रण अर्थात् पुन: उपयोग।

iv) **अपशिष्ट जल संग्रहण :** अपशिष्ट जल-उपचार का पहला कदम है– उसका संयंत्र में अनेक स्रोतों से संग्रहण और उपचार स्थल तक परिवहन। कुछ विशेष प्रकार के अपशिष्टों को उपचार संयंत्र के पास पहुंचने तक अथवा उपचार की अग्रिम स्थिति में पहुंचने तक (उदाहरण के लिए, अम्ल और सायनाइड अपशिष्टों को सुरक्षा के लिहाज से पृथक कर देना चाहिए) अलग रखना चाहिए। एकसमान प्रबल और दुर्बल अपशिष्टों को अधिक किफायती उपचार के लिए पृथक कर दिया जाता है। गुणता में लगभग समान हो जाने के बाद उन्हें मिला दिया जाता है। दूसरी ओर, अपशिष्टों को मिलाने से भी अधिक उपचार हो जाता है (उदाहरण के लिए, अम्लीय और क्षारीय अपशिष्टों के आंशिक उदासीनीकरण से)। परस्पर मिलाने से भी प्रवाह अथवा संघटन का उच्चावचन कम हो जाता है। इससे विसर्जन का सरल उपचार अथवा अच्छा नियंत्रण हो सकता है। साधारण तौर पर, यदि विसर्जन-उपचार कुछ अपशिष्टों को पृथक रखने से आसान हो तो उन्हें पृथक ही रखना चाहिए, किन्तु केवल तभी जब वास्तव में यह लाभकारी हो।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

2) कणिकीय निष्कासन (Particulate removal)

अपशिष्ट जल से कणिकीय अथवा निलंबित द्रव्य का निष्कासन उसके उपचार का महत्वपूर्ण भाग है क्योंकि यह घुले पदार्थ के निष्कासन के लिए प्रयुक्त रासायनिक अथवा जैव प्रचालनों से कम महंगा होता है। इसकी प्रमुख तकनीकें **नि:सादन, प्लवन** और **निस्यंदन** हैं।

i) **नि:सादन (Settling) :** नि:सादन सबसे कम महंगा भौतिक उपचार है। किसी अपशिष्ट जल के संसाधन में अनेक नि:सादन प्रक्रियाओं का उपयोग किया जा सकता है। बालू के भारी कणों को पृथक करने के लिए अपशिष्ट को परदों में से प्रविष्ट किया जाता है। किन्तु आरंभ में उपस्थित सूक्ष्म निलंबित द्रव्य तथा आपंक को नि:सादन द्वारा पृथक किया जाता है। नि:सादन साधारण अनूपों (lagoons) में किया जाता है किन्तु आमतौर पर इस कार्य के लिए विशेष तालाब बनाए जाते हैं। अवसादन का अत्यावश्यक उपोत्पाद **आपंक** (sludge) होता है। यदि आयतन कम हो तो नि:सादन द्रोणी (settling basin) से आपंक

का निष्कासन कुछ-कुछ देर बाद किया जाता है और यदि आयतन अधिक हो तो लगातार किया जाता है जिसके लिए **अपघर्षक** (scraper) यंत्रों और पंपों का उपयोग किया जाता है। कुछ भारी अकार्बनिक नि:सादित पदार्थ ठोस अथवा अर्ध-ठोस होते हैं किन्तु अधिकांश आपंक तरल कर्दम (fluid slurries) होते हैं जिनका निपटान से पहले, निर्जलीकरण आवश्यक होता है। मुख्यत: भूमि की कमी के कारण निपटान भी एक समस्या बन जाती है। जल से हल्के कण ऊपर उठ जाते हैं जिन्हें अपघर्षक के बजाय मथित्र (skimmers) से पृथक किया जाता है। अनेक तेल इस वर्ग में आते हैं जिन्हें नि:सादन और मंथन द्वारा प्राप्त किया जाता है।

ii) **प्लवन (Floatation):** बारीक ठोस अथवा कणिक पदार्थ जिनका घनत्व जल के घनत्व से कम अथवा उसके बराबर हो, वे सामान्य नि:सादन द्वारा शीघ्र पृथक नहीं होते हैं। उनके निष्कासन को त्वरित करने के लिए उनका वायु के सूक्ष्म बुलबुलों के साथ प्लवन किया जाता है। बुलबुले और ठोस कण (अथवा तेल) ऊपर उठकर पृष्ठ पर आ जाते हैं जिन्हें मथकर अलग कर लिया जाता है।

बुलबुले बनाने के लिए या तो अपशिष्ट जल को वायु के साथ दाबित करने के बाद दाब को मुक्त कर दिया जाता है अथवा वायु-संतृप्त अपशिष्ट जल पर निर्वात प्रयोग किया जाता है।

iii) **नि:स्यंदन (Filtration):** नि:स्यदंन, नि:सादन की अपेक्षा अधिक महंगा है किन्तु इसमें निष्कासन अधिक अच्छी तरह होता है। इसमें कम स्थान की आवश्यकता होती है और इसके कुछ विशेष उपयोग होते हैं। नि:सादन द्वारा प्राप्त आपंकों में जल को पृथक करने के लिए या तो उनका बालू संस्तर में निस्यंदन किया जाता है अथवा यांत्रिक उपस्कर का उपयोग किया जाता है। वृहद् आयतन के कारण अपरिष्कृत अपशिष्टों का निस्यंदन आमतौर पर नहीं किया जाता है। यदि विसर्जन आवश्यकताएं क्रांतिक हों तो उपचारित अपशिष्टों को अंतिम उपचार के रूप में निस्यंदित कर लिया जाता है जैसे बहि:स्राव जिन्हें रन्ध्रमय भौमगत रचनाओं में अंत:क्षिप्त करना हों। **छानने** (screening) की निस्यंदन के साथ यांत्रिक समानता होती है और औद्योगिक अपशिष्ट उपचार में सर्वत्र, इसे प्रथम चरण के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। इसमें स्थूल कण पृथक हो जाते हैं जो उपचार की अगली प्रक्रियाओं में बाधा उत्पन्न कर सकते हैं।

चालनियों का परास, 10 अथवा 15 cm के छिद्रों वाले स्थूल बैरक से लेकर 40 मेश अथवा इससे भी कम होता है। उनमें ठोस पदार्थों को एकत्रित नहीं होने देना चाहिए ताकि प्रवाह कम न हो जाए।

3) भौतिक उपचार विधियां

ऊष्मा उपचार : अपशिष्टों का ऊष्मा उपचार एक मंहगी और असामान्य विधि है। इसका उपयोग विशेष अपशिष्टों के लिए अथवा उन अपशिष्टों के लिए किया जाता है जिनकी पायस भंजन अथवा कार्बनिक द्रव्य के ऑक्सीकरण के लिए अल्प मात्राएं होती हैं।

भस्मीकरण (Incineration): नगरपालिका वाहित मल उपचार में निर्जलीकृत आपंकों का भस्मीकरण सामान्य प्रक्रिया है और इसका उपयोग कार्बनिक औद्योगिक अपशिष्टों के लिए किया जाता है। इसका उपयोग कचरे और अन्य ठोस अपशिष्टों के निपटान के लिए भी किया जाता है।

शीतलन (Cooling): किसी सरिता अथवा सीवर में प्रवाहित करने से पहले गर्म अपशिष्ट को ठंडा करना आवश्यक होता है। यह फुहारन, सोपानीपात (cascading) अथवा केवल एक स्थान पर रोक कर भी किया जाता है। पावर उद्योग में यह समस्या बहुत महत्वपूर्ण होती है। रेडियोऐक्टिव अपशिष्टों को रेडियोऐक्टिवता को क्षय करने के लिए संग्रहित किया जाता है। उनकी, एक न्यूनतम सान्द्रता के ऊपर स्वत: मुक्त ऊर्जा के क्षय के लिए, उपस्कर की, विस्तृत शीतलन की आवश्यकता होती है।

कार्बनिक आपंकों के अवायवीय पाचन अथवा प्रबल अपशिष्टों के वायवीय अथवा अवायवीय किण्वन जैसे जैव उपचारों में मंद तापन द्वारा ताप नियंत्रण आवश्यक होता है।

MAADHYAM IAS

4) pH का समायोजन (*p*H Adjustment)

बहुत कम अथवा बहुत अधिक *p*H वाले अपशिष्टों को प्रवाहित करने से पहले उन्हें उदासीन करने की आवश्यकता होती है। विशेषतया रासायनिक उद्योगों के कुछ संयंत्रों में अम्लीय और

क्षारीय अपशिष्ट, दोनों होते हैं जिनको आपस में मिलाने से आंशिक उदासीनीकरण हो जाता है। अंतिम pH समायोजन के लिए और कभी-कभी संपूर्ण उदासीनीकरण के लिए चूना, कपड़े धोने का सोडा अथवा खनिज अम्लों का उपयोग किया जाता है।

अम्लीय अपशिष्ट को विभिन्न क्षारकीय रासायनिक पदार्थों द्वारा उदासीन किया जा सकता है। कास्टिक सोडा और सोडियम कार्बोनेट कुछ महंगे अवश्य हैं किन्तु अत्यंत सुविधाजनक हैं। उनका उपयोग छोटे संयंत्रों में अथवा उन स्थानों में किया जाता है जहां उपचार के लिए अल्प मात्राओं की आवश्यकता होती है। चूना सस्ता है किन्तु कम सुविधाजनक है। अपितु वह सर्वाधिक प्रयुक्त क्षारीय अभिकर्मक है। **क्षारीय अपशिष्ट**, अम्लीय अपशिष्टों की अपेक्षा, कम समस्यात्मक होते हैं किन्तु उनके लिए भी उपचार की आवश्यकता होती है। यदि अम्लीय अपशिष्ट सरिताएं उपलब्ध न हों अथवा क्षारीय अपशिष्ट को उदासीन करने के लिए उपयुक्त न हों तो सामान्यतया सल्फ्यूरिक अम्ल का उपयोग किया जाता है। कुछ उद्योगों में प्रबल क्षारीय अपशिष्टों को उदासीन करने के लिए ईंधन गैस के रूप में कार्बन डाइऑक्साइड का उपयोग किया जाता है।

उदासीनीकरण को स्वचालित यंत्रों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है, और विसर्जित होते ही अंतिम बहि:स्राव का pH रिकार्ड करना वांछनीय होता है। कभी-कभी विशेष उपचार के रूप में अम्लीकरण अपशिष्ट सरिताओं अथवा क्षारीकरण का उपयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ, अम्लीकरण द्वारा तेल पायसन को भंग किया जा सकता है। अंतिम विसर्जन से पहले pH को उदासीनता ($pH=7$) के आस-पास ले आना चाहिए।

5) **ऑक्सीकरण और अपचयन**

कार्बनिक अपशिष्टों और कुछ अकार्बनिक अपशिष्टों के प्रदूषण अभिलक्षणों को ऑक्सीकरण द्वारा समाप्त अथवा कम किया जा सकता है। ऑक्सीकरण एक अथवा अधिक ऑक्सीकरण अभिकर्मकों द्वारा किया जा सकता है।

वातन (Aeration): यह ऑक्सीकरण का सबसे कम महंगा साधन है किन्तु उसकी प्रभावशीलता सीमित होती है। कुछ औद्योगिक अपशिष्टों का केवल वातन द्वारा समुचित उपचार किया जा सकता है। कुछ प्रकार के जैव उपचारों में वातन आवश्यक होता है और फेरस आयन स्कंदकों के साथ रासायनिक उपचार में मदद करता है। वायु से ऑक्सीजन अधिक प्रभावकारी होती है किन्तु महंगी होने के कारण बहुत कम प्रयोग की जाती है। वाहित मल आपंक को नष्ट करने और कुछ औद्योगिक अपशिष्टों के लिए वायु के साथ उच्च ताप और उच्च दाब पर ऑक्सीकरण किया जाता है।

वातन: किसी द्रव को वायु से संतृप्त करना।

क्लोरीनन : क्लोरीनन, औद्योगिक अपशिष्ट अपचार में प्रयुक्त सामान्य रासायनिक ऑक्सीकरण की विधि है। महंगी होने के कारण क्लोरीन को तनु अपशिष्टों के बजाय सांद्रित अपशिष्टों में प्रयुक्त करना चाहिए। केवल अंतिम विसंक्रमण के लिए, यदि आवश्यक हो तो, तनु अपशिष्टों में प्रयुक्त कर सकते हैं। हाइपोक्लोराइट लवणों और क्लोरीन डाइऑक्साइड का उपयोग विशेष परिस्थितियों में किया जाता है।

क्लोरीनन: क्लोरीन का, जल अथवा अपशिष्ट जल में अनुप्रयोग जिसे सामान्यतया विसंक्रमण के लिए किन्तु बहुधा अन्य जैव अथवा रासायनिक परिणामों को प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

MAADHYAM IAS

ओज़ोन का उपयोग कुछ औद्योगिक अपशिष्टों और विशेष रूप से फ़ीनॉलों और सायनाइडों के ऑक्सीकरण के लिए किया जाता है। परमैंगनेटों और डाइक्रोमेटों का भी विशिष्ट अनुप्रयोग होता है। औद्योगिक अपशिष्ट के उपचार में **रासायनिक अपचयन** का केवल महत्वपूर्ण अनुप्रयोग षट्संयोजी क्रोमियम वाले क्रोमेट अपशिष्ट को त्रिसंयोजी क्रोमियम वाले क्रोमेट अपशिष्ट में परिवर्तित करना है जिसे अधिक आसानी से अवक्षेपित किया जा सकता है।

6) रासायानिक अवक्षेपण

किसी विशेष घटक को अवक्षेपित करने के लिए औद्योगिक अपशिष्ट में रासायनिक पदार्थ मिलाए जाते हैं। उदाहरण के लिए, किसी विलयन से धातु आयनों को पृथक करने लिए क्षारीय अभिकर्मकों के साथ अवक्षेपण किया जाता है और फिर नि:सादन अथवा निस्यंदन किया जाता है। उसी प्रकार, अन्य घटकों को रासायनिक उपचार द्वारा वाष्पशील यौगिकों में परिवर्तित किया जाता है और फिर वायु अथवा गैस द्वारा पृथक कर लिया जाता है।

रासायनिक स्कंदन (Chemical coagulation): इसमें अपशिष्ट जल में जानबूझ कर मिलाए गए रासायनिक पदार्थों का अपक्षेपण किया जाता है ताकि अवक्षेप के साथ कोलॉइडी और सूक्ष्म विभाजित संदूषक भी पृथक हो जाएं। उदाहरण के लिए, अवशिष्ट में, प्राय: चूने के साथ, लौह लवण मिलाने से फेरिक हाइड्रॉक्साइड का अवक्षेप प्राप्त होता है। अवक्षेपण के दौरान वह वृहद ऊर्णी कणों में संपीडित हो जाता है। ये कण नि:सादन के समय, वे उन सूक्ष्म कणों को भी अपने साथ नि:सादित कर लेते हैं जो अन्यथा स्वयं नि:सादित नहीं होते। इस तकनीक का, अनेक उद्योगों में और विशेष रूप से माँस के वेष्टन **(packing),** डिब्बा-बंदी और पेट्रोलियम परिष्करण से प्राप्त कार्बनिक कोलॉइडी अपशिष्टों के लिए उपयोग किया जाता है।

7) अन्य रासायनिक विधियां

आयन विनिमय (Ion exchange): आयन विनिमय का उपयोग कुछ औद्योगिक अपशिष्टों के उपचार के लिए किया जाता है विशेष रूप से जब संदूषक कम और अव्यतिकारी (non-interferring) हों और पुन: प्राप्त पदार्थ की उपयोगिता हो। इस प्रकार, धातु संसाधन उद्योगों से प्राप्त तनु प्रक्षाल जल से धातुओं को प्राप्त किया जा सकता है और जल का पुन: उपयोग किया जा सकता है। सक्रियित कार्बन द्वारा **अधिशोषण** से कठिन संदूषकों की सूक्ष्म सान्द्रताएं पृथक हो जाती हैं। कोक उत्पादन और प्लास्टिक निर्माण से प्राप्त फ़ीनॉली अपशिष्टों से, सक्रियित कार्बन द्वारा उपचार से, प्रति लिटर एक मिलीग्राम से भी कम मात्रा को भी पृथक किया जा सकता है। अधिशोषित पदार्थों को पुन: प्राप्त किया जा सकता है और अधिशोषकों को पुन: प्रयोग में लाया जा सकता है।

8) वायवीय जैव उपचार

तनु कार्बनिक अपशिष्टों, जिनका केवल भौतिक और रासायनिक विधियों द्वारा उपचार करना कठिन होता है, के साथ सूक्ष्मजीव क्रिया कर सकते हैं। ये सूक्ष्मजीव वायवीय (घुली ऑक्सीजन की उपस्थिति में क्रिया करने वाले) अथवा अवायवीय (घुली ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में क्रिया करने वाले) हो सकते हैं। कुछ पोषक तत्व, विशेषरूप से नाइट्रोजन और फ़ॉस्फ़ोरस, उपस्थित होने चाहिए। कार्बनिक घटक, उपापचयी प्रक्रमों द्वारा नष्ट हो जाते हैं जो अंत में अहानिकर पदार्थों के रूप में प्राप्त होते हैं। वायवीय पद्धतियों में अधिकांश कार्बन, कार्बन डाइऑक्साइड के रूप में; हाइड्रोजन, जल के रूप में; नाइट्रोजन, नाइट्रोजन आयन अथवा नाइट्रोजन गैस के रूप में और गंधक, सल्फेट आयन के रूप में पृथक हो जाते हैं। सूक्ष्मजीवों में कुछ अपशिष्ट कोशिका ऊतक में परिवर्तित हो जाता है और शेष आपंक के रूप में प्राप्त होता है। आमतौर पर प्रयुक्त कुछ वायवीय जैव प्रक्रमों का उल्लेख नीचे किया गया है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

i) **च्यावी निस्यंदक (Trickling filters):** यह औद्योगिक अपशिष्ट, उसका उपभोग करने वाले सूक्ष्मजीवों तथा उपापचय के लिए आवश्यक ऑक्सीजन के बीच संपर्क स्थापित करता है। इसमें किसी संदलित (crushed) चट्टान अथवा अन्य उपयुक्त माध्यम का संस्तर होता है जिसमें से अवशिष्ट जल टपकता है तथा प्राकृतिक अथवा प्रणोदित संवातन द्वारा वायु प्रविष्ट होती है। जैव वृद्धि, माध्यम के ऊपर फिल्म के रूप में विकसित होती है। यह जैव वृद्धि अवशिष्ट जल में उपस्थित सूक्ष्मजीवों से अथवा घरेलू वाहित मल अथवा अन्य संवर्द्ध

के रूप में मिलाए गए सूक्ष्मजीवों से उत्पन्न होती है। जैसे-जैसे सूक्ष्मजीवों में वृद्धि होती है, कार्बनिक अपशिष्टों का भोजन के रूप उपभोग होता जाता है और उनका साधारण, हानिरहित यौगिकों के रूप में उपापचयन होता जाता है। फिल्म के टुकड़े, जिनमें मृत और जीवित सूक्ष्मजीव होते हैं, समय-समय पर निर्मुक्त होते जाते हैं और उन्हें बहि:स्राव में से नि:सादन द्वारा निकाल दिया जाता है।

कुछ कार्बनिक अवशिष्टों पर सूक्ष्मजैविक आक्रमण नहीं होता है किन्तु अधिकांश यौगिक एक जैव समुदाय विकसित कर सकते हैं जो उनका उपभोग कर लेता है। अपशिष्ट में एकाएक पाए जाने वाले आविषालु पदार्थ सूक्ष्मजीवों के साथ व्यतिकरण करते हैं अथवा सूक्ष्मजीवों को नष्ट भी कर देते हैं जिससे प्रक्रम असफल हो जाता है। उपचार से पहले अपशिष्ट जल के तुल्यकरण से ऐसी प्रघातक मात्राओं को रोकने में सहायता मिलती है। यदि अपशिष्ट में पोषक तत्व विद्यमान न हों तो उन्हें रासायनिक पदार्थों अथवा घरेलू अथवा स्वच्छता वाहित मल के रूप में मिलाया जा सकता है।

ii) **सक्रियित आपंक (Activated sludge) :** इस प्रक्रम में बडी-बडी संवातन टंकियों में कार्बनिक अपशिष्ट, सूक्ष्मजीवों के संपर्क में आता है जिनमें जीवाणु, ऊर्णी (flocculent) निलंबित वृद्धि के रूप में विकसित होते हैं। ऑक्सीजन स्रोत के रूप में, संपीडित वायु की, विसारक प्लेटों अथवा नलियों द्वारा आपूर्ति की जाती है। अनेक घंटों की अवरोधन और संवातन अवधि तक, पूर्वनि:सादित कार्बनिक अपशिष्ट लगातार टंकी में प्रवाहित किया जाता है। मिश्रित द्राव निलंबित ठोस (Mixed Liquor Suspended Solids, MLSS) समान दर से अधिप्रवाह करता है और नि:सादित हो जाता है। ऊर्ण का एक भाग, बीज के रूप में, संवातन यूनिट में वापिस भेज दिया जाता है।

वाहित मल और औद्योगिक अपशिष्ट उपचार में सक्रियित आपंक प्रक्रम के अनेक रूपांतरों का उपयोग किया जाता है। इनमें विभिन्न प्रवाह पैटर्न वाले यूनिट, लंबी टंकी में वायु का मंद वितरण, आने वाले अपशिष्ट का क्रमिक रूप से मिलाना, जैव वृद्धियों में अकार्बनिक ऊर्णिक को मिलाना, मध्यवर्ती शोधक तथा मूल प्रक्रम के अन्य अनेक रूपांतर शामिल हैं।

यह आसानी से होने वाली क्रिया है जिसमें अपशिष्ट में से कार्बनिक द्रव्य बहुत अच्छी तरह से पृथक हो जाते हैं। किन्तु इस प्रक्रम में अनेक दोष उत्पन्न हो सकते हैं। अपशिष्ट के प्रघातक भार, pH, ताप, अन्य पर्यावरण संबंधी कारकों में एकाएक परिवर्तन तथा आविषी अपशिष्टों की उपस्थिति आदि कठिनाई के मुख्य कारण हैं। नाइट्रोजन और फॉस्फोरस उपस्थित रहने चाहिए। यदि वे अपशिष्ट में उपस्थित न हों तो संयत्र से प्राप्त स्वच्छता वाहित मल का स्रोत के रूप में उपयोग किया जा सकता है। यदि भरण और प्रचालन अवस्थाएँ एकसमान हों तो उत्तम सक्रियित आपंक उपचार को प्रोत्साहन मिलता है।

iii) **लैगून (Lagoon) :** लैगून, जो धारक सरोवर अथवा ऑक्सीकारक सरोवर होते हैं, के द्वारा अनेक प्रकार का अपशिष्ट संशोधन संभव है जिसमें कार्बनिक अपशिष्टों का जैव निष्कासन शामिल है। इसमें तुल्यकरण, अवसादन तथा स्वत: उपचार के अवसर आदि होते हैं। यदि वांछनीय हो तो अतिरिक्त उपचार के लिए रासायनिक पदार्थों को मिलाया जा सकता है। संतोषजनक क्रिया के लिए लैगून में जैव प्रक्रमों को मुख्यत: वायवीय होना चाहिए। अधस्तली पंक में अवायवीय स्थिति होती है किन्तु लैगून का मुख्य भाग अवायवीय हो जाए तो दुर्गंध उत्पन्न होती है और उपचार अपर्याप्त होता है। अतिभार न हो और उथले लैगून द्वारा, घुली ऑक्सीजन का वांछित स्तर बनाए रखने में मदद मिलती है। प्राय: आपात् स्थिति में गंध से बचने के लिए सोडियम नाइट्रेट का प्रतिस्थापी के रूप में अथवा घुली ऑक्सीजन के संपूरक के रूप में उपयोग किया जाता है।

MAADHYAM IAS

यदि भूमि उपयुक्त कीमत पर उपलब्ध हो तो अनेक उद्योग, लैगूनों का उपयोग करते हैं। लैगून कुछ संयंत्रों में एकमात्र उपचार के रूप में ठीक रहते हैं किन्तु प्राय: उनका उपयोग अंतिम अथवा विसर्जन से पहले अपशिष्ट के अंतिम अथवा परिष्कारक उपचार के रूप में किया जाता है। उनके लिए कम से कम रख-रखाव की आवश्यकता होती है, किन्तु कुछ

नियंत्रण वांछनीय है। उत्तम घुली ऑक्सीजन के नियंत्रण के लिए उन्हें उथला अथवा 1-2 m गहरा होना चाहिए और अत्यधिक पादप वृद्धि नहीं होने देनी चाहिए। किनारों पर घास के अलावा कोई बड़े पेड़ पौधे नहीं होने चाहिए। प्राय: अकार्बनिक नि:सादन लैगूनों में निर्मित आपंक को हटा देना चाहिए। प्रवाह के लघु पथन को कम करने के लिए कभी-कभी लैगूनों को श्रेणी में परिचालित किया जाता है।

9) अवायवीय जैव उपचार

कुछ मामलों में अवायवीय सूक्ष्मजीव प्रभावी उपचार करते हैं। वायवीय लैगूनों की अधस्तली परतें प्राय: अवायवीय होती हैं और बिना परेशानी के अधिकांश कार्बनिक द्रव्य का अपघटन कर देती हैं। इसका उपयोग अनेक कार्बनिक अपशिष्टों के उपचार के लिए किया जाता है। प्रबल अपशिष्टों अथवा अवशिष्ट अंशों के अवायवीय उपचार का विस्तृत उपयोग किया जाता है। किसी अवायवीय प्रक्रम के लिए, कार्बनिक द्रव्य की 1% सान्द्रता न्यूनतम प्रायोगिक भोज्य माना जाता है। इतनी सान्द्रता कुछ कार्बनिक उद्योग अपशिष्टों, अधिकांश कार्बनिक आपंकों तथा अनेक ठोस-अपशिष्टों जैसे कूड़ा-कचरा और खाद्य अपशिष्टों में पाई जाती है। कभी-कभी अपरिष्कृत औद्योगिक अपशिष्टों का उपचार बड़ी धारक टंकियों में संपूर्ण अपशिष्ट के अवायवीय किण्वन द्वारा किया जाता है। दुर्गंध और उच्च अवशिष्ट कार्बनिक पदार्थों के कारण बहि:स्राव विसर्जन के लिए प्राय: उपयुक्त नहीं होता है किन्तु मुक्त करने से पहले वायवीय उपचार द्वारा उसे बेहतर बनाया जा सकता है।

सामान्यतया कार्बनिक द्रव्य का अवायवीय निम्नीकरण वायवीय ऑक्सीकरण की अपेक्षा, मंद गति से होता है जिसमें घंटों के बजाय कई दिन अथवा सप्ताह लगते हैं। इसलिए वृहद टंकी आयतनों की आवश्यकता के कारण, तनु अपशिष्टों को अवायवीय सूक्ष्मजीवों द्वारा उपचारित करना व्यवहारिक नहीं होता है।

अवायवीय पाचन द्वारा नि:सादी टंकी आपंकों का बहुधा और संसाधन किया जा सकता है। अपरिष्कृत अपशिष्ट की तुलना में आपंक का आयतन कम होने के करण यह संभव होता है। पाचन में, अधिकांश द्रव्य, मेथैन और कार्बन डाईऑक्साइड में परिवर्तित हो जाता है तथा अवशिष्ट ठोस पदार्थ अथवा ह्यूमस आपत्तिजनक नहीं होते हैं। अनुकूलतम पाचन के लिए ताप और pH नियंत्रण वांछनीय होते हैं। 1 से 2 माह के पाचन के बाद ठोस पदार्थों का निर्जलीकरण अथवा भस्मीकरण अथवा अन्य विधियों द्वारा निपटान किया जा सकता है।

10) अंतिम निपटान

समुचित रूप से उपचारित अवशिष्ट जल के अंतिम निपटान में कोई विशेष समस्या नहीं होती है। उसे नगरपालिका सीवर अथवा प्राकृतिक जलमार्ग अथवा किसी खाई में विसर्जित किया जाता है जहां से वह जलमार्ग में चला जाता है। तनुकरण शीघ्र करने के लिए नदियों अथवा तालाबों में बहुमार्गों से विसर्जन किया जाता है। कुछ मामलों में विसर्जन के समय पर्याप्त तनुकरण के लिए उपचार संयंत्र में नदी का जल पंप किया जाता है।

अपशिष्ट जल के उपचार में आपंक उपोत्पाद के रूप में उत्पन्न होते हैं और उनका निपटान अधिक गंभीर समस्या प्रस्तुत करता है। आपंकों में, उपचार द्वारा निष्कासित अधिकांश प्रदूषक और उपचार करने के लिए प्रयुक्त रासायनिक पदार्थ विद्यमान रहते हैं। यदि उपयुक्त और पर्याप्त भूमि क्षेत्र उपलब्ध हो तो आपंकों का सुरक्षित भू-भराव पद्धति द्वारा निपटान किया जा सकता है। आपंक के आयतन को कम करने से उसका निपटान आसान हो जाता है। यह आमतौर पर किया जाता है। इसमें निर्जलीकरण द्वारा गाढ़ा बनाना, निस्यंदन अथवा शुष्कन विधियां शामिल हैं। कार्बनिक आपंकों के पाचन, उच्च दाब और ताप पर आर्द्र ऑक्सीकरण अथवा भस्मीकरण से आयतन और भी कम किया जा सकता है। आपंकों का पूर्ण विनाश संभव नहीं है किन्तु आयतन को कम करने और सड़ाध तथा अन्य अप्रिय लक्षणों के निराकरण के बाद दबाकर उनका निपटान कर दिया जाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बोध प्रश्न

1) अपशिष्ट जल के अध्ययन में प्रयुक्त भौतिक-रासायनिक प्राचल कौन-कौन से हैं?

....

....

....

2) प्रदूषण नियंत्रण के लिए संयंत्र के अंदर अपनाए जाने वाले उपायों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

3) विभिन्न कणिक निराकरण विधियों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

....

....

....

11.3 खाद्य उद्योगों और खाद्य संसाधन उद्योगों से उत्पन्न बहि:स्राव- डेरी उद्योग अपशिष्ट

डेरी उद्योग द्वारा संसाधित उत्पादों में शीघ्र उपभोग के लिए प्रयुक्त **समांगीकृत-पास्तेरीकृत दूध** अथवा **वसारहित शुष्क दूध** पाउडर, **पनीर** तथा अन्य **कम विकारीय (perishable) उत्पाद हैं** जिन्हें संग्रहित किया जा सकता है। बाद में डेरी उद्योग द्वारा इन उत्पादों का स्वयं उपयोग किया जाता है अथवा बेकिंग, कैंडी और दूसरे उद्योगों का बेच दिया जाता है जहां उन्हें उनके उत्पादों में संघटक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। डेरी उद्योग के अपशिष्ट अन्य खाद्य अपशिष्टों के समान होते हैं किन्तु उनके साथ समस्या यह है कि वे जैव आक्रमण के लिए सुग्राही होते हैं।

11.3.1 अपशिष्ट के स्रोत

दूध के प्रयोग से संबंधित संयंत्रों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है: ग्राही संयंत्र, बोतल बंदी संयंत्र, संघनन संयंत्र, शुष्क दुग्ध निर्माण, आइसक्रीम निर्माण, पनीर बनाने और मक्खन बनाने के लिए प्रयुक्त संयंत्र। अन्य दुग्ध संसाधन प्रक्रियाएं कम महत्वपूर्ण हैं।

MAADHYAM IAS

डेरी संयंत्रों से प्राप्त अपशिष्ट जल को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है: **औद्योगिक अपशिष्ट, घरेलू अपशिष्ट, भुक्तशेष (spent) असंदूषित जल**। अंतिम वर्ग में अनेक पास्तेरीकृत उत्पादों के संघनन और पूर्व-शीतन के प्रशीतन तंत्र में प्रयुक्त जल शामिल है। उसमें कोई दुग्ध ठोस नहीं होता है। डेरी संयंत्रों से प्राप्त **औद्योगिक अपशिष्टों** में दूध के विभिन्न तनुकृत रूप होते हैं जो अपवाह तंत्र में प्रविष्ट करते हैं। उन्हें स्रोत के अनुसार वर्गीकृत किया जा सकता है जो इस प्रकार है:

i) कैन, टैंक, ट्रक, उपस्कर, उत्पाद पाइप लाइन और फ़र्श से प्राप्त प्रक्षालन जल अथवा धावन जल।

ii) छलकना, जमना, अधिप्रवाह, उस उपस्कर से होने वाला क्षरण (leakage) जिसका ठीक रख-रखाव न किया गया हो, खराब परिचालन कार्य।

iii) उद्वाष्पित्रों से संरोहरण (entrainment)।

iv) छाछ, दही का पानी, मलाई उतारा दूध आदि उपोत्पाद जिनका उपयोग नही होता है।

v) विकृत अथवा क्षतिग्रस्त अपरिष्कृत अथवा निर्मित उत्पाद या उपोत्पाद जिसे अन्य काम के लिए प्रयुक्त नहीं किया जा सकता है।

डेरी संयंत्र द्वारा विसर्जित औद्योगिक अपशिष्ट का आयतन मुख्यत: जल की उपलब्धता तथा उसके प्रबंधन में अपनाई जाने वाली सावधानी पर निर्भर करता है। अधिकांश आधुनिक संयंत्रों में शुष्क-फर्श संयंत्र विधि को अधिमान्यता दी जाती है जिसमें जल संरक्षण और अपशिष्ट बचत पद्धति का उपयोग किया जाता है। ऐसी प्रक्रियाओं को अपनाने से जल की आरंभिक लागत में और अपशिष्ट के न्यून आयतन के निपटान की कम लागत द्वारा बचत की जा सकती है।

आइए, अब उन विभिन्न विधियों का अध्ययन करें जिन्हें अपशिष्ट जल की मात्रा कम करने के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है।

11.3.2 अपशिष्ट-जल की मात्रा कम करने की विधियां

i) **स्वच्छ जल पृथकन (Clear water segregation):** दुग्ध संयंत्र में प्रयुक्त अधिकांश जल उपयोग के बाद भी असंदूषित रहता है। प्रशीतन तंत्र से संघनन जल और अमोनिया संपीडित्र जैकेट जल और दुग्ध शीतलित्र वैट पास्तेरी-कारक, तथा वायु प्रशीतन तंत्र से प्राप्त ठंडा जल इस वर्ग में आते हैं। इस जल को पृथक सीवर में संग्रहित कर सीधे ग्राही सरिता में विसर्जित कर देना चाहिए। इस जल को संयंत्र में भी पुन: प्रयुक्त किया जा सकता है। कभी-कभी गरम जल की आवश्यकता वाले अन्य प्रक्रम में प्रयुक्त करने से भाप की बचत होती है।

ii) **अपशिष्ट निरोधन (Waste prevention):** उपस्कर के समुच्चयन में सावधानी और समुचित रख-रखाव से क्षरण (leakage)* होने वाली हानि को रोका जा सकता है। उत्पाद का उपस्कर के खुले अथवा निकासयुक्त भाग से प्रवाहित होने पर अधिप्रवाह होता है। इसे प्लव-प्रचालित नियंत्रकों अथवा इलेक्ट्रॉनिक तल नियंत्रकों द्वारा रोका जा सकता है जो प्रवाह को बंद कर देते हैं।

छलकने (spillage) का कारण असावधानी पूर्वक प्रयोग करना अथवा उपस्कर का अनुचित डिजाइन या विन्यास है। यह हानि उत्पाद को एक पात्र से दूसरे में डालते समय होती है। डालते समय सावधानी रखने से इस हानि से बचा जा सकता है।

प्रशीतित पृष्ठ के संपर्क में आने पर उत्पाद जम सकता है जैसे शीतलित्र अथवा आइसक्रीम प्रशीतक में होता है। समुचित नियंत्रण अथवा बर्फ वाले ठंडे जल के उपयोग से शीतलित्र पर जमना रुक जाता है। प्राप्त अपशिष्ट में दही का पानी, छाछ, पृथकित वसारहित दूध शामिल हैं जिनकी कोई व्यापारिक उपयोगिता नहीं है। इन उच्च बी. ओ. डी. उत्पादों को संयंत्र के सीवर में प्रविष्ट नहीं होने देना चाहिए।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

सभी संयंत्रों में अवशेष अपशिष्ट पाया जाता हैं। इनमें दुग्ध उत्पाद शामिल हैं जो प्रवाह के बाद उपस्कर अथवा पाइपों में चिपक जाते हैं। उसे उपस्कर और पाइपों से पृथक करने के लिए, कुछ समय बाद रुक कर खाली करने के पश्चात् जल से धो लिया जाता है और प्रथम प्रक्षाल जल को बचा लिया जाता है। इस अवशिष्ट उत्पाद का पास्तेरीकरण द्वारा निपटान किया जाता है।

यदि निर्वात् पात्र के प्रचालन में सावधानी न रखी जाए तो दुग्ध ठोस वाष्प में संरोहित होकर संघनित्र जल में चले जाते हैं। इसे स्तर नियंत्रण और संरोहण पृथकित्रों द्वारा ठीक किया जाता है।

11.3.3 डेरी अपशिष्टों का उपचार

डेरी अपशिष्ट पूर्णतया कार्बनिक द्रव्य होते हैं इसलिए उनकी ऑक्सीजन आवश्यकता बहुत होती है। दूध, जीवाणुओं और सूक्ष्मजीवों के लिए भी संपूर्ण भोजन होता है। इसलिए सरिता में डेरी अपशिष्ट बहुत तीव्र गति से उपभुक्त हो जाते हैं जिससे ऑक्सीजन कम हो जाती है और कभी-कभी बिल्कुल समाप्त हो जाती है जो कि प्रदूषण का सूचक है।

दुग्ध अपशिष्टों में नाइट्रोजन और फ़ॉस्फ़ोरस भी होते हैं जो उत्तम पादप पोषक हैं। सिंचाई द्वारा निपटान से इस गुण के कारण फ़सल के लिए भू-आवरण बनाए रखने में सहायता मिलती है किन्तु सरिता में यह प्रभाव हानिकर होता है। शैवाल और अन्य जलीय पादप तेजी से बढ़ते हैं और उनके नष्ट होने पर मृत पादपों का स्वाद और गंध पानी में आ जाते हैं। घरेलू उपयोग के लिए जल आपूर्ति करने वाले जल उपचार प्रक्रम भी अक्सर इन्हें समाप्त नहीं करते हैं।

डेरी अपशिष्टों में नि:सादनीय ठोस महत्वपूर्ण नहीं होते क्योंकि सभी कार्बनिक पदार्थ कोलॉइडी अथवा घुली अवस्था में होते हैं। केवल अवसादन द्वारा बी. ओ. डी. की बहुत कम अथवा न के बराबर कमी होती है। प्राथमिक नि:सादन टंकी में रखने से लैक्टोस का शीघ्र लैक्टिक अम्ल में रूपांतरण हो जाता है जो केसीन को अवक्षेपित कर देता है। फिर अम्लीय बहि:स्राव का द्वितीयक प्रक्रम में उपचार करना कठिन हो जाता है और केसीन का उच्च अम्लता के कारण पाचन नहीं होता है क्योंकि उसमें जीवाणुनाशी गुण होते हैं।

यद्यपि डेरी अपशिष्टों के उपचार में प्राथमिक अवसादन का विशेष महत्व नहीं है किन्तु बालू कण निष्कासक कक्ष (Grit removal chamber) आवश्यक होता है। बालू और अन्य कंकड़ पदार्थ उपचार संयत्रों में पंपों को क्षति पहुंचा सकते हैं और उपचार प्रक्रमों में बाधा डाल सकते हैं।

डेरी अपशिष्ट उपचार का अन्य महत्वपूर्ण अवयव प्रवाह का समकरण (equilisation) है। 24 घंटों में अपशिष्ट के आयतन और बी. ओ. डी. में बहुत परिवर्तन होता है। उपचार संयंत्र में अपशिष्ट को समान रूप से प्रयुक्त करने के लिए एक संतुलन टंकी आवश्यक होती है। इस टंकी की क्षमता पर्याप्त होनी चाहिए ताकि वह प्रवाह को रोक सके जबकि अपशिष्ट को समान दर से बाहर पंप किया जाता है। यह आवश्यक है कि टंकी में अपशिष्ट का पयन न हो। इसलिए वायु को विसारित्रों द्वारा अथवा अन्य साधनों से प्रविष्ट किया जाता है ताकि अपरिष्कृत अपशिष्ट वायुजीवी बने रहें।

वातन टंकी में चक्कर लगाते ऊर्ण की संपुंजन (clump formation) की प्रवृत्ति होती है। इससे पृथक कोशिकाओं में ऑक्सीजन के स्थानांतरण में रुकावट होती है। कभी-कभी, संपुंजन इतना अधिक होता है कि ऊर्ण कण के केन्द्र को पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं मिल पाती है और वह अवायवीय हो जाता है। अत: यह आवश्यक है कि टंकी में अत्यधिक प्रक्षोभन होता रहे ताकि कोशिकाएं विसरित रहें। इससे अधिकतम कोशिका पृष्ठ उद्भासित रहता है जिससे द्रुत ऑक्सीजन उपयोग हो सकता है। जेट वातित्र, कर्त्तन द्वारा ऊर्ण कणों को विभाजित करते हैं जिससे ऑक्सीजन अवशोषण बढ़ जाता है।

डेरी अपशिष्टों की सर्वाधिक प्रभावकारी उपचार पद्धतियों से कार्बनिक अवयवों को जैवरसायनत: ऑक्सीकृत करने के लिए पर्याप्त ऑक्सीजन प्राप्त होती है। आजकल व्यापक रूप से प्रयुक्त पद्धतियों में **वातन** अथवा **संशोधित सक्रियित आपंक, च्यावन निस्यंदक** और **सिंचाई** शामिल हैं। **लैगूनन** को भी कुछ सफलता मिली है।

i) **वातन :** वातन उपचार में प्रमुख उपकरण वातन टंकी होती है। वायवीय सूक्ष्मजीवों को ताजे अपशिष्ट में विद्यमान कार्बनिक पदार्थ से भोजन और वायु से ऑक्सीजन प्राप्त होती है। इस प्रकार, उनकी वृद्धि और पुनर्जनन के लिए उपयुक्त पर्यावरण और परिस्थितियां उपलब्ध रहती हैं। विसरित वायु से लगातार विक्षोभ उत्पन्न होता है जो आपंक को नि:सादित नहीं होने देता है और ऊर्ण कणों को, टंकी में प्रवेश करने वाले ताजे अपशिष्टों के निकट संपर्क में लाता है।

ऑक्सीकरण द्वारा उपचार दो पृथक प्रावस्थाओं में होता है। जब ताजे दुग्ध अपशिष्ट वातन टंकी में प्रविष्ट करते हैं तो **स्वांगीकरण प्रावस्था** होती है। इस प्रावस्था में जीवाणु शीघ्र कार्बनिक द्रव्य का उपभोग करते हैं और अल्प अवधि के लिए उच्च दर पर ऑक्सीजन आपूर्ति की आवश्यकता होती है। दूसरी अथवा **देशज प्रावस्था** में, जीवाणुओं

MAADHYAM IAS

को नया भोजन नहीं मिलता है और वह स्वांगीकरण के समय ग्रहण किए गए भोजन का ही पाचन करते हैं। इसके लिए लंबी अवधि तक बहुत कम ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। क्योंकि स्वांगीकरण प्रावस्था के समय भी लगातार स्वत: पाचन होता रहता है, इसलिए ऑक्सीजन की आपूर्ति पूरी उपचार अवधि में होनी चाहिए।

वातन के साथ निम्नलिखित समस्याएं होती हैं।

फेनन (Foaming): देशज प्रावस्था की अवधि में अत्यधिक वायु की आपूर्ति से फेनन हो जाता है जबकि स्वांगीकरण प्रावस्था की तुलना में केवल 10% वायु की आवश्यकता होती है। ताजा अपशिष्ट मिलाने के लगभग 3 घंटे बाद वायु आपूर्ति कम करने से इस स्थिति से बचा जा सकता है।

स्थूलन (Bulking) : अतिभारण से स्थूलन हो जाता है। इसका कारण ऑक्सीकरण पूरा करने के लिए अपर्याप्त समय अथवा अधिक कार्बनिक पदार्थ के लिए अपर्याप्त वायु का होना है। संयंत्र में प्रभावी अपशिष्ट-अवरोध क्रिया से इस समस्या का निराकरण हो सकता है।

मिलाई जाने वाली शर्करा के कारण, आईसक्रीम निर्माण से प्राप्त अपशिष्टों में, कार्बोहाइड्रेट की प्रोटीन की तुलना में अधिक मात्रा पाई जाती है। यह हल्के आपंक द्वारा स्पष्ट होता है जिसका नि:सादन कठिन होता है। नाइट्रोजन संपूरक से इस समस्या के निराकरण में सहायता मिलती है।

ii) **च्यावी निस्यंदक :** यह डेरी अपशिष्टों के उपचार के लिए आरंभ की गई प्रथम विधियों में से एक है। आरंभिक अनुभवों से ज्ञात होता है कि मानक दर निस्यंदकों के लिए प्रयुक्त प्रबल डेरी अपशिष्टों के कारण ताल बन जाता है जिससे निस्यंदन क्रियात्मक नहीं रहता है। इसलिए शीतलक जल या अन्य स्वच्छ जल मिलाकर तनु करना आवश्यक है अथवा बहि:स्राव को द्वितीयक स्वच्छक से संयंत्र-अंत:प्रवाह तक पुन-प्रचक्रित करने के साथ उच्च दर निस्यंदकों का उपयोग किया जाता है।

च्यावी निस्यंदक उपचार के साथ पैदा होने वाली समस्याओं का कारण यह है कि लैक्टोस शीघ्र लैक्टिक अम्ल में परिवर्तित हो जाता है जिससे धारक अथवा प्राथमिक टंकी का pH कम हो जाता है। इससे केसीन अवक्षेपित हो जाता है और जैव क्रियाएं रुद्ध हो जाती हैं। इस प्रकार, निस्यंदकों के बंद हो जाने से प्राकृतिक जैव फिल्म विकसित नहीं होती है। इसके फलस्वरूप गंध आती है और उपचार तंत्र से बहुत निम्न स्तर का बहि:स्राव प्राप्त होता है। धारक टंकी के वातन से निस्यंदक के परिचालन में सुधार हो जाता है जिससे ताल बनना और गंध बनना समाप्त हो जाते हैं और कुल उपचार संयंत्र दक्षता में सुधार हो जाता है।

अपशिष्ट निपटान के लिए सिंचाई तंत्र के निर्माण में अनेक कारकों का ध्यान रखना चाहिए। सबसे महत्वपूर्ण, भूमि का ढलाव, मृदा का प्रकार और भूमि-संरक्षण के लिए प्रयुक्त फसल की किस्म हैं। अन्य सीमान्त कारकों में वर्षा, बादलों का छाया रहना और ताप आते हैं। सिंचाई द्वारा निपटान के लिए आवश्यक क्षेत्र, अपशिष्ट के आयतन पर निर्भर करता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

iii) **सिंचाई :** यदि उपयुक्त भूमि उपलब्ध हो तो सिंचाई द्वारा डेरी अपशिष्ट का निपटान संभव है। यह सबसे सस्ती और आसान विधि है। वाष्पोत्सर्जन, उद्‌वाष्पन और कुछ मात्रा में रिसने से जल घट जाता है। भूमि में उपस्थित प्राकृतिक जीवाणु कार्बनिक अवयवों को कार्बन डाइऑक्साइड, जल और नाइट्रेट आदि उत्पादों में परिवर्तित कर देते हैं।

जीवाणु प्राय: वायवीय होते हैं और उन्हें ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। अत: यह आवश्यक है कि एक विराम अवधि दी जाए ताकि मृदा, वायु ग्रहण कर सके। जैसे ही द्रव, मृदा में से रिसता है वह वायु को अंदर ले जाता है जिससे वायवीय प्रक्रम के लिए ऑक्सीजन उपलब्ध हो जाती है। यदि मृदा पर लगातर अपशिष्ट अनुप्रयोग किया जाता

रहे तो उपलब्ध ऑक्सीजन उपभुक्त हो जाती है जिससे अवायवीयता हो जाती है और दुर्गंध आने लगती है। इस स्थिति को रोकने के लिए सिंचाई के पाइपों का स्थान प्रतिदिन अथवा हर दूसरे दिन बदलते रहना चाहिए।

iv) **लैगूनन :** घरेलू अपशिष्टों के उपचार के लिए स्थायीकरण लैगूनों का विस्तृत उपयोग किया जाता है। इन तंत्रों का उपयोग घरेलू और डेरी अपशिष्टों के मिश्रण के उपचार में भी किया जाता है। वायवीय लैगूनों अथवा ऑक्सीकरण सरोवरों का निर्माण, प्रति इकाई आयतन के लिए अधिक पृष्ठीय क्षेत्रफल प्राप्त करने के लिए किया जाता है। द्रव में ऑक्सीजन प्राकृतिक अथवा यांत्रिक वातन और प्रकाश संश्लेषण द्वारा प्रविष्ट होती है। बी. ओ. डी. भारण महत्वपूर्ण है और उसे इस प्रकार नियंत्रित करना चाहिए कि अपशिष्ट अपघटन के लिए ऑक्सीजन आवश्यकता, आवश्यक ऑक्सीजन आपूर्ति के लिए ऑक्सीकरण प्रक्रमों की क्षमता से अधिक न हो।

v) **अन्य उपचार तंत्र :** रासायनिक अवक्षेपण में चूने का उपयोग pH बढ़ाने के लिए तथा फेरस सल्फेट अथवा अन्य स्कंदक रासायनिक पदार्थों का उपयोग अवक्षेपण के लिए किया जाता है। अवक्षेपण द्वारा केवल कोलॉइडी निलंबन में उपस्थित पदार्थ पृथक होते हैं और इससे घुले ठोसों के संघटन में कोई परिवर्तन नहीं होता है। रासायनिक पदार्थों का खर्च, रासायनिक पदार्थों को प्रयोग करने वाले श्रमिकों को दिया जाने वाला पैसा और आपंक इस प्रक्रम को अनाकर्षक बना देते हैं।

बोध प्रश्न

4) डेरी संयंत्र में अपशिष्ट के कौन-कौन से स्रोत होते हैं?

....

....

....

5) डेरी अपशिष्ट के उपचार के लिए प्रयुक्त वातन विधियों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

MAADHYAM IAS

11.4 पेट्रोरसायन उद्योग से उत्पन्न बहिःस्राव

पेट्रोलियम उद्योग प्रचालनों (उत्पादन से विपणन तक) में विभिन्न संघटनों वाले अपशिष्ट जल प्राप्त होते हैं और उन सब में तेल की मात्रा पाई जाती है। धातु परिष्करण, वनस्पति तेल उत्पादन, मांस उत्पादन और कार्बनिक रसायन उत्पादन में भी तेल वाले अपशिष्ट प्राप्त होते हैं। इनमें भी पेट्रोलियम उद्योग के लिए विकसित तकनीकों का उपयोग किया जाता है।

11.4.1 पेट्रोरसायन उद्योग

पेट्रोलियम उद्योग की प्रमुख इकाइयां इस प्रकार हैं: i) उत्पादन (अथवा खनन) ii) परिवहन iii) परिष्करण और iv) विपणन। पेट्रोरसायन उत्पादन का क्षेत्र जिसमें पेट्रोलियम कच्चे पदार्थ के रूप में प्रयोग किया जाता है, भी इसमें शामिल किया जाता है। पेट्रोरसायन उत्पादों में औषधियाँ, बहुलक, उर्वरक आदि अनेक उत्पाद आते हैं।

i) **उत्पादन :** इसमें पेट्रोलियम को भूमिगत स्रोतों से अपरिष्कृत तेल के रूप में प्राप्त किया जाता है। प्राकृतिक गैस भी उन्हीं अथवा पृथक कुंओं से प्राप्त की जाती है किन्तु उसकी प्राप्ति और शोधन में अपशिष्ट जल संबंधी समस्याएँ नहीं होती हैं। तेल-शेलों से जो कठोर शैल खनन से प्राप्त होते हैं, भी तेल की अल्प मात्राएं भी प्राप्त की जाती है। इसमें तेल, आसवन और अन्य प्रक्रमों द्वारा प्राप्त किया जाता है।

उत्पादन प्रचालनों से प्राप्त अपशिष्टों में वेधन के समय निकला पंक, वेधन और उत्पादन के समय तेल हानि और अपरिष्कृत तेल के साथ निकले लवण जल शामिल हैं। यदि समुचित सरिता प्रवाह उपलब्ध हो तो तेल पृथक करने के बाद, तनुकरण द्वारा लवण जलों का निपटान किया जा सकता है। अंतर्भौम विसर्जन (underground discharge) आम प्रक्रिया है जिसका उपयोग उत्पादन कुएं में दाब बनाए रखने के लिए किया जाता है। कभी-कभी उद्‌वाष्पन के लिए जलावरोधन (ponding) संभव है किन्तु उससे पेय जल भृतों (aquifers) का संदूषण हो सकता है।

ii) **परिवहन :** इसमें अपरिष्कृत तेल को उत्पादन क्षेत्र से परिष्करणशाला तक ले जाना तथा तैयार उत्पादों का बाजार में वितरण करना शामिल है। प्रदूषण समस्याएं मुख्यत: दुर्घटनाओं के कारण और उपस्कर के काम न करने से उत्पन्न होती हैं। दुर्घटनाओं को कम किया जा सकता है और बचाव और छलकने को रोकने की प्रक्रियाएं, सभी संबंधित व्यक्तियों को ज्ञात होनी चाहिए।

खाली तेल टैंकरों में, जल स्थिरक को जल मार्ग में विसर्जित करने से पहले तेल से मुक्त किया जा सकता है। परिवहन उपकरण को साफ़ करने से प्राप्त अपशिष्टों को भी विशेष उपचार की आवश्यकता होती है।

iii) **परिष्करण :** परिष्करण के मुख्य उत्पाद ईंधन, स्नेहक ग्रीज तथा रासायनिक और पेट्रोरसायन उद्योगों के लिए अर्ध-अपरिष्कृत पदार्थ हैं। आधुनिकीकरण से अपशिष्ट जल उपचार की प्रभाविता बढ़ गई है। परिष्करण क्षमता के प्रसार से जल की कुल उपयोग की मात्रा में भी कमी आई है।

प्रमुख परिष्करण प्रचालनों में दाब और निर्वात आसवन द्वारा प्रभाजन, तापीय और उत्प्रेरकी भंजन, पुन: संभावन, बहुलकन और ऐल्किलीकरण शामिल हैं। स्नेह संभारों (lube stocks) का अम्ल उपचार, गैसोलीन का मधुरण, निष्कर्षण और निर्लेपन, विनिर्देशों के अनुसार, संभारों को बनाने में प्रयुक्त होते हैं।

परिष्करण प्रचालनों में जल का उपयोग मुख्यत: अप्रत्यक्ष शीतलन के लिए किया जाता है और वह हाइड्रोकार्बनों के संपर्क में नहीं आता है। संभार धोने में प्रयुक्त जल तथा प्रक्रमण प्रचालनों (processing operating) 8 संघनित (condensate) के रूप में प्राप्त भाप, प्रक्रमण अपशिष्ट जल बनाते हैं। यह जल प्राय: संदूषित होता है।

iv) **पेट्रोरासायनिक उत्पादन :** निम्नलिखित प्रमुख प्रक्रम पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बनों को रासायनिक उद्योगों के लिए कच्चे पदार्थों के रूप में बदल देते हैं। क) हाइड्रोजन का निष्कासन जिससे असंतृप्त हाइड्रोकार्बन (ऐल्कीन और ऐरोमैटिक यौगिक) प्राप्त होते हैं ख) ऑक्सीकरण और ग) क्लोरीनन।

पेट्रोरसायन कारखानों से प्राप्त अवशिष्ट जल में पृष्ठ वाहजल, प्रक्रमण जल और शीतलन जल शामिल हैं। उच्च बी. ओ. डी. और पर्याप्त ठोस स्तर वाले जल अमिश्रणीय

MAADHYAM IAS

तेलों और विलायकों की समस्या, तेल परिष्करणशालाओं और पेट्रोरसायन कारखानों दोनों में उत्पन्न होती है।

v) **विपणन :** पेट्रोलियम के विपणन में, परिवहन के समय छलकने अथवा अन्य हानियों से सरिता प्रदूषण हो सकता है। संग्रहण केन्द्रों और फुटकर विक्रेताओं के द्वारा भी कुछ न कुछ हानि हो जाती है। इन पर, छोटे आमाप, बड़ी संख्या, विस्तृत वितरण के कारण नियंत्रण करना कठिन होता है। अधिकांश विसर्जन नगर निगम मल-व्यवस्था (sewerage) में होता है जिससे उन पर निगरानी रखना कठिन होता है। अपशिष्ट जल के समुचित नियंत्रण से तैलीय अपशिष्ट को मल प्रणाल में प्रविष्ट करने से रोका जा सकता है। इसके लिए प्रयुक्त क्रैंककेस तेल को इकट्ठा कर लिया जाता है तथा सावधानी के बावजूद मल प्रणाल में प्रवेश करने वाले तेल को एकत्रित करने के लिए तेल-पाश लगाए जाते हैं।

11.4.2 अपशिष्टों के अभिलक्षण

अपशिष्ट जल में प्राय: तेल होता है जिसे पृथक किया जा सकता है। साथ ही उसमें पायसित अथवा घुले अम्ल, क्षार, सल्फाइड, मर्केप्टैन, अमोनिया और फ़ीनॉल आदि रासायनिक पदार्थ तथा निलंबित ठोस भी होते हैं।

पेट्रोलियम परिष्करण प्रचालनों में जल का उपयोग क्षयी और अक्षयी दोनों रूपों में होता है। प्रमुख **क्षयी उपयोगों** में उद्वाष्पन, शीतलन टावरों से पवनान्तर हानियां और प्रक्रम भाप का वायुमंडल में विसर्जन शामिल हैं। प्रमुख **अक्षयी उपयोगों** में एकदा पारगामी शीतलन जल, शीतलन टावर, अवधमन और भाप-संघनित का विसर्जन शामिल हैं।

अपशिष्ट विभिन्न स्रोतों से उत्पन्न होते हैं, जैसे अपशिष्ट संसाधन अथवा शीतलन उपस्करों में च्यवन अथवा छलकनें, सरिता निर्लेपन प्रचालन, अपरिष्कृत तेल विलवणन से प्राप्त धावन जल और उत्पाद उपचार, उपस्करों को बंद करते अथवा आरंभ करते समय होने वाले मोचन, संग्रहण टंकियों से निष्कासन, उपस्कर स्वच्छक जल, शीतलन टावर अवधमन, जल अनुकूलन संयंत्र अपशिष्ट, झंझावात वाह, तथा क्षेत्र अथवा उपस्कर अवधावन, पंप ग्लैंड शीतलन जल, अग्नि शमन, सेनैटरी अपशिष्ट आदि।

परिष्करणशालाओं में जल का पुनर्संचरण और पुनरुपयोग, उत्तम गुणता वाले जल की उपलब्धता पर निर्भर करता है।

जल के अधिक पुनर्संचरण और पुनरुपयोग के कारण जल अंतर्ग्रहण और कुल बहि:स्राव विसर्जन में कमी होती है किन्तु यह विरोधाभास है कि उद्वाष्पन के कारण वास्तव में अधिक जल प्रयुक्त होता है।

शीतलन के बाद जल का दूसरा मुख्य उपयोग क्वथित्र में भरना है। प्राप्त भाप का उपयोग निर्लेपन (stripping) और आसवन के लिए किया जाता है। क्योंकि भाप पेट्रोलियम उत्पादों के संपर्क में आती है, इसलिए प्रक्रम संघनित, संदूषित हो सकता है। **प्रक्रमण अपशिष्ट जल** (process waste water) वह जल अथवा भाप संघनित होता है जो तेल के सीधे संपर्क में होता है और जिसमें तेल अथवा रासायनिक संदूषक होते हैं। इसमें भुक्त कास्टिक और अम्ल विलयन, उत्पाद और अपरिष्कृत धावन जल, भाप निर्लेपन से प्राप्त अपरिष्कृत विलवणन जल, संघनित, आसवन, भाप निर्मलन अथवा उत्प्रेरकों और मृत्तिकाओं का पुनरुत्पादन आते हैं।

अपशिष्ट जल स्रोतों में पृथक्करणीय और पायसित तेल पाए जाते हैं। सल्फाइड, अपरिष्कृत विलवणन जल में और आसवन तथा भंजक इकाइयों में गैसोलीन संघनित ग्राहियों से प्राप्त होते हैं। फ़ीनॉलीय अपशिष्ट, उत्प्रेरकी भंजक से प्राप्त संघनित जल में और कास्टिक उपचार के बाद प्राप्त गैसोलीन धावन जल में पाए जाते हैं। वे फ़ीनॉलों का उपयोग करने वाले स्नेह तेल और विलायक उत्पादन प्रक्रमों से भी प्राप्त होते हैं।

MAADHYAM IAS

परिष्करणशाला अपशिष्टजल में विद्यमान अनेक ऑक्सीकरणीय विलेय, कुल ऑक्सीजन आवश्यकता में योगदान करते हैं। अपशिष्ट जल में स्वाद और गंध का कारण फ़ीनॉली, नैफ्थेनिक, नाइट्रोजनी और कार्बनिक गंधक यौगिकों का होना है। वे अपरिष्कृत और आसुत उत्पादों से गंधक नाइट्रोजन और ऑक्सीजन यौगिकों के निष्कासन के लिए प्रयुक्त, उपचार प्रचालनों से उत्पन्न होते हैं। वे आसवन और उत्प्रेरकी भंजन से प्राप्त अपघटन उत्पादों, बैरोमीटरी संघनित्र जल और अपरिष्कृत विलवणन धावन जल से भी उत्पन्न होते हैं।

11.4.3 अपशिष्ट निपटान उपचार

i) **अंत: संयंत्र प्रक्रियाएं :** इन प्रक्रियाओं में अपशिष्ट नियंत्रण से संबंधित अनेक चरण शामिल रहते हैं। इनके अंतर्गत अपशिष्ट नियंत्रण के लिए प्रयुक्त विशिष्ट प्रचालन और विशिष्ट उपस्कर आते हैं जो सबसे अधिक प्रभावकारी और सबसे सस्ते हों। उनका उपयोग सीवर में उन पदार्थों के प्रवेश को रोकने के लिए किया जाता है जो अंतिम अपशिष्ट उपचार प्रचालन को जटिल बना देते हैं। संयंत्र में प्रयुक्त अन्य प्रक्रियाओं में किसी विशिष्ट इकाई में कच्चे पदार्थों, मध्यवर्तियों और अंतिम उत्पादों की प्राप्ति; शीतलन टावरों में जल का पुनरुपयोग; अनेक उपचार चरणों में रासायनिक पदार्थों का पुनरुपयोग जिसमें आरंभिक उपयोग में अधिकतम सान्द्रता की आवश्यकता होती है और बाद के उपयोगों में कम सांद्रता की आवश्यकता होती है; और उपचार प्रक्रियाएं जिनके द्वारा अपशिष्ट सीवर में विसर्जित करने के लिए उपयुक्त बनाया जाता है अथवा वे प्रक्रियाएँ जो विशेष अथवा वरणात्मक निपटान के लिए उसे तंत्र से पृथक करती हों, आती हैं।

जल को मुख्य सीवर तंत्र में स्वत: विसर्जित करने के लिए प्रयुक्त कुंड साधारणतया प्लवन नियंत्रित होते हैं। संग्रहित तेल को साधारणतया बिना किसी यंत्र की सहायता के, स्लॉप टंकी में विसर्जित किया जाता है। यह पद्धति, अपेक्षाकृत कम वाष्पशीलता वाले तेल के संग्रहण के लिए प्रयुक्त की जाती है।

तेल, प्राय: प्रत्येक परिष्करण यूनिट में अपवाह तंत्र से अनेक कुंडों (sumps) में संग्रहित किया जाता है जो यूनिट के निकट स्थित रहते हैं। कुडों से अपशिष्ट जल, बंद तंत्र में संग्रहित किया जाता है जो परिष्करणशाला के मुख्य सीवर में विसर्जित होता है। वहां से तेल प्रमुख पृथककारित्रों में संग्रहित किया जाता है।

पुनरुपयोग पद्धति में, शीतलन टावर सबसे अधिक महत्वपूर्ण है जो जल के क्षयी उपयोग को बढ़ा देता है किन्तु अपरिष्कृत जल आपूर्ति से लिए गए जल की मात्रा को कम कर देता है। इस प्रकार, वह उपचार किए जाने वाले अपशिष्ट जल के आयतन को कम कर देता है। शीतलन टावर बंद तंत्र की भांति काम करता है, जिसके फलस्वरूप वह परिष्करणशाला सीवर में तेल की हानि कम करने में प्रभावकारी होता है।

कास्टिक सोडे का उपयोग अनेक अपरिष्कृत संभारों में हाइड्रोजन सल्फाइड और मर्केप्टैनों के निराकरण के लिए किया जाता है। इस उपचार में, कास्टिक क्रेसिलेट का निर्माण होता है। अन्य संभार उपचार प्रचालनों में, मधुरण के लिए कास्टिक क्रेसिलेटों का उपयोग किया जाता है। इसमें प्राय: कास्टिक क्रेसिलेट एकत्रित हो जाते हैं जिन्हें तंत्र से पृथक करना पड़ता है।

ii) **निर्लेपन और ऑक्सीकरण** : अपरिष्कृत तेल के आसवन और उत्प्रेरकी भंजन में, अम्ल संघनित जल उत्पन्न होते हैं जिनमें विभिन्न सान्द्रताओं में सल्फाइड, मर्केप्टैन, अमोनिया और फ़ीनॉली यौगिक होते हैं जो अपरिष्कृत तेल की किस्म, भंजन परिस्थितियों और प्रयुक्त भाप की मात्रा पर निर्भर करते हैं। टावर में आम्ल संघनित जल के उपचार की आमतौर पर प्रयुक्त विधि, **प्रवाष्पी निर्लेपन** (steam stripping) है। सल्फाइड, मर्केप्टैन और अमोनिया, टावर में ऊपर से बाहर निकल जाते हैं और फ़ीनॉली यौगिकों का पैंदे से सीवर में अपवाह हो जाता है। ऊपर और पैंदे के बीच घटकों के वितरण का नियंत्रण, डिजाइन और प्रचालन की विधि द्वारा किया जाता है। हाइड्रोजन सल्फाइड और मर्केप्टैन का निर्लेपन अपेक्षाकृत आसान होता है। अमोनिया का पूर्ण निष्कासन कठिन होता है और उसके लिए बहुत अधिक भाप की आवश्यकता होती है। कुछ परिष्कारक, ऐसे जल के निर्लेपन के लिए ईंधन, गैस और भाप, के मिश्रण का उपयोग करते हैं।

भाप आसवन (अथवा निर्लेपन) : इसका उपयोग अपशिष्ट जल सरिताओं से जल विलेय वाष्पशील घटकों को पृथक करने के लिए किया जाता है। सामान्यतया यह प्रक्रम लगातार होता रहता है जिसमें भंजक आसवन में प्रयुक्त संयंत्र के समान ही संयंत्र का उपयोग किया जाता है। अपशिष्ट जल को ऊष्मा विनिमयित्र द्वारा गरम करके शीर्ष के निकट आसवन स्तंभ में प्रविष्ट किया जाता है जबकि भाप को स्तंभ अधस्तल के समीप प्रविष्ट किया जाता है। गुरूत्व के प्रभाव

टावरों में आम्ल जल (sour water) का ऑक्सीकरण करने के लिए उसे पर्याप्त वायु के साथ टावर के अधस्तल में रखते हैं। इससे गंधक यौगिकों और अमोनिया का ऑक्सीकरण हो जाता है तो एक ऊष्माक्षेपी अभिक्रिया होती है। सामान्यतया गंधक यौगिकों का थायोसल्फेट में तथा अमोनिया का जल और नाइट्रोजन में ऑक्सीकरण होता है; फ़ीनॉली यौगिक अप्रभावित रहते

MAADHYAM IAS

में अपशिष्ट जल स्तंभ में नीचे की ओर जाते हुए अधस्तल से ऊपर की ओर आती हुई भाप और वाष्पों के संपर्क में आता है। जैसे-जैसे अपशिष्ट स्तंभ में नीचे की ओर जाता है, उसमें से वाष्पशील घटक उत्तरोत्तर निकलते चले जाते हैं और अंत में ये वाष्पशील घटक अपशिष्ट जल से निकलकर स्तंभ के शीर्ष में पहुंच जाते हैं। इन घटकों को संसाधन (processing) के लिए निकाल लिया जाता है। भाप आसवन का संकल्पनात्मक आरेख चित्र 11.1 में दिखाया गया है।

हैं। ऑक्सीकरण की मात्रा, टावर में उपलब्ध संपर्क समय द्वारा नियंत्रित की जाती है। उच्च दाब और अधिक संपर्क समय द्वारा सल्फेट में ऑक्सीकरण किया जा सकता है। कभी-कभी टावरों में उपभुक्त कास्टिक विलयन, जिसमें सल्फाइड और मर्कैप्टाइड होते हैं, का भी आम्ल जल के साथ-साथ ऑक्सीकरण हो जाता है।

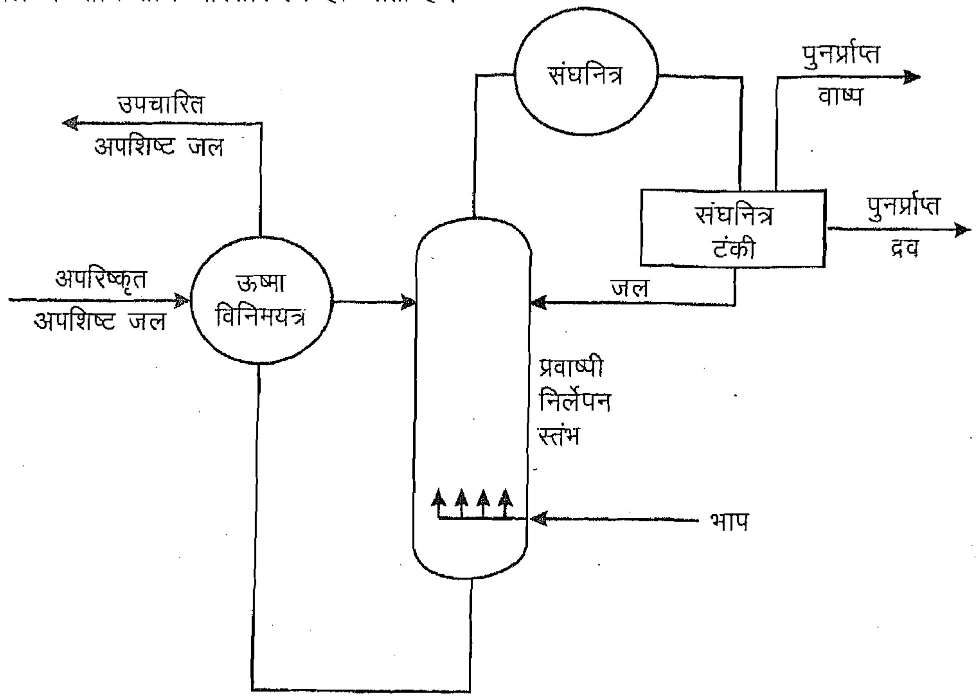

चित्र 11.1: भाप आसवन का आरेख

iii) **दहन :** इसका उपयोग सीमित मात्रा में कुछ विशेष अपशिष्टों के लिए किया जाता है। कभी-कभी विशेष भस्मीकरण यंत्रों में भुक्त ऐलुमिनियम क्लोराइड आपंकों को जलाया जाता है। सल्फाइड, मर्कैप्टाइड और क्रीसॉल सहित भुक्त कास्टिक विलयनों के दहन का सीमित अनुप्रयोग होता है जिसका कारण वायु प्रदूषण, भस्मीकारित्रों का संक्षारण और धातुमल के उपयोग से संबंधित कठिनाइयाँ हैं। धातुमल प्राय: दहन कक्ष में बना सोडियम कार्बोनेट होता है।

कुछ परिष्करणशालाओं में, जहाँ पेट्रोरसायन उत्पादन, प्रचालनों का भाग होता है, निपटान के लिए भुक्त अथवा अपशिष्ट विलायकों का भस्मीकरण किया जाता है। किन्तु इस विधि द्वारा क्लोरीनित हाइड्रोकार्बनों के निपटान के लिए अवशोषण टावरों की आवश्यकता होती है जो निर्मित हाइड्रोजन क्लोराइड को निष्कासित कर देते हैं। इस प्रचालन के छोटे आमाप के कारण, अवशोषित अम्ल का सीवर में विसर्जन किया जा सकता है अथवा उसके उदासीनीकरण में होने वाला व्यय किया जा सकता है। पावर स्टेशन भट्टियों में तैलीय आपंकों और लवण-युक्त अम्ल आपंकों का ज्वलन किया जा चुका है। यह क्रिया वहाँ भी की जा सकती है जहां तेल अथवा कोयले का ईंधन के रूप में उपयोग होता है। किन्तु वायु प्रदूषण को नियंत्रण में रखना इसका उपयोग सीमित कर देता है।

MAADHYAM IAS

iv) **विलायक निष्कर्षण (Solvent extraction):** इसका तेल परिष्करणशाला में सीमित उपयोग होता है। कभी-कभी इसका उपयोग फ़ीनॉली अवशिष्टों जैसे कॉस्टिक क्रेसिलेट

रखने के लिए अपशिष्ट जल के pH के नियंत्रण की आवश्यकता होती है। विपणनीय उत्पाद प्राप्त करने के लिए प्रबल कास्टिक विलयन के साथ निष्कर्षण से क्रीसॉल युक्त विलायक पुन: प्राप्त हो जाता है।

v) **गृह संचालन :** अच्छे गृह संचालन में चयवन की मरम्मत, तेल विसर्जन से बचाव, प्रक्रम यूनिटों से जल का विलोपन, ठोसों और भुक्त रासायनिक पदार्थों का समुचित निपटान, पायसों का सावधानीपूर्वक उपयोग, सभी संबंधित लोगों को इस बात की जानकारी होना कि अपशिष्ट उपचार, प्रक्रम-यूनिट में आरंभ होता है, प्रतिचयन लाइनों को इस प्रकार स्थापित करना चाहिए कि लाइन प्रधावन यूनिट में संग्रहण हो, आदि बातें आती हैं।

vi) **अंतिम उपचार :** प्राय: तेल परिष्करणशालाएं तैलीय जल अथवा प्रक्रम अपशिष्ट, भुक्त शीतलन जल, झंझा अपवाह और सैनेटरी वाहित मल के लिए पृथक सीवर तंत्र प्रयुक्त करती हैं। सैनेटरी वाहित मल को अलग से एकत्रित कर शहर के सीवर में विसर्जित किया जाता है। यदि नगरपालिका सुविधाएं उपलब्ध न हों तो सेप्टिक टैंक प्रयुक्त किए जाते हैं जिसमें अधिप्रवाह अपवाह खेतों में चला जाता है। यदि परिष्करणशाला बहि:स्राव के लिए द्वितीयक उपचार किया जाए तो सैनेटरी वाहित मल सेप्टिक टैंकों से निकलने वाला अधिप्रवाह निकटतम तेल-जल सीवर में विसर्जित कर दिया जाता है।

vii) **गुरूत्व पृथकित्र :** तेल परिष्करणशाला अपशिष्ट जल के लिए गुरूत्व पृथकित्र, उपचार का अंतिम चरण है। प्रक्रम अपशिष्ट जल अथवा तैलीय जल, सीवर तंत्र के लिए अमरीकन पेट्रोलियम इंस्टिट्यूट द्वारा निर्मित तेल-जल पृथकित्र का उपयोग किया जाता है जिसे ए. पी. आई. पृथकित्र (API **separator**) कहते हैं। ए. पी. आई. पृथकित्र की अनुदैर्ध्य काट चित्र **11.23** दिखाई गई है।

ए. पी. आई. पृथकित्र एक बड़ा आयताकार टैंक होता है जिसे अपशिष्ट जल की प्रवाह-दर को कम करने के लिए बनाया जाता है ताकि तेल की बूंदें, टैंक की लंबाई के साथ, धीरे-धीरे अपशिष्ट जल के पृष्ठ पर आ जाएँ।

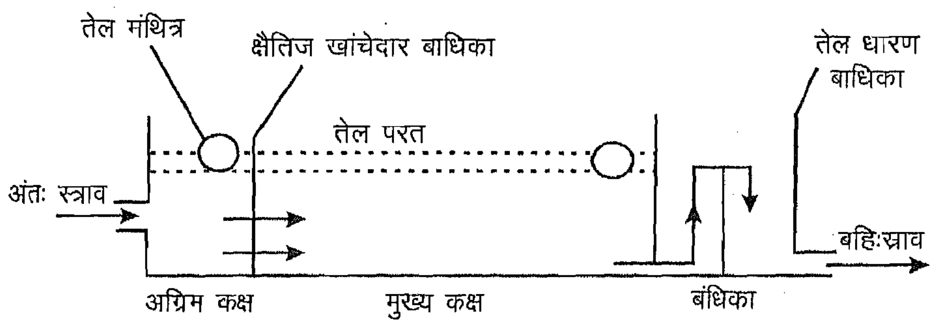

चित्र 11.2: ए. पी. आई. पृथकित्र

यह एक गुरूत्व पृथक्कारित्र है जिसमें तेल पृष्ठ पर एकत्रित हो जाता है और भारी ठोस तली पर बैठ जाते हैं। समय-समय पर तेल को और तली से आपंक को पृथक कर लिया जाता है।

झंझा अपवाह और भुक्त शीतलन जल को बहुधा इस प्रकार के पृथकित्र में से प्रवाहित किया जाता है। गुरूत्व पृथकन द्वारा सामान्य पष्किरणशालाओं के लिए आवश्यक पूर्ण उपचार किया जा सकता है। किन्तु जहां ल्यूब तेल और पेट्रोरसायन वाले जटिल प्रचालन होते हैं, वहां अतिरिक्त उपचार की आवश्यकता होती है। इसमें **रासायनिक ऊर्णन, रासायनिक पदार्थों के साथ** अथवा **उनके बिना वायु प्लवन**, च्यावन निस्यंदकों द्वारा जैव ऑक्सीकरण, सक्रियित आपंक अथवा विस्तरित समय के लिए **जलावरोधन** हो सकते हैं।

वायु प्लवन में गुरूत्व पृथक्करण की अपेक्षा पृथक्करण तीव्र गति से होता है और कम स्थान की आवश्यकता होती है।

MAADHYAM IAS
achieve your dream

viii) **रासायनिक ऊर्णन (Chemical flocculation):** इसमें अपशिष्ट जल में अभिकर्मक मिलाने से अवक्षेप प्राप्त होता है जिसे नि:सादन द्वारा पृथक कर लिया जाता है। ऐलुमिनियम सल्फेट, फेरिक क्लोराइड और ऐलुमिनियम क्लोराइड सर्वाधिक प्रयुक्त अभिकर्मक हैं। कभी-कभी अपशिष्ट जल में उपस्थित पदार्थ, जैसे कैल्सियम बाइकार्बोनेट, मैग्नीशियम कार्बोनेट से अवक्षेप बनाए जा सकते हैं और उन्हें ऊर्णन अभिकर्मकों की तरह प्रयोग किया जा सकता है। अपशिष्ट जल के pH को समुचित परास में नियंत्रित करने पर, ऊर्णन अभिकर्मकों के जलयोजित अभिक्रिया उत्पाद प्राप्त होते हैं। ये अपेक्षाकृत

अविलेय यौगिक, जो आरंभ में कोलॉइड के रूप में विद्यमान रहते हैं, ऊर्ण के रूप में संपीडित हो जाते हैं। संपीडन के समय वे अन्य कोलॉइडी और निलंबित द्रव्य के साथ सहयोजित हो जाते हैं। जैसे-जैसे ऊर्ण कण बढ़ते हैं उनका आभासी घनत्व बढ़ता जाता है और वे निःसादित हो जाते हैं। वे अपने साथ वह संपूर्ण अविलेय द्रव्य भी ले जाते हैं जो वृद्धि काल में उनके साथ मिल जाता है। ऊर्णन प्रक्रम को शीघ्र करने के लिए बहुधा पॉलिइलेक्ट्रोलाइटों का उपयोग किया जाता है।

निस्यंदित निलंबित ठोस पदार्थों द्वारा अवरोधित संलयन-माध्यम को विपरीत दिशा में वायु प्रवाहित करके जल-प्रक्षालन द्वारा धोया जाता है। पूर्व-अनुकूलन से पायसों का प्रभावकारी उपचार होता है।

रासायनिक ऊर्णन, सूक्ष्म विभाजित अवस्था में अविलेय द्रव्य सहित अपशिष्ट जल की निलंबित द्रव्य मात्रा को कम करने में प्रभावकारी होता है। तेल की मात्रा को उसके विलेयता स्तर तक कम किया जा सकता है। कुछ बी. ओ. डी. पृथक हो जाता है किन्तु यह पृथक्करण ऑक्सीजन की आवश्यकता वाले पदार्थों तक सीमित रहता है जो आरंभ में कोलॉइड अथवा अन्य कणों के रूप में विद्यमान रहते हैं।

ix) **संलयन (Coalescence):** रासायनिक पदार्थों पर आधारित अपशिष्ट जल उपचार पद्धति से बचने के लिए संलयक वितैलक बनाए गए हैं। संलयक भौतिक-रासायनिक क्रिया करता है जिसमें तेल की सूक्ष्म बूंदे परस्पर कर्षित हो जाती हैं। कुछ और बड़ी बूंदें, संलयन माध्यम में पृथक हो जाती हैं और तेल की बड़ी बूंदे प्राप्त होती हैं जो पात्र के ऊपर एकत्रित हो जाती हैं। संलयन वितैलक की रूपरेखा चित्र 11.3 में दी गई है। संयंत्र प्रायः उत्प्रवाह विधा में काम करता है।

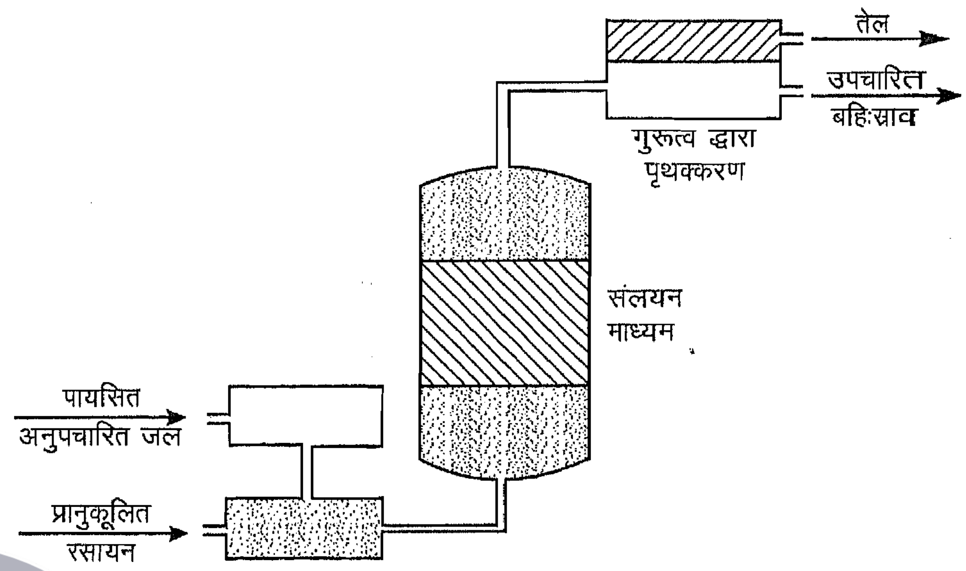

चित्र 11.3: संलयन वितैलक

केवल वायु प्लवन की अपेक्षा, वायु प्लवन का रासायनिक ऊर्णन के साथ संयोजन अधिक प्रभावकारी होता है। इसमें रासायनिक ऊर्णन के समान ही उपचार की मात्रा उत्पन्न होती है किन्तु वह तीव्र गति से होता है। साथ ही वह साधारण रासायनिक ऊर्णन को विपरीत रूप से प्रभावित करने वाले प्रभावों को कम कर देता है और अल्प मात्रा में ऑक्सीकरण करता है।

x) **वायु प्लवन (Air floatation) :** इस प्रक्रम में अपशिष्ट जल को दाब पर वायु या किसी गैस से संतृप्त करने के बाद वायुमंडलीय अथवा समानीत दाब पर पात्र में मुक्त किया जाता है। अतिसंतृप्ति की समाप्ति छोटे-छोटे बुलबुले बनने के द्वारा होती है। जल में ये बुलबुले बनते समय और ऊपर उठते हुए कणीय द्रव्य से संयुक्त हो जाते हैं और सतह पर आ जाते हैं जहां से उन्हें पृथक कर लिया जाता है। रासायनिक पदार्थों के साथ अथवा उनके बिना, वायु प्लवन से प्राप्त बहिःस्राव देखने में और तेल की मात्रा की दृष्टि से, संशोधित होता है। यह परिष्करणशाला के लिए अंतिम उपचार के रूप में काम करता है जिसमें ऑक्सीजन आवश्यकता संबंधी जरूरत महत्वपूर्ण नहीं होती है।

xi) **जैव ऑक्सीकरण :** इसका परिष्करणशाला अपशिष्ट जल के उपचार के लिए विस्तृत उपयोग होता है। च्यावन निस्यंदकों और सक्रियित आपंक को चयनित अपशिष्ट धाराओं और कुल बहिःस्रावों के उपचार के अनुकूल बनाया गया है। जैव-ऑक्सीकरण तालों का भी विस्तृत उपयोग किया जाता है। जैव उपचार उन धाराओं तक सीमित रहता है

MAADHYAM IAS

जिनमें फ़ीनॉली यौगिक होते हैं। जल उपयोग में कमी के साथ परिष्करणशाला बहि:स्राव की गुणता कम होती है और उपचार की आवश्यकता अधिक होती है भले ही प्रदूषक पदार्थ की कुल मात्रा उससे कम हो जब बहि:स्राव आयतन अधिक थे।

परिष्करणशाला से प्राप्त कुल बहि:स्राव के उपचार के लिए च्यावन निस्यंदक अथवा सक्रियित आपंक यूनिट के चयन के लिए कोई स्पष्ट आधार नहीं है। दोनों यूनिटों से लगभग समान कार्य हो सकता है। यद्यपि च्यावन निस्यंदक की स्थापना लागत अधिक होती है किन्तु वह सक्रियित आपंक की तुलना में अति भार और विषैले पदार्थों के प्रभावों का अच्छी तरह सामना कर सकते हैं।

xii) **रासायनिक ऑक्सीकरण :** परिष्करणशाला अपशिष्टों के उपचार में इसका सीमित उपयोग है किन्तु यह सल्फाइडों और मर्केप्टाइडों वाले भुक्त कास्टिक विलयनों के टावरों और आम्ल संघनित के लिए प्रयुक्त होता है। यह प्रचालन सतत् प्रक्रम के रूप में किया जाता है जिसमें विलयन और वायु टावर की तली से प्रविष्ट किए जाते हैं। यह ऊष्माक्षेपी अभिक्रिया है और आरंभ होने पर ऊष्मा उत्पन्न करती है। सल्फर यौगिक, थायोसल्फेटों में परितवर्तित हो जाते हैं। ताप और दाब अपशिष्ट के संघटन और वांछित ऑक्सीकरण की मात्रा के अनुसार परिवर्तित होते हैं।

महंगा होने के कारण ओजोनन अथवा क्लोरीनन द्वारा ऑक्सीकरण नहीं किया जाता है। जैव-उपचारित बहि:स्रावों पर इन अभिकर्मकों के उपयोग से चरम परिस्थितयों में संभावित तृतीयक उपचार हो सकता है। इसे केवल स्वाद और गंधयुक्त यौगिकों के लिए ठीक कह सकते हैं जो सामान्य जैवविधियों के लिए उच्च ताप-सह होता है। किन्तु स्वाद और गंध वाले यौगिक इन ऑक्सीकारकों के साथ अभिक्रिया करने वाले मिश्रण के अंतिम घटक होते हैं। अवशिष्ट बी. ओ. डी. के ऑक्सीकरण में ऑक्सीकारक की अपेक्षाकृत बृहद् मात्रा प्रयुक्त होने तथा स्वाद और गंध युक्त अवयवों के ऑक्सीकरण हेतु द्रव्य-अनुपाती क्रिया परिस्थितियां स्थापित करने के लिए ऑक्सीकारकों की आवश्यकता के कारण यह प्रक्रम बहुत महंगा हो जाता है जो इसे निषेधात्मक बना देता है।

xiii) **अंतिम अपशिष्ट जल उपचार :** इसमें निम्नतर बी. ओ. डी. और निलंबित ठोस स्तर प्राप्त करने के लिए शेष बचे निलंबित ठोसों को पृथक किया जाता है। इसके लिए दाब निस्यंदक का उपयोग किया जाता है। समस्या उन घुले ऑक्सीजन यौगिकों से उत्पन्न शिष्ट (residual) सी. ओ. डी. के साथ हो सकती है जिनका जैव-उपचार नहीं किया जा सकता है। इन यौगिकों को पृथक करने के लिए सक्रियित कार्बन का तृतीयक उपचार विधि के रूप में उपयोग किया जाता है। सक्रियित आपंक प्रक्रम में वातन बेसिन में चूर्णित सक्रियित कार्बन मिलाया जाता है। आविषालु कार्बनिक यौगिक अवशोषित हो जाते हैं और उन्हें पृथक कर दिया जाता है।

xiv) **भौमगत निपटान :** कुछ चुने गए औद्योगिक अपशिष्टों के लिए गहरे कुओं में निपटान (deep well disposal) का उपयोग बढ़ रहा है। अनेक वर्षों से इसका उपयोग तेल क्षेत्रीय प्रदेशों में लवण जल के निपटान के लिए किया जा रहा है। परिष्करणशाला में कुओं का उपयोग आम्ल संघनित धाराओं, भुक्त कास्टिक विलयन और भुक्त अम्लों के लिए किया जा सकता है। वेधन छिद्र (borehole) के पार्श्व को बंद होने से रोकने के लिए कुएं में विसर्जित अपशिष्ट विलयनों में निलंबित द्रव्य नहीं होना चाहिए। कुएं में आरंभ में ताजा जल अथवा अम्ल अंत:क्षिप्त किया जाता है ताकि अपशिष्ट और आरंभिक भौमजल के बीच रोध उत्पन्न किया जा सके। इससे अपशिष्ट के घटकों और भौमजल के बीच अभिक्रिया नहीं होती है अन्यथा अवक्षेप बनने से संरचना रुद्ध हो जाती है।

किस प्रकार के जैव उपचार का चयन किया जाए यह लागत पर और उपचार संयंत्र के लिए स्थान की उपलब्धता पर निर्भर करता है। जैव ऑक्सीकरण ताल स्थापित करने के लिए पर्याप्त क्षेत्र की आवश्यकता होती है। जहां स्थान उपलब्ध हो और अनुकूल भी हो तो संयंत्र को स्थापित करने और प्रचालन में बहुत कम कीमत लगती है। ताल की अधिभारों और आविषालु पदार्थों के आघातों को सहन करने की उत्तम बफर क्षमता होती है। यदि ताल को बहुत बड़ा बनाया जा सके तो पूरक वातन की आवश्यकता नहीं होती है। यदि आरंभ में सीमित वातन क्षमता स्थापित की जाए तो आमाप और प्रचालन में अधिक लचीलापन रहता है। च्यावन निस्यंदन अथवा सक्रियित आपंक के समान, 3 दिन के धारण समय वाले वातन ताल से भी उच्च गुणता के बहि:स्राव प्राप्त होते हैं।

ऑक्सीकरण तालों को कक्षों में विभाजित कर देना चाहिए। तेल और आपंक के लिए 24 घंटे धारण काल वाले पूर्वस्थिरण बेसिन का उपयोग करना चाहिए। बड़े तालों में एकत्रित करने के बजाए उन्हें इसमें से आसानी से निकाल सकते हैं।

एक उपयुक्त भूवैज्ञानिक संरचना की आवश्यकता होती है जिसमें समुचित पारगम्यता और सरंध्रता हो और जो ऊपर से किसी

अपारगम्य आच्छद से ढकी हो। उस क्षेत्र में कोई भूवैज्ञानिक दोष नहीं होने चाहिए। यह संरचना उस क्षेत्र के वर्तमान अथवा भावी पेय जल कुओं की गहराई से बहुत नीचे होनी चाहिए। कुआं ठीक प्रकार से घिरा और बंद होना चाहिए ताकि ऊपरी भाग में संदूषण न हो।

MAADHYAM IAS

निपटान स्थल पर उच्च दर वाष्पोत्सर्जन संयंत्र स्थापित करके तीव्र उद्वाष्पन किया जा सकता है।

अपशिष्ट उपचार अथवा तेल प्रक्रमण की योजना बनाते समय, आपंकों को उत्पन्न करने और उनके अभिलक्षणों को बताने में, इन प्रचालनों की क्षमता का निर्धारण करना कठिन है।

निर्दिष्ट स्रोतों से आपंक अनियमित अंतरालों पर प्राप्त होते हैं। इस प्रकार, अपकेन्द्री भरण दिन प्रतिदिन भिन्न-भिन्न होता है और दोषपूर्ण परिणाम प्राप्त होते हैं। टैंको के अधस्तल में भारी पायस होते हैं जिनका अपकेन्द्रित्र के भरण बनाने में विशेष ध्यान रखना पड़ता है। वायु प्लवन यूनिटों से प्राप्त आपंक और मंथन उत्पाद विशेष कठिनाई उत्पन्न कर सकते हैं। इस प्रकार, अपकेन्द्रित्र के लिए भरण निर्माण में अनेक समस्याएँ हो सकती हैं। इसलिए अपकेन्द्रण-निमार्ण में सहायता के लिए विपायसीकारकों, पॉलिइलेक्ट्रोलाइटों अथवा हल्के तेलों को मिलाया जाता है।

xv) **तनुकरण :** इसमें अपशिष्ट की ऑक्सीजन संबंधी आवश्यकता को पूरा करने की सीमित संभावना रहती है और पर्याप्त मात्रा में घुले ठोस पदार्थ वाले अपशिष्ट को ग्रहण करने की पर्याप्त क्षमता होती है। उपचार आवश्यकताओं को तनुकरण क्षमताओं के साथ संतुलित करते समय अपशिष्ट के अभिलक्षणों और जिस जल में अपशिष्ट को विसर्जित करना है उसके गुणधर्मों पर सावधानीपूर्वक विचार कर लेना चाहिए।

xvi) **उद्वाष्पन :** यह शुष्क प्रदेशों के लिए महत्वपूर्ण है जहां निर्गम अर्थात् निस्यंदन और उद्वाष्पन तालों का उपयोग किया जाता है।

xvii) **आपंक निपटान :** परिष्करणशाला अपशिष्ट जल के उपचार में यह सबसे कठिन समस्या है। आपंक अपशिष्ट उपचार से सीधे उत्पन्न होते हैं। वे तेल संसाधन प्रचालनों से भी प्राप्त होते हैं। आपंकों के पृथक्करण से अंतिम निपटान में कठिनाइयां और खर्च दोनों कम हो जाते हैं। आपंक चार प्रकार के होते हैं: **तैलीय, तेल मुक्त, रासायनिक** और **जैव उपचार**। इनकी चर्चा नीचे की गई है।

क) **तैलीय आपंक :** इन्हें तेल-जल पृथक्कारित्रों, टैंक तलावशेषों अथवा मार्जनावशेषों अपशिष्ट जल के प्लवन उपचार तथा लैगूनों अथवा ऑक्सीकरण तालों से प्राप्त अवशेष अथवा तल मार्जनों से प्राप्त किया जाता है। वे जल में तैलीय ठोसों के कर्दम (slurries) होते हैं। यदि अंतिम निपटान किसी सुदूर स्थान पर करना हो तो परिवहन लागत कम करने के लिए उन्हें गाढ़ा करने की आवश्यकता होती है। जल के अधिक मात्रा में निष्कासन के लिए अपकेंद्रण किया जाता है। इसमें आपंक को गाढ़ा किया जाता है ताकि तैलीय ठोस 10-15% रह जाए जो अपकेन्द्रण के लिए उपयुक्त हो। निर्जलीकृत और अपेक्षाकृत तेल-मुक्त ठोस का निपटान भस्मीकरण द्वारा अथवा भूमि भराव द्वारा किया जाता है।

ख) **तेल-मुक्त आपंक :** जल-अनुकूलन से प्राप्त ठोसों में गाद, कैल्सियम कार्बोनेट, मैग्नीशियम हाइड्रॉक्साइड तथा अल्प मात्रा में कार्बनिक द्रव्य और अवक्षेपित उपचार कर्मक होते हैं। जल-स्रोत के अनुसार संघटन भिन्न-भिन्न होता है। उन्हें तैलीय जल सीवर तंत्र में विसर्जित नहीं करना चाहिए क्योंकि उनसे पायसीकरण हो सकता है और तेल-जल पृथक्करण में रुकावट पड़ सकती है। इन ठोसों को अपकेन्द्रण द्वारा गाढ़ा बनाया जाता है जिससे वे भूमि भराव के लिए उपयुक्त हो जाते हैं।

ग) **रासायनिक आपंक :** तेल परिष्करण प्रचालनों से अनेक रासायनिक आपंक प्राप्त होते हैं। भुक्त ऐलुमिनियम क्लोराइड संकुल, सल्फ्यूरिक अम्ल ऐल्किलीकरण आपंक, (HF) ऐल्किलीकरण से प्राप्त कैल्सियम फ्लुओराइड तथा ल्यूब तेल संभार के उपचार से प्राप्त अम्ल आपंक के लिए सावधानी रखनी पड़ती है। ल्यूब तेल संभार उपचार और सल्फ्यूरिक अम्ल ऐल्किलीकरण से प्राप्त आपंकों का अम्ल प्राप्ति के लिए परिष्करणशाला में उपचार किया जाता है अथवा उन्हें अम्ल निर्माताओं को बेच दिया जाता है। भुक्त ऐलुमिनियम क्लोराइड संकुल का निपटान करने के लिए उसे पिसे चूना पत्थर के साथ गाड़ दिया जाता है अथवा जल-अपघटन के बाद रासायनिक ऊर्णन में ऐलुमिनियम के स्रोत के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। जहां संभव हो ऐसे आपंक को डुबा दिया जाता है ताकि हाइड्रोक्लोरिक अम्ल मुक्त न हो। वहां से उसे क्षारीय अपशिष्ट वाले गर्त में भेज दिया जाता है जिसमें ऐलुमिनियम हाइड्रॉक्साइड एकत्रित होने दिया जाता है। HF ऐल्किलीकरण संयंत्र में अपशिष्ट जल के उपचार से कैल्सियम फ्लुओराइड आपंक अंत्य उत्पाद के रूप में प्राप्त किया जाता है जिसे जलमुक्त कर दबा दिया जाता है।

MAADHYAM IAS

घ) **जैव उपचार आपंक :** च्यावन निस्यंदकों अथवा सक्रियित आपंक प्रक्रम द्वारा परिष्करणशाला अपशिष्ट उपचार से प्राप्त आपंकों का उसी प्रकार अवायवीय पाचन किया जा सकता है जिस प्रकार सैनेटरी वाहित मल आपंक का। ऑक्सीकरण तालों और वातन बेसिनों से प्राप्त आपंकों में पर्याप्त तैलीय द्रव्य होता है और अवायवीय पाचन बहुत अच्छा नहीं होता है। इन आपंकों का निर्जलीकरण, अपकेन्द्रण और भस्मीकरण द्वारा निपटान किया जाता है। उन्हें पूर्ण शुष्कन के लिए उपयुक्त स्थान पर फैला दिया जाता है अथवा भूमि भराव के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

बोध प्रश्न

6) परिष्करणशालाओं और पेट्रोरासायनिक उद्योगों के प्राप्त अपशिष्ट जल के प्रमुख संदूषक कौन-कौन से हैं?

....

....

7) ए. पी. आइ. तेल पृथक्कारित्र क्या है?

....

....

11.5 वस्त्र उद्योग से उत्पन्न बहि:स्राव

वस्त्र निर्माण उद्योग, जल का उपयोग करने वाला प्रमुख उद्योग है। इस उद्योग के अपशिष्टों का संतोषजनक उपचार बहुत कठिन होता है। वस्त्र अपशिष्टों में भिन्नता होती है जिससे उनका उपचार एक जटिल समस्या होती है। आधुनिक वस्त्र मिल में दूसरे उद्योगों द्वारा उत्पादित अनेक यौगिकों का उपयोग किया जाता है। रासायनिक उद्योगों से संश्लिष्ट रेशे, रंजक और परिसज्जा, खाद्य उत्पादन उद्योगों से सरेस आदि ऐसे ही कुछ पदार्थ हैं। इनमें से कुछ यौगिक मूल रेशे में मिलाए जाते हैं और उन्हें अंशत: अथवा पूर्णत: धो लिया जाता है जिससे प्रदूषण होता है। इन यौगिकों की प्रकृति कार्बनिक अथवा अकार्बनिक होती है। विलेय लवणों की अत्यधिक सान्द्रता के कारण अकार्बनिक पदार्थ जल को उपयोग के लिए अनुपयुक्त बना देते हैं। अविलेय लवणों के अवक्षेपित होकर धारा के अधस्तल पर निक्षेपित हो जाने कारण, जलीय जीव दब जाते है और यहां तक कि धाराएं अवरुद्ध हो जाती हैं। कार्बनिक यौगिकों का धीरे-धीरे रासायनिक अथवा जैविक परिवर्तन होता है जिससे जल में से ऑक्सीजन का निराकरण हो जाता है। इसके फलस्वरूप पूतिक स्थिति पैदा हो जाती है जिसके प्रमुख अभिलक्षण हैं- गंध, गैसें, तैरते ठोस और अप्रिय प्रतीति। धातु-लवण, जानवरों, मछलियों और अन्य जलीय जीवों के लिए आविषालु होते हैं।

MAADHYAM IAS

11.5.1 वस्त्र उद्योग

वस्त्र उद्योग में प्रयुक्त रेशे **प्राकृतिक** अथवा **निर्मित** होते हैं। प्राकृतिक रेशों को **जन्तु** और **वनस्पति रेशों** में विभाजित किया जा सकता है तथा निर्मित रेशों को **पुनर्योजित** और **संश्लिष्ट** रेशों में विभाजित किया जाता है। व्यापारिक महत्व के प्रमुख रेशों को सारणी 11.1 में दिया गया है।

आजकल ऊन-अभिमार्जन में क्षार का उपयोग बहुत कम होता है। इसलिए अपशिष्ट विसर्जन में यह कोई समस्या नहीं है।

अनेक मिलों में यह नियम है कि ऊन को फैलाकर उसकी धूल झाड़ दी जाए। इस प्रकार, आर्द्र-प्रचालन आरंभ करने से पहले अधिकांश ठोस अपद्रव्यों को पृथक कर दिया जाता है। धूल निकली ऊन को अभिमार्जन मशीन में डाला जाता है। वहां से उसे लगभग 60°C पर एक कतार में स्थित कटोरों में संग्रहित अनायनी अपमार्जक विलयन में प्रविष्ट किया जाता है। कुछ समय पहले तक केवल ऊन वसा को पृथक करने के लिए, पहले कटोरे को कम ताप पर रखा जाता था ताकि वसा पृथक हो जाए। किन्तु यदि ऊन-ग्रीस को पुन: प्राप्त न किया जाए तो इससे कोई लाभ नहीं होता है। संश्लिष्ट अपमार्जकों के उपयोग के बाद से, ऊन-ग्रीस हटाने के लिए प्रयुक्त अम्ल भंजन की पुरानी विधि अब प्रभावकारी नहीं रह गई है। आजकल पृथक्करण प्राय: अपकेन्द्रण द्वारा किया जाता है।

जैसे ही ऊन को अभिमार्जक मशीन से गुजारा जाता है तब प्रत्येक कटोरे के अंत में बेलन द्वारा दबाने से द्राव और मैल का कुछ भाग निकल जाता है। अभिमार्जन, प्रतिप्रवाह (counterflow) क्रिया द्वारा किया जाता है। परिष्कारक जल एक कटोरे से कतार में रखे दूसरे कटोरों में उल्टी दिशा में प्रवाहित होता है। प्रत्येक कटोरे के हापर, ऊन से प्राप्त अविलेय मैल को एकत्रित कर लेते हैं। आवश्यकता होने पर इसे द्राव से अपकेन्द्रण द्वारा पृथक किया जा सकता है।

सारणी 11.1: व्यापारिक महत्व के रेशे

प्राकृतिक		निर्मित	
जन्तु	वनस्पति	पुनर्जनित	संश्लिष्ट
ऊन	कपास	रेयॉन	पॉलिऐमाइड
रेशम	अतसी (flax)	सोयाबीन	पॉलिएक्रिलिक
बाल	सन	केसिन	पॉलिएस्टर

i) जन्तु रेशे

ऊन में बहुत अधिक मात्रा में मैल, घास, कुरंड, शुष्क स्वेद और जन्तु की वृद्धि के समय रेशे की रक्षा के लिए ग्रंथियों से विसर्जित ग्रीस होते हैं। चरम स्थिति में उसमें 30% तक रेशे और 70% अन्य पदार्थ होते हैं और 45% तक ग्रीस होती है। **मार्जन, कार्बनीकरण, विरंजन, रंजन और परिष्करण** प्रक्रमों के कारण अपशिष्ट उत्पन्न होते हैं। बाहरी पदार्थों को साबुन और क्षार के साथ गर्म जल में मार्जन द्वारा पृथक किया जाता है। साबुन की उपस्थिति से अपशिष्ट का बी. ओ. डी. बढ़ जाता है। आजकल साबुन के स्थान पर बहुत कम बी. ओ. डी. वाले संश्लिष्ट अपमार्जक प्रयोग किए जाते हैं। इसके फलस्वरूप, विसर्जन का बी. ओ. डी. केवल अपरिष्कृत ऊन के कारण होता है। ऊन अभिमार्जन (scourging) अपशिष्टों में ग्रीस और टूटे रेशे होने के कारण वे नगरपालिका वाहित मल उपचार तंत्र में बाधा डालते हैं। जब अपमार्जकों के रूप में साबुन और धोने के सोडे का उपयोग किया जाता था तो ग्रीस को पृथक करने के लिए द्रावों का उपचार सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल के साथ किया जाता था। इसे निकालकर अन्य उपयोगों के लिए शोधित कर लिया जाता था। संश्लिष्ट अपमार्जकों के साथ यह विधि सदैव संभव नही है तथा रेशों और आधिक्य ग्रीस को पृथक करने के लिए प्राय: अपकेन्द्रित्र का उपयोग किया जाता है। अपकेन्द्रण से उत्तम कोटि की ग्रीस प्राप्त होती है जो प्रसाधन सामग्री में उपयोग के लिए उपयुक्त है किन्तु इससे उपस्थित ग्रीस का केवल एक तिहाई भाग प्राप्त होता है जब कि अम्ल भंजन विधि में लगभग पूरी मात्रा में उत्पाद प्राप्त होता है।

ऊन-ग्रीस को प्राप्त करने के लिए, अपशिष्ट द्राव का कैल्सियम हाइपोक्लोराइट के साथ उपचार कर, pH को कमकर लगभग 7.5 कर लिया जाता है। फिर स्वच्छ द्रावों को फेंककर, मलफेन और आपंक का सल्फ्यूरिक अम्ल के साथ उपचार किया जाता है। आजकल ऊन का विलायक अभिमार्जन किया जा रहा है जिससे ग्रीस प्राप्त होती है और इससे धारा में प्रदूषण भार भी कम हो जाता है।

अभिमार्जित ऊन को विरंजित किया जा सकता है। विरंजन और परिष्करण प्रक्रम से प्राप्त अपशिष्टों में मुक्त द्रावों तथा बाद में विरंजन, रंजन अथवा अन्य परिसज्जा प्रक्रमों के पश्चात् प्राप्त ऊन को धोने से प्राप्त अपशिष्टों का भी योगदान रहता है। प्रक्षाल जल को अधिक प्रबल अपशिष्टों से पृथक करना व्यावहारिक नहीं है। अपशिष्टों की प्रबलता में बहुत भिन्नता होती है जिसका कारण प्रयुक्त जल की मात्रा तथा अनेक प्रकार के रंजकों और अन्य रासायनिक पदार्थों की उपस्थिति है। ऊन के रंजन और परिष्करण से प्राप्त अपशिष्टों का लोहे और ऐलुमिनियम के लवणों के साथ रासायनिक अवक्षेपण द्वारा उपचार किया जाता है। सामान्यतया च्यावन निस्यंदक अथवा वातन प्रक्रम के साथ जैव उपचार करना ठीक रहता है।

ii) वनस्पति रेशे

कपास वनस्पति रेशा उद्योगों का मुख्य आधार है और निम्नलिखित प्रचालनों द्वारा परिसज्जित रेशे में परिवर्तित किया जाता है।

MAADHYAM IAS

क) **स्लैशन (Slashing):** तन्तु को कपडे में बुनने से पहले उसे स्टार्च द्वारा बना भारण अथवा अन्य चिक्कणन (sizing) पदार्थों द्वारा मजबूत कर लेना चाहिए। इस प्रचालन को "स्लैशन" कहते हैं। इसमें बहुत कम द्रव अपशिष्ट निकलता है। स्टार्च के स्थान पर ओ. डी. मान वाले चिक्कणन पदार्थों के प्रतिस्थापन से अंतिम बहि:स्राव में बी. ओ. डी. कम हो जाता है।
कार्बोक्सीमेथिल सेलुलोस जैसे कम बी.

ख) **अभिमार्जन और चिक्कणन :** वस्त्र को रंजन और परिसज्जा के लिए तैयार करने के लिए स्लैशन प्रचालनों से प्राप्त कुछ प्राकृतिक अवयवों और चिक्कणन पदार्थों को हटाना आवश्यक है। वस्त्र संसाधन में इनके कारण कुल प्रदूषण भार का लगभग 50% होता है। स्टार्च के जल-अपघटन के लिए अम्लों और एन्जाइमों का उपयोग किया जाता है। परिसज्जा के लिए स्वच्छ, सफेद वस्त्र बनाने के लिए, कास्टिक सोडा, धोने का सोडा, क्लोरीन, परऑक्साइड, सिलिकेट, सोडियम बाइसल्फाइट, अम्ल, अपमार्जकों और वेधकों का उपयोग किया जाता है। कुल अपशिष्ट भार का 30% अभिमार्जन के कारण प्राप्त होता है। अंतिम अपद्रव्य में कुल बी. ओ. डी. का लगभग 3% कपास में उपस्थित प्राकृतिक अशुद्धियों के कारण होता है।

ग) **विरंजन :** विरंजन प्रचालनों में प्राकृतिक रंजक पदार्थों के निराकरण के लिए क्लोरीन और परॉक्साइड का उपयोग किया जाता है जिसके कारण लगभग 10% प्रदूषण भार होता है।

घ) **मर्सरीकरण (Mercerizing):** इसमें कपडे को कास्टिक सोडे के 220% विलयन में प्रविष्ट किया जाता है। इसके कारण बी. ओ. डी. नगण्य होता है किन्तु क्षारीयता बहुत अधिक होती है।

ङ) **रंजन :** इसे अनेक प्रकार से किया जाता है। नए रंजक और अतिरिक्त रासायनिक पदार्थों के कारण प्रचालन की जटिलता बढ़ जाती है। प्रदूषण भार 20-40% होता है किन्तु आयतन बहुत अधिक होता है और रंग की मात्रा भी बहुत होती है।
इन रंजक अपशिष्टों का जैव प्रक्रमों में उपचार करना कठिन होता है क्योंकि गंधक वाले रंजक अणु के ऑक्सीकरण के लिए बहुत अधिक वायु की आवश्यकता होती है और क्रोमेट आविषालु होता है। इसलिए क्रोमियम के निराकरण के लिए फेरस लवण का उपयोग किया जाता है ताकि परंपरागत जैव उपचार संयंत्रों में जाने वाले अपशिष्ट में क्रोमियम की मात्रा $3\ mg\ L^{-1}$ से कम तथा जैव-वातन लैगून अथवा दीर्घ सक्रियित आपंक उपचार प्रक्रमों में जाने वाले अपशिष्ट में क्रोमियम की मात्रा $10\ mg\ L^{-1}$ से कम हो जाए।

च) **परिसज्जन :** परिसज्जन से वांछित स्पर्श और प्रतीति प्राप्त होते हैं। साथ ही उससे मृदुता, दृढ़ता, चिकनापन, मसृणता और चमक जैसे गुण भी प्राप्त होते हैं। परिसज्जा के लिए प्रयुक्त रासायनिक पदार्थों में स्टार्च, डेक्सट्रिन, प्राकृतिक और संश्लिष्ट मोम, संश्लिष्ट रेज़िन, अमोनियम क्लोराइड और जिंक क्लोराइड, मृदुकर्मक, प्रवेधक आदि अनेक पदार्थ आते हैं जो टिकाऊपन और ताप-विगर गुण में वृद्धि अथवा जलरोधी, तेल और मृदा विकर्षण और अग्नि-सह्यता प्रदान करते हैं। अपशिष्ट का आयतन कम होता है तथा स्टार्च, गोंद, मोम और रेजिन, बी. ओ. डी. में योगदान करते हैं।

3 पुनर्योजित रेशे (Regenerated fibres)

क) **विस्कोस रेयॉन :** विस्कोस रेयॉन संश्लिष्ट वस्त्र रेशा, तन्तु, धागा, सूत्र अथवा कपड़ा होता है जो पुनर्योजित सेलुलोस का बना होता है। इसे विस्कोस से, क्यूप्राअमोनियम अथवा नाइट्रोसेलुलोस प्रक्रम द्वारा बनाया जाता है। पुनर्योजित रेशों में प्राकृतिक अपद्रव्य नगण्य

स्लैशन अवस्था में वस्त्र 'क्रीग' (creige) होता है और इसका इस रूप में भी विक्रय हो सकता है।

बाद के प्रचालन परिसज्जा के अंतर्गत माने जाते हैं जिनमें प्रारंभिक उपचार भी शामिल है।

वैट रंजक पक्के होते हैं। इन्हें प्रयुक्त करने के लिए रंजक द्रव्य को विलेय रूप में प्राप्त करने के लिए कास्टिक सोडा और सोडियम हाइड्रोसल्फाइट के साथ अपचित किया जाता है। उसके बाद रेशे पर अनुप्रयोग के बाद परॉक्साइड, क्रोमेट अथवा अन्य ऑक्सीकारक द्वारा ऑक्सीकृत किया जाता है।

लिए रंजक का अम्ल और सोडियम नाइट्राइट के साथ डाइऐजोटीकरण किया जाता है और उसके बाद विकासक के साथ उपचार किया जाता है। नैफ्थॉल रंजक, नैफ्थॉल होते हैं जिन्हें कपड़े पर प्रयुक्त कर सखाया जाता है। उसके बाद रासायनिक युग्मन के लिए विकासक में प्रविष्ट किया जाता है। जिससे रंजक प्राप्त होता है। गंधक रंजकों को सोडियम सल्फाइड के साथ अपचित कर कपड़े पर प्रयुक्त किया जाता है और उसके बाद क्रोमेट द्वारा ऑक्सीकृत किया जाता है।

क्षारकीय रंजकों को प्राय: ऐसीटिक अम्ल और टैनिक अम्ल तथा एमेटिक (tartar emetic, वमनकारी) की आवश्यकता होती है। स्वत: रंजकों को, वेधकों के साथ अथवा उनके बिना, जल विलयनों से सीधे प्रयुक्त किया जाता है। इंडिगो रंजक वैट रंजकों के समान होते हैं और उन्हें वायु ऑक्सीकरण द्वारा अतप्त अवस्था में प्रयुक्त किया जाता है। वर्णक "रंजक" रेजिन होते हैं जिन्हें वस्त्र पर संसाधित कर प्रयुक्त किया जाता है। अपशिष्ट में रंजिनों द्वारा बी. ओ. डी. की अल्प मात्रा का योगदान होता है।

MAADHYAM IAS

होते हैं। विस्कोस और अन्य पुनर्योजित रेयॉन, सूती रेशों के लिए प्रयुक्त अधिकांश रंजक द्रव्यों द्वारा आसानी से रंजित हो जाते हैं। सूत की तुलना में रेयॉन, उतना रासायनिक पदार्थ रोधी नहीं होता है इसलिए उसका तीव्र उपचार नहीं करना चाहिए। उच्चताप, अम्लों और ऑक्सीकारक विरंजकों के प्रति उसके प्रतिरोध को कम कर देता है।

ख) **ऐसीटेट रेयॉन :** ऐसीटेट रेयॉन पुनर्योजित सेलुलोस न होकर सेलुलोस ऐसीटेट रेशा होता है। अन्य रेयॉनों की तुलना में यह उतना अवशोषक नहीं होता है तथा अन्य रेयानों की अपेक्षा उस पर दाग-धब्बे भी आसानी से नहीं लगते। ऐसीटेट को प्रायः विरंजन की आवश्यकता नहीं होती है किन्तु विरंजन आवश्यक हो तो केवल दुर्बल ऑक्सीकारकों का उपयोग किया जा सकता है।

मृदा और जल में प्रदूषक

विस्कोस रेयॉन अत्यधिक अवशोषक होता है और शीघ्र जल ग्रहण कर लेता है। जल की उपस्थिति, सेलुलोस में अभिकर्मकों के वेधन को बढ़ा देती है, विद्युत् चालकता बढ़ा देती है और विभंजन सामर्थ्य कम कर देती है। रेयॉन को भ्रमवश ऐसीटेट रेयॉन नहीं मान लेना चाहिए।

iv) **संश्लिष्ट रेशे**

इनके अंतर्गत **पॉलिऐमाइड**, **ऐक्रिलिक** और **पॉलिएस्टर** आते हैं।

क) **पॉलिऐमाइड :** नाइलॉन एक पॉलिऐमाइड है। उस पर गरम अथवा ठंडे का प्रभाव नहीं पड़ता है। वह बहुत अपघर्षणरोधी होता है तथा सूत, ऊन, रेयॉन अथवा रेशम से अधिक ज्वलनरोधी होता है। वह कीटों, आंसिता (mildew), फफूंदी, कवक और अन्य अनेक रासायनिक पदार्थों का भी प्रतिरोधी होता है।

ख) **ऐक्रिलिक (पॉलिऐक्रिलेट) :** ये संश्लिष्ट बहुलक होते हैं जिनकी बहुलक श्रृंखला में ऐक्रिलिक इकाईयाँ होती हैं। ये धूप, मौसम, औद्योगिक धूम, रासायनिक पदार्थों, कीटों और जीवाणुओं के रोधी होते हैं। इस प्रतिरोध के कारण इन रेशों को रंगना कठिन होता है।

ग) **पॉलिएस्टर :** ये असाधारण ऊष्मारोधी होते हैं। इनकी ज्वलनशीलता कम होती है और वे अपना आकार तथा क्रीज़ बनाए रखते हैं। इनका संसाधन आसानी से हो सकता है, यद्यपि रंजन के लिए वाहक अथवा दाब तकनीक की आवश्यकता होती है।

11.5.2 वस्त्र-उद्योग अपशिष्टों के अभिलक्षण

उद्योग के विभिन्न खंडों में वस्त्र अपशिष्टों के प्रदूषणात्मक अभिलक्षणों में बहुत भिन्नता होती है और प्रत्येक प्रकार के अपशिष्ट के लिए विशेष उपचार करना होता है। वस्त्र-अपशिष्टों में उपस्थित रंजक, स्टार्च और अपमार्जक आदि कार्बनिक पदार्थों का रासायनिक और जैव परिवर्तन होता है जिसमें सरिता में विद्यमान ऑक्सीजन का उपभोग होता है और इससे मत्स्य जीवन समाप्त हो जाता है। पूतिक स्थितियों और हानिकर गंध को रोकने के लिए ऐसे कार्बनिक पदार्थों का निराकरण आवश्यक है ताकि धारा जल को नगरपालिका, औद्योगिक, कृषि तथा आवासीय उपयोग के लिए अनुपयुक्त होने से रोका जा सके।

एकीकृत सूती वस्त्र संयंत्र से प्राप्त अपशिष्ट मिश्रण में स्टार्च, डेक्सट्रिन, गोंद, ग्लूकोस, मोम, पेक्टिन, ऐल्कोहॉल, वसा अम्ल, ऐसीटिक, अम्ल, साबुन, अपमार्जक, सोडियम हाइड्रॉक्साइड, कार्बोनेट, सल्फाइड, सल्फेट, क्लोराइड आदि लवण, रंजक और वर्णक, कार्बोक्सीमेथिल सेलुलोस, जिलेटिन, रंजक वाहक (फीनॉल और बेन्ज़ोइक अम्ल), परॉक्साइड और क्लोरीन विरंजन यौगिक शामिल रहते हैं। तैयार माल के प्रत्येक 1000 kg में अपशिष्ट का आयतन 200-1000 m^3 तक होता है।

MAADHYAM IAS

विलेय अकार्बनिक लवणों की उच्च सान्द्रताओं के कारण, धारा औद्योगिक और नगरपालिका उपयोग के लिए अनुपयुक्त हो सकती है तथा उसका नावों और अन्य संरचनाओं पर संक्षारक प्रभाव हो सकता है। क्रोमियम, जस्ता आदि धातुएं जल-जीवों के लिए आविषालु होती हैं और उन्हें विसर्जन से पहले पृथक कर देना चाहिए। रंजकों के रंगों में भिन्नता होती है। यद्यपि वे आविषालु नहीं होते हैं किन्तु देखने में अच्छे नहीं लगते हैं। विशेष रूप से वे पीने के लिए और मनोरंजन के लिए प्रयुक्त जल में अवांछित होते हैं। रंजन में प्रयुक्त फ़ीनॉल आदि कुछ वाहक रासायनिक पदार्थों के कारण स्वाद और गंध उत्पन्न होते हैं।

11.5.3 वस्त्र-उद्योग अपशिष्ट-जल समस्याएं

i) पुन: प्राप्ति और पुन: उपयोग

अपशिष्ट की मात्रा कम करने, रोकने, उपयोग में लाने आदि क्रियाओं से अपशिष्ट पदार्थों की मात्रा कम की जा सकती है जिससे प्रयुक्त पदार्थों की बचत हो सकती है। इसके लिए संयंत्र में अपनाए जाने वाले तरीकों का उल्लेख नीचे किया गया है।

क) **अपशिष्ट आयतन का न्यूनन :** रंजक प्रचालनों से प्राप्त प्रबल प्रक्षाल जल का पुन: उपयोग नए बाथों को बनाने के लिए किया जा सकता है। दुर्बल प्रक्षालों का, अंत:संयंत्र जल उपचार यूनिटों में से, पुन:चक्रण किया जा सकता है। प्रतिप्रवाह पद्धति में, प्रक्षाल जल का वस्त्र की गति के विपरीत दिशा में परिसंचरण किया जाता है।

ख) **प्रक्रम रासायनिक पदार्थों का न्यूनन :** वस्त्र प्रक्रमण के उचित नियंत्रण अर्थात् वैट रंजन में हाइड्रोसल्फाइट को नियंत्रित करने के लिए रेडॉक्स विभव के उपयोग से, रासायनिक पदार्थों की न्यूनतम मात्रा का उपयोग किया जा सकता है।

ग) **रासायनिक पदार्थों की पुन: प्राप्ति और पुन: उपयोग :** कास्टिक सोडा को मर्सरीकरण द्रावों से प्राप्त कर पुन: उपयोग में लाया जा सकता है। उसी प्रकार, सोडियम डाइक्रोमेट को रंजन प्रक्रियाओं से प्राप्त किया जा सकता है।

घ) **रासायनिक पदार्थों का प्रतिस्थापन :** अधिक प्रदूषण प्रभाव वाले रासायनिक पदार्थों के स्थान पर कम प्रदूषक प्रभाव वाले रासायनिक पदार्थों का उपयोग वांछनीय होता है। उदाहरण के लिए, स्लैशन में स्टार्च के स्थान पर कार्बोक्सीमेथिल सेलुलोस, ऐसीटिक अम्ल (जिसका पर्याप्त बी. ओ. डी. होता है) के स्थान पर खनिज अम्ल, साबुन के स्थान पर गैर-जैव निम्नीकरणीय संश्लिष्ट अपमार्जक तथा परिसज्जा में स्टार्च के स्थान पर पॉलिवाइनिल ऐल्कोहॉल और पॉलिस्टाइरीन का उपयोग किया जाता है।

a) **उत्तम गृह संचालन :** पदार्थ के छलकने और क्षति होने को रोकने के लिए सभी प्रचालनों पर संपूर्ण नियंत्रण की आवश्यकता होती है। विलयनों के बड़े घान **(batch)** नहीं बनाने चाहिए ताकि उपयोग के अंत में उन्हें फेंकना न पड़े।

ii) जल संरक्षण

लगातार बढ़ती हुई लागत और भविष्य में कमी को देखते हुए जल के उपयोग में किफ़ायत करनी चाहिए। प्रक्रमण में जल के उपयोग में कमी से बचत तो होती है परन्तु प्रदूषण की सांद्रता बढ़ जाती है।

11.5.4 वस्त्र-उद्योग अपशिष्ट उपचार

संरक्षण और उत्तम गृह संचालन द्वारा अपशिष्ट की प्रबलता और आयतन कम करने के लिए किए जा रहे प्रयत्नों के बावजूद प्रदूषण की समस्या बनी हुई है। अपशिष्टों का उपचार अनेक प्रकार से किया जा सकता है और विभिन्न विधियों का सर्वोत्तम संयोजन भिन्न संयत्रों में भिन्न-भिन्न होता है। प्रत्येक संयंत्र में, प्रचलित उपचार विधियों, अपशिष्ट के प्रकार तथा आवश्यक उपचार की कोटि के अनुसार, संभावित उपचार प्रक्रियाओं का मूल्यांकन किया जाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अ) भौतिक और रासायनिक विधियां

i) **संपृथकन (Segregation):** अलग-अलग और विशेष उपचार के लिए अपशिष्टों का संपृथकन निम्न बातों पर निर्भर करता है:

- पृथक अपशिष्ट के गुणधर्म और सरिता की आवश्यकताएं।

- संयंत्र के अंदर किए जाने वाले परिवर्तनों जैसे पाइपों और सीवरों की लागत।
- दुर्बल बहि:स्राव को बिना उपचार के सरिता में विसर्जित करने से होने वाले लाभ।
- मानव त्रुटियों को कम करने के लिए कुशल कार्यकर्ता की नियुक्ति का खर्च।

ii) **लैगूनन और संग्रहण :** समकरण से प्रवाह और प्रदूषण भार में भिन्नता समाप्त हो जाती है। इसे संग्रहण द्वारा किया जाता है जैसे लैगून में होता है। गंध से बचने के लिए लैगूनों का समुचित रख-रखाव आवश्यक है। वातन से गंध कम करने और अन्य प्रदूषणात्मक अभिलक्षणों को कम करने में सहायता मिलती है। अन्य जैव उपचार प्रक्रमों के बाद, वातन के साथ लैगूनन से परिष्करण उपचार होता है और अधिकतम प्रदूषण, 95% तक, का निराकरण हो जाता है। वातनयुक्त अथवा वातन रहित ऑक्सीकरण ताल सर्वाधिक प्रभावकारी लैगून होते हैं।

iii) **छानना :** शलाका छन्ना और घूर्णी छन्ना कुछ वस्त्र-उद्योग अपशिष्टों से अनावश्यक स्थूल ठोस पदार्थों जिनमें रेशे और कचरा शामिल हैं, को पृथक कर देते हैं।

iv) **यांत्रिक निस्यंदन :** कोक, राख, कोयला, शैल और बालू निस्यंदकों का द्वितीयक उपचार के रूप में अत्यंत प्रदूषित अपशिष्टों के लिए उपयोग किया जाता है। इससे बहि:स्राव अत्यधिक स्वच्छ हो जाता है और उसका बी. ओ. डी. $10\ mg\ L^{-1}$ से कम रह जाता है।

v) **पूर्ववातन और पश्चवातन :** विसरण, फुहारण अथवा सोपानीपातन (cascading) द्वारा भौतिक और रासायनिक वातन से ऑक्सीजन प्राप्त होती है और अवायवी अपघटन नहीं होता है जिससे दुर्गंध-युक्त गैसों पर नियंत्रण हो जाता है।

vi) **उदासीनीकरण :** ग्राही सरिताओं के लिए आवश्यक सीमाओं के अनुसार *pH* समंजित करने अथवा परंपरागत प्रक्रमों में जैव उपचार के लिए अपशिष्ट को 10.00 से कम *pH* पर समंजित करने के लिए, अपशिष्ट जल के उदासीनीकरण की आवश्यकता होती है।

vii) **रासायनिक अवक्षेपण :** केवल रासायनिक अवक्षेपण से अथवा लैगूनन के साथ रासायनिक अवक्षेपण से अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं। किन्तु जैव विधियों की अपेक्षा इस विधि से उपचार की लागत अधिक बैठती है।

viii) **रासायनिक ऑक्सीकरण :** कुछ अपशिष्ट-जलों के, जिनमें रंजक और सहायक रासायनिक पदार्थ होते हैं, अपचायक गुण होते हैं। आगे उपचार के लिए अन्य संयंत्र अपशिष्टों के साथ मिलाने से पहले उन्हें पृथक करके वायु अथवा क्लोरीन के साथ ऑक्सीकृत कर लेना चाहिए। क्लोरीन, अपचायक यौगिकों का ऑक्सीकरण करती है तथा बैक्टीरिया गणनांक कम करने के लिए अंतिम उपचार में भी प्रयुक्त होती है।

क्लोरीन, सूक्ष्मजीवों को नष्ट करके जैव ऑक्सीकरण को मंद कर देती है। सरिता स्वांगीकरण प्रक्रमों में जहां प्रदूषण को और कम करने की आवश्यकता होती है, इसे बहुत कम प्रयोग करना चाहिए।

ब) जैव ऑक्सीकरण विधियां

प्रदूषकों के निराकरण की जैव विधियों में प्राकृतिक प्रक्रमों का उपयोग किया जाता है जिनमें कार्बनिक अपशिष्टों के ऑक्सीकरण के लिए जीवाणुओं और अन्य सूक्ष्मजीवों का प्रयोग किया जाता है जिससे उपयुक्त बहि:स्राव उत्पन्न होता है। आविषालु पदार्थों से मुक्त कुछ वस्त्र-उद्योग अपशिष्टों का भी जैव उपचार किया जा सकता है क्योंकि उनमें नाइट्रोजन और फॉस्फोरस आदि पोषक तत्वों की मात्रा बहुत अधिक होती है।

MAADHYAM IAS

i) **च्यावन निस्यंदक प्रक्रम :** इसमें कार्बनिक प्रदूषण का बड़ा भाग पृथक हो जाता है और बहि:स्राव को अंतिम नि:सादन के बाद सरिता में विसर्जित किया जा सकता है। वस्त्र-उद्योग अपशिष्टों के उपचार की अधिक सस्ती विधि में, निस्यंदकों में प्लास्टिक माध्यम का उपयोग किया जाता है और उसके बाद परिष्कार करने के लिए ऑक्सीकरण-तालाबों का उपयोग किया जाता है।

वाहित मल और वस्त्र अपशिष्ट के च्यावन निस्यंदक उपचार से लगभग 75% बी. ओ. डी. पृथक हो जाता है। उपचारित बहि:स्राव के एक भाग का पुनर्चक्रण करके अथवा श्रेणी में स्थित दो चरणों के निस्यंदकों में उपचार कर अधिक दक्षता से प्रचालन किए जा सकते हैं। सक्रियित आपंक उपचार के पहले pH 12 अथवा अधिक वाले अपशिष्टों की उच्च क्षार की मात्रा को कम करने के लिए च्यावन निस्यंदकों का उपयोग किया जाता है।

ii) **सक्रियित आपंक प्रक्रम :** यह बहुत सफल उपचार है और 95% तक बी. ओ. डी. का निष्कासन कर देता है जिसके फलस्वरूप स्वच्छ, स्थाई बहि:स्राव प्राप्त होता है। pH परिवर्तन और प्रघात भारों के लिए च्यावन निस्यंदक प्रक्रम की अपेक्षा सक्रियित आपंक प्रक्रम अधिक सुग्राही है। इसे बनाने के लिए कम व्यय होता है और कम स्थान की आवश्यकता होती है। आपंक निपटान की व्यवस्था होनी चाहिए।

परंपरागत सक्रियित आपंक प्रक्रम में, प्राथमिक नि:सादन के बाद अपशिष्ट जल एक टंकी में जाता है जिसका आमाप इतना होना चाहिए कि वह छ: घंटे तक का प्रवाह धारण कर सके। सक्रियित आपंक में उपस्थित सूक्ष्म जीवों को अपशिष्ट में जिलेटिनी पुंजों के रूप में निलंबित किया जाता है जो ऊर्णी होने के कारण शीघ्र नीचे बैठ जाते हैं। आपंक और अपशिष्ट का मिश्रण, संपीडित वायु अथवा यांत्रिक मिश्रण द्वारा, निलंबित रूप में रखा जाता है। इनमें प्रत्येक जैव सक्रियता के लिए आवश्यक ऑक्सीजन भी प्रदान करता है। वातित अपशिष्ट को लगातार निकालकर स्थिर होने दिया जाता है तथा जैव सक्रिय आपंक का एक भाग अंत:प्रवाह में वापिस भेज दिया जाता है।

पूर्ण ऑक्सीकरण, विस्तरित वातन, दीर्घकालीन वातन, आंतरिक श्वसन, अत्यंत वर्धित वातन अवधियों वाले अन्य सक्रियित आपंक विभिन्नताओं का वस्त्र-उद्योग अपशिष्ट के उपचार में विस्तृत उपयोग हो रहा है जिसका कारण उनकी सरलता और रचना तथा प्रचालन की कम लागत हैं। इस प्रक्रम में, बीजित अपशिष्टों का 12 से 72 घंटे तक वातन किया जाता है ताकि कार्बनिक द्रव्य लगभग पूर्णतया अथवा पूर्ण रूप से ऑक्सीकृत हो जाए। उसके बाद उसे सरिता में विसर्जित किया जाता है। प्राथमिक नि:सादन, आपंक पाचन और निपटान को छोड़ सकते हैं। सामान्यतया बहि:स्राव को नि:सादित किया जाता है किन्तु आपंक को आगे ऑक्सीकरण के लिए वातन टंकी में वापस भेज दिया जाता है। वातन की विधि ऐच्छिक है तथा दक्षता और मितत्ययिता की दृष्टि से यांत्रिक विक्षोभ विधि अथवा विसरित वायु विधि का उपयोग किया जा सकता है। चित्र 11.4 में एक प्ररूपी दीर्घकलीन जैववातन प्रक्रम दिखाया गया है।

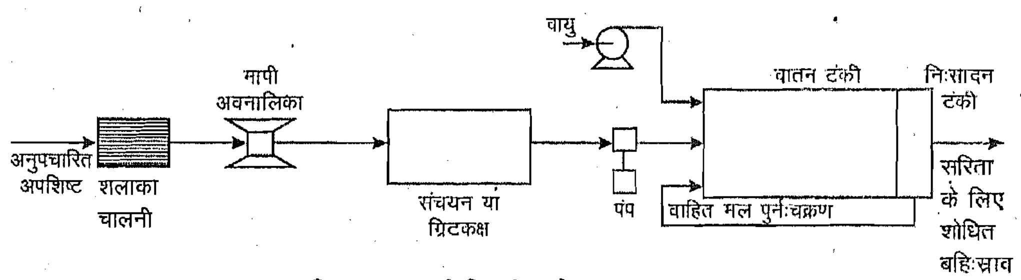

चित्र 11.4: दीर्घकालीन जैववातन प्रक्रम

जैव शोषण, संपर्क वातन, और अन्य रूपांतरित सक्रियित आपंक प्रक्रमों में गड़बड़ की संभावना कम होती है। वे अधिक मितव्ययी भी होते हैं तथा वाहित मल अथवा वाहित मल और वस्त्र उद्योग अपशिष्ट के मिश्रण के उपचार के लिए समान रूप से दक्ष होते हैं। इनमें टंकी कम स्थान घेरती है तथा प्राथमिक नि:सादन टंकी का उपयोग ऐच्छिक होता है।

iii) **ऑक्सीकरण ताल विधि :** यदि भूमि उपलब्ध हो तो वस्त्र-उद्योग अपशिष्ट में प्रदूषण कम करने की संभवत: यह सबसे सस्ती विधि है। अपशिष्ट जल एक उथले तालाब में प्रवाहित होता है जो रंगहीन अपशिष्ट हो तो 1.5 m गहरा और रंजक अपशिष्ट हों तो 1 m गहरा होता है। इसकी धारण अवधि 30 दिन होती है और बी. ओ. डी. भारण लगभग 20 kg प्रति एकड़ प्रतिदिन होता है। यदि अपशिष्ट को जैवत: पूर्व-उपचारित और बीजित किया गया है तो बी. ओ. डी. भारण 40 kg अथवा अधिक हो सकता है। सक्रिय जीवों को वायु अथवा शैवाल उत्पादन से ऑक्सीजन प्राप्त होती है जो कार्बनिक द्रव्य को स्थिर करते हैं। अवायवीय स्थितियों को रोकने के लिए पुनर्चक्रण का उपयोग किया जा सकता है।

वायु के बिना ऑक्सीकरण तालों में, सामान्य भारण प्रति एकड़ 20 kg बी. ओ. डी. होता है किन्तु परिष्करण अथवा पश्च उपचार प्रचालनों में 40 kg अथवा उससे भी अधिक हो सकता है। वायु के साथ 3-10 दिन तक रखने की आवश्यकता होती है जो प्रयुक्त ऑक्सीजन की मात्रा पर निर्भर करता है।

अंत में हम कह सकते हैं कि प्रत्येक संयंत्र के लिए पृथक उपचार विधियों की आवश्यकता होती है ताकि न्यूनतम लागत पर सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त हों। इसके लिए आरंभिक संयंत्र स्थापित करने की आवश्यकता होती है। यह वांछनीय है कि ऊपर उल्लिखित सभी उपचार विधियों विशेषरूप से दीर्घकालीन वातन और ऑक्सीकरण तालाब प्रक्रमों पर विचार किया जाए। यह देखा गया है कि च्यावन निस्यंदक प्रक्रम, विशेष रूप से प्लास्टिक

MAADHYAM IAS

मृदा और जल में प्रदूषक

प्रचालनों की सरलता के कारण निर्माण और रख-रखाव की कम लागत की वजह से उपचार सस्ता होता है। आवास क्षेत्र से कम से कम 0.5 km अथवा अधिक दूरी पर भूमि का प्राप्त न होना तथा कीटों को नियंत्रण इसकी प्रमुख समस्याएं हैं।

प्ररूप प्रक्रम और तत्पश्चात् ऑक्सीकरण तालों में परिष्करण करना, वस्त्र-उद्योग अपशिष्टों के उपचार में प्रभावकारी होता है।

बोध प्रश्न

8) संयुक्त सूती वस्त्र संयंत्र अपशिष्ट जल में विद्यमान प्रदूषक कौन-कौन से हैं?

....

....

9) वस्त्र उद्योग बहि:स्राव के लैगूनन और संग्रहण का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

11.6 लुगदी और कागज उद्योग से उत्पन्न बहि:स्राव

लुगदी, कागज और पेपर बोर्ड का उत्पादन लगातार बढ़ रहा है। नए लुगदी बनाने और विरंजन के लिए प्रयुक्त प्रक्रमों और पुराने प्रक्रमों के नए रूपांतरों ने बढ़ती मांग को पूरा करने में योगदान किया है। यह विशेष रूप से उन प्रक्रमों के लिए सही है जिनमें लकड़ी की ऐसी किस्में इस्तेमाल की जाती हैं जो पहले अवांछनीय थी।

11.6.1 लुगदी और कागज उद्योग

उत्पादित लुगदी की अधिकांश किस्मों को विभिन्न उपयोगों के लिए अलग-अलग मात्रा में विरंजित किया जाता है। क्राफ्ट और सल्फाइट लुगदियों को अधिक मात्रा में विरंजित किया जाता है जिससे रासायनिक सेलुलोस प्राप्त होता है।

लुगदी की जिन प्रमुख किस्मों का उत्पादन किया जाता है उनमे क्राफ्ट, सल्फाइट, उदासीन सल्फाइट, सेमीकेमिकल और ग्राउन्डवुड आते हैं। इनके अतिरिक्त सोडा, अतप्त सोडा, केमी-ग्राउन्डवुड और अन्य विशेष लुगदियों को भी समित मात्राओं में बनाया जाता है। कुछ वस्त्र रेशा-लुगदियों को जैसे फ्लैक्स, सूती चिथड़ा और जूट को विशिष्ट कागजों में उपयोग के लिए अपेक्षाकृत कम मात्रा में बनाया जाता है। मोटा कागज, तृण (straw) और खोई (bagasse) से बनाया जाता है।

कागज उत्पादों को साधारणतया चार प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जा सकता है: पतला परिष्कृत कागज, मोटा कागज, टिशू कागज और विशिष्ट कागज। परिष्कृत कागज के उदाहरण हैं : बॉन्ड, पुस्तक, अनुलिपि, मुद्रण, लेखन और सामान्य सफेद कागज। स्थूल या मोटे कागज में, न्यूजप्रिंट (अखबारी कागज), लपेटने और डिब्बे बनाने में प्रयुक्त कागज और निर्माण उत्पाद शामिल हैं। टिशू कागज में आमतौर पर प्रयुक्त पतला कागज आता है जैसे उपयोगिता टिशू, कांचीपत्र (glassine) और लपेटने वाला विशेष कागज। आनेक विशिष्ट कागजों में विद्युत्‌रोधी, सिगरेट, फोटोग्राफिक, कार्ड स्टॉक और मुद्रा कागज शामिल हैं।

MAADHYAM IAS

11.6.2 लुगदी और कागज उद्योग से उत्पन्न बहि:स्रावों की प्रकृति

लुगदी और कागज बनाते समय उत्पन्न, प्रमुख सरिता प्रदूषण समस्याएं **निलंबित पदार्थों** और **घुले कार्बनिक पदार्थों** के कारण होती हैं। निलंबित पदार्थों के कारण ग्राही सरिता के अधस्तल में निक्षेप बन जाते हैं। कार्बनिक पदार्थ जलीय जीवों के लिए हानिकर होते हैं, खराब लगते हैं और अपघटित होने पर गंधमय हो जाते हैं। ऐसे निक्षेपों के कारण ऊपरी जल में उपस्थित घुली ऑक्सीजन के लिए आवश्यकता बढ़ जाती है। रेशों का कचरा, भरक और विलेपक पदार्थों जैसे अत्यंत परिक्षिप्त ठोसों के विसर्जन के कारण धारा अपारदर्शी हो जाती है जिसके कारण प्रकाश वेधन के सीमित हो जाने से स्वत:शोधन मंद हो जाता है।

भुक्त लुगदी द्रावों में पाए जाने वाले घुले ठोस पदार्थों के सरिताओं पर अनेक प्रभाव हो सकते हैं। काष्ठ शर्कराएं घुली ऑक्सीजन को समाप्त कर देती हैं तथा आपंक जीवों की वृद्धि को प्रेरित करती हैं जिससे जैव असंतुलन हो जाता है। लिग्निन और टैनिन के कारण विरंजन होता है जबकि रेजिन अम्ल, साबुन और **मर्केप्टैन** की अधिक सान्द्रता जलीय जीवों के लिए आविषालु होती है। अम्ल, क्षार आदि अकार्बनिक यौगिकों के सामान्य विसर्जन से उत्पन्न समस्याएं कम होती हैं। मुख्य समस्याएं **कार्बनिक द्रव्य** से उत्पन्न होती हैं, अत: इन बहि:स्रावों का वर्गीकरण, **कार्बनिक अपशिष्टों** के रूप में किया जाता है।

लुगदी और कागज उत्पादों के निर्माण में जल की निम्नलिखित कार्यों के लिए बहुत अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है :

- काष्ठ पेषण (grinding) के लिए
- रासायनिक लुगदीकरण और विरंजन में वहन कर्मक के रूप में ,
- रासायनिक पदार्थों और ऊष्मा को अपरिष्कृत पदार्थों के संपर्क में लाने के लिए,
- लुगदी धावन कर्मक के रूप में,
- कागज मशीन तंत्र में 'सज्जा' कारक के रूप में, और
- काष्ठ निर्माण में द्रवचालित विवल्कन (debarking) के लिए वहन और धावन कर्मक के रूप में।

प्रयुक्त जल की मात्रा मिल के भौतिक उपस्कर, प्रयुक्त प्रक्रम, उत्पन्न उत्पाद और जल की उपलब्धता पर निर्भर करती है। इसमें पृष्ठ जल और भौमजल दोनों का उपयोग किया जाता है और अधिकांश प्रयुक्त जल सरिताओं में चला जाता है क्योंकि उद्वाष्पन द्वारा होने वाली हानि कुल प्रयुक्त आयतन के 5% से भी कम होती है।

बहि:स्रावों का पुन: उपयोग विस्तृत रूप में किया जाता है क्योंकि उससे ऊष्मा, रेशों, रासायनिक पदार्थों और जल आवश्यकता आदि में बचत होती है। जहाँ प्रक्रम जल का उच्च कोटि का उपचार किया जाता है, वहाँ जल की पर्याप्त बचत होती है। बहि:स्राव के आयतन में कमी से आवश्यक बहि:स्राव उपचार संरचनाओं का आमाप बहुत कम हो सकता है। पुन: उपयोग उस स्थिति तक हो सकता है जब तक और आगे पुनर्चक्रण मिल और उसके प्रचालनों के लिए हानिकारक न हो।

11.6.3 बह:स्रावों के अभिलक्षण

MAADHYAM IAS

i) **काष्ठ निर्माण बहि:स्राव :** ये बहि:स्राव काष्ठ के परिवहन, धावन और विवल्कन से उत्पन्न होते हैं। उनमें छाल के स्थूल और सूक्ष्म कण, लकड़ी की छिपटियाँ और गाद होते हैं। इसके अतिरिक्त लकड़ी से घुले रस में कुछ घुले ठोस भी होते हैं। उनकी सान्द्रता लकड़ी के काटे जाने के मौसम पर तथा जल के पुनर्चक्रण की मात्रा पर निर्भर करती है।

ii) **छानन और लुगदी शोधन जल :** इनमें काष्ठ कचरा, लुगदी, सूक्ष्मक और ग्रिट होते हैं।

iii) **यांत्रिक लुगदीकरण बहि:स्राव :** इनमें काष्ठ के पेषण अथवा घर्षण से उत्पन्न सूक्ष्म और स्थूल काष्ठ कचरा एवं विलेय पदार्थ होते हैं।

ये बहि:स्राव क्राफ्ट, सोडा सल्फाइट अथवा अर्ध-रासायनिक लुगदियों को बनाते समय उत्पन्न होते हैं।

iv) **यांत्रिक-रासायनिक लुगदीकरण बहि:स्राव :** ये यांत्रिक लुगदीकरण बहि:स्रावों के समान होते हैं। इसके अतिरिक्त उपभुक्त रासायनिक पदार्थ और विलये पदार्थ होते हैं जो यांत्रिक लुगदीकरण से पहले कास्टिक सोडा अथवा सोडियम बाइसल्फाइट के साथ काष्ठ के उपचार से मुक्त होते हैं।

v) **रासायनिक लुगदीकरण अपशिष्ट :** उनमें भुक्त द्राव होता है। क्राफ्ट और सोडा लुगदी उत्पादन इसका अपवाद है जिनमें भुक्त द्राव प्रायः पुनः प्राप्त कर लिया जाता है। कुछ अन्य प्रकार के लुगदी उत्पादन में भी भारी भुक्त द्राव को पुनः प्राप्त करने, उपोत्पादन अथवा पृथक निपटान के लिए पृथक कर लिया जाता है। इन बहिःस्रावों में निलंबित ठोसों की मात्रा कम होती है। लिग्निन, टैनिन, कार्बोहाइड्रेट, वसा अम्लों के लवण और अन्य कार्बनिक पदार्थ, काष्ठ राख घटक और भुक्त पाचन रासायनिक पदार्थों के रूप में बहुत से अपद्रव्य विलयन में रह जाते हैं।

vi) **वस्त्र रेशा लुगदीकरण बहिःस्राव :** ये जूट, सन, चिथड़ों, सूती तन्तुओं, रस्सी और उनके समान पदार्थों के पक्वन और धावन से प्राप्त होते हैं। पकाने वाला रासायनिक पदार्थ क्षारीय होता है और कभी-कभी पक्वन से पहले मार्जन किया जाता है। बहिःस्राव में अपरिष्कृत पदार्थों, पक्वन रासायनिक पदार्थों तथा सेलुलोस जल-अपघटन के उत्पादों में विद्यमान अपद्रव्य होते हैं।

vii) **विमसीयन (Deinking) अपशिष्ट :** विमसीयित लुगदी, प्रयुक्त कागजों से प्राप्त की जाती है। उन्हें (प्रयुक्त कागजों को) परिक्षेपण कर्मकों वाले क्षारीय विलयनों में पकाया जाता है। विरंजन से पहले मसी (स्याही), पूरक और लेपक पदार्थों के निराकरण के लिए उन्हें धोया जाता है। इन बहिःस्रावों में पूरक और लेपक पदार्थ, स्याही, सज्जीकरण, सूक्ष्म रेशे और जल-अपघटन उत्पाद होते हैं।

viii) **पेपरबोर्ड बहिःस्राव :** प्रयुक्त कागज प्रक्रमों से प्राप्त अपशिष्ट जल में पूरक, सूक्ष्म रेशे, सज्जीकरण और लेपक पदार्थ होते हैं तथा विरेशीयन काष्ठ (defibrinating wood) से प्राप्त अपशिष्ट जल में काष्ठ रस होते हैं।

पेपरबोर्ड, रोधीबोर्ड और छत-नमदा (roofing fells) का उत्पादन प्रयुक्त कागज से, संनिघर्षण मिल में लकड़ी के विरेशीयन द्वारा बनी लुगदी से अथवा दो पदार्थों के किसी अप्रयुक्त रेशे के साथ संयोजन से किया जाता है। इनमें से अधिकांश प्रक्रमों में पदार्थ मशीन जल में रहता है यद्यपि कुछ मामलों में कागज बनाने के लिए देने से पहले सज्जा को धोकर गाढ़ा कर दिया जाता है।

ix) **मशीन जल :** सामान्यता इनमें सूक्ष्म रेशे और पूरक पदार्थ होते हैं किन्तु इनमें परिसज्जा पदार्थों से प्राप्त घुले पदार्थों की पर्याप्त मात्राएं तथा कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थों के विशिष्ट योजक भी होते हैं। यदि ऐसी लुगदियों के सज्जाओं के साथ क्रिया की जाए जिन्हें पहले भली-भांति नहीं धोया गया हो, तब मशीन जल में लुगदीकरण प्रक्रम के समय मिलाए गए विलेय पदार्थों की पर्याप्त मात्रा हो सकती है।

x) **विरंजन अपशिष्ट :** चमक बढ़ाने के लिए सभी प्रकार की लुगदियों का विरंजन किया जा सकता है। इसके लिए प्रयुक्त रासायनिक पदार्थों में क्लोरीन, क्लोरीन डाइऑक्साइड, हाइपोक्लोराइट, परॉक्साइड और हाइड्रोसल्फाइट आदि ऑक्सीकारक पदार्थ शामिल हैं। अधिकांश क्षारीय काष्ठ लुगदियों के विरंजन में कास्टिक सोडा का उपयोग किया जाता है जो ऑक्सीकारकों द्वारा निष्कर्षणीय पदार्थों को पृथक कर देता है। प्रत्येक विरंजन पद के बाद धावन क्रिया की जाती है ताकि निष्कर्षित पदार्थ और भुक्त रासायनिक पदार्थ पृथक हो जाएं। विरंजन धावन जल, लुगदी से पृथक हुए लिग्निनों और टैनिनों की उपस्थिति के कारण रंगीन होते हैं। इसके अतिरिक्त उनमें सूक्ष्म रेशों और जल-अपघटन उत्पादों की अल्प मात्राएं भी होती हैं।

MAADHYAM IAS

अनिःसादनीय ठोस पदार्थों को निःसादनी बनाने के लिए फिटकरी, सक्रियित सिलिका और पॉलिइलेक्ट्रोलाइट का उपयोग किया जाता है। सामान्यतया स्कंदकों को बिना मिलाए अवसादन से कुल निलंबित ठोसों के 70-80% भाग का निराकरण हो जाता है। यदि मिल में अत्यंत सक्षम सर्वरक्षी पदार्थों का उपयोग किया जाए अथवा यदि परिक्षेपक उपस्थित हों तो यह प्रतिशत कम

प्रदूषण भार अलग-अलग मिलों में यहां तक कि एक ही मिल में भी अलग-अलग होते हैं जिसके अनेक कारण हैं। उदाहरण के लिए, भिन्न ऋतुओं में काटी गई लकड़ी में विलेय पदार्थों की मात्रा भिन्न होती है। साथ ही उत्पन्न लुगदी की विभिन्न श्रेणियों के लिए पक्वन की मात्रा भी भिन्न होती है। जब बचे हुए पदार्थ से रेशा प्राप्त किया जाता है तो बहिःस्राव के गुण बहुत कुछ प्रयुक्त पदार्थों की किस्म पर निर्भर करते हैं। उत्पन्न बी. ओ. डी. काष्ठ से प्राप्त लुगदी के अनुक्रमानुती होता है। रासायनिक लुगदी मिलों में प्रयुक्त कुशल ऊष्मा और रासायनिक प्राप्ति पद्धतियाँ इन हानियों को कम कर सकती हैं।

11.6.4 निलंबित ठोस न्यूनीकरण

निलंबित पदार्थ में मुख्यत: रेशे, रेशों का कचरा, मृत्तिका, कैल्सियम कार्बोनेट और टाइटेनियम डाइऑक्साइड आदि पूरक और लेपक पदार्थ होते हैं। अधिकतर मिलों में इन पदार्थों में से अधिकांश को छानन, निस्यंदन, नि:सादन अथवा प्लवन द्वारा मशीन जल से निकाल कर पुन: उपयोग के लिए तंत्र में भेज दिया जाता है। उनकी दक्षता, प्रयुक्त प्रक्रम पर और उन ठोसों की प्रकृति पर निर्भर करती है जिन्हें उनके द्वारा धारण करने की संभावना है। कुछ स्थितियों में इस प्रकार की अत्यंत सक्षम युक्तियों द्वारा निलंबित ठोसों की पर्याप्त मात्राएं धारण की जाती हैं इसलिए उनके और निष्कासन की आवश्यकता नहीं होती है। कागज उद्योग में ठोस धारी अपशिष्टों के उपचार की सर्वाधिक प्रयुक्त विधि अवसादन है, यद्यपि कुछ संयंत्रों में प्लवन और निस्यंदन का उपयोग भी किया जाता है।

होता है। यदि कागज निर्माण में स्कंदकों का उपयोग किया जाए तो यह प्रतिशत अधिक हो सकता है। यदि व्यतिकारक पदार्थ, जिस प्रकार के पक्वन द्रावों में होते हैं, न हों तो स्कंदकों द्वारा 90% से भी अधिक निलंबित ठोसों का न्यूनीकरण हो सकता है।

11.6.5 आपंक निर्जलीकरण और निपटान

लुगदी और कागज मिल बहि:स्रावों का उपचार करने वाले स्वच्छकों से प्राप्त अध:प्रवाह में 2 से 12% ठोस होते हैं जो नि:सादित ठोसों की प्रकृति और स्वच्छक प्रचालन पर निर्भर करते हैं। उपचारित अपशिष्ट में उपस्थित रेशे की लंबाई, किस्म, सान्द्रता और जलीकरण की मात्रा का भी अध:प्रवाह के घनत्व पर प्रभाव पड़ता है। ग्राउंडवुड सूक्ष्मक अथवा अत्यंत जलयोजित ग्लैसीन रेशे वाले बहि:स्राव, बहुत पतला अध:प्रवाह उत्पन्न करते हैं जिन्हें गाढ़ा करना और निर्जलीकरण तथा निपटान के लिए उपयुक्त सान्द्रता में स्वच्छक से पृथक करना कठिन होता है। कुछ उदाहरणों में अधिक जलयोजित ठोसों को पृथक करने के लिए प्लवन का उपयोग किया जाता है जो गाढ़ा कर्दम उत्पन्न करता है।

उत्तम कागजमिल और बोर्डमिल बहि:स्रावों के स्वच्छन से उत्पन्न आपंक आदि कठिन आपंकों के निर्जलीकरण के लिए **क्षैतिज वाहक (Horizantal conveyor type)** अपकेन्द्रित्र अधिक प्रभावकारी होते हैं। **निर्वात निस्यंदन से 20 से 30% ठोस बट्टियां प्राप्त होती है। क्षैतिज वाहक अपकेन्द्रित्रों से 40% ठोस बट्टियां प्राप्त होती हैं जिसमें 35% भरण ठोसों की प्राप्ति होती है।**

5% से कम ठोस सान्द्रता के अध:प्रवाहों को धनात्मक विस्थापन अथवा अपकेन्द्रित्र पंपों द्वारा चलाया जाता है और गाढ़े प्रवाहों को पेंच आवेजक पंपों द्वारा चलाया जाता है। यदि निपटान से पहले और गाढ़ा करना हो तो द्वितीयक प्रगाढ़न किया जाता है।

विमसीयन आपंक, जैसे कुछ कागजमिल आपंकों का निर्जलीकरण निर्वात् निस्यंदन द्वारा किया जाता है जबकि अधिकांश बोर्डमिल (board mill) आपंक निस्यंदनरोधी होते हैं। अधिकांश संयंत्रों में प्रानुकूलन कारकों का उपयोग नहीं किया जाता है क्योंकि आमतौर पर प्रयुक्त प्रानुकूलन कारक निर्जलीकरण को बढ़ावा देने में प्रभावकारी नहीं होते 6। इसके लिए पॉलिइलेक्ट्रोलाइटों का उपयोग भी किया जाता है। कुछ मिलों में आपंक के निर्जलीकरण के लिए शुष्कन क्यारियों का उपयोग किया जाता है। इनमें से कुछ में अध: अपवाहिक (under drains) होती हैं जबकि अन्य केवल अवरुद्ध (impoundments)# हैं जिनमें ठोसों से पृथक होने वाले जल को निथारने के बाद प्राकृतिक (स्वत:) शुष्कन होने दिया जाता है। जब आपंक पर्याप्त गाढ़ा हो जाता है तो उसे खोदकर बाहर निकाल लिया जाता है और निपटान क्षेत्रों में भेज दिया जाता है। ऐसे बेसिनों का पर्याप्त संख्या में निर्माण किया जाता है ताकि स्वच्छ भाग हमेशा उपलब्ध रहें।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

कागज मिल आपंकों के अंतिम निपटान के लिए भूमि निपटान का उपयोग सर्वत्र किया जाता है। कुछ उदाहरणों में, आपंक को अन्य पदार्थों के साथ मिलाकर पूरक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। यदि नाइट्रोजनी साइजिंग पदार्थों की सांद्रता कम हो और आपंक पर्याप्त सूखा हो तो गंध की समस्या पैदा नहीं होती है।

11.6.6 कार्बनिक पदार्थों के न्यूनीकरण की विधियां

i) **स्थायीकरण बेसिन :** इनका लुगदी और कागज बहि:स्राव के जैव ऑक्सीकरण के लिए विस्तृत उपयोग होता है। दो प्रकार के बेसिनों का उपयोग होता है : **प्राकृतिक पुनर्वातित**

(**natural** reaeration) प्रकार के और **यांत्रिकतः वातित** (mechanically **aerated)** प्रकार के। प्राकृतिक पुनर्वातित बेसिन सामान्यतः उथले होते हैं और उनकी गहराई एकसमान नहीं होती है क्योंकि उनका डिजाइन वायु उद्भासित जल पृष्ठ पर आधारित रहता है, विशेष रूप से जब अत्यधिक बी. ओ. डी. न्यूनीकरण की आवश्यकता होती है।

यांत्रिकतः वातित बेसिनों का उपयोग हाल के वर्षों में ऑक्सीकरण दर बढ़ाने और इसलिए आवश्यक संग्रहण अवधि कम करने के लिए किया जाता है। यदि किसी अपशिष्ट में नाइट्रोजन और फ़ॉस्फ़ोरस पोषक तत्व की आपूर्ति कम हो तो इन न्यूनीकरणों की और भी कम आवश्यकता होती है। किन्तु यह कहना संदेहास्पद है इन तत्वों को मिलाना उचित है जैसा कि सक्रियित आपंक प्रक्रम में होता है।

इन बेसिनों में प्राप्त अपशिष्ट, निःसादनीय ठोसों से मुक्त होना चाहिए क्योंकि यदि उन्हें संग्रहित होने दिया जाए तो अपघटन से उनका द्रवीकरण हो जाता है जिससे बी. ओ. डी. भारण बढ़ जाता है। इस कारण विक्षोभ की अवधि में स्वच्छक के ऊपर से बहने वाले निलंबित द्रव्य को रोकने के लिए बहिःस्राव स्वच्छन पद्धति और प्रमुख स्थायीकारी पद्धति के बीच एक छोटा प्रवेश बेसिन बनाना उचित है जिसे समय-समय पर साफ किया जा सकता है।

यांत्रिक ऑक्सीकरण पद्धति की अपेक्षा स्थायीकरण बेसिनों के निम्नलिखित लाभ हैं:

- उनमें प्रक्रम विक्षोभ नहीं होता है।
- उनमें भारण में परिवर्तन से विशेष प्रभाव नहीं पड़ता।
- उनका कम ध्यान रखने की आवश्यकता होती है।
- उनकी प्रचालन लागत कम होती है।

सबसे प्रमुख कमी अवातित बेसिन वाली उच्चभूमि की आवश्यकता और लुगदीकरण बहिःस्रावों से रंग का पृथक न होना है। क्राफ्टमिल बहिःस्रावों के उपचार में वातित अथवा अवातित स्थायीकरण बेसिनों से गंध उत्पन्न होना कोई समस्या नहीं है। किन्तु जब बोर्डमिल अपशिष्ट आदि के बहिःस्राव का उपचार किया जाता है तो गंधयुक्त गैसों को उत्पन्न होने से रोकने के लिए अत्यधिक वातन किया जाना चाहिए।

ii) **च्यावन निस्यंदक :** अपशिष्ट उपचार के लिए च्यावन निस्यंदक उपयोग करने के अनेक प्रयास किए गए हैं। प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि जिन निस्यंदकों में पत्थर का माध्यम होता है वे महंगे होते हैं और सामान्य अनुप्रयोग के लिए संतोषजनक नहीं रहते हैं क्योंकि उनसे उच्च भारण दर पर अतिशुद्धता प्राप्त नहीं होती है और रेशों द्वारा उनके अवरुद्ध होने की संभावना रहती है।

च्यावन निस्यंदकों में प्लास्टिक माध्यम प्रयोग किए जाते हैं जो लुगदी मिल बहिःस्रावों का आंशिक शोधन करते हैं। वे माध्यम अवरोधन समस्या का निराकरण कर देते हैं और उच्च द्रवचालित भारों पर प्रचालित किए जा सकते हैं। माध्यमों का उपयोग, ऑक्सीकरण की अन्य विधियों के प्रयोग से पहले, गर्म बहिःस्रावों के पूर्व-उपचार और शीतलन के लिए भी किया जाता है।

iii) **सक्रियित आपंक उपचार :** यदि अपशिष्ट प्रबलता और क्षारीयता का उचित आंतरिक मिल नियंत्रण रखा जाए तथा अमोनिया और फ़ॉस्फ़ोरस के रूप में पोषक तत्वों को मिलाया जाए तो इस प्रक्रम का अनुप्रयोग, क्राफ्ट लुगदीकरण बहिःस्राव के बी. ओ. डी. को, उच्च मात्रा में, कम करने के लिए किया जा सकता है। यह लुगदी और कागज उत्पादन,

मृदा और जल में प्रदूषक

विसरित वायु, निम्न शीर्ष पुनर्चक्रण पंप और निम्न बांध और अवखातिका (rime) आदि पद्धतियों का का प्रयोग किया गया है। किन्तु यांत्रिक पृष्ठ वातित्र सर्वाधिक प्रयुक्त वातन युक्ति है।

कुछ मामलों में प्राकृतिक भूभागों और दीर्घ संग्रहण उपलब्ध होने कारण अथवा उच्च बी. ओ. डी. की आवश्यकता न होने के कारण, गहरे स्थायीकरण बेसिनों का निर्माण किया जाता है। ये ग्राही, सरिता में प्रवाह के अनुपात में नियमन के अनुरूप, संग्रहण नियंत्रित विसर्जन का काम भी करते हैं।

लघु परिपथन को रोकने के लिए बहुभित्ति स्थायीकरण बेसिन बनाए जाते हैं। कम से कम दो पृथक बेसिनों का उपयोग करना चाहिए। यदि एक ही बेसिन का उपयोग करना हो तो एक या दो विभाजक दीवारों की व्यवस्था होनी चाहिए। मृदा की स्थिति के आधार पर सभी भित्तियों का निर्माण ठीक प्रकार से करना चाहिए। जहां आवश्यक हो अभ्यन्तर दीवारों का निर्माण करना चाहिए।

बेसिनों में ठूंठ नहीं होने चाहिए और अधस्तल सुसंहत अथवा सील होना चाहिए। प्रवेश और निर्गम संरचनाएँ ऐसी बनी हों कि मच्छर नियंत्रण के लिए जल-स्तर को परिवर्तित किया जा सके।

प्लास्टिक माध्यमों के साथ निष्पादन परीक्षणों से संकेत मिला है कि निस्यंदक में उच्च अनुप्रयोग दरों पर बी. ओ. डी. की बृहद मात्रा के निराकरण की क्षमता है। सक्रियित आपंक उपचार की अपेक्षा इसकी प्रचालन लागत कम होती है क्योंकि वातन की अपेक्षा अपशिष्ट पुनर्चक्रण के लिए कम शक्ति (ऊर्जा) की आवश्यकता होती है। उत्तम निस्यंदन के लिए पोषक मिलाना आवश्यक है।

MAADHYAM IAS

पेपरबोर्ड, छत फेल्ट, उदासीन सल्फाइट लुगदीकरण और विमीसयन बहि:स्रावों से प्राप्त अन्य अपशिष्टों के लिए भी प्रभावकारी है। बहि:स्रावों का उपचार सेनेटरी वाहित मल के साथ नगरपालिका सक्रियित आपंक संयंत्र में भी किया जा सकता है।

परंपरागत प्रक्रम की अपेक्षा गतिक व्यवस्था में अधिक सुग्राहिता होने के कारण, ऐसी यूनिटों की द्रवचालित डिजाइन क्षमता विशेष रूप से नि:सादन संरक्षी होनी चाहिए।

लुगदी और कागज अपशिष्टों के उपचार के लिए मूल सक्रियित आपंक प्रक्रम में दो रूपांतरणों की आवश्यकता है। **संपर्क स्थायीकरण पद्धति** (contact stabilisation system) में मिश्रित द्राव के लिए प्रयुक्त वातन अवधियाँ सामान्य से कम होती हैं और प्रतिगमन आपंक का पर्याप्त समय तक वातन किया जाता है। इस रूपांतरण से लागत में आकस्मिक काफी कमी हो सकती है और आकस्मिक भारण के कारण मिश्रित द्राव आपंक की संभावित क्षति होने की स्थिति में, आपूर्ति के लिए सक्रियित आपंक का भण्डार बनाए रखा जाता है। एक अन्य रूपातंरण को **गतिक** (dynamic) **पद्धति** कहते हैं जिसमें वातन, आपंक पृथक्करण और आपंक प्रतिगमन एक ही यूनिट में किए जाते हैं। इस व्यवस्था से परिस्थितियों में सुधार होता है क्योंकि प्रतिगामी आपंक को पंप करने की आवश्यकता नहीं होती है और उसे ताज़ी अवस्था में उपचार होने वाले अपशिष्ट में लौटा दिया जाता है।

सक्रियित आपंक प्रक्रिया सामान्यतया तब प्रयुक्त की जाती है जब स्थायीकरण बेसिनों के लिए पर्याप्त और उपयुक्त भूमि उपलब्ध न हो और अपशिष्ट के लिए उच्च मात्रा में ऑक्सीकरण की आवश्यकता हो। जिस अपशिष्ट का उपचार करना हो वह खनिज अम्लता और कास्टिक क्षारीयता से मुक्त होना चाहिए। ताप अधिमानत: 110°C से कम होना चाहिए। अधिकांश बहि:स्रावों में नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की सूक्ष्म मात्राओं में उपस्थिति के कारण सैद्धान्तिक इष्टतम की अपेक्षा अतिरिक्त पोषक की आवश्यकता कम होती है। सैद्धान्तिक इष्टतम 20 mg L^{-1} बी. ओ. डी. के लिए 1 mg L^{-1} नाइट्रोजन और 60 mg L^{-1} बी. ओ. डी. के लिए 1mg L^{-1} फॉस्फोरस होता है।

यद्यपि सक्रियित आपंक प्रक्रम अधिकांश लुगदी और कागज मिल बहि:स्रावों और संमिश्रणों के उपचार में सफलतापूर्वक किया जा सकता है किन्तु उसमें निम्नलिखित कमियां होती हैं:

i) पूंजी लागत बहुत होती है जो आमाप पर निर्भर करती है। इसके अतिरिक्त अपशिष्ट की निलंबित ठोस की मात्रा को कम करने की पूर्व उपचार की लागत भी होती है।

ii) लुगदीकरण और विरंजन जल के उपचार में रंग का निराकरण पूर्णरूप से नहीं होता है।

iii) प्राप्त आपंक सुसंहत नहीं होता है और निर्जलीकरण में कठिनाई होती है। अत: उसका निपटान एक समस्या बन जाती है। यदि अवशोषण के लिए प्राथमिक आपंक की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध हो तो उसका निर्वात-निस्यंदन किया जाता है।

iv) यदि अपशिष्ट का बी. ओ. डी. 3000 mg L^{-1} के आसपास हो तो ऑक्सीजन विनिमय सीमा के कारण उपचार नहीं किया जा सकता है।

यह भी सत्य है कि अपशिष्ट भार में वृद्धि के प्रति सुग्राहिता के कारण सावधानीपूर्वक नियंत्रण की आवश्यकता होती है।

इस प्रक्रम द्वारा कुल बहि:स्राव के एक अंश का उपचार करने के बाद उसे शेष अपशिष्ट के प्रवाह के साथ पुन: संयोजित करने से, स्थायीकरण बेसिनों में कुल अपशिष्ट के आगे का ऑक्सीकरण प्रेरित होता है। इस प्रकार, ऑक्सीकरण की निश्चित मात्रा के लिए आवश्यक संग्रहण की अवधि कम हो जाती है।

11.6.7 सिंचाई और अवस्रवण द्वारा भूमि निपटान

MAADHYAM IAS

संरध्र मृदा 4 से अवस्रवण (रिसाव, (seepage), पर निर्भर रहने के बजाए सिंचाई के सिद्धांतों को अपनाने के अनेक कारण हैं। इनमें सबसे प्रमुख अधिकांश मिलों में उच्च गति अवस्रवण संस्थापनों के लिए आवश्यक उपयुक्त मृदाओं की कमी है। यदि अत्यंत संरंध्र भूमि उपलब्ध न हो तो भूमि की आवश्यकता बढ़ जाती है तथा वितरण समस्या गंभीर और महंगी हो जाती है। पेड़ पौधों को लगाने से मृदा रंध्रता बढ़ जाती है और वाष्पोत्सर्जन से पर्याप्त जल का उद्‌वाष्पन हो जाता है जिससे भूमि क्षेत्र की आवश्यकता कम हो जाती है।

यद्यपि सिंचाई द्वारा निपटान करना समतल भूमि और गर्म मौसम वाले क्षेत्रों में अनुप्रयोग के लिए उपयुक्त रहता है किन्तु पर्वतीय प्रदेशों में वह लाभकर नहीं होता है।

सिंचाई के लाभ और हानियाँ दोनों हैं। कृषि क्षेत्रों में स्थित मिलों से प्राप्त बहि:स्राव, सिंचाई-जल की कमी को पूरा करता है। सीमाबद्धता, सिंचाई के उपयोग को या तो अपेक्षाकृत

छोटी मिलों के लिए अथवा अपेक्षाकृत कम आयतन वाले विशिष्ट बहि:स्रावों के निपटान तक सीमित नहीं करती है।

मृदा को वातन स्थिति में बनाए रखने के लिए बी. ओ. डी. भार 100 kg प्रति एकड़ प्रति दिन से कम होना चाहिए। *pH* 6.0 से कम अथवा 9.0 से अधिक नहीं होना चाहिए और सोडियम अधिशोषण अनुपात (Sodium Adsorption Ratio, SAR) 8.0 से कम होना चाहिए। इस बात को कोई प्रमाण नहीं है कि लुगदी और कागज बनाने वाले प्रचालनों से प्राप्त लवणयुक्त बहि:स्रावों के निपटान की, लवणयुक्त जल द्वारा सिंचाई से पर्याप्त भिन्नता होती है।

भूमि निपटान में, उद्योग में उपचार विधि के रूप में व्यापक उपयोग हो सकने की क्षमता नहीं है। कुछ उदाहरणों में अपशिष्ट निपटान की कुछ समस्याओं को हल करने का यह आर्थिक दृष्टि से उपयुक्त साधन है।

जब मृदा में अत्यंत रंगीन बहि:स्रावों को प्रयुक्त किया जाता है तो भौमजल के संदूषित होने की संभावना होती है। इसलिए प्रत्येक स्थल की मृदा की किस्म, भौमजल की गति की दिशा तथा विद्यमान कुओं की स्थिति का मूल्यांकन अवश्य करना चाहिए।

द्वितीयक उपचार की अन्य विधियों की तुलना में भूमि निपटान की प्रचालन लागत कम होती है जिससे पूंजी निवेश में बचत होती है। अन्य विधियों की तुलना में इसके अतिरिक्त लाभ ये हैं कि बी. ओ. डी. का अपचयन लगभग 100% हो जाता है और निष्पादन एकसमान होता है। जैव उपचार प्रक्रमों की विद्युत् आवश्यकता की तुलना में फुहार सिंचाई पद्धतियों के लिए पंप करने की लागत कम हो जाती है।

बोध प्रश्न

10) लुगदी और कागज उद्योग की प्रमुख धारा प्रदूषण समस्याएँ कौन-कौन सी हैं?

....

....

11) ठोसयुक्त अपशिष्टों का उपचार कैसे किया जाता है?

....

....

....

11.7 चर्म संस्कारशाला से उत्पन्न बहि:स्राव

पहले चर्म संस्कारशालाएं सरिताओं के किनारों पर बनाई जाती थीं। इससे यातायात द्वारा खालों, रासायनिक पदार्थों और संस्करण पदार्थों को चर्म संस्कारशालाओं तक ले जाने तथा तैयार चमड़े को चमड़े का सामान बनाने वाले निर्माताओं तक पहुंचाने में सहायता मिलती थी। सरिताओं से प्रक्रमण के लिए जल भी प्राप्त होता था। साथ ही, वे अपशिष्ट उपोत्पाद और बहि:स्रावों के निपटान के लिए जल मार्ग का काम भी करती थीं।

चर्म निर्माण में प्रयुक्त कच्चे पदार्थों में पशुओं की खाल और कुछ अन्य जानवरों की चमड़ी आते हैं। ये खाए जाने वाले मांस के सहउत्पाद अथवा उपोत्पाद होते हैं। चर्म संस्कारशाला में खाल कसाई खाने से ताजी अथवा परिरक्षित रूप में प्राप्त होती है। चर्म संस्कारशाला में, खाल को अन्य उपयोगी रूपों में परिवर्तित किया जाता है।

MAADHYAM IAS

11.7.1 चर्म उद्योग

चर्म उद्योग प्राचीनतम उद्योगों में एक है जो अब विशाल तकनीकी उद्योग के रूप में विकसित हो गया है। वास्तव में, इसमें अनेक उद्योग शामिल हैं। प्रत्येक प्रकार के चर्म के लिए भिन्न प्रक्रम की आवश्यकता होती है जिसके कारण मानकीकरण की संभावना बहुत कम है। मूलत: केवल तीन अथवा चार प्रकार के चर्म संस्करण होते हैं किन्तु परिष्करण प्रक्रमों की संख्या बहुत है। सोल (तल्ला), पेटी और घोड़े की जीन के लिए प्रयुक्त चमड़े के संस्करण में छाल, लकड़ी, गरी और पत्तियों का उपयोग किया जाता है। इसे **वनस्पति चर्मसंस्करण प्रक्रम** (vegetable tanning process) कहते हैं। जूतों का ऊपरी हिस्सा बछड़े, बकरी, घोडे अथवा

पशुओं की खाल का बनाया जाता है जिसका खनिज लवणों के साथ संस्करण किया जाता है। इसे **क्रोम चर्म संस्करण प्रक्रम** (chrome tanning process) कहते हैं। कुछ चमड़ों का संस्करण वनस्पति और क्रोम, दोनों के संयोजन से अथवा नए संश्लिष्ट पदार्थों के साथ किया जाता है।

चर्म संस्कार से पहले सभी खालों और चमड़ी से बालों और असंगत ऊतकों के अलग किया जाता है। इसके लिए खालों को सोडियम सल्फ़ाइड अथवा अन्य समान पदार्थों से सशक्त कर संतृप्त चूना विलयन में निमज्जित किया जाता है। शेष बालों का कचरा हटाने और कूपन (welling) के नियंत्रण लिए चमड़ी और खालों का एन्ज़ाइम द्वारा उपचार किया जाता है।

उपर्युक्त सभी कार्यों के लिए जल अनिवार्य होता है। वांछित गुणता का चमड़ा प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त जल के रासायनिक संघटन का बहुत महत्व है। किसी चर्म संस्कारक को भिन्न स्थानों में स्थित दो चर्म संस्करणशालाओं में एक जैसा चमड़ा बनाना भी कठिन हो सकता है। केवल आसुत जल को ही मानक माना जा सकता है। अपितु प्राकृतिक जल की कठोरता और अन्य गुणों को उपचार द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। और प्राप्त जल चर्म संस्कारशालाओं में उपयोग के लिए उपयुक्त बनाया जा सकता है। चर्म संस्कारशालाओं में प्रयुक्त जल में सूक्ष्मजीव नहीं होने चाहिए। बैक्टीरिया के निराकरण के लिए रोगाणुनाशियों का उपयोग किया जाता है।

प्रयुक्त रासायनिक पदार्थों में परिवर्तन होता रहता है इसलिए उत्पन्न बहि:स्राव प्रत्येक वर्ष एक समान नहीं होता है। बालों को निकालने में, एन्ज़ाइमों के अनुप्रयोग से चूने के निलंबन का उपयोग कम किया जा सकता है और जिससे सल्फाइडों के निपटान की समस्या भी कम हो सकती है।

वेष्टन स्थान में अथवा चर्म संसाधन संस्थान में खाल को साफ करते समय स्थूल ठोस निकल जाते हैं और चर्म संस्कारशाला के बहि:स्राव में छोटे ठोस पदार्थों की मात्रा कम हो जाती है। वनस्पति संस्कार और खनिज अथवा क्रोम संस्कार वाले चमड़ों के संसाधन में जल के स्थान पर कार्बनिक विलायकों का उपयोग भी किया जा सकता है। इससे चर्म संस्कारशाला से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थों में परिवर्तन हो जाएगा। चर्मपरिष्करण प्रक्रम में, जलीय-प्रकार की परिसज्जा के स्थान पर विलायक-परिक्षिप्त वर्णकों का उपयोग होने लगा है।

प्रतिस्थापी चर्म संस्करण भी विकसित किए गए हैं, जैसे सिनटैन (syntan) और संश्लिष्ट टैन। कुछ चमड़ों का संस्करण फार्मैल्डिहाइड के साथ जबकि दूसरों का जर्कोनियम लवणों के साथ किया जाता है। यह प्रक्रम क्रोम चर्म संस्करण के समान ही है।

चर्म संस्कारक, जल की आपूर्ति नदी, तालाब, खाड़ी, कुएं और नगर निगम द्वारा दिए जाने वाले जल से करते हैं। चर्म संस्कारशाला में जल का पुन: उपयोग लगभग नहीं होता है। जल और चर्म उत्पाद के अनुपात में लगातार वृद्धि होने के कारण जल के समुचित नियंत्रण और कम समय के उपयोगों की आवश्यकता है। एक ही जल में भिगोने के बजाए किसी प्रचालन में जल को दो-तीन बार बदला जाता है।

11.7.2 चर्म संस्कारशाला से उत्पन्न अपशिष्टों के अभिलक्षण

चर्म संस्कारशाला के अपशिष्ट मुख्यत: जल द्वारा निकलते हैं। उनमें निलंबित ठोस, विलेय पदार्थ, रंग और गंध होते हैं और उनका उच्च बी. ओ. डी. होता है। उनका विसर्जन अत्यंत पूयनीय होता है जो दिखने में खराब और दुर्गंधयुक्त होता है। यह सर्वाधिक प्रदूषक उद्योग माना जाता है। इस प्रक्रम के मानकीकृत न होने के कारण अपशिष्ट प्रबंधन के मूल निर्धारित नियम मंद गति से लागू किए जा सके हैं।

चर्म संस्कारशाला के बहि:स्राव में चमड़ी के ऊतक के टुकड़े, विलेय प्रोटीन, बाल, रुधिर, धूल अथवा मैल, खाद, मिट्टी, अनेक प्रकार के लवण और चूना होते हैं। ये सब सल्फाइडों, सल्फाइड्रेटों, ऐमीनों, क्रोम और वनस्पति चर्म संस्कारकों, शर्कराओं, स्टार्च, तेल और वसा, अम्ल, क्षार, रंजक और वर्णक के साथ मिश्रित रहते हैं। संदूषकों की मात्रा और सान्द्रता के कारण उन्हें सीधे सरिता में विसर्जित करना असंभव होता है। व्यापारिक चर्म संस्कारशालाएं इन अपशिष्टों को प्राथमिक उपचार के बाद ही विसर्जित करती हैं। कुछ चर्म संस्कारशालाओं में द्वितीयक और तृतीयक उपचार पद्धतियां भी प्रयोग की जाती हैं।

चर्म संस्कारशाला से उत्पन्न अपशिष्टों की प्रदूषण क्षमता का मूल्यांकन अनेक परीक्षणों द्वारा किया जाता है जिनमें बी. ओ. डी., कुल, घुले, नि:सादनीय और निलंबित ठोस, pH,

चर्म संस्कारशाला में सतत् प्रचालनों और अंतरायिक (intermittent) विसर्जनों के कारण अपशिष्ट पदार्थों के आयतन और सान्द्रताओं में बहुत भिन्नता होती है। किसी उद्योग के अपशिष्ट निपटान की स्थिति का वास्तविक आकलन करने के लिए अनेक पृथक संयंत्रों पर विचार करने की आवश्यकता होती है जिनमें से प्रत्येक की पृथक समस्या होती है। जानवरों की खाल को चमड़े में परिवर्तित करने से संबंधित विभिन्न प्रचालनों में अनेक प्रकार की रासायनिक अभिक्रियाएँ और रूपांतरण होते हैं। इन प्रचालनों के अंतर्गत शुरू में भिगोने और फिर धोने से लेकर परिसज्जाओं का अनुप्रयोग शामिल है। प्रत्येक प्रक्रम से बहि:स्राव में भिन्न-भिन्न पदार्थों की विभिन्न मात्रा मिलती हैं।

MAADHYAM IAS

अलग-अलग संयंत्रों में जल के लीटरों और संसाधित खाल के किलोग्रामों के अनुपात में बहुत भिन्नता होती है भले ही उनसे एक ही प्रकार का चमड़ा बनाया जाए। यह अनुपात जितना कम होगा संदूषकों की सान्द्रता और बी. ओ. डी. उतने ही अधिक होंगे।

क्षारकीयता, और मुक्त खनिज अम्लता, रंग और आविलता, क्लोराइड, सल्फाइड, जेल्डॉल नाइट्रोजन, लिपिड, क्रोमियम, स्वाद और गंध शामिल हैं।

चर्म संस्कारशाला अपशिष्ट विसर्जन के आकलन में जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता का विस्तृत उपयोग किया जाता है जो घरेलू वाहित मल की तुलना में बहुत अधिक होती है। मिश्रित अपशिष्ट का बी. ओ. डी. 500 से 2000 mg L^{-1} तक होता है जो भुक्त वनस्पति छाल द्राव के लिए कभी-कभी 45000 mg L^{-1} तक बढ़ जाता है। यह अनुमान है कि प्रत्येक 100 kg खाल का चमड़ा बनाने के लिए औसत चर्म संस्कारशाला में 7 अथवा 8 kg बी. ओ. डी. की आवश्यकता होती है।

चर्म संस्कारशाला अपशिष्टों के कारण कार्बनिक प्रदूषण को गंभीर समस्या है जिसके लिए बी. ओ. डी. का न्यूनन और नियंत्रण जैसे प्रभावकारी उपाय आवश्यक हो जाते हैं। अंतरायिक प्रवाह विसर्जन के कारण 75% ऑक्सीजन मात्रा की आवश्यकता होती है और विसर्जन संमिश्रित करके नियमित दर पर किया जाता है तो बी. ओ. डी. बहुत कम हो जाता है।

चर्म संस्कारशाला के बहि:स्राव में बी. ओ. डी. का मुख्य स्रोत दंड-कक्ष है जहां चर्म कर्तन, भिगोना, धोना, चूना मिलाना, और चर्म कुंडन किया जाता है। अन्य क्षेत्रों का योगदान कम होता है। चर्म संस्कारशाला में ठोस मुख्यत: बाह्य पदार्थ (extraneous matter) और खाल के विलेय प्रोटीन होते हैं।

आधुनिक चर्म संस्कारशाला में उपचार से पहले औसतन 2000-3000 mg L^{-1} निलंबित ठोस होते हैं। उनमें त्वचा-ऊतक के तंतु, बाल, अतिरिक्त चूना और रासायनिक अवक्षेप शामिल हैं। उच्च निलंबित ठोस वाले बहि:स्राव के विसर्जन से ग्राही सरिता अथवा सीवर में आपंक निक्षेपित हो जाएगा। कुछ समय बाद इन निक्षेपों की मात्रा बहुत बढ़ जाती है जिससे तलकर्षण और सीवर को साफ करने की आवश्यकता होती है। अन-उपचारित संस्कारशाला अपशिष्ट में नि:सादनीय ठोसों की मात्रा 7 से 12% होती है। चर्म संस्कारशाला अपशिष्ट के उपचार में उनका निष्कासन एक आवश्यक प्रक्रिया है।

जानवरों के शरीर से निकाली गई खाल में लगभग 65% नमी होती है। उससे बनाए गए चमड़े में लगभग 12% नमी होती है। 100 kg खाल से लगभग 70% kg चमड़ा बनता हैं। किसी वनस्पति चर्म संस्कारशाला (जिसमें सोल, बेल्ट, पेटी, साज-समान आदि बनाए जाते हैं) में ठोस की कुल मात्रा 7000 mg L^{-1} तक की उच्चता हो सकती है। इसमें से आधी मात्रा जैव होती है जो पूयनीय होने के कारण चर्म संस्कारशाला बहि:स्राव में पाई जाने वाली दुर्गंध के लिए उत्तरदायी होती है।

चर्म संस्काराशाला के अपशिष्ट के pH में भी भिन्नता होती है। जिन संयंत्रों में मिश्रित करना प्रयोग किया जाता है और उनमें क्षार द्वारा अम्ल को उदासीन किया जाता है तो मिश्रण में क्षार अधिक होने के कारण pH क्षारीय होता है अर्थात् उसका मान 8 से 11 तक होता है। आम्ल द्राव (सल्फ्यूरिक अम्ल और सोडियम क्लोराइड) का pH 3 से 5, वनस्पति द्रावों का pH 3 से 6 और चूना द्रावों का pH जिसमें सल्फाइड ऐमीन होते हैं, 13 तक होता है। इस प्रकार, सब चर्म उपचार द्राव सस्कारशाला विसर्जनों को एक साथ मिला देना बी. ओ. डी., ठोसों और pH के नियंत्रण की सबसे अधिक व्यवहार्य और सस्ती विधि है।

MAADHYAM IAS

आविलता, बहि:स्राव में उपस्थित अनेक अवयवों के कारण उत्पन्न होती है जिसका सीधा संबंध रंग से होता है। यह रंग मटियाला धूसर से लेकर हरा, नीला और दूधिया होता है। वनस्पति टैन लाल रंग के होते हैं किन्तु उनके लौह-लवणों के संपर्क में आने पर स्याही जैसा काला अथवा अन्य मध्यवर्ती रंग उत्पन्न होते हैं। अपशिष्टों में रंजक और वर्णक भी होते हैं किन्तु वर्णक इतनी कम मात्रा में होते हैं कि अंतिम रंग पर उनका बहुत कम प्रभाव पड़ता है। आविलता का सबसे गंभीर पहलू उसका सूर्य की रोशनी को रोकना है जिसका प्रभाव जल जीवों पर पड़ता है।

वनस्पति चर्म संस्कार के बाद चर्म संस्कारशाला अपशिष्ट की **आविषालुता** बहुत कम होती है। किन्तु क्रोम चर्म संस्कार में आर्सेनिक, क्रोमियम, उच्च अम्लता अथवा क्षारीयता और सल्फाइड पाए जाते हैं। यदि उनकी सान्द्रता बहुत हो तो वे आविषालुता उत्पन्न करते हैं। लवणों और रासायनिक पदार्थों में सोडियम क्लोराइड सोडा क्षार, सल्फाइड जो अपचयन क्रिया करते हैं

और ऐमीन शामिल हैं। इनमें से कुछ जलीय जीवों के लिए आविषालु होते हैं और दुर्गन्ध पैदा करते हैं। कुल दुर्गन्ध में जैव पदार्थों के अपघटन तथा सल्फाइडों की अम्लों के साथ क्रिया से उत्पन्न हाइड्रोजन सल्फाइड का भी योगदान होता है।

बिना रेशे वाले प्रोटीनों को पृथक करने के लिए पहले खाल अथवा चमड़ी को जल में भिगोकर, धोया जाता है। फिर चूने के संतृप्त विलयन में, जिसमें 15% तक अविलीन चूना हो, उसका विरोमण (depliation) किया जाता है और अंत में एन्ज़ाइम द्राव के कुंड में रखा जाता है। ये हैं- ऐल्बूमिन, ग्लोबूलिन, म्यूकॉइड, म्यूकोपॉलिसैकेराइड जिन्हें चर्म संस्कार की शब्दावली में सीमेंट पदार्थ कहा जाता है। ये विलेय प्रोटीन होते हैं। ये गोलिका आकार के प्रोटीन विकृतीकरण की विभिन्न अवस्थाओं में होते हैं। प्रत्येक दंडकक्ष प्रक्रम का बहि:स्राव के कुल नाइट्रोजन में योगदान होता है। सभी त्वचा प्रोटीनों का रासायनिक भंजन हो सकता है जिसके कारण बहि:स्राव में आविलता, दुर्गन्ध और बी. ओ. डी. होते हैं।

यदि वसा बहुत अधिक मात्रा में उपस्थित हो, जैसा कि कुछ जानवरों में होती है, तो वह चर्म संस्कार प्रक्रम में बाधा डालती है। सामान्यतया वसाओं के इस संग्रहण को विलायक निष्कर्षण द्वारा पृथक कर लिया जाता है।

सभी त्वचाओं और खालों में लिपिड पदार्थों की मात्रा होती है। वसा ग्रंथियों से मोमी वसा, शरीर से फ़ॉस्फ़ोलिपिड और उदासीन वसा, मुख्यत: ट्राइग्लिसराइड, खाल के नीचे बाह्य ऊतक के रूप में पाए जाते है। मांसल वसा ऊतकों को यांत्रिकत: पृथक किया जाता है किन्तु उसके टुकड़े चर्म संस्कारशाला के अपशिष्ट में प्रविष्ट कर जाते हैं। वसा को विरोमण प्रक्रम द्वारा पृथक किया जाता है। उदासीन वसाओं को अंशत: चूने के बाथ में साबुन के रूप में पृथक किया जाता है। ये साबुन और वसा अम्ल, बहि:स्राव में शामिल रहते हैं।

खाल के चर्म संस्कार के बाद उसका स्नेहन किया जाता है। इसके लिए गीले चमड़े पर सल्फेट युक्त अपरिष्कृत तेलों को प्रयुक्त किया जाता है। अंशत: रेचित वसा द्राव कुल बहि:स्राव का अंग होता है। औद्योगिक अपशिष्ट के जैव उपचार पर वसाओं का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसलिए चर्म संस्कारक उपचार पद्धति में उसे कम से कम करने का प्रयत्न करता है। विभिन्न प्रक्रमों में विलायकों और पृष्ठ सक्रियकों के उपयोग से कुछ वसा-पदार्थ बहि:स्राव में चला जाता है।

11.7.3 चर्म संस्कारशाला से उत्पन्न अपशिष्टों का उपचार

चर्म संस्कार उद्योग के बहि:स्राव के बृहद् आयतन के कारण कोई भी आर्थिक पुनर्प्राप्ति प्रक्रम विफल हो जाता है। चर्म प्रक्रमों को अनुभव के आधार पर किया जाता है जिनमें विस्तृत तकनीकी जानकारी नहीं होती है। इसके कारण परिवर्तन को प्रोत्साहन नहीं मिलता है। यहां तक पदार्थों का पुनरुपयोग भी नहीं किया जाता है।

प्रयुक्त पदार्थों में परिवर्तन, उपस्कर का उचित रख-रखाव, उन्नत गृह संचालन, मानव त्रुटि के निराकरण के लिए स्वचलन, पुन: उपलब्धि, प्रदूषकों का पृथक निपटान और अधिक सक्षम उपचार पद्धतियों को अपनाना आदि संशोधन महत्वपूर्ण हैं। प्रक्रम परिवर्तनों पर विचार करने में यह मानना महत्वपूर्ण है कि प्रत्येक प्रकार के चमड़े और प्रत्येक प्रकार के चर्म संस्कार के लिए अनेक विभिन्न प्रक्रम हैं। इसलिए किसी मानक परिवर्तन को स्वीकार किया या अपनाया नहीं जा सकता है। प्रत्येक संयंत्र की अपनी पृथक समस्या है। आर्थिक और प्रदूषण संबंधी पहलुओं की दृष्टि से अनेक परिवर्तन किए गए हैं जिसमें नए पदार्थों का चयन भी शामिल है।

ऐमीनों के मिश्रण के स्थान पर डाइमेथिलऐमीन (DMA) का उपयोग होने लगा है क्योंकि जब तक डी. एम. ए. को विरोमण बाथ में नहीं रख दिया जाता, ऐमीन की गंध नहीं आती है। चूने के अनुपस्थित होने पर भी अधिक उपयुक्त बहि:स्राव प्राप्त होता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अनेक चर्म संस्कारक एक अन्य परिवर्तन करते हैं। वे बालों को शिथिल करने के लिए प्रोटीन अपघटन एन्ज़ाइम का उपयोग करते हैं। इस प्रकार, विरोमण विधि में चूने के उपयोग की आवश्यकता नहीं होती है। इन दोनों परिवर्तनों से चर्मसंस्कार बहि:स्राव में ठोस की मात्रा कम हो जाती है।

यद्यपि उपस्कर परिवर्तन कभी-कभी किए जाते हैं फिर भी ये प्रदूषण को कम करने में प्रभावकारी होते हैं। विरोमण और क्षारीय घोल में रखते समय प्रक्षोभन के लिए पैडल व्हील गर्तों (padelle wheel pits) को ड्रमों द्वारा प्रतिस्थापित करने से सतत् प्रक्रम लगातार होता है और प्रत्येक प्रक्रम पद के बाद स्टॉक को इकट्ठा नहीं करना पड़ता है। इसके फलस्वरूप जल का एक बार उपयोग करना पड़ता है जिसमें विसर्जन के समय कम प्रदूषक होते हैं।

अच्छे गृह संचालन में रोज धोने से कार्य स्थल को साफ रखने में सहायता मिलती है जिससे क्षयमान उच्छिष्ट का संचय नहीं होता है और फलस्वरूप तनु बहि:स्राव प्राप्त होता है।

नियंत्रण विधियों में स्वचलन से एकसमान प्रक्रमण होता है और अधिक एकसमान बहि:स्राव प्राप्त होता है। चमड़े और खाल के गुण ऐसे होते हैं कि चर्म संस्कार के लिए पर्याप्त मानव विवेक की आवश्यकता होती है।

चर्म संस्कारशाला बहि:स्राव का एक अवांछनीय प्रदूषक भुक्त वनस्पति चर्म संस्कार द्राव है। पहले इन द्रावों को लकड़ी, छालों, पत्तियों और गुठलियों के निक्षालन से बनाया जाता था जिनके संगत दुर्बल वाह द्राव प्राप्त होते थे। बहि:स्रावों के लिए लैगूनों का उपयोग आमतौर पर होता है। प्राकृतिक और खनिज चर्म संस्कार पदार्थों के साथ संश्लिष्ट चर्मसंस्कार पदार्थों का उपयोग किया जाता है। संश्लिष्ट पदार्थ महंगे होते हैं और केवल अल्प मात्राओं में प्रयोग होते हैं। उनमें से अधिकांश का खाल द्वारा अवशोषण हो जाता है और वे चमड़े का भाग बन जाते हैं।

प्राथमिक उपचार, चालन, नि:सादी बेसिनों और लैगूनों द्वारा होता है। कुछ चर्म संस्कारकों में द्वितीयक उपचार संयंत्र होते हैं जिसमें जैव ऑक्सीकरण और नि:सादन होता है। दूसरे उद्योगों में प्रयुक्त विधियां चर्म संस्कार अपशिष्ट निपटान के लिए भी उपयोग होती हैं।

स्थान और बहि:स्राव के आयतन के अनुसार चर्म संस्कारशाला में सर्वोत्तम विधि का उपयोग किया जाता है। अनेक बृहद संस्कारशालाओं में, नियंत्रित आयतन विसर्जन वाले लैगून और जलाशय पद्धतियों का उपयोग किया जाता है। चर्म संस्कारशाला में विसर्जन उत्पन्न करने वाले अनेक भाग होते हैं। यह सुनिश्चित है कि धारक टंकी में सभी विसर्जनों को मिश्रित करना सर्वोत्तम पहला कदम है। उसके बाद छानन, अवक्षेपण और निस्यंदन किए जाते हैं।

बोध प्रश्न

12) वर्ग संस्कारशाला बहि:स्राव के अभिलक्षणों और मुख्य घटकों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

13) सभी चर्म संस्कारशाला विसर्जनों को एक साथ मिलाने से उनका उपचार सस्ता और व्यवहार्य होता है, क्यों?

....

....

....

MAADHYAM IAS

11.8 खतरनाक अपशिष्ट

खतरनाक पदार्थ (hazardus wastes) हमारे दैनिक जीवन अंग बन चुके हैं। हम ऐसे अनेक रासायनिक पदार्थों का उपयोग करते हैं जो कैंसरजन हैं अथवा जिनका कैंसरजन होने का संदेह हैं। इनमें कुछ प्रकृति में पाए जाते है जबकि अन्य मानव-निर्मित हैं जिन्हें समाज की आवश्यकताओं के लिए बनाया जाता है।

रासायनिक पदार्थों का उपयोग अनेक कार्यों के लिए होता है। उदाहरण के लिए, भारत में प्रतिवर्ष उत्पादित वस्त्रों का 80% संश्लिष्ट कार्बनिक रासयन होते हैं जैसे पॉलिएस्टर और

नाइलॉन। कार्बनिक रासायनिक रंजक का भार वस्त्र के भार का **1-8%** होता है। वांछित गुण प्रदान करने के लिए वस्त्रों का अनेक कार्बनिक रासायनिक पदार्थों के साथ उपचार किया जाता है। ऐस्बेस्टॉस एक अन्य रासायनिक पदार्थ है जिसका भवन निर्माण में विस्तृत उपयोग किया जाता है, वह भी खतरनाक होता है।

उत्पादों और संवेष्टन में प्लास्टिकों का उपयोग बढ़ता जा रहा है। महानगरों में व्यापारिक ठोस अपशिष्ट में भार से 5% प्लास्टिक होता है।

11.8.1 खतरनाक अपशिष्टों की उत्पत्ति

खतरनाक अपशिष्ट उद्योग संपन्न समाज के अनिवार्य उत्पाद हैं। वे हमारे चारों ओर विद्यमान हैं। उत्पादन में प्रयुक्त अनेक रासायनिक पदार्थों के कारण भिन्न प्रकार के खतरनाक अपशिष्ट भिन्न मात्राओं में उत्पन्न होते हैं। ऑटो-मोबाइल, टेलीविज़न, फर्नीचर आदि की चमक निर्माण प्रक्रमों द्वारा प्राप्त होती है जो खतरनाक अपशिष्ट उत्पन्न करते हैं। नदियों और वाहित मल उपचार संयंत्रों में विषैले रासायनिक पदार्थों के अपशिष्ट जल विसर्जन से जल में इन पदार्थों की बृहद् मात्राएं मिल जाती हैं।

निर्माताओं के अतिरिक्त घरेलू पदार्थों से भी खतरनाक अपशिष्टों द्वारा प्रदूषण में योगदान होता है। अनेक प्लास्टिक पदार्थों को जलाने से हानिकारक उत्पाद प्राप्त होते हैं। इन विषैले यौगिकों में कार्बन मोनोक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड, अमोनिया, फॉर्मैल्डिहाइड, हाइड्रोजन सायनाइड, हाइड्रोजन क्लोराइड आदि शामिल हैं।

विद्युत् ट्रांसफार्मर में प्रयुक्त विद्युत्रोधी तरल को जलाने से भी विषैले पदार्थ उत्पन्न होते हैं विशेष रूप से जब तरल में पॉलिक्लोरो बाइफेनिल (पी. सी. बी.) हों। वे स्थायी यौगिक होते हैं और उनके अपघटन में दसियों साल लग जाते हैं। पी. सी. बी. संदूषण सर्वत्र पाया जाता है जैसे मृदा, जल, मानव-दूध और ऊतकों में।

पी. सी. बी., क्लोरीनित हाइड्रोकार्बन होते हैं। उनके वैद्युत चालकता और अज्वलनशीलता जैसे अनेक उपयोगी गुणधर्म होते हैं।

खतरनाक अपशिष्टों और खतरनाक पदार्थों का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से सभी पर प्रभाव पड़ता है किन्तु इन दोनों में महत्वपूर्ण अंतर है।

खतरनाक अपशिष्टों की पहचान के लिए पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने ख़तरनाक अपशिष्ट (प्रबंधन और संचालन) नियम 1989 का 2003 में संशोधन किया। संशोधन नियमों के अनुसार खतरनाक अपशिष्ट में निम्नलिखित शामिल होते हैं :

क) अनुसूची-1 के स्तंभ (3) में सूचीबद्ध सभी अपशिष्ट जिसमें विभिन्न उद्योगों के 36 प्रक्रमों तथा इनमें से प्रत्येक उद्योग से खतरनाक अपशिष्टों को उत्पन्न करने वाली सरिताओं का उल्लेख है।

ख) अपशिष्ट जिनके घटकों की सांद्रता अनुसूची-2 में सूचीबद्ध सान्द्रताओं से अधिक है।

वर्ग अ- सान्द्रता सीमा $\geq$ 50 mg kg^{-1} (20 घटक)

वर्ग आ- सान्द्रता सीमा $\geq$ 5,000 mg kg^{-1} (30 घटक)

वर्ग इ- सान्द्रता सीमा $\geq$ 20,000 mg kg^{-1} (17 घटक)

वर्ग ई- सान्द्रता सीमा $\geq$ 50,000 mg kg^{-1} (9 घटक)

वर्ग ङ- सभी सान्द्रताओं में खतरनाक अपशिष्टों के रूप में वर्गीकृत।

- ज्वलनशील पदार्थ
- पदार्थ, जो जल अथवा आर्द्र वायु के संपर्क में ज्वलनशील गैसों की ख़तरनाक मात्राएं उत्पन्न करते हैं।

MAADHYAM IAS

ग) अनुसूची -3 (भाग क) की सूचियों 'क' और 'ख' में दिए गए अपशिष्ट, केवल ख़तरनाक अपशिष्टों के आयात और निर्यात के लिए प्रयुक्त होता है यदि उनमें अनुसूची के भाग-ख में दिए गए खतरनाक अभिलक्षण विद्यमान हों।

अनुसूची-3 में आयात और निर्यात के लिए प्रयुक्त अपशिष्टों की संवर्ग के अनुसार विस्तृत सूची दी गई है। अनुसूची -3 के भाग ख में निम्नलिखित 14 खतरनाक अभिलक्षणों की सूची दी गई है :

1) विस्फोटक
2) ज्वलनशील द्रव
3) ज्वलनशील ठोस
4) पदार्थ अथवा अवशिष्ट जिनका सवत: दहन होता है।
5) पदार्थ अथवा अपशिष्ट जो जल के संपर्क में ज्वलनशील गैसों का उत्सर्जन करते हैं।
6) ऑक्सीकारक
7) कार्बनिक परॉक्साइड
8) विष (तीव्र)
9) संक्रामक पदार्थ
10) संक्षारक
11) वायु अथवा जल के संपर्क में आविषालु गैसों का मोचन
12) आविषालु पदार्थ (मंद अथवा तीव्र)
13) पारिस्थितिक आविषालु पदार्थ
14) अन्य पदार्थ उत्पन्न करने वाला, जैसे निक्षालितक, जिसमें ऊपर सूचीबद्ध कोई भी अभिलक्षण हो।

आविषालु पदार्थों की उपस्थिति निष्कर्षण प्रक्रिया द्वारा निर्धारित की जाती है जिसका डिज़ाइन भूमि भराव में होने वाली प्रक्षालन क्रिया को प्रेरित करने के लिए बनाया जाता है।

2003 में संशोधित खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन नियमों में निम्नलिखित अनुसूचियां भी शामिल हैं:

अनुसूची - 4 पुनर्चक्रक के पंजीकरण के लिए अनुप्रयुक्त अलोह धातुओं की सूची (22 अपशिष्ट वर्ग)

अनुसूची - 5 पुन:परिष्करण के लिए उपयुक्त प्रयुक्त तेल के विनिर्देश (13 प्राचल)।

अनुसूची - 6 पुनर्चक्रण के लिए उपयुक्त अपशिष्ट तेल के विनिर्देश (5 प्राचल)।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अनुसूची - 7 प्राधिकारियों की सूची और उनके कार्य।

अनुसूची - 8 आयात और निर्यात के लिए प्रतिबंधित खतरनाक अपशिष्ट (29 अपशिष्ट)।

निर्माण उद्योग, छोटे व्यापारिक उद्यम, घर-परिवार, अस्पताल, अनुसंधान और परीक्षण प्रयोगशालाएं और कृषि उद्योग द्वारा **खतरनाक अपशिष्ट** उत्पादन होते हैं। अनेक उद्योगों में खतरनाक अपशिष्टों के उपचार के लिए विशेष व्यवस्था की जाती है।

घरेलू ठोस अपशिष्टों को कानूनी तौर पर ख़तरनाक के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जाता परंतु उनसे स्वास्थ्य और पर्यावरण संबंधी समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। ऐसे घरेलू पदार्थों में

कीटनाशी, पेन्ट और पेन्ट थिनर, नालियों, अवन और शौचघर के लिए प्रयुक्त सफाई कारक, विरंजक, धातु पालिश, स्वचालन उत्पाद (प्रतिहिम, बैटरी, मोटर तेल और गैसोलीन) आदि शामिल हैं। ऐसे अनेक रासायनिक पदार्थ इकट्ठे होकर पर अपशिष्ट का ढेर लगा देते हैं।

11.8.2 खतरनाक अपशिष्टों का प्रबंधन

खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन की अनेक वैकल्पिक विधियां हैं। वरीयता की दृष्टि से वे इस क्रम में है: i) स्रोत पर अपशिष्ट न्यूनन ii) अपस्थल (offsite) पुनर्चक्रण, पुन:प्राप्ति और पुन: उपयोग iii) उपचार और iv) निपटान। पहली विधि को सर्वाधिक प्रयुक्त किया जाता है। दूसरी और तीसरी विधियों को अपशिष्ट उत्पन्न होने के बाद अवशिष्ट प्रबंधन की वैकल्पिक विधियों के रूप में वरीयता दी जाती है। अंतिम विधि को सबसे कम वरीयता दी जाती है।

i) स्रोत पर अपशिष्ट न्यूनन

यह खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन की सबसे अधिक वरीयता प्राप्त विधि है। इस प्रकार, किसी निर्माण प्रक्रम को डिजाइन करने में उत्पन्न होने वाले अपशिष्ट की, कच्ची सामग्री, ऊर्जा और जल के साथ विवेचना की जानी चाहिए। यथासंभव उन प्रक्रमों को अपनाना चाहिए जिनमें कोई अपशिष्ट उत्पन्न न हों अथवा उत्पन्न अपशिष्ट के साथ कोई परेशानी न हो। अंत में उपचार, संग्रहण अथवा निपटान की सुविधाओं द्वारा यह प्रमाणित होना चाहिए कि उनमें अपशिष्ट कम करने की क्षमता है।

अपशिष्ट न्यूनन की कोई एक समान परिभाषा नहीं है। उदाहरण के लिए, अपस्थल उपचार और पुनर्चक्रण, अपशिष्ट विनिमय और स्रोत उपलब्धि को अपशिष्ट न्यूनन तकनीक माना जाता है। ये तकनीकें अपशिष्ट न्यूनन के मूल सिद्धांत के अनुरूप नहीं हैं जिसका अर्थ अपशिष्ट के उत्पादन को रोकना है।

निम्नलिखित कार्यकलापों से स्रोत पर अपशिष्ट को कम किया जा सकता है।

- संभावित अपशिष्ट का उसी स्थान पर पुनर्चक्रण।
- प्रक्रम, प्रौद्योगिकी और उपस्कर में संशोधन जो अपशिष्ट उत्पादन के प्राथमिक स्रोत में परिवर्तन कर देते हैं।
- संयंत्र प्रचालन में संशोधन, जैसे अच्छा गृह संचालन, उन्नत सामग्री उपयोग और उपस्कर रख-रखाव, प्रक्रम उपस्कर का अच्छा मॉनीटरन और स्वचलन तथा उन्नत अपशिष्ट अनुसरण अथवा संहति संतुलन।
- उत्पादन-प्रक्रम में कच्ची सामग्री के रूप में ऐसे पदार्थों का उपयोग जिनसे खतरनाक पदार्थों की संख्या कम हो अथवा ऐसे पदार्थों की कम मात्रा उत्पन्न हो।
- अन्त्य उत्पादों की पुन:अभिकल्पना अथवा पुन:संरूपण

प्राय: अपशिष्ट न्यूनन पर बहुत कम जोर दिया जाता है। सदैव अपशिष्ट उत्पादन के बाद प्रदूषण नियंत्रित करने का प्रयास किया जाता है। अपशिष्ट न्यूनन के लिए न केवल महंगा संयंत्र फिट करना पड़ता है और संयंत्र के डिजाइन में परिवर्तन करना पड़ता है अपितु लोगों के सोचने और कार्य करने ढंग में भी परिवर्तन करना पड़ता है। इस समय प्रत्येक स्तर पर प्रचलित विधियों को बदलना बहुत कठिन है।

ii) पुनर्चक्रण, पुन:प्राप्ति और अपशिष्ट विनिमय

स्पष्ट है कि पूरे अपशिष्ट-उत्पादन को रोकना असंभव है। इसलिए यथासंभव अपशिष्ट के पुन: उपयोग के लिए पुन:र्चक्रण, पुन:प्राप्ति, अथवा विनिमय करना चाहिए। यह कहना आसान है किन्तु करना कठिन। कुछ विशेष प्रकार के अपशिष्टों का पुनर्चक्रण अथवा उनमें से उपयोगी पदार्थों को प्राप्त करना दूसरे अपशिष्टों की अपेक्षा कठिन होता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

स्रोत पर अपशिष्ट-न्यूनन की अपेक्षा पुनर्चक्रण, पुन:प्राप्ति और विनियम अधिक महंगे होते हैं। यह अतिरिक्त व्यय अंशत: अपशिष्ट के भंडारण और/अथवा परिवहन की अतिरिक्त लागत के कारण होता है। इसके अतिरिक्त इस्तेमाल, संग्रहण, पुनर्चक्रण, पुन:प्राप्ति और विनिमय करते समय छलकने, दुर्घटना होने और पर्यावरण में प्रवेश की संभावना के कारण स्वास्थ्य को खतरा और कानूनी दायित्व भी होते हैं। सभी अपशिष्ट संदूषित नहीं होते हैं तथा अपशिष्ट सरिताओं में पुनर्चक्रण की कठिनाई में बहुत अंतर होता है। खतरनाक अपशिष्टों को निम्नलिखित पांच प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है:

प्रकार I : संवेष्टनों में अनप्रयुक्त व्यापारिक रासायनिक पदार्थ।

प्रकार II : प्रक्रम अपशिष्ट जिनका पूर्व-उपचार के बिना आर्थिक और प्रौद्योगिक दृष्टि से पुनर्चक्रण किया जा सकता है।

प्रकार III : प्रक्रम अपशिष्ट जिनका पूर्व उपचार और शोधन के बाद आर्थिक और प्रौद्योगिक दृष्टि से पुनर्चक्रण किया जा सकता है।

प्रकार IV : प्रक्रम अपशिष्ट जिनका वर्तमान में आर्थिक और प्रौद्योगिक दृष्टि से पुनर्चक्रण नहीं किया जा सकता है।

प्रकार V : अपशिष्ट जिनका पुनर्चक्रण वांछनीय नहीं होता।

उपर्युक्त वर्गीकरण अपशिष्टों को पृथक रखने के महत्व पर बल देता है ताकि उन्हें उत्पादन कार्य में आसानी से दुबारा प्रयोग में लाया जा सके। यह वर्गीकरण, उपचार और पुनः प्राप्ति के लिए उपलब्ध तकनीकों का मूल्यांकन करने पर भी बल देता है।

क) **पुनर्चक्रण :** इसके अंतर्गत औद्योगिक और रासायनिक प्रक्रमों में अपशिष्ट सरिताओं का घटकों के रूप में उपयोग किया जाता है। यह प्रत्यक्ष अथवा अपशिष्ट में उपयोज्य कच्चे माल की आंशिक पुन:प्राप्ति द्वारा किया जाता है। लगभग सभी खतरनाक पदार्थ पुनर्चक्रणीय होते हैं और अनेक मामलों में पुनः प्राप्ति के लिए तकनीकें उपलब्ध हैं। खतरनाक अपशिष्ट के पुनर्चक्रण में अनेक प्रतिबंध हैं। उनमें से एक है- पर्याप्त आर्थिक प्रोत्साहनों का अभाव। जब तक स्रोत पुनः उपयोग की लागत की तुलना में निपटान विधियां सस्ती रहेंगी, पुनर्चक्रण में वृद्धि नहीं होगी। दूसरा प्रतिबंध पुनर्चक्रण केन्द्रों की कमी है। अपशिष्ट पदार्थों को अपेक्षाकृत दूर स्थानों तक परिवहन करना महंगा और छलकने की संभावना के कारण, खतरनाक होता है।

ख) **पुनः प्राप्ति :** अकार्बनिक और कार्बनिक अपशिष्टों के जिन विभिन्न वर्गों में पुन:प्राप्ति की सर्वाधिक संभावना रहती है, वे इस प्रकार हैं :

i) सान्द्र कार्बनिक द्रव अपशिष्टों से ऊर्जा पुनः प्राप्ति, उदाहरणार्थ अपशिष्ट कार्बनिक द्रवों और तेलों का भस्मीकरण।

ii) सान्द्र कार्बनिक द्रव अपशिष्टों से पदार्थों की पुनः प्राप्ति उदाहरणार्थ अपशिष्ट विलायकों का आसवन और पुनः प्राप्ति।

iii) औद्योगिक आपंकों और धातु विद्युत् लेपन अवशिष्टों से धातुओं की पुनः प्राप्ति, उदाहरणार्थ, भुक्त विद्युत् लेपन बैचों से क्रोमियम, ताम्र और निकैल की पुनः प्राप्ति।

ग) **विलायक पुनः प्राप्ति :** विलायक उद्धार प्रक्रम पृथक विलायक के लिए पृथक होते हैं। अपशिष्ट विलायकों में ऐलिफैटिक, ऐरोमेटिक, और हैलोजेनित विलायक, पेन्ट, विग्रीज़न विलायक, फर्श मुद्रापक (floor sealers) यूरिथेन, इपॉक्साइड, यूरिथेन/एपॉक्सी निर्लेपक और फर्नीचर निर्लेपक शामिल हैं। उपचार स्थल पर अपशिष्ट विलायकों का प्रतिदर्श लेकर उनके संघटन की जांच की जाती है। प्ररूपी स्वीकार्य पदार्थ में कम से कम 50 प्रतिशत पुनः प्राप्य होता है और उसमें 20 प्रतिशत से कम ठोस होते हैं जो विलायक के प्रकार और परिवहन लागत पर निर्भर करता है। पदार्थ को विलायक प्रकार के अनुसार पृथक किया जाता है और ग्राही टंकियों में भर दिया जाता है जहां उसका गण प्रक्रमण होता है। प्रक्रमण, विलायक भमके (still) में किया जाता है जिसमें प्ररूपी आसवन यूनिट अथवा पतली परत वाष्पित्र होता है। प्राप्त विलायक को विलायक-प्रकार के अनुसार

MAADHYAM IAS

उत्पाद टंकी में संग्रहित किया जाता है। अधिकतर आसुत को पुनरुद्धार उत्पाद के रूप में बेचा जाता है।

कुछ इकाइयों में विभाजक स्तंभ होते हैं जिनसे पुनर्रचित अथवा परिष्कृत उत्पाद प्राप्त किए जा सकते हैं जो मूल उत्पाद के विनिर्देशों के अनुरूप होते हैं।

घ) **तेल पुन: प्राप्ति :** अपशिष्ट तेलों में ट्रांसफार्मर तेल, उपस्कर तेल, मोटर तेल, कर्तन तेल, विलेय तेल, डीज़ल तेल, गैसोलीन, प्रतिहिम, ब्रेक तरल और हाइड्रॉलिक तेल आते हैं। प्रयोग के बाद तेल खतरनाक, अपशिष्ट नहीं होता है। अधिकांश तेल पुनरुद्धारक केवल बिना खतरे वाले द्रव अपशिष्ट के पुनरुद्धारक के रूप में प्रचालन करते हैं। पुन: प्राप्य अपशिष्ट तेल और तलीय आपंक तथा जल के प्रतिशत ज्ञात करने के लिए अपशिष्ट तेल के प्रतिदर्श लिए जाते हैं। ये अवांछनीय अवयव पुनरुद्धारक के लिए अपशिष्ट तेल का मान कम कर देते हैं।

अपशिष्ट तेल को ग्राही टंकियों में पंप किया जाता है जहां प्रावस्था पृथक्करण आरंभ होता है। तेलीय प्रावस्थ को श्रेणी में रखी उपचार टंकियों में स्थानांतरित किया जाता है जहां निलंबित जल को पृथक करने के लिए अप्रत्यक्ष ऊष्मा और रासायनिक उपचार का संयुक्त रूप से उपयोग किया जाता है। निलंबित ठोसों को पृथक करने के लिए निस्यंदकों का उपयोग किया जाता है। प्राप्त तेल को उत्पाद संग्रहण टंकियों में स्थानांतरित कर दिया जाता है। निस्यंदों को या तो निपटान के लिए पात्रों में एकत्रित किया जाता है अथवा निर्वात् निस्यंदन या निस्यंदन प्रक्रम जैसी निर्जलीकरण युक्ति में प्रक्रमित किया जाता है।

iii) उपचार

इसका तात्पर्य उन गतिविधियों से है जिन्हें निपटान से पहले खतरनाक अभिलक्षणों (जैसे आविषालुता, संक्षारकता, ज्वलनशीलता और अभिक्रियाशीलता), आयतन तथा अपशिष्टों की जटिलता को सीमित करने के लिए किया जाता है। इसलिए उपचार, स्रोत न्यूनन और पुनर्चक्रण अथवा पुन: प्राप्ति तकनीकों को पूरा करने के बाद ही करना चाहिए। विभिन्न उपचार विधियों में अपशिष्ट सरिता के ठोस और द्रव घटक पृथक हो जाते हैं। घटकों के अधिक सान्द्र अथवा शुद्ध होने के कारण उपचार से अपशिष्ट उत्पादक अथवा पुनर्चक्रक द्वारा प्रयोज्य घटक प्राप्त किए जा सकते हैं और इसे पुनर्चक्रण अथवा संसाधन प्राप्ति का प्रक्रम-पद भी माना जाता है। इस दोहरे कार्य से भ्रम पैदा होता है। यह ठीक उसी प्रकार है जैसे अपशिष्ट पुनर्चक्रण, उपचार और पुन: प्राप्ति को भ्रमपूर्वक अपशिष्ट न्यूनन तकनीक माना जाता हैं। वास्तव में अपशिष्ट न्यूनन स्रोत पर ही आरंभ हो जाता है न कि अपशिष्ट के उत्पन्न होने के बाद।

प्रमुख वैकल्पिक उपचार इस प्रकार हैं :

क) **रासायनिक उपचार :** उदासीनीकरण, अवक्षेपण, आयन विनिमय, ऑक्सीकरण/अपचयन, पिंडन/स्थिरीकरण और विक्लोरीनन।

ख) **भौतिक उपचार :** ठोस/द्रव पृथकन प्रक्रम (छानना, अवसादन, प्लवन, निस्यंदन और अवकेन्द्रण), झिल्ली पृथक्करण प्रक्रम (अपोहन (dialysis), उत्क्रम परासरण, सूक्ष्म निस्यंदन और वैद्युत अपोहन), उद्वाष्पन, आसवन/भाप निर्लेपन, विलायक निष्कर्षण और अधिशोषण।

ग) **जैव उपचार :** सक्रियित आपंक, च्यावन निस्यंदन, वातित लैगून, अपशिष्ट स्थिरीकरण ताल और अवायवीय पाचन।

घ) **तापीय उपचार :** निस्तापन, ताप-अपघटन, खुला ज्वलन और भस्मीकरण (उदाहरणार्थ, घूर्णी भट्टा तरलित संस्तर (rotary kiln fluidised bed), बहु हार्थ (multiple hearth) और द्रव अंत:क्षेपण (liquid infection)।

भस्मीकरण को प्रक्रमित की जाने वाली अपशिष्ट सरिता के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, कार्बनिक द्रवों का भस्मीकरण और ऊष्मा को लाभप्रद उपयोगों के लिए पुन:प्राप्त करना **ऊर्जा** अथवा **ऊष्मा उपलब्धि** कहलाता है। दूसरी ओर, अधिकांश ठोसों और अनेक द्रवों के भस्मीकरण को 'उपचार' अथवा प्रक्रमण पद माना जा सकता है क्योंकि वह केवल अपशिष्ट के रूप में आविषालुता को परिवर्तित करता है। अवशिष्ट को इसके बाद भी निपटान की आवश्यकता होती है। अंत में कुछ पदार्थों को धूम और/अथवा भस्म-मुक्त द्रवों और ठोसों में परिवर्तित किया जाता है जिनके आगे उपचार अथवा भस्मीकरण की आवश्यकता नहीं होती है। इस परिवर्तन को निपटान प्रौद्योगिकी में 'चरम' माना जाता है।

iv) निपटान

इसका तात्पर्य अपशिष्ट का भूमि, जल और भौमजल में निपटान है। खतरनाक अपशिष्टों का निपटान से पहले उपचार (उदाहरण के लिए, उदासीनीकरण, गैर विषाक्तन, स्वच्छन, ऑक्सीकरण और आयतन न्यूनन) कर लेना चाहिए। निपटान इस प्रकार किया जाता है :

MAADHYAM IAS

क) **भूमि निपटान :** यह निपटान की अति सामान्य विधि है। इसके अंतर्गत खुले ढेर, पृष्ठ अवरोध, सैनेटरी भूमि भराव, सुरक्षित रासायनिक भूमि भराव और भूमिगत अंत:क्षेपण कुंए आते हैं। खतरनाक अपशिष्टों के प्रबंधन में भूमि भराव और पृष्ठ अवरोध को सबसे कम अपनाया जाता है।

ख) **खुले ढेर :** यह अपशिष्टों के निपटान की सबसे पुरानी विधि है किन्तु यह भूमि भराव की सबसे कम स्वीकार्य विधि है। अपशिष्ट को निधारित स्थल अथवा किसी अप्रयुक्त क्षेत्र जैसे खाली प्लॉट, सरिताएं, गड्ढे, अथवा सड़क के किनारे एकत्रित कर दिया जाता है। अपशिष्टों में, घरेलू कचरे और मरे जानवरों से लेकर कारों का कूड़ा और आविषालु रासायनिक पदार्थ आते हैं। इन अपशिष्टों को जानबूझकर (आयतन कम करने के लिए) अथवा बिना जाने (संयोगवश और स्वत: दहन से) जला दिया जाता है।

खुले ढेरों से पर्यावरण संबंधी समस्याएं पैदा हो जाती हैं। सड़ रहे अपशिष्टों को खुला छोड़ देने से दुर्गन्ध पैदा होती है और वे चूहों, पक्षियों, मक्खियों और अन्य कीटों को आकर्षित करते हैं जो रोगवाहक हैं। इन क्षेत्रों से बहने वाला जल सरिताओं, तालाबों और दलदलों को दूषित कर देता है। कूड़े के ढेर को आग लगाने से वायु प्रदूषित हो जाती है। कूड़े का खुला ढेर देखने में भद्दा लगता है और तेज हवा कूड़े को दूर-दूर तक फैला देती है।

यद्यपि भस्मीकरण की, उपचार अथवा निपटान के लिए, अपशिष्ट प्रबंधन तकनीक के रूप में अपनी सीमाएं हैं किन्तु अपशिष्टों से संबद्ध उत्पादक के संभावित कानूनी दायित्व को सीमित करने के साधन के रूप में इसकी वरीयता बढ़ती जा रही है। इसके कारण और अनुपचारित खतरनाक अपशिष्ट भूमि भराव पर प्रतिबन्ध के कारण खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन के भस्मीकरण प्रक्रम को सर्वाधिक वरीयता दी जाती है।

ग) **पृष्ठ अवरोध :** उन्हें कभी-कभी खुला तालाब और उद्वाष्पन ताल भी कहते हैं। उन्हें भूमि निपटान के लिए अच्छा नहीं माना जाता है। उनका प्रमुख अभिप्राय आयतन न्यूनन (उपचार) अथवा तुरंत निपटान करना है। अवरुद्ध द्रव भारी वर्षा के समय बाहर बह जाते हैं जिससे भूमि, निकटवर्ती पृष्ठीय जल और भौमजल संदूषित हो जाते हैं। खुले तालाबों में विलायक शीघ्र उद्वाष्पित हो जाते हैं और यह निर्धारित करना कठिन होता है कि उत्पन्न आविषालु वायु उत्सर्जन कहां तक जाएंगे। इसके अतिरिक्त इन अवरोधों से रिसाव भी हो सकता है।

सैनेटरी भूमि भराव बिना खतरे वाले ठोस अपशिष्ट के लिए सुनिर्मित, सुनियंत्रित भूमि भराव स्थल होते हैं और पृष्ठ अवरोधों की अपेक्षा बहुत उन्नत होते हैं। अपशिष्टों को फैलाकर कुछ फुट मोटी पर्तों में संहत किया जाता है। दिन में कम से कम एक बार अपशिष्टों को मिट्टी की परत से ढककर पुन: संहत किया जाता है। इससे खुले ढेर से संबंधित समस्याएं जैसे गंध, आग, पवनधमित अपशिष्ट और रोगवाहक, कम हो जाती हैं। सैनेटरी भूमि भरावों से पर्यावरण संबंधी समस्याएं भी पैदा हो सकती हैं। वे रिसाव, गंध, गैस उत्पादन (उदाहरणार्थ वाइनिल क्लोराइड और मेथैन) से बाधा पैदा कर सकते हैं। वे अत्यंत आवश्यक किन्तु हानिकर सुविधाएं हैं।

घ) **सैनेटरी भूमि भराव :** यह कूड़े के खुले ढेर लगाने अथवा जलाने का सर्वाधिक प्रयुक्त विकल्प है।

सैनेटरी भूमि भराव के प्ररूपी अपशिष्टों में घरेलू, कार्यालयी और औद्योगिक अपशिष्ट शामिल हैं। अपशिष्ट सरिता में आपंक अथवा वाहित मल उपचार संयंत्र से प्राप्त ठोस अथवा जानवरों, कृषि और विध्वंस से उत्पन्न अपशिष्ट शामिल हैं। सैनेटरी भूमि भरावों को केवल उन अपशिष्टों के लिए बनाया जाता है जो खतरनाक न हों। किन्तु भूमि भराव के लिए ठोस अपशिष्टों के साथ कुछ खतरनाक अपशिष्ट शामिल भी हो जाते हैं।

पहले, इन स्थलों में घरेलू कूड़े के अलावा घरेलू खतरनाक अपशिष्टों और व्यापारिक औद्योगिक अपशिष्टों (जिसमें खतरनाक अपशिष्ट भी होते हैं), को भूमि भराव द्वारा निपटाया जाता था। परंतु वर्तमान भौमजल संदूषण से संकेत मिलता है कि औद्योगिक (अथवा घरेलू) खतरनाक अपशिष्ट समस्या के स्रोत हैं। अनेक नगरपालिका ठोस अपशिष्ट भूमि भरावों में भी यही स्थिति होती है।

भूमि भरावों द्वारा नगरपालिका (घरेलू) और औद्योगिक (खतरनाक सहित) अपशिष्टों के संयुक्त निपटान के द्वारा जल रक्षण के रासायनिक भूमि भरावों की तुलना में लाभ हैं। स्थल के अनुभव से ज्ञात होता है कि नगरपालिका अपशिष्ट भूमि भराव के अंदर रासायनिक और भौतिक रासायनिक अभिक्रियाएं, निक्षेपित अपशिष्टों के संभावित खतरों को रोक सकती हैं अथवा बहुत कम कर सकती हैं। संयुक्त निपटान स्थलों के अन्वेषण से ज्ञात हुआ है कि नगरपालिका अपशिष्ट, तेल और हैलोजनित हाइड्रोकार्बन जैसे अन्य

MAADHYAM IAS

कार्बनिक पदार्थों का अवशोषण और धारण कर सकते हैं। फ़ीनॉल उत्क्रमणीयत: अवशोषित और पर्याप्त निम्नीकृत हो जाते हैं किन्तु भारी धातुएं विलेयीकृत नहीं होती हैं।

यद्यपि ऐसी प्रक्रिया के कुछ लाभ होते हैं किन्तु ऐसे अज्ञात अपशिष्ट-मिश्रणों से होने वाली रासायनिक अभिक्रियाओं की प्रागुक्ति करना कठिन है। यह मानना भी तर्कसंगत है कि भूमि भराव में मिश्रित होने वाले अनेक पदार्थों की पारस्परिक क्रिया से अनजाने कुछ नए खतरनाक अपशिष्ट बन जाएँ। यह भी संभव है कि कार्बनिक पदार्थों का यह निम्नीकरण जैव उपचार में पाए जाने वाले बैक्टीरिया अथवा सूक्ष्मजीवों की क्रिया के कारण होता है। यदि ऐसा हो तो अपशिष्टों के जैव निम्नीकरण को बढ़ावा देने के लिए अधिक नियंत्रित स्थितियां प्रदान करनी चाहिए। ऐसे जैवनिम्नीकरण परम्परागत भूमि भरावों की सीमाओं के बाहर किए जा सकते हैं। अपितु यह समझदारी होगी कि खतरनाक अपशिष्ट भूमिभरावों का डिजाइन साधारण सैनेटरी भूमिभराव के समान न होकर अलग होना चाहिए।

ङ) **खतरनाक अपशिष्ट भूमि भराव :** स्वीकृत भूमि भराव (Secure Land Fills, SLF) जिन्हें कभी-कभी सुरक्षित **रासायनिक अपशिष्ट भूमि भराव** भी कहते हैं, खतरनाक अपशिष्टों के मान्य संग्रह-स्थल हैं। वे सावधानीपूर्वक मिट्टी के उत्खनन से निर्मित किए जाते हैं। इनमें खतरनाक अपशिष्टों को संग्रह करने के साथ-साथ उन्हें निक्षालन द्वारा भौमजल में अथवा उद्‌वाष्पन द्वारा पर्यावरण में मुक्त नहीं होने दिया जाता है। सुरक्षित भूमि भरावों में, स्थान और प्रचालन आवश्यकताओं का ध्यान रखा जाता है। इन्हें बनाने के लिए पृष्ठीय और भौमजल को मानीटर किया जाता है और बाढ़ तथा भूकंप संवेदी क्षेत्रों, दलदली भूमि और ऐतिहासिक स्थानों को छोड़ दिया जाता है। द्रव खतरनाक अपशिष्ट निक्षालितक (leachate) अपशिष्ट को भूमि भराव से बाहर जाने से रोकने के लिए सुरक्षित भूमि भराव में दोहरे नियंत्रण नियम का उपयोग किया जाता है। भूमि भराव में अपशिष्टों और निक्षालितकों को रोकने के लिए अपारगम्य मृदा, मृत्तिका और संश्लिष्ट नम्य (flexible) झिल्ली लाइनरों का उपयोग किया जाता है। विदारण (tears), संवेधन (puncture) आदि भौतिक क्षति को रोकने के लिए संश्लिष्ट लाइनर के ऊपर अतिरिक्त मृदा-पर्त मिलाई जा सकती है। तलीय मृत्तिका पर्त और संश्लिष्ट लाइनर के बीच मॉनीटरन और निक्षालतक संग्रह तंत्र रखा जाता है। अतिरिक्त सुरक्षा के लिए पहली पर्त के ऊपर मृत्तिका, संश्लिष्ट लाइनर और निक्षालतक मॉनीटरन तंत्र रखा जाता है।

देशभर में ठोस अपशिष्ट भूमि भरावों की संख्या और उन स्थलों के खतरनाक अपशिष्ट से संबंधित संभावित स्वास्थ्य संकट एक चिन्ता का विषय है। खतरनाक अपशिष्ट भूमि भराव और बिना खतरे वाले ठोस अपशिष्ट भूमि भराव में केवल कोटि का अंतर है। सभी भूमि भरावों में रिसाव हो सकता है इसलिए वायु और जल में खतरनाक अपशिष्ट के लिए सभी ठोस अपशिष्ट स्थलों का परीक्षण नियमित रूप से करने की आवश्यकता है।

निक्षालतक को संग्रहण स्थलों से जोड़ने के लिए निक्षालतक संग्रहण तंत्र को भूमि भराव में बनी नालियों और पाइपों से संयुक्त कर दिया जाता है। यह मानते हुए कि भूमि भराव द्रव अपशिष्टों को स्वीकृत नहीं करता है, निक्षालतक संग्रहण तंत्र में द्रवों की उपस्थिति से सुविधा के असफल होने का संकेत मिलता है जो काम करने वाले को सचेत कर देता है। इसके बाद निक्षालतक को खाली कर देना चाहिए और पदार्थ के भूमि भराव में जाने से पहले आवश्यक मरम्मत कर लेनी चाहिए। पदार्थ या तो अधोगामी मार्ग से सीधे नीचे भौमजल में चला जाता है अथवा भूमि भराव के किनारों के टूटने से निकल जाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

भूमि भराव में स्थित मॉनीटरन और संग्रहण तंत्रों के अतिरिक्त भौमजल परिवर्तनों के परीक्षण के लिए सुविधा के बाहर मानीटरन कुओं को भी रखा जाता है जिससे संकेत मिल सकता है कि सुविधा द्वारा पदार्थ का पर्यावरण में रिसाव हो रहा है या नहीं। सुविधा से खतरनाक उत्सर्जनों की पहचान करने के लिए भूमि भराव के निकट वायु प्रदूषण मॉनीटर भी रखे जाते हैं।

च) **भूमिगत अंत:क्षेपण :** इसका उपयोग तेल क्षेत्र अपशिष्टों लिए किया जाता है। अब इस तकनीक का उपयोग अन्य अपशिष्टों के निपटान के लिए भी किया जा रहा है। भूमिगत गभीरकूप अंत:क्षेपण प्रक्रम (underground deepwell injection process) में अपशिष्टों का अंत:क्षेपण कुओं के द्वारा भू-पृष्ठ से कई किलोमीटर नीचे सरंध्र चूना पत्थर, बालू पत्थर के शैलसमूह में किया जाता है। गभीरकूप अंत:क्षेपण के आलोचक कहते हैं कि अधोपृष्ठ स्थितियों की सही जानकारी के अभाव में और अपारगम्य भू-वैज्ञानिक पर्तों के अंदर अपशिष्टों की संभावित अभिक्रिया, इस निपटान क्रिया को प्रतिबाधित करते हैं।

छ) **भूमि निपटान तकनीकों का अवलोकन :** ऊपर वर्णित भूमि निटान तकनीकों में केवल अस्वीकार्यता की मात्रा में भिन्नता है। खतरनाक अपशिष्ट का भूमि निपटान कोई स्थायी हल नहीं हैं। आलोचक यह मानते हैं कि भूमि-निपटान, संग्रहण की दूसरी विधि है जिसमें अपशिष्टों को केवल एक स्थान से दूसरे स्थान में स्थानांतरित कर दिया जाता है। भूमि-निपटान से सुरक्षा का गलत आभास मिलता है और लगता है कि अपशिष्ट की समस्या हल हो गई है। सुरक्षित भूमि भराव भी समय के साथ असफल हो जाते हैं। जिन अपशिष्टों में डाइऑक्सिन अथवा समान यौगिक होते हैं उनका भूमि निपटान तब तक नहीं करना चाहिए जब तक उनकी आविषालुता कम न कर दी गई हो। यह निषेध, आमतौर पर प्रयुक्त विलायकों जैसे ऐसीटोन, कार्बन टेट्राक्लोराइड, ट्राई- और टेट्राक्लोरो एथिलीन, मेथैनॉल, टॉलूईन और ज़ाइलीन के लिए लागू होता है। सान्द्र और डाइऑक्सिन अपशिष्टों के लिए आजकल उपलब्ध सबसे प्रभावकारी उपचार उच्चताप भस्मीकरण है। अन्य तकनीकों में वायु निर्लेपन, गण आसवन, जैव उपचार, कार्बन अधिशोषण और पतली पर्त उद्वाष्पन शामिल हैं।

बोध प्रश्न

14) खतरनाक अपशिष्ट के अभिलक्षण बताइए।

....

....

....

15) खतरनाक अपशिष्ट के प्रभाव को स्रोत पर ही कम करने के क्रिया-क्लाप का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

16) खतरनाक अपशिष्ट के लिए उपचार विकल्पों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

11.9 सारांश

इस इकाई में जिन विषयों की चर्चा की गई, आइए, उन पर संक्षेप में विचार करें।

- उपयोग के बाद उद्योगों से मुक्त संदूषित जल को **औद्योगिक बहि:स्राव** कहते हैं। उसकी गुणता भौतिक-रासायनिक प्राचलों द्वारा मापी जाती है।

- गुणता में सुधार लाने के लिए विसर्जन से पहले अपशिष्ट का उपचार किया जाता है। निलंबित पदार्थों को नि:सादन, प्लवन और निस्यंदन द्वारा पृथक किया जाता है। कुछ उपचार-प्रक्रमों में ऊष्मा उपचार, शीतलन और ताप नियंत्रण की भी आवश्यकता होती है। रासायनिक अभिक्रियाएँ जैसे ऑक्सीकरण, अपचयन और अवक्षेपण आदि, रासायनिक उपचार का आधार होती हैं। जिन अपशिष्टों में विलेय कार्बनिक पदार्थ उपस्थित होते हैं उनके उपचार के लिए वायवीय और अवायवीय जैव उपचार प्रक्रमों का उपयोग किया जा सकता है। उपचारित बहि:स्रावों को जल निकायों में अथवा भूमि में विसर्जित किया जाता है।

- **डेरी** द्वारा प्रक्रमित उत्पादों में तरल उत्पाद, वसाहीन शुष्क दूध पाउडर, पनीर और कम विकृत होने वाले उत्पाद होते हैं। डेरी के अपशिष्ट जल में अत्यधिक कार्बनिक पदार्थ और नाइट्रोजन तथा फॉस्फोरस जैसे पोषक होते हैं। डेरी अपशिष्ट की उपचार विधि में वातन अथवा संशोधित संक्रियित आपंक, च्यावन निस्यंदक और भूमि अनुप्रयोग शामिल हैं। कुछ सीमा तक लैगूनन भी प्रभावकारी होता है। चूना और फेरस सल्फेट के उपयोग वाले रासायनिक उपचार को भी प्रयुक्त किया जाता है किन्तु यह विधि सस्ती नहीं है।

- **परिष्करणशालाएं** और **पेट्रोरसायन** उद्योग से विसर्जित अपशिष्ट जल में अमिश्रणीय तेल, विलायक, उच्च बी. ओ. डी. और पर्याप्त ठोस होते हैं। अपशिष्ट उपचार और बहि:स्राव निपटान विधियों में i) अंत: संयंत्र प्रक्रियाएं ii) निर्लेपन और ऑक्सीकरण iii) दहन iv) विलायक निष्कर्षण v) उत्तम गृह संचालन vi) अन्त्य उपचार vii) गुरूत्व पृथक्करण viii) रासायनिक ऊर्णन xi) संलयन x) वायु प्लवन xi) जैव ऑक्सीकरण xii) रासायनिक ऑक्सीकरण xiii) अंतिम अपशिष्ट जल उपचार xiv) भूमिगत निपटान xv) तनुकरण और xvi) उद्वाष्पन तथा समुचित आपंक निपटान आते हैं।

- विभिन्न भागों से प्राप्त वस्त्र-उद्योग अपशिष्टों के गुणधर्मों में बहुत अंतर होता है। एकीकृत सूती वस्त्र संयंत्र से प्राप्त संयुक्त अपशिष्ट में अनेक प्रकार के रासायनिक पदार्थ होते हैं। अपशिष्ट न्यूनन, निरोध और पुन: उपयोग क्रियाओं से पदार्थों की बचत होती है तथा अपशिष्ट विसर्जन की मात्रा कम हो जाती है। अपशिष्ट के उपचार के लिए भौतिक, रासायनिक और जैव विधियों का उपयोग किया जाता है। भौतिक और रासायनिक विधियों में i) संपृथकन ii) लैगूनन और संग्रहण iii) चालन (छानना) iv) यांत्रिक निस्यंदन v) विरचन और पश्चवातन vi) उदासीनीकरण vii) रासायनिक अवक्षेपण और viii) रासायनिक ऑक्सीकरण आते हैं। च्यावन निस्यंदक, सक्रियित आपंक और ऑक्सीकरण सरोवरन उपचार के लिए प्रयुक्त जैव रासायनिक विधियां आती हैं। ऑक्सीकरण ताल में पॉलिशन के साथ च्यावन निस्यंदक सबसे अधिक प्रभावी उपचार विधि है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

- **लुगदी** और **कागज उद्योग** बहि:स्रावों के प्रमुख प्रदूषक निलंबित द्रव्य और घुले कार्बनिक पदार्थ होते हैं। इस उद्योग में बहुत अधिक जल की आवश्यकता होती है जिससे बहि:स्राव की बहुत अधिक मात्रा मुक्त होती है। निलंबित पदार्थों में मुख्यत: रेशे, रेशा-कचरा, पूरक और विलेपक पदार्थ होते हैं जिन्हें सेव-ऑल द्वारा अलग किया जाता है। जो ठोस पदार्थ नि:सादनीय नहीं होते हैं उन्हें नि:सादनीय बनाने के लिए स्कंदक अथवा स्कंदन सहायक

(जैसे पॉलिइलेक्ट्रोलाइट) मिलाए जाते हैं। कार्बनिक पदार्थों के न्यूनन के लिए स्थायीकरण बेसिन, च्यावन निस्यंदक और सक्रियित आपंक उपचार का उपयोग किया जाता है। भूमि पर बहि:स्रावों का निपटान बड़े पैमाने पर नहीं हो सकता है।

- **चर्म संस्कारशाला अपशिष्ट** मुख्यत: जलवाहित होते हैं। उसमें उच्च बी. ओ. डी., निलंबित ठोस, विलेय पदार्थ, रंग और गंध होते हैं। संदूषकों की मात्रा और सान्द्रता के कारण अपशिष्ट को उपचार किए बिना सीधे सरिता में विसर्जित करना संभव नहीं होता है। विभिन्न विभागों से प्राप्त अपशिष्ट के pH में बहुत भिन्नता होती है। सभी चर्म संस्कारशाला विसर्जनों को एक साथ मिश्रित करना, pH समंजन और अंतत: बी. ओ. डी. और ठोसों के नियंत्रण का सबसे सस्ता और व्यवहार्य हल है। बहि:स्रावों का प्राथमिक उपचार किया जाता है जिसके अंतर्गत छानना, नि:सादी बेसिन और लैगून आते हैं। कुछ मामलों में द्वितीयक उपचार भी किया जाता है जिसमें जैव ऑक्सीकरण और नि:सादन आते हैं।

- **खतरनाक अपशिष्ट** किसी औद्योगीकृत समाज के अनिवार्य उपोत्पाद होते हैं। मानव स्वास्थ्य अथवा पर्यावरण को पर्याप्त क्षति पंहुचाने वाले किसी भी अवशिष्ट को खतरनाक अपशिष्ट कहते हैं। यदि कोई अपशिष्ट, विस्फोटक, ज्वलशीन, संक्षारक, ऑक्सीकारक, तीव्र विष, संक्रामक, आविषालु आदि एक अथवा अधिक गुणधर्म को प्रदर्शित करता है तो उसे खतरनाक अपशिष्ट कहते हैं। खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन की विधियों में स्रोत पर अपशिष्ट न्यूनन, स्थल से दूर पुनर्चक्रण, पुन: प्राप्ति अथवा पुन: उपयोग, उपचार और निपटान शामिल हैं। प्रमुख वैकल्पिक उपचार, रासायनिक, भौतिक, जैव और तापीय उपचार हैं। जिस तापीय उपचार में भस्मीकरण तकनीक का उपयोग किया जाता है, वह खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन की सबसे उत्तम तकनीक है। उपचारित खतरनाक अपशिष्टों का निपटान भूमि मे किया जाता है, किन्तु यह स्थायी हल नहीं है। यह अपशिष्टों का केवल एक स्थान से दूसरे स्थान में स्थानांतरण है।

11.10 अंत में कुछ प्रश्न

1) औद्योगिक बहि:स्रावों की जैव उपचार विधियों का वर्णन कीजिए।
2) डेरी अपशिष्ट के उपचार पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
3) पेट्रोरसायन उद्योग से प्राप्त आपंकों के निपटान की विधियों का वर्णन कीजिए।
4) वस्त्र उद्योग से प्राप्त बहि:स्राव के उपचार की च्यावन निस्यंदन प्रक्रम की क्रियाविधि की व्याख्या कीजिए।
5) कागज और लुगदी बहि:स्रावों से प्राप्त कार्बनिक पदार्थों के न्यूनन के लिए प्रयुक्त स्थायीकरण बेसिनों के उपयोग पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
6) चर्म संस्कारशाला अपशिष्ट उपचार पद्धति का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
7) खतरनाक अपशिष्ट निपटान की रूपरेखा प्रस्तुत कीजिए।

MAADHYAM IAS

11.11 उत्तर

बोध प्रश्न

1) अपशिष्ट जल के अध्ययन में आमतौर पर प्रयुक्त भौतिक रासायनिक प्राचल इस प्रकार है: i) कुल निलंबित ठोस ii) नि:सादनीय ठोस iii) कुल घुले ठोस iv) आविलता v) तेल

vi) रंग vii) स्वाद viii) गंध ix) अम्लता x) क्षारीयता xi) *pH* xii) क्लोराइड xiii) कठोरता xiv) पृष्ठ सक्रियक xv) अकार्बनिक धनायन और ऋणायन xvi) रेडियोऐक्टिवता xvii) घुली ऑक्सीजन xviii) जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता और xix) रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता।

2) प्रदूषण नियंत्रण के अंत:संयंत्र उपाय इस प्रकार हैं :

   i) **प्रक्रम परिवर्तन** : इसके लिए नई तकनीकों को अपनाया जाता है जिनसे कम प्रदूषण उत्पन्न होता है।

   ii) **पदार्थ पुन: प्राप्ति** : उत्पादों और उपोत्पादों को या तो अपशिष्टों से प्राप्त किया जाता है अथवा अपशिष्ट सरिता में प्रविष्ट करने से पहले उन्हें रोक लिया जाता है।

   iii) **जल पुन: उपयोग** : उपचार के बाद अपशिष्ट जल का पुन: उपयोग किया जाता है। कभी-कभी उपचारित अपशिष्ट जल का उपयोग सिंचाई अथवा उद्योग के चारों ओर हरित क्षेत्र के विकास के लिए किया जाता है।

   iv) **अपशिष्ट जल संग्रहण** : अंतिम उपचार को आसान करने के लिए अपशिष्टों को अलग से एकत्रित किया जाता है। विषालु अपशिष्टों को अलग से एकत्रित किया जाता है। आंशिक उदासीनीकरण के लिए अम्लीय और क्षारीय अपशिष्टों को परस्पर मिलाया जाता है।

3) कणिकीय पदार्थों को पृथक करने के लिए साधारणतया नि:सादन, प्लवन और निस्यंदन तकनीकों का उपयोग किया जाता है। नि:सादन के लिए अपशिष्ट जल को पूर्व निर्धारित अवधि के लिए एक विशेषरूप से निर्मित टंकी में रखा जाता है। भारी निलंबित कण, आपंक के रूप में नीचे बैठ जाते हैं जिसे खुरच कर निकाल लिया जाता है। जल से हल्के कण ऊपर की ओर जाते हैं जिन्हें मथित्र द्वारा निकाल लिया जाता है। जिन कणों का घनत्व जल से कम अथवा उसके बराबर होता है वे नि:सादित नहीं होते हैं। किन्तु अपशिष्ट में वायु के छोटे-छोटे बुलबुले प्रविष्ट करने से ये कण ऊपर को उठते हैं। इस गुणधर्म का प्लवन प्रक्रम में उपयोग किया जाता है। बुलबुले और ठोस अथवा तेल उठकर ऊपरी सतह पर चले जाते हैं जिन्हें मंथन द्वारा निकाल लिया जाता है। उपचारित बहि:स्राव से कणों को पृथक करने के लिए निस्यंदन किया जाता है। स्थूल कणों को पृथक करने के लिए अपशिष्टों को चालनी में से प्रविष्ट किया जाता है।

4) उनके अंतर्गत संघनन के लिए प्रशीतन पद्धति, पास्चुरीकृत उत्पोत्पाद के लिए पूर्व शीतलन पद्धति, प्रक्षाल और धावन जल, उच्छलन, रिसाव, अधिवाह, अप्रयुक्त उपोत्पाद तथा विकृत और क्षतिग्रस्त कच्चा अथवा निर्मित उत्पाद आते हैं।

5) इस तंत्र में एक वातन टंकी होती है जिसमें वायवीय सूक्ष्मजीव विकसित किए जाते हैं। कार्बनिक पदार्थ वाले अपशिष्ट को. टंकी में डाला जाता है और ऑक्सीजनयुक्त ताजी हवा प्रविष्ट की जाती है। इस प्रकार, सूक्ष्मजीवों की वृद्धि और पुनरुत्पादन के लिए उपयुक्त परिस्थिति तैयार की जाती है जिससे अपशिष्ट में कार्बनिक मात्रा कम हो जाती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

6) इनमें तेल शामिल है जो पृथक्करणीय, पायसित अथवा विलेय होते हैं। साथ ही अम्ल, क्षार, सल्फाइड, मर्कैप्टन, अमोनिया, फीनॉल और निलंबित ठोस होते हैं।

7) ए. पी. आई. पृथकित्र एक गुरूत्व पृथकित्र है जिसे अमरीकन संस्थान ने निर्मित किया था। मूलत: यह बड़ी आयताकार टंकी होती है जिसे अपशिष्ट जल प्रवाह को मंद करने के लिए बनाया जाता है ताकि तेल की बूंदें धीरे-धीरे उठकर टंकी की लंबाई के साथ

अपशिष्ट जल के पृष्ठ पर आ जाएं। इस प्रकार, तेल, पृष्ठ पर एकत्रित हो जाता है और भारी ठोस पैंदे पर नि:सादित हो जाते हैं। तेल-मंथन और अधस्तल आपंक खुरचन समय-समय पर किए जाते हैं।

8) उनमें स्टार्च, डेक्सट्रिन, गोंद, ग्लूकोस, मोम, पेक्टिन, ऐल्कोहॉल, वसा अम्ल, ऐसीटिक अम्ल, साबुन, अपमार्जक, सोडियम हाइड्रॉक्साइड, कार्बोनेट, सल्फाइड, सल्फेट, क्लोराइड, रंजक और वर्णक, कार्बोक्सीमेथिल सेलुलोस, जिलेटिन, रंजक-वाहक (फ़ीनॉल और बेन्ज़ोइक अम्ल), परॉक्साइड और क्लोरीन विरंजक शामिल हैं।

9) इससे बहि:स्राव के अभिलक्षणों का समकरण हो जाता है जिससे प्रदूषण भार में भिन्नता समाप्त हो जाती है। वातन-युक्त अथवा वातन-रहित ऑक्सीकरण ताल सर्वोत्तम प्रभावकारी लैगून होते हैं। वातन से गंध और प्रदूषण अभिलक्षण कम करने में सहायता मिलती है।

10) i) बहि:स्रावों में निलंबित पदार्थ और घुले कार्बनिक पदार्थ होते हैं। निलंबित पदार्थ ग्राही सरिताओं में अधस्तल निक्षेप बनाते हैं और घुले कार्बनिक पदार्थ जलीय जीवन के लिए हानिकर होते हैं और दिखने में अच्छे नहीं लगते तथा उनके अपघटन से दुर्गंध पैदा होती है।

ii) रेशेदार कूड़ा, निस्यंदक और विलेपक पदार्थ आदि अत्यधिक परिक्षेपित ठोसों के विसर्जन से सरिता अपारदर्शी हो जाती है जिसमें प्रकाश वेधन कम होने से स्वत: शोधन रुक जाता है।

iii) घुले काष्ठ सुपर (super) घुली ऑक्सीजन का ह्रास कर देते हैं और आपंक (slime) जीवों की वृद्धि को प्रेरित करते हैं जिससे जैव असंतुलन हो जाता है।

iv) लिग्निन और टैनिन के कारण विरंजन हो जाता है।

v) रेजिन अम्ल, साबुन और मर्केप्टैन की उच्च सान्द्रता जलीय जीवन के लिए आविषालु होती है।

11) ठोसयुक्त अपशिष्टों में रेशे, रेशेदार कचरा तथा मृत्तिका, कैल्सियम कार्बोनेट, टाइटेनियम डाइऑक्साइड आदि पूरक और विलेपक पदार्थ होते हैं। इन पदार्थों को बहि:स्रावों से 'सेव-ऑल' प्रक्रमों द्वारा पृथक किया जाता है जिनमें छानना, निस्यंदन, नि:सादन अथवा प्लवन युक्तियां प्रमुख हैं और तत्पश्चात पुन: उपयोग के लिए तंत्र में भेज दिया जाता है। ठोस युक्त अपशिष्ट के उपचार का सामान्य प्रक्रम अवसादन है। कभी-कभी प्लवन और निस्यंदन का उपयोग भी किया जाता है।

MAADHYAM IAS

12) चर्म संस्कारशाला अपशिष्ट में उच्च बी. ओ. डी., निलंबित ठोस, विलेय पदार्थ, रंग और गंध होते हैं। उसमें त्वचा ऊतकों के छोटे-छोटे टुकड़े, विलेय प्रोटीन, बाल, रुधिर, धूल अथवा मैल, खाद, मिट्टी, लवण और चूना तथा साथ में सल्फाइड, सल्फहाइड्रेट, ऐमीन, क्रोम और वनस्पति चर्म संस्कारक, शर्करा स्टार्च, तेल, वसा, अम्ल, क्षार, रंजक और वर्णक होते हैं।

13) चर्म संसाधन में होने वाली रासायनिक अभिक्रियाओं के pH में विविधता होती है जो उच्च अम्लता से लेकर उच्च क्षारकीयता तक होती है। इस प्रकार, विभिन्न यूनिटों से प्राप्त बहि:स्राव का pH और कार्बनिक मात्राएं भिन्न होती हैं। अम्लीय द्रावों (pickle liquors) का pH 2 अथवा उससे भी कम होता है जबकि चूना द्रावों का जिसमें सल्फाइड और ऐमीन होते हैं, pH 13 तक होता है। सभी बहि:स्रावों को एक साथ मिलाने से pH का

मान लगभग उदासीन ($pH=7$) हो जाता है। इससे उन रासायनिक पदार्थों की कीमत में बचत हो जाती है जिन्हें उदासीनीकरण के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इसलिए सभी बहि:स्रावों को मिलाना, चर्मसंस्कार अपशिष्ट के उपचार के लिए अधिक व्यावहारिक और सस्ता उपाय है।

14) यदि कोई अपशिष्ट विस्फोटक, ज्वलनशील, संक्षारक, ऑक्सीकरण, तीव्र विषैला, संक्रामक, आविषालु आदि हो तो वह खतरनाक कहलाता है।

15) सर्वाधिक वांछनीय खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन विकल्प है- स्रोत पर अपशिष्ट को उत्पन्न न होने देना अथवा उसकी मात्रा में कमीं करना। यदि संभव हो तो अपशिष्ट उत्पन्न न करने वाले प्रक्रमों को अपनाना चाहिए। स्रोत पर अपशिष्ट न्यूनन का अर्थ है- ऐसी वैकल्पिक तकनीकों को अपनाना जिसमें अपशिष्ट की बहुत कम मात्रा उत्पन्न हो। स्रोत पर अपशिष्ट कम करने वाली पांच प्रकार की गतिविधियां इस प्रकार हैं :

i) संभावित अपशिष्ट का यथास्थान पुनर्चक्रण।

ii) प्रक्रम तकनीकों और उपस्कर में सुधार जो अपशिष्ट उत्पादन के प्राथमिक स्रोत में परिवर्तन कर देते हैं।

iii) संयंत्र प्रचालन में सुधार। उदाहरणार्थ उत्तम गृह संचालन, उन्नत सामग्री प्रयोग और उपस्कर रख-रखाव, प्रक्रम उपस्कर का अच्छा मानीटरन और स्वचालन तथा उन्नत अपशिष्ट अनुगमन अथवा संहति संतुलन।

iv) बदले में ऐसे कच्चे पदार्थों का उपयोग करना जो खतरनाक पदार्थों को कम मात्रा में उत्पन्न करें अथवा उत्पादन प्रक्रम में ऐसे पदार्थों की अल्प मात्राएं उत्पन्न करना।

v) अन्त्य उत्पादों का पुनर्निर्माण।

16) उपचार का अर्थ है- ऐसी गतिविधियां जो निपटान से पहले अपशिष्टों के खतरनाक अभिलक्षणों, आयतन और जटिलता को सीमित करें। सामान्य उपचार विकल्प इस प्रकार हैं :

i) रासायनिक उपचार जिसके अंतर्गत उदासीनीकरण, अवक्षेपण, आयन विनिमय, ऑक्सीकरण/अपचयन, पिंडन स्थिरीकरण और विक्लोरीनन आते हैं।

ii) भौतिक उपचार जिसके अंतर्गत ठोस द्रव/द्रव पृथक्करण प्रक्रम, झिल्ली पृथक्करण प्रक्रम, अतिसूक्ष्म निस्यंदन, वैद्युत अपोहन, उद्वाष्पन, आसवन, सरिता निर्लेपन, विलायक निष्कर्षण और अधिशोषण आते हैं।

iii) जैव उपचार जिसमें सक्रियित आपंक, च्यवन निस्यंदक, वातित लैगून, अपशिष्ट स्थिरीकरण ताल और अवायवीय पाचन शामिल हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

iv) तापीय उपचार जिसमें निस्तापन, ताप-उपघटन, खुले स्थान में जलना और भस्मीकरण आते हैं।

इन प्रक्रमों में भस्मीकरण सबसे अधिमत तकनीक है।

अंत में कुछ प्रश्न

1) जिन औद्योगिक बहि:स्रावों में कार्बनिक पदार्थों की सान्द्रता कम होती है उनका केवल भौतिक अथवा रासायनिक विधियों द्वारा उपचार करना कठिन होता है। किन्तु उन पर

वायवीय सूक्ष्मजीव आक्रमण कर सकते हैं। सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के लिए नाइट्रोजन और फ़ॉस्फ़ोरस पोषकों की आवश्यकता होती है। कार्बनिक घटकों को उपापचयी प्रक्रमों द्वारा नष्ट किया जाता है जिससे हानिरहित पदार्थ प्राप्त होते हैं। वायवीय प्रक्रमों में अधिकांश कार्बन, कार्बन डाइऑक्साइड के रूप में; हाइड्रोजन, जल के रूप में; और नाइट्रोजन और सल्फर क्रमश: नाइट्रेट आयन अथवा नाइट्रोजन गैस तथा सल्फेट आयन के रूप में पृथक हो जाते हैं। कुछ अपशिष्ट, सूक्ष्मजीवों में कोशिका-ऊतक के रूप में और शेष आपंक के रूप में प्राप्त होता है।

बहि:स्राव के वायवीय उपचार के लिए च्यावन निस्यंदक, सक्रियित आपंक और लैगून उपचार पद्धतियां प्रयुक्त की जाती हैं। ये पद्धतियां घुली ऑक्सीजन की उपस्थिति में सूक्ष्मजीवों द्वारा कार्बनिक पदार्थों के ऑक्सीकरण के नियम के अनुसार काम करती हैं। कुछ मामलों में अवायवीय सूक्ष्मजीव प्रभावी उपचार करते हैं। कार्बनिक द्रव्य का वायवीय ऑक्सीकरण की अपेक्षा अवायवीय निम्नीकरण मंद गति से होता है। अवायवीय प्रक्रम में कार्बनिक द्रव्य का मेथैन और कार्बन डाइऑक्साइड में गैसीकरण हो जाता है।

2) डेरी अपशिष्ट के बहि:स्राव में कार्बनिक पदार्थ अधिक मात्रा में विद्यमान रहते हैं जो कोलॉइडी और घुली अवस्था में होते हैं। अत: उपचार के लिए जैव ऑक्सीकरण को वरीयता दी है। अवशिष्ट को आरंभ में बालू और कंकड़ों को पृथक करने के लिए ग्रिट कक्ष में प्रविष्ट किया जाता है। ग्रिट कक्ष से प्राप्त बहि:स्राव को समकारी टंकी में भेजा जाता है। प्रवाह धारण करने के लिए टंकी को पर्याप्त धारिता होती है तथा अपशिष्ट को समान दर से निकाल लिया जाता है। टंकी में विसारित्र द्वारा वायु प्रविष्ट की जाती है ताकि अपशिष्ट, पूतिक न हो जाए।

   डेरी अपशिष्टों के लिए सबसे प्रभावी उपचार पद्धतियों में कार्बनिक घटकों को जैवरसायनत: ऑक्सीकृत करने के लिए पर्याप्त ऑक्सीजन मिलनी चाहिए। विस्तृत रूप में प्रयुक्त उपचार पद्धतियाँ वातन अथवा संशोधित सक्रियित आपंक च्यावन निस्यंदक और सिंचाई हैं। कुछ मामलों में लैगूनों का उपयोग भी किया जाता है।

3) पेट्रोरसायन उद्योग से प्राप्त प्रत्येक आपंक अर्थात् तैलीय, तेलमुक्त, रासायनिक उपचार, में से प्रत्येक के पृथक अभिलक्षण होते हैं और निपटान के लिए विशेष विधि की आवश्यकता होती है।

   i) **तैलीय आपंकों** में तैलीय ठोसों के जल में बने कर्दम होते हैं जिन्हें अपकेन्द्रण द्वारा गाढ़ा बनाया जाता है और फिर सुदूर क्षेत्र में निपटान अथवा भस्मीकरण कर दिया जाता है।

   ii) **तेल मुक्त आपंकों** को अपकेन्द्रण द्वारा गाढ़ा और निर्जलीकृत किया जाता है। निर्जलीकृत ठोसों का भूमि भराव के रूप में निपटान किया जाता है।

   iii) **रासायनिक आपंकों** में उपयोगी रसायन होते हैं जिन्हें विशिष्ट उपचार द्वारा पृथक किया जाता है। अवशिष्टों को सुखाकर भूमि में दबा दिया जाता है।

   iv) **जैव-उपचार आपंक**, जैव उपचार यूनिटों से प्राप्त होते हैं और उनका अवायवीयत: पाचन किया जाता हैं अवशिष्ट आपंक का निपटान निर्जलीकरण, अपकेन्द्रण और भस्मीकरण के द्वारा किया जाता है। उनका भूमि भराव भी किया जाता है।

4) वस्त्र उद्योग से प्राप्त अपशिष्ट जल का पहले पत्थर, प्लास्टिक आदि टूटे-फूटे माध्यम में फुहारण किया जाता है। माध्यम, जैव वृद्धि के लिए बेस का काम करता है जो निस्यंदक से कर्षित वायु की उपस्थिति में अपशिष्ट कार्बनिक द्रव्य का भोजन के रूप में उपयोग करते हैं। इससे कार्बनिक प्रदूषण का बड़ा भाग पृथक हो जाता है और बहि:स्राव को

MAADHYAM IAS

अंतिम नि:सादन के बाद किसी सरिता में विसर्जित कर दिया जाता है। वाहित मल को वस्त्र बहि:स्राव के साथ मिश्रित करने से च्यावन निस्यंदक द्वारा लगभग 75% बी. ओ. डी. पृथक हो जाता है।

5) बहि:स्रावों के जैव ऑक्सीकरण के लिए स्थिरीकरण बेसिनों का विस्तृत उपयोग किया जाता है। दो प्रकार के बेसिनों का उपयोग किया जाता है- प्राकृतिक पुनर्वातन और यांत्रिकीय पुनर्वातन। प्राकृतिक पुनर्वातन बेसिन सामान्यतया उथला होता है। स्थिरीकारी बेसिनों का उपयोग भी किया जाता है जो उपचारित बहि:स्राव के नियंत्रित विसर्जन के लिए संग्राहक का काम करते हैं। यांत्रिकत: वातित बेसिन में वायु की आपूर्ति यांत्रिक पृष्ठ वातित्र द्वारा की जाती है। बेसिनों में जिस अपशिष्ट जल की आपूर्ति की जाती है वह नि:सादनीय ठोसों से मुक्त होना चाहिए। निलंबित पदार्थ अधिवाह को रोकने के लिए बहि:स्राव निर्मलन पद्धति और मुख्य स्थिरीकरण पद्धति के बीच एक छोटा प्रवेश बेसिन बनाया जाता है। लघुपथन को रोकने के लिए स्थिरीकरण बेसिनों को बहुसंख्या में बनाया जाता है। एक साथ दो पृथक बेसिनों का उपयोग किया जाता है अथवा एक ही बेसिन का उपयोग करना हो तो उसमें एक अथवा अधिक विभाजक दीवारें बनाई जाती हैं। अपशिष्ट में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों के साथ सूक्ष्मजीव क्रिया कर उनका निम्नीकरण कर देते हैं। सामान्य स्थिति में वातन, यांत्रिक साधनों द्वारा किया जाता है किन्तु बोर्ड मिल अपशिष्ट में अधिक वातन की आवश्यकता होती है ताकि दुर्गंध-युक्त गैस न बने। इस पद्धति में पर्याप्त भूमि क्षेत्र की आवश्यकता होती है जो प्रमुख कठिनाई है।

6) चर्म संस्कारशाला अपशिष्टों का केवल प्राथमिक उपचार किया जाता है जिसके अंतर्गत छानना, नि:सादी बेसिन और लैगून आते हैं। कुछ मामलों में द्वितीयक उपचार किया जाता है जिसमें जैव ऑक्सीकरण और नि:सादन शामिल हैं। दूसरे उद्योगों के बहि:स्रावों के लिए प्रयुक्त उपचार विधियां चर्म संस्कारशाला अपशिष्ट निपटान के लिए भी लागू होती हैं। चर्म संस्कारशाला में सबसे उपयुक्त उपचार का उपयोग किया जाता है जो स्थान विशेष और बहि:स्राव के आयतन पर निर्भर करता है। अनेक बृहद चर्म संस्कारशालाओं में नियंत्रित आयतन विसर्जन वाले लैगून और भंडारण पद्धति का उपयोग किया जाता है। किसी चर्म संस्कारशाला में विसर्जन उत्पन्न करने वाले अनेक यूनिट होते हैं। इन विसर्जनों को किसी टंकी में मिलाना उपचार का सर्वोत्तम पहला कदम है। मिश्रित बहि:स्राव का उपचार छानने, अवक्षेपण और निस्यंदन द्वारा किया जाता है।

7) खतरनाक अपशिष्ट के निपटान अर्थ है- अपशिष्ट को भूमि अथवा जल में विसर्जित करना। आदर्शत: खतरनाक अपशिष्ट को निपटान करने से पहले उदासीन, विषालुताहीन, स्वच्छ, ऑक्सीकृत अथवा आयतन में कम कर देना चाहिए। वैकल्पिक रूप से, भूमि निपटान, खुला ढेर, पृष्ठ अवरोध, सैनेटरी भूमि भराव, सुरक्षित भूमि भराव और भूमिगत अंत:क्षेपण को प्रयोग किया जा सकता है। खतरनाक अपशिष्टों का भूमि निपटान स्थायी हल नही है बल्कि केवल एक प्रकार का संग्रहण है अर्थात् अपशिष्टों का एक स्थान से दूसरे स्थान में स्थानांतरण। भूमि निपटान से सुरक्षा की धारणा होना गलत है, यहां तक कि कभी-कभी सुरक्षित भूमि भराव भी असुरक्षित हो जाते हैं। जिन अपशिष्टों में डाइऑक्सिन अथवा उनके समान यौगिक होते हैं उनका भूमि निपटान तब तक नहीं करना चाहिए जब तक आविषालुता कम करने के लिए उनका उपचार न कर लिया जाए। आजकल सान्द्र और डाइऑक्सिन अपशिष्टों के लिए उपलब्ध सबसे प्रभावकारी उपचार, उच्चताप भस्मीकरण है। उपचार की अन्य तकनीकों में वायु निर्लेपन, घान आसवन, जैव उपचार, कार्बन अधिशोषण और पतली परत उद्वाष्पन हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

11.12 अध्ययन के लिए अन्य पुस्तकें

1) Gurnham, C.F., "Principles of Industrial Waste Treatment" Wiley, Newyork, 1955.

2) Standard Methods for the Examination of Water and Wastewater, "19th edition, American Public Health Association, Washington DC, 1995.

3) U.S.Dept. Agr. Handbook No. 176 "Dairy Waste Treatment by Aeration - Theory, Design, Construction and Operation," 1960.

4) Gurnham, C.F., "Industrial Wastewater Control, Academic Press", Newyork, 1965.

5) American Petroleum Institute, "Manual on Disposal of Refinery Wastes", Vol.I, "Wastewater Containing Oil", 7th edition 104 pp., 1963.

6) Barnes D., Forster, C.F. and Hrudey, S.E., "Petroleum and Organic Chemicals Industries", Pitman Publishing Limited, London, 1984.

7) U.S. Public Health Service, "An Industrial Waste Guide to the Cotton Textile Industry", 1959.

8) Masselli, J.W., Masseli, N.W. and Burford, M.G. (Hall laboratory of Chemistry, Wesleyan University, Moddle town, Conn.), "Tannery Wastes: Pollution Sources and Methods of Treatment", New England Interstate Water Pollution Control Commission, 1958.

9) Guidelines for Management and Handling of Hazardous Wastes; Ministry of Environment and Forests, Government of India, New Delhi, 1991 and Hazardous Wastes (Management and Handling) Amendment Rules, 2003.

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इकाई 12 कृषि रसायनों के कारण उत्पन्न पर्यावरणी प्रदूषण

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

12.2 पीड़कनाशी

पीड़कनाशियों की आविषालुता

पर्यावरण में पीड़कनाशी

पारितंत्र में पीड़कनाशियों के प्रभाव

पीड़कनाशियों के पर्यावरणी प्रभावों को कम करने के उपाय

पीड़कनाशी अवशिष्टों को कम करना

पीड़क नियंत्रण की वैकल्पिक विधियां

12.3 उर्वरकों के कारण उत्पन्न पर्यावरणी प्रदूषण

एक प्रदूषक के रूप में नाइट्रोजन

जल और भोजन में नाइट्रेट तथा मानव स्वास्थ्य

नाइट्रोजन और पर्यावरणी गुणता

नाइट्रेट और पादप वृद्धि

गैसीय उत्सर्जन

फॉस्फोरस के द्वारा प्रदूषण

प्रदूषक के रूप में पोटैशियम

प्रदूषक के रूप में भारी धातुएं

12.4 उर्वरकों के कारण उत्पन्न पर्यावरणी प्रदूषण कम करने की विधियाँ

12.5 प्रदूषक के रूप में खाद

12.6 सारांश

12.7 अंत में कुछ प्रश्न

12.8 उत्तर

12.1 प्रस्तावना

MAADHYAM IAS

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जनसंख्या और उसकी आवश्यकताओं में वृद्धि को ध्यान में रखते हुए खाद्य पदार्थों की मात्रा और गुणता दोनों में सुधार करना आवश्यक हो गया है। इसलिए कृषि में पीड़कनाशियों, उर्वरकों और खाद की मांग बढ़ती जा रही है। इन सभी यौगिकों को **कृषि रसायनों** के वर्ग में रखा जाता है। पीड़कनाशियों का उपयोग पादप रोगों और पीड़कों के कारण होने वाली अननुमानित हानियों से फ़सलों की रक्षा को सुनिश्चित करने के लिए किया जाता है। वे मनुष्यों और जानवरों में रोगवाहकों के कारण होने वाले रोगों की संभावना को भी कम कर देते हैं। उर्वरक और खाद, मृदा की उर्वरता बढ़ा देते हैं और पादपों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करते हैं। इस इकाई में, हम सामान्य पीड़कनाशियों, उर्वरकों और खाद के महत्व और उपयोग की चर्चा करेंगे। साथ ही, उनके कारण होने वाले पर्यावरणी प्रदूषण की व्याख्या भी की जाएगी। अंत में इन कृषि रसायनों द्वारा होने वाले प्रदूषण को कम से कम करने की विधियों पर प्रकाश डाला जाएगा।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप

- कृषि-रसायनों, पीड़कनाशियों, उर्वरकों और खाद की परिभाषा दे सकेंगे,
- पीड़कनाशियों के विभिन्न वर्गों के नाम और प्रत्येक वर्ग के कार्य बता सकेंगे,
- आदर्श पीड़कनाशी के अभिलक्षणों की सूची बना सकेंगे,
- पर्यावरण में पीड़कनाशियों के प्रवेश के विभिन्न मार्गों की व्याख्या कर सकेंगे,
- पीड़क नियंत्रण की वैकल्पिक विधियों की चर्चा कर सकेंगे,
- पारितंत्र में पीड़कों के प्रभाव का वर्णन कर सकेंगे,
- पीड़कनाशियों और उनके अवशिष्टों के पर्यावरणी प्रभावों को कम करने की विधियाँ सुझा सकेंगे,
- उर्वरकों के कारण होने वाले पर्यावरण के प्रदूषण की व्याख्या कर सकेंगे,
- नाइट्रोजन, फ़ॉस्फ़ोरस, पोटैशियम और भारी धातुओं का प्रदूषक के रूप में वर्णन कर सकेंगे,
- उर्वरकों के द्वारा होने वाले प्रदूषण को कम करने के उपाय बता सकेंगे, और
- खाद द्वारा होने वाले प्रदूषण की व्याख्या कर सकेंगे।

12.2 पीड़कनाशी

पीड़कनाशी का अर्थ है– उत्पादन, संग्रहण, परिवहन, वितरण तथा खाद्य पदार्थ, कृषि पदार्थ अथवा जन्तु चारा के संसाधन के समय, पीड़कों और पादपों अथवा जन्तुओं की अवांछित जातियों को रोकने, नष्ट करने, आकर्षित करने, प्रतिकर्षित करने, अथवा नियंत्रित करने के लिए प्रयुक्त कोई भी पदार्थ। बाह्य परजीवी के नियंत्रण के लिए जानवरों को दिए जाने वाले पदार्थ को भी पीड़कनाशी कहते हैं। पीड़कनाशियों के अंतर्गत वे पदार्थ भी आते हैं जिन्हें पादप वृद्धि नियामक (plant growth regulators), निष्पत्रक (defoliants), जल शुष्कक (desiccants), फल तनु कर्मक (hit thinning agents) अथवा अंकुरण रोधक (sprouting inhibitors) के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। परिवहन और संग्रहण के समय पण्य पदार्थों को खराब होने से बचाने के लिए फसल काटने से पहले अथवा बाद में फसल में प्रयुक्त पदार्थ भी इसके अंतर्गत आते हैं। सामान्यतया पीड़कनाशियों में उर्वरक, पादप और जंतु पोषक, खाद्य योज्य और जन्तु औषध नहीं आते हैं।

पीड़कनाशी एक व्यापक शब्द है और किसी भी पीड़क के संदर्भ में प्रयुक्त किया जाता है। किन्तु पीड़कों के अलग-अलग वर्गों के लिए विशिष्ट शब्दों का उपयोग किया जाता है। उन्हें नीचे सारणी 12.1 में सूचीबद्ध किया गया है।

MAADHYAM IAS

सारणी 12.1: विभिन्न पीड़कनाशी वर्ग और उनके कार्य

पीड़कनाशी वर्ग	कार्य
कीटनाशी (Insecticides)	कीटों का विरोध करने, नष्ट करने, मारने अथवा कम करने के लिए प्रयुक्त पदार्थ (ये फाइलम इन्सेक्टा वर्ग आर्थ्रोपोडा के अंतर्गत आते हैं)।
कवकनाशी (Fungicides)	कवकों/सस्य-रोगों को रोकने, नष्ट करने अथवा वृद्धि का संदमन करने वाले पदार्थ।
शाकनाशी (Herbicides)	अवांछित पादपों को नष्ट करने वाले पदार्थ।
कृन्तकनाशी (Rodenticides)	कृन्तकों को रोकने, संदमन करने, नष्ट करने अथवा मारने वाले पदार्थ (वर्ग मैमेलिया, गुण रोडेन्शिया)
सूत्र कृमिनाशी (Nematicides)	सूत्रकृमियों को रोकने, नष्ट करने, प्रतिकर्षित करने, अथवा संदमन करने वाले पदार्थ (वर्ग नेमैटोडा)
मृदुकवची नाशी(Molluscicides)	फाइलम मोलस्का वर्ग के पीड़कों की वृद्धि रोकने, प्रतिकर्षित करने, नष्ट अथवा संदमन करने वाले पदार्थ।
रसोबंध्यक (Chemosterilants)	पीड़कों को बंध्य करने वाले पदार्थ।
पादप वृद्धि नियामक (Plant growth regulators)	पादप वृद्धि दर अथवा परिवपक्वन का त्वरण अथवा मंदन करने वाले पदार्थ।
निष्पत्रक (Defoliants)	पादपों की पत्तियों को नष्ट करने अथवा गिराने वाले पदार्थ।
जल शुष्कक (Desiccants)	पादपों में से नमी को निकालने वाले पदार्थ जिससे वे सूख जाते हैं।
आकर्षी (Attractants)	पीड़कों को आकर्षित करने वाले पदार्थ।
प्रतिकर्षी (Repellants)	पीड़कों को प्रतिकर्षित करने वाले पदार्थ।

पीड़कनाशियों के विभिन्न वर्गों और उनके कार्यों के बारे में जानने के बाद, आइए, एक **आदर्श पीड़कनाशी** के गुणधर्मों का अध्ययन करें।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

किसी आदर्श पीड़कनाशी

- का पीड़कों को मारने का विस्तृत स्पेक्ट्रम होना चाहिए।
- को स्तनधारियों के लिए निराविषी होना चाहिए।
- को पादपों के लिए निराविषी होना चाहिए।
- के उत्पादन की लागत कम होनी चाहिए।
- को आसानी से सूत्रण (formulation) होना चाहिए।
- के अवशिष्ट का स्थायित्व इष्टतम होना चाहिए।
- की लाभकारी कीटों के लिए आविषालुता कम होनी चाहिए।
- को अन्य पीड़कनाशियों के साथ सुसंगत होना चाहिए।

- का जिन पौधों पर उसका छिड़काव किया जाता है, उससे प्राप्त सब्जियों और फलों का स्वाद खराब नहीं होना चाहिए।
- को अज्वलनशील और धातुओं के लिए असंक्षारक होना चाहिए।

सारणी 12.2 भारत में उत्पादित कुछ प्रमुख पीड़कनाशियों को सूचीबद्ध किया गया है।

सारणी 12.2: भारत में उत्पादित पीड़कनाशी

पीड़कनाशी	कवकनाशी
डी. डी. टी.	कापर ऑक्सीक्लोराइड
मेलाथायॉन	कैप्टेफॉल
पेराथायॉन	कैप्टन
मेटासिस्टॉक्स	थायोकार्बमेट
फेन्टीरोथियॉन	निकेल क्लोराइड
फेन्थियॉन	आर्गेनोमर्करी यौगिक
डाइमेथोऐट	बाविस्टिन (कार्बेनडेजिम)
फ़ास्फ़ेमिडॉन	**शाकनाशी**
डी. डी. वी. पी.	2, 4– डी
क्विनैल्फॉस	आइसो प्रोटुरॉन
एथियॉन	पैराक्वैट
कार्बेरिल	बैसेलिन (फ्लूक्लोरैलिन)
मोनोक्रोटोफॉस	डालापॉन
एन्डोसल्फेन	डाइ यूरोन
थाइमेट (फोरेट)	**धूमक**
फोसेलो	ऐलुमिनियम फ़ॉस्फ़ॉइड
फेन्वेलेरेट	मेथिल ब्रोमाइड
साइपर मेथ्रिन	एथिलीन डाइब्रोमाइड

MAADHYAM IAS

12.2.1 पीड़कनाशियों की आविषालुता

पीड़कनाशियों की रासायनिक आविषालुता की माप से ज्ञात होता है कि क्या उनका उपयोग करते समय विशेष सावधानियों की आवश्यकता है? संभावित आविषालुता ज्ञात करने के सामान्य परीक्षण, मुखीय (मुख से), चर्मीय और अंत:श्वसनीय होते हैं। तीव्र प्रभावों की माप प्रतिकूल अनुक्रिया के लिए आवश्यक मात्रा और सान्द्रता के रूप में की जाती है जिसे एल. डी.$_{50}$ (LD_{50}) के रूप में व्यक्त किया जाता है। पीड़कनाशियों की आविषालुता और उनके लेबलों का रंग सारणी 12.3 में दिया गया है।

सारणी 12.3: पीड़कनाशियों की आविषालुता

क्रमांक	वर्ग	एल. डी.$_{50}$ (मुखीय)	एल. डी.$_{50}$ (त्वचीय)	लेबल का रंग
1.	अत्यधिक आविषालु	1–50	1–200	लाल
2.	अति आविषालु	51–500	200–2000	पीला
3.	सामान्य आविषालु	501–5000	2001–2000	नीला
4.	अल्प आविषालु	5000 से अधिक	2000 से अधिक	हरा

12.2.2 पर्यावरण में पीड़कनाशी

क) जल में पीड़कनाशी

जल में पीड़कनाशी अनेक प्रकार से प्रविष्ट कर सकते हैं जैसा कि नीचे दिया गया है।

i) पीड़क नियंत्रण के लिए साभिप्राय अनुप्रयोग

पीड़कनाशियों को पीड़क नियंत्रण के लिए जल की सतह पर छिड़का जाता है। इसके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं:

क) तरण तालाब और सरोवरों में शैवाल की वृद्धि को रोकने के लिए कॉपर सल्फेट पीड़कनाशी का उपयोग।

ख) मच्छरों के प्रजनन को रोकने के लिए डी. डी. टी. और अन्य पीड़कनाशियों का उपयोग।

ग) मछलियों को मारने और पकड़ने के लिए ऐन्डोसल्फैन जैसे पीड़कनाशी का उपयोग।

ii) पीड़क नियंत्रण के समय अनजाने में प्रवेश

अनेक पीड़कनाशी नीचे दिए गए तरीकों से जल में प्रविष्ट कर जाते हैं यद्यपि उन्हें जानबूझकर प्रयुक्त नहीं किया जाता है।

क) जल निकायों में आकस्मिक अनुप्रयोग से।

ख) कृषि, वन और जनस्वास्थ्य कार्यक्रमों में पीड़कनाशियों के अनुप्रयोग से उनके तालाबों, सरोवरों, सरिताओं और नदियों में प्रविष्ट कर जाने से।

ग) पीड़कनाशियों को रखने वाले पात्रों, फुहारकों और बाल्टियों आदि को धोने से।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

iii) अप्रत्यक्ष समावेशन

पीड़कनाशियों द्वारा जल के अप्रत्यक्ष रूप से संदूषित होने के कई कारण हैं जिन्हें नीचे दिया गया है।

क) पीड़कनाशी उत्पादक और संरूपक इकाइयों के अपशिष्टों का सरिताओं, नदियों और समुद्र में विसर्जन।

ख) उपचारित पर्णसमूह का जल में समावेशन।

पीड़कनाशी, संदूषित जल से, अप्रत्क्ष रूप से मानव शरीर में प्रविष्ट कर जाते हैं। किन्तु मछलियों और ऐसे ही अन्य जीवों में, खाद्य श्रृंखला द्वारा पीड़कनाशी करोड़ों गुना सान्द्रित हो जाते हैं।

ख) **मृदा में पीड़कनाशी**

पीड़कनाशी नीचे दिए गए तरीकों से मृदा में पहुंच जाते हैं:

i) दीमक, तन्तु कृमि, कर्तन सुंडी आदि ठोस उत्पीड़क कीटों के नियंत्रण के लिए मृदा में पीड़कनाशियों के अनुप्रयोग से।

ii) पौधों के ज़मीन से ऊपरी भागों को ग्रस्त करने वाले पीड़कों अथवा चूषक पीड़कों से रक्षा के लिए मृदा में फोरेट, कार्बोफ्यूरेन, ऐल्डिकार्ब आदि सर्वांगी कीटनाशियों के अनुप्रयोग से।

iii) फुहार तरल के वाह के कारण पीड़कनाशियों के भूमि पर गिरने से।

iv) वर्षा द्वारा पौधों से पीड़कनाशियों के धुलकर भूमि पर गिरने से।

v) पीड़कनाशियों द्वारा उपचारित पौधों के अवशेषों के मृदा में समावेशन से।

vi) पीड़कनाशी पृष्ठीय जलवाह और वायु में उपस्थित अपने कणों के द्वारा अनुपचारित भूमि में पहुंच सकते हैं।

मृदा में पीड़कनाशियों के स्थायित्व के निम्नलिखित कारक हैं।

i) **पीड़कनाशी का प्रकार** : मृदा में क्लोरिनित पीड़कनाशी, अन्य पीड़कनाशियों की अपेक्षा अधिक स्थायी होते हैं।

ii) **मृदा का प्रकार** : रेतीली मृदा की अपेक्षा मृण्मय (clayey) मृदा और अधिक कार्बनिक द्रव्य वाली मृदा में पीड़कनाशी अधिक समय तक रह सकते हैं।

iii) **नमी** : नमी, पीड़कनाशियों के वाष्पीकरण और मृदा में उपस्थित सूक्ष्मजीवों द्वारा उनके जलीय अपघटन में सहायता करती हैं। इस प्रकार, उनका क्षय हो जाता है।

iv) **मृदा ताप** : ताप जितना अधिक होगा, पीड़कनाशियों का क्षय भी उतना ही अधिक होगा।

v) **भूमि संरक्षण सस्य (फसलें)** : वे वाष्पीकरण घटाकर पीड़कनाशियों के स्थायित्व को बढ़ा देती हैं।

vi) **मृदा की जुताई** : मृदा की जुताई से पीड़कनाशियों के क्षय में वृद्धि होती है।

vii) **पीड़कनाशी अनुप्रयोग और प्रतिपादन का तरीका** : पृष्ठीय अनुप्रयोग और पायसों के उपयोग की अपेक्षा अधिक गहराई में डालने और कणिकाओं का उपयोग करने से पीड़कनाशियों के स्थायित्व में वृद्धि हो जाती है।

MAADHYAM IAS
"way to achieve your dream"

ग) **वायु में पीड़कनाशी**

पीड़कनाशी, वायु में निम्नलिखित तरीकों से प्रविष्ट करते हैं :

i) उत्पादन और सूत्रण संयंत्रों में भरते, लादते और मिश्रित करते समय रसायनों के वाष्पीकरण से।

ii) उपचारित सतहों से पीड़कनाशियों की अल्प मात्राओं के वाष्पीकरण से।

iii) पीड़कनाशियों के छोटे कण वायु में रह जाते हैं और वे दूर-दूर तक फैल जाते हैं। अतिअल्प आयतन (Ultra Low Volume, ULV) अनुप्रयोग और वायव (aerial) अनुप्रयोग के समय, जब कि सूक्ष्म कणों का उपयोग किया जाता है, वे अधिक फैलते हैं।

घ) सब्जियों, फलों और अनाजों में पीड़कनाशी

पादपों के खाद्य भाग निम्नलिखित कारणों द्वारा पीड़कनाशियों से संदूषित हो जाते हैं:

i) पीड़क नियंत्रण के लिए पीड़कनाशियों का पत्तों पर अनुप्रयोग।

ii) मृदा अथवा जल द्वारा पीड़कनाशियों का स्थानांतरण।

iii) बीज उपचार द्वारा पीड़कनाशियों का स्थानांतरण।

iv) पर्णीय (foliar) अनुप्रयोग से निकटवर्ती खेतों में अपवाह।

पादपों में पीड़कनाशी निक्षेप और उसके अवशेष निम्नलिखित कारकों पर निर्भर करते हैं :

i) पवन, वर्षा, प्रकाश की अवधि और तीव्रता, वायु, ताप और आर्द्रता आदि मौसम संबंधी कारक।

ii) वृद्धि दर, पर्ण घनता, पादप का आकार तथा मोमी सतहों की उत्पादन दर आदि पादप-अभिलक्षणों पर।

iii) पीड़कनाशी के सूत्रण संबंधी कारकों जैसे सहायक, विलायक, अधिशोषक, तनुकारक, अनुप्रयोग के प्रकार, अनुप्रयोग की दर, अनुप्रयोगों का संख्या और उनके बीच अंतराल आदि पर।

12.2.3 पारितंत्र में पीड़कनाशियों के प्रभाव

जब पीड़क नियंत्रण के लिए पीड़कनाशियों को फ़सलों पर प्रयुक्त किया जाता है तो कृषि पारितंत्र में अनेक परिवर्तन हो सकते हैं। ऐसे कुछ प्रभावों की चर्चा नीचे की गई है।

i) प्राकृतिक शत्रुओं का विनाश

परजीवी और परभक्षी अनेक पीड़कों पर आक्रमण करते हैं और कुछ मामलों में वे पीड़क नियंत्रण के प्राथमिक उपाय का काम करते हैं। पीड़कनाशियों को फ़सल पर प्रयुक्त करने पर वे न केवल पीड़कों को नष्ट करते हैं बल्कि उनके प्राकृतिक शत्रुओं पर भी तीव्र प्रभाव डालते हैं जिससे इन प्राकृतिक शत्रुओं के नष्ट होने से पीड़कों का प्रकोप बढ़ जाता है। इस प्रकार, एक ऐसी नई समस्या सामने आती है जो पहले नहीं होती।

ii) पीड़कनाशियों द्वारा मानव विषाक्तन

कृषि में पीड़कनाशियों के उपयोग से मनुष्यों में विषाक्तन हो जाता है। यह एक प्रमुख चिन्ता का विषय है। मनुष्य अनेक प्रकार से पीड़कनाशियों के संपर्क में आ सकते हैं। श्रमिकों पर पीड़कनाशियों के उत्पादन, सूत्रण और अनुप्रयोग के समय प्रभाव पड़ता है। संदूषित जल पीने, संदूषित वायु में सांस लेने, संदूषित मृदा के संपर्क में आने अथवा संदूषित भोजन खाने से मनुष्य के शरीर में पीड़कनाशियों की अर्ध-घातक अथवा घातक मात्राएं प्रविष्ट कर सकती हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

iii) पीड़कनाशियों का जैवसान्द्रण

पीड़कनाशी, पर्यावरण से जीवों के ऊतकों में संचित हो जाते हैं। मछलियों और अन्य जीवों में, सीधे पर्यावरण से पीड़कनाशियों की अत्यधिक मात्राएं सांद्रित (10,000 गुना तक) हो सकती हैं।

iv) मधुमक्खियां और परागण

फल, सब्जियों, चारा फ़सलों और अन्य पादपों के परागण में अपनी भूमिका के लिए मधुमक्खियाँ और जंगली मधुमक्खियाँ सुविदित हैं। कई बार यह देखा गया है कि

पीड़कनाशियों के कारण मधुमक्खियों की आबादी कम अथवा समाप्त हो जाती है जिससे कृषि उत्पादन कम हो जाता है।

v) **वन्य जीवों पर प्रभाव**

पीड़कनाशियों का कृषि पारितंत्र और प्राकृतिक पारितंत्र में पक्षियों और स्तनधारियों की आबादी पर बुरा प्रभाव पड़ता है। पीड़कनाशियों की उच्च मात्राओं से मृत्यु और कम घातक मात्राओं से जीविता, वृद्धि और जनन में कमी हो जाती है। जानवरों में अनेक पीड़कनाशी वसा-ऊतकों में एकत्रित होकर निष्क्रियित हो जाते हैं। अल्पपोषण के समय, शरीर के वसा निक्षेप मुक्त होते हैं और उनके साथ पीड़कनाशी भी मुक्त होते हैं जिससे जानवर की मृत्यु हो जाती है।

vi) **प्रतिरोध**

पीड़नाशियों के लगातार उपयोग से पीड़कों की प्रतिरोधिता बढ़ जाती है जिससे पीड़कनाशियों की उच्च मात्राओं का प्रयोग करना पड़ता है। इसके कारण पर्यावरणी प्रदूषण बढ़ जाता है।

vii) **पीड़कनाशी अवशिष्ट**

भोजन, जल, वायु, मृदा, अनाज, सब्जियों और जन्तु-चारे में पीड़कनाशियों का शेष रह जाना बहुत चिन्ता का विषय है। संदूषित भोजन करने से, अथवा संदूषित भोजन और चारा खाने वाले जानवरों से प्राप्त दूध, माँस और अन्य उत्पादों को खाने से पीड़कनाशी मानव शरीर में प्रविष्ट कर जाते हैं।

पीड़कनाशियों के द्वारा अनाज, सब्जियों, फलों, डेरी उत्पादों और पर्यावरण के संदूषण को चित्र 12.1 में दिखाया गया है।

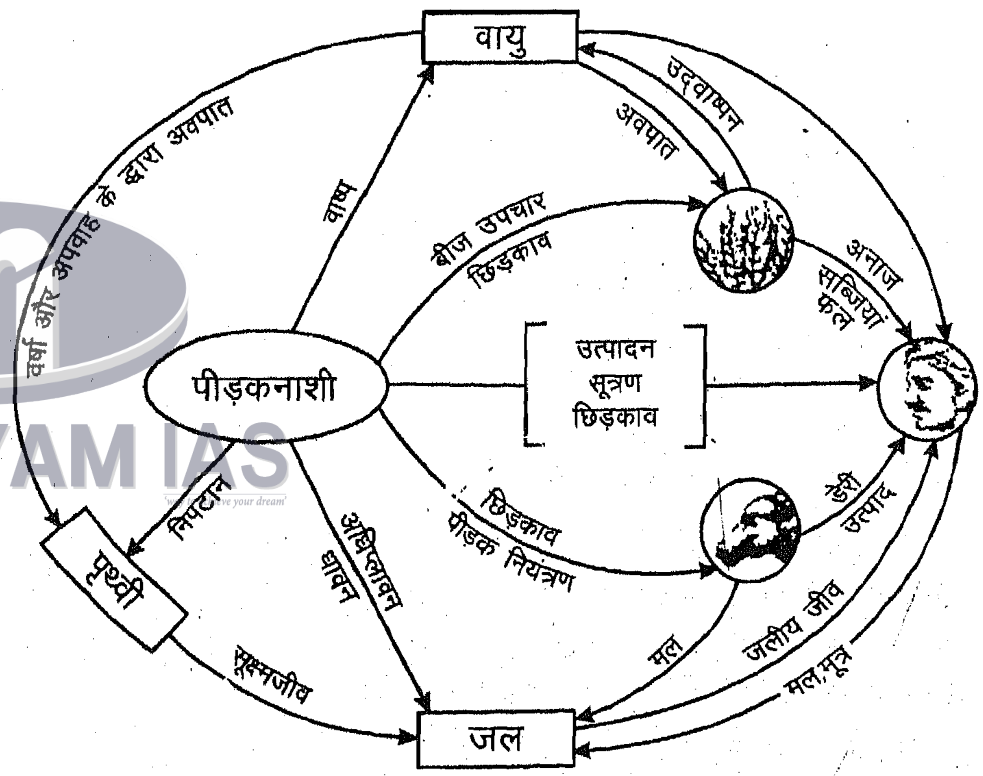

चित्र 12.1: पर्यावरण में पीड़कनाशी चक्र

MAADHYAM IAS

12.2.4 पीड़कनाशियों के पर्यावरणी प्रभावों को कम करने के उपाय

फ़सलों पर पीड़कनाशियों को प्रयुक्त करते समय और उसके बाद निम्नलिखित सावधानियां बरतने से उनका प्रभाव कम करने में सहायता मिलती है।

अनुप्रयोग के समय

i) पीड़कनाशियों का प्रयोग करते समय अपने रक्षक वस्त्र, जूते, दस्ताने और धूप वाला चश्मा पहन लें।

ii) पीड़कनाशी के अनुप्रयोग-स्थल के आस-पास बच्चों को न जाने दें।

iii) त्वचा, चेहरे और जननांगों को संदूषित न होने दें। यदि शरीर का कोई भाग संदूषित हो जाए तो प्रभावित हिस्से को शीघ्र साबुन से धो लें।

iv) फ़सल पर पीड़कनाशियों की हवा की दिशा में फुहार करें।

v) गर्म मौसम में पीड़कनाशियों को सुबह अथवा शाम को प्रयुक्त करें।

vi) पीड़कनाशियों के साथ काम करते समय खाना, पीना, धूम्रपान करना अथवा चबाना आदि कार्य न करें।

vii) यह सुनिश्चित कर लें कि पवन की दिशा में जानवर, मनुष्य, भोजन अथवा जन्तु चारा न हों।

viii) यह जांच कर लें कि फुहारित्र और उपकरण में रिसाव न हो।

ix) बंद फुहार तुंडों **(nozzle)** को मुह से न फूकें।

x) यदि फुहारन के समय व्यक्ति की तबीयत खराब हो जाए अथवा शरीर में अनियमित लक्षण दिखाई दें तो फुहारन रोककर शीघ्र चिकित्सा का प्रबंध करना चाहिए।

अनुप्रयोग के बाद

i) फुहारन के समय फुहार टंकी को पूरी तरह खाली कर लें। यदि उपकरण में कुछ पीड़कनाशी बचा हो तो उससे बंजर भूमि पर फुहार कर दें। अतिरिक्त बची मात्रा को नहर, तालाब, कुएँ पर अथवा नदी में न डालें।

ii) पात्र को कसकर बंद करने के बाद अप्रयुक्त पीड़कनाशी को भंडार में वापस कर दें।

iii) खाली पीड़कनाशी पात्र को पहले अपमार्जक से और जल से धो लें और फिर पर्याप्त जल से प्रक्षालित कर लें।

iv) फुहार विलयन बनाने में प्रयुक्त बाल्टी, डंडा, मापी प्याला आदि को संदूषण रहित कर लें।

v) साबुन और पर्याप्त जल से नहा लें। फुहारन के समय प्रयुक्त वस्त्रों को अलग से धोएं।

vi) उपचारित क्षेत्र को चिन्हित कर लें और उसमें अनधिकृत प्रवेश न होने दें।

vii) पीड़कनाशियों के खाली पात्रों को अन्य कार्यों के लिए प्रयुक्त न करें।

viii) पीड़कनाशी के खाली पात्रों को न जलाएं। यदि जलाना हो तो धुएं में खड़े न रहें।

उपर्युक्त सावधानियों के बाद भी पीड़कनाशी के अवशेष पर्यावरण में पाए जा सकते हैं। आइए, हम अध्ययन करें कि उनकी उपस्थिति को नियंत्रित अथवा सीमित कैसे किया जा सकता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

12.2.5 पीड़कनाशी अवशिष्टों को कम करना

यदि पीड़कनाशी अवशिष्ट का स्तर निश्चित सीमा से बढ़ जाए तो वे पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य, दोनों के लिए खतरनाक हो सकते हैं। निम्नलिखित उपायों द्वारा फ़सलों और पर्यावरण में अत्यधिक अवशिष्टों को कम किया जा सकता है।

i) पीड़कनाशियों का उपयोग केवल तब करें जब आवश्यक हो, अन्यथा जहां भी संभव हो पीड़क नियंत्रण के लिए गैर-रासायनिक विधियों का उपयोग करें।

ii) सही समय पर और निर्धारित स्तर पर अनुमोदित पीड़नाशियों का ही उपयोग करें।

iii) स्थायी पीड़कनाशियों का उपयोग न कर कम स्थायी पीड़कनाशियों का उपयोग करें।

iv) पीड़कनाशी प्रयुक्त करने से पहले पके फल और सब्जियों को तोड़ लें। पीड़कनाशी के उपयोग के बाद, अनुमोदित प्रतीक्षा अवधि के बाद ही फ़सल काटें।

v) रगड़कर धोने से पीड़कनाशी अवशिष्टों को कम करने में सहायता मिलती है। सब्जियों और फलों का छिलका उतारने से भी उनका स्तर कम हो जाता है।

vi) पर्यावरण और जीवजंतुओं में पीड़कनाशी अवशिष्टों को नियमित रूप से मॉनीटर करना चाहिए। मॉनीटर करने में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए :

पर्यावरणी मॉनीटरन : संभावित पारिस्थितिक प्रभावों को रोकने के लिए वायु, मृदा और जल में पीड़कनाशी अवशिष्टों को नियमित रूप से मॉनीटर करना चाहिए। मृत वन्यजीवों का सावधानीपूर्वक रिकार्ड रखना चाहिए ताकि प्राप्त आंकड़ों का पीड़कनाशियों के साथ संबंध स्थापित किया जा सके।

खाद्य मॉनीटरन : भोजन में पीड़कनाशी अवशिष्टों को मॉनीटर करना। मानव स्वास्थ्य के लिए संभावित खतरों को कम करने का एक महत्वपूर्ण पहलू है। खाद्य वस्तुओं में पीड़कनाशियों के अस्वीकार्य स्तर में पाए जाने पर, उसके कारण की जानकारी और संशोधित उपाय करने चाहिए ताकि ऐसा दुबारा न हो।

मनुष्यों में अवशिष्टों का मॉनीटरन : यदि पीड़कनाशी अवशेष, अधिकतम परिमेय सीमा से अधिक मात्रा में उपस्थित हों तो मनुष्यों में पीड़कनाशी अवशेषों को नियमित रूप से मॉनीटर करना चाहिए और उसके बाद रोकथाम के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिए।

vii) **पीड़कनाशी पात्रों का संवेष्टन और लेबलन**

पीड़कनाशी पात्रों का समुचित संवेष्टन होना चाहिए और उन पर स्पष्ट लेबल होना चाहिए। पात्रों को मजबूत और रिसाव-रोधी होना चाहिए। लेबल, देशी भाषा में होने चाहिए तथा उन पर उपयोग, सुरक्षा उपाय और सावधानियों के बारे मे स्पष्ट सूचना होनी चाहिए। अत्यधिक आविषालु पीड़कनाशियों का विशिष्ट चिन्ह होना चाहिए (जैसे खोपड़ी और तिर्यक अस्थियां जैसा कि विषों के लिए प्रयुक्त किया जाता है) ताकि उनके ख़तरनाक स्वभाव का पता लग सके।

viii) **पात्रों का निपटान**

उपयोग करने वालों को पात्र निपटान के बारे में शिक्षित करना चाहिए। कांच पात्रों को तोड़कर ज़मीन में, कम से कम 40 cm गहराई में, दबा देना चाहिए। पीड़कनाशियों के पात्रों को जला देना चाहिए।

MAADHYAM IAS

ix) **उन्नत पीड़कनाशी अनुप्रयोग**

पीड़कनाशियों को प्रयुक्त करने की विधियों को उन्नत करने के अनेक तरीके हैं। प्रयुक्त फुहार उपकरणों में अतिन्यून आयतन फुहारित्र, इलेक्ट्रोडायन फुहारित्र, कणिका अनुप्रयोजित्र आदि शामिल हैं। मंद मोचन सूत्रण और अन्य विधियां भी पार्श्व प्रभावों को कम कर देती हैं।

जो व्यक्ति पीड़कनाशियों का अनुप्रयोग करते हैं उन्हें पीड़कनाशियों के अनुप्रयोग की विधियों, उपकरण उपयोग और सामान्य पीड़कनाशी स्वास्थ्य विज्ञान का समुचित प्रशिक्षण देना चाहिए।

x) **उन्नत पीड़कनाशी**

जहां भी संभव हो ऐसे पीड़कनाशियों का उपयोग करना चाहिए जो स्तनधारियों के लिए कम आविषालु हों।

12.2.6 पीड़क नियंत्रण की वैकल्पिक विधियां

i) **एकीकृत पीड़क प्रबंधन (Integrated Pest Management– IPM)**

एकीकृत पीड़क प्रबंधन का अर्थ है– पीड़क नियंत्रण के लिए प्रयुक्त विधियों के सर्वोत्तम संयोजन का उपयोग करना। इस संकल्पना का महत्वपूर्ण पहलू यह है कि इसमें पीड़कों के उन्मूलन के बजाय पीड़कों की आबादी पर रोक लगाई जाती है। आई. पी. एम. में पीड़कनाशियों के उपयोग पर रोक नहीं लगाई जाती है बल्कि प्रबंधन शस्त्रागार में समझदारीपूर्वक अन्य शस्त्रों के साथ उन्हें एक शस्त्र के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। आई. पी. एम. के लाभ इस प्रकार हैं :

i) यह पीड़क नियंत्रण की सक्षम और सस्ती विधि है।

ii) यह प्रकृति के संतुलन को नही बिगाड़ता है।

iii) यह पीड़कों की प्रतिरोध वृद्धि में विलंब करता है।

iv) यह पीड़कनाशियों के अवशिष्टों के खतरों के कम कर देता है।

ii) **जैव नियंत्रण**

परजीवियों, परभक्षियों, जीवाणुओं, विषाणुओं और अन्य जैव नियंत्रकों द्वारा जैव नियंत्रण, पीड़क नियंत्रण की लोकप्रिय और महत्वपूर्ण विधि बन रही है जिसके कारण इस प्रकार हैं-

- यह अत्यंत विशिष्ट विधि है।
- यह गैर-लक्ष्य जातियों, लाभकारी कीटों और मनुष्यों के लिए सुरक्षित है।
- पारितंत्र और पर्यावरण पर इसका कम से कम प्रभाव पड़ता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

iii) **लिंग फीरोमोन**

फीरोमोन जैवरसायन होते हैं जो कीटों के परस्पर संचार में सहायता करते हैं। वे अति विशिष्ट प्रकृति के होते हैं। जाति विशिष्ट होने के कारण उनका उपयोग कीट-आबादी का अभिनिर्धारण और आकलन करने के लिए किया जाता है। उनका उपयोग कीट संगम में बाधा पहुंचाने अथवा पीड़कनाशी रखे पाशों (traps) की ओर आकर्षित करने और इस प्रकार मारने के लिए किया लाता है।

iv) **कीट वृद्धि नियामक**

कीट वृद्धि नियामक, जैव सक्रिय यौगिक होते हैं। वे प्राकृतिक कीट किशोर (juvenile) हार्मोनों की संख्या कम करते हैं और कीट नियंत्रक के रूप में प्रयुक्त किए जाते हैं। विकास की निश्चित अवधि में उपचार करने पर ये यौगिक, नर कीटो में बंध्यता उत्पन्न करते हैं। वे कीटों के सामान्य वृद्धि पैटर्न को प्रभावित कर देते हैं और इस प्रकार उनकी उत्तरजीविता में रुकावट डालते हैं। यह विधि सस्ती, जाति विशिष्ट और अधिक सक्षम है तथा इसका अधिकांश जन्तुओं और मनुष्य पर कोई विपरीत प्रभाव नही पड़ता है।

v) **कीट प्रबंधन में पादप उत्पादों का उपयोग**

पारिस्थितक दृष्टि से दुरूस्त और पर्यावरण की दृष्टि से स्वीकार्य पीड़क प्रबंधन पद्धति में पादप उत्पादों का प्रभावपूर्वक उपयोग किया जा सकता है। पादप उत्पादों में नीम व्युत्पन्न, विभिन्न पीड़कों के विरुद्ध प्रभावकारी होते हैं।

vi) **फसलों की पीड़क-प्रतिरोधी किस्में**

भविष्य में यह पीड़क प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण विकल्प होगा। पीड़कों और रोगों का प्रतिरोध करने वाली पौधों की किस्मों का उपयोग रासायनिक पीड़कनाशियों का एक विकल्प है। उदाहरण के लिए भारत में बी. टी. कपास की खेती करने की अनुमति दी गई है जो गोलक शलभ (Bollworm) पीड़क के लिए प्रतिरोधी है। ऐसी ही अन्य आनुवंशिकत: संशोधित फ़सलों के विभिन्न सुरक्षा पहलुओं की दृष्टि से खेतों में परीक्षण किए जा रहे हैं।

vii) **वैधानिक विधियां**

वैधानिक विधियों द्वारा देश में नए पीड़कों के प्रवेश को रोका जा सकता है। भारत में अनेक कीट जैसे सेब पर सैन जोस स्केल (San Jose Scale), आलू पर ट्यूबर मॉथ तथा सिट्रस (निम्बूकुल) पर कुशन स्केल, देश में आयातित संक्रमित पदार्थों से आए। कड़े नियम बनाकर और उन्हें प्रभावशाली ढंग से लागू करके नए पीड़कों के प्रवेश को रोका जा सकता है।

बोध प्रश्न

1) पीड़कनाशी की परिभाषा दीजिए।

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

2) आदर्श पीड़कनाशी के पाँच अभिलक्षण लिखिए।

....

....

....

....

....

3) भारत में उत्पादित दो पीड़कनाशियों के नाम बताइए।

....

....

4) एकीकृत पीड़क प्रबंधन क्या होता है? पीड़क नियंत्रण के लिए इसके अन्य प्रचलित उपायों की अपेक्षा क्या लाभ हैं?

....

....

....

5) एल. डी.$_{50}$ की परिभाषा दीजिए। अति आविषालु पीड़कनाशी के लिए, एल. डी.$_{50}$ 4.T प्रयुक्त लेबल का प्रकार बताइए।

....

....

....

12.3 उर्वरकों के कारण उत्पन्न पर्यावरणी प्रदूषण

बाजार में बिकने वाले कृषि उर्वरकों में, नाइट्रोजन (N), फॉस्फोरस (P) और पोटैशियम (K)– इन तीन मुख्य पादप पोषक तत्वों में से एक अथवा अधिक विद्यमान रहते हैं। **नाइट्रोजन**, कुछ खनिजों जैसे जन्तु अवशिष्टों अथवा चिली में पाए जाने वाले सोडियम नाइट्रेट ($NaNO_3$) निक्षेपों से प्राप्त होता है। व्यापारिक उर्वरकों में अधिकांश नाइट्रोजन, संश्लिष्ट अमोनिया (NH_3) अथवा उसके व्युत्पन्नों जैसे अमोनियम नाइट्रेट(NH_4NO_3) अथवा अमोनियम सल्फेट ($(NH_4)_2SO_4$) से प्राप्त होता है। नाइट्रोजन का उत्पादन कार्बनिक रूप में जैसे यूरिया ($CO(NH_2)_2$) और कैल्सियम सायनाइड ($Ca(CN)_2$), भी किया जाता है। उर्वरकों में अधिकांश **फॉस्फोरस**, शैल फ़ास्फ़ेट से प्राप्त होता है जिसका प्रमुख घटक फ्लुओरऐपेटाइट ($[Ca_3(PO_4)_2]_3CaF_2$) है। उत्पादन स्थल पर सूक्ष्म विभाजित शैल फ़ॉस्फ़ेट का लगभग समान मात्रा में सल्फ्यूरिक अम्ल के साथ उपचार कर मोनोकैल्सियमफ़ॉस्फ़ेट ($Ca(H_2PO_4)_2$) और कैल्सियम सल्फेट ($CaSO_4$) का जल विलेय मिश्रण प्राप्त होता है जिसे सुपर फ़ॉस्फ़ेट कहते हैं। **पोटैशियम** उर्वरकों को ज़मीन के ऊपर और अंदर उपस्थित पोटैश युक्त खनिजों और शैलों के निक्षेपों के खनन से प्राप्त किया जाता है। पोटैशियम क्लोराइड (KCl) और पोटैशियम सल्फेट (K_2SO_4) आमतौर पर प्रयुक्त व्यापारिक उर्वरक पदार्थ हैं।

भारत में उर्वरकों का उत्पादन

भारत में पिछले कुछ वर्षों में उर्वरकों की पोषक तत्वों में हुई खपत, उत्पादन और आयात को सारणी 12.4 में दिखाया गया है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

सारणी 12.4: उर्वरकों की खपत, उत्पादन और आयात (000, मीट्रिक टनों में)

वर्ष	खपत				उत्पादन				आयात			
	N	P	K	कुल	N	P	K	कुल	N	P	K	कुल
1981-82	40.69	13.22	6.73	60.64	31.44	9.49	0.00	40.93	10.54	3.43	6.44	20.41
1982-83	42.24	14.37	7.27	63.88	34.24	9.80	0.00	44.04	4.25	0.63	6.44	11.32
1983-84	52.05	17.30	7.75	77.10	34.85	10.48	0.00	45.33	6.56	1.43	5.56	13.55
1984-85	54.87	18.86	8.38	82.11	39.17	12.64	0.00	51.81	20.08	7.45	8.71	36.24
1985-86	56.61	20.05	8.08	84.74	43.28	14.28	0.00	57.56	16.80	8.16	9.03	33.99
1986-87	57.16	20.79	8.50	86.45	54.10	16.60	0.00	70.70	11.03	2.55	9.52	23.10
1987-88	57.17	21.87	8.80	87.84	54.66	16.65	0.00	71.31	1.75	0.00	8.09	9.84
1988-89	72.51	27.21	10.68	110.40	67.12	22.52	0.00	89.64	2.19	4.07	9.82	16.08
1989-90	73.86	30.14	11.68	115.68	67.47	17.96	0.00	85.43	5.23	13.11	12.80	31.14
1990-91	79.97	32.21	13.28	125.46	69.93	20.52	0.00	90.45	4.14	10.16	13.28	27.58
1991-92	80.46	33.21	13.61	127.28	73.01	25.62	0.00	98.63	5.66	9.67	12.36	27.69
1992-93	84.27	28.44	8.84	121.55	74.30	23.06	0.00	97.36	11.37	6.89	10.82	29.08
1993-94	87.89	26.69	9.08	123.66	72.31	18.16	0.00	90.47	15.88	7.22	8.57	31.67
1994-95	95.07	29.31	11.25	135.63	79.45	24.93	0.00	104.38	14.76	3.80	11.09	29.65
1995-96	98.23	28.98	11.56	138.77	87.77	25.58	0.00	113.35	19.93	6.47	13.15	39.55
1996-97	103.01	29.77	10.30	143.08	85.99	25.56	0.00	111.55	11.67	2.46	6.13	20.26
1997-98	109.00	39.15	13.73	161.88	100.86	29.75	0.00	130.61	13.62	6.72	11.40	31.74
1998-99	113.54	41.12	13.32	167.98	104.80	31.41	0.00	136.21	6.35	9.68	15.42	31.45
1999-00	115.92	47.99	16.78	180.69	108.90	33.99	0.00	142.89	8.33	15.03	17.39	40.75
2000-01	109.20	42.15	15.67	167.02	109.61	37.43	0.00	147.04	1.54	3.96	15.41	20.91
2001-02	114.16	44.16	17.07	175.39	107.68	38.60	0.00	146.28	2.69	4.29	17.01	23.99
2002-03	104.74	40.19	16.01	160.94	105.62	39.04	0.00	144.66	0.66	1.70	14.38	16.74
2003-04*	113.24	44.02	17.48	174.74	106.34	36.30	0.00	142.64	1.32	3.38	15.48	20.18

* अनुमानित

12.3.1 एक प्रदूषक के रूप में नाइट्रोजन

उर्वरक नाइट्रोजन हानि अथवा मात्रा और परिणाम

जब फ़सल उगाने के लिए मृदा में नाइट्रोजनी उर्वरक प्रयुक्त किए जाते हैं तो फ़सल द्वारा उसके केवल कुछ भाग का उपयोग होता है। अधिकतम सफ़ल प्रबंधन के बाद भी, उच्चभूमि फ़सलों द्वारा उर्वरक नाइट्रोजन का उपयोग 50% से अधिक नहीं होता है। निम्नभूमि धान की फ़सल के साथ तो स्थिति और भी खराब है क्योंकि उसमें प्रयुक्त उर्वरक का केवल एक तिहाई भाग ही काम में आता है।

शेष नाइट्रोजन रूपांतरण के पश्चात् अपनी रासायनिक अवस्था के अनुसार भिन्न-भिन्न मार्गों का अनुसरण करती है। वह पृष्ठीय मृदा से धुल सकती है (किसी भी रूप में **पृष्ठीय वाह**)। वह मृदा में मूलोत्पत्ति क्षेत्र से नीचे जा सकती है (**निक्षालन**, मुख्यतः नाइट्रेट के रूप में)। वह वायुमंडल में गैसों के रूप में भी प्रविष्ट करती है (N_2O, N_2 अथवा NH_3 के रूप में गैसों का उत्सर्जन)।

MAADHYAM IAS

पृष्ठीय वाह: पृष्ठीय वाह द्वारा उर्वरकों की नाइट्रोजन सरिताओं और सरोवरों के जल में पहुंच जाती है। यदि उर्वरक नाइट्रोजन के अनुप्रयोग के शीघ्र बाद ही तेज वृष्टि (rainstorm) हो जाए तो पृष्ठीय वाह अधिकतम होता है। उर्वरक को जमीन के नीचे एक निश्चित गहराई पर प्रयोग करने से पृष्ठीय वाह न्यूनतम होता है।

निक्षालन: निक्षालन से भौमजल (ground wader) में नाइट्रेटों की मात्रा बढ़ जाती है। तूफ़ान की स्थिति में नाइट्रोजन की हानि बहुत होती है। अधिकांश ऊर्वरकों में नाइट्रेट होते हैं। यदि नाइट्रोजन के अन्य रूप (यूरिया और अमोनियम) हों तो उन्हें नाइट्रेट में परिवर्तित किया जा सकता है।

नाइट्रोजन को प्रभावित करने वाली मुख्य प्रक्रियाएँ इस प्रकार हैं।

अमोनीकरण: प्रोटीन आदि नाइट्रोजन युक्त यौगिकों के अपघटन से अमोनिया का उत्पादन।

नाइट्रीकरण: मृदा में जीवाणुओं द्वारा अमोनिया अथवा नाइट्रोजन की अन्य कार्बनिक किस्मों का नाइट्रेट में परिवर्तन।

विनाइट्रीकरण: आण्विक नाइट्रोजन अथवा किसी नाइट्रोजन ऑक्साइड द्वारा नाइट्रेट अथवा नाइट्राइट का गैसीय नाइट्रोजन में जैवरासायनिक अपचयन।

स्वांगीकरण (assimilation): अवशोषित पोषकों का शारीरिक पदार्थों में रूपांतरण। नाइट्रोजन को प्रभावित करने वाले मुख्य प्रक्रमों को संक्षेप में सारणी 12.5 में दिखाया गया है।

सारणी 12.5: नाइट्रोजन को प्रभावित करने वाले मुख्य प्रक्रम

अमोनीकरण	कार्बनिक N	NH_3	H^+	NH_4^+
नाइट्रीकरण	NH_4^+	NO_2^-		N_2O_3
विनाइट्रीकरण	NO_3^-	NO_2^-		N_2
स्वांगीकरण	NO_3^-	NH_3		एमीनो अम्ल
				प्यूरीन
मृत्तिका पदार्थों द्वारा NH_4^+ का यौगिकीकरण				प्रोटीन
मृदा के कार्बनिक पदार्थों द्वारा NH_3 का यौगिकीकरण				न्यूक्लीक अम्ल
NO_2 की ह्यूमिक और फल्विक अम्लों के साथ अभिक्रियाएँ				

12.3.2 जल और भोजन में नाइट्रेट और मानव स्वास्थ्य

अत्यधिक मात्रा में अनुप्रयोग से समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं क्योंकि उर्वरक, भूमिजल में निक्षालन द्वारा अथवा जलमार्गों में प्राकृतिक अपवाह और झंझा वाह जल (storm run off) द्वारा ले जाए जाते हैं। नाइट्रेट विशेष चिन्ता की बात है। किन्तु वे जलमार्गों में, उर्वरकों की अत्यधिक मात्रा अथवा अनुचित समय पर अनुप्रयोग से नहीं बल्कि सीधे खेतों से चले जाते हैं। जल और भोजन में नाइट्रेट की उच्च मात्राएं चिन्ता का विषय है विशेष रूप से जब वे नाइट्राइटों में परिवर्तित हो जाते हैं। नाइट्राइटों से शिशुओं में मेटहीमोग्लोबिनेमिया रोग हो जाता है जिसे ब्लूबेरी कहते हैं। इसके कारण रुधिर द्वारा ऑक्सीजन का वहन नही हो सकता है। वयस्कों में इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है किन्तु शिशुओं के लिए यह घातक हो सकता है। शिशुओं के लिए ख़तरा जल में नाइट्रेट की मात्रा से ही नहीं बल्कि जल-स्रोत से भी संबंधित है। जिन शिशुओं को कुओं से प्राप्त जीवाणु संदूषित जल दिया जाता है, वे ऐसे सूक्ष्मजीवों द्वारा प्रभावित हो सकते हैं जो नाइट्रेट को नाइट्राइट में परिवर्तित कर देते हैं। यही प्रक्रिया रोमन्थियों में हो सकती है। इसलिए पशुधन में भी नाइट्रेट विषाक्तन हो सकता है। पेयजल में 10 mg NO_3^- NL^{-1} से अधिक नाइट्रेट की मात्रा असुरक्षित होती है (विश्व स्वास्थ्य संगठन, 1963)

मेटहीमोग्लोबिनेमिया में रुधिर हीमोग्लोबिन, मेटहीमोग्लोबिन में परिवर्तित हो जाता है। यह एक रोग है जो मानव शरीर के ठीक-ठाक कार्य करने के लिए रुधिर के पर्याप्त ऑक्सीजन धारण करने की क्षमता को कम कर देता है। जब आंतों में माइक्रोफ्लोरा द्वारा नाइट्रेटों का नाइट्राइटों में अपचयन हो जाता है तो नाइट्राइट की हीमोग्लोबिन के साथ अभिक्रिया करने से मेटहीमोग्लोबिन बनता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

12.3.3 नाइट्रोजन और पर्यावरणी गुणता

समतापमंडल में ओज़ोन का अपक्षय - ओज़ोन (O_3) वायुमंडल में ऊंचाई पर बनती है। यह पराबैंगनी विकिरण के विरुद्ध संरक्षक परिरक्षक (शील्ड) का काम करती है। ओज़ोन, समताप मंडल में लगातार बनती और नष्ट होती रहती है। इसकी औसत मात्रा में कमी अथवा ओज़ोन परत में छिद्र बनने से पराबैंगनी विकिरण के पृथ्वी पर पहुचंने से पादपों और जन्तुओं को हानि होती है। ओज़ोन क्षय को NO उत्प्रेरित करता है। NO विनाइट्रीकरण का उत्पाद होता है जो ऊपरी वायुमंडल में विसरित हो जाता है।

विनाइट्रीकरण का अर्थ है- नाइट्रेटों की हानि या हटना जो इस प्रकार होता है:

$NO_3 \rightarrow NO_2^- \rightarrow NO \rightarrow N_2$
नाइट्रेट नाइट्राइट नाइट्रिक ऑक्साइड नाइट्रोजन

12.3.4 नाइट्रेट और पादप वृद्धि

मृदा में बना नाइट्रेट पादपों के लिए आविषालु होता है और पादप वृद्धि को अवरुद्ध कर देता है। किन्तु मृदा में नाइट्रेट की बहुत अधिक मात्रा हो तो अत्यधिक पादप वृद्धि होती है। इस

स्थिति में फ़सल के पत्तों में अत्यधिक नाइट्रेट संचयन एक समस्या बन जाती है। मृदा में नाइट्रेटों की उत्पत्ति यूरिया और अन्य नाइट्रोजनी उर्वरकों के रूपांतरण से होती है। प्राकृत मृदा नाइट्रोजन और वायुमंडलीय डाइनाइट्रोजन के प्रकाश रासायनिक या जैव-यौगिकीकरण से मृदा को पर्याप्त नाइट्रोजन प्राप्त होती है। नाइट्रेट के जिस भाग का फ़सल उपयोग नहीं कर पाती है और जिस भाग का विनाइट्रीकरण नहीं होता है, उसका निक्षालन हो जाता है। जब पुराने घासस्थल को जोता जाता है और संचित कार्बनिक द्रव्य तथा ह्यूमस का जुताई और वातन द्वारा उद्दीपन हो जाता है तो निक्षालन द्वारा नाइट्रेट का पर्याप्त क्षय हो जाता है क्योंकि उस स्थिति में नाइट्रेट के अवशोषण के लिए जीवित घास के पौधे नहीं होते हैं।

कृष्य खेती में अमोनिया का वाष्पीकरण हो जाता है जबकि फार्मयार्ड खाद की अधिक मात्राओं का उपयोग किया जाता है। इस हानि का महत्व, भरण भागों, बहुत चरे गए घास स्थलों अथवा खेतों में कर्दम (slurry) और आपंक (sludge) मिलाने पर होता है।

कुछ पशु चारों और पीने के पानी में नाइट्रेट की उच्च मात्रा होने से विषाक्तन हो जाता है और संभवत: जब प्रथम आमाशय में उपस्थित सूक्ष्मजीव NO_3 को NO_2 में परिवर्तित कर देते हैं। इसके फलस्वरूप नाइट्रोसैमीन बनते हैं जो मेटहीमोग्लोबिनेमिया के समान प्रतिकूल प्रभाव पैदा करते हैं।

12.3.5 गैसीय उत्सर्जन

ग्रीन हाउस एक कक्ष होता है जिसमें सामान्य दृश्य प्रकाश प्रविष्ट कर सकता है किन्तु अवरक्त किरणें बाहर नहीं आ पातीं। ग्रीन हाउस गैसों की वायुमंडलीय सान्द्रता में वृद्धि के कारण भूमंडलीय ताप में वृद्धि को **ग्रीन हाउस प्रभाव** कहते हैं।

उर्वरक में उपस्थित नाइट्रोजन के गैसीय रूपों, जैसे अमोनिया और विभिन्न नाइट्रोजन ऑक्साइडों $(NO)_x$, N_2O आदि, में परिवर्तन से वायुमंडलीय प्रदूषण हो जाता है। अमोनिया वाष्पीकरण के लिए अमोनियम उत्पादक स्रोत और क्षारीय माध्यम (मृदा) आवश्यक है। विनाइट्रीकरण से वायुमंडल में प्रविष्ट करने वाले NO_2 को NH_3 का कुछ भाग नाइट्रिक अम्ल में परिवर्तित हो जाता है। इस नाइट्रिक अम्ल के साथ, कारखानों की चिमनियों अथवा विद्युत् उत्पादन केन्द्रों की चिमनियों के उत्सर्जन से निर्मित तथा मोटर कारों द्वारा उत्सर्जित अपशिष्ट गैसों द्वारा बने सल्फ्यूरिक अम्ल के मिलने से अम्ल वृष्टि (acid rain) होती है। अम्ल वृष्टि पादपों को सीधे प्रभावित करती है। यह तालाबों के जल का अम्लीकरण कर देती है जिससे विलेय अमोनियम की मात्रा बढ़ जाती है जो मछलियों और पादपों दोनों के लिए आविषालु है। अमोनिया का वाष्पीकरण एक पृष्ठीय परिघटना है अत: नम पृष्ठ पर यूरिया और अन्य अमोनियम आधारित उर्वरकों को छिड़क कर अनुप्रयुक्त करने से उसमें वृद्धि होती है। उर्वरकों को मृदा के नीचे एक निश्चित गहराई पर प्रयोग करने से अमोनिया का वाष्पीकरण मंद पड़ जाता है। वायुमंडल में उपस्थित अमोनिया निकायों को संदूषित, दृश्यता में कमी और संक्षारण उत्पन्न करती है। यद्यपि नाइट्रस ऑक्साइड भूमंडलीय उष्णन (green house effect) में योगदान करता है किन्तु इसका महत्व कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) और मेथैन (CH_4) के बाद सबसे अधिक है। नाइट्रस ऑक्साइड का विघटन एक मंद क्रिया है और वायुमंडल में उसका अस्तित्व काल 100 से 175 वर्ष होता है।

12.3.6 फॉस्फोरस के द्वारा प्रदूषण

MAADHYAM IAS

कृषि भूमि में फॉस्फोरस युक्त उर्वरकों के सतत् अनुप्रयोग से उनमें उपस्थित आर्सेनिक, कैडमियम आदि सूक्ष्म मात्रिक धातुएं जमा हो जाती हैं जो संदूषक का काम करती है। यद्यपि मृदा में फॉस्फोरस की गतिशीलता कम होती है किन्तु वाहजल में उसके कृषि मृदा से जलीय पर्यावरण में परिवहन से जल-गुणता का ह्रास हो जाता है। यह स्थिति अभी केवल यूरोप में भयानक है जहां प्रति हेक्टेअर औसतन 200 kg नाइट्रोजन और 50 kg फॉस्फोरस प्रयुक्त किया जाता है। भारत में स्थिति भिन्न है। यहां 1994–95 में प्रति हेक्टेअर नाइट्रोजन की खपत लगभग 52.5 kg और P_2O_5 की केवल 16.2 kg थी जो प्रदूषण के खतरनाक स्तर से बहुत कम है।

12.3.7 प्रदूषक के रूप में पौटैशियम

कृषि की दृष्टि से मृदा और जल प्रदूषण में पोटैशियम तत्व कोई महत्वपूर्ण कारक नहीं है। इसकी अधिक मात्रा का अनुप्रयोग आपत्तिजनक है। जिस घास स्थल में पोटैशियम की मात्रा बहुत हो और साथ में नाइट्रोजन भी प्रयुक्त की गई हो, वहाँ की घास खाने से पशुओं में ग्रास टेटैरी हाइपोमैग्नीशिया नामक रोग हो जाता है। इस स्थिति को मृदा प्रदूषण नहीं कहा जा सकता है क्योंकि पोटैशियम के उच्च स्तर को उर्वरकों अथवा खादों को प्रयुक्त न करने से सामान्य किया जा सकता है।

12.3.8 प्रदूषक के रूप में भारी धातुएं

धातुओं के अधिक मात्रा में अंतर्ग्रहण से मनुष्यों और जानवरों में अनेक रोग हो जाते हैं । उदाहरण के लिए 120-180 pg C. D. प्रतिदिन से अधिक कैडमियम के अंतर्ग्रहण से इटाई-इटाई रोग, उच्च रक्त चाप और रेनल ट्यूबूलर रोग हो जाते हैं। इनकी 0.1ppm सान्द्रता पर कुछ जलीय जीवों की मृत्यु हो सकती है। कैडमियम पर्यावरण में अनेक स्रोतों से प्रविष्ट होता है। यह बैटरियों, टायरों, वर्णकों और स्थायी कारकों और धातु पट्टन (plating) आदि का घटक है। फॉस्फेटिक उर्वरकों द्वारा खाद्य श्रृंखला में पर्याप्त मात्रा में कैडमियम प्रविष्ट होता है। शैल फॉस्फेट भी कैडमियम का स्रोत है जिसमें उसकी सान्द्रता 5 से 280 $mg\ kg^{-1}$ तक होती है। भोजन और चारे में पारा, सीसा, सिलीनियम, निकैल और मॉलिब्डेनम आदि की उच्च सान्द्रता सभी जीवों के लिए हानिकारक होती है। कुछ वाहित मल आपंक उनके समृद्ध स्रोत हैं और उनका अनियंत्रित उपयोग खतरनाक हो सकता है।

सारणी 12.6: भारी धातुओं के हानिकारक प्रभाव

पोषक तत्व	रोग
मॉलिब्डेनम	मॉलिब्डेनोसिस अथवा टीयर्ट रोग
कैडमियम	उच्च रक्तचाप, हृद्वाहिका तंत्र रोग, इटाई-इटाई रोग
पारा	जन्मजात सदोष शिशु, लसीकाणुओं में क्रोमोसोम विभंग (मिनामाटा रोग)
सीसा	व्याक्षोभ और अरक्तता, गाउट, क्रोनिक नेफ्राइटिस, ऐन्सिफैलोपैथी और मृत्यु

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बोध प्रश्न

6) उर्वरकों से प्राप्त मुख्य पादप पोषकों के नाम बताइए। उनके प्राकृतिक स्रोत क्या हैं?

....

....

7) व्यवसायिक उर्वरकों में प्रयुक्त नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटैशियम के कम से कम दो रासायनिक रूप बताइए।

....

....

8) प्रयुक्त उर्वरक नाइट्रोजन का फ़सलों द्वारा कितना भाग उपयोग किया जाता है?

....

....

....

....

9) अनुप्रयोग के पश्चात् उर्वरक नाइट्रोजन की हानि की कौन सी भिन्न प्रक्रियाएँ हैं?

....

....

....

....

12.4 उर्वरकों के कारण उत्पन्न पर्यावरणी प्रदूषण कम करने की विधियाँ

i) मृदा और पादप ऊतक परीक्षणों के आधार पर नाइट्रोजन उर्वरकों का युक्तिसंगत अनुप्रयोग। यदि उर्वरक नाइट्रोजन आपूर्ति फ़सल मांग के अनुकूल हो तो उनकी हानि न्यूनतम होगी।

ii) सिंचाई से पहले ठीक समय पर उर्वरक अनुप्रयोग से उनकी क्षमता अधिकतम की जा सकती है।

iii) यदि उर्वरकों के नियंत्रित उन्मोचन (अथवा मंद उन्मोचन) फ़सल की नाइट्रोजन आवश्यकता के अनुसार किया जाए तो उनकी हानि कम होती है।

iv) उर्वरक रूपांतरण अभिक्रियाओं से मृदा में नाइट्रेट की बृहद् मात्राओं का मोचन भौमजल प्रदूषण का मूल कारण है जिसमें नाइट्रस ऑक्साइड का उत्सर्जन होता है। N- सर्वे आदि कुछ रासायनिक पदार्थ मृदा में नाइट्रीकरण को अवरुद्ध अथवा मंद कर देते हैं। यूरिएस निरोधकों के उपयोग से भी यूरिया का जल-अपघटन मंद पड़ जाता है और नाइट्रोजन हानि कम हो जाती है जिससे पर्यावरणी प्रदूषण न्यूनतम हो जाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

v) मृदा संसाधन के बजाय पर्णिल फुहारित पोषकों का उपयोग अधिक दक्षतापूर्वक किया जा सकता है। मानक कृषि विज्ञान प्रक्रियाओं का अनुसरण करके नाइट्रोजन हानि को न्यूनतम और अंततः नाइट्रोजन दक्षता को बढ़ाया जा सकता है। निस्तापन **(calcination)** तकनीक अर्थात् ईंधन गैसों में कैडमियम प्रग्रहण **(trapping)** द्वारा शैल फॉस्फेट में कैडमियम की मात्रा न्यूनतम की जा सकती है।

vi) भौमजल में नाइट्रेट को नियमित रूप से मॉनीटर करना चाहिए। भारत की अधिकांश सस्य भूमि में कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए उर्वरकों के उपयोग के लाभ, उनके पर्यावरण में संभावित हानिकारक प्रभावों से अधिक है। अपितु जिन जिलों में सघन खेती की जाती है और उर्वरक का अधिकतम उपयोग किया जाता है वहां भौमजल में नाइट्रेट की मात्रा के उच्चावचन **(fluctuation)** का ध्यान रखना आवश्यक है।

12.5 प्रदूषक के रूप में खाद

खादों का उर्वरक के रूप में उपयोग करने में समस्या यह है कि उनमें नाइट्रोजन, फ़ॉस्फ़ोरस और पोटैशियम पादप पोषकों की आपेक्षिक सान्द्रताएं, संश्लिष्ट रासायनिक उर्वरकों की अपेक्षा बहुत कम होती हैं। उर्वरकों का विश्लेषण नाइट्रोजन (N), फ़ॉस्फ़ोरस (P) और पोटैशियम (K) की प्रतिशत मात्राओं में व्यक्त किया जाता है। फ़ॉर्म खाद में (0.5-0.1-0.4) अर्थात् लगभग 0.5% N, 0.1% और 0.4% K होता है। भूमि में इन पोषकों की निश्चित मात्रा का आपूर्ति के लिए संश्लिष्ट उर्वरकों (10-10-10) की अपेक्षा 20 से 30 गुना खाद की आवश्यकता होगी। फ़ॉर्म में पशु अपशिष्टों की उपस्थिति से दुर्गंध और जल प्रदूषण की गंभीर समस्या पैदा हो जाती है। इसके अतिरिक्त उनके द्वारा रोगों के परिसंचरण से सार्वजनिक स्वास्थ्य की समस्या भी होती है।

खाद से मृदा की जुताई और जल धारण करने की क्षमता में सुधार होता है। खाद मृदा के वातन में सहायक होती है तथा हवा और जल द्वारा होने वाले अपरदन को भी कम करती है। इसका मृदा के सूक्ष्मजीवों पर भी लाभकारी प्रभाव पड़ता है। ज्ञात हुआ है कि कुक्कट खाद उपचारित खेतों के भौमजल में उर्वरक-प्रयुक्त क्षेत्र की अपेक्षा नाइट्रेट की मात्रा अधिक होती है।

बोध प्रश्न

10) खाद को उर्वरक के रूप में प्रयोग करने के क्या लाभ हैं?

....

....

12.6 सारांश

पीड़कनाशियों का सुरक्षित अनुप्रयोग और पर्यावरणी प्रदूषण आज प्रमुख चिन्ता का विषय हैं। फ़सलों की रक्षा के लिए यद्यपि पीड़कनाशियों का उपयोग आवश्यक है अपितु उनका उपयोग करते समय सावधानी रखना भी आवश्यक है। उनका अधिक मात्रा में और अंधाधुध उपयोग हानिकारक होता है। पीड़कनाशियों के सुरक्षित और समुचित अनुप्रयोग से जहां उनका दुष्प्रभाव न्यूनतम हो सकता है वहीं पर्यावरणी प्रदूषण को भी नियंत्रित किया जा सकता है। फ़सलों के बेहतर उत्पादन के लिए अन्य कृषि रासायनों जैसे उर्वरकों और खाद का प्रयोग किया जाता है। उनके लगातार और ज्यादा मात्रा में अनुप्रयोग से पर्यावरण प्रदूषित होता है। अतः कृषि-रासायनों का संतुलित उपयोग करना चाहिए।

MAADHYAM IAS

12.7 अंत में कुछ प्रश्न

1) (i) शाकनाशी (ii) सूत्र कृमिनाशी और (iii) कृन्तकनाशी की परिभाषा दीजिए।

2) (i) जल (ii) मृदा और (iii) वायु में पीड़कनाशियों के विभिन्न प्रवेश मार्ग बताइए।

3) उन उपायों को सूचीबद्ध कीजिए जिनसे कृषि वस्तुओं में पीड़कनाशी-अवशिष्टों की मात्रा न्यूनतम की जा सकती है।

4) एकीकृत पीड़क प्रबंधन में रासायनिक नियंत्रण को छोड़कर अन्य कौन- से नियंत्रण उपाय प्रयुक्त किए जाते हैं?

5) अम्ल वृष्टि में नाइट्रोजनी उर्वरकों के योगदान का संक्षेप में वर्णन कीजिए। उसके दुष्प्रभावों का भी उल्लेख कीजिए।

6) उर्वरकों के कारण उत्पन्न पर्यावरणी प्रदूषण को कम करने के लिए प्रयुक्त उपायों का उल्लेख कीजिए।

12.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1) पीड़कनाशी वे पदार्थ होते हैं जो पीड़कों, जंतुओं और पादपों की अवांछित जातियों को रोकने, नष्ट करने, आकर्षित करने, प्रतिकर्षित करने अथवा नियंत्रित करने के लिए उपयोग किए जाते हैं।

2) आदर्श पीड़कनाशी

   i) का पीड़कों को मारने का विस्तृत स्पेक्ट्रम होना चाहिए।

   ii) को पादपों और स्तनधारियों के लिए निराविषी होना चाहिए।

   iii) का आसानी से सूत्रण होना चाहिए।

   iv) के अवशिष्ट का स्थायित्व इष्टतम होना चाहिए।

   v) उत्पादन की लागत कम होनी चाहिए।

3) सारणी 12.2 में दिए गए पीड़कनाशियों में से कोई दो।

4) एकीकृत पीड़क प्रबंधन का अर्थ है- पीड़क प्रबंधन के लिए प्रयुक्त विधियों का सर्वोतम संयोजन। इसके मुख्य लाभ इस प्रकार हैं:

   i) यह पीड़क नियंत्रण की अधिक सक्षम और सस्ती विधि है।

   ii) इससे प्रकृति का संतुलन नहीं बिगड़ता है।

   iiii यह पीड़कों की प्रतिरोध-वृद्धि में विलंब करता है।

5) एल. डी.$_{50}$ प्रतिकूल अनुक्रिया के लिए आवश्यक मात्रा या सांद्रता होती है। अति आविषालु पीड़कनाशियों की मुखीय एल. डी.$_{50}$ 51–500 तथा त्वचीय एल. डी.$_{50}$ 200–2000 होती है। उनका लेबल पीला होता है।

6) उर्वरकों द्वारा मिलने वाले मुख्य पोषक नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटैशियम हैं। उनके प्राकृतिक स्रोत क्रमश: इस प्रकार हैं- खनिज स्रोत और चिली में पाए जाने वाले निक्षेप; शैल फॉस्फेट और खनिज तथा शैल पोटाश निक्षेप।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

7) नाइट्रोजन - अमोनियम नाइट्रेट, अमोनियम सल्फेट आदि।

   फॉस्फोरस - फ्लुओरापेटाइट, सुपर फॉस्फेट

   पोटैशियम - पोटैशियम क्लोराइड, पोटैशियम सल्फेट।

8) अधिकतम 50% तक

9) उर्वरक नाइट्रोजन के हानि पृष्ठीय वाह और निक्षालन द्वारा होती है।

10) खाद से मृदा की जुताई और जल-शारण करने की क्षमता में सुधार होता है। वह मृदा के वातन में सहायक होती है और अपरदन को कम करती है।

अंत में कुछ प्रश्न

1) शाकनाशी - अवांछित पादपों के नष्ट करने वाले पदार्थ।

सूत्रकृमिनाशी - सूत्रकृमियों को रोकने, नष्ट करने, प्रतिकर्षित करने या संदमन करने वाले पदार्थ।

कृन्तकनाशी - कृन्तकों को रोकने, संदमन करने, नष्ट करने या मारने वाले पदार्थ।

2) i) जल : जल में पीड़कनाशी पीड़क नियंत्रण के लिए अनुप्रयोग द्वारा या अनजाने में फैलने द्वारा प्रवेश कर सकते है। वे अप्रत्यक्ष रूप में पीड़कनाशियों के उत्पादन और सूत्रण करने वाली इकाईयों के अपशिष्टों के विसर्जन से भी प्रविष्ट हो सकते हैं।

ii) मृदा: मृदा में पीड़कनाशी ठोस उत्पीड़क कीटों या चूषक पीड़कों के नियंत्रण के अनुप्रयोग से वर्षा द्वारा पौधों से धुलकर भूमि पर गिरने से पृष्ठीय जल-वाह या वायु में उपस्थित कणों से प्रवेश कर सकते हैं।

iii) वायु : वायु में पीड़कनाशी संयत्रों में उत्पादन, भरते, लादते और मिश्रित करते समय रसायनों के वाष्पीकरण या सूत्रण प्रक्रमों के दौरान प्रविष्ट हो सकते हैं। वे उपचारित सतहों से भी वाष्पित हो कर वायु में पहुँच सकते हैं।

3) i) पीड़कनाशियों का उपयोग तब करें जब आवश्यक हो।

ii) सही समय पर और निर्धारित स्तर पर अनुमोदित पीड़कनाशी का उपयोग करें।

iii) कम स्थायी पीड़कनाशियों का उपयोग करें।

iv) अवशिष्टों को नियमित रूप से मॉनीटर करें।

4) जैव नियंत्रण और फीरोमोन, कीट वृद्धि नियामकों पादप उत्पादों और फ़सलों की पीड़क - प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग आदि।

5) उर्वरकों की नाइट्रोजन, अमोनिया और नाइट्रोजन के ऑक्साइडों में परिवर्तित हो जाती है। NH_3 और NO_2 के विनाइट्रीकरण से नाइट्रिक अम्ल बनता है। कारखानों या विद्युत्-उत्पादन केन्द्रों की चिमनियों के उत्सर्जन से निर्मित तथा मोटर कारों से उत्सर्जित अपशिष्टों गैसों से बने सल्फ्यूरिक अम्ल के साथ मिलकर नाइट्रिक अम्ल, अम्लीय वर्षा में उपस्थित होता है।

अम्लीय वर्षा पादपों को प्रभावित करती है और तालाबों के जल के अम्लीकरण द्वारा मछलियों और जलीय पौधों को प्रभावित करती है।

6) i) उर्वरकों का युक्तिसंगत अनुप्रयोग।

ii) ठीक समय पर उर्वरक अनुप्रयोग।

iii) नियंत्रित उन्मोचन उर्वरकों का उपयोग।

iv) मानक कृषि विज्ञान प्रक्रियाओं का प्रयोग।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इकाई 13 नगरपालिका और घरेलू अपशिष्ट

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
13.2 वाहित मल और अन्य जलवाहित अपशिष्ट- उत्पत्ति और सामान्य अभिलक्षण
वाहित मल की उत्पत्ति
वाहित मल के सामान्य अभिलक्षण
वाहित मल मल विश्लेषण
वाहित मल प्रतिचयन
13.3 वाहित मल में ठोस द्रव्य
वाहित मल में ठोस द्रव्यों का निर्धारण
13.4 वाहित मल में कार्बनिक द्रव्य
प्रकृति में कार्बन चक्र, नाइट्रोजन चक्र और गंधक चक्र
कार्बनिक द्रव्यों का निर्धारण
पोषक तत्व
अपमार्जक और पृष्ठ सक्रियक
13.5 वाहित मल में खनिज द्रव्य और उनका निर्धारण
13.6 वाहित मल में गैसीय और वाष्पशील द्रव्य
वाहित मल में गैसों का निर्धारण
13.7 हाइड्रोजन आयन सान्द्रता और ताप
वाहित मल की हाइड्रोजन आयन सान्द्रता
वाहित मल का ताप
13.8 वाहित मल में जैव द्रव्य
महत्व
प्लवकों का निर्धारण
13.9 वाहित मल में सूक्ष्मजीवी संदूषण
वाहित मल में सूक्ष्मजीव
सूक्ष्मजीवों का निष्कासन
जीवाणु
13.10 वाहित मल का अपघटन
वाहित मल का अवायवीय उपचार
वाहित मल का वायवीय उपचार
वाहित मल के अपघटन के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता
13.11 वाहित मल उपचार और निपटान
वाहित मल अभिलक्षण
वाहित मल.उपचार प्रक्रम
वाहित मल निपटान
13.12 वाहित मल द्वारा रोग

MAADHYAM IAS

13.13 सारांश
13.14 अंत में कुछ प्रश्न
13.15 उत्तर
13.16 अध्ययन के लिए अन्य पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

नगरपालिका और घरेलू अपशिष्ट, जल वाहित अपशिष्ट होते हैं जो घरों और कारखानों में की जाने वाली जल आपूर्ति के स्वाभाविक परिणाम के कारण उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त ये भूमि और पृष्ठीय जल के साथ मिलकर सीवर (sewer) में प्रविष्ट कर जाते हैं। द्रव अपशिष्टों को मोटे तौर पर छः वर्गों में विभाजित किया जा सकता है:

1) **मल जल (sullage) :** रसोईघर, स्नानघर और धुलाईघर से निकलने वाला कोई भी द्रव मलजल होता है। इसमें विष्ठा और मूत्र नहीं आते हैं।

2) **वाहित मल (sewage) :** इसके अंतर्गत विष्ठा और मूत्र सहित सभी घरेलू द्रव अपशिष्टों का मिश्रण आता है। वाहित मल शब्द का उपयोग किसी क्षेत्र के सभी घरेलू और औद्योगिक स्रोतों (शौचालय आदि) से मुक्त सभी द्रव अपशिष्टों के लिए किया जाता है।

3) **औद्योगिक अपशिष्ट (industrial wastes) :** घरेलू अपशिष्ट को छोड़कर व्यापारिक अथवा औद्योगिक परिसरों से उत्पन्न जल वाहित अपशिष्ट।

4) **तूफानी जल (storm water) :** पृष्ठीय अथवा अवमृदा (subsoil) जल जो अलग से अथवा वाहित मल के साथ एकत्रित होता है अथवा जो सीवर में अंतःस्यंदन (infiltration) जल के रूप में प्रविष्ट करता है, तूफानी जल कहलाता है।

5) **भौमजल (ground water) :** यह अधःस्तल (subsurface) जल है जो अंतःस्यंदन द्वारा सीवर में प्रविष्ट करता है।

6) **नगरपालिका वाहित मल (municipal sewage):** यह सामान्य अथवा घरेलू वाहित मल का व्यापारिक अवशिष्ट के साथ मिश्रण होता है। कभी-कभी यह तूफानी अथवा भौमजल द्वारा तनु हो जाता है।

सामान्यतया किसी समुदाय का भुक्त शेष जल जो सीवर में प्रवाहित होता है, नगरपालिका अपशिष्ट कहलाता हैं।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद, आप

- नगरपालिका और घरेलू अपशिष्टों की परिभाषा दे सकेंगे,
- उत्पन्न वाहित मल का स्रोत और मात्रा बता सकेंगे,
- वाहित मल के सामान्य अभिलक्षणों को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- वाहित मल में विभिन्न ठोस द्रव्यों के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे,
- वाहित मल में विभिन्न कार्बनिक द्रव्यों के स्रोत बता सकेंगे,
- वाहित मल के खनिज अवयवों के महत्व पर प्रकाश डाल सकेंगे,
- वाहित मल में गैसीय द्रव्यों की उपस्थिति के प्रभाव का वर्णन कर सकेंगे,

MAADHYAM IAS

- वाहित मल के pH और ताप में विविधता को बता सकेंगे,
- वाहित मल में प्लवकों की उपस्थिति का उल्लेख कर सकेंगे,
- वाहित मल के अवायवीय और वायवीय अपघटन की व्याख्या कर सकेंगे,
- वाहित मल की उपचार विधियों का वर्णन कर सकेंगे, और
- वाहित मल द्वारा रोगों के फैलने के कारण बता सकेंगे।

13.2 वाहित मल और अन्य जलवाहित अपशिष्ट- उत्पत्ति और सामान्य अभिलक्षण

इस भाग में, सबसे पहले हम वाहित मल की उत्पत्ति की चर्चा करेंगे और फिर वाहित मल के सामान्य अभिलक्षणों की व्याख्या की जाएगी। उसके बाद वाहित मल के विश्लेषण की संक्षिप्त चर्चा की जाएगी।

13.2.1 वाहित मल की उत्पत्ति

किसी क्षेत्र में शुष्क और आर्द्र मौसम में उत्पन्न वाहित मल में बहुत भिन्नता होती है। शुष्क मौसम में किसी समुदाय से वाहित मल और अन्य जलवाहित अपशिष्टों का प्रवाह दिन प्रतिदिन और घंटा प्रतिघंटा बदलता रहता है। बड़े क्षेत्रों की अपेक्षा छोटे क्षेत्रों के प्रवाहों में अधिक विभिन्नता होती है। सामान्य प्रवाह से सप्ताहांत अथवा छुट्टी वाले दिन के प्रवाह पैटर्न में बहुत अंतर होता है। वाहित मल प्रवाह का दैनिक आयतन आवासीय क्षेत्रों में उपयुक्त जल पर निर्भर करता है जिनके अंतर्गत रिहायशी घरों, स्थानीय व्यापारिक परिसरों, कार्यालयों और कुछ मामलों में विभिन्न निर्माण प्रक्रमों में प्रयुक्त औद्योगिक जल आता है।

सामान्यतया तूफानी जल प्रवाह के लिए पृथक नालियां होती हैं किन्तु आर्द्र मौसम में अनेक स्थानों में तूफानी जल के अकस्मात् प्रविष्ट कर जाने से सीवरों में प्रवाह बहुत बढ़ जाता है। संयुक्त मल व्यवस्था में शुष्क मौसम की अपेक्षा आर्द्र मौसम में प्रवाह कई गुना अधिक होता है।

13.2.2 वाहित मल के सामान्य अभिलक्षण

वाहित मल के भौतिक और रासायनिक अभिलक्षण इस प्रकार हैं:

भौतिक अभिलक्षण : भौतिक अभिलक्षणों में ताप, गंध, रंग और आविलता आते हैं। प्रत्येक का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है:

i) **ताप:** वाहित मल के ताप की जानकारी आवश्यक है। यह समुदाय को आपूर्ति किए जाने वाले जल के ताप से कुछ अधिक होता है। इस सामान्य ताप में कुछ कमी या बढ़ोतरी हो सकती है किन्तु वह कोई चिन्ता की बात नहीं है। जब ताप में बहुत वृद्धि पाई जाती है तो सामान्यतया इसका कारण औद्योगिक अपशिष्टों का विसर्जन होता है। उसी प्रकार, ताप में पर्याप्त कमी का कारण तूफानी जल अथवा पृष्ठीय जल का अंत:स्यंदन होता है। अपशिष्ट जल के ताप का अवसादन और जैविक गतिविधियों पर प्रभाव पड़ता है। जैसे-जैसे ताप बढ़ता है, श्यानता कम होती जाती है और अवसादन में वृद्धि होती है। दूसरी ओर, ताप में वृद्धि से जीवाणुक गतिविधि में वृद्धि होती है।

ii) **गंध:** ताजे वाहित मल की गंध फफूंद जैसी होती है जो साधारणतया अरुचिकर नहीं होती है। किन्तु जब पुराना वाहित मल सड़ने लगता है तो बहुत अरुचिकर गंध आने लगती है। पुराने वाहित मल से हाइड्रोजन सल्फाइड जैसी सड़े अंडों की गंध आती है। कभी-कभी वाहित मल से असामान्य गंध आती है जो औद्योगिक अपशिष्ट के कारण होती है।

MAADHYAM IAS

iii) **आविलता और रंग:** ताजे वाहित मल की उच्च आविलता होती है और धूसर रंग होता हैं। कभी-कभी वाहित मल का रंग आंशिक अपघटन के कारण काला हो जाता है। अन्य रंग औद्योगिक विसर्जनों के कारण होते हैं।

रासायनिक अभिलक्षण: वाहित मल के रासायनिक अभिलक्षणों को अकार्बनिक और कार्बनिक घटकों के दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

i) **अकार्बनिक घटक:** वाहित मल के अकार्बनिक घटकों में मुख्य रूप से बालू और घुले खनिज द्रव्य होते हैं जो सामुदायिक जल आपूर्ति तथा संग्रह तंत्र में अंत:स्यंदित होने वाले भौमजल में विद्यमान रहते हैं। कुछ औद्योगिक अपशिष्टों से भी वाहित मल में अकार्बनिक रसायन मिल जाते हैं। खनिज द्रव्यों में कैल्सियम, मैग्नीशियम, सोडियम, पोटैशियम और लोहे के सल्फेट, कार्बोनेट और क्लोराइड होते हैं। इन अकार्बनिक पदार्थों की उपस्थिति, उपचार प्रक्रम को प्रभावित कर सकती है। लौह लवण सक्रियित आपंक संयंत्रों की वातन टंकियों (aeration tanks) तथा च्यावी निस्यंदकों (trickling filters) में अवक्षेपित हो जाते हैं जो पहले वायु विसारित्रों (**air** dffusers) को और फिर निस्यंदन माध्यम को अवरुद्ध कर देते हैं।

ii) **कार्बनिक घटक:** वाहित मल के कार्बनिक अंश में मुख्यत: प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और वसा होते हैं। अपशिष्टों में उपस्थित प्रोटीन, उनके उपापचयज और अपघटन उत्पाद, नाइट्रोजन उत्पन्न करते हैं। प्रोटीनों में कार्बन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन और ऑक्सीजन तथा कभी-कभी फ़ॉस्फ़ोरस और गंधक भी होते हैं। वाहित मल में नाइट्रोजन का मुख्य स्रोत यूरिया है जिसके शीघ्र अपघटन से कार्बन आइऑक्साइड और अमोनिया प्राप्त होते हैं। प्रोटीनों से अपशिष्ट में गंधक भी प्राप्त होता है जिसके अपचयन से हाइड्रोजन सल्फाइड गैस उत्पन्न होती है। कार्बोहाइड्रेटों में कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन होते हैं। शर्कराएं और स्टार्च प्ररूपी कार्बोहाइड्रेट हैं। सबसे पहले जीवाणुओं द्वारा इन पदार्थों के अपघटन से कार्बनिक अम्ल प्राप्त होते हैं। कार्बोहाइड्रेटों के अपघटन के कारण खड़े वाहित मल का pH, ताजे वाहित मल की अपेक्षा कम होता है। वसाओं में भी कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन होते हैं। वे रसोईघर, चर्म संस्कार शाला और वेष्टन गृह (packing house) अपशिष्टों में पाए जाते हैं। वसाओं के कारण वाहित मल उपचार कठिन हो जाता है। वे टंकियों और चैनलों की दीवारों को विलेपित कर देते हैं और यदि उन्हें पृथक न किया जाए तो वे अपघटित होकर अरुचिकर गंध उत्पन्न करते हैं। वे अवसादन टंकियों में मलफेन (scum) बनने के लिए उत्तरदायी होते हैं तथा अन्य कार्बनिक कणों को भी विलेपित (coat) कर देते हैं जो बाद में निस्यंदकों को अवरुद्ध कर देते हैं।

वाहित मल के प्राचल

वाहित मल के समुचित उपचार के लिए जिन महत्वपूर्ण प्राचलों की जानकारी आवश्यक है वे इस प्रकार हैं: ठोसों की सान्द्रता, जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता और नाइट्रोजन।

i) **ठोस:** वाहित मल में ठोसों का वर्गीकरण स्थिर अथवा वाष्पशील और निलंबित अथवा विलीन के रूप में किया जाता है। इन घटकों की सान्द्रताओं में बहुत भिन्नता होती है जो वाहित मल के स्रोत पर निर्भर करती है।

ii) **जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता :** यह उपचार की दृष्टि से किसी अपशिष्ट का सबसे महत्वपूर्ण अभिलक्षण होता है क्योंकि यह वाहित मल की सान्द्रता का सर्वोत्तम सूचक होता है। यह दिए गए समय और ताप पर कार्बनिक द्रव्य के जैव रासायनिक ऑक्सीकरण

मानक बी. ओ. डी. परीक्षण के लिए अनेक सप्ताहों की ऊष्मायन अवधि की आवश्यकता होती है। किन्तु 20°C पर 5 दिन का बी. ओ. डी. निर्धारण अथवा 27°C पर 3 दिन का बी. ओ. डी. निर्धारण मानक विधि मानी जाती है।

MAADHYAM IAS

के लिए आवश्यक ऑक्सीजन की माप होती है। घरेलू वाहित मल का बी. ओ. डी. 100-300 mg L^{-1} होता है। वाहित मल में कचरे के प्रवेश से बी. ओ. डी. में वृद्धि हो जाती है जबकि भौमजल और पृष्ठीय जल के मिलने से वह कम हो जाता है।

H^+ आयनों की सान्द्रता जितनी अधिक होती है, *p*H का मान उतना ही कम होता है। *p*H का परास शून्य से 14.0 तक होता है जबकि उदासीन विलयन का *p*H 7 होता है। यदि *p*H मान 7.0 से अधिक हो तो विलयन क्षारीय होता है जबकि 7.0 से कम *p*H मान विलयन की अम्लीय प्रकृति को सूचित करता है।

iii) ***p*H :** *p*H, द्रव की हाइड्रोजन आयन सान्द्रता का माप होता है। 6.0 से कम अथवा 9.0 से अधिक *p*H मान पर अपशिष्टों को स्थायी बनाने वाले सूक्ष्मजीवों की वृद्धि रुक जाती है। प्रभावकारी पाचन प्रक्रिया के लिए आपंक का *p*H 7.0 के आस-पास बनाए रखना चाहिए।

iv) **नाइट्रोजन :** कार्बनिक अपशिष्टों में नाइट्रोजन अनेक रूपों में पाई जाती है जो अपशिष्ट स्थायीकरण की मात्रा पर निर्भर करता है। वाहित मल में सामान्यतया नीचे दिए गए नाइट्रोजन के चार प्रकारों का निर्धारण किया जाता है: **मुक्त अमोनिया, कार्बनिक नाइट्रोजन, नाइट्रेट नाइट्रोजन** और **नाइट्राइट नाइट्रोजन**। ये सब मिलकर **कुल नाइट्रोजन** को व्यक्त करते हैं। ताजे, ठंडे वाहित मल में कार्बनिक नाइट्रोजन की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक और मुक्त अमोनिया की मात्रा कम होती है। बासी, गरम वाहित मल में मुक्त अमोनिया की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक और कार्बनिक नाइट्रोजन की मात्रा कम होती है। ताजे वाहित मल में नाइट्रेट और नाइट्राइट विद्यमान रहते हैं लेकिन उनकी सान्द्रताएं कम होती हैं। किन्तु उपचारित वाहित मल में नाइट्रेट की सान्द्रता अधिक होती है। नाइट्राइट स्थायी नहीं होते हैं और वे या तो अमोनिया में अपचित हो जाते हैं अथवा नाइट्रेटों में ऑक्सीकृत हो जाते हैं और उनकी उपस्थिति से यह संकेत मिलता है कि परिवर्तन हो रहा है।

सूक्ष्मजीव: वाहित मल में सूक्ष्मजीव अनेक रूपों में पाए जाते हैं। उन्हें मुख्यत: दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है: पहला वे जो वाहित मल का शोधन करते है और दूसरा वे जो मनुष्यों और जानवरों में रोग और संक्रमण उत्पन्न कर सकते हैं।

वाहित मल शोधन की मात्रा उपलब्ध खाद्य पदार्थ और अन्य पर्यावरणी स्थितियों पर निर्भर करती है। ये जीव एक स्थिति में पदार्थ को ऑक्सीकृत करते हैं, और दूसरी स्थिति में उसे अपचित करते हैं। उदाहरण के लिए, अवायवीय पर्यावरण में जीव अपने उपयोग के लिए ऑक्सीजन लेकर यूरिया का अपचयन, प्रोटीन अथवा सेलुलोस का जल अपघटन, वसाओं का पायसन (emulsification), नाइट्रेटों और सल्फेटों का अपचयन करते हैं और मेथैन, कार्बन डाइऑक्साइड और अमोनिया उत्पन्न करते हैं तथा वायवीय पर्यावरण में नाइट्राइटों, कार्बन डाइऑक्साइड और जल का संकलन करते हैं।

मनुष्यों और जानवरों में रोग और संक्रमण पैदा करने वाले जीव वाहित मल में सदैव रहते हैं और उपचार द्वारा उन्हें पूरी तरह समाप्त नही किया जा सकता है। इसलिए यह आवश्यक है कि अपने और समुदाय को स्वास्थ्य की रक्षा के लिए वाहित मल के साथ काम करते समय समुचित सावधानी रखी जाए। अत: ग्राही जल में विसर्जित करने से पहले उपचारित वाहित मल को विसंक्रमित कर देना चाहिए।

MAADHYAM IAS

13.2.3 वाहित मल विश्लेषण

आम तौर पर वाहित मल का विश्लेषण उसमें विद्यमान विभिन्न घटकों की उपस्थिति और गुणधर्मों की जानकारी प्राप्त करने के लिए किया जाता है जिनके कारण वाहितमल के भौतिक, रासायनिक और जैव अभिलक्षण प्रदर्शित होते हैं। इसलिए आवश्यक है कि उन परीक्षणों पर निर्भर किया जाए जो उनकी वास्तविक रचना के बजाय वाहित मल के अवयवों के गुणधर्मों को प्रकट करते हैं। इस कारण भी एक-दूसरे से संबंधित अनेक परीक्षण किए जाते हैं जिनकी अलग-अलग नहीं बल्कि एक साथ कुल मिलाकर व्याख्या की जाती है। परस्पर संबंधित

आमतौर पर किए जाने वाले परीक्षण सारणी 13.1 में दिए गए हैं। विशेष परिस्थितियों में सल्फेटों, फ़ीनॉलों, विषाक्त धातुओं और अन्य पदार्थों के परीक्षण महत्वपूर्ण होते हैं। किन्तु इन प्राचलों के परीक्षण नित्यप्रति नहीं किए जाते हैं।

सारणी 13.1: वाहित मल विश्लेषण के परीक्षण

गैसें और वाष्पीशील घटक	खनिज द्रव्य	कार्बनिक द्रव्य	खनिज और कार्बनिक द्रव्य	जीव		भौतिक अवस्था
				जीवाणु	प्लवक	
गंध घुली ऑक्सीजन हाइड्रोजन सल्फाइड	स्थिर ठोस 1. संपूर्ण 2. निलंबित क) नि:सादन ख) गैर-नि: सादन 3. घुली अमोनिया N* नाइट्राइट N नाइट्रेट N क्लोराइड क्षारता कठोरता लोहा फ़ॉस्फेट	वाष्पशील ठोस* 1. संपूर्ण 2. निलंबित क) नि:सादन ख) गैर- नि: सादन 3. घुली कार्बनिक N ऐल्बूमिनॉइड N जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता आपेक्षिक स्थायित्व ईथर विलेय द्रव्य	ठोस 1. संपूर्ण 2. निलंबित क) नि:सादन ख) गैर नि: सादन 3. घुली H-आयन सान्द्रता	जीवाणु 37°C पर कॉलीफॉर्म 44.5°C पर *E- कॉली कॉली*	जन्तु रूप पादप रूप	ताप

*कार्बनिक पदार्थ और अकार्बनिक पदार्थ दोनों शामिल हैं।

विश्लेषण परिणामों की अभिव्यक्ति : ताप, गंध, हाइड्रोजन आयन सान्द्रता और जीवित जीवों को छोड़कर वाहित मल विश्लेषण के परिणाम $mg\ L^{-1}$ में व्यक्त किए जाते हैं।

एक समुदाय के वाहित मल के औसत विश्लेषण का दूसरे समुदाय से अथवा एक जनपद की मल व्यवस्था का दूसरे जनपद से तुलना करना कठिन है क्योंकि उनके जल आपूर्ति पैटर्नों में भिन्नता होती है। किन्तु यदि वाहित मल की मात्रा और अंशदायी लोगों की संख्या ज्ञात हो तो सीवर द्वारा आपूर्त जनसंख्या के आधार पर वाहितमल के संघटन की तुलना की जा सकती है। यह संघटन ग्राम प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन में व्यक्त किया जाता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

वाहित मल का औसत संघटन: किसी समुदाय के वाहित मल के संघटन में समय-समय पर परिवर्तन होता रहता है जो घटकों की मात्राओं में कमी या बढ़ोतरी तथा सीवर में भौमजल, पृष्ठीय जल और तूफ़ानी जल की प्रविष्ट करने वाली कम या अधिक मात्रा पर निर्भर करता है। अर्धरात्रि से सुबह तक वाहित मल की सान्द्रता कम होती है क्योंकि इस अवधि में घरेलू गतिविधियां कम से कम होती हैं। उसी प्रकार, अलग-अलग दिनों में वाहित मल की मात्रा और गुणता में भिन्नता दिखाई देती है। औसत दैनिक गुणता में सबसे अधिक भिन्नता रविवार के दिन पाई जाती है क्योंकि उस दिन औद्योगिक अपशिष्ट सीवर में विसर्जित नहीं होते हैं और घरेलू कार्यकलाप अधिकतम होते हैं।

ग्रीष्म और पतझड़ के आरंभ में प्रवाहित होने वाले वाहित मल की अपेक्षा वर्षा के महीनों का वाहित मल तनु होता है। कुछ हद तक संघटन पर ताप, जीवाणु-क्रिया तथा तनुकरण का भी

प्रभाव पड़ता है। खाद्य पदार्थों के उपभोग में मौसमी बदलाव और औद्योगिक प्रचालनों का भी वाहित मल के संघटन पर प्रभाव पड़ता है।

13.2.4 वाहित मल प्रतिचयन

प्रतिदर्शों को सावधानी और समझदारी के साथ लेना आवश्यक है। केवल एक प्रतिदर्श के विश्लेषण के परिणामों से सही जानकारी नहीं मिलती है। यह उचित है कि कई प्रतिदर्श लिए जाएँ और विभिन्नताओं का ध्यान रखते हुए उनके विश्लेषणों के औसत परिणाम लिए जाएं। वाहित मल, औद्योगिक अपशिष्टों और उपचार केन्द्रों से प्राप्त बहि:स्रावों के प्रतिदर्शों को प्रतिदिन अथवा साप्ताहिक रूप से एकत्र किया जाता है। आधे-आधे अथवा एक-एक घंटे के अंतराल से अलग-अलग प्रतिदर्श लिए जाते हैं जिन्हें प्रतिचयन अवधि के अंत में मिला दिया जाता है अथवा एक ही पात्र में रख दिया जाता है। जहां तक संभव हो अलग-अलग हिस्सों को वाहित मल प्रवाह दरों के अनुपात में मिलाना चाहिए। समानुपातन, प्रतिदिन दस लाख लीटर प्रवाह के मिली लिटर में साधारण गुणज के रूप में किया जाता है। यदि संचयन के 4 से 6 घंटों के अंदर विश्लेषण न किया जा सके तो कोई परिरक्षक मिला देना चाहिए। इसके लिए क्लोरोफॉर्म, फार्मेल्डिहाइड अथवा सल्फ्यूरिक अम्ल का उपयोग किया जाता है। किन्तु जीवाणु-विश्लेषण अथवा जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता अथवा pH के लिए प्रतिदर्शों को $4^{\circ}C$ पर बर्फ में परिरक्षित किया जाता है।

बोध प्रश्न

1) वाहित मल के अभिलक्षणन के मुख्य प्राचल क्या हैं?

....

....

....

....

वाहित मल के साधारण अभिलक्षणों और विश्लेषण संबंधी जानकारी के बाद, आइए, उसमें विद्यमान विभिन्न घटकों का अध्ययन करें।

13.3 वाहित मल में ठोस द्रव्य

वाहित मल में विद्यमान ठोसों में उस जल में उपस्थित ठोस भी शामिल हैं जो घरेलू अपशिष्टों का मुख्य घटक होता है। उपभोक्ताओं को दिए गए कुल जल का कुछ भाग सीवर में पहुंचता है। वाहित मल में प्रवेश करने वाले भाग में निजी आपूर्ति, भौमजल अथवा तूफानी जल भी आ मिलता है। विभिन्न स्रोतों से प्राप्त खनिज अथवा कठोर जल से भी वाहित मल में उपस्थित ठोस प्राप्त होते हैं। ठोस रसोई घर, धुलाई घर, स्नानघर, होटल, कार्यालय भवन और संस्थानों से भी उत्पन्न होते हैं। मल, मूत्र और कागज़ से ठोस द्रव्य में वृद्धि होती है तथा उसमें औद्योगिक अपशिष्टों का सबसे अधिक योगदान होता है। संयुक्त तंत्रों में, सड़क धावन और तूफानी जल के ठोस द्रव्य भी वाहित मल में मिल जाते हैं। इस प्रकार, वाहित मल में ठोस पदार्थों की मात्राएं, सीवर में जल के लक्षण, जनसंख्या की आदतों, उद्योगों की प्रकृति तथा संयुक्त अथवा पृथक तंत्र के उपयोग पर निर्भर करती हैं। इन कारकों के कारण विभिन्न शहरों के वाहित मल में ठोस पदार्थों की मात्रा में पर्याप्त भिन्नता पाई जाती है, भले ही उनकी जनसंख्या लगभग बराबर हो।

MAADHYAM IAS

वाहित मल में ठोस द्रव्य निम्नलिखित तीन अवस्थाओं में पाए जाते हैं:

i) निलंबित द्रव्य

ii) कोलॉइडी द्रव्य और

iii) विलीन प्रव्य

इन तीन अवस्थाओं में विभेदन, निकटवर्ती जल में वाहित मल के कणों के आमाप पर निर्भर करता है। यदि बारीक बालू और जल को हिलाया जाए तो एक **निलंबन** प्राप्त होता है। निलंबन में कण अलग-अलग दिखाई देते हैं किन्तु कुछ समय बाद वे नीचे बैठ जाते हैं बालू के कण जितने सूक्ष्म होते हैं वे नीचे बैठने में उतना ही अधिक समय लेते हैं। यदि कण बहुत सूक्ष्म हों तो उन्हें नीचे बैठने में बहुत अधिक समय लगता है। जो कण बहुत अधिक समय बाद भी नीचे नहीं बैठते हैं उन्हें **कोलॉइडी द्रव्य** कहते हैं। जैसे-जैसे कणों की सूक्ष्मता बढ़ती जाती है उनमें सर्वोत्तम सूक्ष्मदर्शी अथवा अति सूक्ष्मदर्शी विधियों द्वारा भेद नहीं किया जा सकता है। किन्तु द्रव के एक समतल में प्रकाश किरण पुंज प्रविष्ट करने से द्रव में कण दिखाई देते हैं। इस प्रकाश किरण पुंज को **टिन्डल किरण पुंज** कहते हैं और ये कण, **कोलॉइड कण** होते हैं। कणों का आमाप घटने पर अंततः **वास्तविक विलयन** प्राप्त होते हैं। जल में नमक अथवा चीनी के विलयन वास्तविक विलयन होते हैं। स्पष्ट है कि एक चरम अवस्था से दूसरी चरम अवस्था तक पूर्ण सांतत्य रहता है और तीन अवस्थाओं में कोई यथार्थ परिसीमन नहीं होता है।

सूक्ष्मदर्शी द्वारा प्रेक्षण करने पर पता चलता है कि, 3μ से 5μ तक आमाप से बड़े कणों में कोई गति नहीं होती है जबकि 1μ से 2μ व्यास से छोटे कण **ब्राउनी गति** प्रदर्शित करते हैं। यह द्रव के अणुओं द्वारा कणों की बमबारी के कारण होती है। कण जितने छोटे होते हैं गति का आयाम उतना ही अधिक होता है। इस गति द्वारा प्रेरित घर्षण, कणों के पृष्ठ पर विद्युत् आवेश के लिए उत्तरदायी होता है। विशेषतः इसका संबंध कोलॉइडी अवस्था में कणों से होता है। वास्तविक विलयन ऐसी अवस्था होती है जिसमें कण बहुत छोटे होते हैं और उनके वेग इतने अधिक होते हैं कि वे तीव्र गति से जल में वितरित हो जाते हैं।

13.3.1 वाहित मल में ठोस द्रव्यों का निर्धारण

वाहित मल में ठोस द्रव्य की **मात्रा** निर्धारित करने के लिए वाहित मल के ज्ञात आयतन को उद्वाष्पित (evcporate) कर 105°C पर सुखाने के बाद अवशिष्ट को तोल लिया जाता है। यह अवशिष्ट, वाहितमल में कुल ठोस की माप होता है। यदि इस अवशिष्ट को प्रज्वलित किया जाए अर्थात् वाष्पशील द्रव्य को जलाने के लिए 650°-700°C पर पर्याप्त गरम किया जाए तो शेष पदार्थ का भार **स्थिर ठोस** अथवा **खनिज द्रव्य** का लगभग भार होता है। कुल ठोस और स्थिर ठोस के भार में अंतर **दहन में हानि** कहलाता है जो वाष्पशील ठोस अथवा कार्बनिक द्रव्य का लगभग माप होता है। प्रज्वलन से केवल मात्रा की जानकारी मिलती है किन्तु उससे कार्बनिक द्रव्य के अभिलक्षणों की जानकारी नहीं मिलती है।

निस्यंदन पत्र अथवा अन्य निस्यंदक माध्यम द्वारा वाहित मल के निस्यंदन और 105°C पर शुष्कन से प्राप्त निस्यंद से और निस्यंदन माध्यम में निक्षेपित द्रव्य से क्रमशः **विलीन ठोस** और **निलंबित ठोस** की मात्राओं को निधारित किया जा सकता है। इस प्रक्रिया द्वारा कोलॉइडी द्रव्य को निलंबित और विलीन ठोसों से पृथक नहीं किया जा सकता। कुछ कोलॉइडी ठोस निलंबित ठोस के साथ परंतु ज्यादातर कोलॉइडी ठोस विलीन ठोस के साथ प्राप्त होता है। निस्यंदन विधि का उल्लेख अवश्य करना चाहिए। इस समय कोलॉइडी द्रव्य का कोई सरल अथवा मानक परीक्षण नहीं है और मोटे तौर पर कोलॉइडी द्रव्य का तात्पर्य उस सूक्ष्म विभाजित द्रव्य से होता है जो आसानी से नि:सादित नहीं होता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

नि:सादनीय ठोस (setteable solids) आपंक अथवा अवसाद की उस मात्रा को कहते हैं जो निश्चित समय-अंतराल में वाहित मल की निश्चित मात्रा से अवक्षेपित होती है और जिसे mL या mL प्रति लीटर आयतन द्वारा प्रतिशत में और भार द्वारा भाग प्रति दस लाख (ppm) में व्यक्त किया जाता है। नि:सादनीय ठोसों को 'इम्हॉफ शंकु' नामक विधि से मापा जाता है। इम्हॉफ शंकु 40 cm लम्बा कांच का शंकु होता है जिसका शीर्ष व्यास 10 cm होता है और क्रमश: पतला होकर पैंदे पर (thimble) के आकार का होता है। इसे पैंदे पर mL में अंशांकित किया जाता है और इसका आयतन 1 लीटर होता है, (चित्र 13.1 और 13.2 देखिए)। आपंक के प्रतिदर्श को 2 घंटे तक स्थिर रखने के बाद mL में मापा जाता है। नि:सादन की विधि और समय को नोट कर लेना चाहिए। ठीक-ठीक निर्धारण के लिए, नि:सादित ठोसों का भार ज्ञात करने के लिए अधिप्लवी (supernant) द्रव को निथार कर कुल ठोस की मात्रा ज्ञात कर ली जाती है। अनि:सादित और नि:सादित प्रतिदर्श के ठोस की कुल मात्रा के अंतर के अभिकलन से नि:सादी ठोस प्राप्त किए जाते हैं। वाहित मल में तेल और वसा के अतिरिक्त प्लवी द्रव्य के निर्धारण के लिए कोई परीक्षण नहीं है।

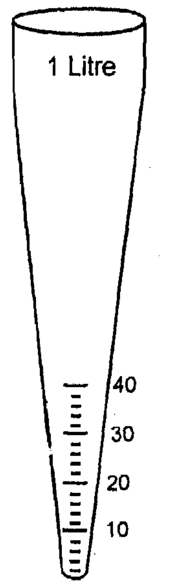

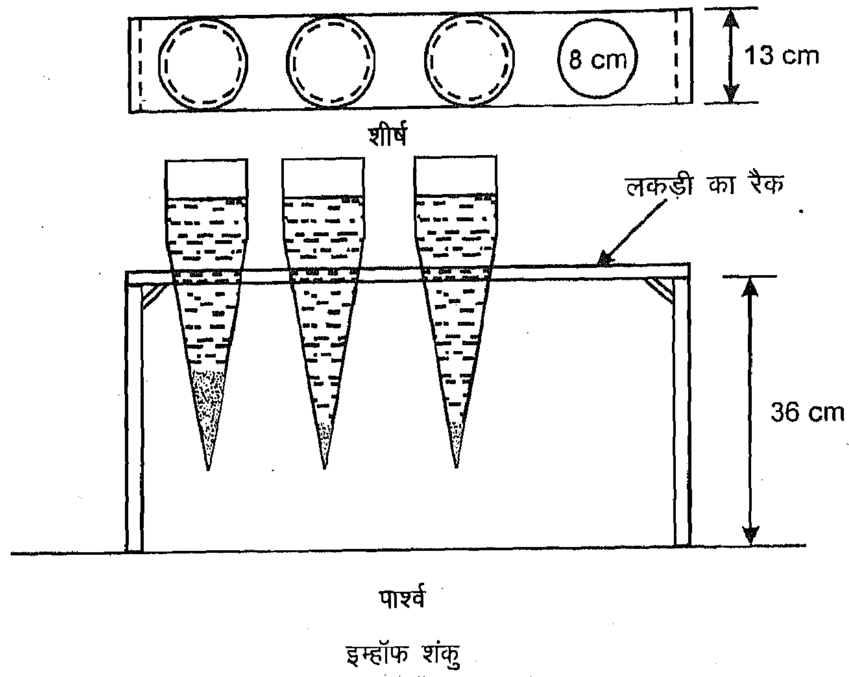

चित्र 13.1: इम्हॉफ़ शंकु **चित्र 13.2: नि:सादनीय ठोसों को मापने के लिए प्रयुक्त इम्हॉफ शंकु**

बोध प्रश्न

2) वाहित मल में ठोसों के स्रोतों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

3) नि:सादी ठोसों के निर्धारण के लिए प्रयुक्त इम्हॉफ शंकु विधि का वर्णन कीजिए।

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

13.4 वाहित मल में कार्बनिक द्रव्य

वाहित मल में जन्तु और वनस्पति मूल के कार्बनिक द्रव्यों में कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के यौगिक होते हैं। कुछ यौगिकों में नाइट्रोजन भी होती है। कभी-कभी गंधक और फॉस्फोरस आदि मुख्य तत्व भी विद्यमान रहते हैं। वाहित मल में कार्बनिक पदार्थों के मुख्य वर्गों में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और वसा तथा उनके अपघटन उत्पाद होते हैं। ये पदार्थ जीवाणु क्रिया द्वारा और अन्य जीवित प्राणियों द्वारा शीघ्र अपघटित हो जाते हैं।

यूरिया, मूत्र का मुख्य घटक है। वह शीघ्र अमोनियम कार्बोनेट में अपघटित हो जाता है और केवल ताजे वाहित मल में मापन योग्य मात्रा में पाया जाता है। **प्रोटीन** जंतुओं के मुख्य घटक होते हैं। वे कुछ कम मात्रा में पौधों में भी पाए जाते हैं। प्रोटीनों की रासायनिक संरचना बहुत जटिल होती है। उनमें कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के अतिरिक्त नाइट्रोजन का स्थिर अनुपात (लगभग 16 प्रतिशत) रहता है जो उनका विशिष्ट अभिलक्षण है। कुछ प्रोटीनों में गंधक, फॉस्फोरस और लोहा भी होता है। वाहित मल में यूरिया और प्रोटीन नाइट्रोजन के प्रमुख स्रोत हैं। **कार्बोहाइड्रेटों** के अंतर्गत शर्कराएं, स्टार्च, सेलुलोस और काष्ठ-रेशा आते हैं। उनमें एक निश्चित समानुपात में कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन होते हैं। **वसाएं**, वसाअम्लों और ग्लिसरीन के संयोजन से बनती हैं। **साबुन**, वसा अम्लों के खनिज लवण होते हैं। वसाओं और साबुन की रासायनिक संरचना अपेक्षाकृत सरल होती है और वे अधिक स्थायी कार्बनिक यौगिक होते हैं। वसाओं में कार्बन, ऑक्सीजन और हाइड्रोजन होते हैं। वाहित मल में पाए जाने वाले साबुनों में सोडियम, पोटैशियम, कैल्सियम और मैग्नीशियम आदि क्षार और क्षारीय मृदा धातुएं भी होती हैं।

औसत वाहित मल में विभिन्न कार्बनिक पदार्थों की मात्रा लगभग 350 $mg\ L^{-1}$ होती है। इसका लगभग आधा भाग निलंबन के रूप में और शेष आधा भाग विलयन के रूप में होता है। वाहित मल का लगभग संघटन नीचे सारणी 13.2 में दिया गया है।

सारणी 13.2: वाहित मल में कार्बनिक पदार्थ

कार्बनिक पदार्थ	मात्रा ($mg\ L^{-1}$ में)
नाइट्रोजनी द्रव्य	150
कार्बोहाइड्रेट	175
वसा	25

जन्तु और पादप मूल के इन कार्बनिक द्रव्यों के अतिरिक्त खनिज तेल, पेट्रोलियम उत्पाद, पृष्ठ सक्रियक, अपमार्जक और तारकोल जिसमें मुख्यत: कार्बन और हाइड्रोजन होते हैं, भी सीवरों में विसर्जित किए जाते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

लगभग 67 प्रतिशत निलंबित ठोस और 40 प्रतिशत विलीन ठोस कार्बनिक होते हैं। इन पदार्थों के अपघटन से जल में उपस्थित ऑक्सीजन का शीघ्र ह्रास हो जाता है जिसके बाद दुर्गंधयुक्त यौगिक उत्पन्न होते हैं। यही कारण है कि वाहित मल में उपस्थित कार्बनिक मात्रा, विशेष रूप से ऑक्सीजन के लिए उसका आकर्षण, वाहित मल उपचार और निपटान की मुख्य समस्या होती है।

13.4.1 प्रकृति में कार्बन चक्र, नाइट्रोजन चक्र और गंधक चक्र

विशेष रूप से कार्बनिक द्रव्य के निर्धारण के संबंध में वाहित मल के विश्लेषण में प्रयुक्त अनेक परीक्षणों के चयन और महत्व को समझने के लिए प्रकृति में कार्बन, नाइट्रोजन और गंधक के

चक्रों को समझना आवश्यक है। इन चक्रों की जानकारी से उपचार संयंत्रों, सरिताओं अथवा अन्य जल निकायों में, जिनमें वाहित मल को विसर्जित किया जाता है, वाहित मल के व्यवहार की व्याख्या करने में सहायता मिलती है।

कार्बनिक नाइट्रोजनी द्रव्य, जीवाणुओं द्वारा अपघटित होता है और उसमें उपस्थित नाइट्रोजन पहले **अमोनिया** के रूप में प्राप्त होती है। नाइट्रीकारी जीवाणुओं के दो पृथक समूहों द्वारा ऑक्सीकरण अथवा नाइट्रीकरण द्वारा वह पहले **नाइट्राइटों** में और फिर **नाइट्रेटों** में परिवर्तित हो जाती है। **नाइट्रेट**, पादप भोजन का काम करते हैं तथा पादपों द्वारा ली गयी नाइट्रोजन से पादप ऊतकों अथवा पादप प्रोटीनों की रचना होती है। पादप की मृत्यु के बाद प्रोटीन फिर से **नाइट्रोजनी द्रव्य** में परिवर्तित हो जाते हैं। यदि इन पादपों को जानवर खा लें तो नाइट्रोजन का एक भाग जन्तु प्रोटीन में परिवर्तित हो जाता है और शेष नष्ट हो जाता है। जानवरों के नाइट्रोजनी अपशिष्ट उत्पाद, **कार्बनिक नाइट्रोजनी द्रव्य** और **यूरिया** होते हैं। अन्य विशेष जीवाणु समूह द्वारा यूरिया का **अमोनिया** में विभंजन हो जाता है। कुछ जीवाणु नाइट्रेटों को गैसीय नाइट्रोजन में परिवर्तित कर देते हैं। इसे **अपचयन** अथवा **विनाइट्रीकरण** कहते हैं। नाइट्रेटों का नाइट्राइटों और अमोनिया में अपचयन तथा इनमें से किसी से गैसीय नाइट्रोजन का विमोचन, विनाइट्रीकरण के अन्य रूप हैं। जीवाणु क्रिया द्वारा फलीदार पादप मुक्त नाइट्रोजन से पादप ऊतक बनाते हैं। इसे **नाइट्रोजन यौगिकीकरण** कहते हैं। अंत में जीवाणु, **अमोनिया** को अपनी ही कोशिकाओं के जीव-द्रव्य (living matter) में परिवर्तित कर देते हैं।

जैव कार्बनी द्रव्य के अपघटन से कार्बन डाइऑक्साइड गैस अथवा कार्बोनेट उत्पन्न होते हैं। मुक्त ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में गंधक युक्त जैव द्रव्य के अपघटन से **सल्फाइड**, मुख्यतः H_2S उत्पन्न होते हैं। ऑक्सीजन की उपस्थिति में तथाकथित गंधक जीवाणुओं द्वारा हाइड्रोजन सल्फाइड के ऑक्सीकरण से **गंधक और सल्फेट** उत्पन्न होते हैं। पादप और जन्तु जीवन की गतिविधियों से प्रकृति में इस तत्व का चक्र पूरा हो जाता है। जिन परिस्थितियों में नाइट्रेटों और नाइट्राइटों का अपचयन होता है, उन्हीं में सल्फेटों के **अपचयन** से हाइड्रोजन सल्फाइड उत्पन्न होती है।

जीवाणु और जीवन के अन्य आदि रूप जल की अनुपस्थिति में कार्य नहीं कर सकते हैं। जल केवल शुष्कन ही नहीं रोकता है अथवा खाद्य पदार्थों के लिए वाहक माध्यम के रूप में ही काम नहीं करता है और उसकी केवल इस प्रकार की निष्क्रिय भूमिका नहीं होती है। जैव पदार्थों के संश्लेषण और छोटे अणुओं के सरलीकरण, दोनो में जल की सक्रिय भूमिका होती है। कार्बनिक पदार्थों के जल अपघटन से सरल और अधिक विलेय यौगिक प्राप्त होते हैं। इन परिवर्तनों में द्रव्य की हानि नहीं होती है, केवल उसके रूप और अभिलक्षणों में परिवर्तन होता है। तथ्य यह है कि कार्बनिक द्रव्य बनाने वाले सभी तत्व किसी न किसी समय अकेले अथवा संयुक्त रूप में, गैसों अथवा वाष्पशील पदार्थों के रूप में पाए जाते हैं। किन्तु कभी-कभी उनकी वाहित मल से वायुमंडल में हानि हो जाती है।

आइए, अब पढ़ें कि वाहित मल में कार्बनिक द्रव्य का निर्धारण कैसे किया जाता है।

MAADHYAM IAS

13.4.2 कार्बनिक द्रव्यों का निर्धारण

वाहित मल में कार्बनिक पदार्थों के लिए किए जाने वाले परीक्षणों से निम्नलिखित सूचना प्राप्त होती है:

i) कार्बनिक पदार्थ की मात्रा और भौतिक अवस्था अर्थात् वाष्पशील ठोसों अथवा ज्वलन पर हानि के लिए परीक्षण (कुल, निलंबित, नि:सादी, और गैर-नि:सादी और घुले हुए ठोस)

ii) नाइट्रोजनी पदार्थ की मात्रा और अभिलक्षण अर्थात् ऐल्बूमिनॉइड और कार्बनिक

नाइट्रोजन के लिए परीक्षण जिन पर प्रायः खनिज रूप में नाइट्रोजन के परीक्षणों के साथ विचार किया जाता है (अमोनिया, नाइट्राइट और नाइट्रेट नाइट्रोजन)।

iii) कार्बनमय पदार्थ की मात्रा और प्रकृति अर्थात् उपभुक्त ऑक्सीजन के लिए परीक्षण।

iv) वाहित मल में ऑक्सीजन उपलब्धता अर्थात् जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता और आपेक्षिक स्थायित्व के परीक्षण।

v) वसाओं और तेलों की उपस्थिति, अर्थात् ईथर विलेय पदार्थों के लिए परीक्षण।

वाष्पशील ठोसों अथवा ज्वलन पर हानि के लिए परीक्षण से उपस्थित कार्बनिक द्रव्य की प्रकृति का पता नहीं चलता है, उससे केवल कार्बनिक पदार्थों की अवस्था का पता लगता है। वाहित मल में नाइट्रोजनी पदार्थ यूरिया और प्रोटीन तथा उनके अपघटन उत्पादों से प्राप्त होते हैं। **कार्बनिक नाइट्रोजन** केल्डाल विधि (Kjeldahl method) द्वारा निर्धारित की जाती है। वाहित मल को सान्द्र अम्ल के साथ उबालने से उसमें उपस्थित जटिल कार्बनिक पदार्थों से नाइट्रोजन मुक्त होती है। उसे अमोनिया में परिवर्तित कर निर्धारित किया जाता है। **ऐल्बूमिनॉअड नाइट्रोजन** कार्बनिक नाइट्रोजन का वह अंश है जो बहुत आसानी से भंजित हो जाता है। उसे निर्धारित करने के लिए वाहित मल को क्षारीय विलयन में रासायनिक ऑक्सीकारक के साथ उबाला जाता है और आसवित अमोनिया को एकत्र कर लिया जाता है। अमोनिया नाइट्रोजन, जिसे **'मुक्त अमोनिया'** भी कहते हैं, वाहित मल को बिना रसायनों के मिलाए उबालने अथवा आसवित करने पर उत्पन्न होती है। इसे ठंडे प्रतिदर्श में उपयुक्त अभिकर्मक मिलाने से भी निर्धारित किया जा सकता है। वाहित मल में रासायनिक अभिकर्मक मिलाने से **नाइट्राइट** और **नाइट्रेट नाइट्रोजन** प्राप्त होते हैं जिससे उसमें कुछ रंग उत्पन्न हो जाते हैं। इन रंगों की नाइट्राइटों और नाइट्रेटों की ज्ञात मात्राओं द्वारा उत्पन्न रंगों से तुलना की जाती है। कुछ अन्य विधियां भी उपलब्ध हैं जैसे इन ऑक्सीकृत उत्पादों के रासायनिक अपचयन से अमोनिया का प्राप्त होना और उसका निर्धारण करना।

वाहितमल में **कार्बनमय पदार्थ** के निर्धारण का कोई विश्वसनीय परीक्षण नहीं हैं। यदि कार्बन की कुल मात्रा ज्ञात की जा सके तो वह कुल कार्बनमय पदार्थ की उपयुक्त माप होगी। ऑक्सीजन उपभुक्त परीक्षण को यद्यपि कार्बनमय पदार्थ को मापने की विधि माना जाता है किन्तु वह पोटैशियम परमैंगनेट, पोटैशियम डाइक्रोमेट को निश्चित समय तक अम्ल के साथ उबालने अथवा गर्म करने से उत्पन्न ऑक्सीजन की वाहित मल द्वारा अवशोषित मात्रा को बतलाता है। यह संपूर्ण कार्बनिक पदार्थ के रासायनिक ऑक्सीकरण के लिए आवश्यक कुल ऑक्सीजन को नहीं बतलाता है। इस परीक्षण में प्रयुक्त समय और ताप का स्पष्ट उल्लेख करना चाहिए।

जीवाणु क्रिया द्वारा कार्बनिक द्रव्य के अपघटन और खनिजीकरण से घुली ऑक्सीजन का क्षय हो जाता है। ऑक्सीजन के लिए वाहित मल के आकर्षण से उसमें उपस्थित कार्बनिक पदार्थ की प्रकृति और मात्रा की जानकारी मिलती है। इस अभिलक्षण की माप करने वाले दो परीक्षण हैं: वाहित मल की **जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता** (बी. ओ. डी.) और उसका **आपेक्षिक स्थायित्व।**

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता को सुनिश्चित करने के लिए वाहित मल को स्वच्छ संग्रहित जल (जिसका बी. ओ. डी. निश्चित कर लिया गया हो) मिलाकर तनु कर लिया जाता है। प्रतिदर्श को निश्चित समय के लिए स्थिर ताप पर (20°C ताप पर 5 दिन के लिए और 27°C ताप पर 3 दिन के लिए) रखा जाता है तथा परीक्षण के आरंभ और अंत में घुली ऑक्सीजन की मात्रा के अंतर को नोट कर लिया जाता है। प्रतिदर्श को कांच की डाट वाली

बोतल में भर देना चाहिए ताकि वायुमंडल से ऑक्सीजन का अवशोषण न हो। यह एक नाजुक परीक्षण है और इसमें परिस्थितियों का पूर्ण नियंत्रण कर लेना चाहिए जो संतोषजनक परिणाम के लिए आवश्यक है।

आपेक्षिक स्थायित्व परीक्षण में इस तथ्य का उपयोग किया जाता है कि जब विलयन में ऑक्सीजन समाप्त हो जाती है तो मेथिलीन ब्लू, जो एक कार्बनिक रंजक पदार्थ है, रंगहीन हो जाता है। एक डाट वाली कांच की बोतल में वाहित मल भर कर उसमें मेथिलीन ब्लू का विलयन मिलाया जाता है। फिर उसे स्थायी ताप (20°C) पर रख दिया जाता है और नीले रंग के अदृश्य होने तक का समय नोट कर लिया जाता है। यह मान इस प्रतिदर्श के उस प्रतिदर्श की तुलना में आपेक्षिक स्थायित्व का माप होता है जिसके ऑक्सीकरण की आरंभिक अवस्था में रंग विलुप्त न हो।

इन दोनों परीक्षणों में ऑक्सीजन की मात्रा में कमी का कारण वाहित मल में **जीवित प्राणियों की क्रियाशीलता** है। इसलिए परीक्षण करने से पहले विसंक्रमित अथवा अत्यधिक अम्लीय अथवा क्षारकीय वाहित मल अथवा बहि:स्राव को सामान्य अवस्था पर समंजित कर जीवित प्राणियों के साथ बीजित किया जाता है।

वाहित मल में **वसा और तेल**, जन्तु और वनस्पति पदार्थों से अथवा गैराजों और गैस कारखानों के अपशिष्टों से प्राप्त होते हैं। उनकी मात्रा **ईथर विलेय पदार्थ** के रूप में निर्धारित की जाती है। इसमें जल का उद्वाष्पन करने के बाद वसा अम्लों को ईथर में घोल लिया जाता है। ईथर को वाष्पित कर दिया जाता है और ईथर-विलेय पदार्थ शेष रह जाता है जिसे तोलकर वसा और तेल की कुल मात्राओं को ज्ञात कर लिया जाता है।

वसाओं और तेलों के परीक्षण के अतिरिक्त कार्बनिक पदार्थ के परीक्षण मुख्यत: वाहित मल के उस भाग की सान्द्रता की माप करते हैं जो उन जल निकायों के ऑक्सीजन संसाधनों को आकर्षित करता है जिनमें वाहित मल विसर्जित होता है। यही कारण है कि वाहित मल के ऑक्सीजन आकर्षण की सीधे माप करने वाले परीक्षण सर्वाधिक महत्वपूर्ण होते है। उपभुक्त नाइट्रोजन और ऑक्सीजन के लिए प्रयुक्त परीक्षण बहुत पुराने हैं जिन्हें जल विश्लेषण के लिए विकसित करने के बाद वाहित मल के लिए प्रयुक्त किया गया है। नाइट्रोजन निर्धारण में कार्बनिक नाइट्रोजन और नाइट्राइट तथा नाइट्रेट में उपस्थित नाइट्रोजन के परीक्षण विश्वसनीय होते हैं। ऐल्बूमिनॉइड और अमोनिया नाइट्रोजन के परीक्षण, विशेषरूप से ऐल्बूमिनॉइड नाइट्रोजन के परीक्षण विश्वसनीय नहीं होते हैं। अपघटनीय पदार्थों के एक भाग की माप, नाइट्रोजन के निर्धारण से वाहित मल उपचार और निपटान के विस्तृत पहलुओं के बारे में बहुत कम सूचना प्राप्त होती है। जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता परीक्षण के आरंभ होने के बाद ऑक्सीजन उपभुक्त परीक्षण का महत्व बहुत कम हो गया है। पहले से उपलब्ध जानकारी के कारण उसका सामान्य उपयोग किया जाता है। अनेक उपचार प्रक्रमों में परीक्षणों की निश्चितता का विशिष्ट महत्व होता है। उदाहरण के लिए, अमोनिया नाइट्रोजन का परीक्षण कुछ परिस्थितियों में ही उपयोगी होता है। नाइट्रीकरण अर्थात् नाइट्रेट उत्पादन के आधार पर उपचार कारखानों से बहि:स्रावों की तुलना उचित नहीं है क्योंकि वह वाहित मल में आरंभ में विद्यमान नाइट्रोजन की मात्रा पर निर्भर करता है और अन्य नाइट्रोजन निर्धारणों की भांति, पूरा किए गए कार्य के एक भाग की माप करता है। किन्तु नाइट्रीकरण की मात्रा, किसी संयंत्र विशेष की दृष्टि से, दक्षता का निर्णय करने में उपयोगी होती है।

MAADHYAM IAS

13.4.3 पोषक तत्व

जैव तंत्र के समुचित कार्य करने में पोषक तत्वों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। नाइट्रोजन और फॉस्फोरस मुख्य पोषक तत्व हैं।

i) **नाइट्रोजन**

नाइट्रोजन प्रोटीनों के संश्लेषण के लिए आवश्यक है। नाइट्रोजन की उपस्थिति जैव प्रक्रमों द्वारा अपशिष्ट जल की उपचारीयता का मान ज्ञात करने के लिए की जाती है। सुपोषण को रोकने के लिए, विसर्जन से पहले, नाइट्रोजन को हटा देना अथवा कम करना आवश्यक है।

प्रकृति में नाइट्रोजन के अनेक रूप पाए जाते हैं। ताजे अवशिष्ट में उपस्थित नाइट्रोजन, प्रोटीनमय पदार्थ और यूरिया में संयुक्त हो जाती है। जीवाणुक अपघटन से नाइट्रोजन का अमोनिया में परिवर्तन हो जाता है। अमोनिया की आपेक्षिक मात्रा से अपशिष्ट जल की आयु का पता लगता है। वायवीय पर्यावरण में, जीवाणुओं द्वारा अमोनिया के आक्सीकरण से नाइट्राइट और नाइट्रेट प्राप्त होते हैं। अपशिष्ट जल में नाइट्रेट नाइट्रोजन की प्रधानता से ऑक्सीजन आवश्यकता के संबंध में स्थायीकरण का संकेत मिलता है।

नाइट्रोजन का नियंत्रण और निष्कासन

अपशिष्ट जल में नाइट्रोजन, अमोनिया अथवा कार्बनिक नाइट्रोजन (कणिकीय और विलेय दोनों) के रूप में विद्यमान रहती है। विलेय कार्बनिक नाइट्रोजन, यूरिया और ऐमीनो अम्लों के रूप में विद्यमान रहती है। सामान्यतया अनुपचारित अपशिष्ट जल में बहुत कम अथवा कोई नाइट्राइट अथवा नाइट्रेट नहीं होता है। कार्बनिक कणिकीय पदार्थ को प्राथमिक अवसादन द्वारा पृथक किया जाता है। जैव उपचार में कणिकीय कार्बनिक नाइट्रोजन, अमोनियम और अकार्बनिक रूपों में परिवर्तित हो जाती है। इस अमोनियम रूप के एक भाग का जैव संहति की कोशिकाओं में स्वांगीकरण हो जाता है। द्वितीयक बहि:स्राव में नाइट्रोजन प्राय: अमोनियम रूप में होती है। अपशिष्ट जल से नाइट्रोजन के रूपांतरण और निष्कासन के लिए प्रयुक्त यूनिट प्रचालन और प्रक्रम इस प्रकार हैं :

क)	**परंपरागत उपचार**	**प्रक्रम में प्रवेश करने वाली कुल N का निष्कासन %**
	प्राथमिक	5-10
	द्वितीयक	10-30
ख)	**जैव प्रक्रम**	
	जीवाणुक स्वांगीकरण	30-70
	विनाइट्रीकरण	70-95
	शस्य शैवाल	50-80
	ऑक्सीकरण ताल	20-90

ii) **फॉस्फ़ोरस**

घरेलू और औद्योगिक अपशिष्ट में और प्राकृतिक वाहजल में विसर्जित फ़ास्फ़ोरस यौगिकों को नियंत्रित करने की आवश्यकता होती है क्योंकि यह शैवाल और अन्य जैव प्राणियों की वृद्धि के लिए आवश्यक है। उदाहरण के लिए, नगरपालिका अपशिष्ट जल में 4-15 mg L^{-1} फॉस्फोरस होता है। जलीय विलयन में पाए जाने वाले फ़ास्फ़ोरस के सामान्य रूपों में ऑर्थोफॉस्फेट, पॉलिफॉस्फेट और कार्बनिक फॉस्फेट शामिल हैं। कार्बनत: बद्ध फॉस्फोरस का घरेलू अपशिष्ट में बहुत कम महत्व होता है किन्तु वह औद्योगिक अपशिष्ट और अपशिष्ट जल आपंक का महत्वपूर्ण घटक होता है।

फॉस्फ़ोरस का निष्कासन

अधिकांश अपशिष्ट जल में अविलेय भाग से संबद्ध फॉस्फोरस को प्राथमिक नि:सादन द्वारा

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

निष्कासित किया जाता है। फ़ॉस्फ़ोरस का निष्कासन रासायनिक, जैव और भौतिक विधियों द्वारा किया जाता है।

क) रासायनिक विधि- रासायनिक अवक्षेपण जिसमें लोहे और ऐलुमिनियम के लवणों अथवा चूने का उपयोग किया जाता है।

ख) जैव विधि- यह सूक्ष्मजीव प्रतिबलन (stressing) पर आधारित है जो सामान्य कोशिका वृद्धि के लिए आवश्यक फ़ॉस्फ़ोरस से अधिक फ़ॉस्फ़ोरस ग्रहण करते हैं।

ग) भौतिक विधियाँ- अतिसूक्ष्म निस्यंदन और उत्क्रमी परासरण (reverse osmosis) जो फ़ॉस्फ़ोरस न्यूनन और स्थूल अकार्बनिक ठोस न्यूनन दोनों में प्रभावकारी होते हैं।

13.4.4 अपमार्जक और पृष्ठ-सक्रियक

जलीय शोधन, अभिकारकों के रूप में विस्तृत रूप से उपयोगी होने के कारण संश्लिष्ट कार्बनिक यौगिकों के एक समूह जिन्हें पृष्ठ-सक्रियक/अपमार्जक कहते हैं, का विशेष उल्लेख करने की आवश्यकता है। हालांकि अपमार्जक शब्द को पृष्ठ-सक्रियक शब्द के स्थान पर भी प्रयोग कर लिए जाता है परंतु वह सही अर्थ में उन कार्बनिक अथवा अकार्बनिक पदार्थों के लिए प्रयुक्त होता है जो पृष्ठ सक्रियक के साथ संयोजित होकर उसकी शोधन की कार्यक्षमता को बढ़ाते हैं। घरों में और उद्योगों में अपने बढ़ते और विस्तृत उपयोग के कारण, पृष्ठ-सक्रियक वाहित मल में पर्याप्त सांद्रता में पाए जाते हैं।

पृष्ठ-सक्रियकों के विशेष गुणधर्म- पृष्ठ-सक्रियक विलयनों द्वारा स्वच्छन, फेनन, क्लेदन (wetting), पायसन, विलेयीकरण और परिक्षेपण (dispersing) गुणधर्मों का प्रदर्शन किया जाता है। एक ही अणु में दो संरचनात्मक भिन्न समूहों- **विलायक विरोधी** (*lyophobic*, solvent hating) और **द्रव स्नेही** (*lyophilic*, solvent liking) समूहों की उपस्थिति पृष्ठ-सक्रियकों का मुख्य अभिलक्षण है। जल विलेय और जल अविलेय समूहों के लिए क्रमशः **ध्रुवीय और अध्रुवीय शब्दों** का उपयोग किया जाता है।

पृष्ठ-सक्रियकों का वर्गीकरण ऋणायनी, धनायनी, अनायनी और उभयावेशी के रूप में किया जाता है। ऋणायनी पृष्ठ-सक्रियकों में हाइड्रोकार्बन घटक का ऋण आवेश होता है जबकि धनायनी पृष्ठ-सक्रियकों में उस पर धन आवेश होता है। अनायनी पृष्ठ-सक्रियकों में अणु पर कोई आवेश नहीं होता है जबकि उभयावेशी पृष्ठ-सक्रियकों में अणु पर धन आवेश और ऋण आवेश दोनों होते हैं। उनके अणु संघटन नीचे दिए गए हैं:

ऋणायनी : $C_{17}H_{35}CO_2^- Na^+$

धनायनी : $(C_{18}H_{37})_2^+ N(CH_3)_2Cl^-$

अनायनी : $C_{15}H_{31}(OC_2H_4)_7OH$

उभयावेशी : $C_{12}H_{25}^+N(CH_3)_2CH_2CO^-$

MAADHYAM IAS

अणु के जल विरोधी भाग में 10-20 कार्बन परमाणुओं की शृंखला होती है जिसमें ऑक्सीजन परमाणु, ऐमाइड, एस्टर और अन्य अभिलक्षकीय समूह होते हैं। ऋणायनी पृष्ठ-सक्रियकों के जल स्नेही भाग में कार्बोक्सिलेट, सल्फोनेट, सल्फेट और फ़ॉस्फ़ेट होते हैं। धनायनी पृष्ठ-सक्रियक ऐमीन और अमोनियम समूहों द्वारा विलेयीकृत हो जाते हैं। अनायनी पृष्ठ-सक्रियकों में एथिलीन ऑक्साइड शृंखलाएं और हाइड्रॉक्सिल समूह विलेयी कर्मक होते हैं। उभयधर्मी पृष्ठ-सक्रियकों का विलेयीकरण संयुक्त रूप से ऋणायनी और धनायनी विलेयीकारक समूहों द्वारा होता है। पृष्ठ-सक्रियकों का अणुभार 200 से लेकर बहुलक संरचनाओं के लिए हजारों तक होता है। पृष्ठ-सक्रियकों की पर्यावरण संबंधी जानकारी मुख्यतः दो क्षेत्रों पर केन्द्रित होती है: (क) उनकी जैव निम्नीकरणीयता और (ख) जल-सुपोषण के लिए उनमें उपस्थित फ़ॉस्फ़ोरस का संभावित योगदान।

पृष्ठ-सक्रियक अणु की जैव निम्नीकरणीयता का संबंध हाइड्रोकार्बन भाग की संरचना से होता है। ऋजु श्रृखला वाले जल विरोधियों (एल. ए. एस.- **Linear** Alkane Sulphonates, रैखिक ऐल्केन सल्फोनेट) का आसानी से जैव निम्नीकरण हो जाता है- (मृदु), जबकि अनेक शाखाओं वाली हाइड्रोकार्बन श्रृंखलाएं (ए. बी. एस., ऐल्किल बेन्जीन सल्फोनेट) जैवनिम्नीकरण का प्रतिरोध करती हैं- (कठोर)। धनायनी अपमार्जकों का जो चतुष्क अमोनियम हाइड्रॉक्साइड के लवण होते हैं, विस्तृत अपयोग नहीं किया जाता है। वे जीवाणुनाशी होते हैं इसलिए उनका उपयोग विसंक्रमण और स्वच्छता दोनों के लिए किया जाता है। अनायनी अपमार्जकों को एथिलीन ऑक्साइड के बहुलकों से प्राप्त किया जाता है। ये जैव निम्नीकरण का विशेष प्रतिरोध करते हैं।

पृष्ठ-सक्रियकों का निर्धारण

वाहित मल और वाहित मल बहि:स्रावों में पाए जाने वाले अनेक पदार्थ, संश्लिष्ट अपमार्जकों के पृष्ठ-सक्रियक घटक के निर्धारण में बाधा डालते हैं, इसलिए उनका यथार्थ मान ज्ञात करना कठिन होता है।

निम्नलिखित विधियों द्वारा ऋणायनी पृष्ठ-सक्रियक का आकलन किया जा सकता है।

i) मेथिलीन ब्लू विधि

iii कार्बन अधिशोषण विधि

अनायनी पृष्ठ-सक्रियकों का निर्धारण कोबाल्ट थायोसायनेट पदार्थ विधि (सी. टी. ए. एस. विधि) द्वारा किया जा सकता है।

पृष्ठ-सक्रियकों का प्रभाव

पृष्ठ-सक्रियकों के कारण वाहित मल उपचार में फेनन-समस्या उत्पन्न हो जाती है। इसका कारण यह है कि कुछ पृष्ठ-सक्रियकों को विशेष उपचार की आवश्यकता होती है और कुछ का जैवत: उपचार नहीं किया जा सकता है। इसका आंशिक कारण सक्रिय अणुओं पर आयनी आवेश का होना है। वाहित मल में बी. ओ. डी. परीक्षण का निष्कर्ष निकालते समय सावधानी रखने की आवश्यकता है जिस पर पृष्ठ-सक्रियक का प्रभाव पड़ता है। वायु और वाहित मल मिलाने पर अत्यधिक फेनन हो सकता है जिससे जीवाणु वृद्धि अवरुद्ध हो सकती है।

मनुष्यों, सूक्ष्मजीवों और अन्य जीवों के विभिन्न रूपों के लिए पृष्ठ-सक्रियकों की आविषालुता में बहुत भिन्नता पाई जाती है। उथले निकायों में तकनीक के विस्तृत उपयोग में पृष्ठ-सक्रियक आविषालुता एक प्रमुख प्रतिबंध होता है और अधस्तल अनुप्रयोग के लिए खाद्य-कोटि पृष्ठ-सक्रियकों का उपयोग किया जाता है।

पृष्ठ-सक्रियकों का निष्कासन

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अपवाह और वाहित मल सरिताओं से पृष्ठ-सक्रियकों के निष्कासन के लिए आम तौर पर प्रयुक्त एक विधि है- सरिता में वायु अंत:क्षिप्त करना जिससे फेन उत्पन्न होता है, जहां से उन्हें अवशोषण द्वारा पृथक किया जा सकता है। इस तकनीक की कमी यह है कि इसमें पूर्ण निष्कासन के लिए अधिक समय की आवश्यकता होती है। अत: उसके लिए बड़े आमाप के उपचार उपकरण और पात्र की आवश्यकता होती है। इसकी दूसरी कमी यह है कि यदि पृष्ठ-सक्रियक की सान्द्रता 5000 ppm से कम हो तो विलयन का पुन: उपयोग अथवा निपटान करने से पहले उसे सान्द्रित करना पड़ता है। अत: अतिरिक्त सान्द्रण और संग्रह टावरों की आवश्यकता होती है। पृथक्करण के लिए फेन को तोड़ना या समाप्त करना पड़ता है जो प्रयुक्त पृष्ठ-सक्रियक के प्रकार पर निर्भर करता है।

पृष्ठ-सक्रियक को पृथक करने की अन्य विधि में ऐलुमिनियम सल्फेट और सक्रियित कार्बन द्वारा ऐल्किल बेन्ज़ीन सल्फ़ोनेट का निष्कासन है। इस विधि की कमी यह है कि इसमे बहुत बड़े उपचार उपकरण की आवश्यकता होती है और सक्रियित कार्बन की पुन: प्राप्ति महंगी होती है।

बोध प्रश्न

4) कार्बनिक पदार्थों के परीक्षणों से कौन-सी सूचनाएं प्राप्त होती हैं?

....

....

....

5) वाहित मल के कार्बनिक पदार्थों में विद्यमान तत्वों के नाम बताइए।

....

....

....

....

13.5 वाहित मल में खनिज द्रव्य और उनका निर्धारण

वाहित मल में **स्थिर ठोस** और **खनिज पदार्थ** आदि अनेक खनिज घटकों की उत्पत्ति और निर्धारण का विशेष महत्व है। उपचारित अथवा अनुपचारित अपशिष्ट जल के विमोचन से अकार्बनिक अवयवों (खनिज अवयवों) की सान्द्रता बढ़ जाती है। खनिज पदार्थों का निर्णय निम्नलिखित प्राचलों द्वारा किया जाता है:

क्षारता : अपशिष्ट जल की क्षारता, अम्लों को मिलाने से उत्पन्न pH परिवर्तनों को रोकने में सहायता करती है। अपशिष्ट जल साधारणतया क्षारीय होता है। क्षारता, घरेलू प्रयोग के पदार्थों को मिलाने, जल आपूर्ति और भौमजल के कारण उत्पन्न होती है। रसायनिक उपचार, जैव पोषक पृथक्करण तथा अपशिष्ट जल में वायु अपनयन द्वारा अमोनिया के पृथक्करण में क्षारता की सान्द्रता का विशेष महत्व होता है। उच्च क्षारीय जल अरुचिकर होता है। आयतनात्मकत: क्षारता की माप N/50 H_2SO_4 के साथ अनुमापन द्वारा की जाती है जिसे $CaCO_3$ के तुल्यांकों में व्यक्त किया जाता है। उसे विभवमूलक अनुमापन (potoentiometric titration) द्वारा भी निर्धारित किया जा सकता है।

अम्लता : अधिकांश प्राकृतिक जल, घरेलू अपशिष्ट जल और अनेक औद्योगिक अपशिष्टों को मुख्यत: कार्बन डाइऑक्साइड-बाइकार्बोनेट द्वारा बफर **(buffer)** किया जाता है। स्वच्छता अथवा सार्वजनिक स्वास्थ्य की दृष्टि से अम्लता कोई चिन्ता का विषय नहीं है क्योंकि जिस जल में खनिज अम्ल होता है वह इतना अरुचिकर होता है कि मनुष्यों द्वारा न पिया जाने के कारण उससे संबधित कोई समस्याएं नहीं होती हैं। अम्लता, अपने संक्षारक गुण तथा संक्षारण उत्पादक पदार्थों के निराकरण अथवा नियंत्रण में होने वाले खर्च के कारण चिन्ताजनक होती है।

कार्बन डाइऑक्साइड और खनिज अम्लता की माप अनुमापन द्वारा की जाती है जिसमें क्षारीय अभिकर्मकों के मानक विलयन का उपयोग किया जाता है। खनिज अम्लता की माप 3.7 pH पर अनुमापन द्वारा की जाती है जिसमें मेथिल आरेन्ज का सूचक के रूप में उपयोग किया

MAADHYAM IAS

जाता है। इस खनिज अम्लता को **मेथिल ऑरेन्ज अम्लता** भी कहते हैं। फ़ीनॉलफ़्थेलीन सूचक का उपयोग करते हुए 8.3 *pH* पर अनुमापन से खनिज अम्लता और दुर्बल अम्लों की अम्लता प्राप्त होती है। इस प्रकार प्राप्त कुल अम्लता को **फ़ीनॉलफ़्थेलीन अम्लता** भी कहते है।

क्लोराइड : जल के संपर्क में आने वाली क्लोराइड युक्त चट्टानों और मृदाओं के निक्षालन से जल में प्राकृतिक क्लोराइड की मात्रा पाई जाती है। किन्तु पृष्ठ जल में क्लोराइड के स्रोत कृषि, औद्योगिक और घरेलू अपशिष्ट जल भी होते हैं। जिन क्षेत्रों में जल की उच्च कठोरता होती है वहां पुनरुत्पादक (regeneration) प्रकार के जल मृदुकारियों से भी क्लोराइडों की बहुत बड़ी मात्रा प्राप्त होती है। अपशिष्ट जल उपचार की परंपरागत विधियों द्वारा क्लोराइड की पर्याप्त मात्रा पृथक नहीं होती है। इस प्रकार, क्लोराइड की उच्च सान्द्रता को इस बात का सूचक माना जाता है कि जल निकाय का उपयोग अपशिष्टों के निपटान के लिए किया जा रहा है। नगरपालिका अपशिष्ट जल में क्लोराइड की मात्रा वाहन (carriage) जल से 15 mg L^{-1} बढ़ जाती है।

आंतरिक सूचक का उपयोग कर क्लोराइड की मात्रा आयतनात्मक प्रक्रियाओं द्वारा आसानी से मापी जा सकती है। सामान्यतया मोर (Mohr) विधि का उपयोग किया जाता है जिसमें सिल्वर नाइट्रेट का अनुमापक के रूप में और पोटैशियम क्रोमेट का सूचक के रूप में उपयोग किया जाता हैं। मानक विधियों में विभवमितीय (potentiometric), वर्णमितीय (colorimetric) और आयन वर्णलेखिकी- तीन यंत्रीय विधियां भी शामिल हैं।

सल्फेट : सल्फेट अपशिष्ट जल के रख-रखाव और उपचार से संबंधित समस्याओं के लिए **अप्रत्यक्ष रूप** से उत्तरदायी होते हैं। इसलिए उनकी उपस्थिति चिन्ता का विषय है। अवायवीय स्थितियों में सल्फेटों के हाइड्रोजन सल्फ़ाइड में अपचयन से गंध और सीवर में संक्षारण हो जाता है।

$$SO_4^{2-} + \text{कार्बनिक पदार्थ} \xrightarrow[\text{जीवाणु}]{\text{अवायवीय}} S^{2-} + H_2O + CO_2$$

$$S^{2-} + H^+ \longleftrightarrow HS^-$$

$$HS^- + H^+ \longleftrightarrow H_2S$$

सल्फेटों के निर्धारण की चार मानक विधियां हैं जो इस प्रकार हैं :

- आयन वर्णलेखिकी
- भारमापी विधि (gravimetric method)
- आविलतामापी विधि (turbidimetric method)
- मेथिलथाइमॉल ब्लू विधि

आयन वर्णलेखिकी एक सर्वोत्तम प्रक्रिया है क्योंकि उससे 0.1 mg L^{-1} तक की न्यूनतम सान्द्रताएँ निर्धारित की जा सकती हैं। अन्य तीन विधियाँ प्रतिदर्श में बेरियम क्लोराइड आधिक्य में मिलाने से प्राप्त अविलेय बेरियम सल्फेट की मात्रा पर निर्भर करती हैं। भारमापी विधि में, प्राप्त अवक्षेप को तोल लिया जाता है। आविलतामापी विधि में अवक्षेप द्वारा प्रकाश के मार्ग में उत्पन्न व्यतिकरण द्वारा मात्रा ज्ञात की जाती है। मेथिलथाइमॉल ब्लू विधि में आधिक्य बेरियम का वर्णमितीयत: निर्धारण किया जाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

कुल कठोरता: जल की कठोरता मुख्यत: मृदा और शैल समूह के साथ संपर्क से उत्पन्न होती है। जल की कठोरता अथवा 'साबुन उपभोज्य शक्ति' उसमें उपस्थित कैल्सियम और मैग्नीशियम की मात्रा की माप होती है। जब तक इन तत्वों के लवणों के संयोजन के लिए पर्याप्त साबुन न मिला दिया जाए तब तक कोई झाग नही बनता है- इस तथ्य का उपयोग कठोरता के निर्धारण के लिए किया जाता है।

ई. डी. टी. ए. (EDTA) लवण के सम्मुख अनुमापन द्वारा कैल्सियम और मैग्नीशियम की मात्रा के परिकलन द्वारा कठोरता निर्धारित की जाती है। उसे कैल्सियम कार्बोनेट के $mg\ L^{-1}$ में व्यक्त किया जाता है। पूर्ण धनायन विश्लेषण द्वारा प्राप्त द्विसंयोजी आयनों पर आधारित परिकलन, कठोरता के निर्धारण की सर्वाधिक यथार्थ विधि है। पृथक द्विसंयोजी धनायनों की सान्द्रता का निर्धारण मानक परमाणु अवशोषण अथवा प्रेरणिकतः युग्मित (inductively coupled) प्लाज्मा अथवा आयन वर्णलेखिकी अथवा आयन विशिष्ट इलेक्ट्रोडों द्वारा किया जाता है। ये अभी हाल में प्रयुक्त और अधिक यथार्थ विधियां हैं।

जहां तक वाहित मल निपटान समस्याओं के लिए विस्तृत अनुप्रयोग का संबंध है खनिज विश्लेषणों का गौण महत्व है। कभी-कभी क्लोराइडों के परीक्षण का उपयोग वाहित मल की सान्द्रता को मापने के लिए किया जाता है। यदि जल आपूर्ति में और सीवर में निक्षालित भौमजल में क्लोराइडों की मात्रा ज्ञात हो तो कुछ हद तक वाहित मल की प्रबलता ज्ञात की जा सकती है। खनिज द्रव्य की क्षारता, अम्लता, कठोरता, सल्फेट आदि परीक्षणों के लिए भी यही होता है। क्षारता और अम्लता के परीक्षणों के स्थान पर हाइड्रोजन आयन सान्द्रता के निर्धारण का उपयोग किया जाने लगा है जिसे pH द्वारा ज्ञात किया जाता है।

बोध प्रश्न

6) वाहित मल के क्लोराइड परीक्षण से कौन-सी सूचना प्राप्त होती है?

....

....

....

13.6 वाहित मल में गैसीय और वाष्पशील द्रव्य

वाहित मल- गैस, गैसों का मिश्रण है जिसमें मेथैन, हाइड्रोजन सल्फाइड की परिवर्ती मात्राएँ और ऑक्सीजन का अल्प प्रतिशत होता है। ये गैसें जैव पदार्थ के एकत्रित होने के कारण पूयन (septic action) द्वारा उत्पन्न होती है। इनमें हाइड्रोजन सल्फाइड की लाक्षणिक गंध होती है। अपशिष्ट जल उपचार में गंध चिन्ता का विषय है इसलिए आधुनिक उपचार संयत्र के निर्माण और प्रचालन में उसका विशेष ध्यान रखा जाता है। हाइड्रोजन सल्फाइड जैसी गंधयुक्त गैसों का निर्धारण व्यक्तिपरक होता है क्योंकि उसका संबंध व्यक्ति द्वारा गैस के प्रति संवेदनशीलता पर निर्भर करता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

आमतौर पर अनुपचारित अपशिष्ट जल में पाई जाने वाली गैसें N_2, O_2, CO_2, H_2S, CH_4 NH_3 और घुली आक्सीजन होती हैं। पहली तीन गैसें वायुमंडल में पाई जाने वाली प्रमुख गैसें हैं जबकि बाद की गैसें कार्बनिक पदार्थ के अपघटन के समय उत्पन्न होती हैं।

मेथैन : यह अपशिष्ट जल में उपस्थित कार्बनिक पदार्थ के अवायवीय अपघटन का उपोत्पाद होती है। यह रंगहीन, गंधहीन और दहनशील हाइड्रोकार्बन है। अपशिष्ट जल में मेथैन की बृहद मात्राएं नहीं पाई जाती हैं क्योंकि ऑक्सीजन की अल्पमात्राएं, मेथैन के उत्पादन के लिए उत्तरदायी जीवों के लिए आविषालु होती हैं। संचित अधस्तली निक्षेप अवायवीय क्षय के कारण कभी-कभी मेथैन उत्पन्न करते हैं। मेथैन की दहनशील प्रकृति के कारण विस्फोट का खतरा रहता है इसलिए मैनहोलों और सीवर संधियों में उपयुक्त वातायन की व्यवस्था होनी चाहिए।

हाइड्रोजन सल्फाइड : कार्बनिक पदार्थों के अवायवीय अपघटन से हाइड्रोजन सल्फाइड गैस उत्पन्न होती है किन्तु ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा उसके उत्पादन को रोक देती है। यह

रंगहीन, ज्वलनशील गैस है जिससे सड़े अंडों की गंध आती है। हाइड्रोजन सल्फाइड के लोहे के साथ संयोजन से फेरस सल्फाइड (FeS) के बनने से प्राय: अपशिष्ट जल काला हो जाता है। हाइड्रोजन सल्फाइड की तुलना में वायवीय अपघटन के समय बने इन्डेल (indel), स्कैटल (skatal) और मर्केप्टन आदि वाष्पशील यौगिकों की अधिक अरुचिकर गंध होती है।

घुली ऑक्सीजन : वायवीय सूक्ष्मजीवों तथा अपशिष्ट जल में उपस्थित जीव रूपों को श्वसन के लिए घुली ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। किन्तु ऑक्सीजन जल में अल्प विलेय होती है। ग्रीष्म ऋतु में घुली ऑक्सीजन का स्तर अधिक क्रांतिक होता है क्योंकि ताप वृद्धि के साथ जैव रासायनिक अभिक्रियाओं की दर में वृद्धि के कारण ऑक्सीजन के उपयोग में वृद्धि हो जाती है। घुली ऑक्सीजन की उपस्थिति अनिष्टकारी गंधों को बनने से रोकती है।

अमोनिया : यदि pH मान 7 से अधिक हो तो अपशिष्ट जल में अमोनिया मुक्त रूप में पायी जाती है जबकि pH मान 7 से कम होने पर अमोनियम आयनों की प्रधानता रहती है। अपशिष्ट जल में से घुली अमोनिया को गैसीय अमोनिया के वाष्पीकरण द्वारा निकाला जा सकता है।

विलयन बनाने वाली सामान्य गैसों की मात्रा निम्नलिखित कारकों पर निर्भर करती है:

i) जल में गैस का विलेयता गुणांक

ii) वायुमंडल में गैस का आंशिक दाब

iii) जल का ताप और

iv) जल की शुद्धता।

यदि वाहित मल वायुमंडल के संपर्क में हो तो वह वायु में पाई जाने वाली गैसों से केवल अंशत: संतृप्त रहता है क्योंकि वह वायु से गैसों को धीरे-धीरे अवशोषित करता है। अवशोषण दर उद्भासित (exposed) वाहित मल के पृष्ठीय क्षेत्र और अवसंतृप्ति की मात्रा पर निर्भर करता है। यदि वाहित मल में वायुमंडल में गैस के आंशिक दाब की संगत मात्रा से अधिक गैस घुली हो तो संतुलन स्थापित होने तक, गैस विलयन से बाहर निकल जाएगी।

13.6.1 वाहित मल में गैसों का निर्धारण

हाइड्रोजन सल्फाइड को छोड़कर अन्य गंधों की मात्रात्मक माप नहीं की जा सकती है। वाहित मल की गंध के परीक्षण के लिए एक डाटदार बोतल को वाहित मल से आधा भरकर उसे हिलाया जाता है। फिर डाट निकालकर गंध की जांच की जाती है। अपशिष्ट जल में घुली गैसों को रासायनिक विधियों द्वारा निर्धारित किया जाता है जैसाकि नीचे चर्चा की गई है।

मेथैन : मेथैन का निर्धारण निम्नलिखित विधियों द्वारा किया जाता है:

i) दहनशील गैस सूचक विधि (Combustible Gas Indicator Method)

इस विधि में मेथैन का आंशिक दाब, दहनशील गैस सूचक द्वारा निर्धारित किया जाता है। गैस के ऑक्सीकरण द्वारा उत्पन्न ऊष्मा, यंत्र के प्लैटिनम तंतु के वैद्युत प्रतिरोध को बढ़ा देती है। वैद्युत परिपथ में उत्पन्न आपेक्षिक असंतुलन से विक्षेपण को प्रतिशत सान्द्रता में अंशांकित किया जाता है। दहनशील गैस सूचक विधि का यह लाभ है कि यह सरल, शीघ्र होने वाली और अत्यंत सुग्राही विधि है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

ii) आयतन मापी विधि

जब गरम प्लैटिनम कुंडली की उपस्थिति में मेथैन को अधिक ऑक्सीजन के साथ धीरे-धीरे मिलाया जाता है तो उसका अधिकांश भाग CO_2 और H_2O में परिवर्तित हो जाता है। उत्पन्न CO_2 की माप अंतरात्मक अवशोषण और आयतनात्मक परिवर्तन द्वारा की जाती है। जल में

मेथैन की सान्द्रता 2 mg L^{-1} से कम होती है, अतः यह विधि जल में मेथैन के निर्धारण के लिए उपयुक्त नहीं है।

हाइड्रोजन सल्फाइड : इसका निर्धारण मेथिलीन ब्लू अंतःक्षेपण **(flow injection)** विश्लेषण द्वारा किया जाता है। यह प्रस्तावित विधि है। इस विधि में जल और अपशिष्ट जल को सोडियम हाइड्रॉक्साइड में आसवित किया जाता है और प्राप्त आसुत का विश्लेषण किया जाता है। फेरिक क्लोराइड की उपस्थिति में अम्लीय माध्यम में हाइड्रोजन सल्फाइड की *N*, *N*- डाइमेथिल *p*-फेनिलीनडाइऐमीन के साथ अभिक्रिया से मेथिलीन ब्लू प्राप्त होता है। उत्पन्न रंग को 600 nm पर अवशोषण संसूचक द्वारा पढ़ लिया जाता है।

घुली ऑक्सीजन : घुली आक्सीजन के निर्धारण के लिए विंकलर अथवा आयोडीनमिति विधि और उसके रूपांतर, मानक आयतनमापी प्रक्रियाएं हैं। यह इस तथ्य पर आधारित है कि क्षारीय स्थिति में ऑक्सीजन, Mn^{2+} को उच्चतर ऑक्सीकरण अवस्था में परिवर्तित कर देती है तथा अम्लीय परिस्थिति में उच्च ऑक्सीकरण अवस्थाओं में ऑक्सीजन I^- को I_2 में ऑक्सीकृत कर देती है। मुक्त आयोडीन की मात्रा घुली ऑक्सीजन के तुल्य होती है। स्टार्च का सूचक की भांति प्रयोग करते हुए आयोडीन की माप मानक सोडियम थायोसल्फेट के साथ की जाती है।

बाहरी पदार्थ की अनुपस्थिति और जल के साथ, सक्रियता **(actvity)** मोलर सान्द्रता के बराबर होती है और वैद्युत उदासीनता के अनुसार $[H^+]$ और [OH-] के बराबर होती है। 25°C पर $[H^+][OH]$ का गुणनफल आयनन स्थिरांक अथवा आयनी गुणनफल, $K_w = 10^{-14}$ के बराबर होता है। इन अवस्थाओं में यह अर्थ निकलता है कि $[H^+]$ = [OH-] = 10^{-7}। इसलिए *p*H=7 जिसे उदासीन जल का *p*H माना जाता है। *p*H पैमाना 0 से 14 के परास में निरूपित किया जाता है। यदि *p*H का मान 7 से कम हो तो उसका अर्थ है कि हाइड्रॉक्सिल आयन सान्द्रता की अपेक्षा हाइड्रोजन आयन सान्द्रता अधिक है और जल **अम्लीय** माना जाता है। यदि *p*H मान 7 से अधिक हो तो विपरीत स्थिति होती है और जल को **क्षारीय** कहा जाता है।

अमोनिया : अमोनिया के निर्धारण की विधि का चयन करते समय **सान्द्रता** और **व्यतिरोध** (interference)– दो प्रमुख कारकों पर विचार किया जाता है। अमोनिया की अल्प सान्द्रता का सीधा निर्धारण केवल पीने के जल, स्वच्छ पृष्ठ जल अथवा भौमजल अथवा उत्तम कोटि के नाइट्रीकृत अपशिष्ट जल बहिःस्राव के लिए किया जाता है। इसके लिए प्रयुक्त कुछ विधियाँ नीचे दी गई हैं :

i) अनुमापनी विधि

ii) अमोनिया वरणात्मक आयन इलेक्ट्रोड विधि

iii) फ़ीनेट विधि।

ii) और iii) विधियों का उपयोग प्रतिदर्श आसवन के साथ अथवा उसके बिना किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

7) वाहित मल में विलीन गैसें वायु में क्यों निकल जाती हैं?

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

13.7 हाइड्रोजन आयन सान्द्रता और ताप

13.7.1 वाहित मल की हाइड्रोजन आयन सान्द्रता

हाइड्रोजन आयन सान्द्रता जल और अपशिष्ट जल में जैव जीवन की विद्यमानता को नियंत्रित करने वाला महत्वपूर्ण प्राचल है। जिस अपशिष्ट जल में H^+ आयनों की प्रतिकूल सान्द्रता होती है और उसका जैवतः उपचार करना कठिन होता है। यदि विसर्जन से पहले सान्द्रता की जांच न की जाए तो अपशिष्ट जल बहिःस्राव प्राकृतिक जल में हाइड्रोजन आयन सान्द्रता को बदल सकता है।

हाइड्रोजन आयन सान्द्रता *p*H के रूप में व्यक्त की जाती है। *p*H हाइड्रोजन आयन सान्द्रता का ऋणात्मक लघुगणक होता है।

$$pH = -\log_{10}[H^+]$$

अपशिष्ट जल के लिए प्रयुक्त विभिन्न निष्कासन और उपचार प्रक्रमों में *p*H की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। 10.5 से 11.5 के परास में उच्च *p*H पर चूना मिलाकर, अधिकांश अमोनिया को गैसीय रूप में परिवर्तित कर, अमोनिया स्थानांतरण की दर बढ़ायी जाती है। अल्प *p*H मान नाइट्रीकारी जीवों की वृद्धि को रोक देते हैं तथा तन्तुमय जीवों की वृद्धि को प्रेरित करते हैं। नाइट्रीकरण की अधिकतम दर 7.2 और 9.0 *p*H मानों के बीच होती है। विनाइट्रीकरण प्रक्रम को प्रभावित करने वाली अनुकूलतम *p*H दर 6.5 और 7.5 के बीच होती है। जीवों की वृद्धि में *p*H की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जीवाणु की वृद्धि के लिए अनुकूलतम *p*H 6.5 और 7.5 के बीच होता है। सही फ़ॉस्फ़ोरस निष्कासन 5.5 और 7.0 *p*H परास के बीच होता है जो अधिकांश जैव उपचारी प्रक्रमों के लिए अनुकूल होता है।

*p*H मीटर द्वारा जलीय तंत्र का *p*H आसानी से मापा जा सकता है। निश्चित *p*H पर रंग परिवर्तन प्रदर्शित करने वाले अनेक *p*H पत्रों और सूचक विलयनों का भी उपयोग किया जाता है। फिर उनकी तुलना रंग मानकों की श्रेणी के साथ की जाती है।

13.7.2 वाहित मल का ताप

घरों और उद्योगों से गरम जल के मिल जाने के कारण प्राय: वाहित मल का ताप, जल आपूर्ति के ताप से अधिक होता है। ताप का रासायनिक अभिक्रियाओं, अभिक्रिया दरों, जलजीवन, तथा विभिन्न उपयोगों के लिए जल की उपयुक्तता पर प्रभाव पड़ता है अत: इस दृष्टि से भी वह महत्वपूर्ण प्राचल होता है। साधारण प्रेक्षित ताप परास के अंदर **ताप जितना अधिक होता है कार्बनिक द्रव्य में वांछित परिवर्तन करने वाले जीव उतने ही सक्रिय होते हैं।** ताप वृद्धि के साथ वाहित मल की श्यानता घटती जाती है। इसलिए ताप-वृद्धि द्वारा, वर्ष-भर की विभिन्न ऋतुओं में प्रेक्षित अवसादन दक्षताओं में पाए जाने वाली भिन्नताओं की व्याख्या की जा सकती है।

ऑक्सीजन ठंडे जल की अपेक्षा गरम जल में कम विलेय होती है। इस प्रकार, जैव रासायनिक अभिक्रिया की दर में वृद्धि से होने वाली ताप वृद्धि से और साथ ही पृष्ठीय जल में ऑक्सीजन की कमी से गरमी के महीनों में घुली ऑक्सीजन का क्षय हो जाता है। ताप में एकाएक परिवर्तन से जलीय जीवों की मृत्यु दर में बहुत वृद्धि हो जाती है। असामान्य उच्च ताप से जल पादपों और अपशिष्ट जल कवकों की वृद्धि को प्रोत्साहन मिलता है। ताप, संयंत्रों में जैव उपचार को प्रभावित करता है।

बोध प्रश्न

8) वाहित मल में *p*H की सार्थकता क्या है?

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

13.8 वाहित मल में जैव द्रव्य

सूक्ष्म जलीय रूप जिनका जल धाराओं के लिए कोई प्रतिरोध नहीं होता है तथा जो प्राकृतिक जल में मुक्त रूप से तैरते अथवा निलंबित रहते हैं, उन्हें **प्लवक** (plankton) कहते हैं। उन्हें **पादप प्लवक (phytoplenkton)** और **प्राणि प्लवक (zooplankton)** में वर्गीकृत किया जा सकता है। पादप प्लवक प्लवकी पादप होते हैं और प्राणि प्लवक प्लवकी प्राणी होते हैं।

पादप प्लवक एक कोशिकीय, निवही **(colonial)** अथवा तंतुमय रूप में पाए जाते हैं। उनमें सूक्ष्म शैवाल, चल बीजाणु कवक, **(zoosporic fungi),** जलीय हाइफोमाइसीट **(hyphomycetes)** और जीवाणु शामिल हैं। अनेक पादप-प्लवक स्वपोषी होते हैं जिनका प्राणिप्लवक और अन्य जलीय जीव उपभोग करते हैं। ताजे जल में प्राणिप्लवकों के अंतर्गत प्रोटोजोआ, रोटिफर **(rotifers),** क्लाडोसेरान **(cladoceran)** और कॉपिपोड **(copepod)** आते हैं। समुद्री जल में अनेक पकार के प्राणिप्लवक पाए जाते हैं।

13.8.1 महत्व

विभिन्न जैव विधियों से प्राप्त पादप प्लवकों की सूचना से, अपशिष्ट जल उपचार संयंत्र में, अपशिष्ट जल उपचार विधियों और यूनिट प्रक्रमों की अवस्थाओं और प्रभाविता के निर्धारण सहायता मिलती है। प्लवकों, विशेष रूप से पादपप्लवकों का उपयोग, जल की गुणता के सूचक के रूप में किया जाता है। कुछ जातियां सुपोषी जल में उन्नति करती हैं जबकि अन्य कार्बनि और/अथवा रासायनिक अपशिष्ट के लिए बहुत सुग्राही होती हैं। कुछ जातियों में अनिष्टका फुल्लिकाएं (blooms) विकसित हो जाती हैं जिससे अरुचिकर स्वाद और गंध अथवा आविषालु स्थिति पैदा हो जाती है। क्योंकि उनकी जीवन अवधि कम होती है, अत: वे पर्यावरणी परिवर्तनों के प्रति तुरंत प्रतिक्रिया करते हैं। वे तालाबों, सरोवरों और समुद्रों में सबसे अधिक होते हैं।

13.8.2 प्लवकों का निर्धारण

विश्लेषण से पहले जल के प्रतिदर्शों में विद्यमान जीवों को प्रयोग शाला में सान्द्रित कर लेना चाहिए। पादप प्लवकों को सान्द्रित करने की तीन तकनीकें हैं: **अवसादन, झिल्ली निस्यंदन** (membrane filtration) और **अपकेन्द्रण**। आइए, उनका कुछ विस्तार से अध्ययन करें।

i) **अवसादन** : सान्द्रित आयतन 1 mL से 1 L तक हो सकता है। प्रतिदर्श की प्रति मिमी स्तंभ गहराई के लिए 1 घंटा तक नि:सादन किया जाता है। प्रतिदर्श को चरणों में भी सान्द्रित किया जा सकता है। इसमें अवसाद को मात्रात्मकत: आरंभिक पात्र से अनुक्रमत छोटे पात्रों में स्थानांतरित किया जाता है।

ii) **झिल्ली निस्यंदन** : निस्यंदन विधि में छोटे प्लवकों की गिनती के लिए उच्च आवर्धन (magnification) का उपयोग किया जाता है। सुमिश्रित प्रतिदर्श के मापित आयतन को झिल्ली निस्यंदक युक्त फनेल में डाला जाता है जिसमें झिल्ली का रंध्र-व्यास 0.45 μm होता है।

iii) **अपकेन्द्रण** : प्लवकों को गणश: (batch) अथवा सतत् (continuous) अपकेन्द्रण द्वारा सान्द्रित किया जा सकता है। प्राणि प्लवक प्रतिदर्शों को बहुधा खुले क्षेत्र में सान्द्रित किया जाता है विशेषत: जबकि प्रतिचयन के लिए पानी की बड़ी बोतलों अथवा पंप विधियों का उपयोग किया जाता है। जालों अथवा अन्य विधियों द्वारा प्राप्त प्रतिदर्शों को संग्रहण अथव परीक्षण के लिए सान्द्रित करने आवश्यकता होती है। कम आयतन के लिए न्यूनीकरण की आवश्यकता होती है तथा प्रतिदर्श पिंजरों (traps) अथवा जालों की बाल्टी में उड़ेल दिया जाता है। वृहद् प्रतिदर्श आयतनों को संसाधित करने के लिए, बड़ी प्लवक बालटियों अथवा फनेलों का उपयोग किया जाता है जिनकी जल आयतन धारण क्षमता और निस्यंदन पृष्ठीय क्षेत्रफल अधिक होता है।

स्लाइड धारकों (mounts) को सान्द्रित प्रतिदर्शों से तैयार किया जाता है। प्लवक की पहचान के लिए उन्हें सूक्ष्मदर्शी से देखा जाता है। आवश्यक आवर्धन की मात्रा जांच किए जाने वाले प्लवक अंश, सूक्ष्मदर्शी के प्रकार, गणन कक्षों और प्रकाशिकी पर निर्भर करती है। प्लवकों की गणना के लिए गणन कोशिका अथवा प्लवक संख्या घनत्व की शीघ्र गणना के लिए आयतन और क्षेत्रफल को सीमित करने वाले कक्ष का उपयोग किया जाता है। प्लवक समुदाय की जैव मात्रा का आकलन भारात्मक निर्धारण (gravimetric determination) द्वारा किया जाता है।

MAADHYAM IAS

बोध प्रश्न

9) प्रोटोजोआ क्या होते हैं ?

....

....

13.9 वाहित मल में सूक्ष्मजीवी संदूषण

13.9.1 वाहित मल में सूक्ष्मजीव

पृष्ठीय जल और अपशिष्ट जल में पाए जाने वाले जीवों को यूकेरिओट (eucaryotes), यूबैक्टीरिया (eubacteria) और आर्केबैक्टीरिया (archaebacteria) आदि मुख्य समूहों में वर्गीकृत किया जाता है। शैवाल, कवक और प्रोटोजोआ यूकेरिओट वर्ग में आते हैं। विषाणुओं को संक्रमित परपोषी के अनुसार अलग से वर्गीकृत किया जाता है जबकि अधिकांश बैक्टीरिया को यूबैक्टीरिया के रूप में वगीकृत किया जाता है।

कवक : वे वायवीय, बहुकोशिकीय, अप्रकाशसंश्लेषी, रसायन परपोषी यूकेरिओटी प्रजीव होते हैं। वे मृतजीवी होते हैं तथा जैवमंडल में कार्बन अपघटन के लिए उत्तरदायी होते हैं। वे कम आर्द्रता वाले स्थानों और अल्प pH पर्यावरण में उगते हैं। वे कार्बन चक्र में कार्बनिक पदार्थ के भंजन के लिए आवश्यक होते हैं।

शैवाल : शैवाल क्रिप्टोगैमी (cryptogamic) पादपों के विजातीय समूह होते हैं। वे एककोशिकीय, निवही, तांतुक साइफनी से लेकर बड़ी समुद्री शैवाल के जटिल मृदूतक थैलाइ (parenchymatous thalli) तक होते हैं। शैवाल का पृष्ठीय जल में शीघ्र उत्पादन होता है और वे जल पृष्ठ को बड़े प्लावी निवहों जिन्हें फुल्लिका (bloom) कहते है, के द्वारा ढक देते हैं। अपशिष्ट जल उपचार संयंत्रों से प्राप्त बहि:स्राव में जैव पोषकों की पर्याप्त मात्राएं होती हैं। बहि:स्राव के विसर्जन से सुपोषण दर में वृद्धि होती है।

शैवाल की उपस्थिति से जल आपूर्ति के लिए जल की गुणता प्रभावित होती है क्योंकि जल के स्वाद और गंध पर प्रभाव पड़ता है। शैवाल, मछलियों और अन्य जलीय जीवों की वृद्धि के लिए आवश्यक पृष्ठीय जल की गुणता को भी कम कर देता है। जल गुणता प्रबंधन में यह भी शामिल रहता है कि विभिन्न उद्गमों से प्राप्त अपशिष्टों का उपचार कैसे किया जाए ताकि बहि:स्रावों से शैवाल और अन्य जलीय पादपों की वृद्धि को प्रोत्साहन न मिलें।

प्रोटोजोआ : वे बिना कोशिका भित्ति वाले एककोशिकी यूकेरिओटी सूक्ष्मजीव होते हैं। अधिकांश प्रोटोजोआ वायवीय अथवा वैकल्पिक रूप से अवायवीय रसायन परपोषित हाते हैं। अपशिष्ट जल में उपस्थित प्रोटोजोआ में अमीबा, फ्लेजेलेट तथा मुक्त तैरने वाले और सवृंत पक्ष्माभी (stalked ciliates) प्राणी होते हैं। वे जैव उपचार प्रक्रमों तथा सरिताओं के शोधन के लिए आवश्यक होते हैं क्योंकि वे जीवाणुओं और सूक्ष्मजीवों का भक्षण करते हैं। अनेक प्रोटोजोआ रोगजनक होते हैं।

विषाणु : विषाणु अविकल्पी (obligate) परजीवी कण होते हैं जिनमें डिऑक्सी राइबोन्यूक्लिक अम्ल (डी. एन. ए.) अथवा राइबोन्यूक्लिक अम्ल (आर. एन. ए.) आनुवंशिक पदार्थ के तंतुगुच्छ होते हैं जिन पर प्रोटीन का आवरण होता है। मनुष्यों द्वारा उत्सर्जित विषाणु जल में 41 दिन तक तथा अपशिष्ट जल में 20°C पर 6 दिन तक जीवित रहते हैं। इससे अनेक विषाणुज रोग हो जाते हैं। इसलिए पृष्ठीय जल और अपशिष्ट जल उपचार संयंत्रों में विषाणुओं की गति और निष्कासन की क्रियाविधि जानना आवश्यक है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

विषाणु निष्कासन : सी. वालिस और ले. एल. मेलनिक (US पेटेन्ट 3,770,625 नवम्बर 6, 1973) द्वारा विकसित प्रक्रम में किसी तरल में से विषाणुओं को पृथक करने के लिए उसे उपचारित सक्रियित कार्बन अवशोषी माध्यम के संपर्क में लाया जाता है। उपचारित सक्रियित कार्बन माध्यम विषाणुओं को इस प्रकार बंधित रखता है कि उपचारित माध्यम में से गुजरने वाली तरल की उच्च दाब धारा विषाणुओं का निक्षालन नहीं करती है। माध्यम में रेचन अथवा अन्य दोषों का आसानी से पता लगाया जा सकता है। ऐसे समय में विषाणुओं को

निष्क्रिय कर पर्यावरणी संदूषण के खतरे के बिना निकाल दिया जाता है। रेचित माध्यम का पुन: उपयोग के लिए फिर से उपचार किया जाता है। आसानी से उपलब्ध सस्ते पदार्थों के उपयोग से इस प्रक्रम द्वारा अपशिष्ट जल का उपचार किया जा सकता है।

निरूपक आंकड़ों से ज्ञात होता है कि क्लोरोनीकरण ई. *कोली (E. Coli)* और आंत्र विषाणुओं को नष्ट करने में प्रभावी होता है।

रोगजनक जीव : अपशिष्ट जल में पाए जाने वाले रोगजनक जीव रोगग्रस्त मनुष्यों द्वारा विसर्जित होते हैं। अपशिष्ट जल में पाए जाने वाले मुख्य रोगजनक जीव, बैक्टीरिया, विषाणु, प्रोटोजोआ और किक्किश (helminths) हैं। सामान्य जीवाणु रोगजनक जीव उन मनुष्यों द्वारा उत्सर्जित होते हैं जो टायफॉइड, पैराटायफॉइड, पेचिश, प्रवाहिका और हैजा आदि जठरआंत्र पथ के रोगों से संक्रमित रहते हैं। अपशिष्टों और संक्रमित जल में कुछ ही रोगजनक जीव होते हैं और उन्हें पृथक कर पहचानना कठिन होता है। कॉलीफॉर्म जीवों की संख्या बहुत अधिक होती है। उसका आसानी से परीक्षण किया जा सकता है और उनका उपयोग सूचक जीव के रूप में होता है। कुल कॉलीफॉर्म और मल-कोलीफॉर्म अपशिष्ट जल बहि:स्राव विसंक्रमण में सूचक जीव होते हैं।

13.9.2 सूक्ष्मजीवों का निष्कासन

रोगकारी जीवों के चयनात्मक विनाश को विसंक्रमण (disinfection) कहते हैं। अपशिष्ट जल उपचार में, रोग उत्पन्न करने वाले मानव आंत्र-जीवों के सर्वाधिक महत्वपूर्ण तीन वर्ग, बैक्टीरिया, विषाणु और अमीबीसिस्ट हैं। विसंक्रमण **रासायनिक** कर्मकों, **भौतिक कर्मकों, यांत्रिक साधनों** और **विकिरण** द्वारा किया जाता है।

रासायनिक कर्मक : सामान्यतया ये ऑक्सीकारक रसायन होते हैं। क्लोरीन, ब्रोमीन और आयोडीन का उपयोग अपशिष्ट जल के विसंक्रमण के लिए किया जाता है। ओज़ोन भी अत्यंत प्रभावी विसंक्रमण कारक है।

भौतिक कर्मक : ऊष्मा और प्रकाश भौतिक विसंक्रमण कारक हैं। पेय पदार्थों और डेरी उद्योग में साधारणतया ऊष्मा का उपयोग किया जाता है किन्तु अधिक लागत के कारण वह अपशिष्ट जल की वृहद् मात्राओं के विसंक्रमण के लिए उपयुक्त नहीं है।

यांत्रिक साधन : बैक्टीरिया और अन्य जीवों को, अपशिष्ट जल उपचार के समय, सामान्य अवसादन जैसे यांत्रिक साधनों द्वारा भी पृथक किया जा सकता है।

विकिरण : ^{60}Co द्वारा उत्सर्जित गामा किरणों का उपयोग जल और अपशिष्ट जल दोनों के विसंक्रमण के लिए किया जाता है।

13.9.3 जीवाणु

वे एक-कोशिका वाले प्रोकैरियोटी यूबैक्टीरिया होते हैं। बैक्टीरिया, प्रकृति और उपचार संयंत्र-दोनों में कार्बनिक द्रव्य के अपघटन और स्थायीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। उनका पूर्ण कॉलीफॉर्म, मल कॉलीफॉर्म और ई. कॉलीफॉर्म में वर्गीकरण किया जाता है।

कॉलीफॉर्म बैक्टीरिया में एशेरिकिया और ऐरोबैक्टर आते हैं। एशेरिकिया कॉली (ई. कॉली) पूर्णतया मल से उत्पन्न होते हैं। संपूर्ण कॉलीफॉर्म समूह का मल प्रदूषण के सूचक के रूप में उपयोग किया जाता है क्योंकि मल प्रदूषण को छोड़कर ई. कॉली का निर्धारण कठिन होता है। हाल ही में संपूर्ण कॉलीफॉर्म, मल कॉलीफॉर्म और मल स्टेप्टोकोकस में भेद करने के लिए परीक्षण विकसित किए गए हैं। अन्य कॉलीफॉर्म वंश के बजाय ई. कॉली, मल स्रोत का निरूपक होता है।

MAADHYAM IAS

जीवाणुओं का वृद्धि-चक्र

जीवाणुओं में जनन की सामान्य विधि द्वि-अंगी विखंडन है यद्यपि कुछ जातियों में लैंगिकत: अथवा मुकुलन (budding) द्वारा भी जनन होता है। ताप और pH आदि पर्यावरणी परिस्थितियों की भी जीवाणुओं की उत्तरजीविता और वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ताप और pH के सीमित परास में जीवाणुओं की पर्याप्त वृद्धि होती है। इष्टतम ताप से अधिक ताप की अपेक्षा इष्टतम ताप से कम ताप का वृद्धि दर के लिए अधिक महत्व होता है। इष्टतम ताप प्राप्त होने तक प्रत्येक 10 डिग्री ताप वृद्धि के साथ वृद्धि दर लगभग दुगुनी हो जाती है। जीवाणुओं की वृद्धि में पर्यावरण का pH बैक्टीरिया की वृद्धि के लिए मुख्य कारक होता है। अधिकांश जीवाणु 9.5 से अधिक अथवा 4.0 से कम pH को सहन नही कर सकते हैं। जीवाणुओं की वृद्धि का इष्टतम pH मान 6.5 और 7.5 के बीच होता है। जीवाणुओं के समान सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को नियंत्रित करने वाले मूल नियम का अर्थ है- जैव अपशिष्ट उपचार में प्रभावी पर्यावरणी नियंत्रण प्रयुक्त करना। शुद्ध संवर्धन (culture) में, द्विअंगी विखंडन के लिए आवश्यक समय कुछ दिनों से लेकर 20 मिनट से भी कम अवधि तक होता है। उदहारण के लिए, यदि जनन अवधि 30 मिनट हो तो 12 घंटे बाद एक जीवाणु 16, 777, 216 जीवाणुओं को उत्पन्न कर सकता है। यह परिकल्पित संख्या है क्योंकि जीवाणुक विखंडन की क्रिया अनंत अवधि तक नहीं होगी जिसका कारण अवस्तर (substrate) की सान्द्रता, पोषक की सान्द्रता अथवा तंत्र आमाप आदि पर्यावरणी व्यवरोध हैं। गण (batch) संवर्धन में जीवाणुओं का वृद्धि पैटर्न, कोशिकाओं की संख्या पर निर्भर करता है जिसकी चार अथवा कम स्पष्ट प्रावस्थाएं होती हैं। इसे संवर्ध माध्यम के निश्चित आयतन में अंत:क्षेपित (viable) जीवों की संख्या के आधार पर प्रस्तुत किया जाता है तथा जीवनक्षम जीवों की संख्या को समय के फलन के रूप मे रिकार्ड किया जाता है जैसा कि चित्र 13.3 में दिखाया गया है। वाहित मल जैसे मिश्रित संवर्ध में, जीवाणुओं और अन्य जीवों की वृद्धि pH, ताप, भोजन और पोषक तत्वों के साथ-साथ इस बात पर भी निर्भर करती है कि तंत्र वायवीय है अथवा अवायवीय।

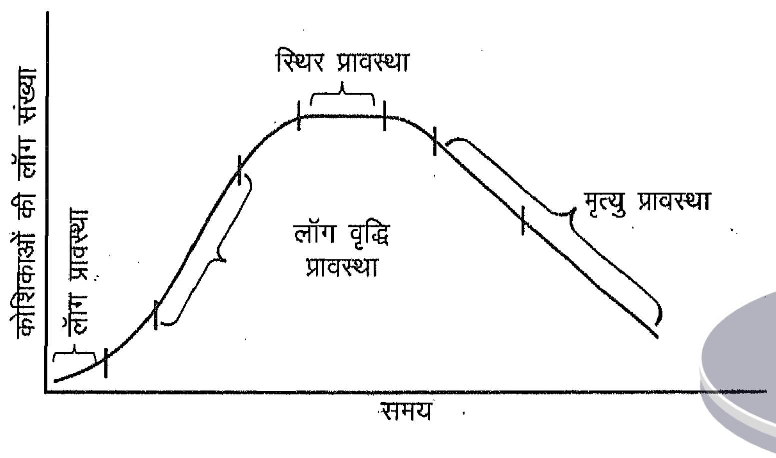

चित्र 13.3: संख्या के पदों में जीवाणुओं का वृद्धि-वक्र

MAADHYAM IAS

कॉलीफॉर्मों के मानक परीक्षण की तकनीकें

i) बहु नली किण्वन

ii) झिल्ली निस्यंदक तकनीक

i) बहु नली किण्वन

यह विलोपन तक तनुकरण के नियम पर आधारित है। संपूर्ण कॉलीफॉर्मों के लिए प्रयुक्त इस प्रक्रिया की तीन परीक्षण प्रावस्थाएं होती हैं, **अनुमानित** (presumptive), **संपुष्ट** (confirmed)

और **पूर्ण परीक्षण** (completed test)। अनुमानित परीक्षण का आधार कॉलीफॉर्म की लैक्टोस ब्रौथ का किण्वन करने की क्षमता है। संपुष्ट परीक्षण में अनुमानित परीक्षण से प्राप्त जीवाणुओं की उस माध्यम में वृद्धि करना है जिसमें अन्य जीवों की वृद्धि रुक जाती है। पूर्ण परीक्षण, संपुष्ट परीक्षण में विकसित संवर्ध के लैक्टोस ब्रौथ में किण्वन करने की क्षमता पर आधारित है। किन्तु सामान्य परीक्षण के लिए केवल अनुमानित परीक्षण किया जाता है। प्रतिकृत नलियों और तनुताओं के परीक्षण के परिणाम उपस्थित जीवों की प्रायिकतम संख्या (Most Probable Number) (एम. पी. एन.) के रूप में व्यक्त किए जाते हैं। इस विधि में शामिल परीक्षणों की यथार्थता नलियों की संख्या पर निर्भर करती हैं। एम. पी. एन. सारणियां प्वासों वितरण (Poisson Distribution, यादृच्छिक वितरण) की धारणा पर आधारित हैं। यदि पृथक करने से पहले प्रतिदर्श को ठीक प्रकार से न हिलाया जाए अथवा यदि जीवाणु कोशिकाओं का गुच्छन हो जाए तो एम. पी. एन. मान, वास्तविक जीवाणु घनत्व से कम होगा।

ii) झिल्ली निस्यंदन (Membrane Filtration, MF)

इस तकनीक में जल के प्रतिदर्श के ज्ञात आयतन को बहुत सूक्ष्म रन्ध्र आमाप के झिल्ली निस्यंदक में से गुजार करके निर्धारण किया जाता है। जीवाणु निस्यंदक में ही रह जाते हैं क्योंकि उनका आमाप रन्ध्र आमाप से बड़ा होता है। निस्यंदक में रह गए जीवाणुओं को ऐगार के संपर्क में लाया जाता है जो जीवाणुओं की वृद्धि के लिए आवश्यक पोषक उपलब्ध करता है। ऊष्मायन के बाद कॉलीफॉर्मों की बस्तियों की गणना की जा सकती है। इस प्रकार, जल में कॉलीफॉर्मों की सान्द्रता निर्धारित की जा सकती है।

झिल्ली निस्यंदक तकनीक के निम्नलिखित लाभ और सीमाएं हैं :

लाभ

i) 24 घंटों के अंदर परिणाम प्राप्त हो जाते हैं जबकि बहु नलिका निर्धारण (एम. टी. डी.) में 48-96 घंटे लगते हैं।

ii) अधिक निरूपक प्रतिदर्शों का परीक्षण किया जा सकता है।

iii) प्राप्त परिणाम अधिक यथार्थ होते हैं।

iv) प्रयोग के लिए कम स्थान और उपस्कर की आवश्यकता होती है।

v) कम श्रम की आवश्यकता होती है।

सीमाएं

i) कम कॉलीफॉर्मों और अधिक आविलता वाले प्रतिदर्शों का परीक्षण कठिन होता है।

ii) गैर-कॉलीफॉर्मों की अधिक संख्या वाले प्रतिदर्शों से कम गणन प्राप्त होता है।

कालीफॉर्म और स्ट्रप्टोकोकाई का परीक्षण (सामान्य विधि)

प्रतिदर्श के आमाप का चयन

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

यह संभावित जीवाणु घनत्व द्वारा नियंत्रित होता है। एक आदर्श मात्रा से कॉलीफॉर्म की 50 बस्तियाँ विकसित होती हैं किन्तु 200 बस्तियों से अधिक का विकास नहीं होता है। प्रतिदर्श, द्विगुण में निस्यंदित किए जाते हैं। अति संदूषित जल के लिए जल की कम मात्रा का उपयोग किया जाता है। यदि निस्यंदित की जाने वाली मात्रा 20 mL से कम हो तो निस्यंदन के समय उसे तनुकर 30 mL बना लेना चाहिए।

प्रतिदर्श का छिस्यंदन

चिमटियों और निस्यंदन के लिए प्रयुक्त निस्यंदक को विसंक्रमित कर लेना चाहिए। निस्यंदन के लिए प्रतिदर्श को निर्वात में निस्यंदक में से गुजारा जाता है। निस्यंदक को 20-30 mL विसंक्रमित बफर जल से दो-तीन बार प्रक्षालित कर लेना चाहिए। वायु को फंसने से बचाने के लिए निस्यंदक को पृथक करके घुमाते हुए, विसंक्रमित पैड अथवा ऐगार में रख दिया जाता है।

कॉलीफॉर्म

पैड को माध्यम द्वारा संतृप्त करने के बाद उसमें निस्यंदक रख दिया जाता है। झुकाकर माध्यम को पृथक कर लिया जाता है। उसके बाद प्लेटों को आर्द्र कक्ष में 37°C पर 24 घंटों तक ऊष्मायित किया जाता है।

गणना

ऐसे सब जीवों की गणना की जाती है जो 24 घंटों के ऊष्मायन में धात्विक विभा की अदीप्त बस्ती उत्पन्न करते हैं। गणना कम शक्ति के त्रिविम सूक्ष्मदर्शी द्वारा की जाती है।

$$\text{कॉलीफॉर्म}/100\,\text{mL} = \frac{\text{गणना की गई कॉलीफॉर्म बस्तियां}}{\text{निस्यांदित प्रतिदर्श के mL}} \times 100$$

उन्हें कॉलीफॉर्म/100 mL में व्यक्त किया जाता है।

मल कॉलीफॉर्म और इ. कॉली के परीक्षण

कुल कॉलीफॉर्म से मल कॉलीफार्म में भेद करने का परीक्षण

इसके लिए इ. सी. माध्यम अथवा ए-1 माध्यम का उपयोग किया जाता है। द्रुत परीक्षण के लिए ए-1 माध्यम प्रत्यक्ष परीक्षण है।

इ. सी. माध्यम द्वारा परीक्षण

उन सभी संभावित किण्वन नलियों अथवा बोतलों का परीक्षण किया जाता है जो मल कॉलीफॉर्म परीक्षण के 48 घंटों के ऊष्मायन के अंदर गैस, वृद्धि अथवा अम्लता प्रदर्शित करती हैं। संभावित किण्वन नलियों को 3 अथवा 3.5 mm व्यास के लूप अथवा निर्जर्म लकड़ी की अनुप्रयोजित्र स्टिक (applicator stick) से धीरे-धीरे हिलाया अथवा घुमाया जाता है। फिर उन्हें इ. सी. ब्रॉथ में स्थानांतरित कर 44.5± 0.2°C पर जल में 24± 2 घंटों तक ऊष्मायित किया जाता है। संरोपण (inoculation) के बाद 30 मिनट के अंदर इ. सी. नलियों को जल बाथ में रखा जाता है। 24± 2 घंटों के अन्दर गैस-उत्पादन सकारात्मक मल कॉलीफॉर्म अभिक्रिया मानी जाती है। गैस-उत्पादन न होना नकारात्मक होता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

ए-1 माध्यम में परीक्षण

इसका उपयोग जल से मल-कॉलीफॉर्मों को सीधे पृथक करने के लिए किया जाता है। अनुमानित माध्यम में पूर्व-समृद्धन की आवश्यकता नहीं होती है। ए-1 ब्रॉथ, इतनी सान्द्रता का बनाया जाता है कि 10 mL प्रतिदर्श मिलाने से घटकों की सान्द्रता घटकर मानक माध्यम की सान्द्रता से कम नहीं होती है। संरोपित नलियों को 35± 5°C पर 3 घंटों तक ऊष्मायित करने के बाद जल बाथ में स्थानांतरित कर दिया जाता है जहां 44.5± 0.2°C पर अतिरिक्त 21 ± 2 दो घंटों के लिए पुनः ऊष्मायित किया जाता है। 24 घंटे अथवा कम समय में ए-1 ब्रॉथ संवर्ध में गैस-उत्पादन एक सकारात्मक अभिक्रिया है जो मल कॉलीफॉर्म की उपस्थिति को व्यक्त करती है। सकारात्मक ए-1 ब्रॉथ नलियों से प्रायिकतम संख्या ज्ञात की जा सकती है।

इ. कॉली का परीक्षण

वृद्धि, गैस अथवा अम्लता प्रदर्शित करने वाली अनुमानित किण्वन नलियों अथवा बोतलों को धीरे से हिलाकर इ. सी.- एम. यू. जी. ब्रॉथ में स्थानांतरित कर दिया जाता है। ई. सी.- एम. यू. जी. नलियों को 24± 2 घंटों तक 44.5± 0.2°C पर ऊष्मायित किया जाता है। ऊष्मायन के बाद इ. सी.-एम. यू. जी. नलियों को 30 मिनट तक जल बाथ में रख दिया जाता है। जल बाथ ऊष्मायित्र में जल की पर्याप्त गहराई रखी जाती है ताकि नलियों को माध्यम की ऊपरी सतह तक डुबाया जा सके। वृद्धि प्रदर्शित करने वाली सभी नलियों की दीर्घ तरंग-दैर्ध्य यू. वी. लैंप द्वारा जांच की जाती है। चटकीले नीले रंग की उपस्थिति इ.कॉली का सकारात्मक परीक्षण होता है।

मल स्ट्रेप्टोकोकाई

इसमें ठोस ऐगार माध्यम का उपयोग किया जाता है। एक 60 mm पेट्रीडिश में 10 mL एम. एन्टरोकोकस शर्करा उड़ेल दी जाती है। उसे सख़्त होने दिया जाता है और ऊपर से निस्यंदक लगा कर उलट दिया जाता है। तत्पश्चात् उसे आर्द्र कक्ष में 37°C ताप पर 48 घंटों तक ऊष्मायित किया जाता है।

गणना

सभी लाल और गुलाबी बस्तियों की त्रिविम सूक्ष्मदर्शी द्वारा गणना की जाती है। गणना को मल स्ट्रेप्टोकोकाई प्रति 100 mL जल में व्यक्त किया जाता है।

बोध प्रश्न

10) जीवाणु गणनाएं निर्धारित करने की विधियों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

13.10 वाहित मल का अपघटन

वाहित मल का अपघटन जीवाणु-उपापचयन द्वारा किया जाता है। वाहित मल के अपघटन को वायवीय, अवायवीय अथवा पूयन (putrefaction) अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है। **वायवीय प्रक्रम** उन जैविक उपचार प्रक्रमों को कहते हैं जो ऑक्सीजन की उपस्थिति में होते हैं जबकि **अवायवीय प्रक्रम** उन जैविक उपचार प्रक्रमों को कहते हैं जो ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में होते हैं। इनका उल्लेख नीचे किया गया है:

13.10.1 वाहित मल का अवायवीय उपचार

MAADHYAM IAS

अवायवीय मेथैन किण्वन प्रक्रमों का उपयोग अनेक वर्षों से कम लागत के अपशिष्ट उपचार के लिए किया जाता रहा है। अवायवीय किण्वन का उपयोग नगरपालिका आपंक में ठोस पदार्थ की मात्रा कम करने और विजलीयता में सुधार करने के लिए किया जाता है। यह अवायवीय जीवाणुओं के संघ द्वारा किया जाता है जो अविलेय कणिकीय कार्बनिक पदार्थ को अनेक मध्यवर्ती चरणों के बाद दो अंतिम रासायनिक उत्पादों– मेथैन और कार्बन डाईऑक्साइड में परिवर्तित कर देते हैं। अवायवीय उपचार मेथैन किण्वन प्रक्रम का व्यवस्था आरेख चित्र 13.4 में दिखाया गया है। अवायवीय उपचार के निम्नलिखित लाभ हैं: जैव आपंक का कम उत्पादन, उच्च उपचार दक्षता, कम लागत, ऑक्सीजन की अनावश्यकता, मेथैन उत्पादन (ईंधन का स्रोत), अल्प पोषक आवश्यकता और अल्प प्रचालन लागत।

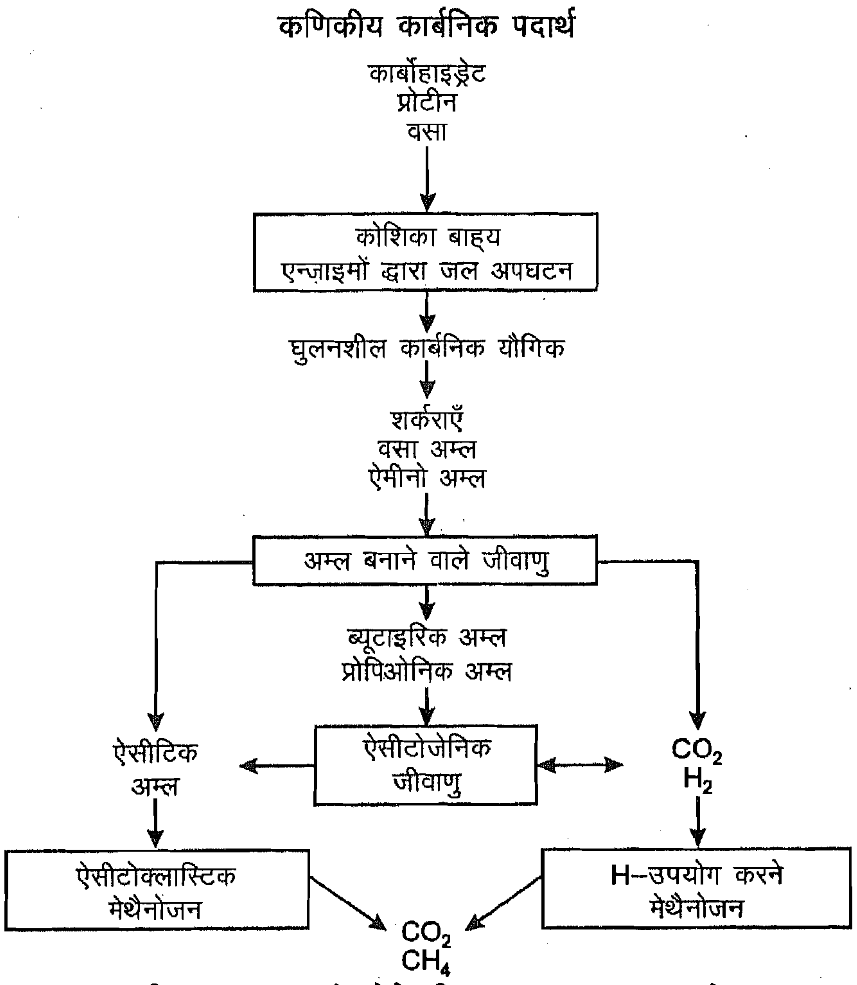

चित्र 13.4: अवायवीय मेथैन किण्वन प्रक्रम का व्यवस्था आरेख

13.10.2 वाहित मल का वायवीय उपचार

कुछ कार्बनिक अपशिष्ट जलों में कार्बनिक पदार्थों की अपेक्षाकृत न्यून मात्राएं होती हैं जिनका वायवीय उपचार प्रक्रमों द्वारा क्षमतापूर्वक और कम खर्च में उपचार किया जा सकता है। इसमें कार्बनिक पदार्थ का कुछ भाग सूक्ष्म जैविक श्वसन द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड में और कुछ भाग सूक्ष्म जैविक जैवमात्रा अवशिष्ट में परिवर्तित हो जाता है। वायवीय प्रक्रमों में सूक्ष्मजैविक श्वसन के लिए लगातार ऑक्सीजन देने की आवश्यकता होती है। च्यावी निस्यंदन जो मुख्यत: वायवीय प्रक्रम है, **अवच्यवन प्रवाह** (down flow) विधि द्वारा प्रचालित होता है जिसमें निस्यंदन माध्यम में वायु का मुक्त प्रवाह होता है। उनका प्रचालन प्रतिधारा वायुप्रवाह के साथ निमज्जित प्रवाह विधि द्वारा भी किया जा सकता है ताकि सूक्ष्म जैविक आवश्यकता के लिए आवश्यक ऑक्सीजन उपलब्ध हो सके।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

13.10.3 वाहित मल के अपघटन के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता

वाहित मल के अपघटन के लिए आवश्यक ऑक्सीजन की माप जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता (बी.ओ.डी.) परीक्षण द्वारा की जाती है। बी.ओ.डी. **ऑक्सीजन की उस मात्रा को कहते हैं जिसकी जीवाणुओं को वायवीय अवस्थाओं में अपघटनीय कार्बनिक पदार्थ के स्थायीकरण के लिए आवश्कता होती है।** इस परीक्षण में प्रकृति के समान अवस्थाओं में, अवशिष्ट में उपस्थित कार्बनिक पदार्थ का उपयोग करते समय जीवित प्राणियों द्वारा प्रयुक्त ऑक्सीजन की माप की जाती है।

बी. ओ. डी. परीक्षण का उपयोग ऑक्सीजन की उस लगभग मात्रा का निर्धारण करने के लिए किया जाता है जिसकी कार्बनिक पदार्थ का जैवत: स्थायीकरण करने के लिए आवश्यकता होगी।

बी. ओ. डी. अभिक्रियाओं की गतिकी से यह प्रमाणित हुआ है कि वे प्राय: प्रथम कोटि की अभिक्रियाएं होती हैं अर्थात् अभिक्रिया दर किसी भी समय शेष ऑक्सीकरणीय कार्बनिक द्रव्य के समानुपाती होती है जो सक्रिय जीवों की संख्या के अनुसार परिवर्तित होता है।

यह परीक्षण अपशिष्ट उपचार सुविधाओं को सुनिश्चित करता है, उपचार प्रक्रमों की क्षमता के माप करता है और अपशिष्ट जल विसर्जन अनुज्ञा का पालन सुनिश्चित करता है। जैव रासायनिक ऑक्सीकरण मंद प्रक्रिया है और सिद्धांत रूप में इसके पूर्ण होने में अनंत समय लगता है। 20 दिन की अवधि में कार्बनिक जैव पदार्थों का ऑक्सीकरण 95 से 99% तक पूर्ण हो जाता है और मानक बी. ओ. डी. परीक्षण के लिए प्रयुक्त 5 दिन की अवधि में ऑक्सीकरण 60 से 70 प्रतिशत होता है। प्रयुक्त 20°C ताप, शीतोष्ण जलवायु में मंद गति वाली सरिताओं के लिए औसत मान है और इसे ऊष्मायित्र में आसानी से बनाए रखा जा सकता है। भारत जैसे ऊष्ण कटिबंधीय देश के लिए 27°C पर 3 दिन के ऊष्मायन की परीक्षण अवस्था को स्वीकृत किया जाता है। घरेलू अपशिष्ट जल के लिए बी. डी. ओ. परीक्षण में ऑक्सीजन आवश्यकता का सामान्य आरेख चित्र 13.5 में दिखाया गया है। नाइट्रीकारी जीवाणुओं की जनन-दर कम होती है और महत्वपूर्ण संख्या तक पहुंचने में 6 से 10 दिन लग जाते है ताकि परिमेय ऑक्सीजन आवश्यकता प्राप्त हो सके। यदि आरंभ में नाइट्रीकारी जीवाणुओं की पर्याप्त संख्या हो तो नाइट्रीकरण द्वारा होने वाला व्यतिरोध महत्वपूर्ण होता है। प्रतिदर्श के पूर्व-उपचार से अथवा सदंमन कर्मकों (inhibitory agents) के उपयोग से नाइट्रीकारी जीवाणुओं की उपस्थिति के कारण होने वाले व्यतिकरण को समाप्त किया जा सकता 8। निरुद्ध (suppressed) बी. ओ. डी. परीक्षण के परिणामों को सी. बी. ओ. डी. (carbonaceous BOD, कार्बन-युक्त जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता), के रूप में व्यक्त किया जाता है।

एक प्ररूपी बी. ओ. डी. अथवा प्रयुक्त ऑक्सीजन वक्र चित्र 13.5 में दिखाया गया है। उल्लेखनीय है कि वक्र की विशेषताएं ऑक्सीकृत कार्बनिक पदार्थ के वक्र के समान होती हैं। यह परवलयी (parabolic) रूप का होता है क्योंकि ऑक्सीजन का उपयोग जैव रासायनिक ऑक्सीकरण में ऑक्सीकृत कार्बनिक द्रव्य की मात्रा के अनुक्रमानुपाती होता है।

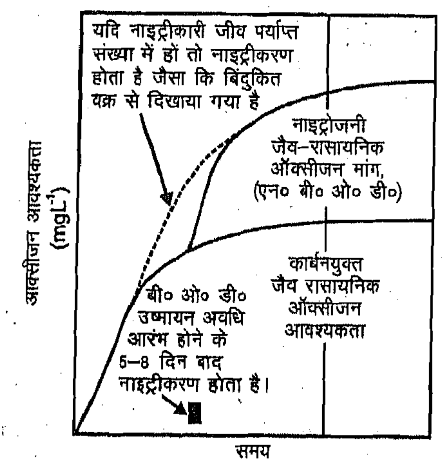

चित्र 13.5: अपशिष्ट-प्रतिदर्श में कार्बन युक्त और नाइट्रोजन युक्त जैवरासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता के आयास के लिए रेखाचित्र

MAADHYAM IAS

बोध प्रश्न

11) वाहित मल के अपघटन के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता पर एक टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

13.11 वाहित मल उपचार और निपटान

नगरपालिकाओं और अन्य स्रोतों से एकत्रित अपशिष्ट जल को अन्ततः ग्राही जल अथवा भूमि में वापस किया जाता है। किन्तु ऐसा करने से पहले अपशिष्ट जल का स्थानीय परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुसार उपचार किया जाता है। इसके लिए वैज्ञानिक जानकारी तथा पिछले अनुभव और वर्तमान परिस्थितियों पर आधारित इंजीनियरी निर्णय का उपयोग किया जाता है। इस भाग में आप वाहित मल के अभिलक्षणों, उपचार प्रक्रमों तथा निपटान के बारे में पढ़ेंगे।

13.11.1 वाहित मल अभिलक्षण

वाहित मल के उपचार और निपटान सुविधाओं की योजना बनाने और उपचार तथा निपटान करने के लिए वाहित मल की प्रकृति को समझना आवश्यक है। अपशिष्ट जल को उसके भौतिक, रासायनिक और जैव संघटन के आधार पर पहचाना जाता है। अपशिष्ट जल के महत्वपूर्ण प्राचल हैं : निलंबित ठोस, जैवनिम्नीकरणीय कार्बनिक पदार्थ, रोगजनक, पोषक, प्राथमिक प्रदूषक, उच्च तापसह कार्बनिक पदार्थ, भारी धातुएं और घुले अकार्बनिक पदार्थ। इन प्राचलों को उपचारित बहिःस्राव के निपटान और उसके पुनः उपयोग के लिए उपचार योजना बनाते समय ध्यान में रखा जाता है। नियामक एजेंसियों द्वारा निर्धारित गुणता मानकों के अनुसार उपचार की आवश्यकताओं का निर्धारण किया जाता है।

13.11.2 वाहित मल उपचार प्रक्रम

अपशिष्ट जल उपचार विधियों का विकास, सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा पर्यावरण में अपशिष्ट जल के विसर्जन द्वारा उत्पन्न प्रतिकूल स्थितियों को ध्यान में रखकर किया गया था। सामान्यता उपचार का उद्देश्य निलंबित अथवा तैरने वाले पदार्थों को पृथक करना, जैव निम्नीकरणीय कार्बनिक पदार्थ का उपचार तथा रोगजनक जीवों का निराकरण है। आजकल उपर्युक्त उद्देश्यों के अतिरिक्त, पृष्ठीय जल की गुणता में सुधार करने के लिए अपशिष्ट जल के प्रभावी और विस्तृत उपचार पर भी ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इन प्रयत्नों के फलस्वरूप अपशिष्ट जल विसर्जन के कारण उत्पन्न पर्यावरणी प्रभावों को समझने में तथा संबंधित दीर्घकालीन प्रभावों की जानकारी प्राप्त करने में सहायता मिली है। उपचार के उद्देश्य, जल गुणता के लक्ष्यों अथवा नियामक प्राधिकारियों द्वारा निर्धारित मानकों के अनुसार होने चाहिए।

अपशिष्ट जल में संदूषकों को भौतिक, रासायनिक और जैव विधियों द्वारा पृथक किया जाता है। इन विधियों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जाता है।

i) भौतिक इकाई प्रचालन

ii) रासायनिक इकाई प्रक्रम और

iii) जैव इकाई प्रक्रम

आइए, उनका एक-एक करके अध्ययन करें।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

i) **भौतिक इकाई प्रचालन (Physical Unit Operations) :** इस विधि **if** भौतिक बलों की प्रधानता रहती है। विशिष्ट भौतिक यूनिट प्रचालन हैं : **छानना, मिश्रित करना, ऊर्णन** (flocculation), **अवसादन, प्लवन, निस्यंदन** और **गैस स्थानांतर।**

ii) **रासायनिक इकाई प्रक्रम :** इस उपचार विधि में, संदूषकों को पृथक करने अथवा परिवर्तित करने के लिए रसायनों को मिलाया जाता है अथवा रासायनिक अभिक्रियाओं का उपयोग किया जाता है। अपशिष्ट जल उपचार के लिए प्रयुक्त रासायनिक इकाई प्रक्रमों में **अवक्षेपण, अधिशोषण, विसंक्रण** आदि आते हैं।

अवक्षेपण में, निर्मित अवक्षेप को नीचे बैठने दिया जाता है। इसमें मिलाए गए रसायन साथ क्रिया करने वाले घटक और अपशिष्ट जल से नीचे बैठ जाने वाले घटक शामि हैं। अधिशोषण में विशिष्ट यौगिकों को ठोस पृष्ठ पर आकर्षण बलों द्वारा पृथक कर जाता है।

iii) **जैव इकाई प्रक्रम :** इन प्रक्रमों में संदूषकों को जैव क्रियाओं द्वारा पृथक किया जाता है मुख्यत: इनका उपयाग जैव-निम्नीकरणीय कार्बनिक पदार्थों को पृथक करने के लिए जाता है। ये पदार्थ गैसों में और जैव कोशिका ऊतकों में परिवर्तित हो जाते हैं। गैसे वायुमंडल में चली जाती है जबकि कोशिका ऊतकों को नि:सादन द्वारा पृथक किया जा है। जैव उपचार का उपयोग अपशिष्ट जल में नाइट्रोजन, फ़ॉस्फ़ोरस जैसे पोषक तत्व को पृथक करने के लिए भी किया जाता है।

आइए, अब कुछ अपशिष्ट जल उपचार विधियों और उनके अभिलक्षणों का अध्ययन करें।

1) सक्रियित आपंक प्रक्रम (Activated Sludge Proces)

वायवीय जैव प्रक्रमों में सक्रियित आपंक प्रक्रम का अपशिष्ट जल उपचार के लिए विस्तृत उपयोग किया जाता है। 'प्राथमिक उपचार' के अंतर्गत छानना, बालू कण पृथक करना और नि:सादन आते हैं जिससे नगरपालिका अपशिष्ट जल में बी. ओ. डी. 30 से 35 प्रतिशत कम जाता है। नि:सादन के बाद किए जाने वाले उपचार को 'द्वितीयक उपचार' कहते हैं। इसमें जैव-वातन **(biological aeration)** किया जाता है जिससे घुला हुआ कार्बनिक पदार्थ नि:सादनी रूप में परिवर्तित हो जाता है जिसे आपंक के रूप में पृथक कर लिया जाता है। वातित करने बाद प्राप्त इस आपंक को 'सक्रियित' आपंक **(activated** sludge) कहते हैं।

2) विस्तृत वातन प्रक्रम (Extended Aeration Process)

यह सक्रियित आपंक प्रक्रम का संशोधित रूप है जो बहुत लोकप्रिय है। परंपरागत सक्रियित आप संयंत्रों की अपेक्षा इस प्रक्रम में प्रयुक्त संयंत्रों का निर्माण और प्रचालन आसान होता है क्योंकि इसमें प्राथमिक नि:सादी टंकी और आपंक पाचित्र **(digester)** की आवश्यकता नहीं होती है। संपूर्ण प्रक्रम वायवीय होता है और अपरिष्कृत वाहित मल सीधे वातन टंकी में जाता है। सरलीकरण के कारण अधिक वातन समय लगता है जिससे इस प्रक्रम को 'विस्तृत वातन प्रक्र कहा जाता है। इस प्रक्रम में सक्रियित आपंक प्रक्रम की अपेक्षा बी. ओ. डी. निष्कासन दक्षता अधिक होती है।

3) च्यावी निस्यंदक

वायवीय जैव प्रक्रमों में इस विधि को वरीयता दी जाती है क्योंकि सक्रियित आपंक प्रक्रम की तुलना में इसमें कम बिजली खर्च होती है और प्रचालन आसान होता है।

4) अपशिष्ट स्थिरीकरण सरोवर (Waste Stabilisation Ponds)

अवशिष्ट स्थिरीकरण सरोवर अथवा 'शैवाल सरोवर' उपचार की सरलतम विधि है। इसमें 1-2 m गहरे सरोवर का उपयोग किया जाता है जिसमें अपशिष्ट जल कई दिनों तक रखा जाता है। दिनों की संख्या ताप और अन्य जलवायु संबंधी स्थितियों पर निर्भर करती है। ये परिस्थितयाँ शैवाल की वृद्धि के लिए अनुकूल होनी चाहिए और साथ ही इनमें प्रकाश संश्लेषण द्वारा ऑक्सीजन प्राप्त होनी चाहिए। अपशिष्ट जल की ऑक्सीजन की आवश्यकता की पूर्ति लिए शैवाल वृद्धि आवश्यक है। इस विधि के लिए बड़े भूमि क्षेत्र की आवश्यकता होती है इसलिए कम आबादी के लिए इसकी उपयोगिता सीमित होती है।

5) यांत्रिकत: वातित लैगून (Mechanically Aerated Lagoons)

वातित लैगून, शैवाल सरोवरों और सक्रियित आपंक विधियों के बीच में आते हैं। यांत्रिक वातन द्वारा ऑक्सीजन की आपूर्ति की जाती है। यूनिट 3 से 5 m गहरा होता है और इसके लिए

MAADHYAM IAS

के
त
लेया

शैवाल सरोवर से कम भूमि की आवश्यकता होती है। विद्युत् की आवश्यकता सक्रियित आपंक के समान होती है किन्तु प्रचालन बहुत आसान होता है।

6) **वातित लैगून और शैवाल सरोवरों का संयोजन**

भूमि और विद्युत् आवश्यकताओं के इष्टतम उपयोग के लिए यांत्रिकत: वातित लैगूनों और शैवाल सरोवरों के अनेक संयोजन प्रयुक्त किए जाते हैं।

7) **अवायवीय पद्धतियां**

गर्म देशों में अन्य पद्धतियों की अपेक्षा उत्प्रवाह अवायवीय आपंक आवरण (upflow anaerobic sludge blanket, USAB) पद्धति सस्ती होती है क्योंकि उसके प्रचालन में विद्युत् की बचत हो जाती है। किन्तु अवायवीय प्रकृति होने के कारण पर्यावरण में निपटान से पहले वायवीय बनाने के लिए उसका पश्च-उपचार करना होता है।

8) **भूमि सिंचाई**

अपशिष्ट जल को सिंचाई के लिए उपयोग करना उत्तम उपचार पद्धति है। अपशिष्ट जल से पोषकों, नाइट्रोजन और फॉस्फ़ोरस को पृथक करने के लिए भूमि उपचार बहुत वांछनीय है।

9) **जलीय पादप पद्धतियां और निर्मित आर्द्र भूमि**

जलीय पादप पद्धतियों में हायासिन्थ सरोवर, डकवीड सरोवर तथा रीड संस्तर और मूल क्षेत्र द्वारा अपशिष्ट जल उपचार के लिए संरचित आर्द्र भूमि शामिल हैं। यदि उनकी रचना और रखरखाव ठीक प्रकार किए गए हों तो वे प्रभावकारी होते हैं।

13.11.3 वाहित मल निपटान

उपचार के बाद अपशिष्ट जल का या तो पुन: उपयोग किया जाता है अथवा उसका पर्यावरण में निपटान कर दिया जाता है जिससे वह जलीय चक्र में पुन: प्रविष्ट कर जाता है। इस प्रकार, निपटान को अप्रत्यक्ष और दीर्घकालीन पुन:उपयोग की दृष्टि से देखा जा सकता है। उपचारित अपशिष्ट जल निपटान की सर्वाधिक प्रयुक्त विधि में उसका परिवेशी (ambient) जल में विसर्जन और तनुकरण कर दिया जाता है। निपटान की अन्य विधि, भूमि अनुप्रयोग है जिसमें अपशिष्ट जल भूमि में निस्यंदित होकर भूमिगत जल भृतों (aquifers) को भर देता है। अंत:निस्यंदित होने वाले अपशिष्ट जल का एक भाग उद्वाष्पित हो जाता है। रेगिस्तानी क्षेत्रों में उद्वाष्पित होने वाली जल की पर्याप्त मात्रा होती है।

तालाबों और जलाशयों में निपटान

जिन स्थानों में सरिताएं नहीं होती हैं वहां उपचारित अपशिष्ट जल को तालाबों अथवा जलाशयों में विसर्जित किया जाता है। छोटे और उथले तालाबों और जलाशयों में पवन प्रेरित प्रक्षोभ (turbulence) के कारण अपशिष्ट जल भली-भांति मिला रहता है। ग्रीष्म ऋतु में गहरे तालाबों का स्तरण (stratification) हो जाता है। किन्तु वर्ष में दो बार उलट पलट होने से ऊपरी और निचले स्तर मिश्रित हो जाते हैं।

MAADHYAM IAS

सुपोषण एक प्राकृतिक काल प्रभावन (aging) प्रक्रम है जिसमें जल जैवत: समृद्ध हो जाता है। इसके फलस्वरूप जलीय खरपतवार में वृद्धि, दलदली भूमि और अंतत: शुष्क भूमि प्राप्त होती है।

तालाबों और जलाशयों में जलगुणता के लिए सुपोषण चिंता का विषय है। सुपोषण की प्रक्रिया और पोषक तत्वों के साथ उसका संबंध जटिल होता है। तालाबों और जलाशयों में फॉस्फ़ोरस विशेष रूप से सीमित पोषक होता है यद्यपि नाइट्रोजन की उपस्थिति भी महत्वपूर्ण है।

नदियों और ज्वारनद मुखों (estuaries) में निपटान

नदियों और ज्वारनद मुखों की लंबाई उनकी चौड़ाई अथवा गहराई से कई गुना अधिक होती है। इसलिए अपशिष्ट जल उपचार संयत्रों अथवा अन्य स्रोतों से किया जाने वाला विसर्जन शीघ्र मिश्रित हो जाता है। अनेक बार नदियों और ज्वारनद मुखों में विसर्जन खुले सिरों वाले पाइपों

से किया जाता है जिससे आरंभिक मिश्रण बहुत कम होता है। उथली सरिताओं के किनारों पर खुले सिरे वाले पाइपों द्वारा विसर्जन से जल पृष्ठ पर फेनन की समस्या उत्पन्न हो जाती है। सरिताओं में अंदर तक निमज्जित (submerged) विसर्जन से यह समस्या कम की जा सकती है।

सागरीय निपटान

सागरों और बड़े तालाबों में पर्याप्त स्वांगीकरण क्षमता होती है और इसलिए उनका उपयोग निपटान के लिए किया जाता है। सागर में बिछाई गई पाइप द्वारा अपशिष्ट जल को अपतटीय विसर्जन स्थल तक ले जाया जाता है। सागर में विसर्जन के लिए अपशिष्ट जल, परिवेशी जल की अपेक्षा तरणशील होता है।

भूमि पर निपटान

नगरपालिका अपशिष्ट जल को या तो भूमि के ऊपर अथवा सतह से कुछ नीचे फ़ैला दिया जाता है। इसे कृषि भूमि, वन भूमि, विक्षुब्ध भूमि और निर्धारित निपटान स्थलों में फैलाया जाता है। इन चारों विधियों में, भूमि पर फैलाने का उद्देश्य अपशिष्ट जल का उपचार करना होता है।

बोध प्रश्न

12) संक्षेप में नगरपालिका अपशिष्ट जल उपचार विधि का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

13.12 वाहित मल द्वारा रोग

वाहित मल स्वास्थ्य के लिए खतरा है क्योंकि उसमें रोगजनक जीवाणु और अन्य रोग पैदा करने वाले जीव होते हैं। वाहित मल में उपस्थित जीव हानिकारक, हानिरहित अथवा लाभदायक हो सकते हैं। हानिकारक जीवों में रोगाणु आते हैं। वाहित मल में उनकी स्थिति असामान्य और अल्पायु होती है। किन्तु रोग फैलाने के लिए यह अल्पायु भी पर्याप्त होती है। वाहित मल द्वारा संचारित रोगों का संबंध आहार नली से है जैसे आंत्रज्वर और पेचिश। वाहित मल वाहक रोग त्वचा के साथ उसके संपर्क से अथवा सीवर की वायु में सांस लेने से पैदा नहीं होते हैं।

MAADHYAM IAS

यदि पेयजल वाहित मल से संदूषित हो जाए तो विषाणुओं के कारण जठरान्त्र शोथ और यकृतशोथ महामारी के रूप में फैल जाते हैं। रोटा विषाणुओं (rotavirus) के कारण छोटे बच्चों और शिशुओं में और प्रौढ़ लोगों में जठरान्त्र शोथ हो जाता है। प्रोटोजोआ के होने का संकेत प्रवाहिका, बादीपन, दुर्गन्धियुक्त मल, ऐंठन, थकान, मचली, वजन घटना और वमन से मिलता है। बच्चों में संक्रमण से उनकी वृद्धि और सामान्य विकास में बाधा पड़ती है। किन्तु वाहित मल द्वारा संदूषित पेयजल में प्रोटोजोआ की उपस्थिति से किसी भी आयु- वर्ग के रोगियों की मृत्यु होते कम ही देखा गया है। सारणी 13.3 और 13.4 में अपशिष्ट जल में उपस्थित जीवाणु- रोगजनकों, विषाणुजों और परजीवी रोगजनकों तथा उनके द्वारा उत्पन्न रोगों का उल्लेख किया गया है।

सारणी 13.3: वाहित मल में जीवाणुज रोगाणु और उनके द्वारा उत्पन्न रोग

क्र.	रोगाणु	रोग
1	*एशरिकिआ कोली (Escherichia coli)*	प्रवाहिका (Diarrhoea)
2	*साल्मोनेला टाइफी (Salmonella typhi)*	आन्त्रज्वर (Typhoid fever)
3	*साल्मोनेला पेराटाइफी (Salmonella paratyphi)*	पैराआन्त्र ज्वर (Paratyphoid fever)
4	अन्य साल्मोनेला	भोजन विषाक्तन और अन्य साल्मोनेलता
5	*शिगेला* एस. पी. *(Shigella* sp)	बेसीलेरी पेचिश
6	*विब्रियो कोलेरी (Vibrip cholerae)*	हैजा (Cholera)
7	अन्य विब्रियो एस. पी.	प्रवाहिका (Gastroentoritis)
8	*क्लॉस्ट्रिडियम परफ्रिन्डजेन्स (Clostridum perfringens)*	जठरान्त्र शोथ
9	*यर्सिनिया एन्टरोकोलाइटिस (Yersinia enterocolitis)*	प्रवाहिका और सोप्टीसेमिया
10	*बैसीलस सीरियस (Bacillus cereus)*	जठरान्त्र शोथ

सारणी 13.4: वाहित मल में विषाणुज और परजीवी रोगाणु और उनके द्वारा उत्पन्न रोग

क्रमांक	रोगाणु विषाणु	रोग
विषाणु		
1	पोलियो विषाणु	पोलियो मेरू रज्जु शोथ *(Poliomycetis)*
2	हीपेटाइटिस ए. विषाणु	यकृतशोथ (Hepatitis)
3	कॉक्सैकी विषाणु *(Coxsackie virus)*	काक्सैकी संक्रमण
4	रोटा विषाणु *(Rotavirus)*	प्रवाहिका
कृमि		
1	ऐस्कारिस लम्ब्रीकोइडीज *(Ascaris Lumbricoides)*	ऐस्केरियता *(Ascariasis)*
2	ट्राइक्यूरिस ट्राइक्यूरा *(Trichiurus Trichiura)*	ट्राइक्यूरियता *(Trichiriasis)*
3	ऐन्किक्लोस्टोम डूओडिनेल *(Ancylostoma duodenale)*	ऐन्किक्लोस्टामियता *(Ancyclostomiasis)*
4	शिस्टोसोमा मान्सोनी *(Schistosoma mansoni)*	शिस्टोसोमिता *(Schistosmiusis)*
प्रोटोजोआ		
1	[redacted]बा [redacted]टिका *(Entamoeba histolytica)*	अमीबारूणता कोलोनी व्रणीभवन *(Amoebiosis Colonic Ulceration)*
2	*(Giardia lamblia)*	गिआर्डिया *(Giardiasis)*

MAADHYAM IAS

रोगों की रोकथाम

सार्वजनिक जल, आपूर्ति, कवच प्राणियों, समुद्र तटों को सुरक्षित रखने तथा रोगों को फैलने से रोकने के लिए वाहित मल को विसंक्रमित किया जाता है। विसंक्रमण के लिए क्लोरीन का सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है जो वाहित मल के अपघटन की स्थिति और अवस्था के अनुसार जीवाणु गणनांक को कम कर देता है। विसंक्रमण के लिए प्रयुक्त अन्य विधियों में विद्युत् अपघटनी उपचार, गामा विकिरणों का उपयोग तथा ऊष्मा शामिल है।

बोध प्रश्न

13) वाहित मल में उपस्थित जीवों के कारण होने वाले प्रमुख रोग बताइए।

....

....

....

13.13 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि,

- नगरपालिका और घरेलू अपशिष्ट, जलवाहित अपशिष्ट होते हैं जो घरों और कारखानों में की जाने वाली जल आपूर्ति के कारण उत्पन्न होते हैं। इनके अंतर्गत सीवर में प्रविष्ट करने वाले भूमि जल और पृष्ठीय जल भी आते हैं। द्रव अपशिष्टों को मोटे तौर पर छः वर्गों में विभाजित किया जाता है: मलजल, वाहित मल, औद्योगिक अपशिष्ट, तूफानी जल, भौमजल और नगरपालिका वाहित मल। शुष्क और नम मौसम में किसी क्षेत्र से उत्पन्न वाहित मल में बहुत अंतर होता है। वाहित मल के भौतिक गुणों में ताप, गंध, रंग और आविलता आते हैं। रासायनिक गुणों को अकार्बनिक और कार्बनिक वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। वाहित मल के प्रमुख प्राचल हैं: ठोस, जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता, pH और नाइट्रोजन। सूक्ष्मजीव अनेक रूपों में पाए जाते हैं जिन्हें मोटे तौर पर दो वर्गों में विभाजित किया जाता है: पहला जो वाहित मल का प्राकृतिक प्रक्रिया द्वारा शोधन करते हैं और दूसरा जो मनुष्यों और जानवरों में रोग और संक्रमण पैदा करते हैं।

- वाहित मल में ठोस पदार्थ निलंबित, कोलॉइडी और घुले पदार्थ के रूप में पाए जाते हैं। इन पदार्थों का वर्गीकरण उनके आमाप पर आधारित है। ठोस पदार्थों की कुल मात्रा ज्ञात करने के लिए वाहित मल की ज्ञात मात्रा को सुखाकर तोल लिया जाता है। अवशिष्ट को प्रज्वलित करने के बाद ठंडा कर लिया जाता है और बचे हुए पदार्थ को तोलने से ठोस की स्थिर मात्रा ज्ञात हो जाती है। कुल ठोस और स्थिर ठोस के भार में अंतर से वाष्पशील ठोस की मात्रा ज्ञात हो जाती है। निःसादनीय ठोस की मात्रा ज्ञात करने के लिए आपंक को इम्हॉफ शंकु में दो घंटे तक नीचे बैठने दिया जाता है। निःसादनीय ठोस को आपंक अथवा अवसाद कहते हैं।

- वाहित मल में कार्बनिक पदार्थों में कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन तथा कभी-कभी नाइट्रोजन भी होती है। वाहित मल में प्रमुख कार्बनिक पदार्थों में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और वसा तथा उनके अपघटन उत्पाद उपस्थित होते हैं। वाहित मल में विभिन्न कार्बनिक पदार्थों की औसत मात्रा लगभग $350\ mg\ L^{-1}$ होती है जिसमें आधी निलंबन के रूप में और शेष आधी विलयन में उपस्थित होती है। वाहित मल में खनिज तेल,

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

पेट्रोलियम उत्पाद, पृष्ठ-सक्रियक, अपमार्जक और कोलतार भी पाए जाते हैं। कार्बनिक पदार्थ और ऑक्सीजन के लिए उनका आकर्षण वाहित मल उपचार और निपटान की एक प्रमुख समस्या है। जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता, कार्बनिक पदार्थों की अप्रत्यक्ष माप होती है।

- वाहित मल के खनिज घटक जैसे स्थिर ठोस तथा नाइट्रोजन के खनिज रूप भी महत्वपूर्ण होते हैं। अत्यधिक क्लोराइडों की उपस्थिति से मल प्रदूषण का संकेत मिलता है। विभिन्न पदार्थों की उपस्थिति तथा क्षारीय जल के मिश्रण के कारण वाहित मल क्षारीय होता है। खनिज विश्लेषणों का महत्व गौण होता है। कभी-कभी क्लोराइड के परीक्षण से वाहित मल की सान्द्रता मापी जाती है। क्षारता और अम्लता के परीक्षण का स्थान pH के निर्धारण ने ले लिया है।

- कार्बनिक पदार्थों के अपघटन से गैसें और वाष्पशील पदार्थ उत्पन्न होते हैं जिसके कारण वाहित मल से दुर्गन्ध आती है। सीवर गैस, कार्बन डाइऑक्साइड, मेथैन, हाइड्रोजन और हाइड्रोजन सल्फाइड का मिश्रण होती है। कार्बनिक पदार्थ के पूयन से ऑक्सीजन की प्रतिशत मात्रा कम हो जाती है। वाहित मल में घुली ऑक्सीजन वायुमंडल से प्राप्त होती है किन्तु कुछ ऑक्सीजन प्रकाश संश्लेषण से भी प्राप्त होती है। वाहित मल के निपटान की समस्या को हल करने के लिए घुली ऑक्सीजन और बी.ओ.डी. परीक्षण बहुत उपयोगी होते हैं।

- H^+ सान्द्रता को H^+ सान्द्रता के व्युत्क्रम के लघुगणक के रूप में व्यक्त किया जाता है जिसे 'pH मान' कहते हैं। अत: $pH = \log 1/[H^+]$ जिसमें $[H^+]$ हाइड्रोजन आयन सान्द्रता है। जीवाणुओं की जीवन प्रक्रिया, स्कंदन/अवक्षेपण तथा आपंक के निर्जलीकरण में pH की महत्वपूर्ण भूमिका है।

- वाहित मल के उपचार और निपटान में सूक्ष्मजीवों (जो आँखों से नही दिखाई देते हैं), की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उन्हें दो वर्गों में विभाजित किया जाता है: जीवाणु और प्लवक अथवा सूक्ष्मजीव। प्लवकों में पादप और जन्तु दोनों आते हैं। पादपों के समान सूक्ष्मजीवों में शैवाल और कवक तथा जन्तुओं में प्रोटोजोआ, रोटीफेरा और क्रस्टेशिया आते हैं। ये सब अपशिष्ट उत्पादों के संतोषजनक निपटान में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से भूमिका अदा करते हैं।

- जीवाणु सूक्ष्म एक-कोशिका वाले पादप के समान जीव होते हैं जिनका आमाप 3μ से बड़ा नहीं होता है। जीवाणुओं में विखंडन द्वारा वृद्धि होती है। आहार के प्रकार के अनुसार जीवाणुओं को दो वर्गों- मृतजीवी और परजीवी में विभाजित किया जाता है। मृतजीवी वाहित मल के उपचार में उपयोगी होते हैं। जीवाणुओं को जैव प्रक्रियाओं के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। जल में घुली ऑक्सीजन को ग्रहण करने वाले जीवाणुओं को वायवीय जीवाणु कहते हैं। कार्बनिक यौगिकों के ऑक्सीजन मूलकों अथवा खनिज पदार्थों से ऑक्सीजन ग्रहण करने वाले जीवाणुओं को अवायवीय जीवाणु कहते हैं। जीवाणु, ताप के प्रति संवेदनशील होते हैं। जीवाणुओं का उपयुक्त पोषक माध्यम में संवर्धन किया जा सकता है और इस तथ्य का उपयोग वाहित मल में जीवाणुओं के निर्धारण के लिए किया जाता है।

- अवायवीय अपघटन अथवा पूयन और वायवीय अपघटन अथवा ऑक्सीकरण, दोनों वाहित मल के उपचार के समय होते हैं। पूयन के लाक्षणिक अन्त्य उत्पाद मेथैन (CH_4), हाइड्रोजन (H_2), हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S) और कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) होते हैं। ऑक्सीकरण के अन्त्य उत्पाद कार्बन डाइऑक्साइड, नाइट्रेट, सल्फेट और अन्य

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

दुर्गन्धरहित पदार्थ होते हैं। दोनों प्रकार के अपघटनों का उपयोग वाहित मल के उपचार के लिए किया जाता है। पूयन का उपयोग मुख्यत: नि:सादित ठोसों अथवा आपंक का विनाश करने तथा ऑक्सीकरण का उपयोग कोलॉइडी और घुले पदार्थों के उपचार लिए किया जाता है।

- वाहित मल का निपटान उपचार के बिना अथवा उपचार के बाद दोनों प्रकार से किया जाता है। उपचार के बिना निपटान की विधियों में जल निकायों में निपटान तथा सिंचाई जल के रूप में भूमि में निपटान आते हैं। उपचार के बाद निपटान की विधि में ठोस पदार्थों को अथवा बालू कणों को पृथक करने के लिए वाहित मल को ग्रिट कक्षों, चालनियों अथवा अवसादन टंकियों में से गुजारा जाता है। कार्बनिक पदार्थों को पृथक करने के लिए अधिप्लवी द्रव का जैविक ऑक्सीकरण किया जाता है तथा शेष कार्बनिक पदार्थों को पृथक करने के लिए सक्रियित कार्बन उपचार किया जाता है। अंतिम बहि:स्राव को क्लोरीन से विसंक्रमित करने के बाद जल निकायों में अथवा भूमि के ऊपर विसर्जित कर दिया जाता है।

- वाहित मल में उन संक्रामक रोगों के जीव होते हैं जो मनुष्य के शरीर से निकलकर जलवाहित अपशिष्टों में चले जाते हैं। इन जीवों के कारण होने वाले रोगों में आंत्रज्वर, प्रवाहिका, पेचिश और हैजा शामिल हैं। रोग के रोगाणु सदैव वाहित मल में रहते हैं। उपयुक्त भोजन के अभाव में तथा सूर्य की रोशनी के वेधन से रोगजनक जीवाणु शीघ्र कम हो जाते हैं। सूर्य की रोशनी के पराबैंगनी अंश विसंक्रामक का काम करता है। रोगों को आगे फैलने से रोकने के लिए क्लोरीन द्वारा विसंक्रमण किया जाता है।

13.14 अंत में कुछ प्रश्न

1) वाहित मल के रासायनिक अभिलक्षण क्या हैं?
2) वाहित मल में ठोस पदार्थों की विभिन्न अवस्थाओं के नाम बताइए।
3) बी. ओ. डी. क्या होता है और उसे कैसे निर्धारित किया जाता है ?
4) वाहित मल में क्षारता के महत्व पर प्रकाश डालिए।
5) वाहित मल में घुली ऑक्सीजन के बारे में संक्षेप में लिखिए।
6) वाहित मल उपचार में ताप के महत्व पर प्रकाश डालिए।
7) जीवाणुओं की वृद्धि का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
8) वाहित मल के वायवीय और अवायवीय अपघटन में अंतर बताइए। वाहित मल के उपचार में वे किस प्रकार उपयोगी होते हैं?
9) वाहित मल अभिलक्षणन का उसके उपचार के लिए क्या महत्व है?
10) वाहित मल में रोगजनक जीवाणुओं के ह्रास के कारण बताइए।

MAADHYAM IAS

13.15 उत्तर

बोध प्रश्न

1) वाहित मल के अभिलक्षणन के लिए निर्धारित किए जाने वाले महत्वपूर्ण प्राचल हैं- ठोस पदार्थ, जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता (बी.ओ.डी.), pH और नाइट्रोजन। उपचार पद्धति की योजना बनाने के लिए ठोस पदार्थों के विभिन्न रूपों जैसे स्थिर, वाष्पशील, निलंबित और घुले ठोसों की जानकारी आवश्यक है। कुल बी.ओ.डी. ज्ञात

करने के लिए कई सप्ताहों की ऊष्मायन अवधि की आवश्यकता होगी। इसलिए संरूपता के लिए 20°C पर 5 दिन का बी. ओ. डी. अथवा 27°C पर 3 दिन का बी.ओ.डी. निर्धारित किया जाता है। सामान्यतया: चार प्रकार के नाइट्रोजन निर्धारित किए जाते हैं; ये हैं: मुक्त अमोनिया, कार्बनिक नाइट्रोजन, नाइट्रेट नाइट्रोजन और नाइट्राइट नाइट्रोजन।

2) वाहित मल में ठोस पदार्थों के मुख्य स्रोत हैं: घरेलू कार्यों के लिए आपूर्ति जल से प्राप्त ठोस तथा घरेलू कार्यों से उत्पन्न ठोस। मल व्यवस्थाओं में प्रविष्ट करने वाले तूफानी जल से भी कुछ ठोस प्राप्त होते हैं। ठोस पदार्थ मुख्यत: रसोई घरों, धुलाई घरों, स्नान घरों, होटलों, कार्यालयों और संस्थानों से उत्पन्न होते हैं। औद्योगिक अपशिष्टों से भी पर्याप्त मात्रा में ठोस पदार्थ प्राप्त होते हैं।

3) इम्हॉफ शंकु को नीचे से cm^3 में अंशांकित किया जाता है। उसमें एक लीटर वाहित मल आता है। एक लिटर वाहित मल को शंकु में स्थानांतरित कर 2 घंटे तक नि:सादित होने दिया जाता है। अधिप्लवी द्रव को निथारकर कुल ठोस की मात्रा ज्ञात कर ली जाती है। अनि:सादित और नि:सादनीय प्रतिदर्शों में ठोस की कुल मात्रा के अंतर द्वारा नि:सादनीय ठोस की मात्रा ज्ञात हो जाती है।

4) वाहित मल में कार्बनिक पदार्थों के परीक्षणों से निम्नलिखित सूचना प्राप्त होती है, i) कार्बनिक द्रव्य की मात्रा और भौतिक उपस्थिति ii) नाइट्रोजनी द्रव्य की मात्रा और अभिलक्षण iii) कार्बनिक पदार्थ की मात्रा और प्रकृति iv) वाहित मल का ऑक्सीजन आकर्षण और v) वसाओं और तेलों की उपस्थिति।

5) वाहित मल के कार्बनिक पदार्थों में कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन तथा कभी-कभी नाइट्रोजन होते हैं। गंधक और फॉस्फोरस जैसे महत्वपूर्ण तत्व भी हो सकते हैं।

6) वाहित मल में क्लोराइड जल, मल और मूत्र से आता है। वाहित मल में क्लोराइड की मात्रा में तब तक कोई परिवर्तन नहीं होता है जब तक क्लोराइड की कम अथवा अधिक मात्रा वाले जल को वाहित मल के साथ मिलाकर उसे तनु न कर दिया जाए। इसलिए क्लोराइडों के परीक्षण का उपयोग कभी-कभी वाहित मल की सान्द्रता मापने के लिए किया जाता है।

7) यदि वायुमंडल में गैस के आंशिक दाब की संगतता से वाहित मल में विलयन रूप में अधिक गैस हो तो वाहित मल से गैस निकल जाती है ताकि साम्य प्राप्त हो जाए। यही कारण है कि कार्बनिक पदार्थों के ऑक्सीकरण से उत्पन्न CO_2 का अधिकांश भाग उत्पन्न होते ही वायुमंडल में चला जाता है।

8) pH के निर्धारण का निम्नलिखित समस्याओं के लिए महत्व है :

3 वाहित मल द्रव्य का अपघटन करने वाले जीवाणुओं की जीवन प्रक्रिया

iii कोलॉइडी और निलंबित द्रव्यों का स्कंदन और अवक्षेपण और

iii) वाहित मल आपंक का निर्जलीकरण।

pH परिवर्तन से क्षयकारी सूक्ष्मजीवों की गतिविधियां बढ़ जाती हैं अथवा मंद हो जाती हैं। कोलॉइडी और निलंबित द्रव्य का स्कंदन और अवक्षेपण एक विशिष्ट pH मान पर द्रुत गति से होता है तथा अम्लों अथवा क्षारों को मिलाकर द्रव का pH मान इन मानों के बराबर लाने से सहायता मिलती है।

MAADHYAM IAS

9) प्रोटोजोआ एक कोशिका वाले जीव होते हैं और अनेक रूपों में पाए जाते हैं। वाहित मल में वे कार्बनिक द्रव्य पर जीवित रहते हैं और कुछ प्रोटोजोआ जीवाणुओं को खा जाते हैं।

उनकी गतिविधियों का जीवाणुओं के बाद दूसरा स्थान है। उनके अत्यधिक विकास से अनेक बार वाहित मल उपचार प्रक्रियाओं में फेनन, स्थूलन आदि अप्रिय घटनाएं हो जाती हैं।

10) वाहित मल में जीवाणुओं के निर्धारण के लिए इस तथ्य का उपयोग किया जाता है कि उनका उपयुक्त पोषक माध्यम में संवर्धन किया जा सकता है तथा जीवाणुओं के विभिन्न समूह कृत्रिम पर्यावरणी अवस्था में भिन्न-भिन्न प्रकार की अभिक्रिया करते हैं। जीवाणुओं के निर्धारण के लिए वाहित मल के ज्ञात आयतन को एक निर्जम कांच की डिश लेकर उसमें गला ऐगार अथवा जिलेटिन मिलाया जाता है। ठंडा करने पर ठोस माध्यम बन जाता है जिसमें वाहित मल के जीवाणु फंस जाते हैं। डिश को ढक कर उसका उपयुक्त ताप पर ऊष्मायन किया जाता है। ऊष्मायन से जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है और उनकी बस्तियां बन जाती हैं। बस्तियों की गणना 24 अथवा 48 घंटे बाद की जाती है जो निर्धारित किए जाने वाले जीवाणुओं के गणनों पर निर्भर करता है। बस्तियों की गणना, वाहित मल में उपस्थित जीवाणुओं की प्रायिकतम संख्या बतलाती है।

11) ताजे अपघटनीय वाहित मल की ऑक्सीजन की आवश्यकता जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता द्वारा मापी जाती है। ऑक्सीजन उपभोग दो चरणों में होता है। पहले चरण में बराबर समय-अंतरालों में उपभुक्त ऑक्सीजन की मात्रा कम होती जाती है। दूसरे चरण में संक्रमण किया जाता है जिसमें उपभुक्त ऑक्सीजन की दर में वृद्धि हो जाती है। यह लगभग बीसवें दिन तक होता रहता है जिसके बाद दर यद्यपि संक्रमण अवस्था से कम होती है अपितु पर्याप्त अवधि तक काफी अधिक और स्थिर रहती है। दूसरे चरण को नाइट्रीकरण कहते हैं।

12) नगरपलिका अपशिष्ट उपचार की परंपरागत प्रक्रिया में छानना, बालूकण हटाना, प्राथमिक अवसादन और वायवीय जैविक उपचार आते हैं। जैविक उपचार बहुधा ऑक्सीकरण खाई (ditch), वातित लैगून अथवा अपशिष्ट स्थायीकरण तालाबों **if** किया जाता है। अंतिम बहि:स्राव को विसर्जन से पहले विसंक्रमित कर लिया जाता है।

13) वाहित मल के सूक्ष्मजीवों द्वारा होने वाले प्रमुख रोग जठरांत्र के संक्रमण से होते हैं। ये हैं: आंत्रज्वर, प्रवाहिका, पेचिश और हैजा।

अंत में कुछ प्रश्न

1) वाहित मल के रासायनिक अभिलक्षणों को अकार्बनिक और कार्बनिक वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। अकार्बनिक अवयवों में कैल्सियम, मैग्नीशियम, सोडियम, पोटैशियम और लोहे के सल्फेट, कार्बोनेट और क्लोराइड आते हैं। वाहित मल के कार्बनिक अंश में मुख्यत: प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और वसा आते हैं। प्रोटीनों में कार्बन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन और ऑक्सीजन तथा कभी-कभी फ़ॉस्फ़ोरस और गंधक होते हैं।

MAADHYAM IAS

2) वाहित मल में ठोस पदार्थ तीन अवस्थाओं में पाए जाते हैं: i) निलंबित द्रव्य ii) कोलाइडी द्रव्य और iii) घुले द्रव्य। आयनों के आमाप के अनुसार इन अवस्थाओं में भेद किया जा सकता है।

3) वायवीय अवस्थाओं में जैव-निम्नीकरणीय कार्बनिक द्रव्य के जैव रासायनिक अपघटन के लिए आवश्यक ऑक्सीजन की मात्रा को वाहित मल का बी. ओ. डी. कहते हैं। प्रक्रम में उपभुक्त ऑक्सीजन का संबंध अपघटनीय कार्बनिक पदार्थ की मात्रा से होता है। मानक बी. ओ. डी. परीक्षण 20°C पर 5 दिन के लिए अथवा 27°C पर 3 दिन के लिए किया जाता है और उसे बी. ओ. डी.$_{5,20}$ अथवा बी. ओ. डी.$_{3,27}$ के रूप में व्यक्त किया जाता है। वाहित मल को स्वच्छ संग्रहित जल से तनु कर जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता निर्धारित की जाती है जिसका बी. ओ. डी. 20°C पर 5 दिन तक अथवा

27°C पर 3 दिन तक रखकर निर्धारित कर लिया जाता है। परीक्षण के आरंभ और अंत में ऑक्सीजन की घुली मात्रा के अंतर से बी. ओ. डी. प्राप्त होता है।

4) वाहित मल में क्षारता का कारण कैल्सियम, मैग्नीशियम, सोडियम और पोटैशियम जैसे तत्वों के कार्बोनेट, बाइकार्बोनेट अथवा हाइड्रॉक्साइड का होना है। वाहित मल सामान्यतया क्षारीय होता है जिसकी क्षारता जल आपूर्ति, भौमजल और स्वयं वाहित मल के द्रव्यों से प्राप्त होती है। इससे वाहित मल को बफरन क्षमता प्राप्त होती है। क्षारता का मान कैल्सियम कार्बोनेट के mg L^{-1} में व्यक्त किया जाता है।

5) वाहित मल अथवा जल में घुली ऑक्सीजन की मात्रा उसके आंशिक दाब और ताप पर निर्भर करती है। यदि वायुमंडल के संपर्क में उपस्थित वाहित मल, ऑक्सीजन अथवा अन्य गैसों के साथ आंशिक रूप से संतृप्त हो तो वह वायुमंडल से धीरे-धीर ऑक्सीजन का अवशोषण करता है। अवशोषण की दर उद्भासित वाहित मल के पृष्ठीय क्षेत्रफल तथा असंतृप्ति मात्रा पर निर्भर करती है। जल अथवा वाहित मल में ऑक्सीजन का विलेयीकरण बहुत कुछ ताप पर निर्भर करता है। सामान्य वायुमंडलीय दाब पर ताजे जल में 20°C घुली पर ऑक्सीजन की मात्रा 9.2 mg L^{-1} और 30°C पर केवल 7.6 mg L^{-1} होती है। वाहित मल में अधिकांश घुली ऑक्सीजन वायुमंडल से प्राप्त होती है। वाहित मल में बी. ओ. डी. के निर्धारण के लिए घुली ऑक्सीजन परीक्षण आवश्यक होता है। यह प्रदूषण की माप और सरिताओं तथा अन्य जल निकायों के प्राकृतिक शोधन का सबसे अधिक महत्वपूर्ण माप होता है।

6) घरों और उद्योगों से गर्म जल के लगातार विसर्जन के कारण जल-आपूर्ति की तुलना में वाहित मल का ताप अधिक होता है। वायु से जल की विशिष्ट ऊष्मा पांच गुना होती है। अत: वर्ष के अधिकांश भाग में प्रेक्षित ताप, स्थानीय वायु तापों से अधिक होते हैं और केवल सबसे गर्म महीनों में कम होते हैं। वाहित मल उपचार जैव गतिविधियों पर निर्भर करता है और जैव गतिविधियां ताप पर निर्भर करती हैं। सामान्य प्रेक्षित ताप परास के अंतर्गत ताप जितना अधिक होगा, कार्बनिक द्रव्य में वांछित परिवर्तन लाने वाले जीव उतने ही सक्रिय होंगे। तापवृद्धि के साथ वाहित मल की श्यानता कम हो जाती है। इस प्रकार, वर्ष के दौरान वाहित मल की अवसादन दक्षता में भिन्नता होती है।

7) जीवाणु विखंडन से बढ़ते हैं। अनुकूल परिस्थितियों में उनकी संख्या द्रुत गति से बढ़ती है। जीवाणुओं की वृद्धि और गतिविधियां उपभुक्त भोजन पर निर्भर करती हैं। उन्हें मृतजीवी और परजीवी, दो समूहों में विभाजित किया जाता है। वाहित मल उपचार और निपटान में मृतजीवियों का बहुत महत्व है। वाहित मल में उपस्थित कार्बनिक और खनिज द्रव्य, मृतजीवी जीवाणुओं के विकास के लिए उपयुक्त भोजन का काम करते हैं। अधिकांश परजीवी अपने पोषी के शरीर के बाहर विकसित नहीं होते हैं। खाद्य पदार्थों के विघटन के दौरान सामान्यत: उत्पन्न होने वाले अम्ल और अन्य पदार्थ उनके लिए हानिकर होते है और आगे वृद्धि रुकने तक वे संचित रहते हैं। अपर्याप्त भोजन, अनुपयुक्त ताप, जीवाणुओं की विभिन्न जातियों के बीच मुकाबला, अन्य जीवों द्वारा खाया जाना तथा विषैले रसायनों की उपस्थिति से भी जीवाणुओं की वृद्धि में रुकावट पड़ती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

8) अवायवीय अपघटन अथवा पूयन मुख्यत: उन जीवों द्वारा किया जाता है जिनकी ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में वृद्धि होती है तथा वायवीय अपघटन उन जीवों द्वारा किया जाता है जिन्हें अपनी गतिविधियों के लिए मुक्त ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। पूयन के अन्त्य उत्पाद CH_4, H_2, H_2S और **CO,** हैं और मध्यवर्ती उत्पाद वाष्पशील और अरुचिकर गंध वाले पदार्थ होते हैं। ऑक्सीकरण के उत्पाद CO_2, NO_3, SO_4 और अन्य गैर-अरुचिकर पदार्थ होते हैं। इन जीवों की गतिविधि अंतर्ग्रथन है। इस प्रकार,

जीवों के एक समूह के पोषण के अपशिष्ट उत्पाद दूसरे द्वारा प्रयुक्त होते हैं। वाहित मल का अपघटन अवायवीय और वायवीय, दोनों प्रकार के प्रक्रमों द्वारा होता है। अवायवीय अपघटन पहले चरण में और वायवीय अपघटन दूसरे चरण में होता है। वाहित मल उपचार में दोनों प्रकार के अपघटन का उपयोग होता है। अवायवीय अपघटन का उपयोग मुख्यत: नि:सादित ठोसों अथवा आपंक के क्षय के लिए तथा वायवीय अपघटन का उपयोग कोलॉइडी और घुले द्रव्य के लिए होता है।

9) उपचार विधि का चयन करने के लिए वाहित मल अभिलक्षणन किया जाता है। चालनियों और अवसादन तथा पाचन टंकियों का डिजाइन बनाने के लिए निलंबित पदार्थों की मात्राओं और उनकी प्रकृति की जानकारी आवश्यक होती है। वाहित मल के बी. ओ. डी. की जानकरी से निस्यंदन अथवा वातन युक्तियों द्वारा उपचारित की जाने वाली कार्बनिक मात्रा का आकलन किया जा सकता है। आपंक के उपचार में ताप और pH की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अत: उपचार विधि के इष्टतम निष्पादन के लिए इन प्राचलों की जानकारी होनी चाहिए।

10) सामान्यतया वाहित मल और वाहित मल प्रदूषित जल में रोगजनक जीवाणुओं की संख्या शीघ्र घट जाती है। जीवाणु पर्याप्त भोजन आपूर्ति और मानव शरीर के अनुकूल पर्यावरण के अभ्यस्त होते है और वाहित मल में दीर्घ समय तक जिन्दा नहीं रह सकते हैं। जीवाणु, निलंबित पदार्थों के साथ संलग्न रहते हैं और अवसादन द्वारा कुछ मात्रा में पृथक हो जाते हैं। उपयुक्त भोजन की कमी से कोशिका का धीरे-धीरे विघटन हो जाता है। गर्म वाहित मल में जीवाणु कम अवधि तक जिन्दा रहते हैं क्योंकि उच्च ताप पर कोशिका की सक्रियता अधिक होती है। सूर्य की रोशनी में उपस्थित पराबैंगनी विकिरण भी विसंक्रमण करता है। इन कारणों से भी रोगजनक जीव मर जाते हैं। इस प्रकार, अनेक कारणों से उनकी संख्या धीरे-धीरे कम हो जाती है और अंत में वे सब नष्ट हो जाते हैं।

13.16 अध्ययन के लिए अन्य पुस्तकें

1) Metcalf, L. and Eddy, H.P., "Sewage and Sewage Disposal, A Text Book", Mc. Graw-Hill Book Company Inc., New York, USA, 1930.

2) Imhoff, K, Muller, W.J. and Thistleth wayte, D.K.B., Disposal of Sewage and Other Water-Borne Wastes, Butterworths, London, 1972.

3) Ehlers, V.M. and Steel W.W.; "Municipal and Rural Sanitation, 6th Edition, Mc. Graw Hill, New York, 1965.

4) Eckenfelder, W.W. (Jr.) and O'Conner, D.J.; "Biological Waste Treatment, Pergamon, Oxford, 1961.

5) Manual on Sewerage and Sewage Treatment, Control Public Health and Environmental Engineering Organisation, Ministry of Urban Development, Government of India, New Delhi, 1993.

6) USEPA, Process Design Manual - Wastewater Treatment Facilities for Sewered Small Communities, U.S. Environmental Protection Agency, Environmental Research Information Center, Technology Transfer, Cincinnate, Ohio, 1977.

7) Barnes, D and Wilson, F; "Chemistry and Unit Operations in Sewage Treatment, Applied Science Publischers Ltd, London, 1978.

8) Standard Methods for the Examination of Water and Wastewater, 19th Edition, American Public Health Association, Washington, D.C., 1995.

MAADHYAM IAS

इकाई 14 मृदा और जल प्रदूषण के प्रभाव

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

14.2 औद्योगिक प्रदूषण चक्र और प्रतिकूल प्रभाव

14.3 जल संबंधी रोग

जैव खतरे

रासायनिक और रेडियोएक्टिव खतरे

14.4 जल संबंधी रोग और ऋतु विभिन्नता

15.5 मृदा प्रदूषण के प्रतिकूल प्रभाव

जैव रोग कर्मकों द्वारा मृदा प्रदूषण

मृदा प्रदूषण और ठोस अपशिष्ट निपटान

आविषालु रसायनों द्वारा मृदा प्रदूषण

14.6 सारांश

14.7 अंत में कुछ प्रश्न

14.8 उत्तर

14.9 अध्ययन के लिए अन्य पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

पर्यावरण के अंतर्गत जल, वायु, भूमि तथा उनके और मनुष्यों, अन्य जीवित प्राणियों, पादपों और सूक्ष्मजीवों के परस्पर पाए जाने वाले संबंध आते हैं। पर्यावरणी प्रदूषक का तात्पर्य है- कोई भी ठोस, द्रव अथवा गैसीय पदार्थ जिसकी सान्द्रता इतनी अधिक हो कि वह पर्यावरण के लिए हानिकर हो। पर्यावरणी प्रदूषण का अर्थ है- पर्यावरण में प्रदूषकों का उपस्थित होना। पर्यावरण में प्रविष्ट हुए प्रदूषक, पर्यावरण के तीन घटकों, अर्थात् वायु, जल और मृदा के साथ मिल जाते हैं और अंतत: जल-तंत्र में प्रविष्ट कर जाते हैं। इस प्रकार, वे मनुष्यों और जानवरों के संपर्क में आते हैं।

मृदा प्रदूषण सामान्यतया अस्वास्थ्यकर आदतों, विभिन्न कृषि कार्यों और ठोस तथा द्रव अपशिष्टों के निपटान की गलत विधियों का परिणाम होता है। यह वायुमंडलीय प्रदूषण का भी परिणाम होता है। इसका संबंध उन पदार्थों की नियति से भी है जिनका प्राकृतिक पुनर्चक्रण होने की संभावना नहीं होती है।

MAADHYAM IAS

उद्देश्य

इस इकाई के उध्ययन के बाद, आप

- पर्यावरणी प्रदूषक और पर्यावरणी प्रदूषण की परिभाषा दे सकेंगे,
- प्रदूषण चक्र और प्रदूषण के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों की व्याख्या कर सकेंगे,
- विभिन्न रोगों को उत्पन्न करने वाले जैव कारकों का वर्गीकरण कर सकेंगे,
- रासायनिक और रेडियोएक्टिव प्रदूषण से उत्पन्न ख़तरों का उल्लेख कर सकेंगे,
- जैव रोग कारकों द्वारा उत्पन्न मृदा प्रदूषण की व्याख्या कर सकेंगे,

- ठोस अपशिष्ट प्रदूषण की व्याख्या कर सकेंगे,
- मनुष्यों और जानवरों पर कृषि-रसायनों के प्रभावों का वर्णन कर सकेंगे, और
- जल प्रदूषण और मृदा प्रदूषण के मनुष्यों और जानवरों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले कुल प्रभावों का वर्णन कर सकेंगे।

14.2 औद्योगिक प्रदूषण चक्र और प्रतिकूल प्रभाव

मृदा में मुक्त किए गए प्रदूषक, भोजन द्वारा जानवरों और मनुष्यों के शरीर के अंदर प्रविष्ट करते हैं। चित्र 14.1 में जानवरों और मनुष्यों में प्रदूषकों का प्रवेश मार्ग दिखाया गया है।

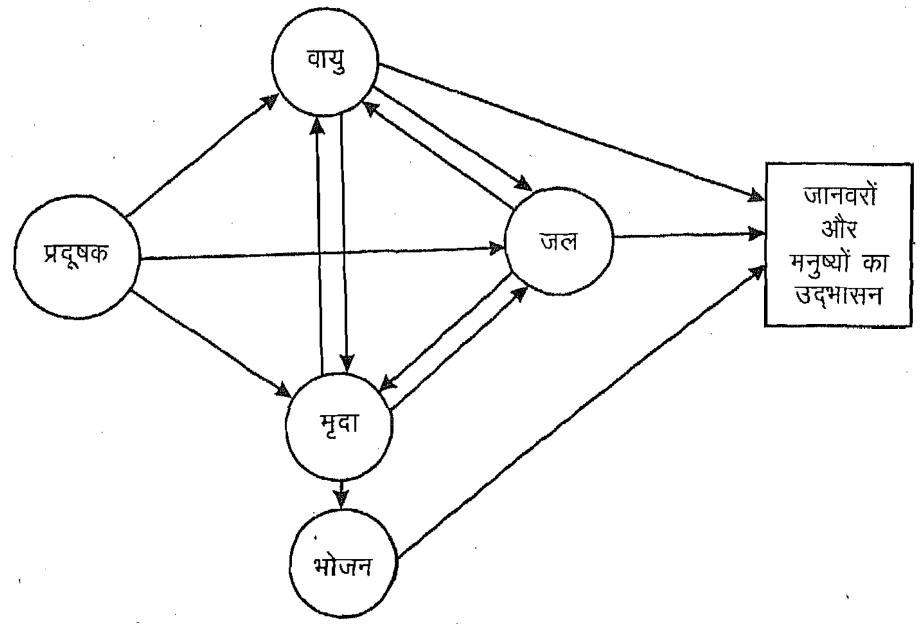

चित्र 14.1: मनुष्यों और जीव-जंतुओं के प्रदूषण द्वारा उद्भासन के मार्ग

उद्योग, पर्यावरणी प्रदूषण के मुख्य स्रोत हैं। वे वायु, मृदा और जल को प्रदूषित करते हैं। नियंत्रण उपायों के रूप में इन प्रदूषकों का उपचार किया जाता है। प्रदूषण नियंत्रण के सभी प्रयत्नों के बाद भी वायु, भू-पृष्ठ और भौमजल का प्रदूषण होता है। औद्योगिक प्रदूषण चक्र चित्र 14.2 में दिखाया गया है।

जानवरों और मनुष्यों के स्वास्थ्य पर प्रदूषकों का प्रतिकूल प्रभाव, प्रदूषक के प्रकार, संपर्क (exposure) की अवधि और सान्द्रता पर निर्भर करता है। यदि आविषालु प्रदूषकों की उच्च सान्द्रता हो तो तत्काल मृत्यु हो सकती है। यही प्रदूषक यदि कम मात्रा में उपस्थित हों तो उत्क्रमणीय अथवा अनुत्क्रमणीय स्वास्थ्य हानि अथवा अनेक रोग हो सकते हैं। चित्र 14.3 में जानवरों और मनुष्यों पर प्रदूषकों के प्रतिकूल प्रभाव दिखाए गए हैं।

MAADHYAMIAS

जल प्रदूषकों का प्रभाव

जल प्रदूषकों से जानवर और मनुष्य सर्वाधिक प्रभावित होते हैं। जल प्रदूषकों को आठ समूहों में विभाजित किया जा सकता है:

1) **घरेलू प्रदूषक** : इनके अंतर्गत अपमार्जक, वर्णक और प्रणोदक आते हैं।

2) **प्रकृति में पाए जाने वाले पदार्थ :** पादप और जानवर अनेक आविष उत्पन्न करते हैं। ये जल-तंत्र में प्रवेश कर जाते हैं और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं।

3) **खाद्य योज्य** : परिरक्षक आदि कुछ खाद्य योज्य आविषालु यौगिकों में परिवर्तित हो जाते हैं। उदाहरणार्थ, मांस को लाल रंग प्रदान करने के लिए मिलाया जाने वाला नाइट्रेट, नाइट्रोसैमीनों में परिवर्तित हो जाता है जो अत्यंत आविषालु होते हैं। अनेक जीवाणु आविष (toxins) भी उत्पन्न होते हैं।

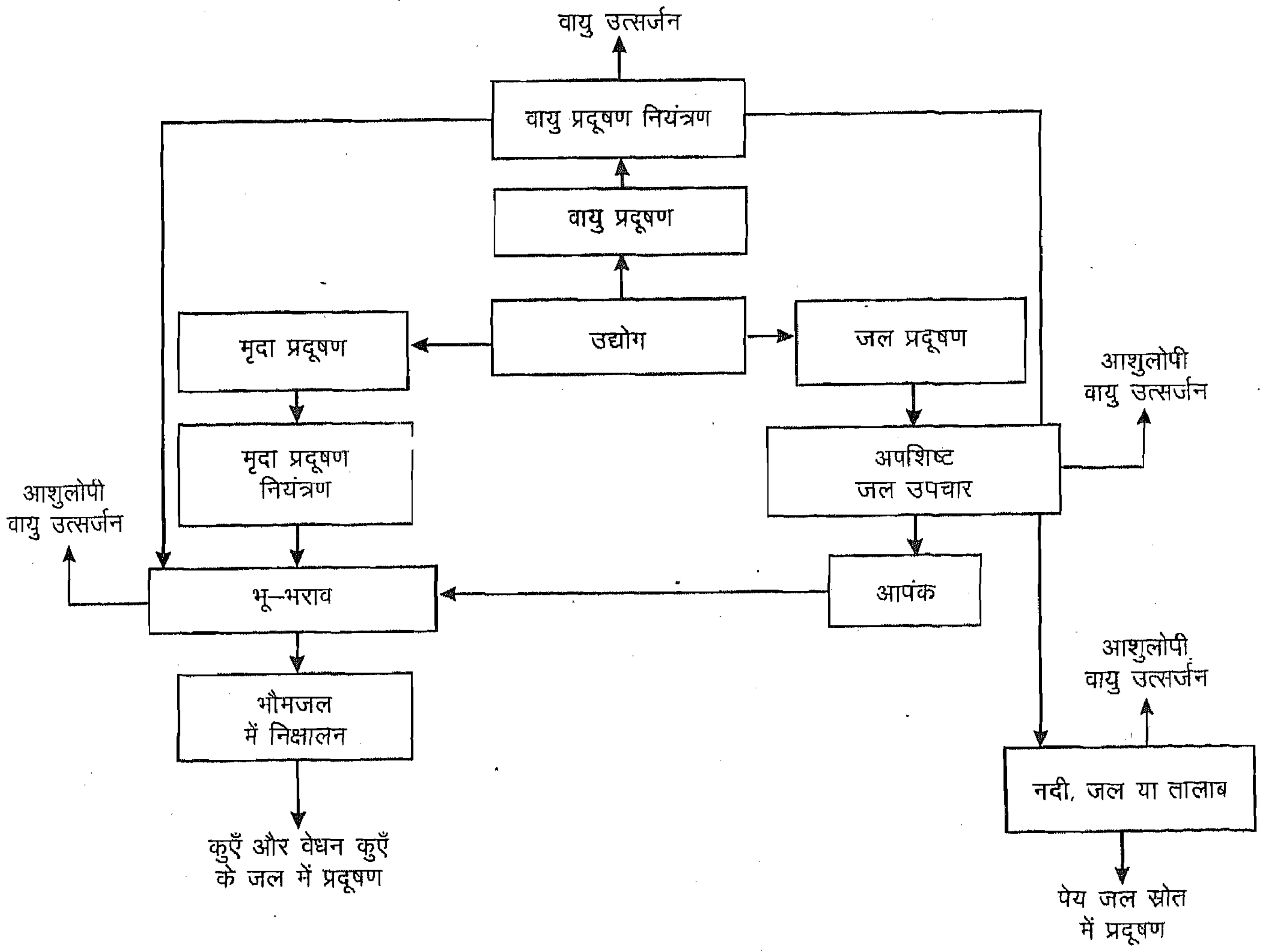

चित्र 14.2: औद्योगिक प्रदूषण चक्र

4) **उद्दीपक :** तम्बाकू और अन्य उद्दीपक (stimulant), औषधियों से मुक्त निकोटीन और उनके उपापचयज (metabolites) भी इस समूह में आते हैं।

5) **औद्योगिक अपशिष्ट :** विभिन्न उद्योगों के अनप्रयुक्त पदार्थ नालियों में प्रवाहित कर दिए जाते हैं जिन्हें औद्योगिक अपशिष्ट कहा जाता है। भारी धातुएं और कार्बनिक पदार्थ, अपशिष्टों के प्रमुख आविषालु घटक हैं।

6) **पीडकनाशी :** इनमें जीवाणुनाशी, शाकनाशी, कवकनाशी, कृन्तकनाशी और कीटनाशी आते हैं। आर्सेनिकल और मर्क्यूरियल अकार्बनिक पीडकनाशी हैं जबकि ऑर्गेनोक्लोरीन, ऑर्गेनोफॉस्फेट और कार्बमेट कार्बनिक मूल के पीड़कनाशी हैं।

7) **औषधियां :** औषधियां मनुष्य जीवन का अभिन्न अंग हैं। औषधियों और उनके उपापचयजों के प्रतिकूल प्रभाव भी होते हैं।

8) **रेडियोऐक्टिव अपशिष्ट :** नाभिकीय विद्युत् संयंत्रों में रेडिऐक्टिव पदार्थों का नाभिकीय ईंधन के रूप में उपयोग किया जाता है। अनेक इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में भी रेडियोऐक्टिव पदार्थों का उपयोग किया जाता है। वे प्रयोगशालाओं और अस्पतालों में भी प्रयुक्त होते हैं। इन गतिविधियों से अपशिष्ट विसर्जित होते हैं जिनमें ऐल्फा, बीटा और गामा उत्सर्जक होते हैं जिनका स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव पड़ता है। चित्र 14.4 में जानवरों और मनुष्यों को प्रभावित करने वाले विभिन्न प्रदूषक दिखाए गए हैं।

MAADHYAM IAS

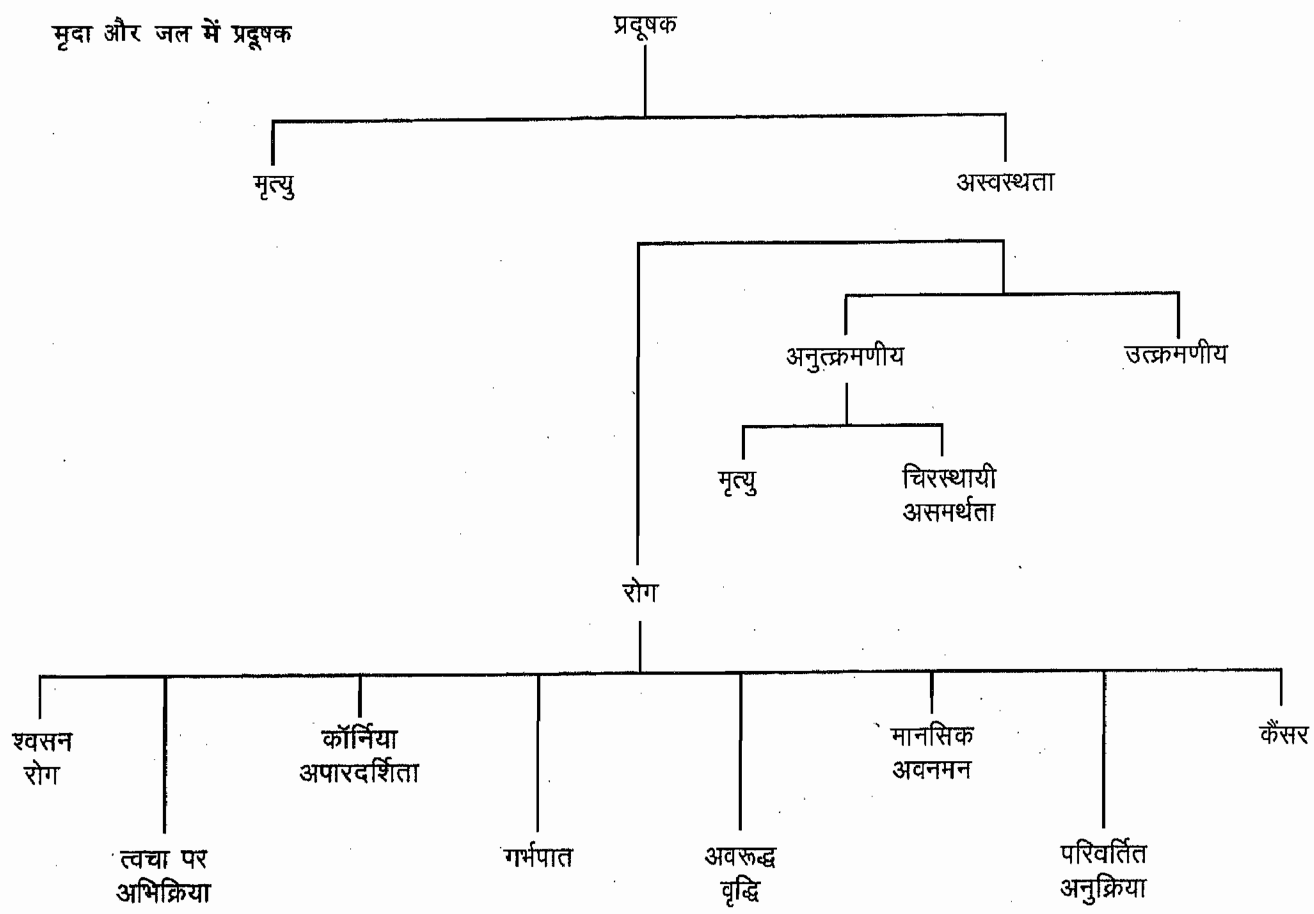

चित्र 14.3: मनुष्यों और जीव-जंतुओं पर प्रदूषकों के प्रतिकूल प्रभाव

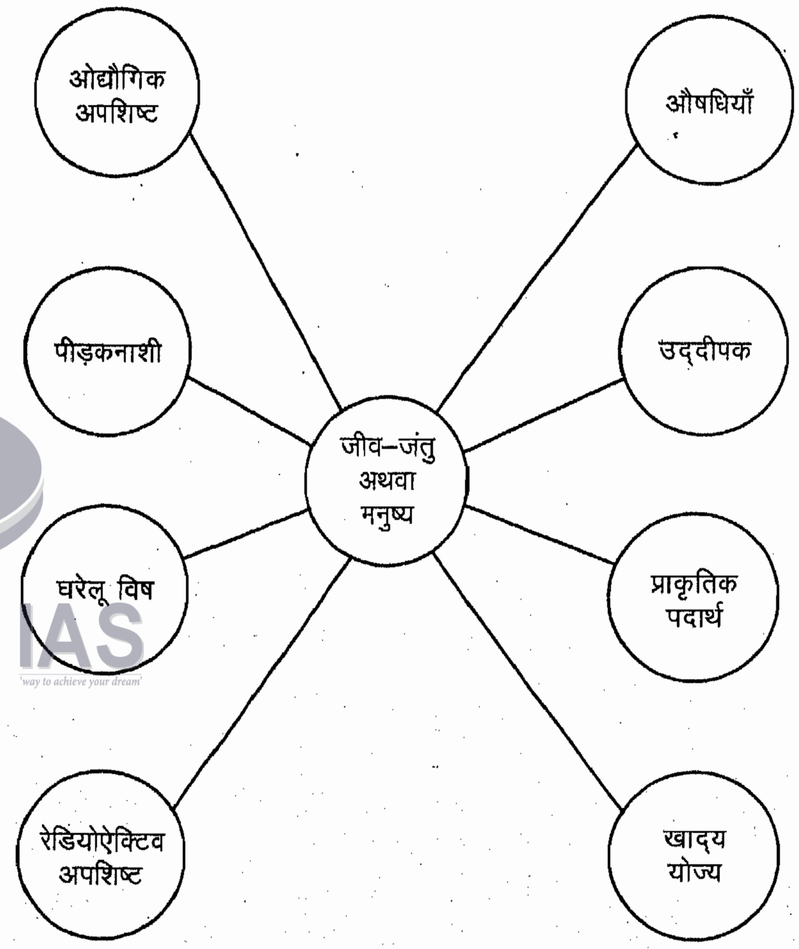

चित्र 14.4: जानवरों और मनुष्यों को प्रभावित करने वाले विभिन्न प्रदूषक

MAADHYAM IAS

बोध प्रश्न

1) पर्यावरण के विभिन्न घटक कौन-से हैं?

....

....

....

2) पांच ऐसे प्रदूषकों के नाम बताइए जिनसे जानवर और मनुष्य प्रभावित होते हैं।

....

....

....

....

....

14.3 जल संबंधी रोग

जल-प्रदूषण द्वारा मानव स्वास्थ्य सीधे जल पीने से अथवा व्यक्तिगत स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग और मनोरंजन में उसके उपयोग से प्रभावित होता है। स्वास्थ्य के लिए जन संबंधी खतरों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

- जैव कारकों से होने वाले ख़तरे
- रासायनिक और रेडियोऐक्टिव प्रदूषकों से होने वाले ख़तरे

14.3.1 जैव खतरे

i) जैव कारकों के अंतर्ग्रहण से होने वाले जल संबंधी खतरे

अंतर्ग्रहण से संचारित प्रमुख जैव कारक इस प्रकार हैं :

- रोगजनक जीवाणु
- वाइरस
- परजीवी

रोगजनक जीवाणु : रोगजनक जीवाणु जल द्वारा प्रत्यक्ष रूप से अथवा जल से भोजन में अप्रत्यक्ष रूप से संचारित होते हैं। वे विकासशील देशों में अस्वस्थता और मृत्यु के मुख्य स्रोत हैं। उनके कारण हैज़ा, टाइफ़ाइड, दस्त, पेचिश और अन्य संक्रमण हो जाते हैं। विशेष रूप से सैल्मोनेला वर्ग द्वारा उत्पन्न जीवाणु संक्रमण, संदूषित जल में विकसित कवच प्राणियों द्वारा भी संचारित होते हैं, यदि क्लोरीन अथवा पराबैंगनी प्रकाश द्वारा उपचारित रोगाणु मुक्त जल को टंकी में बहुत समय तक न रखा जाए। जीवाणु-युक्त जल पीने से उत्पन्न होने वाले प्रमुख रोग इस प्रकार हैं:

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

- हैजा
- आंत्रज्वर (Typhoid fever)

- दण्डाणुज अतिसार (पेचिश) (Bacillary dysentery)
- पराआंत्र ज्वर (Paratyphoid fever)
- जठरांत्र शोथ (Gastroenteritis)
- शिशु प्रवाहिका (Infantile diarrhoea)
- लेप्टोस्पाइरा रूग्णता (Leptospirosis)
- टुलेरीमिया (Tularamia)

विषाणु (virus) : संदूषित जल और वाहित मल में आमतौर पर उपस्थित विषाणु इस प्रकार हैं- आंत्रविषाणु (enterovirus), एडीनोवाइरस (adenovirus), रेकोवाइरस और संक्रामक यकृत शोथ विषाणु। इस बात का महामारी विज्ञान संबधी प्रमाण है कि संक्रामक यकृत शोथ, प्रदूषित जल पीने से होता है।

परजीवी : जल द्वारा अंतर्ग्रहित होने वाला प्रमुख परजीवी एन्टअमीबा हिस्टोलिटिका *(Entamoeba hystolytica)* है। इसके कारण आंत्र-अमीबता *(intestinal amoebiosis)* और अमीबी यकृत विद्रधि *(amoebic liver abscess)* जैसे रोग के आंत्रबाह्य रूप उत्पन्न होते हैं। यह दुनिया के गर्म देशों में और उन स्थानों में जहां स्वास्थ्य संबंधी स्थिति ठीक न हो, बहुत अधिक पाया जाता है। सूक्ष्म निस्यंदन जैसा जीवाणुओं के निष्कासन के लिए प्रयुक्त किया जाता है, वनस्पति (vegetative) और पुटीभूत (encysted) अमीबा के लिए प्रभावकारी और आवश्यक होता है। गिनि कृमि से तारू रोग *(dracontiasis)* हो जाता है। यह परजीवी मुख्यत: कोपिपोड मध्यवर्ती परपोषी से ग्रस्त गांव के खुले कुओं और तालाबों द्वारा संचारित होता है।

ऐस्कारिस *(Ascaris lumbricoides)* और ट्राइक्यूरिस ट्राइकिरस *(Trichuris trichiurs)* आदि आंत्र कृमि भी जल में होते हैं यद्यपि संदूषित मृदा का अंतर्ग्रहण संचारण का सामान्य साधन है। डिस्टोमैटोसिस *(Distomatosis)* अन्य परजीवी रोग है जो पुटी युक्त संदूषित जल ग्रहण करने से होता है। कभी-कभी प्राथमिक परपोषी के मल से संदूषित जल पीने से मनुष्यों और जानवरों में उदाशय *(hydatid)* रोग हो जाता है।

ii) **अंतर्ग्रहण के अतिरिक्त अन्य प्रकार के जल संपर्क से संचारित जैव कारकों से उत्पन्न स्वास्थ्य संकट**

भारत जैसे देशों में नदियों, तालाबों, नहरों और सरोवरों के जल का उपयोग स्नान करने, कपड़े धोने, मानव मल का निपटान करने और अन्य अनेक घरेलू कार्यों के लिए किया जाता है। अत्यंत संदूषित होने के कारण इन स्रोतों से प्राप्त जल हैजा, टायफाइड ज्वर और पेचिश आदि आंत्र संक्रामक रोगों के संचारण का महत्वपूर्ण माध्यम होता है। शिस्टोसोमा रूग्णता *(schistosomiasis)* आदि संचारी रोग परजीवियों के त्वचा और कुछ श्लेष्मल झिल्लियों में अंतर्वेधन से फैलते हैं।

MAADHYAM IAS

शिस्टोसोमा रूग्णता एक दीर्घकाली प्रछन्न (insidious) दुर्बलकारी रोग है जिसके कारण विकृति संबंधी क्षति (pathological lesions), सैप्सेनर्जी, प्रतिरोध की कमी और कार्य-क्षमता कम हो जाती है। कृषि और उद्योगों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कृत्रिम तालाबों, जलाशयों और जल अवरोधी के निर्माण से जल में घोंघों की संख्या बढ़ जाती है और यदि निरोधक उपाय न अपनाए जाएं तो शिस्टोसोमा रूग्णता हो जाती है।

मनुष्यों में यह रोग मुख्यत: सूत्र कृमियों की तीन जातियों अर्थात् शिस्टोसोमा मान्सोनी, शिस्टोसोमा जैपोनिकम और शिस्टोसोमा हीमैटोबियम के कारण होता है। पहली दो

जातियों के कारण आंत्र अभिव्यक्ति होती है जबकि तीसरी जननमूत्र अथवा मूत्राशय शिस्टोसोमा रूग्णता उत्पन्न करती है। मल अथवा मूत्र से युक्त अंडे जल-निकाय में पहुंचने पर स्फुटित होकर घोघों में प्रविष्ट कर जाते हैं। घोंघों से वे सर्केरिया के रूप में निकलते हैं और मनुष्यों को संक्रमित करते हैं। जल में चलने अथवा नहाने से वे त्वचा में प्रविष्ट कर जाते हैं। जलीय घोंघा परपोषी की सभी जातियां अति मंद धारा के साथ बहने वाले जल को पसंद करती हैं।

त्वचा से प्रविष्ट होने वाले अन्य रोग परजीवी पर ऐन्किलोस्टोमता और स्ट्रांजिलॉइड रूग्णता हैं। ऐन्किलोस्टोमता के अधिकांश मामलों के लिए *निकेटर अमेरिकैनस (Necator americanus)* और *ऐनिक्लोस्टोमा डूओडिनेल (Ancylostoma duodenale)* उत्तरदायी होते हैं। संक्रमित मनुष्यों के मल में प्रविष्ट अंडों से लार्वा निकलते हैं जो फिलैरिफार्म अवस्था में विकसित होकर मनुष्यों को संक्रमित करते हैं। स्ट्रांजिलॉइड रूग्णता रोग स्ट्रांजिलॉइड गोल कृमि के कारण होता है जो क्षुद्र आंत्र के अवश्लेष्मिक ऊतक में रहता है इसके संचरण की विधि ऐन्किलोस्टोमता के समान है। जल, माध्यम का काम करता है जिसमें संक्रमण कारक निगल लिए जाते हैं। संक्रमण, मृदा से त्वचा वेधन द्वारा अथवा स्ट्रांजिलॉइड में स्वतः संक्रमण द्वारा होता है।

लेप्टोस्पाइरता (Leptospirosis) जल के साथ सीधे संपर्क द्वारा कशेरुकी जन्तुओं से मनुष्यों में संचारित होने वाला मुख्य जीवाणु संक्रमण है। यह जंगली और घरेलू जानवरों द्वारा होती है जो मूत्र में लेप्टोस्पाइर उत्सर्जित करते हैं और मनुष्यों में संदूषित तालाबों, नहरों, नदियों आदि के जल के साथ संपर्क से त्वचा और श्लेष्मल झिल्लियों के द्वारा संक्रमण हो जाता है।

iii) जल संबद्ध कीट रोगवाही द्वारा स्वास्थ्य को ख़तरा

जल संबद्ध रोगवाहियों द्वारा होने वाला प्रमुख रोग मलेरिया है जो ऐनोफ़िलीज़ मच्छर द्वारा संचारित होता है। प्राकृतिक अवस्थाओं में *ऑन्कोसर्कता (onchocerciasis)* अथवा नदी अंधता का संबंध शैलीय संस्तरों मे प्रवाहित स्वच्छ झरनों से होता है। यदि उपयुक्त सावधानी न रखी जाए तो जल संसाधन विकास के कृत्रिम कार्यों में बांध अधिप्लव मार्गों अथवा कंक्रीट आस्तर चैनलों में वही स्थिति उत्पन्न हो सकती है। रोगवाहियों के लिए प्रजनन भूमि के आस-पास काली मक्खियों द्वारा संचारित रोग का स्वास्थ्य संबंधी सामाजिक और आर्थिक महत्व होता है जबकि आबादी का बहुत बड़ा भाग आंशिक रूप से अथवा पूरी तरह अंधा हो सकता है। इसी प्रकार के अन्य रोगों में जल प्रजनन मच्छरों द्वारा संचारित पीत ज्वर, ट्रिपेनोसोमता अथवा निद्रालु व्याधि (sleeping sickness) और फाइलेरिया रोग हो जाता है। फाइलेरिया रोग जो दुनियाभर में 25 करोड़ से अधिक लोगों को प्रभावित करता है, अब भी प्रमुख परजीवी संक्रमण है। यह रोग *वुशेरेरिया बेन्क्रॉफ्टाई (Wuchereria bancrfti)* और *ब्रुगिया मलयी (Brugia malayi)* नामक जीवों के कारण होता है। बहुत बड़ी आबादी के आने जाने तथा शहरी गेटो (ghettos) के बढ़ने से संक्रमण की मात्रा और रोग में वृद्धि हो रही है जिसमें *क्यूलेक्स पिपिएन्स (Culex pipiens)* और *क्यूलेक्स फेटिगन्स (Culex fatigans)* नामक प्रमुख रोगवाहियों के प्रजनन स्थलों में बहुत वृद्धि हो गई है।

कण्टक जीव (Nuisance Organisms)

वे ऐसे जीव हैं जो अप्रत्यक्ष रूप से ख़तरा पैदा करते हैं। वे सुरक्षित जल को अरुचिकर अथवा अनाकर्षक बना देते हैं अथवा उपचार और वितरण प्रक्रमों में बाधा उत्पन्न करते हैं। ऐसे जीवों में जैव-अवपंक (biological slimes) आते हैं जो मुख्य प्रणाल के भीतरी पृष्ठ पर एकत्रित हो जाते हैं जिस पर मेथैन उपयोजक जीवाणु पैदा हो सकते हैं। शैवाल और ब्रायोजोआ जैसे

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

प्लूमेटेला (Plumatella), की वृद्धि से निस्यंदन की प्रक्रिया में बाधा पहुंचती है। मोलस्कों से मुख्य प्रणाल बंद हो सकता है। क्रस्टेशिया और सूत्रकृमि रोगजनक नहीं हैं किन्तु उनकी आंतों में जीवाणु, और विषाणु होते हैं। आंतों में जीवाणु और विषाणु होने से रोगजनक, क्लोरीन से नष्ट नही होते हैं। कुछ शैवालों के कारण जल का स्वाद और गंध अरुचिकर हो जाते हैं। पेयजल में सामान्यतया पाए जाने वाले कुछ कण्टक जीवों और उनके प्रभावों को सारणी 14.1 में दिया गया है।

सारणी 14.1: कण्टक जीव और उनके प्रभाव

जीव	प्रभाव
जैव अवपंक	• उपचार संयंत्रों और वितरण तंत्रों का रुद्ध होना।
	• मेथैन उपयोजक जीवाणु के लिए सहारा
	• जल को अनुपयोगी बनाने का खतरा
मोलस्क प्लमेटेला	• जल के नलों का रुद्ध होना।
शैवाल एसेलस	• निस्यंदन में व्यतिरोध।
	• जल के अनुपयोगी बनने का ख़तरा
सूत्र कृमि	• रोगजनकों का एकत्रीकरण

14.3.2 रासायनिक और रेडियोऐक्टिव खतरे

यदि नाइट्रेट, आर्सेनिक, सीसा आदि कुछ रासायनिक प्रदूषक एक निश्चित स्तर से अधिक मात्रा में हों तो ऐसा जल पीने में आविषालु होता है। किन्तु फ्लुओराइड आदि अन्य अवयव जो स्वास्थ्य के लिए आवश्यक होते हैं, कम मात्रा में लाभदायक जबकि अधिक मात्रा में हानिकारक होते हैं। कुछ अन्य पदार्थ अथवा रासायनिक अभिलक्षण पीने के लिए जल की स्वीकार्यता को प्रभावित करते हैं। उनमें दुर्गंध अथवा खराब स्वाद उत्पन्न करने वाले पदार्थ, अम्लता अथवा क्षारीयता पैदा करने वाले पदार्थ, ऋणायनी अपमार्जक, खनिज तेल, फ़ीनॉली यौगिक, मैग्नीशियम और आयरन के प्रकृति में पाए जाने वाले लवण तथा अत्यधिक सान्द्रताओं में उपस्थित सल्फेट तथा क्लोराइड आयन शामिल हैं। प्रदूषित जल पीने से इन पदार्थों के कारण होने वाले प्रभावों को नियंत्रित करने के लिए अंतराष्ट्रीय और राष्ट्रीय कसौटियां और मानक सुनिश्चित किए गए हैं। अंतर्ग्रहण, प्रभावित होने की केवल एक संभावित विधि है। मनुष्य अन्य प्रकार के प्रत्यक्ष संपर्क द्वारा जल प्रदूषकों से भी प्रभावित होता है जैसे मनोरंजन के लिए अथवा निजी स्वास्थ्य के लिए प्रयुक्त जल। जल के इन अपेय उपयोगों (कृषि और औद्योगिक उपयोगों सहित) के संभावित स्वास्थ्य परिणामों की पर्याप्त जानकारी नहीं है। अत: ऐसे प्रभावों के नियंत्रण के लिए कोई अंतर्राष्ट्रीय कसौटियाँ अथवा मार्गदर्शक सिद्धांत उपलब्ध नहीं हैं।

MAADHYAM IAS

जल के अंतर्ग्रहण और अन्य प्रकार से जल संपर्क के संभावित प्रभावों के अतिरिक्त, रासायनिक जल-प्रदूषक मनुष्य के स्वास्थ्य को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। ऐसा, जलीय पारितंत्र में बाधा पहुंचाकर अथवा मानव भोजन के रूप में प्रयुक्त जलीय जीवों में संचित होने के कारण होता है। कुछ प्रदूषकों के लिए, आजकल जलनिकायों में पाए जाने वाले प्रदूषण के स्तर पर, ये प्रभाव जल-प्रदूषकों के सबसे महत्वपूर्ण जन-स्वास्थ्य पहलू होते हैं और उन पर आविषालु धातुओं के यौगिकों और कार्बक्लोरीन पीड़कनाशियों के लिए विशेष रूप से विचार करना चाहिए।

जलीय पर्यावरण में प्रदूषकों में होने वाले विभिन्न रासायनिक और जैव-रासायनिक रूपांतरणों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। रासायनिक परिवर्तन, उनकी जैव उपलब्धता और आविषलुता को प्रभावित करते हैं जो या तो बढ़ जाती हैं अथवा कम हो जाती हैं। निम्नीकरण और रूपांतरण उत्पाद मूल प्रदूषकों से अधिक आविषालु हो सकते हैं। इन भौतिक, रासायनिक और जैव प्रक्रमों और उनकी क्रियाविधियों के बारे में बहुत कम जानकारी प्राप्त है, फिर भी वे रासायनिक जल-प्रदूषण के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों को समझने के लिए आवश्यक हैं।

अंतर्ग्रहण के प्रमुख स्रोतों जल और भोजन, में भी अनेक जल प्रदूषक होते हैं। इन प्रदूषकों में धातुएं, कार्बनिक पदार्थ जो जैवनिम्नीकरणरोधी होते हैं तथा रेडियाऐक्टिव न्यूक्लाइड शामिल हैं। जल में प्रदूषण के स्तर का निर्धारण पिए गए जल की वास्तविक मात्रा तथा स्थान विशेष में अन्य स्रोतों के कारण कायिक मात्रा (body burden) के रूप में किया जाता है।

विशिष्ट प्रदूषक

कुछ विशिष्ट प्रदूषकों का वर्णन नीचे किया गया है जो आविषालु होते हैं और जल द्वारा स्रोत से मनुष्यों में संचारित हो जाते हैं।

i) नाइट्रेट

पृष्ठजल में नाइट्रेटों की सान्द्रता 5 mg L^{-1} से कम होती है। कभी-कभी भौमजल में नाइट्रेटों की सान्द्रता बहुत अधिक होती है। अधिक नाइट्रेट वाला जल पीने (अथवा शिशु आहार बनाने) से *मेटहीमोग्लोबिनैमिया (methaemoglobinaemia)* रोग हो जाता है।

ii) फ्लुओराइड

अनेक स्थानों में सार्वजनिक जल आपूर्ति में फ्लुओराइड होते हैं जो बच्चों में दंत क्षरण रोकने के लिए पेय जल के आवश्यक अवयव माने जाते हैं। यदि पेयजल में फ्लुओराइडों की सान्द्रता 0.5 mg L^{-1} से कम हो दंत-क्षरण (dental caries) संभावना अधिक रहती है। यदि सान्द्रता 1.5 mg L^{-1} से अधिक हो उसके कारण *स्थानिक संचयी फ्लुओरोसिस (endemic cumulative fluorosis)* हो जाता है जिससे अस्थि-क्षति हो जाती है। इसलिए जल में फ्लुओराइड की मात्रा निश्चित सीमाओं के अंदर होनी चाहिए जो जल ताप के साथ बदलती रहती है।

iii) आर्सेनिक और सिलीनियम

पृष्ठीय जल निकायों में आर्सेनिक की सान्द्रता प्रायः कम होती है। उच्च सान्द्रता से स्थानिक (endemic) आर्सेनिक विषाक्तन और तथाकथित 'ब्लैकफुट' रोग हो जाता है। आर्सेनिक कुछ समुद्री जीवों जैसे सीपी, चिंगट (shrimps) आदि में भी संचित हो जाता है। सिलीनियम, आर्सेनिक आविषालुता को समाप्त कर देता है। कैडमियम और पारद के आविषालु प्रभावों के विरुद्ध सिलीनियम की विशिष्ट संरक्षी क्रिया सुविदित है। जल में सिलीनियम का स्तर अवसादन और अवक्षेपण के कारण अधिशोषण द्वारा होने वाले प्राकृतिक नियंत्रण पर निर्भर करता है। सिलीनियम अत्यल्प मात्रा में सूक्ष्मपोषक होता है किन्तु उच्च सान्द्रता में इसका स्तनधारियों पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। कुछ अध्ययनों से संकेत मिला है कि बचपन में सिलीनियम के कारण दंत-क्षरण की संभावना बढ़ जाती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

iv) भारी धातुएं

अन्य प्रदूषकों से भिन्न भारी धातुएं और उनके लवण पर्यावरण में पाए जाते हैं। भारी धातुओं के अंतर्गत वे सभी धातुएं आती हैं जिनके परमाणु क्रमांक 23 से अधिक और विशिष्ट गुरूत्व 5 से अधिक होता है। भारी धातुओं की उपस्थिति एक चिन्ता का विषय है क्योंकि वे अनिम्नीकरणीय, प्रकृति में लंबी अवधि तक दीर्घ स्थायी और अल्प सान्द्रता पर भी जीवित

प्राणियों के लिए आविषालु होते हैं तथा पादप और जन्तु ऊतकों में संचित अथवा जैवत: आवर्धित हो जाते हैं।

सर्वेक्षण से संकेत मिलता है कि प्राकृतिक जल में पारद की मात्रा $0.1 \mu g\ L^{-1}$ से कम होती है। समुद्री जल में पारद की (प्राकृतिक मूल के) औसत सान्द्रता $0.03\ \mu g\ L^{-1}$ होती है किन्तु जापान के मिनामाटा खाड़ी जैसे संदूषित क्षेत्रों में उसकी सान्द्रता $1–10\ \mu g\ L^{-1}$ तक पाई गई है।

समुद्री और पेय जल (fresh water), दोनों के पर्यावरणों में (तलीय अवसादन) में ऐल्किलपारद को छोड़कर अधिकांश कार्बनिक पारद यौगिकों के अपघटन से अकार्बनिक रूप प्राप्त होते हैं जो धीरे-धीरे सरलतम ऐल्किल पारद अर्थात् मेथिलपारद, $(CH_3)_2Hg$, में परिवर्तित हो जाते हैं। मेथिल पारद अत्यंत आविषालु यौगिक है जिसकी पूरी जलीय आहार शृंखला में संचित होने की प्रवृत्ति होती है। ज्ञात होता है कि ये रूपांतरण केवल तब होते हैं जब पारद सान्द्रता $1–10\ \mu g\ L^{-1}$ से अधिक हो।

जापान में प्रदूषित मछलियों और कवच प्राणियों को खाने से फैले मेथिलपारद विषाक्त रोग का कारण समुद्र में अपशिष्ट जल में पारद की उपस्थिति थी। जल और मृदा में, पारद के अकार्बनिक यौगिक, कार्बनिक यौगिकों में परिवर्तित हो जाते हैं। पारद के कार्बनिक यौगिक, अकार्बनिक यौगिकों की अपेक्षा बहुत अधिक आविषालु होते हैं। हमारे शरीर में प्राकृतिक संरक्षी तंत्र होता है जो पारद के S, Se और प्रोटीन के साथ बंधन से उसे निराविषी कर देता है। प्रोटीन का सल्फाहाइड्रिल समूह, पारद के साथ आबद्ध होकर उसे निराविषी बना देता है, देखिए चित्र 14.5।

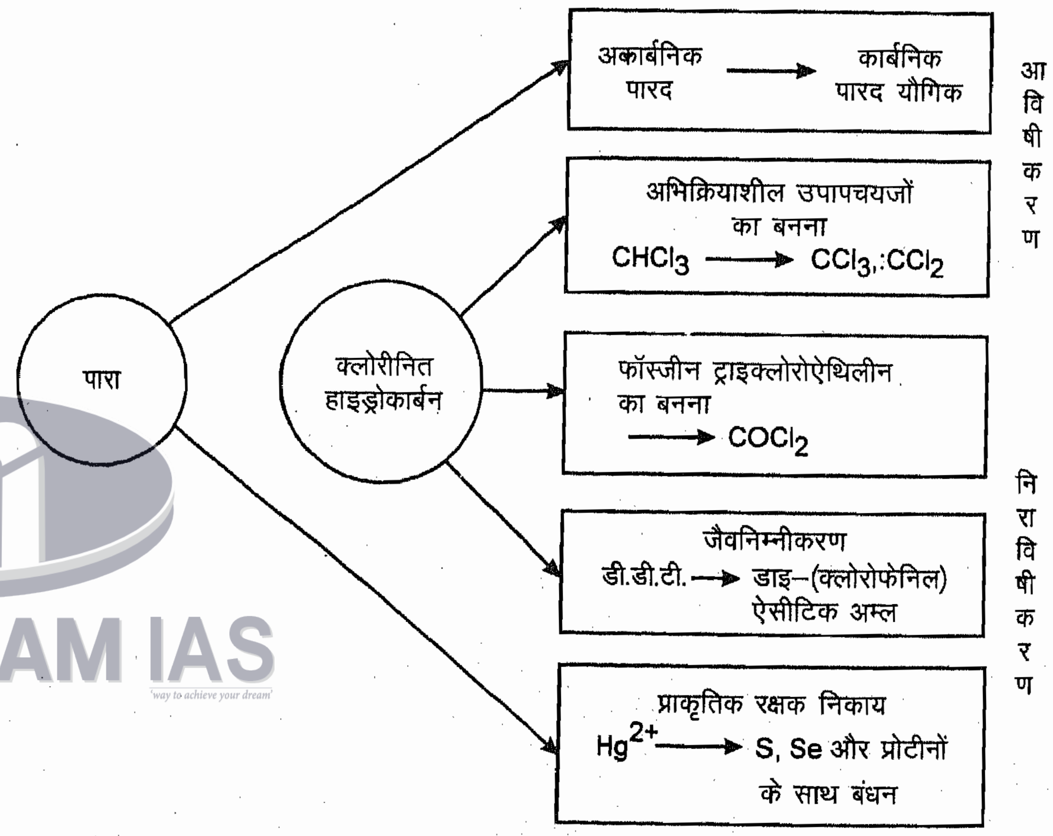

MAADHYAM IAS

चित्र 14.5: मृदा और जल में पारे और क्लोरीनित हाइड्रोकार्बनों का आविषीकरण और निराविषीकरण

पेय जल में सीसे की मात्रा, अन्य स्रोतों के अतिरिक्त, सीसे के पाइपों, नलों अथवा सीसे के यौगिकों के साथ स्थायीकृत प्लास्टिक पाइपों के उपयोग के कारण होती है। प्राकृतिक और

अनुपचारित जल आपूर्ति में सीसे की मात्रा 0.01 – 0.3 mg L^{-1} होती है। जल से सीसे का औसत दैनिक अंतर्ग्रहण बहुत कम (0.01– 0.1 mg) होता है जबकि शहरी वायु सहित सभी स्रोतों से कुल औसत दैनिक अंतर्ग्रहण 0.33–0.44 mg होता है। सीसे के प्रभाव की संभावना, संचायक (storage) बैटरी उत्पादन, सीसा प्रगालक (smelter), पेन्टों और वर्णकों से होती है। सीसे की आविषालुता का प्रभाव अस्थि मज्जा, उदर की पेशियों, आंत और केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र पर होता है जैसाकि चित्र 14.6 में दिखाया गया है। सीसा, शुक्तियों (oystors) और अन्य कवच प्राणियों में संचित हो जाता है। जलीय पर्यावरण में सीसे के संभावित रासायनिक रूपांतरण के बारे में बहुत कम जानकारी प्राप्त है।

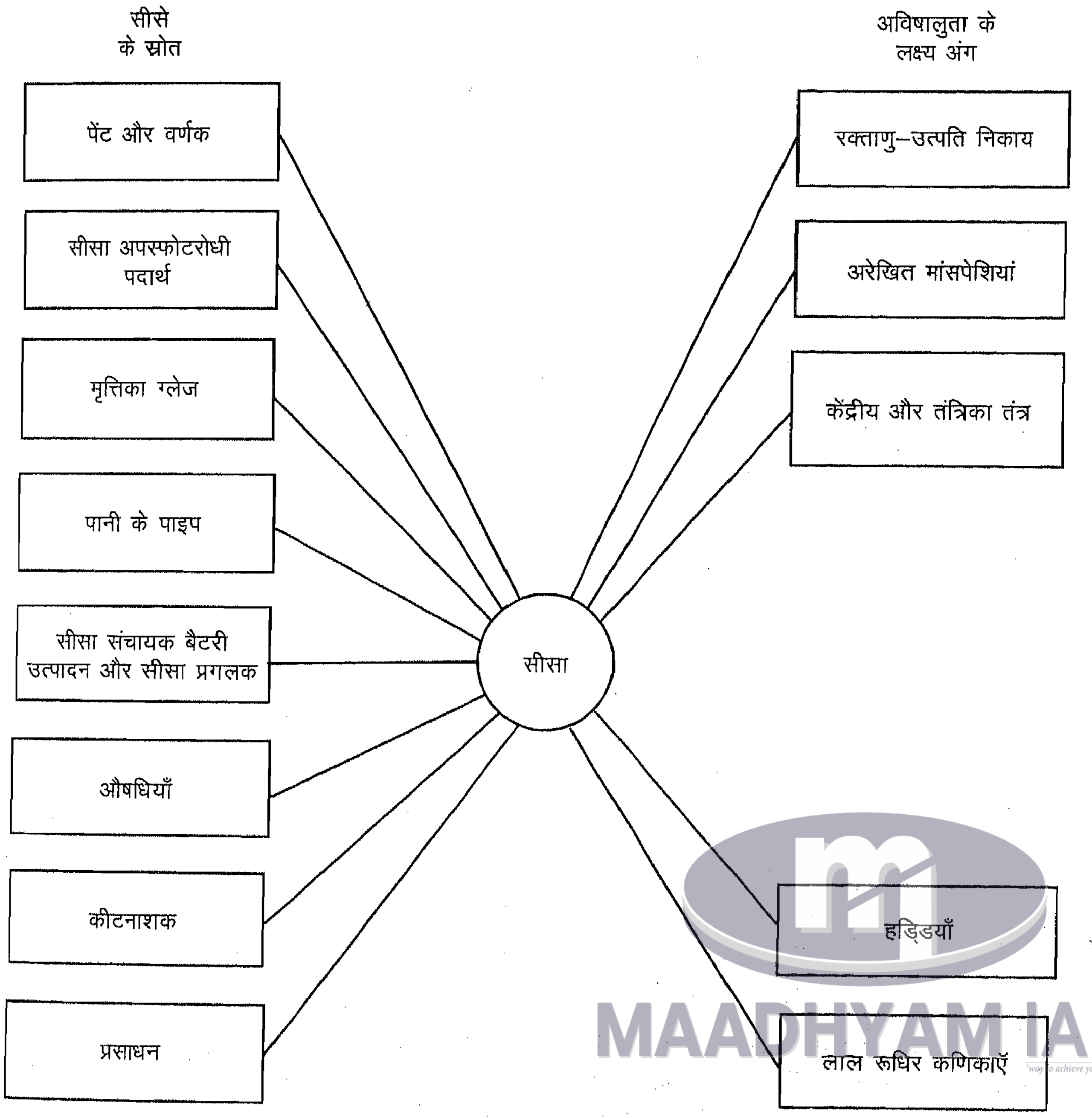

चित्र 14.6: मृदा और जल में उपस्थित सीसे का मनुष्यों और जंतुओं पर प्रभाव

कैडमियम- प्राकृतिक जल और मनुष्यों द्वारा उपभुक्त जल, दोनों में कैडमियम का स्तर 1μg L^{-1} से भी कम से लेकर 10 μg L^{-1} से अधिक तक पाया गया है। औद्योगिक विसर्जन के अलावा, धातु और प्लास्टिक पाइप, जल में कैडमियम के संभावित स्रोत होते हैं। विलयन में अन्य धातुओं के समान कैडमियम निलंबित कणों और तलीय अवसादन द्वारा अवशोषित हो

जाता है। इसलिए प्रदूषित नदियों में भी जल प्रावस्था में कैडमियम स्तर संसूचन सीमा से कम होता है। निलंबित ठोस वाले सिंचाई जल के कारण जापान में जिंत्सू नदी के आस-पास धान वाली भूमि प्रदूषित हो गई थी जिससे इटाई-इटाई *(itai-itai)* रोग हो गया था।

जल में **निकैल** की सान्द्रता 1–70 $\mu g\ L^{-1}$ तक होती है। भोजन और जल सहित पर्यावरण के प्रतिदर्शों में निकैल की अल्प मात्राओं के संभावित दीर्घकालिक प्रभावों के बारे में जानकारी बहुत सीमित है तथा इस पर बहुत अनुसंधान करने की आवश्यकता है। प्राकृतिक और प्रदूषित जल में अन्य आविषालु तत्व और उनके यौगिक प्राय: बहुत कम मात्रा में पाए जाते हैं जिनमें बेरियम, बेरीलियम, कोबाल्ट, मॉलिब्डेनम, टिन, यूरेनियम, वैनेडियम और अनेक अन्य तत्व शामिल हैं। स्वास्थ्य पर उनके प्रभावों को निर्धारित करने तथा सुरक्षा स्तरों को सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त जानकारी उपलब्ध नहीं है।

v) जल-कठोरता और हृद्वाहिका रोग

अनेक देशों से प्राप्त रिर्पोटों से ज्ञात होता है कि पेय जल की कठोरता और हृद्वाहिका रोगों से होने वाली मृत्यु दर में विपरीत संबंध होता है। जिन क्षेत्रों में लगातर मृदु पेय जल की आपूर्ति की जाती है वहां हृदयरोग अथवा व्यपजननी (degnerative) हृदयरोग, अतितनाव *(hypertension)*, हृदवाहिका के कारणों से आकस्मिक मृत्यु अथवा इनका संयुक्त प्रभाव हो जाता है। एक अध्ययन से संकेत मिला है कि जिन शहरों पिछले कुछ दशकों में मृदु जल की आपूर्ति की गई वहां हृद्वाहिका रोगों से मृत्यु संख्या में वृद्धि हो गई और जिन शहरों में कठोर जल की आपूर्ति की गई वहां मृत्यु संख्या कम हो गई। जानवरों पर किए गए कुछ प्रयोगों से इस दृष्टिकोण की पुष्टि होती है कि *ऐथिरोस्क्लेरोसिस (atherosclerosis)* रोग का एक कारक मृदु जल हो सकता है।

मृदु जल का मनुष्यों में हृद्वाहिका रोग के रूप में हानिकारक प्रभाव होता है। यह निष्कर्ष पारिस्थितिक प्रमाण और सांख्यिकीय संयोजनों पर आधारित है। इस बात की कोई निश्चित सूचना नही है कि कौन-से जल घटक 'रक्षक' अथवा 'हानिकारक' होते हैं अथवा ये प्रमुख अवयव हैं अथवा सूक्ष्ममात्रिक तत्व हैं तथा प्रभावों के लिए उनकी उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति, क्या उत्तरदायी होता है। कुछ जल गुणधर्मों तथा हृद्वाहिका रोग के परस्पर संभावित संबंध को सुनिश्चित करने के लिए अधिक अध्ययन करने की आवश्यकता है।

vi) कार्बक्लोरीन यौगिक

जल प्रदूषण में कार्बक्लोरीन यौगिकों के अनेक समूहों का महत्व है। उनमें डी. डी. टी., ऐल्ड्रिन और एन्डोसल्फेन आदि कीटनाशी, क्लोरीनित फ़ीनॉक्सीऐसीटिक अम्ल (जैसे 2,4,5-T) आदि शाकनाशी तथा हेक्साक्लोरोबेन्ज़ीन, पेन्टाक्लोरोफ़ीनॉल आदि कवकनाशी शामिल हैं। क्लोरीनित ऐरोमैटिक यौगिक जिनमें क्लोरीनित नैफ़्थेलीन और बाइफ़ेनिल शामिल हैं, का उपयोग मुख्यत: उद्योगों में होता है।

MAADHYAM IAS

जल में कार्बक्लोरीन पीड़कनाशियों के दो प्रमुख स्रोत हैं: कृषि भूमि से प्राप्त वाहजल तथा पीड़कनाशियों के उत्पादन और सूत्रण अथवा शलभरोधी रसायनों के रूप में उनके उपयोग से औद्योगिक अपशिष्टों का विमोचन। उनकी जल में अल्प-विलेयता और ठोस पृष्ठों में अवशोषित होने की प्रवृत्ति के कारण, अपरिष्कृत और उपचारित जल में इन यौगिकों की केवल सूक्ष्म मात्राएं पाई जाती हैं। जल-सर्वेक्षण के दौरान जल में निलंबित कणिक द्रव्य पर कीटनाशियों के अवशिष्ट पाए गए। किन्तु पंक (mud) और तलीय अवसाद में उनकी अधिक मात्राएं पाई जाती हैं।

नगरपालिका वाहित मल संयंत्रों के बहि:स्रावों और ग्राही जल में, पॉलिक्लोरीनित बाइफ़ेनिल

(polychlorinated biphenyls, PCBs) की सान्द्रता कुछ ng L^{-1} से μg L^{-1} के बीच पाई जाती है। वे आपंक के साथ अवक्षेपित हो जाते हैं और मृत्तिकाओं द्वारा इतनी मात्रा में अधिशोषित हो जाते हैं कि पेयजल में केवल अल्प मात्राएं ही संसूचित होती हैं। कुछ अन्य कार्बक्लोरीन यौगिकों की भांति वे वसा में विलेय होते हैं और जलीय जीवों में संचित हो जाते हैं।

कुछ कार्बक्लोरीन यौगिकों का जैव रासायनिक भंजन मंद होता है और उनके 50% निम्नीकरण के लिए 0.05–2 वर्ष का समय लगता है। जल और मृदा में विमोचित (released) यौगिक परिवर्तित होकर अधिक अथवा कम आविषालु गुणों वाले पदार्थ देते हैं। आविषीकरण और निराविषीकरण दोनों एक साथ होते हैं, देखिए चित्र 14.5। कार्बक्लोरीन पीड़कनाशी के स्रोत, आविषालुता के लक्ष्य अंग तथ निक्षेपण कक्ष चित्र 14.7 में दिखाए गए हैं।

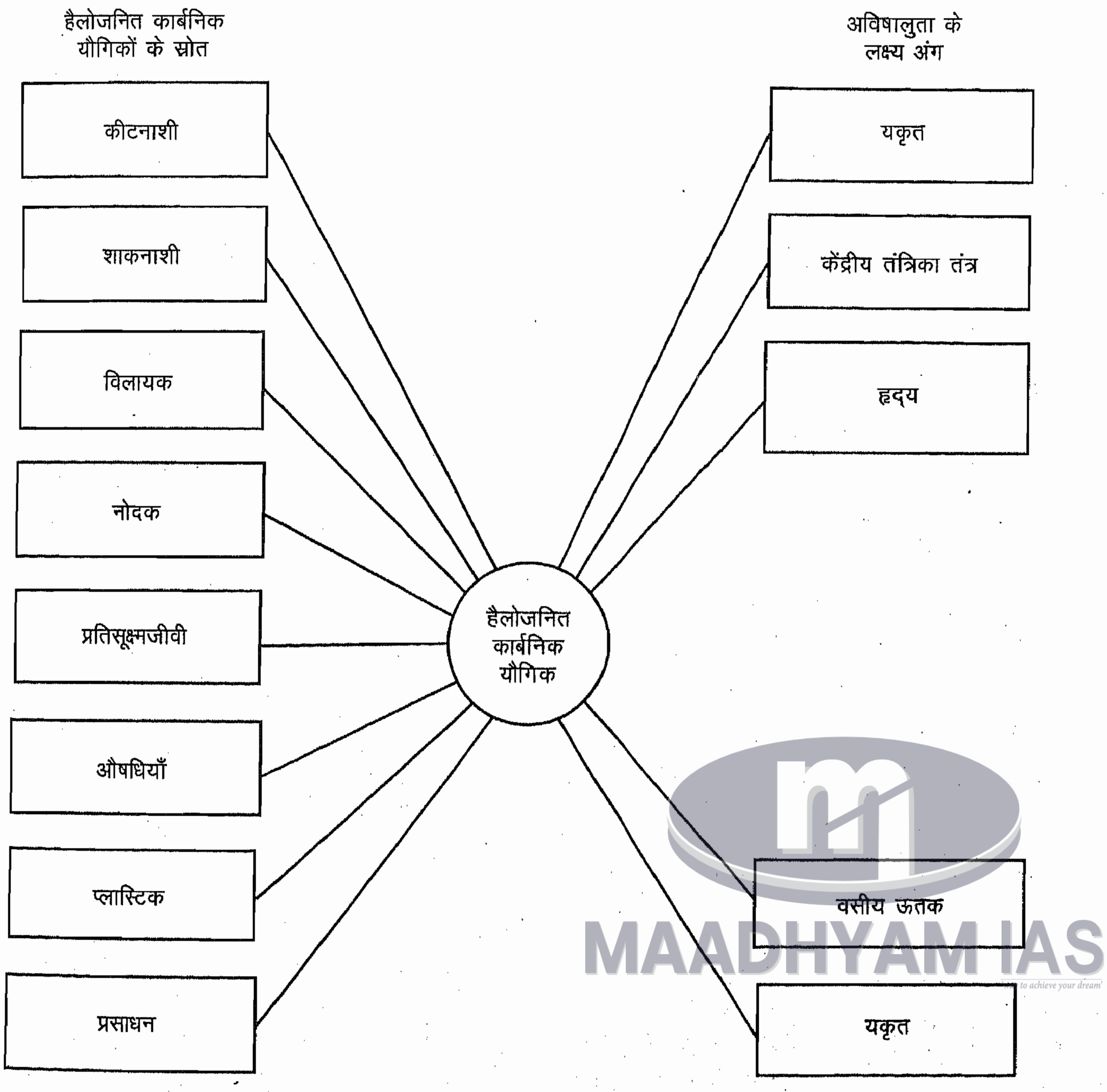

चित्र 14.7: मनुष्यों और जंतुओं पर मृदा और जल में उपस्थित कार्ब-हैलोजनित यौगिकों का प्रभाव

MAADHYAM IAS

vii) बहुनाभिकीय ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बन

जल और अन्य पर्यावरणी माध्यमों में अनेक बहुनाभिकीय ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बन

(Polynuclear Aromatic Hydrocarbon, PAH), विशेष रूप से बेन्ज़ो [α] पाइरीन (BP) पा गए हैं। शुद्ध जल में उनकी विलेयता बहुत कम होती है किन्तु ऋणायनी अपमार्जकों की उच्च सान्द्रताओं की उपस्थिति द्वारा उसमें वृद्धि की जा सकती है। पृष्ठों पर PAH का अधिशोषण, जल में उनकी उपस्थिति तथा जल-उपचार प्रक्रमों में उनका निष्कासन, दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण गुणधर्म है। PAH का स्थायित्व प्रकाश और ऑक्सीजन द्वारा प्रभावित होता है। स्वच्छ जल में कैंसरजन PAH की सूक्ष्म मात्राओं की स्वास्थ्य-संबंधी महत्व की जानकारी उपलब्ध नहीं है। वे समुद्री पर्यावरण में भी विद्यमान रहते हैं। समुद्री प्लवक में शुष्क प्रतिदर्श की 400 $\mu g\ kg^{-1}$ तक (BP) की मात्राएं निर्धारित की गई हैं।

viii) ऋणायनी अपमार्जक

संश्लिष्ट अपमार्जक मिश्रणों में पृष्ठ-सक्रिय घटकों के रूप में प्रयुक्त ऐल्किल बेन्जीन सल्फोनेट (ABS) के अवशिष्ट, नदियों के प्रक्षुब्ध फैलावों में फेन उत्पन्न करते हैं और वाहित मल उपचार प्रक्रमों और नदियों के स्वत: शोधन में रुकावट पैदा करते हैं।

1960 के दशक में आसानी से जैवनिम्नीकरणीय रैखिक ऐल्किल सल्फोनेटों (Linear Alkyl Sulphonates, LAS) की खोज हो से इन प्रभावों को कम करने में बहुत सहायता मिली है।

अपमार्जक 'रचक' (builders) कीलेटन कर्मक होते हैं जो अपमार्जक गुणधर्मों में उल्लेखनीय सुधार करते हैं। सबसे अधिक प्रभावकारी और सर्वाधिक प्रयुक्त यौगिक, सोडियम ट्राइपॉलिफॉस्फेट (एस. टी. पी.) हैं। साधारण वाहित मल उपचार प्रक्रमों द्वारा फॉस्फेट और नाइट्रेट हटाए नहीं जा सकते तथा सरोवरों और नदियों में उनकी बढ़ी हुई मात्राओं से **सुपोषण** (eutrophication) होता है। यह सुझाव है कि अपमार्जकों में फ़ॉस्फेटों के स्थान पर नाइट्राइलोट्राइएसीटिक अम्ल (एन. टी. ए.) के सोडियम लवण का उपयोग किया जाए। एन. टी. ए. के पूरे आविषी आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं। किन्तु एन. टी. ए. शरीर में उनका प्रवेश प्रभावित करके धातुओं की आविषालुता को कम कर देता है। साथ ही यह ऊतकों में उनके वितरण और सान्द्रता को भी प्रभावित करता है जो मनुष्यों के लिए संभावित खतरा है।

ix) रेडियोऐक्टिव न्यूक्लाइड

जल के प्राकृतिक स्रोतों में रेडियोऐक्टिवता प्राय: कम होती है और स्वास्थ्य की दृष्टि से उसका महत्व नहीं होता है। यदि जल अत्यंत रेडियोऐक्टिव खनिजों के निक्षेपों से प्राप्त किया गया हो तो रेडियोएक्टिवता महत्वपूर्ण होती है। रेडियोएक्टिव अपशिष्टों से उत्पन्न प्रदूषण बहुत खतरनाक होता है और जल आपूर्ति का उपचार करने के बजाय स्रोत पर ही अपशिष्टों का प्रबंध कर देना चाहिए। रेडियोऐक्टिव पदार्थ सीधे जल-आपूर्ति द्वारा ग्रहण किए जाते हैं किन्तु वे अधिक सान्द्र रूप में मछली, कवच प्राणी (^{65}Zn), खाद्य समुद्री शैवाल (^{108}Ru) अथवा संदूषित जल द्वारा सिंचित पादपों में भी विद्यमान रहते हैं।

पेयजल स्रोतों में उपस्थित प्रकृति में पाए जाने वाले प्रमुख रेडियोऐक्टिव न्यूक्लाइड ^{222}Rn और ^{226}Ra, ^{232}Th और उसके क्षय उत्पाद और कम मात्रा में ^{236}U हैं। सार्वजनिक आपूर्ति के लिए उपलब्ध जल में प्राकृतिक रेडियोऐक्टिव पदार्थों की सान्द्रताओं में बहुत भिन्नता होती है। माना जाता है कि अस्थियों में उपस्थित ^{226}Ra का लगभग 10% जल आपूर्ति से प्राप्त होता है। जल में कृत्रिम रेडियोऐक्टिव पदार्थ नाभिकीय परीक्षणों के अवपात (fallout), नाभिकीय पावर रिएक्टरों और पुन:संसाधन संयंत्रों से विसर्जन तथा रेडियोऐक्टिव अपशिष्टों के निपटान से प्राप्त होते हैं। ^{90}Sr, ^{137}Cs और कुछ मात्रा में ^{131}I के रेडियोऐक्टिव न्यूक्लाइड महत्वपूर्ण हैं किन्तु पेय जल में इनकी सान्द्रताए प्राय: बहुत कम होती है।

MAADHYAM IAS

3) हैजा किसके कारण होता है?

i) परजीवी

ii) रोगजनक जीवाणु

iii) विषाणु

....

....

4) जल संबंधित कीट रोगवाहकों के कारण होने वाले दो रोगों के नाम बताइए।

....

....

5) किस रासायनिक प्रदूषक के कारण शिशुओं में मेटहीमोग्लोबिनैमिया रोग हो जाता है?

....

....

6) निम्नलिखित रोगों/घटनाओं से संबंधित धातुओं के नाम बताइए:

i) मिनामाटा

ii) इटाई-इटाई

....

....

7) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

i) .... और .... का उपयोग कीटनाशी के रूप में

ii) .... का उपयोग कवकनाशी के रूप में और

iii) .... का उपयोग शाकनाशी के रूप में किया जाता है।

14.4 जल संबंधी रोग और ऋतु विभिन्नता

MAADHYAM IAS

जलवायु परिवर्तन व्यक्तियों और पूरे समाज के लिए विनाशकारी हो सकते हैं। मौसमी जलवायु और मानव स्वास्थ्य के बीच स्पष्ट संबंध होने के बावजूद इस समस्या पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है।

शुष्क मौसम में उपलब्ध जल की मात्रा धीरे-धीरे कम हो जाती है। पूरे वर्ष जल आपूर्ति करने वाले स्रोतों के अत्यधिक उपयोग से मनुष्य और जानवर उनके प्रदूषण को बढ़ा देते हैं। जल की घटती मात्रा और प्रदूषण की बढ़ती मात्राओं से प्रदूषकों की सान्द्रता में वृद्धि होती जाती है। जल का ताप इतना नहीं बढ़ पाता है कि रोगाणु शीघ्र नष्ट हो जाएं। अत: जल की गुणता कम होती जाती है। शुष्क मौसम में जल स्रोतों की पर्यावरणी स्थिति में सुधार नहीं हो पाता है।

नम मौसम की संक्रमण अवधि में कृषि कार्यों में वृद्धि से घरेलू क्रियाकलापों और स्वास्थ्य की

देखभाल में कमी हो जाती है। इससे मच्छरों के प्रजनन में वृद्धि हो जाती है और रोग बढ़ जाते हैं। वर्षा आरंभ होने पर जल की गुणता अत्यंत कम हो जाती है। पृष्ठीय जल स्रोतों में प्रदूषक घुल जाते हैं। गर्त शौचघरों के अधिप्रवाह और ढह जाने से प्रदूषण बढ़ जाता है। नम मौसम में उपलब्ध जल की मात्रा धीरे-धीरे बढ़ती है और तनुता की स्थिति में प्रदूषकों की मात्रा कम हो जाती है। उपलब्धता में वृद्धि से वर्षा ऋतु में जल की स्थिति में सुधार हो जाता है। नम मौसम में सबसे अधिक कठिनाई होती है। शुष्क मौसम की अपेक्षा नम मौसम में रोगों की व्यापकता प्राय: दुगुनी हो जाती है। शुष्क मौसम की अपेक्षा वर्षा ऋतु जल की अधिकता के कारण, स्वास्थ्य के लिए अधिक खतरनाक होती है। नम मौसम में जल की सुलभता अनेक अन्य नकारात्मक परिस्थितियों की तुलना में लाभदायक होती है।

यद्यपि वर्षा ऋतु में कुल अस्वस्थता और अनेक रोगों में वृद्धि होती है किन्तु हैजे की व्यापकता के बारे में विसामान्यता है। शीत और शुष्क मौसम में हैज़ा बहुत कम होता है। शुष्क मौसम में उसमें वृद्धि होने लगती है और नम मौसम के आरंभ में वह सबसे अधिक हो जाती है।

बोध प्रश्न

8) शुष्क मौसम में जल की गुणता में कमी के कारण बताइए।

....

....

9) वर्षा ऋतु में जल की गुणता में कमी के कारण बताइए।

....

....

14.5 मृदा प्रदूषण के प्रतिकूल प्रभाव

अनुमानत: दुनिया की एक तिहाई आबादी अंकुश कृमि (hook worm) से संक्रमित है जबकि प्रत्येक चार व्यक्तियों में एक व्यक्ति ऐस्केरिस लम्ब्रीकॉइडिस *(Ascaris lumbricoides,* गोल कृमि) से संक्रमित है।

रसायनों के कारण मृदा दिन प्रतिदिन प्रदूषित होती जा रही है जो खाद्य शृंखला, पृष्ठीय जल अथवा भौमजल में पहुंचकर अंतत: मनुष्य द्वारा अंतर्ग्रहित हो जाते हैं। मृदा प्रदूषण का संबंध मुख्यत: निम्नलिखित से होता है:

i) कृषि में उर्वरकों, पीड़कनाशियों और वृद्धि नियामक अभिकर्मकों आदि रसायनों का उपयोग।

ii) कोयला और खनिजों के खनन से और भूमि में निक्षेपित धातुओं के प्रगलन से उत्पन्न अपशिष्ट पदार्थों की बृहद मात्राएँ। इन पदार्थों से आविषालु अथवा हानिकर पदार्थ निक्षालित होकर भूमि में प्रविष्ट कर जाते हैं।

iii) घरेलू कचरा तथा वाहित मल और भूमि में क्षेपित औद्योगिक अपशिष्ट और भारी धातुओं के उपचार से प्राप्त ठोस तथा पेट्रोलियम उद्योग के उत्पाद।

iv) रोगजनक सूक्ष्मजीव जीव जो प्रदूषण के प्रमुख कारण होते हैं। आंत्र-परजीव (intestinal parasites) मृदा-प्रदूषण की प्रमुख समस्या है जो मानव मलमूत्र, अपशिष्ट जल और ठोस अपशिष्टों के अनुचित निपटान तथा कृषि कार्यों के फलस्वरूप उत्पन्न होती है।

14.5.1 जैव-रोग कर्मकों द्वारा मृदा प्रदूषण

मृदा को प्रदूषित कर मनुष्यों और जानवरों में रोग उत्पन्न करने वाले जैव-कर्मकों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

i) मनुष्यों द्वारा उत्सर्जित और मनुष्यों को संचारित रोगजनक जीव। यह संचारण संदूषित मृदा के सीधे संपर्क में आने से अथवा संदूषित मृदा में उगे फलों अथवा सब्जियों को खाने से होता है (अर्थात् मनुष्य-मृदा-मनुष्य)।

ii) जानवरों के रोगजनक जीव जो मनुष्यों को संक्रमित जानवरों के अपशिष्टों द्वारा संदूषित मृदा के सीधे संपर्क में आने से संचारित होते हैं (अर्थात् जानवर-मृदा-मनुष्य)।

iii) मृदा में प्राकृतिक तौर पर पाए जाने वाले रोगजनक जीव जो संदूषित मृदा के साथ संपर्क में आने से संचारित होते हैं (अर्थात् मृदा-मनुष्य)।

आइए, अब इनका विस्तार से अध्ययन करें।

i) मनुष्य-मृदा-मनुष्य

आंत्र-जीवाणु (enteric bacteria) ये और प्रोटोजोआ: ये मृदा को (क) अस्वास्थ्यकर मल-मूत्र विसर्जन अथवा (ख) विष्ठा अथवा वाहित मल आपंक का उर्वरक के रूप में उपयोग करने अथवा कृषि-फ़सलों को सीधे वाहित मल से सींचने से संदूषित कर सकते हैं। मृदा और फसलें, हैजा, साल्मनेलता दंडाणु अतिसार *(shigellosis, शिगेलोसिस*), आंत्र ज्वर (टाइफॉइड) और पैराटाइफॉयड ज्वर के जीवाणुओं कर्मकों, अथवा अमीबता के प्रोटोजोआ कर्मकों से संदूषित हो जाते हैं। ये रोग जल संक्रामक होते हैं और सीधे एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति के साथ संपर्क से अथवा भोजन के संदूषण से संचारित होते हैं। मल संदूषित मृदा में प्रजनन करने वाली अथवा उसके संपर्क में आने वाली मक्खियां, रोग जीवाणुओं के वाहक का काम करती हैं।

परजीवी कृमि (helminths, किक्किश) : मृदा संचारित परजीवी कृमि अथवा भू-कृमियों की यह विशेषता है कि उनके अंडे अथवा लार्वा मृदा में ऊष्मायन अवधि के बाद संक्रमित हो जाते हैं। ऐसे कृमियों द्वारा होने वाले संक्रमण की बहुलता और तीव्रता से किसी समुदाय का स्वास्थ्य के वांछित स्तर तक हुई प्रगति का संकेत मिलता है। बहुलता और तीव्रता की दृष्टि से प्रमुख मृदा संचारित कृमि हैं- ऐस्केरिस लम्ब्रीकॉईडीज (गोल कृमि), ट्राइक्यूरिस ट्राइकियूरा (कशाकृमि) निकेटर अमेरिकैनस और ऐन्किलोस्टोमा डूओडिनेल। इनमें अंतिम दो अंकुश कृमि रोग उत्पन्न करते हैं। एक अन्य जाति का नाम *स्ट्रांजिलाइडीज स्टरकोरैलिस (Strongyides stercoalis)* है जो कम पाई जाती है और मृदा संचरण तक सीमित नहीं है। मृदा संचरित कृमियों की मुक्तजीवी अवस्थाओं को अनेक प्राकृतिक खतरों का सामना करना पड़ता है। विशिष्ट आवश्यकताओं के कारण, प्रत्येक जाति विस्तृत पारिस्थितिक स्थितियों में पाई जाती है जिससे अधिकतम उत्तरजीविता होती है। विकास कम होता है जो स्थूल पर्यावरण की अपेक्षा सूक्ष्म पर्यावरण पर अधिक निर्भर करता है। प्रत्येक जाति की अनुकूलतम स्थितियों का संबंध वर्षा, वायुमंडलीय ताप, वनस्पति, सूर्य की रोशनी, वायु की गति और साथ ही मृदा के गठन, नमी तथा संरचना पर निर्भर करता है। यही कारण है कि ऐस्कॉरिस लंब्रीकॉईडीज के अंडे हिम की मोटी पर्त के नीचे बहुत कम वायुताप पर भी जीवित रहते हैं और अंकुशकृमि रोग, आर्द्र उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों में सर्वत्र नहीं पाया जाता है और उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों से बाहर भी पाया जाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इसमें कोई संदेह नही कि आंत्र भू-कृमि संक्रमण से परपोषी के पोषकों की आपूर्ति में, विशेष रूप से प्रोटीन और कुछ विटामिनों का लगातार क्षय हो जाता है। उत्पन्न पाचन क्षति और आवश्यक पोषक पदार्थों के अवशोषण से कुपोषण में वृद्धि हो जाती है। अंकुश कृमियों द्वारा चूषण से रुधिर और लोहे की बहुत अधिक मात्रा नष्ट हो जाती है। जिन लोगों के भोजन में लोहे की अपर्याप्त मात्रा होती है, जैसा कि ग्रामीण आबादी में होता है। उनमें इस प्रकार की रुधिर हानि से अरक्तता रोग हो जाता है। ऐसा उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों में होता है। विश्व के संपूर्ण उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों में आंत्र भू कृमियों के कारण क्षय पोषकों की मात्रा बहुत अधिक

होती है। परजीवियों से मनुष्य परपोषियों में पोषकों के अपवर्तन से उनके स्वास्थ्य में बहुत लाभ हो सकता है।

मृदा और फसलों का संदूषण: मानव विष्ठा उपयोगी उर्वरक है। इसलिए शौचालय, सैप्टिक टैंक, वाहित मल तंत्र से प्राप्त वस्तुओं का उपयोग फ़सलों के उर्वरक के रूप में किया जाता है। जिन क्षेत्रों में जल की कमी होती है, वहां अपशिष्ट जल के उद्धार से सिंचाई के लिए जल का अतिरिक्त स्रोत प्राप्त हो जाता है। किन्तु यदि कुछ सावधानियां न अपनाई जाएं तो यह प्रक्रिया स्वास्थ्य के लिए ख़तरनाक हो सकती है। इस प्रकार, मृदा और फसलें रोग जनक आंत्र जीवाणु, एन्टअमीबा हिस्टोलिटिका जैसे प्रोटोजोआ परजीवी और आंत्र कृमियों के लार्वा से संदूषित हो ज़ाते हैं जिससे संपर्क द्वारा अथवा कच्ची सब्जियों को खाने से सीधे संचारण हो जाता है।

अनुपचारित घरेलू वाहित मल अथवा विष्ठा में समुदाय में पाए जाने वाले सभी रोगजनक सूक्ष्मजीव होते हैं। परंपरागत वाहित मल उपचार प्रक्रमों द्वारा इन सभी रोगजनक सूक्ष्मजीवों को पृथक नही किया जा सकता है। किन्तु कॉलिफॉर्म जीवों को पृथक करने की मात्रा से जीववैज्ञानिक दृष्टि से इन प्रक्रमों की दक्षता का संकेत मिला है। यह पाया गया है कि प्राथमिक अवसादन से, कॉलिफॉर्म जीवों की संख्या में 30-40% की कमी हो जाती है जबकि अधिकांश पूर्ण जैव उपचार प्रक्रमों में लगभग 90% की कमी हो जाती है। 30 दिन की अवरोध अवधि वाले स्थायीकारी सरोवरों में कॉलिफॉर्म जीवों में 99% से अधिक कमी हो जाती है।

रोगजनक जीवों की क्षमता और हानिकर पर्यावरणी कारकों और रासायनिक पदार्थों के लिए उनके प्रतिरोध के अध्ययन के आधार पर अनेक नियंत्रण विधियों का आविष्कार किया गया है। यह देखा गया है कि साल्मोनेला जीव आर्द्रशीत ऋतु में वाहित मल से सिंचित मृदा में 70 दिन तक जिन्दा रहते हैं तथा शुष्क ग्रीष्म काल में उसके आधे समय तक ही जिन्दा रहते हैं। उष्णकटिबंधीय प्रदेशों में ऐस्कारिस अंडे दो वर्ष से अधिक समय तक जीवित रह सकते हैं। यह पाया गया है कि कुछ वाहित मल अपचार संयंत्रों से प्राप्त शुष्क पाचित आपंक में इस परजीव के जीवनक्षम अंडे होते हैं। इसलिए सिंचाई के लिए प्रयुक्त वाहित मल बहि:स्रावों के प्रभावी उपचार के लिए मृदा संचरित रोगजनक की प्रत्येक जाति के लिए अभिलाक्षणिक विधियों की आवश्यकता होती है। ताजी अनुपचारित विष्ठा और अपरिष्कृत वाहित मल के फैलाव की समस्या अभी भी है।

ii) जानवर-मृदा-मनुष्य

अनेक पशुजन्य रोगों में, संक्रमित कारक को जानवरों से मनुष्यों में संचारित करने में मृदा की प्रमुख भूमिका होती है। ऐसे कुछ रोगों का उल्लेख नीचे किया गया है।

लेप्टोस्पाइरोसिस : इस रोग से दुनिया के सभी भागों में जानवर और मनुष्य दोनों प्रभावित रहते हैं। यह रोग महामारी के रूप में पशुजन्य रोगों के पैटर्न का अनुसारण करता है अर्थात् जानवरों से जानवरों में और जानवरों से मनुष्यों में। लेप्टोस्पाइरोसिस का रोग पशुओं में एक प्रमुख समस्या तथा सूअरों में एक बहुत बड़ी समस्या है। कुछ क्षेत्रों में भेड़ें, बकरियां और घोड़े संक्रमित हो जाते हैं। कृंतक वाहकों में चूहे, मूषक और वोल शामिल हैं। लेप्टोस्पायरों के विक्षेपण का संबंध विशिष्ट पर्यावरणी स्थितियों से- विशेष रूप से उनसे जो जन्तु वाहकों, जल, पंक और मनुष्य को परस्पर एक दूसरे के निकट लाती है - होता है। जन्तु वाहक अत्यधिक लैप्टोस्पायरों को उत्सर्जित करते हैं जिनकी संख्या मूत्र में 10 करोड़ मिली$^{-1}$ तक होती है। यदि इसका उत्सर्जन जल अथवा पंक में हो जो उदासीन अथवा किंचित क्षारीय होते हैं, तो लेप्टोस्पायर अनेक सप्ताहों तक जीवित रहते हैं। रोग ग्रस्त जानवरों और मनुष्यों में इसका प्रभाव अदृश्य क्रिया से लेकर विस्फोटक घातक रोग के रूप में दिखाई देता है। लेप्टोस्पायर शरीर में श्लेष्मल झिल्लियों अथवा भंजित या कमजोर त्वचा से प्रतिष्ट करते हैं। प्राय: सिंचित

MAADHYAM IAS

खेतों विशेष रूप से धान अथवा गन्ने के खेतों में काम करने वाले श्रमिक उनसे संक्रमित होते हैं।

ऐन्थ्रैक्स : अन्य प्राणियों की तुलना में मनुष्यों में ऐन्थ्रैक्स रोग से पीड़ित व्यक्तियों की संख्या कम होती है। फिर भी, मानव रोग और पशुपालन पर आर्थिक प्रभाव की दृष्टि से ऐन्थ्रैक्स का बहुत महत्व है। बेसिलस ऐन्थ्रैसिस के बीजाणु रासायनिक और पर्यावरणी प्रभावों के प्रतिरोधी होते हैं तथा वे कुछ मृदाओं और खाल, बाल, ऊन आदि जन्तु उत्पादों में वर्षों तक जीवित रह सकते हैं। जब किसी जिले में पशुधन में ऐन्थ्रैक्स संक्रमण हो जाता है तो स्थानिक महामारी हो जाती है क्योंकि मृदा में बीजाणु बहुत समय तक जिन्दा रह सकते हैं।

क्यू (Q) ज्वर : क्यू ज्वर *कॉक्सिएला बर्नेटा (Coxiela burnetii)* नामक रिकेट्सिया के कारण होता है। यह एक महत्वपूर्ण सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है जिससे दुनिया के सभी देश प्रभावित हैं। रिकेट्सिया मृदा और धूल में पाए जाते हैं जहां वे लंबे समय तक जीवित रह सकते हैं क्योंकि वे शुष्कनरोधी होते हैं। इनका उन देशों में विशेष महत्व है जहां मेमनों के बाड़े में भेड़ों को रखा जाता है। ऐसे बाड़ों की धूल में रिकेट्सिया की बहुत अधिक सान्द्रता पाई जाती है जो सीधे सूर्य की रोशनी की आड़ में होने पर बहुत संक्रामक होती है।

त्वचा लार्वा माइग्रान : त्वचा लार्वा माइग्रान अथवा विसर्पी विस्फोट गर्म जलवायु में मनुष्यों में होने वाला सामान्य संक्रमण है जहां कुत्ते और बिल्लियों के अंकुश कृमि (एल्किलोस्टोमा ब्राजिलिन्जे) व्यापक मात्रा में होते हैं। अंकुश कृमि लार्वा के त्वचा में प्रवेश करने से मनुष्य संक्रमित हो जाते हैं जिससे विभिन्न तीव्रता का त्वक्शोथ हो जाता है। संक्रमण प्राय: उन लोगों को हो जाता है जो जानवरों के मल के संपर्क में आते हैं। यह विशेष रूप से समुद्र तटों, खेल के मैदानों और लॉन में खेलने वाले बच्चों को होता है जहां लार्वा उपस्थित रहते हैं। कुछ चुने गए स्थानों का विसंक्रमण किया जा सकता है।

अन्य रोग : जानवर-मृदा-मनुष्य क्रम का अनुसरण करने वाले अन्य रोग इस प्रकार हैं:

मुख्यत: टोक्सोकारा केनिस *(Toxocara canis)*, लिस्टेरियोसिस *(Listeriosis)*, क्लोस्ट्रिडियम परफ्रीन्जेन्स *(Clostridium perfringens)* संक्रमण लिम्फोसाइटिक क्लोग्गिोमेनिन्जाइटिस, हैम्रेजिक ज्वर के दक्षिण अमेरीकी प्रकार, ट्यूबर क्यूलोसिस साल्मोनेलोसिस और ट्यूलेरेमिया।

यद्यपि इनमें से अधिकांश रोग और संक्रमण मुख्यत: सीधे जानवर-मनुष्य संपर्क अथवा जन्तु पातन (गोबर आदि) और अपशिष्टों से संचारित होते हैं, परंतु मृदा-प्रदूषण की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

iii) मृदा-मनुष्य

माइकोसिस (कवकार्ति) गंभीर अवत्वक् (subcutaneous) गहराई में स्थित दैहिक माइकोस, कवकों और ऐक्टिनोमाइसिटीज के कारण होते हैं जो सैप्रोफाइट के रूप में मृदा और वनस्पति में विकसित होते हैं। विशेष स्थितियों में वे रोगजनक हो जाते हैं तथा विशिष्ट ऊतकों और पूरे तंत्र पर हमला कर देते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बीजाणुओं का अंतर्श्वसन अथवा क्षतिग्रस्त त्वचा में वेधन, संचारण की सामान्य विधाएं हैं। जब काँटों द्वारा हुए छिद्रित घावों से त्वचा में विभिन्न माइसिट (mycetes) प्रवेश करते हैं तो माइसिटोमस (mycetomas) उत्पन्न होते हैं। क्रोमोमाइकोसिस और अन्य कवकी रोगों की भांति ये उन लोगों में पाए जाते हैं जो नंगे पैर चलते हैं अथवा जूतों या वस्त्रों से ठीक प्रकार ढके नहीं रहते हैं। उनसे लंबी अवधि तक अपंगता हो जाती है और उपचार न किया जाए तो अंत में प्रभावित अंग का विच्छेदन करना पड़ता है। कोक्सिडिओइडोमाइकोकिस रोग कोक्सिडि ओइडोमाइकोसिस इमाइटिस कवक के कारण होता है जो शुष्क और अर्धशुष्क प्रदेशों में मृदा के

ऊपरी कुछ इंचों में तथा कृन्तक बिलों के आसपास पाया जाता है। आंरभिक ग्रीष्म की गर्मी में जमीन के ऊपर की घास सूख जाती है और हवा पृष्ठीय धूल उठाकर बीजाणुओं को उड़ा ले जाती है। मृदा (जियोट्राइकोसिस), पत्ता फफूंद अथवा सड़ते फल (फाइकोमाइकोसिस) कुक्कुट, अन्य पक्षियों चमगादड़ों के मल से युक्त मृदा (हिस्टोप्लाज्मोसिस), कबूतरों के घोंसलों और खाद (क्रिप्टोकोकोसिस), वनस्पति कम्पोस्ट (एस्पर्जिलोसिस) अथवा लकड़ी अथवा जल च्यवन (स्पोरोट्राइकोसिस) में पाए जाने वाले कवकों में भी यही प्रक्रिया होती है।

मनुष्य के रोगजनक इन मुक्तजीवी जीवों की पारिस्थितिकी और उनके द्वारा उत्पन्न रोगों की जनन प्रक्रिया की व्याख्या नहीं हो पाई है। इन माइकोसों का अध्ययन औषधि विज्ञान का तिरस्कृत क्षेत्र रहा है किन्तु यह पूरी दुनियां की विशेष रूप से खनन और कृषि कार्य में लगे श्रमिकों के लिए एक बहुत बड़ी समस्या है।

टेटनस : टेटनस मनुष्यों का एक पुराना रोग है जो क्षति-स्थल पर अवायव (anaerobically) रूप से बढ़ने वाले टेटनस बेसिलस नामक जीवविष (toxin) से होता है। यह जीव पूरी दुनियां में होता है यद्यपि आजकल इस रोग से ग्रस्त मामले कम पाए जाते हैं। कभी-कभी यह रोग कृषकों में होता है विशेष रूप में से जब घाव खाद मिश्रित मिट्टी से संदूषित हो जाते हैं। क्लोस्ट्रिडियम टेटेनी नामक संक्रमण कारक संक्रमित जानवरों विशेष रूप से घोड़ों द्वारा उत्सर्जित होता है। संक्रमण का तात्कालिक स्रोत मृदा, धूल अथवा जन्तु और मानव विष्ठा हो सकते हैं।

बाटुलिज्म : यह एक प्रकार का घातक विषक्तन है जो क्लोस्ट्रिडियम बॉटुलिनम द्वारा उत्पन्न जीवाणु विष से होता है। इस जीव का भण्डार मृदा और जानवरों का आंत्र-भाग है। भोजन में बीजाणुओं की अवायव वृद्धि से विष बनता है जो विषाक्तन का तात्कालिक स्रोत होता है। रोग का संचरण जारों अथवा डिब्बों से बंद कच्चे खाद्य पदार्थों को खाने से होता है जिन्हें डिब्बा बंदी के समय पूरी तरह संक्रमित नहीं किया जाता है जबकि डिब्बाबंद अथवा परिरक्षित खाद्य सामग्री, संदूषित मृदा से संक्रमित हो जाती है।

14.5.2 मृदा प्रदूषण और ठोस अपशिष्ट निपटान

शहरी क्षेत्र: शहरी और औद्योगिक क्षेत्र के ठोस अपशिष्टों के लिए भूमि, जगह प्रदान करती है। महानगरों में ठोस अपशिष्ट निपटान के अनेक सार्वजनिक स्वास्थ्य परिणाम होते हैं। सबसे बड़ी समस्या यह है कि शहरीकरण के बढ़ने और इमारतों द्वारा भूमि के घिर जाने से अपशिष्टों के निक्षेपण के लिए उपलब्ध भूमि कम होती जा रही है। अति उद्योगीकृत देशों में कृषि से प्राप्त ठोस अपशिष्ट एक समस्या उत्पन्न कर देते हैं जहाँ शहरी क्षेत्रों के आस-पास पशु और कुक्कुट अपशिष्ट मक्खियों का जनन स्थल बन जाते हैं और अपघटन पर बहुत दुर्गन्ध उत्पन्न करते हैं।

MAADHYAM IAS

भूमि प्रदूषण, जल और वायु प्रदूषण से भिन्न होता है क्योंकि यदि प्रदूषक पदार्थ को हटाया न जाए, जलाया न जाए, बहाया न जाए अथवा अन्य विधि से नष्ट न कर दिया जाए तो वह लंबी अवधि तक यथावत् बना रहता है। ऐसे ढेरों में पैदा होने वाले कीट और कृन्तक तथा कार्बनिक पदार्थों के अपघटन से अथवा आग के मंद दहन से उत्पन्न दुर्गन्ध बहुत बड़ी परेशानी और सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या पैदा कर सकते हैं। शहरी विकास के लिए भूमि के बढ़ते उपयोग के कारण भूमि निपटान के अलावा अन्य विधियों द्वारा ठोस अपशिष्ट निपटान के दबाव से नई प्रदूषण समस्याएं पैदा हो गई हैं। अनुचित भस्मीकरण (incineration) से गंभीर वायु प्रदूषण हो सकता है जबकि जल में विसर्जन से उपचार सुविधाओं पर भार बढ़ जाता है तथा पहले से प्रदूषित जल मार्गों का प्रदूषण और भी बढ़ जाता है।

कृषि-भूमि प्रदूषण : पहले समय में, कृषि अर्थव्यवस्था में पोषक पदार्थ एक सुनिश्चित चक्र का अनुसरण करते थे– भूमि से पादपों में, पादपों से जानवरों में, फिर वापस भूमि में। रासायनिक

उर्वरकों के उपयोग से यह परिपथ छोटा हो गया है और अब अनेक कृषि क्षेत्रों में पादपों और जन्तुओं के अपशिष्टों की बहुत बड़ी मात्राएं एकत्रित हो गई हैं जिनका यदि ठीक प्रकार से निपटान न किया जाए तो मृदा प्रदूषण हो सकता है। उन क्षेत्रों में यह समस्या और भी गंभीर हो जाती है जहां शहरी इलाकों की सीमा कृषि भूमि से मिलती है। अंततः इन सीमान्त क्षेत्रों में ठोस कृषि अपशिष्टों का भी उसी प्रकार निपटान किया जाता है जिस प्रकार शहरी अपशिष्टों का। जब कृषि कार्य बहुत बढ़ जाते हैं तो संश्लिष्ट पदार्थों की, जैसे पीड़कनाशी, पोषकों और नियंत्रण कर्मकों की अधिक मात्राएँ प्रयोग की जाती हैं। साथ ही, रासायनिक मृदा प्रदूषण तथा कार्बनिक अपशिष्टों की बढ़ती मात्राओं से कृषि क्षेत्रों में भूमि अत्यंत प्रदूषित हो जाती है।

14.5.3 आविषालु रसायनों द्वारा मृदा प्रदूषण

कृषि रसायन: उर्वरकों को मिलाने का उद्देश्य मृदा को फसलें उगाने के लिए समृद्ध बनाना होता है किन्तु उनमें उपस्थित अपद्रव्यों से मृदा संदूषित हो जाती है। यदि जल स्रोत औद्योगिक अपशिष्टों द्वारा संदूषित हों जिनमें संश्लिष्ट कार्बनिक रसायन हों तो ऐसे जल से सिंचाई करने से कृषि भूमि और उद्यान संदूषित हो जाते हैं। पिछले कुछ दशकों में शाकनाशियों, कीटनाशियों, कवकनाशियों, मृदा अनुकूलकों और धूमकों के उपयोग से कृषि भूमि, उद्यान भूमि और वनवर्धन भूमि में बहुत परिवर्तन हुए हैं। प्रयुक्त रसायन, मृदा और जल को प्रदूषित कर देते हैं।

धूमक और मृदा अनुकूलक अस्थाई होते हैं तथा मृदा में उपस्थित सूक्ष्मजीवों द्वारा उनका उपापचयन हो जाता है। उदाहरण के लिए, शाकनाशियों के रूप में प्रयुक्त पॉलिक्लोरो फीनॉक्सीऐसिल अम्ल आदि क्लोरीनित फीनॉल व्युत्पन्नों को जीवाणुओं के विशेष प्रभेदों द्वारा उपापचयन हो जाता है जो उनका पोषकों के रूप में उपयोग करने के लिए स्वयं को अनुकूलित कर लेते हैं। यह डाइनाइट्रो *-o-* क्रीसॉल और संबंधित यौगिकों के लिए भी सच है। जलमार्गों के वनस्पति जात की अपेक्षा मृदा जीवाणुक और कवकी वनस्पति जात की संख्या बहुत अधिक होती है भले ही जलमार्गों के वन्स्पति जात कार्बनिक द्रव्य से संदूषित रहते हैं। इसलिए जल में लंबी अवधि तक अपरिवर्तित रहने वाले रसायन, मृदा में सूक्ष्मजैविक गतिविधि द्वारा शीघ्र निम्नीकृत हो जाते हैं। उदाहरण के लिए, यदि मृदा को फ़ीनॉलों से पोषित किया जाए तो प्रकृति में पाए जाने वाले फीनॉलों में बढ़ने वाले जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होगी।

आदर्श रूप में केवल ऐसे रसायनों का उपयोग करना चाहिए जिनका सामान्य मृदा सूक्ष्मजीवों द्वारा निम्नीकरण होना प्रमाणित हो चुका हो। सीसा और पारद के यौगिक– पारद के यौगिक प्रायः कार्बनिक यौगिक होते हैं और आर्सेनियस अम्लों के लवण स्थायी संदूषकों के रूप में संचित हो जाते हैं तथा सीसा, पारद और आर्सेनिक पादप उत्पादों में प्रविष्ट हो जाते हैं। आजकल कृषि में पीड़कनाशियों के उत्पादन के लिए कम देर तक रहने वाले निम्नीकरणीय यौगिकों का संश्लेषण किया जाता है क्योंकि इससे पीड़कनाशियों के अवशिष्टों का स्थायित्व कम हो जाता है और साथ ही खाद्य पदार्थ और चारा फ़सलों में उनके निम्नीकरण उत्पाद कम हो जाते हैं। किन्तु इन रसायनों से बनने वाले सरल उत्पादों के बारे में बहुत कम ज्ञात है। कुछ मामलों में मृदा में नए आविषालु उत्पाद बन जाते हैं और आरंभिक आविषालु यौगिकों का पता नहीं चल पाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

जीवाणुक निम्नीकरण का प्रतिरोध करने वाले कार्बनिक पीड़कनाशियों में, जिनका कोई अक्रिय अन्त्य उत्पाद नहीं होता है, सबसे महत्वपूर्ण क्लोरीनित हाइड्रोकार्बन हैं, उदाहरणार्थ, डी. डी. टी., लिण्डेन, ऐल्ड्रिन और डाइऐल्ड्रिन। इन स्थायी पीड़कनाशियों के अवशिष्ट मृदा कणों पर बंधित या अवशोषित हो जाते हैं जो कार्बनिक यौगिकों द्वारा विलेपित अकार्बनिक खनिजों के बने होते हैं। ये रसायन इस प्रकार की मृदाओं में उगी जड़ वाली फ़सलों को संदूषित कर देते हैं।

उदाहरण के लिए, लिण्डेन से गाजर और चुकन्दर दूषित हो जाते हैं। जो रसायन फ़सलों की गुणवत्ता को प्रभावित नही करते हैं अथवा उपज को कम नही करते हैं, वे ध्यान में नही आते हैं किन्तु पादपों द्वारा इन प्रदूषकों का अवशोषण और समावेशन सामान्यतौर पर नहीं होता है। पांच वर्षों के बाद मृदा में नए लगभग 4-5% कीटनाशी शेष रह जाते हैं। कुछ निम्नीकरण उत्पाद, कीटों के लिए, स्वयं कीटनाशियों से भी अधिक आविषालु होते हैं जबकि अन्य पूर्णतया अनाविषी होते हैं।

उद्योग से उत्पन्न ठोस अवशिष्ट : औद्योगिक ठोस अपशिष्टों से प्राप्त निक्षालितक (leachate) से विलयन में विषैले रसायन उपस्थित होते हैं। ये मानव खाद्य श्रृंखला में अनेक जीवों द्वारा प्रकृति में संघनित्त हो जाते हैं। यह पाया गया है कि औद्योगिक ठोस अपशिष्टों का निपटान, आविषालु रसायनों द्वारा भूमि प्रदूषण का प्रमुख स्रोत होता है। उद्योगों द्वारा प्रयुक्त अपरिष्कृत पदार्थों का 50% अथवा इससे भी अधिक अंतत: अपशिष्ट के रूप में रह जाता है और लगभग 15% हानिकर अथवा आविषालु माना जा सकता है।

कुछ उदाहरणों में अपशिष्टों के कारण मृदा-प्रदूषण की गंभीर समस्या बन जाती है। ऐसा मृदा अथवा फ़सलों के विषाक्तन से अथवा भौमजल और पृष्ठ जल स्रोतों में अपशिष्टों के प्रवेश करने से होता है। रसायन उद्योगों के निकट कृषि-भूमि के प्रेक्षण से संकेत मिलता है कि रासायनिक कारखानों की धूम चितियों (smoke stacks) द्वारा उत्सर्जित पिच्छक (plume) से अवपात का खतरा रहता है। ऐसा मुख्यत: अकार्बनिक प्रदूषकों के लिए होता है।

रेडियोऐक्टिव पदार्थ : रेडियोऐक्टिव पदार्थ मृदा में जाकर एकत्रित हो जाते हैं। ये नाभिकीय विस्फोटकों से वायुमंडलीय अवपात द्वारा अथवा औद्योगिक या अनुसंधान संस्थानों द्वारा उत्पन्न द्रव अथवा ठोस रेडियोऐक्टिव अपशिष्टों से मुक्त होकर मृदा में पहुंचते हैं। नाभिकीय विखंडन द्वारा उत्पन्न दीर्घ अर्ध-आयु वाले दो महत्पूर्ण रेडियोन्यूक्लाइड ^{90}Sr (अर्ध-आयु 28 वर्ष) और ^{137}Cs (अर्ध-आयु 30 वर्ष) हैं। अपेक्षाकृत हाल के अवपात और नाभिकीय रिएक्टरों के विसर्जन में भी अनेक रेडियोन्यूक्लाइड होते हैं जो पारिस्थितिकी की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, उदाहरणार्थ ^{131}I, $^{140}Ba + {}^{140}La$, $^{106}Ru + {}^{106}Rh$, $^{144}Ce + {}^{144}Pr$, आदि। इन रेडियान्यूक्लाइडों से मुख्यत: गामा विकिरण प्राप्त होते हैं जो मृदा में संचित रेडियोऐक्टिव पदार्थों द्वारा उत्सर्जित होते हैं। ^{14}C का भी ध्यान रखना चाहिए। यह वायु में उपस्थित नाइट्रोजन से न्यूट्रॉन-प्रोटॉन प्रक्रमों द्वारा उत्पन्न होता है। उदाहरणार्थ यह हाइड्रोजन शस्त्र के विस्फोट के दौरान और कास्मिक विकिरण द्वारा प्राप्त होता है। यह पादपों के कार्बन उपापचय में भाग लेता है और इस प्रकार जानवरों और मृदा में प्रविष्ट हो जाता है। किन्तु उसकी मात्रा इतनी अधिक नहीं होती कि उसका कोई विपरीत प्रभाव पड़े।

मृदा में रेडियोक्टिव स्ट्रान्शियम की सान्द्रताएं वर्षा की मात्रा से संबंधित होती है क्योंकि यह तत्व मृदा में वर्षा द्वारा लाया जाता है। मृदा में ऊपरी कुछ इंचों में निक्षेपित ^{90}Sr स्थिरवैद्युत बलों द्वारा मज़बूती से बंधित रहता है। यदि मृदा का अपरदन हो जाए तो निक्षेपित रेडियोन्यूक्लाइड स्लिट (silt) और मृतिका द्वारा दूसरी ओर दूर ले जाए जाते हैं। स्ट्रान्शियम की अपेक्षा रेडियोऐक्टिव सीज़ियम मृदा द्वारा कम मजबूती से बंधित रहता है। किन्तु छत्रक और लाइकेन आदि कुछ पादपों में सीजियम एकत्रित होता है और इन पादपों को खाने वाले जानवरों में सीजियम की उच्च सान्द्रताएं पाई जाती हैं। उत्तरी गोलार्ध में अवपात द्वारा मृदा में निक्षेपित विखंडन उत्पादों से प्राप्त विकिरण का स्तर, मृदा में प्राकृतिक रेडियोऐक्टिव पदार्थों से प्राप्त विकिरण का 10-30% होता है। अनेक विशेषज्ञों का मानना है कि इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि विकिरण स्तर में इस वृद्धि का मृदा के प्राणिजात अथवा उनके परभक्षियों पर प्रभाव पड़ता है। किन्तु अधिक रेडियोऐक्टिव अवपात से मृदा संदूषण के स्तर में इतनी वृद्धि हो सकती है कि वह चिन्ता का विषय बन सकता है।

MAADHYAM IAS

बोध प्रश्न

10) मृदा प्रदूषण करने वाले घटक कौन-कौन से हैं?

....

....

11) जैव कर्मकों के उन समूहों के नाम बताइए जो मृदा को प्रदूषित कर सकते हैं और रोग पैदा कर सकते हैं।

....

....

12) अत्यधिक भूमि प्रदूषण के कौन-कौन से कारण हैं?

....

....

13) जीवाणु निम्नीकरण का प्रतिरोध करने वाले कार्बनिक पीड़कनाशियों के नाम बताइए।

....

....

14) लम्बी अर्ध-आयु वाले दो प्रमुख रेडियोन्यूक्लाइडों के नाम बताइए।

....

....

14.6 सारांश

पर्यावरण में मुक्त किए गए प्रदूषक उसके तीन घटकों अर्थात् वायु, जल और मृदा में अंर्तपरिवर्तित हो जाते हैं और अंततः जानवर और मनुष्य उनसे उद्भासित होते हैं। जानवरों और मनुष्यों के स्वास्थ्य पर प्रदूषकों के विपरीत प्रभाव, प्रदूषक की किस्म, उद्भासन अवधि और उनकी सान्द्रता पर निर्भर करते हैं। मानव स्वास्थ्य पर जल प्रदूषण का प्रभाव उसके सीधे अंतर्ग्रहण से अथवा निजी स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग और मनोरंजन के लिए उसके उपयोग पर निर्भर करता है। जल संबधी स्वास्थ्य संकट दो वर्गों में विभाजित किए जा सकते हैं अर्थात् जैव कर्मकों से होने वाले संकट और रासायनिक तथा रेडियोऐक्टिव प्रदूषकों से होने वाले संकट। अंतर्ग्रहण द्वारा संचरित प्रमुख जैव कर्मक हैं :- रोगजनक बैक्टीरिया, विषाणु (वाइरस) और परजीवी। इन कर्मकों से हैजा, आंत्रज्वर, संक्रामक यकृतशोथ, ऐमीबी लीवर विद्रधि आदि अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। भारी धातुएं, कार्बक्लोरीन यौगिक, बहुनाभिकीय ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बन, ऋणायनी अपमार्जक और रेडियोन्यूक्लाइड से उत्क्रमणीय और अनुत्क्रमणीय दोनों प्रकार की स्वास्थ्य हानि होती है। जानवरों और मनुष्यों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रदूषकों के प्रभाव पर जलवायु परिवर्तन की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

ग्रामीण और अर्धग्रामीण क्षेत्रों में जहां दुनियां की अधिकांश आबादी बसी है, रोग के जैव कर्मकों द्वारा भूमि का प्रदूषण संक्रमण का प्रमुख कारण है। कृषि और उद्योगों से निकलने वाले आविषालु रसायनों द्वारा भूमि प्रदूषण से मृदा, खाद्य पदार्थ और जल संदूषित हो जाते हैं जो दुनिया के अधिक औद्योगिक क्षेत्रों में स्वास्थ्य के लिए एक खतरा बन जाता है।

जैसे-जैसे दुनियां की आबादी और शहरीकरण में वृद्धि होती जाएगी, घरेलू और औद्योगिक ठोस अपशिष्टों की लगातार बढ़ रही मात्राओं के भूमि में ढेर लगने से उत्पन्न समस्या और अधिक हो जाएगी।

14.7 अंत में कुछ प्रश्न

1) जल संबंधी स्वास्थ्य खतरों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।
2) जलसंबंधी कीट रोगवाहकों द्वारा उत्पन्न स्वास्थ्य खतरों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
3) भारी धातुएं क्या होती हैं? इन धातुओं के आविषालु पहलुओं का उल्लेख कीजिए।
4) कार्बक्लोरीन यौगिक क्या होते हैं? स्वास्थ्य पर उनसे पड़ने वाले प्रभावों का उल्लेख कीजिए।
5) मृदा प्रदूषण द्वारा मनुष्यों और जानवरों में रोग उत्पन्न करने वाले जैव कर्मकों का वर्णन कीजिए।
6) आविषालु रसायनों द्वारा मृदा प्रदूषण तथा जानवरों और मानवों के स्वास्थ्य पर उनके प्रभावों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

14.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1) वायु, जल और मृदा
2) निम्नलिखित में से कोई पांच
   i) घरेलू प्रदूषक
   ii) प्रकृति में पाए जाने वाले पदार्थ
   iii) खाद्य योज्य
   iv) उत्तेजक
   v) औद्योगिक अपशिष्ट
   vi) पीड़कनाशी
   vii) औषध पदार्थ
   viii) रेडियोऐक्टिव अपशिष्ट
3) क) ii)
4) दो रोग मलेरिया और फाइलेरिया हैं।
5) शिशुओं में मेटहीमोग्लोबिनैमिया का कारण जल में नाइट्रेट की अधिक मात्रा का होना है।
6) i) पारद
   ii) कैडमियम
7) i) डी. डी. टी.
   ii) हेक्साक्लोरोबेन्ज़ीन
   iii) 2, 4, 5 - T
8) कारण हैं : i) जल की प्राप्य मात्रा में कमी और ii) जानवरों और मनुष्यों से प्रदूषण में सान्द्रता तथा अनुकूल अवस्थाओं के कारण रोगजनकों की वृद्धि।
9) पृष्ठीय जल में प्रदूषकों का घुलना, शौचालयों से अधिप्रवाह और उनका ढह जाना, जल की गुणता में कमी के कारण हैं।

MAADHYAM IAS

10) जिन घटकों के कारण मृदा प्रदूषण होता है वे इस प्रकार हैं:

i) उर्वरक और वृद्धि नियमन कर्मक,

ii) कोयला और खनिजों के खनन तथा धातुओं के प्रगलन से प्राप्त अपशिष्ट पदार्थ, और

iii) घरेलू कचरा तथा वाहितमल और औद्योगिक अपशिष्ट से प्राप्त ठोस पदार्थ।

11) मृदा को प्रदूषित कर रोग उत्पन्न करने वाले जैव कर्मक इस प्रकार हैं:

i) मनुष्यों द्वारा उत्सर्जित और मनुष्यों को संचारित रोगजनक जीब,

ii) मनुष्यों को संचारित जानवरों के रोगजनक जीव,

iii) मृदा में प्राकृतिक तौर पर पाए जाने वाले और मनुष्यों को संचारित रोगजनक जीव।

12) अत्यधिक मृदा प्रदूषण के कारण इस प्रकार हैं:

i) रासायनिक उर्वरकों के उपयोग के कारण पोषकों के स्थानांतरण के सामान्य चक्र का छोटा हो जाना।

ii) पादप और जन्तु अपशिष्ट का अनुचित निपटान।

iii) उपचार किए बिना शहरी ठोस अपशिष्ट का कृषि-भूमि में निपटान, और

iv) भूमि में संश्लिष्ट पदार्थों की अधिकाधिक मात्राओं का अनुप्रयोग।

13) जीवाणु निम्नीकरण का प्रतिरोध करने वाले कार्बनिक पीड़कनाशी इस प्रकार हैं:

i) डी. डी. टी. ii) लिण्डेन iii) ऐल्ड्रिन iv) डाईऐल्ड्रिन।

14) दीर्घ अर्ध-आयु वाले रेडियोन्यूक्लाइड इस प्रकार हैं :

^{90}Sr जिसकी अर्ध-आयु 28 वर्ष है और ^{137}Cs जिसकी अर्ध-आयु 30 वर्ष है।

अंत में कुछ प्रश्न

1) रोगजनक जीवाणु, विषाणु और परजीवी जल संबंधी स्वास्थ्य संकट के कारण हैं। रोगजनक जीवाणु अस्वस्थता और मृत्यु का मुख्य कारण हैं। जीवाणुयुक्त जल पीने से होने वाले प्रमुख रोग हैं : हैजा, टायफाइड (आंत्र ज्वर) दण्डाणु पेचिश, पैराटायफाइड ज्वर, जठरांत्र शोथ, शिशु प्रवाहिका, लैप्टोस्पाइरोसिस और टूलेरीमिया। संक्रामक यकृत रूग्णता, जल में विषाणुओं की उपस्थित के कारण होता है। ऐन्टअमीबा हिस्टोलिटिका एक परजीवी है जो आंत्र अमीबारूग्णता और अमीबी यकृत विद्रधि के लिए उत्तरदायी है। गिनिकृमि परजीव के कारण ड्राकोनटीएसिस हो जाता है। संदूषित जल द्वारा आंत्र कृमि भी मानव शरीर में प्रविष्ट कर जाते हैं। पेय जल द्वारा कभी-कभी डिसटोमेटोसिस और हाइडेटिड रोग भी हो जाते हैं।

2) मलेरिया सर्वत्र व्याप्त रोग है जो ऐनोफेलीज मच्छर से जल-संबंधित कीट रोगवाहक के द्वारा होता है। ऑन्कोसर्कता अथवा नदी अंधता, कृष्णमक्षी के कारण होती है। इसी प्रकार के अन्य रोगों में पीत ज्वर जो जल प्रजनन मच्छरों द्वारा संचारित होता है, ट्रिपैनोसोमता (निद्रालु व्याधि) और फाइलेरियता है। फाइलेरियता को फैलाने में क्यूलेक्स पिपिएन्स फैटीगाना प्रमुख रोगवाहक है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

3) भारी धातुओं में वे सब धातुएं आती हैं जिनका परमाणु क्रमांक 23 से अधिक और विशिष्ट गुरूत्व 5 से अधिक होता है। हाल में इन धातुओं की ओर विशेष ध्यान आकर्षित हुआ है क्योंकि वे गैर-निम्नीकरणीय, प्रकृति में लंबी अवधि तक स्थायी रहने वाली और अल्प सान्द्रताओं में भी जीवित प्राणियों के लिए आविषालु होती हैं। ये पादप

या जन्तु शरीर में संचित हो जाती हैं और इनका जैवत: आवर्धन भी होता है।

4) जल प्रदूषण द्वारा क्षति करने वाले कार्बक्लोरीन यौगिक इस प्रकार है : डी. डी. टी., ऐल्ड्रिन, एन्डोसल्फैन, क्लोरीनित फॉनॉक्सी एसीटिक अम्ल, हैक्साक्लोरोबेन्ज़ीन, पेन्टाक्लोरोफीनॉल, क्लोरीनित नैफ़्थेलीन और बाइफ़ेनिल यौगिक । ये यौगिक कृषि-भूमि और औद्योगिक विसर्जन से वाह जल द्वारा जल निकायों में प्रविष्ट कर जाते हैं। कुछ कार्बक्लोरीन यौगिकों का जैवरासायनिक सरलीकरण मंद गति से होता है और वे चिरकारी स्वास्थ्य प्रभाव पैदा कर देते हैं। जल और मृदा में मुक्त यौगिकों का अधिक अथवा कम आविषालु प्रभाव होता है।

5) मृदा को प्रदूषित कर मनुष्यों और जानवरों में रोग पैदा करने वाले कर्मक इस प्रकार हैं:

   i) मनुष्य द्वारा उत्सर्जित और मनुष्य को संचारित रोगजनक जीव- यह संचारण संदूषित मृदा के साथ सीधे संपर्क द्वारा अथवा संदूषित मृदा में उगे फलों अथवा सब्जियों को खाने से होता है।

   ii) जानवरों के रोगजनक जीव जो मनुष्य को संचारित हो जाते हैं। यह संचारण संक्रमित जानवरों के अपशिष्ट द्वारा संदूषित मृदा के सीधे संपर्क में आने से होता है।

   iii) प्रकृति में पाए जाने वाले रोगजनक जीव जो संदूषित मृदा के साथ संपर्क द्वारा मनुष्य को संचारित होते हैं। आंत्र जीवाणु, प्रोटोजोआ, परजीवी कृमियों तथा आंत्र कीटों के लार्वा प्रमुख कारक हैं। जैव कर्मकों द्वारा होने वाले रोग लेप्टोस्पाइरोसिज्स, ऐंथ्रेक्स, Q – ज्वर, त्वक् प्रवासी डिम्भक, माइकोसिस, टिटेन्स, और बाटुलिज़म हैं।

6) विभिन्न कार्यों के लिए मृदा में शाकनाशी, कीटनाशी, कवकनाशी, मृदा अनुकूलक, धूमक और उर्वरक मिलाए जाते हैं। ये यौगिक मृदा में उपस्थित सूक्ष्मजीवों द्वारा उपापचयित हो जाते हैं और मृदा तथा भौमजल को संदूषित करते हैं। नाइट्रोजनी उर्वरकों के अत्यधिक अनुप्रयोग से भूमि में भौमजल में नाइट्रेट का स्तर बढ़ जाता है और फलस्वरूप ऐसे जल का उपयोग करने वाले शिशुओं में मेटहोमोग्लोबिनैमिया में वृद्धि हो जाती है। सीसा और पारद के यौगिक (पारद के यौगिक प्राय: कार्बनिक यौगिक होते हैं) और आर्सेनिअस अम्लों के लवण स्थायी मृदा संदूषकों के रूप में एकत्रित हो जाते हैं तथा पादप उत्पादों में सीसा, पारद और आर्सेनिक प्रविष्ट कर जाते हैं।

14.9 अध्ययन के लिए अन्य पुस्तकें

MAADHYAM IAS

1) Francis K.V. Leh and Richard K.C. Lal; Environment Pollutions, "Sources, Health Effects, Monitoring and Contral". Charles C. Thomas Publisher Springfield, Illinois, USA, 1974.

2) Health Hazards of the Human Environment, World Health Organisation, Geneva, 1972.

3) R. Feachem, E. Burns, D. Curtis, S. Cairncross, M.K. Khan, A. Cronin, D. Lamb, P. Cross and H. Southall; Water Health and Development-An Interdisciplinary Evaluation; Tri--med Bool (s Limited, London, 1977.

4) H.F. Ludwig, D.W. Evans; W.I. Brokelm and B.N. Lohani; Manual of environmental Technology in Developing Countries; South Asian Publishers Pvt. Ltd. New Delhi, 1991.

5) R. Feachem, M. Mc Garry and D. Mara; Water, Wastes and Health in Hot Climates; John Wiley and Sons, London, 1977.

शब्दावली

अम्लता: जलीय विलयनों की हाइड्रॉक्सिल आयनों के साथ अभिक्रिया करने की मात्रात्मक क्षमता। इसे किसी क्षारक के मानक विलयन के साथ निश्चित अन्त्य बिन्दु तक अनुमापन द्वारा मापा जाता है। इसे प्राय: कैल्सियम कार्बोनेट के $mg\,L^{-1}$ में व्यक्त किया जाता है।

सक्रियित कार्बन: भाप अथवा कार्बन डाइऑक्साइड के साथ उच्च ताप पर गर्म करने से प्राप्त 'सक्रियित' कार्बन जिसमें आंतरिक सरन्ध्र कण संरचना प्राप्त होती है।

अधिशोषण: गैस अथवा द्रव अणुओं की अत्यंत पतली पर्त का उन ठोसों (जैसे कणिक सक्रियित कार्बन) अथवा द्रवों के पृष्ठों पर आसंजन जिनके वे संपर्क में रहते हैं।

वातन: किसी द्रव को वायु के साथ पारगमन (permeate) अथवा संतृप्त करना।

क्षारीयता: कार्बोनेटों, बाइकर्बोनेटों, हाइड्रॉक्साइडों और कभी बोरेटों, सिलिकेटों और फ़ॉस्फ़ेटों के कारण जल की अम्लों को उदासीन करने की क्षमता। इसे तुल्य कैल्सियम कार्बोनेट के $mg\,L^{-1}$ में व्यक्त किया जाता है।

अवायवीय अपशिष्ट उपचार: वायु अथवा तात्विक ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में सूक्ष्मजीवों की क्रिया द्वारा उत्पन्न अपशिष्टों का स्थिरीकरण। यह सामान्यतया मेथैन किण्वन द्वारा अपशिष्ट उपचार को व्यक्त करता है।

जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता (बी. ओ. डी.): अपशिष्ट जल में कार्बनिक अपद्रव्यों की सान्द्रता की माप। वायवीय अवस्थाओं में कार्बनिक पदार्थ का स्थिरीकरण करते समय बैक्टीरिया द्वारा आवश्यक ऑक्सीजन की मात्रा। यह $mg\,L^{-1}$ में व्यक्त की जाती है जो अपशिष्ट जल में जैव भोजन के रूप में प्रयुक्त पदार्थ की उपलब्धता तथा ऑक्सीकरण के समय सूक्ष्मजीवों द्वारा प्रयुक्त ऑक्सीजन की मात्रा पर निर्भर करती है।

जैव ऑक्सीकरण: यह प्रक्रम जिसमें जीव ऑक्सीजन की उपस्थिति में अपशिष्ट जल में विद्यमान कार्बनिक पदार्थ को अधिक स्थाई अथवा खनिज रूप में परिवर्तित कर देता है।

रासायनिक स्कंदक (Chemical coagulant): फिटकरी आदि ऊर्णकारी (floc forming) रासायनिक पदार्थ को मिलाने से कोलॉइडी और सूक्ष्म विभाजित निलंबित पदार्थों का विस्थिरीकरण और प्रारंभिक समुच्चयन।

रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता (सी. ओ. डी.): जल अथवा अपशिष्ट जल में विद्यमान अकार्बनिक अथवा कार्बनिक द्रव्य की ऑक्सीजन-उपभोग की माप जिसे किसी परीक्षण में रासायनिक ऑक्सीकारक द्वारा उपभुक्त ऑक्सीजन की मात्रा में व्यक्त किया जाता है। यह स्थायी और अस्थायी कार्बनिक पदार्थ में भेद नहीं करता है और जैव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता के साथ संबध स्थापित नहीं करता है।

क्लोरीनन: जल अथवा अपशिष्ट जल में क्लोरीन का अनुप्रयोग जिसे सामान्यता विसंक्रमण के लिए और बहुधा जैव और रासायनिक परिणामों को प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

स्वच्छन(Clarification): किसी द्रव में निलंबित द्रव्य की सान्द्रता कम करने के लिए प्रयुक्त प्रक्रम अथवा प्रक्रम संयोजन।

स्कंदन(Coagulation): एक प्रक्रम जिसमें जलीय तंत्र में रासायनिक पदार्थ (coagulant, स्कंदक) मिलाए जाते हैं जिनके द्वारा मंद अथवा नगण्य निसाद वेग वाले सूक्ष्म-विभाजित परिक्षिप्त द्रव्य को शीघ्र नि:सादी समुच्चयों में परिवर्तित किया जाता है। इसमें जो बल परिक्षिप्त कणों को एक-दूसरे से प्रतिकर्षित करते हैं, उन्हें स्कंदकों द्वारा निष्प्रभावित कर दिया जाता है।

कोलॉइडी पदार्थ: 1 mμ से 0.5 mμ के बहुत छोटे कणों का परिक्षेपण जिनका नि:सादन नहीं हो सकता है। उन्हें स्कंदन, जैव रासायनिक क्रिया अथवा झिल्ली निस्यंदन द्वारा पृथक किया जाता है।

अवचूर्णन (Commution): अवशिष्ट जल प्रवाह में विद्यमान ठोसों के काटने और छानने का प्रक्रम जिसे उपचार संयंत्र में पंप अथवा अन्य यूनिटों में प्रवेश करने से पहले किया जाता है।

संयुक्त अपशिष्ट जल प्रतिदश (Composite waste water sample): किसी प्रतिदर्श की परिवर्तनशीलता के प्रभाव को कम करने के लिए निश्चित अंतरालों (सामान्यतया एक-एक घंटे बाद अथवा अन्य निश्चित अवधि) में जल अथवा अपशिष्ट जल के अलग-अलग प्रतिदर्शों का संयुक्त प्रतिदर्श। अलग-अलग प्रतिदर्शों के समान आयतन हो सकते हैं अथवा प्रतिदर्श लेते समय प्रवाह के लगभग समानुपाती आयतन हो सकते हैं।

अवरोध अवधि (Detention time): विसर्जन से पहले बेसिन अथवा टंकी में द्रव को रखने करने की अवधि।

वैद्युत चालकता: प्रतिरोध का (ओम में) व्युत्क्रम जिसे निश्चित ताप पर जलीय विलयन के सेन्टीमीटर के सम्मुख फल (faces) के बीच मापा जाता है। उसे 25°C माइक्रोओम अथवा माइक्रोसीमेंस प्रति सेन्टीमीटर में व्यक्त किया जाता है।

वसा (Fat): वसा अम्लों के ट्राइग्लिसराइड एस्टर जिन्हें गलती से ग्रीस का पर्याय माना जाता है।

ऊर्ण (Floc): सूक्ष्म-विभाजित अथवा कोलॉइडी कणों के समूह जो विशेष रासायनिक, भौतिक अथवा जैव प्रचालनों से प्राप्त होते हैं।

ग्रीस: अपशिष्ट जल में विद्यमान पदार्थों का वर्ग जिसमें वसा, मुक्त वसा अम्ल, कैल्सियम और मैग्नीशियम साबुन, खनिज और कुछ अन्य वसा-रहित खनिज होते हैं। परिणाम व्यक्त करते समय विलायक के प्रकार और निष्कर्षण के लिए प्रयुक्त विधि का भी उल्लेख करना चाहिए।

ग्रीस मथित्र (Grease skimmer): टंकी में अपशिष्ट की सतह से तैरते ग्रीस अथवा मलफेन को पृथक करने की युक्ति।

ग्रिट कक्ष (Grit chamber): अवरोध कक्ष अथवा मल प्रणाल का बड़ा रूप जिसे प्रवाह के वेग को कम करने के लिए बनाया जाता है ताकि विभेदी अवसादन द्वारा कार्बनिक ठोसों से खनिज पृथक हो जाएं।

कठोरता (Hardness): कैल्सियम, मैग्नीशियम और लोहे के लवणों (जैसे बाइकार्बोनेट, कार्बोनेट, सल्फेट, क्लोराइड और नाइट्रेट) द्वारा उत्पन्न जल के अभिलक्षण जिनके कारण साबुन के अवक्षेप बन जाते हैं, क्वथित्रों में पपड़ी जमा हो जाती है, कुछ औद्योगिक प्रक्रमों को क्षति पहुंचती है और कभी-कभी आपत्तिजनक स्वाद उत्पन्न होता है। इसे प्रयोगशाला में मानक प्रक्रिया द्वारा निर्धारित किया जाता है अथवा कैल्सियम, मैग्नीशियम, लोहा, ऐलुमिनियम की मात्राओं के रूप में परिकलित किया जाता है और कैल्सियम कार्बोनेट के मिलीग्रामों में व्यक्त किया जाता है।

MAADHYAM IAS

हाइड्रॉलिक भारण (Hydraulic loading): किसी स्तंभ अथवा निश्चित संस्तर से गुजरने वाले प्रवाह की मात्रा। इसे प्रति इकाई समय प्रति इकाई क्षेत्रफल, आयतन के मात्रकों (अर्थात् m^3/m^2s) में व्यक्त किया जाता है।

औद्योगिक अपशिष्ट (Industrial wastes): औद्योगिक प्रक्रमों से प्राप्त द्रव अपशिष्ट। यह घरेलू अथवा सैनेटरी अपशिष्टों से भिन्न होता है।

अंतःस्यंदन (Infiltration): भौमजल जो दरारों, जोड़ो (संधियों) अथवा विच्छेदों द्वारा पाइपों, प्रणालों अथवा कक्षों में रिस जाता है।

बहिःस्राव (Influent): अपशिष्ट जल अथवा अपरिष्कृत अथवा अंशतः उपचारित अन्य द्रव जो जलाशय, बेसिन, उपचार प्रक्रम अथवा उपचार संयंत्र में प्रवाहित होते हैं।

अकार्बनिक द्रव्य: खनिजों से उत्पन्न रासायनिक पदार्थ। इनकी जन्तु अथवा वनस्पति मूल की कार्बन संरचना नहीं होती है।

आयन: परमाणु अथवा परमाण समूह जिनमें असंतुलित स्थिर वैद्युत आवेश होता है।

तालाब (Pond): i) उथला जल निकाय जैसे लैगून अथवा सरोवर अथवा ii) ताल जिसमें अपरिष्कृत अथवा अंशतः उपचारित अपशिष्ट जल होता है जिसमें वायवीय अथवा अवायवीय स्थायीकरण होता है।

मेथिल आरेन्ज क्षारीयता: जलीय निलंबन अथवा विलयन की कुल क्षारीयता की माप जिसका निर्धारण, जल का pH 4.3 प्राप्त करने के लिए आवश्यक सल्फ्यूरिक अम्ल की मात्रा द्वारा किया जाता है (जैसा कि मेथिल आरेन्ज के रंग परवर्तन द्वारा ज्ञात होता है)। इसे $CaCO_3$ के $mg\ L^{-1}$ में व्यक्त किया जाता है।

सूक्ष्म छानन (Microscreening): पृष्ठीय निस्यंदन जिसमें एक घूमते ड्रम की बाहरी परिधि पर स्थिति विशेष रूप से बुने तार का उपयोग किया जाता है।

मॉनीटरन (Monitoring): i) जल अथवा अपशिष्ट जल की गुणता की माप करना, और ii) रेडियोऐक्टिव संदूषण का स्थान निर्धारण या मापन जिसे ऐसे सर्वे यंत्रों के द्वारा किया जाता है जो मात्रा दर, आयननकारी विकिरणों के रूप में पहचान और माप कर सकते हैं।

प्रायिकतम संख्या (Most Probable Number, MPN): प्रति इकाई आयतन में विद्यमान जीवों की संख्या जिससे सांख्यिकीय सिद्धांत के अनुसार प्रेक्षित परीक्षण परिणाम प्राप्त होने में किसी अन्य संख्या की अपेक्षा अधिक संभावना रहती है। इसे प्रति 100 mL जीवों के घनत्व के रूप में व्यक्त किया जाता है। परिणाम, कोलीफॉर्म जीवों के धनात्मक परिणामों की संख्या से परिकलित किए जाते हैं।

नगरपालिका वाहित मल: घरेलू वाहित मल और व्यापारिक अपशिष्ट का मिश्रण।

उदासीनीकरण: अम्ल अथवा क्षार की विपरीत अभिकर्मक के साथ अभिक्रिया ताकि विलयन में हाइड्रोजन और हाइड्रॉक्सिल आयनों की सान्द्रता लगभग समान हो जाए।

अनिःसादी ठोस: निलंबित द्रव्य जो एक घंटे में न तो नीचे बैठता है और न ऊपर तैरता है।

कार्बनिक द्रव्य: जन्तु अथवा वनस्पति मूल के रासायनिक पदार्थ जिनकी मूलतः कार्बन संरचना होती है। ये यौगिक हाइड्रोकार्बन अथवा उनके व्युत्पन्न होते हैं।

कार्बनिक नाइट्रोजन: कार्बनिक अणुओं में संयुक्त नाइट्रोजन जैसे प्रोटीन, ऐमीन और ऐमीनो अम्ल।

अतिप्रवाह दर: उपचार संयंत्रों में निःसादी टंकियां बनाते समय ध्यान में रखने योग्य एक कारक। इसे निःसादी टंकी में गैलन घन मीटर प्रतिदिन प्रति वर्ग फुट ($m^3/m^2\ d$) पृष्ठ क्षेत्रफल में व्यक्त किया जाता है।

ऑक्सीकरण: किसी यौगिक में ऑक्सीजन का संयुक्त होना। दूसरे शब्दों में, वह अभिक्रिया जिसमें किसी परमाणु से इलेक्ट्रॉनों की हानि होती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

ऑक्सीकरण तालाब अथवा लैगून: अंतिम निपटान से पहले अपशिष्ट जल रखने के लिए प्रयुक्त बेसिन जिसमें कार्बनिक पदार्थों का वायु से, जल में ऑक्सीजन के प्राकृतिक अथवा कृत्रिम त्वरित स्थानांतरण द्वारा जैव ऑक्सीकरण किया जाता है।

रोगजनक जीव: वे जीव जो परजीवी वृद्धि द्वारा आतिथेय जीवों में रोग उत्पन्न करते हैं। इनका सूक्ष्म आकार होता है और इनके उदाहरण हैं- जीवाणु और विषाणु।

पी. एच.: हाइड्रोजन आयन सांद्रता के लघुगणक का व्युत्क्रम सान्द्रता, हाइड्रोजन आयनों का भार होता है जिसे विलयन के $gm\ L^{-1}$ में व्यक्त किया जाता है। उदाहरण के लिए, उदासीन जल का pH मान 7 होता है और हाइड्रोजन आयन सान्द्रता 10^{-7} होती है।

फ़ीनॉलफ़्थैलीन क्षारीयता: जलीय निलंबन में हाइड्रॉक्साइडों और सामान्य कार्बोनेटों के आधे के योग की माप। इसे जल का pH मान 8.3 प्राप्त करने के लिए आवश्यक सल्फ़्यूरिक अम्ल की मात्रा द्वारा मापा जाता है। इसका संकेत फीनॉलफ़्थेलिन के रंग में परिवर्तन से मिलता है और इसे कैल्सियम कार्बोनेट के $mg\ L^{-1}$ में व्यक्त किया जाता है।

भौतिक रासायनिक उपचार संयंत्र: उपचार अनुक्रम जिसमें भौतिक और रासायनिक प्रक्रमों का उपयोग किया जाता है तथा जैव प्रक्रमों को स्पष्टतया प्रयोग नहीं किया जाता है।

पॉलिइलेक्ट्रोलाइट: रासायनिक पदार्थ जिनके अणुओं का उच्च अणुभार होता है। इनकी लंबी श्रृंखला में अभिक्रियाशील समूह होते हैं। पॉलिइलेक्ट्रोलाइट अपशिष्ट में विद्यमान सूक्ष्म कणों के साथ क्रिया करके उन्हें एक दूसरे के समीप लाते हैं जिससे बड़े और उच्च संहति वाले कण प्राप्त होते हैं जो नि:सादित हो जाते हैं।

पश्च-क्लोरीनन: संयंत्र उपचार के बाद अंतिम उपचारित अपशिष्ट जल अथवा बहि:स्राव के साथ क्लोरीन का अनुप्रयोग करना।

पूर्व-क्लोरीनन: संयंत्र के शीर्षतंत्र में क्लोरीन प्रयुक्त करना। संयंत्र उपचार से पहले प्रभावी क्लोरीनन।

प्राथमिक नि:सादी टंकी: उपचार संयंत्र में अपशिष्ट जल से नि:सादी ठोसों को पृथक करने के लिए प्रयुक्त पहली टंकी।

प्राथमिक उपचार: i) अपशिष्ट जल उपचार संयंत्र में पहला मुख्य उपचार जो सामान्यतया अवसादन होता है। ii) निलंबित ठोसों की पर्याप्त मात्रा का पृथक्करण जिसमें कोलॉइडी अथवा घुले द्रव्य पृथक नहीं होते हैं या न के बराबर पृथक होते हैं।

वाहित मल: द्रवीय घरेलू अपशिष्टों का मिश्रण जिसमें मल और मूत्र भी शामिल होते हैं।

अपरिष्कृत आपंक: अपघटन आरंभ होने से पहले अवसादन टंकियों से शीघ्र निष्कासित नि:सादित आपंक। इसे अपाचित आपंक भी कहते हैं।

पुन:संचरण दर: उपचार प्रक्रम से वहि:स्राव के एक भाग का अंदर प्रविष्टि होने वाले प्रवाह में वापसी की दर।

MAADHYAM IAS

अवशिष्ट क्लोरीन: विशिष्ट संपर्क अवधि के अंत में जल अथवा अवशिष्ट जल में शेष क्लोरीन जो संयुक्त अथवा मुक्त रूप में हो सकती है।

लवणता: i) किसी जल में लवणों जैसे सोडियम क्लोराइड की आपेक्षिक सान्द्रता जिसे क्लोराइड के $mg\ L^{-1}$ में व्यक्त किया जाता है या ii) जल में घुले खनिज पदार्थों की सान्द्रता की मात्रा की माप।

सैनेटरी सीवर: सीवर जिसमें घरों, व्यापारिक भवनों, औद्योगिक संयंत्रों और संस्थानों से द्रव और जल युक्त मानव जनित अपशिष्ट वाहित होते हैं। साथ ही, उनमें तूफानी, पृष्ठीय और

भौमजल की भी अल्प मात्राएं होती हैं जिन्हें जान बूझकर प्रविष्ट नहीं किया जाता है। सेनैटरी सीवरों में औद्योगिक अपशिष्ट जल की अधिक मात्राएं प्रवाहित नहीं होती हैं।

चालनी: i) एक युक्ति जिसमें प्रायः एक सामान आकार के छिद्र होते हैं। इसका उपयोग बहते जल अथवा अवशिष्ट जल में निलंबित अथवा तैरते ठोसों को धारण करने अथवा पृथक करने अथवा किसी अंतर्ग्रहण में या किसी वाहिका में प्रवेश को रोकने के लिए किया जाता है। चालनी सामान्तर शलाकाओं, छड़ों, तारों, ग्रेटिंग, तार जाली अथवा सरंध्र प्लेट की बनी होती हैं। छिद्र किसी भी आकार के हो सकते हैं यद्यपि वे प्रायः गोलाकार अथवा आयताकार होते हैं। **ii)** बालू, संदलित शैल और मृदा आदि कणिक पदार्थ को विभिन्न आकारों में पृथक करने की युक्ति।

द्वितीयक निःसादी टंकी: टंकी जिसमें से किसी पूर्व उपचार प्रक्रम से प्राप्त बहिःस्राव के निःसादित ठोसों को अलग करने के लिए प्रवाहित किया जाता है।

द्वितीयक अपशिष्ट जल उपचार: अवसादन द्वारा प्राथमिक उपचार के बाद जैव विधियों द्वारा अपशिष्ट जल का उपचार।

अवसादन: जल, अपशिष्ट जल अथवा अन्य द्रवों में विद्यमान निलंबित द्रव्य का गुरूत्व द्वारा अवतलन और निक्षेपण। इसके लिए द्रव का वेग उस वेग से कम किया जाता है जिसके कारण वह निलंबित पदार्थ का परिवहन करता है। इसे निःसादन भी कहते हैं।

स्वतः शोधन: सरिता अथवा अन्य जल निकाय में होने वाला प्राकृतिक प्रक्रम जिससे बैक्टीरिया में कमी, बी. ओ. डी. की पूर्ति, कार्बनिक अवयवों का स्थायीकरण, क्षीण घुली ऑक्सीजन का प्रतिस्थापन तथा सरिता जीवजात को सामान्य रूप में लाना शामिल होता है।

निःसादी ठोस: अवशिष्ट जल में उपस्थित ठोस द्रव्य जो पूर्व निर्धारित निःसादन अवधि (जैसे एक घंटा) में निलंबित नहीं रहता है बल्कि या तो नीचे बैठ जाता है और या ऊपर तैरने लगता है।

मंथन टंकी: टंकी जिसे इस प्रकार बनाया जाता है कि तैरने वाला द्रव्य जो ऊपर उठकर तब तक अपशिष्ट जल के पृष्ठ पर रहेगा जब तक पृथक न किया जाए जबकि द्रव लगातार कुछ दीवारों अथवा मलफेन बाधिकाओं के नीचे से विसरित होता रहता है।

निर्मोचन: निस्यंदक माध्यम से प्रक्षालित च्यावन निस्यंदन आपंक। उनका बी. ओ. डी. बहुत अधिक होता है और उन्हें पृथक न करने पर बहिःस्राव की गुणता कम हो जाती है।

अनुमापन: विलयन के ज्ञात आयतन में उपस्थित घटक का निर्धारण करना। इसमें ज्ञात सान्द्रता के विलयन की ज्ञात मात्रा मिलाकर अभिक्रिया पूरी की जाती है जिसका संकेत अंत्य बिन्दु से मिलता है।

कुल ठोस: जल अथवा अवशिष्ट जल में घुले और बिना घुले घटकों का योग जिसे $mg\ L^{-1}$ में व्यक्त किया जाता है।

आविलतामापी: आविलता मापने का यंत्र जिसमें संदर्भ के लिए सामान्यतया मानक निलंबन का उपयोग किया जाता है।

MAADHYAM IAS

आविलता: निलंबित पदार्थ की उपस्थिति के कारण जल अथवा अवशिष्ट जल में उत्पन्न अवस्था जिससे प्रकाश किरणों का प्रकीर्णन और अवशोषण होता है। यह द्रवों में सूक्ष्म निलंबित पदार्थ की माप होता है। वैश्लेषिक मात्रा जो जैक्सन आविलता मात्रकों (जे. टी. यू.) या नेफेलोमितीय आविलता मात्रकों (एन. टी. यू.) में व्यक्त की जाती है।

इकाई 15 प्रतिचयन तकनीकें और परिरक्षण

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
15.2 प्रतिचयन का सिद्धांत
15.3 नमूनों का संग्रहण
गैस
द्रव
ठोस
सावधानियाँ
15.4 पात्र
15.5 जल-नमूनों का संग्रहण और परिरक्षण
जल-नमूनों का संग्रहण
जल-नमूनों का परिरक्षण
15.7 मृदा का प्रतिचयन
15.8 सारांश
15.9 अंत में कुछ प्रश्न
15.10 उत्तर

15.1 प्रस्तावना

प्रतिचयन (sampling) की प्रथा आधुनिक नहीं है। इसका प्रयोग प्राचीन काल से ही होता आया है। गुफा में रहने वाला मानव प्रतिचयन प्रक्रिया का उपयोग ऐसे पत्थरों के चयन के लिए करता था जिनसे वह अस्त्र बना सके। आज किसी नई दुकान से खाद्य पदार्थ, जैसे मिठाई, खरीदने वाला सामान्य व्यक्ति खरीदने से पहले थोड़ा चख लेता है। मोटे तौर पर यह प्रतिचयन प्रक्रिया है क्योंकि वह मान लेता है कि शेष खाद्य पदार्थ (मिठाई) का स्वाद भी वैसा ही होगा जैसा उसने चखा था। सांख्यिकीय विधियों के आरंभ होने से प्रतिचयन प्रक्रिया में बहुत प्रगति हुई है और अब इसे सही प्रकार से नियंत्रित प्रक्रिया माना जा सकता है। प्रतिचयन प्रक्रिया में पदार्थ के एक छोटे से हिस्से को पूरे ढेर के निरूपक के रूप में लिया जाता है। इसमें क्रमशः दलन, पेषण, उपविभाजन आदि अनेक प्रक्रियाएं हो सकती हैं। संग्रहित नमूना, परिवहन और प्रयोगशाला परीक्षण के लिए सुविधाजनक होना चाहिए। इस इकाई का अभिप्राय छात्र को पर्याप्त सूचना देना है ताकि वह प्रयोगशाला में दिए जाने वाले नमूने के महत्व और उसकी सार्थकता को समझ सके।

MAADHYAM IAS

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप,

- प्रयोगशाला में दिए जाने वाले छोटे नमूनों के महत्व और उनकी सार्थकता को समझ सकेंगे,
- गैस, द्रव और ठोस पदार्थों की प्रतिचयन प्रक्रिया की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे,
- नमूनों के समुचित परिवहन और संग्रहण की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे, और
- जल और मृदा के नमूनों की प्रतिचयन प्रक्रिया को समझ सकेंगे।

15.2 प्रतिचयन का सिद्धांत

नमूना, किसी पदार्थ के ढेर से लिया गया एक भाग होता है जिसमें उस ढेर पदार्थ के सभी अभिलक्षण होते हैं। किसी आदर्श नमूने में उस ढेर पदार्थ के सभी मात्रा स्वतंत्र गुणधर्म विद्यमान होंगे जिससे उसे लिया गया है। इस प्रकार पूर्णतया मिश्रित द्रव के टैंकर से ली गई एक बूंद भी नमूना हो सकती है। यदि नमूने के गुणधर्म परीक्षण की सीमाओं के अंदर ढेर पदार्थ के गुणधर्मों के समान हों तो नमूने को संतोषजनक मान सकते हैं।

प्रतिचयन प्रक्रिया में कुछ महत्वपूर्ण कारक हैं जिनका ध्यान रखना होता है। सबसे पहले नमूने के स्वरूप, उसकी भौतिक अवस्था- गैस, द्रव अथवा ठोस - का ध्यान रखना चाहिए। उसकी आविषालुता, यदि हो, का भी ध्यान रखना चाहिए।

परीक्षण की लागत, प्रतिचयन की लागत और उत्पाद की कीमत की तुलना करनी चाहिए। यह बताना आवश्यक है कि सस्ते पदार्थ के नमूनों पर महंगे परीक्षण नहीं करने चाहिए।

प्रतिचयन प्रक्रिया के चयन पर दोषपूर्ण वस्तुओं की संख्या का प्रभाव भी पड़ेगा। उदाहरण के लिए कण-आमाप के आधार पर पदार्थ के हिस्सों का चयन करने से गंभीर त्रुटि हो सकती है। स्थूल कणों का संघटन, सूक्ष्म कणों के संघटन से भिन्न हो सकता है।

प्रतिचयन के मनोविज्ञान पर धीरे-धीरे परिवर्तन हो रहा है। इस परिवर्तन के लिए उत्तरदायी मुख्य कारक, अनेक उद्योगों द्वारा गुणता नियंत्रण अपनाना है। इस संबंध में सांख्यिकीय विधियों का अनुप्रयोग बहुत महत्वपूर्ण है। यह माना जाता है कि जिस गुणधर्म का अन्वेषण किया जा रहा है समष्टि में समान रूप से वितरित है। परिशुद्धता आदि परिकलित करने के लिए अनेक सांख्यिकीय सूत्रों का उपयोग किया जा सकता है किन्तु सांख्यिकीय परिकलनों की चर्चा इस अध्याय के विषय-क्षेत्र से बाहर है। सांख्यिकी की ऐसी अनेक पुस्तकें उपलब्ध हैं जिनमें विषय की चर्चा हमारे आधुनिक ज्ञान की सीमाओं के अंतर्गत की गई हैं।

बोध प्रश्न

1) प्रतिचयन प्रक्रिया में सर्वाधिक महत्व के तीन प्रमुख कारकों के नाम बताइए।

   i) ....

   ii) ....

   iii) ....

15.3 नमूनों का संग्रहण

MAADHYAM IAS

संपूर्ण प्रतिचयन प्रक्रिया को तीन चरणों में विभाजित किया जा सकता है :

i) सकल नमूने का संग्रहण,

ii) प्रयोगशाला के लिए सकल नमूने का उपयुक्त आमाप में परिवर्तन,

iii) प्रयोगशाला नमूना तैयार करना।

नमूने के घटते आमाप के साथ पेषण, मिश्रण, चूर्णन आदि विधियों द्वारा उसके कणों के आमाप में भी ह्रास होना चाहिए। प्रयोगशाला नमूना तैयार करने के लिए उपयुक्त रूप में संवेष्टन की आवश्यकता होती है ताकि परिवर्तनों से संघटन की रक्षा हो सके।

अब विभिन्न प्रकार के पदार्थों के नमूनों के संग्रहण के लिए प्रयुक्त कुछ सामान्य विधियों का वर्णन किया जाएगा जो भौतिक अवस्था, अर्थात् गैस, द्रव और ठोस, पर आधारित है।

15.3.1 गैस

गैसों का संग्रहण सरल से लेकर अत्यंत जटिल होता है। शुद्ध गैसों का संग्रहण आसान होता है जबकि गैसों के मिश्रण का अथवा वायुमंडलीय गैसों का संग्रहण जटिल होता है। इस प्रकार गैस नमूनों का संग्रहण, गैसों के प्रकार, पर्यावरण जहां से गैसों का संग्रहण किया जाता है तथा ताप पर निर्भर करता है। अनेक बार संग्रहण के साथ-साथ गैसों का विश्लेषण भी किया जाता है।

सामान्य गैस नमूनों के संग्रहण के लिए निम्नलिखित तीन विधियों का उपयोग किया जाता है :

i) प्रधावन,

ii) द्रव द्वारा विस्थापन,

iii) किसी निर्वातित पात्र में प्रसारण।

गैस नमूनों को कांच के बने बेलनाकार पात्रों में संग्रहित किया जाता है जिनके दोनों सिरों पर रोधनियां लगी रहती हैं। एक सिरे पर पात्र को निर्वातित करने के लिए कोई व्यवस्था की जा सकती है अथवा पात्र को भरने के लिए कोई अन्य युक्ति लगाई जा सकती है। रोधनियों को सावधानीपूर्वक साफ कर उनमें स्नेहक लगा देना चाहिए।

वायुमंडल से नमूना लेना हो तो केवल एक नमूने से बहुत कम सूचना प्राप्त होगी। इसलिए वायुमंडलीय प्रदूषण के अध्ययन के लिए विभिन्न स्थानों पर और विभिन्न समयों पर लिए गए अनेक नमूनों की आवश्यकता होगी। वायुमंडलीय प्रतिचयन के अधिकांश मामलों में वायु की बहुत अधिक मात्राएं संग्राही उपकरण में से प्रविष्ट की जाती हैं। अनेक ठोस और द्रव सूक्ष्म विभाजित होने के कारण वायु में निलंबित रहते हैं। ऐसे ठोसों को उपयुक्त निस्यंदकों द्वारा पृथक किया जाता है और द्रवों को या तो अवशोषित कर लिया जाता है अथवा प्रतिचयन उपकरण में मौजूद द्रवों अथवा ठोसों के साथ अभिक्रिया की जाती है। संग्रहित नमूने में वायु की कुल मात्रा ज्ञात करने के लिए हस्तचालित पंप का उपयोग किया जाता है जो प्रत्येक स्ट्रोक में प्रतिचयन नली द्वारा वायु का निश्चित आयतन देता है।

15.3.2 द्रव

समांगी द्रवों अथवा शुद्ध द्रवों के प्रतिचयन में कोई समस्या नहीं होती है। द्रव को पात्र में उड़ेलकर अथवा पात्र को द्रव के ढेर में निमज्जित कर नमूने को संग्रहित किया जाता है।

यदि नमूनों को विभिन्न गहराइयों से एकत्रित करना हो तो द्रवों के ढेर को भली भांति विलोडित कर शीर्ष, मध्य और अधस्तल से द्रव की तुल्य मात्राओं को एकत्रित करना चाहिए। इसके लिए प्रयुक्त युक्ति में एक बोतल का उपयोग किया जाता है जिसमें लगे डाट में दो छिद्र होते हैं। एक छिद्र में नलिका लगी होती है जो द्रव राशि की गहराई से किंचित लंबी होती है। लंबी नली में रोधनी लगाई जाती है। नमूने को संग्रहित करने के लिए रोधनी बंद कर बोतल को द्रव में निमज्जित किया जाता है और छोटी नली को वांछित गहाराई तक डुबाया जाता है। उसके बाद रोधनी को खोल दिया जाता है। हवा जैसे ही लंबी नली से बाहर निकलती है, छोटी नली से द्रव बोतल में भर जाता है। इस विधि को पायसों और निलंबनों के प्रतिचयन के लिए प्रयुक्त किया जाता है जो पूर्णतया स्थायी होते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अमिश्रणीय द्रवों का यथार्थ प्रतिचयन बहुत कठिन होता है। अमिश्रणीय द्रवों के प्रतिचयन के लिए उपर्युक्त विधि का प्रयोग किया जा सकता है किन्तु प्रत्येक परत का अलग-अलग प्रतिचयन किया जाता है। फिर विभिन्न नमूनों को मिलाकर मिश्र नमूना बनाया जाता है। इसके लिए नमूनों को द्रवों के ढेर मिश्रण में विभिन्न परतों के आपेक्षिक आयतन के अनुपात में मिलाया जाता है।

15.3.3 ठोस

ठोस पदार्थों में बहुत भिन्नता पाई जाती है इसलिए सभी ठोस पदार्थों के लिए सभी अवस्थाओं में प्रतिचयन की ऐसी सामान्य विधियां बताना असंभव है जो सभी ठोस पदार्थों के लिए अनुप्रयोज्य हों। कोयला, अयस्क आदि ढेर पदार्थ का सकल नमूना प्राप्त करने के लिए प्राय: हस्त प्रतिचयन का उपयोग किया जाता है। सकल नमूने को पीसकर प्रयोगशाला नमूना तैयार किया जाता है। हस्त प्रतिचयन यथार्थ न होते हुए भी कभी कभी नमूना संग्रहित करने का एकमात्र साधन होता है। इसमें पदार्थ और प्रतिचयन शर्तों के लिए सुविचारित योजना की और कार्यकता को उचित पर्यविक्षण करने की आवश्यकता होती है।

विविक्त प्रचयों वाले पदार्थ का प्रतिचयन उनके यादृच्छिक वरण द्वारा किया जाता है। संग्राही ठोस पदार्थ के कण आमाप में एक चर भी निविष्ट रहता है जो द्रवों और गैसों के प्रतिचयन में नहीं होता है। यह कारक, विश्लेषक के लिए महत्वपूर्ण होता है क्योंकि वह विश्लेषण के लिए प्रयोगशाला में नमूना बनाने में सम्मिलित रहता है। विभिन्न आमाप के कणों में अपद्रव्य की मात्रा भिन्न-भिन्न होती है। बड़े कणों को पीसकर छोटा बनाने और फिर उन्हें 0.05 मिमी के सामान्य छिद्रों वाली चालनी में छानने से इस कठिनाई से बचा जा सकता है।

ठोस पदार्थों का प्रतिचयन पदार्थ के भौतिक गुणधर्मों और ज्यामिति पर निर्भर करता है। सिल्ली, चादर, खंड आदि संहत रूप वाले ठोस पदार्थों से प्रतिचयन प्रक्रिया यादृच्छिक आधार पर की जा सकती है। उदाहरण के लिए धातु की चादर के प्रतिचयन के लिए अनेक चादरों को कसकर किनारों का कर्तन किया जाता है। किसी खंड के प्रतिचयन के लिए उसके विकर्ण में समान दूरी पर वेधन द्वारा छिद्र बनाए जाते हैं अथवा वैकल्पिक रूप से पहले एक ओर और फिर दूसरी ओर छिद्र किए जाते हैं।

15.3.4 सावधानियां

प्रतिचयन के लिए बहुत सावधानियां रखनी पड़ती हैं जो संक्षेप में इस प्रकार हैं:

1) नमूने की प्रत्येक बोतल पर लेबल लगाएं जिसमें संग्राहक का नाम, तिथि, ठीक-ठीक स्थान और विश्लेषण संबंधी अन्य आंकड़े लिखे हों। नमूनों पर लेबल लगाने से पहचानने में त्रुटि नहीं होती है।
2) द्रव भरने से पहले नमूना बोतल को संग्रहित होने वाले द्रव से प्रक्षालित कर लें।
3) पात्र को भरते समय उसकी धारिता का 1% स्थान वायु के लिए रिक्त छोड़ दें ताकि तापीय प्रसार हो सके।
4) नमूना-अवयवों के विषालु होने की संभावना हो तो प्रतिचयन के समय और नमूने के उपयोग के समय समुचित सावधानी लें। दस्ताने, ऐप्रन और अन्य रक्षात्मक परिधान पहनें। यदि उत्पन्न वाष्प विषालु हों तो प्रतिचयन केवल सुवातित स्थान पर करें। सदैव नेत्र रक्षक पहनें।
5) प्रयोगशाला में नमूना पात्र खोलने के लिए धूम-छत्र का उपयोग करें।
6) खाद्य पदार्थों को नमूनों के पास कभी न रखें।

MAADHYAM IAS

7) यदि ज्वलनशील यौगिकों के उपस्थित होने की संभावना हो तो चिनगारी और ज्वाला को नमूनों से दूर रखें।

8) जिन नमूनों में रेडियोऐक्टिव संदूषक हों उनके उपयोग के समय विशेष रक्षा उपाय अपनाएं।

9) जिन प्रचालनों से नमूने के संघटन में परिवर्तन होता हो उनसे यथासंभव बचना चाहिए।

10) यदि नमूने में फ्लुओराइड अथवा प्रबल क्षारक विद्यमान हों तो प्लास्टिक पात्र का उपयोग करें।

बोध प्रश्न

2) विभिन्न गहराइयों से द्रव-नमूने कैसे संग्रहित किए जाते हैं।

....

....

....

....

....

15.4 पात्र

यह आवश्यक है कि प्रतिचयन के लिए प्रयुक्त पात्र उपयुक्त पदार्थ का बना हो। यदि पात्र का पदार्थ नमूने के प्रति निष्क्रिय न हो तो नमूना-पदार्थ और नमूने के साथ किए जाने वाले प्रयोगों पर उसका प्रभाव पड़ सकता है।

सामान्यतया नमूना-संग्रहण के लिए प्रयुक्त पात्र प्लास्टिक अथवा कांच के बने होते हैं। नमूने में मौजूद संदूषण के आधार पर एक पदार्थ के स्थान पर दूसरे को वरीयता दी जा सकती है। उच्च पी.एच. वाले नमूनों के लिए तथा जिन नमूनों में कांच को प्रभावित करने वाले पदार्थ हों उनके लिए कांच के पात्रों का उपयोग नहीं करना चाहिए। ऐसे नमूनों के लिए प्लास्टिक के पात्रों का ही उपयोग करना चाहिए। किन्तु यदि नमूनों में प्लास्टिक को प्रभावित करने वाले कार्बनिक यौगिक विद्यमान हों तो प्लास्टिक के बने पात्रों का उपयोग नहीं करना चाहिए।

अनेक पदार्थों के प्रतिचयन के लिए धातु पात्रों का उपयोग किया जा सकता है। किन्तु उनका उपयोग भी सावधानीपूर्वक करना चाहिए। पात्र को संक्षारित करने वाले पदार्थों अथवा धातु के साथ अभिक्रिया करने वाले पदार्थों का प्रतिचयन ऐसे पात्रों में नहीं करना चाहिए। उदाहरण के लिए ऐसीटिलीन के संग्रहण के लिए तांबे के पात्र का उपयोग करने पर ऐसीटिलाइड के बनने से विस्फोट हो सकता है।

MADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

अनेक पदार्थों की प्रकाश, वायुमंडल, आर्द्रता और ताप आदि से रक्षा करनी चाहिए। प्रकाश से रक्षा के लिए प्राय: रंगीन बोतलों का उपयोग किया जाता है। वायुमंडल से रक्षा के लिए कसकर बंद करने वाले डाटों का उपयोग किया जाता है। पैराफिन से सील करके भी वायुमंडल से रक्षा की जा सकती है। अधिक उग्र मामलों में नाइट्रोजन अथवा हीलियम के वायुमंडल में कांच में सील करने की आवश्यकता होती है।

15.5 जल-नमूनों का संग्रहण और परिरक्षण

जल के विश्लेषण के लिए, विशेषतया रासायनिक कार्यों के लिए जल-नमूनों का संग्रहण और परिरक्षण महत्वपूर्ण होता है।

15.5.1 जल-नमूनों का संग्रहण

विस्तृत गुणता-परास वाले जल के परीक्षण के लिए प्रतिचयन करना आवश्यक होता है। इसके अंतर्गत घरेलू उपयोग के लिए प्रयुक्त जल, औद्योगिक आपूर्ति के लिए प्रयुक्त जल, भौमजल, नदियों, तालाबों आदि का पृष्ठीय जल, वर्षा-जल, नगरपालिका अपशिष्ट जल, औद्योगिक अपशिष्ट जल और लवणीय जल आते हैं।

सभी प्रकार के जल के प्रतिचयन के लिए एक ही प्रक्रिया अपनाना व्यावहारिक नहीं होता है। जल नमूनों का संग्रहण और परिरक्षण, स्रोत, परीक्षण के उद्देश्य तथा निर्धारण के लिए प्रयुक्त वैश्लेषिक प्रक्रिया पर निर्भर करता है। सूक्ष्मजैविक, कार्बनिक और सूक्ष्ममात्रिक, धातु विश्लेषण के लिए विशेष सावधानियों की आवश्यकता होती है। यदि समुचित प्रतिचयन और परिरक्षण प्रक्रियाओं का अनुसरण न किया जाए तो उपस्थित अवयव की पूर्णतया अथवा अंशत: हानि हो सकती है।

जल-नमूनों का संग्रहण हाथ से अथवा स्वचालित यंत्र से किया जा सकता है। हस्त प्रतिचयन में किसी भी उपस्कर का उपयोग नहीं किया जाता है। किन्तु इस विधि में दैनिक अथवा विस्तृत परिमाण में प्रतिचयन के लिए बहुत समय लगता है। जबकि स्वचालित प्रतिचयन में विशेष निर्मित उपस्कर की आवश्यकता होती है और मानव त्रुटियों से बचा जा सकता है। साथ ही इस विधि द्वारा प्रतिचयन बार-बार किया जा सकता है।

जल-प्रतिचयन की प्रक्रिया स्रोत पर भी निर्भर करती है। उदाहरण के लिए जब नमूनों को कुंओं से प्राप्त किया जाता है तो पंप द्वारा पर्याप्त जल निकालने के बाद नमूने का संग्रहण करना चाहिए ताकि नमूना, भौमजल स्रोत को निरूपित करे। यदि नमूनों को नदियों से संग्रहित किया जाए तो संग्रहण अलग-अलग समय, अलग-अलग स्थानों और अलग-अलग गहराइयों से करना चाहिए क्योंकि नदी जल का संघटन पूरे वर्ष एकसमान नहीं रहता है।

15.5.2 जल-नमूनों का परिरक्षण

विश्लेषण से पहले नमूना-संग्रहण का वैश्लेषिक निर्धारणों पर प्रभाव पड़ता है क्योंकि नमूना संग्रहण के बाद लगातार रासायनिक और जैविक परिवर्तन होते रहते हैं। पी.एच. और घुली गैसों (ऑक्सीजन, कार्बन डाइआक्साइड) की मात्रा में परिवर्तन बहुधा होता ही है। यदि नमूना-संग्रहण और विश्लेषण के बीच समय का अंतर बहुत अधिक हो तो सूक्ष्मजीव पैदा हो सकते हैं। कांच पात्रों की दीवारों पर अधिशोषण द्वारा हानि अथवा उनके साथ आयन विनिमय का भी ध्यान रखना पड़ता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

उपर्युक्त परिवर्तनों को रोकने के लिए जल-नमूनों का समुचित परिरक्षण किया जाना चाहिए। फिर भी जल-नमूनों का पूर्ण परिरक्षण असंभव है। अधिक से अधिक परिरक्षण तकनीकों द्वारा नमूना-संग्रहण के समय होने वाले रासायनिक और जैव परिवर्तनों की गति मंद की जा सकती है। नमूनों को ऐसी स्थितियों में रखना चाहिए जब परिरक्षण के समय कम से कम परिवर्तन हों। जिन सामान्य परिरक्षण तकनीकों का उपयोग किया जाता है वे इस प्रकार हैं:

i) प्रशीतन

ii) रासायनिक परिरक्षण

iii) पी.एच. नियंत्रण

iv) अंधेरे में रखना

प्रयोगशाला में नमूनों के आने के बाद शीघ्रातिशीघ्र उनका विशलेषण कर लें। यदि शीघ्र विश्लेषण संभव न हो तो नमूनों को अधिक से अधिक ठंडी अवस्था में संग्रहित करें किन्तु जमने न दें। अधिकांश नमूनों को 4°C पर संग्रहित करें। ठंडा करने से संग्रहण के समय वाष्पीकरण अथवा जैव निम्नीकरण की क्षमता कम हो जाती है। कुछ मामलों में रासायनिक परिरक्षकों का उपयोग किया जा सकता है। ऐसे परिरक्षकों को मिलाने से पहले यह सुनिश्चित कर लें कि विश्लेषण में कोई बाधा न डालें। परिरक्षक का चयन करते समय निर्धारणों का ध्यान रखें। परिरक्षकों का उपयोग करना हो तो उन्हें नमूना-बोतल में आरंभ में ही मिला दें ताकि पूरा नमूना संग्रहण के शीघ्र बाद परिरक्षित हो जाय।

अनेक अभिक्रियाओं में पी.एच. की महत्वपूर्ण भूमिका होती है इसलिए पी.एच. नियंत्रण आवश्यक है। कभी-कभी कुछ ही मिनटों में पी.एच. में परिवर्तन हो जाता है। किन्तु पी.एच. नियंत्रण की विधियां अम्लों (H_2SO_4,HCl) अथवा क्षारकों (जैसे NaOH) के संयोजन तक सीमित हैं। नमूने को अंधेरे में और कम ताप पर संग्रहित कर सूक्ष्मजीवों की वृद्धि द्वारा होने वाले परिवर्तनों की गति मंद की जा सकती है। सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के लिए आवश्यक प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाओं को रोकने के लिए ऐम्बर और अपारदर्शी बोतलों का उपयोग उपयुक्त होता है।

बोध प्रश्न

3) जल के नमूनों के लिए प्रयुक्त कुछ परिरक्षण तकनीकों के नाम बताइए।

....

....

....

....

....

15.7 मृदा का प्रतिचयन

मृदा का प्रतिचयन, मृदा विश्लेषण का सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग होता है। मृदा का प्रतिचयन, प्रयोजन जिसके लिए नमूने की आवश्यकता है, मृदा का स्वभाव, वैश्लेषिक निर्धारण क्षेत्र और गहराई जहां से नमूनों को लिया जाता है आदि विभिन्न परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

मृदा, भू-पर्पटी के सबसे बाहरी भाग में होती है। उसके विभिन्न खनिजीय और रासायनिक गुणधर्म होते हैं जो भूपृष्ठ पर उसकी विशेष स्थिति और उस स्थान पर पाए जाने वाले पर्यावरणी कारकों पर निर्भर करते हैं। पाश्र्वीय और ऊर्ध्वाधर विस्थापन के साथ मृदा के गुणधर्मों में परिवर्तन होता है। मृदा की पृथक परतों में गहराई के साथ स्पष्ट भिन्नता होती है। ऐसी परतों को क्षितिज (horizon)& हैं। ऊर्ध्वाधर अनुप्रस्थ काटों को परिच्छेदिका (profile) कहते हैं। कणों के आमाप के आधार पर मृदा का वर्गीकरण, बालू, गाद **(Silt)** और मृत्तिका **(Clay)** के रूप में किया जाता है। स्थूल बालू के कणों का व्यास **2.-0.2** मिमी तक होता है जिन्हें सूक्ष्म बालू कहते हैं। गाद के जिन कणों का व्यास 0.002 मिमी से कम होता है वे मृत्तिका कण होते हैं।

मृदा के नमूनों को प्रायः जूट अथवा कपड़े के थैलों में संग्रहित किया जाता है। मृदा नमूनों के संग्रहण के लिए कैलिकों (Calico) थैलों का उपयोग किया जाता है। थैलों को क्रमांकित कर लेबल लगा दिया जाता है जिसमें क्षितिज, स्थान, तिथि, समय आदि लिखे रहते हैं। अधिकांश कार्यों के लिए 1-2 किलोग्राम नमूना संग्रहित किया जाता है।

नमूनों को नये खुदे गर्त से लेना चाहिए जो इतने गहरे हों कि नमूनों का संग्रहण विभिन्न क्षितिजों से किया जा सके। नमूनों को उपयुक्त औजारों की मदद से विभिन्न क्षेत्रों से संग्रहित किया जाता है। ढेलों को तोड़कर छोटे-छोटे टुकड़े बनाए जाते हैं और फिर उन्हें भली भांति मिला लिया जाता है। संग्रहित मृदा को 2 मिमी छिद्रों वाली नाइलॉन अथवा जंगरोधी इस्पात की बनी चालनी में छान लिया जाता है। बड़े कणों को बार-बार पीसकर इतना बारीक बना लें कि वे चालनी में से प्रविष्ट कर सकें। पत्थरों और कंकणों के रूप में शेष बचे कणों को तोलकर फेंक दें।

खोदने के लिए स्थान का चयन करते समय, अपरदन की मात्रा, पृष्ठ अपवाह, रंग, गठन आदि कारकों का ध्यान रखा जाता है। मृदा का प्रतिचयन दिन के प्रकाश में करना चाहिए और मृदा को पर्याप्त शुष्क अवस्था में होना चाहिए। प्रतिचयन से पहले नमूना प्रतिचयन के लिए चुने गए स्थान से सभी वस्तुओं को हटा दें किन्तु क्षितिजों में फंसे कार्बनिक द्रव्य को न हटाएं। आवश्यकता के अनुसार नमूनों को विभिन्न गहराइयों से संग्रहित करें। गहराई का चयन, अध्ययन के प्रयोजन पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए उर्वरता स्तर का अध्ययन करने के लिए ऊपर से 15 cm से 22 cm गहरी मृदा के नमूने उपयुक्त रहते हैं जबकि लवणता और क्षारता के अध्ययन के लिए पृष्ठीय मृदा की अपेक्षा कुछ गहराई से लिए गए नमूने अधिक उपयुक्त रहते हैं।

किसी स्थान का संयुक्त प्रतिरूप नमूना प्राप्त करने के लिए प्रत्येक प्रमुख और अलग-अलग मृदा स्तरों सें और विभिन्न गहराइयों से नमूने लें। प्रत्येक संयुक्त नमूने को किसी हवादार स्थान में भली भांति मिलाकर सुखा लें। नमूने को स्टेनलेस इस्पात अथवा नाइलॉन की चालनी में छान लें ताकि 2 मिमी से कम व्यास के कण प्राप्त हो जाएं।

मृदा के प्रतिचयन के लिए उपयुक्त औजार की आवश्यकता होती है। आदर्श प्रतिचयन औजार ऐसा होना चाहिए कि उसके द्वारा वांछित गहराई से एकसमान अनुप्रस्थ परिच्छेद का असंदूषित पुनरुत्पादनीय प्रतिचयन, इकाई मात्रा प्राप्त हो। इसके लिए ऑगर (Auger) का उपयोग किया जाता रहा है किन्तु ये बहुत विश्वसनीय नहीं हैं। पृष्ठ क्षितिजों के प्रतिचयन के लिए प्रायः प्रतिचयन नलियों का उपयोग किया जाता है। गड्ढा खोदकर उपयुक्त गहराई नमूना संग्रहित करने के लिए बहुधा तौलिया और छुरी का उपयोग किया जाता है।

15.7 सारांश

MAADHYAM IAS

इस इकाई में आपने पढ़ा कि:

- किसी पदार्थ के बहुत छोटे हिस्से को एकत्र करना प्रतिचयन कहलाता है। यह ढेर पदार्थ का प्रतिरूप होता है। नमूना आसानी से ले जाने और प्रयोगशाला परीक्षण के लिए उपयुक्त होना चाहिए।
- प्रतिचयन प्रक्रिया में महत्वपूर्ण कारक हैं:- नमूने का स्वभाव, उसकी भौतिक अवस्था, उसकी आविषालुता और उत्पाद के मूल्य की तुलना में परीक्षण की लागत।
- गैस नमूनों को प्रधावन अथवा द्रव द्वारा विस्थापन अथवा निर्वातित पात्र में प्रसारण द्वारा संग्रहित किया जाता है।

- द्रव नमूने को या तो पात्र में उडेलकर अथवा पात्र को द्रव के ढेर में निमज्जित कर संग्रहित किया जाता है।
- ठोस पदार्थों का प्रतिचयन उनके भौतिक गुणधर्मों और ज्यामिति पर निर्भर करता है।
- जल का प्रतिचयन स्रोत, परीक्षण के प्रयोजन तथा निर्धारण के लिए प्रयुक्त वैश्लेषिक प्रक्रिया पर निर्भर करता है।
- मृदा का प्रतिचयन उस क्षेत्र और गहराई पर निर्भर करता है जहां से नमूना लिया गया हो। साथ ही वह मृदा के स्वभाव और उस प्रयोजन पर भी निर्भर करता है जिसके लिए नमूने की आवश्यकता हो।

15.8 अंत में कुछ प्रश्न

1) यदि जल के नमूने में फ्लुओराइड अथवा प्रबल क्षार हो तो किस प्रकार के पात्र का उपयोग किया जाएगा?
2) ऐसीटिलीन के संग्रहण के लिए ताम्र पात्र का उपयोग नहीं हो सकता है। क्यों?

15.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1) , नमूने का स्वभाव।
   ii) नमूने की भौतिक अवस्था।
   iii) नमूने की आविषालुता।
2) विशेष युक्ति द्वारा विभिन्न गहराइयों से द्रव के नमूने संग्रहित किए जाते हैं। इसमें भली भांति विलोडित द्रव के ढेर के ऊपरी, मध्य और अधस्तल भाग से उसके समान आयतन संग्रहित किए जाते हैं।
3) प्रशीतन, रासायनिक परिरक्षण, पी.एच. नियंत्रण और अंधेरे में रखना।

अंत में कुछ प्रश्न

1) प्रत्येक नमूने के लिए प्लास्टिक पात्र का उपयोग करना चाहिए।
2) क्योंकि कॉपर ऐसीटिलाइड बनने से विस्फोट होगा।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इकाई 16 विश्लेषण की परंपरागत तकनीकें

इकाई की रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
- उद्देश्य

16.2 कुछ मौलिक संकल्पनाएं
- प्रचालन का मापक्रम
- मोल की संकल्पना
- सान्द्रता के मात्रक

16.3 भारात्मक विश्लेषण
- अवक्षेपण
- अवक्षेपण की पूर्णता
- तोलन रूप
- परिकलन

16.4 भारात्मक विश्लेषण के अनुप्रयोग
- क्लोरीन, क्लोराइड के रूप में
- गंधक, सल्फेट के रूप में
- फ़ास्फ़ोरस, फ़ास्फ़ेट के रूप में

16.5 अनुमापनी विश्लेषण
- ग्राम तुल्यांक भार (जी.इ.डब्ल्यू.)
- परिकलन

16.6 अनुमापनी विश्लेषण का विभाजन
- उदासीनीकरण अनुमापन
- ऑक्सीकरण-अपचयन (अथवा रेडॉक्स) अनुमापन
- संकुलमितीय अनुमापन
- अवक्षेपण अनुमापन

16.7 सारांश

16.8 अंत में कुछ प्रश्न

16.9 उत्तर

16.1 प्रस्तावना

पर्यावरण में विषैले पदार्थों का पाया जाना राष्ट्र के सामने एक संकट है। उनका निर्धारण रासायनिक विश्लेषण में प्रयुक्त विभिन्न विधियों द्वारा किया जाना चाहिए। रासायनिक विश्लेषण को दो शाखाओं में विभाजित किया जाता है: गुणात्मक विश्लेषण और मात्रात्मक विश्लेषण। रसायन की जिस शाखा का संबंध पदार्थों की पहचान और उनके अभिनिर्धारण से होता है उसे गुणात्मक विश्लेषण कहते हैं और जिस शाखा का संबंध पदार्थों की मात्रा से होता है उसे मात्रात्मक विश्लेषण कहते हैं। अधिकांशतया मात्रात्मक विश्लेषण से पहले गुणात्मक विश्लेषण किया जाता है। गुणात्मक विश्लेषण से नमूने में मौजूद अवयवों की आपेक्षिक मात्रा का मोटा अनुमान लगाया जा सकता है।

आरंभिक अभिनिर्धारण के बाद वैश्लेषिक रसायनज्ञ की रुचि मात्रात्मक विश्लेषण अर्थात् नमूने के विशेष अवयव के द्रव्यमान अथवा आपेक्षिक द्रव्यमान के माप में होती है। द्रव्यमान के माप की दो भिन्न विधियां हैं:

MAADHYAM IAS

i) द्रव्यमान को सीधे मापना

ii) एक अवयव के एक गुणधर्म के परिमाण की माप करना जो उसके द्रव्यमान अथवा आपेक्षिक द्रव्यमान पर निर्भर करता है।

द्रव्यमान को सीधे मापने के लिए प्रयुक्त विधियों को ''विश्लेषण की परंपरागत विधियां'' कहते हैं। इनमें सरल उपस्करों का उपयोग किया जाता है। द्रव्यमान मापने की दो प्रक्रियाएं हैं: गुरूत्वमिति (gravimetry) और आयतनमिति (volumetry)। इसमें से एक का उपयोग किया जाता है। गुरूत्वमिति में ज्ञात संघटन के पदार्थ को अवक्षेपण के बाद सीधे तोल लिया जाता है। आयतनमिति में द्रव्यमान परिकलित करने के लिए नमूना विलयन के अनुमापन के लिए प्रयुक्त ज्ञात सान्द्रता के अभिकर्मक का आयतन मालूम किया जाता है। इन दोनों प्रक्रियाओं को संयुक्त रूप से विश्लेषण की रासायनिक विधियां कहते हैं क्योंकि इन निर्धारणों का आधार रासायनिक अभिक्रिया है। सामान्य रूप में 'C' अवयव के 'a' मोल रससमीकरणमितीयत: 'R' अभिकर्मक के 'b' मोलों के साथ अभिक्रिया कर C_aR_b यौगिक बनाते हैं।

$$aC + bR \rightarrow C_aR_b$$

अधिकांश अवयवों के लिए गुरूत्वमितीय विश्लेषण और आयतनमितीय विश्लेषण दोनों उपयुक्त रहते हैं। कुछ तत्वों के मात्रात्मक निर्धारण के लिए आयतनमितीय विधि की अपेक्षा गुरूत्वमितीय विश्लेषण को प्रमुखता दी जाती है जबकि अन्य के लिए आयतनमितीय विधि का उपयोग किया जाता है। गुरूत्वमितीय विधि में अधिक समय लगता है और केवल तब उपयुक्त रहती है जब केवल एक अथवा कुछ ही निर्धारण करने हों। आयतनमितीय निर्धारणों में कम समय लगता है और यह तब उपयुक्त रहती है जब अनेक नमूनों का विश्लेषण करना हो।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप,

- परंपरागत तकनीकों की मौलिक संकल्पनाएं जान सकेंगे,
- गुरूत्वमिति के लिए अवक्षेप को तोलने की विधि का चयन कर सकेंगे,
- अवक्षेप को तोलकर अवयव की मात्रा ज्ञात कर सकेंगे, और
- विभिन्न प्रकार के अनुमापनों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

16.2 कुछ मौलिक संकल्पनाएं

16.2.1 प्रचालन का मापक्रम

वैश्लेषिक प्रक्रियाओं का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जा सकता है: पहला नमूने के आमाप पर और दूसरा नमूने में अवयवों की आपेक्षिक मात्रा पर।

लिए गए नमूने के आमाप के आधार पर विश्लेषण की प्रक्रियाओं को चार वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

(i) स्थूल, (ii) मेसो अथवा अर्धसूक्ष्म (iii) सूक्ष्म और (iv) अतिसूक्ष्म अथवा अवसूक्ष्म

स्थूल प्रक्रिया (macro procedure): स्थूल प्रक्रिया में नमूने का भार 0.1 ग्राम से अधिक होता है किन्तु 1.0 ग्राम से अधिक नहीं होता है। उदाहरण के लिए अम्ल और क्षारक मूलकों के परीक्षण के लिए प्रयुक्त आर्द्र विधि में लिए गए नमूने की मात्रा इसी परास में होती है इसलिए वह स्थूल प्रक्रिया है। इन प्रक्रियाओं को डेसिग्राम नमूना प्रक्रियाएं भी कहते हैं क्योंकि नमूने का द्रव्यमान कुछ डेसिग्राम और कम से कम एक डेसिग्राम होता है।

MAADHYAM IAS

मेसो प्रक्रिया (meso procedure): मेसो (अर्धसूक्ष्म) प्रक्रिया में लिए गए नमूने की मात्रा 0.01 ग्राम से 0.1 ग्राम के बीच होती है। इन प्रक्रियाओं को सेन्टीग्राम नमूना प्रक्रिया भी कहते हैं क्योंकि नमूने का द्रव्यमान कुछ सेन्टीग्राम और कम से कम एक सेन्टीग्राम होता है।

सूक्ष्म प्रक्रिया (micro procedure): यदि लिए गए नमूने की मात्रा 0.01 ग्राम से कम किन्तु 0.001 ग्राम से अधिक हो तो इस प्रक्रिया को सूक्ष्म प्रक्रिया कहते हैं। इस प्रक्रिया को मिलीग्राम नमूना प्रक्रिया भी कहते हैं क्योंकि नमूने का द्रव्यमान कुछ मिलीग्राम और कम से कम एक मिलिग्राम होता है।

अतिसूक्ष्म प्रक्रिया (ultra-micro procedure): जिस प्रक्रिया में लिए गए नमूने का द्रव्यमान 0.001 ग्राम से कम हो उसे अतिसूक्ष्म प्रक्रिया कहते हैं। इसे अवसूक्ष्म (sub-micro) प्रक्रिया भी कहते हैं।

नमूने में अवयव की आपेक्षिक मात्रा को निर्धारण विधियों का आधार माना जाता है। ये हैं: अधि, अल्प और लेश। अधि-विश्लेषण में नमूने में निर्धारित किए जाने वाले अवयव की आपेक्षिक मात्रा 1-100% होती है। अधि अवयव निर्धारण के लिए गुरूत्वमिति और आयतनमिति का अनुप्रयोग किया जाता है। अल्प विश्लेषण में निर्धारित किए जाने वाले अवयव की मात्रा 0.01-1% तक होती है और लेश में 0.01% से कम होती है। अंतिम दो प्रकार के विश्लेषणों के लिए भौतरासायनिक (physico-chemical) विधियों का प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार विश्लेषण की उपयुक्त तकनीक का चयन उपलब्ध नमूने की मात्रा और नमूने में मौजूद अवयव के प्रतिशत पर निर्भर करता है।

16.2.2 मोल की संकल्पना

मात्रात्मक विश्लेषण करने वाले छात्र की दिलचस्पी नमूने में अवयव की मात्रा में होती है। मात्रा को द्रव्यमान के विभिन्न मात्रकों में व्यक्त किया जा सकता है, जैसे ग्राम, मिलिग्राम, माइक्रोग्राम आदि। किन्तु अभिक्रिया करने वाले पदार्थों की मात्रा ऐसे रासायनिक मात्रकों में व्यक्त की जानी चाहिए जिसका संबंध रासायनिक अभिक्रिया को व्यक्त करने अर्थात् अणुओं से हो। उदाहरण के लिए निम्नलिखित अभिक्रिया में,

$$NaOH + HCl \rightarrow NaCl + H_2O \qquad (16.1)$$

में NaOH के 100 अणुओं को उदासीन करने लिए HCl के 100 अणुओं की आवश्यकता होगी। दूसरे शब्दों में NaOH का एक अणु, HCl के एक अणु द्वारा उदासीन होगा। किसी नमूने की दी गई मात्रा 4 अणुओं की संख्या आवागाद्रो संख्या 6.023×10^{23} द्वारा ज्ञात की जा सकती है। 6.023×10^{23} अणुओं की मात्रा को मोल कहते है।

MAADHYAM IAS

साधारणतया मोल 6.023×10^{23} कणों के समूह को व्यक्त करता है, जबकि कण का अर्थ है अणु, परमाणु, आयन आदि। यदि किसी यौगिक के 6.023×10^{23} कणों की मात्रा ग्रामों में लें तो यह ग्राम अणुभार के बराबर होगा। इस प्रकार किसी यौगिक का एक मोल जहां एक ओर 6.023×10^{23} मोलों की संख्या बतलाता है वहीं दूसरी ओर उसके ग्राम अणुभार को व्यक्त करता है।

किसी यौगिक के w ग्राम में मोलों की संख्या, n, को निम्नलिखित समीकरण द्वारा आसानी से परिकलित किया जा सकता है:

$$n = w/\text{gmw} \qquad (16.2)$$

उदाहरण के लिए 2 ग्राम NaOH में, 2/40 = 0.05 मोल होंगे। यदि मोलरता ज्ञात हो तो किसी पदार्थ के विलयन में मोलों की संख्या इस प्रकार भी परिकलित की जा सकती है:

$$\text{मोलों की संख्या} = \text{आयतन } (dm^3) \times \text{मोलरता}$$

मोल का गैसों के आयतन के साथ संबंध स्थापित करने की अन्य विधि है:

$$1 \text{ मोल} = 22.4 \; dm^3 \text{ गैस (एस.टी.पी पर)}$$

बोध प्रश्न

1) 4°C पर एक dm^3 जल में मोलों की संख्या कितनी होगी?

....

....

....

2) 0.1M विलयन के 250 cm^3 में HCl के मोलों की संख्या बताइए।

....

....

....

16.2.3 सान्द्रता के मात्रक

किसी विलयन की सान्द्रता को व्यक्त करने की अनेक विधियां है जैसे फार्मलता (F), मोलरता (M), नॉर्मलता (N), प्रतिशत (%), भाग प्रति दस लाख (पी.पी.एम.), मोल अंश आदि। नीचे आमतौर पर प्रयुक्त विधियों का वर्णन किया गया है।

नार्मलता : यह विलयन की सान्द्रता निरूपित करने की सर्वाधिक प्रयुक्त विधि है जिसकी परिभाषा इस प्रकार दी जाती है: किसी पदार्थ के, 1dm^3 (1 लिटर) विलयन में मौजूद ग्राम तुल्यांक भार (gram equivalent weight) (जी.ई.डब्ल्यू.) की संख्या को नॉर्मलता कहते है।

मोलरता : 1 dm^3 विलायक में घुले विलेय के मोलों की संख्या को मोलरता कहते हैं।

मोललता : 1 किलोग्राम विलायक में घुले विलेय के मोलों की संख्या को मोललता कहते हैं।

मोल-अंश : किसी विलयन में एक घटक के मोलों की संख्या का सभी घटकों के मोलों के साथ अनुपात को मोल-अंश कहते हैं।

प्रतिशत सान्द्रता : प्रतिशत सान्द्रता का प्रयोग लगभग सान्द्रता व्यक्त करने के लिए किया जाता है। किसी विलयन के प्रतिशत संघटन को व्यक्त करने की विभिन्न विधियां इस प्रकार हैं:

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

i) $$\text{आयतन प्रतिशत} = \frac{\text{विलेय का आयतन}}{\text{विलयन का आयतन}} \times 100$$

ii) $$\text{भार आयतन प्रतिशत} = \frac{\text{विलेय का भार ग्रामों में}}{\text{विलयन का आयतन मिली में}} \times 100$$

iii) भार प्रतिशत = $\dfrac{\text{विलेय का भार}}{\text{विलयन का आयतन}} \times 100$

i) आयतन प्रतिशत का उपयोग द्रव मिश्रणों के लिए किया जाता है। यह विलयन में द्रव की सान्द्रता को व्यक्त करता है। उदाहरण के लिए 5% ऐल्कोहॉल का अर्थ है 100 भाग विलयन में आयतन से 5 भाग ऐल्कोहॉल।

ii) भार-आयतन प्रतिशत ठोस पदार्थों के तनु जलीय विलयनों की सान्द्रता को बतलाता है।

iii) व्यापारिक जलीय अभिकर्मकों का प्रतिशत, भार प्रतिशत के रूप में व्यक्त किया जाता है। उदाहरण के लिए जल में HCl का 36%। भार प्रतिशत ताप-स्वतंत्र होता है।

अम्लों और क्षारकों के बाजार में बिकने वाले विलयनों की नार्मल और मोलर सान्द्रताएं भार प्रतिशत और विशिष्ट घनत्व द्वारा परिकलित की जाती हैं। किसी विलयन के विशिष्ट घनत्व का उपयोग एक लिटर विलयन का भार परिकलित करने के लिए किया जाता है जो भार-आयतन संबंध बतलाता है। भार-प्रतिशत सान्द्रता द्वारा एक लिटर विलयन में किसी पदार्थ की मात्रा परिकलित की जा सकती है और ग्राम अणु भार से भाग देने पर उस अम्ल अथवा क्षारक की मोलरता परिकलित की जा सकती है। इस प्रकार,

$$M = \frac{\text{विशिष्ट घनत्व} \times 1000 \times \text{भार}\%}{100 \times \text{अणुभार}}$$

बोध प्रश्न

3) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

i) एक dm^3 विलयन में मौजूद पदार्थ के ग्राम तुल्यांक भार की संख्या को .... कहते हैं।

ii) एक dm^3 विलायक में घुले विलेय के मोलों की संख्या को .... कहते हैं।

iii) एक किलोग्राम विलायक में घुले विलेय के मोलों की संख्या को .... कहते हैं।

16.3 भारात्मक विश्लेषण

भारात्मक विधि में तोलकर दिए गए घटक की मात्रा ज्ञात की जाती है। भारमिति में नमूने के A अवयव में, R अभिकर्मक को आधिक्य में मिलाया जाता है जिससे अवक्षेप के रूप में $A_x R_y$ उत्पाद प्राप्त होता है। रससमीकरणमितीयत: उसे इस प्रकार लिख सकते हैं:

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

$$xA + yR \rightarrow \underline{A_x R_y} \qquad (16.3)$$

$A_x R_y$ के नीचे की रेखा अवक्षेप को व्यक्त करती है। इस तकनीक में रासायनिक अभिक्रिया और पृथक्करण पद मात्रात्मक होने चाहिए। पृथक करने के बाद अवक्षेप को सुखाकर तोल लिया जाता है। उदाहरण के लिए सल्फेट के निर्धारण के लिए नमूने के विलयन की बेरियम क्लोराइड के आधिक्य के साथ अभिक्रिया की जाती है जिससे सल्फेट का बेरियम सल्फेट के रूप में पूर्णतया अवक्षेपण हो जाता है। अवक्षेप को छानने, धोने, सुखाने के बाद बेरियम सल्फेट के रूप में तोल लिया जाता है। सुखाए गए अवक्षेप के भार से सामान्य परिकलन द्वारा नमूंना विलयन में सल्फेट मात्रा ज्ञात की जा सकती है। यह आवश्यक नहीं कि निर्मित

अवक्षेप को उसी रूप में तोला जाए। बहुधा ज्वलन और अन्य अभिक्रियाओं द्वारा अवक्षेप का संघटन बदल दिया जाता है। केवल यह आवश्यक है कि तुले रूप का संघटन रससमीकरणमितीयत: वांछित अवयव से संबंध हो। ऐसे तोलन रूप को भी लिया जा सकता है जिसमें वांछित अवयव न हो बशर्ते दो के आपस में रससमीकरण संबंध ज्ञात हों। उदाहरण के लिए शुद्ध पोटैशियम क्लोराइड के विलयन में पोटैशियम की मात्रा निर्धारित करने के लिए उसमें सिल्वर नाइट्रेट मिलाया जाता है। अवक्षेपित सिल्वर क्लोराइड को तोलकर पोटैशियम के लिए प्रयुक्त किया जाता है क्योंकि दी गई परिस्थितियों में पोटैशियम और सिल्वर क्लोराइड के आपस में भार-संबंध स्थिर होता है।

16.3.1 अवक्षेपण

भारात्मक निर्धारण में निर्धारित किए जाने वाले अवयवों को पृथक किया जाता है। प्रयुक्त पृथक्करण विधियां है: अवक्षेपण, वाष्पीकरण, विभेदक विलेयता आदि। सबसे अधिक महत्वपूर्ण विधि अवक्षेपण विधि है जिसमें अवयव विलेय यौगिक होते हैं जिन्हें उपयुक्त तोलन रूप में परिवर्तित करने के बाद अथवा सीधे तोल लिया जाता है। इस विधि की नीचे विस्तार से चर्चा की गई है।

जिस भारात्मक विश्लेषण में अवक्षेपण प्रक्रम का उपयोग किया जाता है, उसमें अवक्षेप की आवश्यकता होती है जिसे नीचे दी गई आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए।

1) अवक्षेपण मात्रात्मक होना चाहिए।
2) अवक्षेप के कणों का उपयुक्त आमाप होना चाहिए ताकि उसे आसानी से छाना जा सके।
3) अवक्षेप को ऐसी स्थितियों में बनाया जाए कि उच्च शुद्धता प्राप्त हो।
4) अवक्षेपित रूप का निश्चित संघटन होना चाहिए अथवा ऐसा हो कि उसे निश्चित संघटन वाले तोलन रूप में बदला जा सके।

16.3.2 अवक्षेपण की पूर्णता

यदि अवक्षेप की विलेयता नगण्य हो और अवक्षेपक को आधिक्य में मिलाया जाए तो अवक्षेपण की शर्त पूरी हो जाती है। अल्पविलेय विद्युत् अपघट्य की विलेयता उसके विलेयता गुणनफल (के.एस.पी.) की अभिलाक्षणिक होती है। किसी दिए गए विलायक का विलेयता गुणनफल अल्प विलेय लवण (जो विलयन में आयन बनाता है) की अवक्षेपण सीमा का मात्रात्मक विवरण देता है। जब आयनों की सान्द्रताओं का गुणनफल विलेयता गुणनफल से अधिक होता है तो अवक्षेपण हो जाता है। उदाहरण के लिए सिल्वर क्लोराइड एक अल्पविलेय लवण है अर्थात् वह जल में बहुत कम घुलता है। जब जल में पर्याप्त मात्रा में सिल्वर क्लोराइड रखा जाता है तो विलयन में ठोस सिल्वर क्लोराइड और उसके आयनों के बीच साम्यावस्था स्थापित हो जाती है।

$$AgCl(\text{ठोस}) \rightleftharpoons Ag^+ + Cl^- \text{ (विलयन में)} \qquad (16.4)$$

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

Ag^+ और Cl^- की न्यून सान्द्रताओं में सक्रियता गुणांक को एक मानते हुए समीकरण 16.4 में द्रव्य अनुपाती क्रिया का नियम प्रयुक्त करने से निम्नलिखित संबंध प्राप्त होता है

$$K_{sp} = [Ag^+]\ [Cl^-] \qquad (16.5)$$

जिसमें K_{sp} विलेयता गुणनफल स्थिरांक अथवा केवल विलेयता गुणनफल कहलाता है और गुरुकोष्ठक आयनों की साम्य सान्द्रता को निरूपित करते हैं। 25°C पर AgCl का K_{sp} मान 1×10^{-10} होता है।

क) यदि $c_{Ag^+}.c_{Cl^-} < 1 \times 10^{-10}$ जिसमें c सान्द्रता को निरूपित करता है, तो विलयन संतृप्त नहीं है और उसमें सिल्वर क्लोराइड घुल सकता है।

ख) यदि $c_{Ag^+}.c_{Cl^-} = 1 \times 10^{-10}$ तो विलयन ठीक संतृप्त है। उसमें अतिरिक्त AgCl नहीं घुल सकता है।

ग) यदि $c_{Ag^+}.c_{Cl^-} > 1 \times 10^{-10}$ तो विलयन अतिसंतृप्त है और AgCl की निश्चित मात्रा अवक्षेपित हो जाएगी।

इसलिए अवक्षेप केवल तब बनता है जब दिए गए ताप पर संगत आयनों की सान्द्रताओं का गुणनफल अवक्षेपित यौगिक के विलेयता गुणनफल से अधिक होता है।

समीकरण 16.5 पर विचार करें। यदि Ag^+ की सान्द्रता बढ़ा दी जाए तो Cl^- की सान्द्रता कम हो जाएगी ताकि दो आयनों की सान्द्रताओं का गुणनफल स्थिर K_{sp} रहे। इसलिए विलयन से Cl^- को पूर्णतया अवक्षेपित करने के लिए Ag^+ को पर्याप्त मात्रा में मिलाया जाता है। भारात्मक विश्लेषण में अवक्षेपण को तब पूर्ण माना जाता है जब विलयन में शेष अवक्षेपक पदार्थ की मात्रा, तोलन की परिशुद्ध सीमा से अधिक हो (अर्थात् < 0.0002 ग्राम)। पूर्ण अवक्षेपण के लिए अवक्षेपक की पर्याप्त मात्रा लेना आवश्यक है।

16.3.3 तोलन रूप

अवक्षेपित रूप का निश्चित संघटन होना चाहिए अथवा उसे निश्चित संघटन के तोलन रूप में परिवर्तनीय होना चाहिए। अवक्षेपित रूप यौगिक की अवक्षेपित किस्म (अवक्षपेक) का नाम है और तोलन रूप उस यौगिक का नाम है जिसे अंतिम परिणाम प्राप्त करने के लिए तोला जाता है। उदाहरण के लिए बेरियम, $BaSO_4$ के रूप में अवक्षेपित होता है जिसका रससमीकरणमितीय संघटन होता है और उसे सुखाने के बाद, अवक्षेपित रूप में, तोला जा सकता है। जबकि फेरिक आयरन, $Fe_2O_3.xH_2O$ के रूप में अवक्षेपित होता है जिसमें जल का अनिश्चित संघटन होता है और उसे इस रूप में नहीं तोला जा सकता है। किन्तु उसे प्रज्वलित करके निर्जल Fe_2O_3 प्राप्त होता है जिसका निश्चित संघटन होता है और यही इसका तोलन रूप है जिसे तोलकर फेरिक आयरन का भार ज्ञात किया जा सकता है।

तोलन रूप स्थायी होना चाहिए। यदि निर्मित अवक्षेप में से जल निकल जाने से अथवा CO_2, CO आदि गैसों के निकल जाने से संघटन बदल जाए तो तोलने के लिए निश्चित संघटन की उपयुक्त किस्म का चयन करना चाहिए। किसी तत्व के भारात्मक निर्धारण के लिए उपयुक्त तोलन रूप का चयन करने के लिए यह आवश्यक है कि तोले जाने वाले पदार्थ का निश्चित संघटन हो जिसे सामान्यतया उपयुक्त ताप पर अवक्षेप को सुखा के अथवा प्रज्वलित करके प्राप्त किया जाता है। पिछले अनुभव के आधार पर जांच और मूल प्रक्रम द्वारा तोलन रूप के लिए इष्टतम प्रज्वलन ताप सुनिश्चित किया गया है। किन्तु हाल के वर्षों में थर्मोबैलैन्स के उपयोग से किसी प्रज्वलन प्रक्रम के लिए आवश्यक ताप की जानकारी मिल जाती है। जैसे ताप, सामान्य ताप से बढ़ जाता है, उसमें अवक्षेप का भार रिकार्ड हो जाता है। किसी विशिष्ट अवक्षेप के लिए भार-ताप वक्र प्राप्त हो जाता है। ऐसे वक्र को ताप-भारात्मक वक्र अथवा ताप अपघटनी वक्र कहते हैं जो अवक्षेप के तोलन रूप के लिए सर्वोत्तम स्थिति को सुनिश्चित करने में सहायक होता है। जब कैल्सियम ऑक्सेलेट मोनोहाइड्रेट के अवक्षेप को थर्मोबैलैन्स में सामान्य ताप से लगभग 1100°C के उत्थित ताप तक गर्म किया जाता है तो तापभारात्मक वक्र प्राप्त होता है जिसे चित्र 16.1 में दिखाया गया है।

MAADHYAM IAS

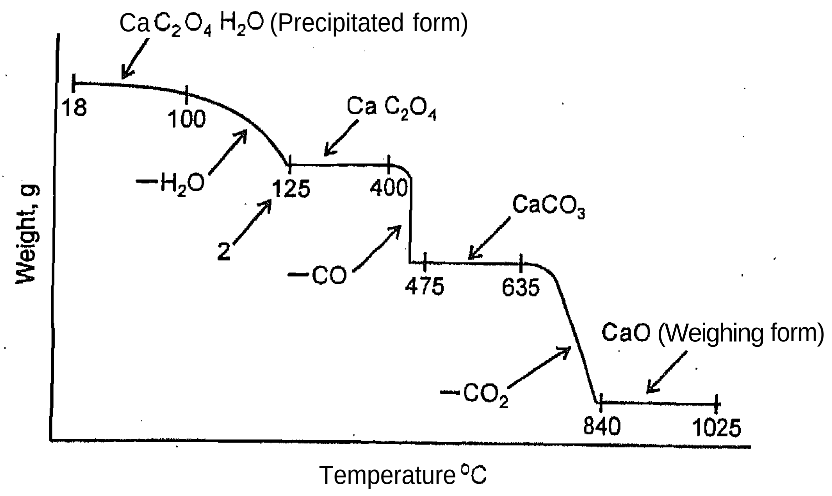

चित्र 16.1: कैल्सियम ऑक्सेलेट मोनोहाइड्रेट अवक्षेप का तापभारात्मक वक्र

चित्र 16.1 से प्रदर्शित होता है कि कैल्सियम ऑक्सेलेट मोनोहाइड्रेट 100°C तक लगभग स्थायी होता है। आगे गर्म करने पर 100°C से 225°C के बीच उसमें से जल का एक अणु निकल जाता है और निर्जल कैल्सियम ऑक्सेलेट प्राप्त होता है। 225°C से 400°C के बीच कैल्सियम ऑक्सेलेट स्थायी रहता है। आगे गर्म करने पर 400°C - 475°C के बीच उसमें से CO निकल जाता है और कैल्सियम कार्बोनेट प्राप्त होता है। 475°C से 635°C के बीच वह कैल्सियम कार्बोनेट के रूप में पाया जाता है और इस ताप-परास में ताप को नियंत्रित रखने पर उसे तोला जा सकता है। 635°C से ऊपर गर्म करने पर कैल्सियम कार्बोनेट में से CO_2 का एक अणु निकल जाता है और 840°C के आसपास कैल्सियम ऑक्साइड प्राप्त होता है। 840°C से ऊपर CaO स्थायी रहता है। प्रज्वलन प्रक्रिया इस प्रकार आयोजित की जाती है कि कैल्सियम ऑक्सेलेट अवक्षेप को 900-1000°C के आसपास बुन्सेन ज्वालक से गर्म किया जा सके ताकि CaO का स्थिर भार प्राप्त हो। CaO को तोलन रूप की भांति लिया जाता है। प्रज्वलन के दौरान भार-हानि के विभिन्न चरणों की व्याख्या समीकरण 16.6 में की गई है।

$$CaC_2O_4.H_2O \xrightarrow[100-225°C]{-H_2O} CaC_2O_4 \xrightarrow[400-475°C]{-CO} CaCO_3 \xrightarrow[635-840°C]{-CO_2} CaO \qquad (16.6)$$

16.3.4 परिकलन

भारमिति में प्राय: तोला गया पदार्थ वह नहीं होता जिसकी मात्रा निर्धारित करनी होती है। वह अन्य पदार्थ की रससमीकरणमितीय मात्रा होती है जिसे तोलन रूप में लिया जाता है। इस प्रकार नमूने के अवयव के निर्धारण में तोला गया पदार्थ स्वयं अवयव नहीं बल्कि उसका यौगिक होता है। तोलन रूप में प्रयुक्त यौगिक का भार ज्ञात होने पर निम्न सूत्र द्वारा अवयव की मात्रा (x) ज्ञात की जा सकती है:

$$x = Fw \qquad (16.7)$$

MAADHYAM IAS

जिसमें F को रूपांतर गुणक अथवा भारात्मक गुणक कहते हैं जो ज्ञातव्य अवयव के ग्राम तुल्यांक का तोले गए यौगिक के ग्राम तुल्यांक के साथ अनुपात होता है। यह संख्यात्मक मान होता है। उदाहरण के लिए क्लोरीन के निर्धारण में सिल्वर नाइट्रेट के साथ अवक्षेपण किया जाता है और सिल्वर क्लोराइड के रूप में तोला जाता है। इसका रूपांतर गुणक (F) इस प्रकार होगा:

$$F = \frac{\text{Cl का ग्राम तुल्यांक}}{\text{AgCl का ग्राम तुल्यांक}} - \frac{35.45}{143.32} = 0.2474$$

कभी-कभी नमूने में वांछित अवयव का भार प्रतिशत ज्ञात करना होना है जिसके लिए निम्नलिखित सूत्र प्रयुक्त किया जाता है:

$$P = \frac{x}{S} \times 100 \qquad (16.8)$$

जिसमें S नमूने का भार है।

समीकरणों 16.7 और 16.8 को संयुक्त करने पर

$$P = \frac{Fw}{S} \times 100 \qquad (16.9)$$

बोध प्रश्न

4) भारात्मक विश्लेषण में अवक्षेपण की आवश्यकता होती है। अच्छे अवक्षेपण के लिए कौन-कौन सी शर्तें अपेक्षित है?

....

....

....

....

....

16.4 भारात्मक विश्लेषण के अनुप्रयोग

नमूने के प्रमुख अवयव के रूप में मौजूद पदार्थ (तत्व अथवा यौगिक) के निर्धारण की भारमिति एक महत्वपूर्ण विधि है। यह निर्धारण करने की परिपूर्ण विधि है और इसमें मानकों के उपयोग की आवश्यकता नहीं होती है। रसायन विज्ञान में आवर्त सारणी के सभी तत्वों की भारात्मक विधियां उपलब्ध हैं। भारमिति द्वारा अकार्बनिक पदार्थों के अलावा अनेक कार्बनिक पदार्थों (जैस, दूध उत्पादों में लैक्टोस) को भी निर्धारित किया गया है। यद्यपि भारात्मक विधियां विशिष्ट नहीं होती हैं किन्तु पी.एच. नियंत्रित करने, प्रच्छादक मिलाने जैसे उपायों को अपनाकर उन्हें विशिष्ट बनाया जा सकता है। पर्यावरण में प्रमुख अवयवों के रूप में मौजूद आविषालु तत्वों का निर्धारण उपयुक्त भारात्मक प्रक्रियाओं द्वारा किया जा सकता है।

यहां पर्यावरणी विश्लेषण में महत्वपूर्ण कुछ तत्वों की सामान्य भारात्मक विधियों की संक्षेप में चर्चा की जाएगी।

MAADHYAM IAS

16.4.1 क्लोरीन, क्लोराइड के रूप में

सिल्वर आयन की हैलाइडों के साथ अभिक्रिया से अविलेय अवक्षेपक प्राप्त होते हैं। इस अभिक्रिया का उपयोग अविलेय क्लोराइड में क्लोरीन के निर्धारण के लिए किया जाता है। नाइट्रिक अम्ल मिले क्लोराइड विलयन में सिल्वर नाइट्रेट को आधिक्य में मिलाने से सिल्वर क्लोराइड का दही के समान सफेद अवक्षेप प्राप्त होता है:

$$Cl^- + Ag^+ \longrightarrow \underline{AgCl} \qquad (16.10)$$

आरंभ में सिल्वर क्लोराइड के बहुत छोटे और अंशत: संपुंजित कण बनते हैं। गर्म करने के बाद निलंबन को नाइट्रिक अम्ल और सिल्वर नाइट्रेट की उपस्थिति में कुछ समय तक स्थिर

रख दिया जाता है ताकि स्कंदन पूरा हो जाए और साथ ही काल प्रभावित भी हो जाए। अवक्षेप दही के समान भारी थक्केदार संहति के रूप में अवक्षेपित हो जाता है और लगभग स्वच्छ अधिप्लवी द्रव प्राप्त होता है। अवक्षेप को छानकर किंचित नाइट्रिक अम्ल युक्त जल से धो लिया जाता है। इस नाइट्रिक अम्ल वाले धावन विलयन की सान्द्रता 0.01M से अधिक नहीं होनी चाहिए। अम्ल, अवक्षेप के पेप्टीभवन को रोकता है और अवक्षेप को सुखाने पर वाष्पित हो जाता है। अतिरिक्त सिल्वर नाइट्रेट के पृथक्करण के लिए HCl की बूंदों से धावनों की जांच की जाती है। सिल्वर क्लोराइड के अवक्षेप को सरन्ध्र पोर्सिलेन के तुले सिन्टरित कांच अथवा गूच क्रूसिबल में छान लिया जाता है। उसे निस्यंदन पत्र में नहीं छाना जाता है क्योंकि बाद में उसके (पत्र के) भस्मीकरण से सिल्वर क्लोराइड अंशतः सिल्वर में अपचित हो जाएगा। अवक्षेप वाली क्रूसिबल को विद्युत् अवन में 120°C पर बार-बार गर्म किया जाता है ताकि स्थिर भार प्राप्त हो जाए। अंतर द्वारा सिल्वर क्लोराइड का भार प्राप्त किया जा सकता है। निम्न समीकरण द्वारा क्लोरीन/क्लोराइड का प्रतिशत परिकलित कर सकते हैं।

$$\text{Cl का \%} = \frac{35.45 \times \text{AgCl का भार}}{143.32 \times \text{नमूने का भार}} \times 100 \qquad (16.11)$$

सावधानी : सूर्य की रोशनी द्वारा सिल्वर क्लोराइड का अवक्षेप सिल्वर और क्लोरीन में अपघटित हो जाता है तथा कोलॉइडी सिल्वर के कारण बैंगनी रंग उत्पन्न होता है। इसलिए क्लोराइड के भारात्मक निर्धारण के लिए परिघटना का ध्यान रखना चाहिए।

अविलेय नमूने में क्लोराइड का निर्धारण करने के लिए नमूने को सोडियम कार्बोनेट के साथ उबालकर छान लिया जाता है। क्लोराइड निस्यंदन विलयन में चला जाता है जिसका सामान्य विधि से विश्लेषण कर लिया जाता है।

16.4.2 गंधक, सल्फेट के रूप में

सल्फेट के भारात्मक निर्धारण के लिए लगभग 0.01M HCl में बने गर्म सल्फेट विलयन में शीघ्रता के साथ किंचित आधिक्य में बेरियम क्लोराइड विलयन मिलाया जाता है। इन परिस्थितियों में प्राप्त अवक्षेप स्थूल कणों के रूप में होता है। हाइड्रोक्लोराइड की उपस्थिति से बेरियम कार्बोनेट के रूप में कार्बोनेट जैसे अपद्रव्यों का अवक्षेपण नहीं होता है और केवल सल्फेट अवक्षेपित होता है।

$$SO_4^{2-} + Ba^{2+} \longrightarrow BaSO_4 \qquad (16.12)$$

किसी सह-अवक्षेपण के कारण प्राप्त अवक्षेप संदूषित होता है। इसलिए भारमिति में सल्फेट का निर्धारण यथार्थ नहीं होता है। मुख्यतः संदूषक अपद्रव्य क्लोराइड और नाइट्रेट के बेरियम लवण होते हैं। यदि फेरिक आयरन और क्षारीय धातुएं विद्यमान हों तो उनका भी सल्फेटों के रूप में सह-अवक्षेपण हो जाता है। यह देखा गया है कि यदि $BaSO_4$ के अवक्षेप को निस्यंदन से पहले कुछ समय तक मातृद्राव में पाचन के लिए स्थिर रख दिया जाए तो सह-अवक्षेपित (अधिधारित) सोडियम सल्फेट पर्याप्त मात्रा में पृथक हो जाता है। इसलिए $BaSO_4$ के अवक्षेप का अधिमानतः माप के साथ में एक या दो घंटों तक पाचन किया जाता है।

पाचन के बाद उसे फनेल में लगे सूक्ष्म कण वाले भस्महीन निस्यंदक पत्र में छान लें। पहले स्वच्छ अधिप्लवी द्रव को निस्यंदक पत्र में निथार लें और बाद में अवक्षेप को डालें। बीकर की दीवारों पर चिपके अवक्षेप को पृथक करने के लिए पुलिसमैन का उपयोग करें। अवक्षेप को गुनगुने जल की अल्प मात्राओं से धो लें। धावनों में, आधिक्य अवक्षेपक, बेरियम क्लोराइड को पृथक करने के लिए सिल्वर नाइट्रेट विलयन की कुछ बूंदे मिलाकर जांच कर लें।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

कुछ समय तक खुले में रखकर अथवा लगभग 100°C ताप पर अवन में रखकर अवक्षेप को सुखा लें। अब एक तुली पोर्सिलेन क्रूसिबल में स्थानांतरित कर ज्वालक में गर्म करें। ताप धीरे-धीरे बढ़ाएं जब तक निस्यदंक पत्र झुलस न जाए। फिर सामान्य लाल ताप पर 10-15 मिनट तक प्रज्वलित करें। ठंडा होने दें। अवक्षेप को सल्फ्यूरिक अम्ल से आर्द्र करें और पुनः प्रज्वलित करें। ऐसा प्रज्वलन के समय कार्बन अपचयन से बने सल्फाइड को परिवर्तित करने के लिए किया जाता है।

$$BaSO_4 + 4C \longrightarrow BaS + 4CO \qquad (16.13)$$

क्रूसिबल को ठंडा करके जल शोषित्र में रख दें। तोल लें तथा स्थिर भार प्राप्त होने तक प्रज्वलन और शीतलन की प्रक्रिया दोहराते जाएं। निम्नलिखित समीकरणों द्वारा सल्फेट की मात्रा और गंधक का प्रतिशत परिकलित करें:

$$\text{सल्फेट की मात्रा} = \frac{96 \times BaSO_4 \text{ का भार}}{BaSO_4 \text{ का ग्राम तुल्यांक}}$$

$$\% S = \frac{32 \times BaSO_4 \text{ का भार}}{BaSO_4 \text{ का ग्राम तुल्यांक} \times \text{नमूने की मात्रा}} \times 100$$

16.4.3 फ़ास्फ़ोरस, फ़ास्फ़ेट के रूप में

आर्थोफ़ास्फ़ेट के रूप में विद्यमान फ़ास्फ़ोरस को अमोनियम क्लोराइड और मैग्नीशियम क्लोराइड के साथ अभिक्रिया के फलस्वरूप अमोनियामय विलयन से, मैग्नीशियम अमोनियम फ़ास्फ़ेट के रूप में अवक्षेपित किया जा सकता है। जिसे प्रज्वलन के बाद मैग्नीशियम पायरोफ़ास्फ़ेट के तोलन में परिवर्तित किया जाता है।

संबंधित अभिक्रियाएं नीचे दी गई हैं:

$$PO_4^{3-} + NH_4^+ + Mg^{2+} + 6H_2O \rightarrow MgNH_4PO_4.6H_2O \qquad (16.14)$$

$$2(MgNH_4PO_4.6H_2O) \xrightarrow{\text{प्रज्वलन}} Mg_2P_2O_7 + 2NH_3\uparrow + 13H_2O\uparrow \qquad (16.15)$$

कुछ कीटनाशियों में फ़ास्फ़ोरस, फ़ास्फाइड के रूप में होता है। फ़ास्फाइड को पहले ऑक्सीकरण द्वारा आर्थोफ़ास्फ़ेट में परिवर्तित किया जाता है और फिर ऊपर दी गई विधि से अवक्षेपित किया जाता है।

कैल्सियम, लोहा आदि व्यतिकारी पदार्थों की उपस्थिति में उनके पृथक्करण के बाद ही मैग्नीशियम अमोनियम फ़ास्फ़ेट का अवक्षेपण किया जाना चाहिए।

सामान्यता प्रयुक्त एक प्रक्रिया में व्यतिकारी तत्वों से पृथक करने के लिए पहले फ़ास्फ़ोरस का अमोनियम फ़ास्फ़ोमॉलिब्डेट के रूप में अवक्षेपण किया जाता है और प्राप्त अवक्षेप को अमोनिया में घोलकर पहले की भांति मैग्नीशियम अमोनियम फ़ास्फ़ेट के रूप में अवक्षेपित कर लिया जाता है। अमोनियम फ़ास्फ़ोमॉलिब्डेट का अवक्षेपण (1-1.5M) नाइट्रिक अम्ल विलयन में किया जाता है। हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और सल्फ़्यूरिक अम्ल का उपयोग नहीं किया जाता है क्योंकि इन अम्लों की उपस्थिति में अवक्षेप की विलेयता बढ़ जाती है।

एक अन्य प्रक्रिया में व्यतिकारक के पृथक्करण के लिए प्रच्छादक (जैसे सिट्रेट) का उपयोग किया जाता है। इसमें कैल्सियम और अन्य धातुएं विलयन में रह जाती हैं तथा फ़ास्फ़ोरस, मैग्नीशियम अमोनियम फ़ास्फ़ेट के रूप में अवक्षेपित हो जाता है। यह प्रक्रिया पहली की अपेक्षा द्रुत है।

MAADHYAM IAS

ऊपर वर्णित प्रक्रियाओं से प्राप्त मैग्नीशियम अमोनियम फ़ास्फ़ेट के अवक्षेप को किसी सघन संव्यूतित निस्यंदक पत्र में छान लिया जाता है। अवक्षेप को अमोनियामय जल से धोकर चार घंटे तक अथवा रातभर स्थिर रहने दें। अवक्षेप सहित निस्यंदक पत्र को तुली हुई क्रूसिबल में स्थानांतरित करें। क्रूसिबल को पहले गर्म करें ताकि कार्बन जल जाए और फिर लगभग 1100°C पर प्रज्वलित करें। क्रूसिबल को ठंडा करके जलशोषित्र में रख दें और तोल लें। स्थिर भार प्राप्त होने तक प्रज्वलन और शीतलन की प्रक्रिया दोहराते जाएं। उपयुक्त समीकरण द्वारा फ़ास्फ़ोरस अथवा P_2O_5 का प्रतिशत ज्ञात करें।

$$\%P_2O_5 = \frac{P_2O_5 \text{ का ग्राम अणुभार} \times Mg_2P_2O_7 \text{ का भार}}{Mg_2P_2O_7 \text{ का ग्राम अणु भार} \times \text{नमूने का भार}} \times 100$$

बोध प्रश्न

5) यदि सिल्वर क्लोराइड को सूर्य की रोशनी में उद्भासित कर दिया जाए तो क्या होगा?

....

....

....

....

....

16.5 अनुमापनी विश्लेषण

अनुमापनी (आयतनमितीय) विश्लेषण में ज्ञात सान्द्रता के अनुमापक T को ब्यूरेट में लेकर उसे बीकर अथवा शंक्वाकार फ्लास्क में रखे अभिकारक पदार्थ R में मिलाया जाता है। अनुमापन के दौरान अनुमापक मिलाने पर अभिकारक पदार्थ का लगातार उपभोग होता जाता है और उत्पाद प्राप्त होते हैं। जब रससमीकरणमितीयत: अनुमापक की तुल्यांक मात्राएं अभिकारक पदार्थ की तुल्यांक मात्राओं के बराबर होती है। तो इस बिन्दु को तुल्यता बिन्दु कहते हैं जिसका संकेत सूचक द्वारा प्राप्त होता है। सूचक, तुल्यता बिन्दु पर रंग-परिवर्तन कर देता है। तुल्यता बिन्दु पर प्रयुक्त अनुमापक का आयतन ब्यूरेट में पढ़ लिया जाता है तथा अभिकारक पदार्थ की सान्द्रता/मात्रा ज्ञात करने के लिए परिकलन किया जाता है।

अनुमापनमिति की मूल आवश्यकताएं इस प्रकार हैं:

- अभिकारक पदार्थ (R) की अनुमापक (T) के साथ ठीक-ठाक रससमीकरणमिति होनी चाहिए।
- अभिक्रिया-दर तीव्र होनी चाहिए।
- मुख्य अभिक्रिया व्यतिकरणों से मुक्त होनी चाहिए।
- तुल्यता बिन्दु निर्धारित करने के लिए उपयुक्त सूचक उपलब्ध होना चाहिए।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

किसी अनुमापन में तुल्यता बिन्दु (equivalence point) वह बिन्दु होता है जिस पर अनुमापक की रससमीकरणमितीय मात्रा, अभिकारक में मिलाई गई हो। जबकि अनुमापन में अंत्य बिन्दु (endpoint) वह बिन्दु होता है जिस पर सूचक, तंत्र, दृश्य अथवा यंत्रीय, अनुमापन की समाप्ति का संकेत देता है। आदर्श विलयन में अंत्य बिन्दु और तुल्यता बिन्दु को संपाती होना चाहिए। जब तुल्यता बिन्दु के पहले और बाद में सूचक अभिक्रिया करता है तो अंत्य बिन्दु और तुल्यता बिन्दु संपाती नहीं होते हैं और अनुमापन त्रुटि उत्पन्न होती है जिसके लिए सूचक रिक्त संशोधन की आवश्यकता होती है। तुल्यता बिन्दु और अंत्य बिन्दु के बीच प्रयुक्त

अनुमापक की मात्राओं के अंतर से अनुमापन त्रुटि परिकलित की जाती है। उसे प्राय: अनुमापित पदार्थ की तुल्यांकों की संख्या के प्रतिशत में व्यक्त किया जाता है।

अनुमापन वक्र

अनुमापन वक्र, अनुमापक की मात्रा अथवा आयतन के सम्मुख क्रांतिक सान्द्रता चर के लघुगणक का आलेख होता है। तुल्यता बिन्दु के आसपास क्रांतिक सान्द्रता चर में बहुत परिवर्तन दिखाई देता है। यह परिवर्तन तुल्यता बिन्दु के निर्धारण में सहायक होता है। अनुमापन वक्र में अंत्य बिन्दु की तीक्ष्णता में अभिकारक (R) और अनुमापक (T) की सान्द्रता और स्वभाव के अनुसार भिन्नता होती है।

दृश्य अनुमापन में ठीक प्रकार चयन किए गए सूचक की अल्प मात्रा मिलाने से तुल्यता बिन्दु के समीप रंग-परिवर्तन होता है और इस प्रकार अंत्य बिन्दु प्राप्त किया जा सकता है।

16.5.1 ग्राम तुल्यांक भार (जी.इ.डब्ल्यू.)

किसी रासायनिक अभिक्रिया में अभिकारक पदार्थों के परस्पर सामान्य संबंध निर्धारित करने के लिए तुल्यांक भार, ग्राम तुल्यांक और तुल्यांक शब्दों का प्रयोग किया जाता है। किसी रासायनिक अभिक्रिया में किसी परमाणु, आयन अथवा अणु के तुल्यांक को हाइड्रोजन के आधार पर किया जाता है। सामान्यतया किसी पदार्थ का ग्राम तुल्यांक भार उनके ग्रामों में तुल्यांक भार होता है जो 1.008 ग्राम हाइड्रोजन, 8.00 ग्राम ऑक्सीजन अथवा 35.5 ग्राम क्लोरीन के तदनुरूप होता है। जी.इ.डब्ल्यू. स्थिर नहीं होता है जबकि ग्राम अणुभार (जी.एम.डब्ल्यू.) स्थिर होता है। जी.इ.डब्ल्यू. उस अभिक्रिया पर निर्भर करता है जिसमें वह शामिल रहता है। यह संभव है कि किसी पदार्थ के एक से अधिक जी.इ.डब्ल्यू हों।

अम्ल-क्षारक अनुमापन में तुल्यांक भार परिकलित करना बहुत आसान है जो निम्न व्यापक समीकरण पर निर्भर करता है:

$$H^+ + OH^- \longrightarrow H_2O \qquad (16.16)$$

इस प्रकार एकप्रोटी अम्लों और एक अम्लीय क्षारकों में जी.इ.डब्ल्यू. और जी.एम.डब्ल्यू. बराबर होते हैं।

$$H^+ + Cl^- + Na^+ + OH^- \longrightarrow Na^+ + Cl^- + H_2O \qquad (16.17)$$

$$1 \text{ मोल } HCl \equiv 1 \text{ मोल } NaOH \equiv 1 \text{ मोल } H^+ \equiv 1 \text{ मोल } OH^-$$

$$HCl \text{ का जी.इ.डब्ल्यू.} = \frac{HCl \text{ का जी.इ.डब्ल्यू.}}{1} = \mathbf{36.5} \text{ ग्राम}$$

और $$NaOH \text{ का जी.इ.डब्ल्यू.} = \frac{NaOH \text{ का जी.इ.डब्ल्यू.}}{1} = 40.0 \text{ ग्राम}$$

MAADHYAM IAS

जलीय विलयन में H_2SO_4, प्रति अणु दो हाइड्रोजन आयन उत्पन्न करता है और उसका द्विप्रोटी अम्ल के रूप में अनुमापन किया जाता है। उसका जी.इ.डब्ल्यू, उसके जी.एम.डब्ल्यू का आधा होता है। फ़ास्फ़ोरस अम्ल का अनुमापन एकप्रोटी अथवा द्विप्रोटी अम्ल और कैल्सियम क्लोराइड की उपस्थिति में त्रिप्रोटी अम्ल के रूप में किया जाता है।

$$H_3PO_4 + OH^- \rightleftharpoons H_2PO_4^- + H_2O \qquad (16.18)$$

$$H_3PO_4 + 2OH^- \rightleftharpoons HPO_4^{-2} + 2H_2O \qquad (16.19)$$

$$H_3PO_4 + 3OH^- \rightleftharpoons PO_4^{-3} + 3H_2O \qquad (16.20)$$

16.18, 16.19 और 16.20 अभिक्रियाओं के बाद अनुमापनों में जी.इ.डब्ल्यू. का मान क्रमश: 1 जी.एम.डब्ल्यू, 1/2 जी.एम.डब्ल्यू. और 1/3 जी.एम.डब्ल्यू के बराबर होता है।

उदासीनीकरण अनुमापनों में अम्ल/क्षारक के जी.इ.डब्ल्यू के लिए एक सूत्र निर्धारित कर सकते है जैसा कि नीचे दिया गया है:

$$\text{जी.इ.डब्ल्यू. (अम्ल/क्षारक का)} = \frac{\text{जी.एम.डब्ल्यू.}}{\text{उदासीनीकरण में शामिल } H^+ \text{ की संख्या}}$$

ऑक्सीकरण-अपचयन अनुमापनों में जी.इ.डब्ल्यू को इलेक्ट्रॉनों की आवोगाद्रो संख्या अर्थात् 6.023×10^{23} e के आधार पर परिभाषित किया जा सकता है। ऑक्सीकरण-अपचयन, अभिक्रिया में, भाग लेने वाले पदार्थों के बीच इलेक्ट्रानों का पुनर्वितरण होता है। अपचायक में से कुछ इलेक्ट्रानों के निकल जाने से उसका ऑक्सीकरण हो जाता है। जबकि ऑक्सीकारक द्वारा कुछ इलेक्ट्रानों को ग्रहण करने से उसका अपचयन हो जाता है। उदाहरणार्थ निम्न अभिक्रिया में,

$$10FeSO_4 + 2KMnO_4 + 8H_2SO_4 \rightleftharpoons 5Fe_2(SO_4)_3 + 2MnSO_4 + K_2SO_4 + 8H_2O \qquad (16.21)$$

अथवा ठीक-ठीक रूप में

$$5Fe^{2+} + MnO_4^- + 8H^+ \longrightarrow 5Fe^{3+} + Mn^{2+} + 4H_2O \qquad (16.22)$$

नीचे दी गई ऑक्सीकरण की अर्ध अभिक्रिया के अनुसार Fe^{2+} आयन अपचायक के रूप में काम करता है और एक इलेक्ट्रॉन खोकर Fe^{3+} में ऑक्सीकृत हो जाता है।

$$Fe^{2+} \longrightarrow Fe^{3+} + e^- \qquad (16.23)$$

MnO_4 आयन ऑक्सीकारक के रूप में काम करता है और 5 इलेक्ट्रॉन ग्रहण कर Mn^{2+} में अपचित हो जाता है जैसा कि नीचे दी गई अपचयन की अर्ध अभिक्रिया में दिखाया गया है:

$$MnO_4^- + 8H^+ + 5e^- \longrightarrow Mn^{2+} + 4H_2O \qquad (16.24)$$

इस प्रकार जी.इ.डब्ल्यू. ज्ञात करने का आधार ऑक्सीकरण अवस्था में होने वाले परिवर्तन को निर्धारित करना अथवा अभिक्रिया में प्रति अणु स्थानांतरित इलेक्ट्रॉनों की संख्या निर्धारित करना है। इस प्रकार,

$$\text{जी.इ.डब्ल्यू (रेडॉक्स)} = \frac{\text{जी.एम.डब्ल्यू.}}{\text{प्रति अणु प्राप्त अथवा लुप्त इलेक्ट्रॉनों की संख्या}}$$

इस प्रकार उपयुक्त अर्धअभिक्रिया (16.23) के अनुसार, जब कि लोहे की ऑक्सीकरण अवस्था एक आयन के खो जाने से +2 से बदल कर +3 हो जाती है, फेरस सल्फेट का जी.इ.डब्ल्यू. इस प्रकार होगा:

$$FeSO_4.7H_2O \text{ का जी.इ.डब्ल्यू} = \frac{FeSO_4.7H_2O \text{ का जी.एम.डब्ल्यू}}{\text{लवण के प्रति अणु द्वारा खोए इलेक्ट्रानों की संख्या}}$$

$$= \frac{\text{जी.एम.डब्ल्यू}}{1}$$

$$= \text{जी.एम.डब्ल्यू.} = 278 \text{ ग्राम}$$

अर्धअभिक्रिया 16.24 में MnO_4^- प्रबल अम्लीय माध्यम में 5 इलेक्ट्रॉन ग्रहण करता है। अतः $KMnO_4$ का जी.इ.डब्ल्यू. इस प्रकार होगा:

MAADHYAM IAS

$$KMnO_4 \text{ का जी.इ.डब्ल्यू} = \frac{KMnO_4 \text{ का जी.एम.डब्ल्यू}}{5} = \frac{158}{5} = 31.6 \text{ ग्राम}$$

इस प्रकार रेडॉक्स अभिक्रियाओं में जी.इ.डब्ल्यू के परिकलन के लिए ऑक्सीकरण अथवा अपचयन की अर्धअभिक्रिया उत्तरदायी होती है।

'संकुलमितीय' और 'अवक्षेपण' अनुमापनों में जी.इ.डब्ल्यू. को सीधे अभिक्रिया समीकरण के रससमीकरणमिति के आधार पर निर्धारित किया जाता है। उदाहरण के लिए सिल्वर नाइट्रेट के साथ सायनाइड के संकुलमितीय अनुमापन में निम्न अभिक्रिया होती है:

$$Ag^+ + 2CN^- \longrightarrow Ag(CN)_2 \qquad (16.25)$$

सिल्वर का एक मोल सायनाइड के दो तुल्यांकों के संगत होता है और $AgNO_3$ का जी.इ. डब्ल्यू. उसके जी.एम.डब्ल्यू का 1/2 होगा।

जबकि सिल्वर नाइट्रेट के साथ क्लोराइड के अवक्षेपण अनुमापन में निम्न अभिक्रिया होती है:

$$Cl^- + Ag^+ \longrightarrow AgCl \qquad (16.26)$$

क्लोराइड का एक मोल सिल्वर के एक मोल के साथ अभिक्रिया करता है। इसलिए $AgNO_3$ का जी.इ.डब्ल्यू. उसके जी.एम.डब्ल्यू. के बराबर होता है।

बोध प्रश्न

6) उपयुक्त ऑक्सीकारक द्वारा $K_4Fe(CN)_6.3H_2O$ के ऑक्सीकरण से $K_3Fe(CN)_6$ प्राप्त होता है। इस अभिक्रिया में $K_4Fe(CN)_6.3H_2O$ का जी.इ.एम. परिकलित कीजिए।

....

....

....

....

....

16.5.2 परिकलन

आजकल अनुमापन विश्लेषण का परिकलन में मोलरता का अधिकतर उपयोग करते हैं। इसकी अधिक जानकारी के लिए CHE-01 की इकाई-1 देखें।

MAADHYAM IAS

अनुमापक और अभिकारक के आयतनों से अज्ञात पदार्थ की मात्रा ज्ञात करने के लिए परिकलनों की आवश्यकता होती है। परिकलन अनुमापकों की नार्मलताओं पर आधारित विधियों अथवा अणुओं के संयोजन अनुपात के अनुसार किए जाते हैं।

i) **नार्मलताओं के उपयोग से :** आयतनमितीय निर्धारण में परिकलनों के लिए प्रयुक्त सामान्य विधि विलयन नार्मलता के उपयोग पर आधारित है। माना पिपेट द्वारा लिए गए अभिकारक का आयतन V_1 और उसकी नार्मलता N_1 है। माना तुल्यता बिन्दु पर अनुमापक का V_2 आयतन प्रयुक्त होता है, जैसा कि ब्यूरेट के पठन से ज्ञात होता है और माना अनुमापक की नार्मलता N_2 है।

अभिकारक (बनाम) अनुमापक

$$N_1V_1 = N_2V_2$$

अथवा $$N_1 = \frac{N_2V_2}{V_1}$$

इस प्रकार ऊपर दिए गए समीकरण द्वारा अभिकारक की नॉर्मलता N_1, परिकलित की जा सकती है। नार्मलता मान को अभिकारक के जी.इ.डब्ल्यू द्वारा गुणा करने पर ग्राम प्रति dm^3 में सान्द्रता प्राप्त होगी।

ii) **अणुओं के संयोजन अनुपात के उपयोग से :** इस विधि में रासायनिक अभिक्रिया की रससमीकरणमिति के साथ मोल आधार पर परिकलन किए जाते हैं।

16.6 अनुमापनी विश्लेषण का विभाजन

सूचक आधारित अनुमापनों को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है:

i) उदासीनीकरण (अथवा अम्ल-क्षारक) अनुमापन

ii) ऑक्सीकरण-अपचयन (अथवा रेडॉक्स) अनुमापन

iii) संकुलमितीय अनुमापन

iv) अवक्षेपण अनुमापन

16.6.1 उदासीनीकरण अनुमापन

उदासीनीकरण अनुमापन अथवा अम्ल-क्षारक अनुमापन में मूलत: H^+ और OH^- के परस्पर अभिक्रिया से H_2O प्राप्त होता है, अर्थात्

$$H^+ t\ OH^- \longrightarrow + H_2O \qquad \textbf{(16.27)}$$

इन अनुमापनों का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया जा सकता है, जैसे

क) प्रबल अम्ल का प्रबल क्षारक द्वारा अनुमापन

ख) दुर्बल अम्ल का प्रबल क्षारक द्वारा अनुमापन

ग) प्रबल क्षारक का प्रबल अम्ल द्वारा अनुमापन

घ) दुर्बल क्षारक का प्रबल अम्ल द्वारा अनुमापन

ड़) अति दुर्बल अम्लों के लवणों का प्रबल अम्लों के साथ तथा अति दुर्बल क्षारकों के लवणों का प्रबल क्षारकों के साथ अनुमापन किया जा सकता है। कभी-कभी इस प्रकार के अनुमापनों के लिए क्रमश: अम्लमिति और क्षारमिति शब्दों का उपयोग भी किया जा सकता है। किन्तु ब्रन्सटेद संकल्पना का उपयोग करना हो तो इस प्रकार का वर्गीकरण निरर्थक होता है। क्योंकि ब्रन्सटेद संकल्पना के अनुसार दुर्बल अम्ल का लवण दुर्बल क्षारक होता है और दुर्बल क्षारक का लवण दुर्बल अम्ल होता है।

च) बहु प्रोटी अम्ल अथवा बहु अम्लीय क्षारक का पदश: अनुमापन

उदासीनीकरण अनुमापनों का अध्ययन उनके अनुमापन वक्रों द्वारा किया जा सकता है। ये वक्र, समुचित सान्द्रता चर, पी.एच., को मिलाए गए अनुमापक, की मात्रा अथवा आयतन के सम्मुख आलेखित करने से प्राप्त होते हैं। अनुमापन वक्र में, विलयन पी.एच., तुल्यता बिन्दु के समीप बहुत परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। अन्त्य बिन्दु की पहचान सूचक की मदद से की जाती है जो तुल्यता बिन्दु के पी.एच. पर रंग परिवर्तन प्रदर्शित करता है। सूचक का चयन अम्ल और क्षारक की आपेक्षिक प्रबलता तथा सूचक के पी.एच. परास पर निर्भर करता है। उपयुक्त सूचक के चयन के लिए उसका पी.एच. परास, तुल्यता बिन्दु के समीप अनुमापन वक्र के खड़े ढाल में होना चाहिए। अब हम अनुमापन वक्रों की सहायता से कुछ उदासीनीकरण अनुमापन पद्धतियों पर विचार करेंगे।

MAADHYAM IAS

- **प्रबल अम्ल का प्रबल क्षारक के साथ अनुमापन**

'प्रबल अम्ल' अथवा 'प्रबल क्षारक' शब्दों का उपयोग HCI, HNO_3, NaOH और KOH आदि पदार्थों के लिए किया जाता है जो जलीय विलयन 100 प्रतिशत वियोजित रहते हैं। आइए 0.1N HCl के 25 मिलि का 0.1 N NaOH के साथ अनुमापन पर विचार करें।

$$HCl + NaOH \rightleftharpoons H_2O + Na^+ + Cl^- \quad (16.28)$$

अथवा $$H_3O^+ + Cl^- + Na^+ + OH^- \rightleftharpoons 2H_2O + Na^+ + Cl^- \quad (16.29)$$

अथवा केवल $$H^+ + OH^- \rightleftharpoons H_2O \quad (16.30)$$

हम अनुमापन के भिन्न बिन्दुओं पर $[H^+]$ अथवा पी.एच. मान निर्धारित कर सकते हैं। भिन्न-भिन्न बिन्दुओं पर अथवा NaOH की क्रमिक वृद्धियों पर पी.एच. परिकलित करने के बाद पी.एच. को NaOH के अनुपात के साथ आलेखित करने से एक वक्र प्राप्त होता है चित्र 16.2(क)। आलेख से ज्ञात होता है कि जब तक लगभग 80% उदासीनीकरण पूरा न हो जाए विलयन के पी.एच. में पर्याप्त वृद्धि नहीं होती है। तुल्यता बिन्दु (90% से 102% उदासीनीकरण) के समीप पी.एच. में तीव्र परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है और पी.एच.4 से पी.एच. 10 के बीच 6-पी.एच. यूनिटों का अंतर दिखाई देता है जिसके फलस्वरूप इस क्षेत्र में वक्र का खड़ा भाग बन जाता है। इस अनुमापन के लिए अम्ल-क्षारक सूचक उपयुक्त रहते हैं जो अनुमापन वक्र के खड़े भाग में किसी बिन्दु पर रंग-परिवर्तन प्रदर्शित करते हैं। सर्वोत्तम सूचक वह होगा जिसका रंग-परिवर्तन, तुल्यता बिन्दु पी.एच. मान के अधिक से अधिक समीप हो और रंग-परिवर्तन अनुमापन वक्र के उस भाग में हो जहां अनुमापक आयतन के साथ पी. एच. परिवर्तन दर बहुत अधिक हो। ऐसे अनुमापनों के लिए मेथिल आरेन्ज अथवा ब्रोमोथाइमॉल ब्लू अथवा फीनॉल्फथेलिन का सूचक के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

- **दुर्बल अम्ल का प्रबल क्षारक के साथ अनुमापन**

इस प्रकार के अनुमापनों में किसी दुर्बल अम्ल HA का प्रबल क्षारक के साथ अनुमापन पर विचार किया जा सकता है। उदाहरण के लिए 0.1N CH_3COOH बनाम 0.1N NaOH के अनुमापन पर विचार कर सकते हैं। ऐसे पी.एच. अनुमापन वक्र का आकार चित्र 16.2(ख) की भांति होगा। अनुमापन वक्र से स्पष्ट है कि खड़ा भाग लगभग 3 पी.एच. यूनिट (पी.एच.7 से पी.एच. 10) तक सीमित रह गया है और तुल्यता बिन्दु 7 it बहुत ऊपर प्राप्त होगा। V_{eq} से जाने वाली ऊर्ध्व रेखा, मेथिल आरेन्ज के संक्रमण परास के लिए अनुमापन वक्र के खड़े भाग में स्थित नहीं हैं इसलिए ऐसे अनुमापन के लिए मेथिल आरेन्ज का सूचक के रूप में उपयोग नहीं हो सकता है। दूसरी ओर V_{eq} से जाने वाली ऊर्ध्व रेखा फीनॉल्फथेलिन के संक्रमण परास के लिए अनुमापन वक्र के खड़े भाग में स्थित है। इसलिए ऐसे अनुमापन के लिए फॉनॉल्फथेलिन उपयुक्त सूचक होगा।

MAADHYAM IAS

- **प्रबल क्षारक का प्रबल अम्ल के साथ अनुमापन**

इसके लिए आइए HCl विलयन का NaOH विलयन के साथ अनुमापन पर विचार करें। पी. एच. अनुमापन वक्र का आरेख चित्र 16.2(ग) की भांति होगा। प्रबल क्षारक के साथ प्रबल अम्ल के अनुमापन वक्र में तुल्यता बिन्दु के समीप खड़ा भाग बहुत बड़ा है। (चित्र 16.2(क) से तुलना करें)। इसमें तुल्यता बिन्दु पी.एच. 7 माना है। सभी सामान्य प्रबल क्षारकों के साथ सामान्य प्रबल अम्लों के अनुमापनों के लिए यह मान सर्वनिष्ठ है अथवा प्रतिलोमत:। अनुमापन वक्र के खड़े भाग में जिन सूचकों का संक्रमण रंग-परिवर्तन होता है उनका उपयोग अन्त्य बिन्दु की पहचान के लिए किया जा सकता है। अत: इस प्रकार के अनुमापनों के लिए मेथिल आरेन्ज, अथवा ब्रोमोथाइमॉल ब्लू अथवा फीनॉल्फथेलिन का चयन किया जा सकता है।

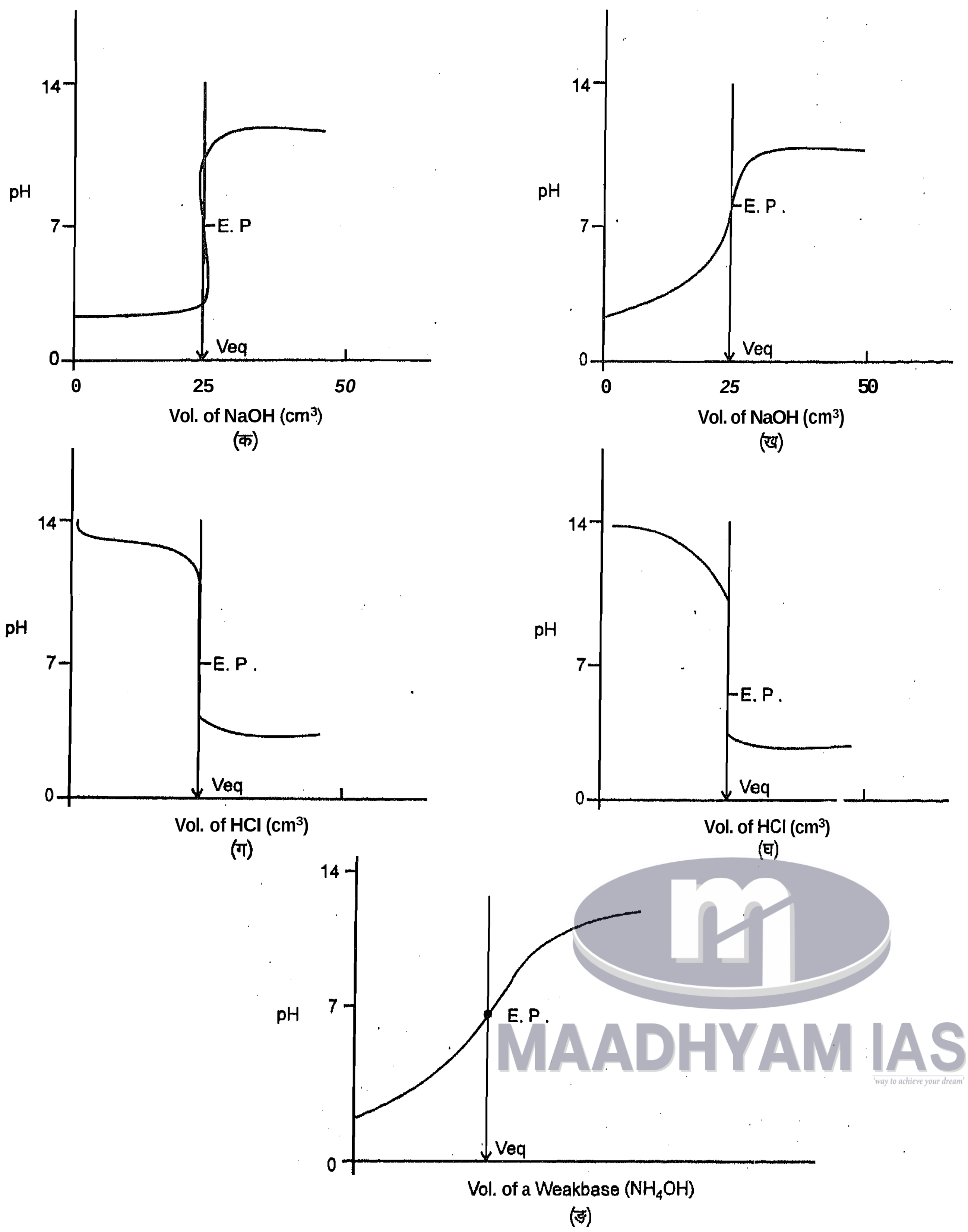

MAADHYAM IAS

चित्र 6.2: उदासीनीकरण अनुमापन के वक्र

- **दुर्बल क्षारक का प्रबल अम्ल के साथ अनुमापन**

ऐसे अनुमापनों के अध्ययन के लिए अमोनियम हाइड्रॉक्साइड बनाम हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के अनुमापन पर विचार किया जाएगा। इस अनुमापन के लिए प्राप्त वक्र चित्र 16.2(घ) में दिया गया है। अनुमापन वक्र से स्पष्ट है कि इसमें एक संकीर्ण खड़ा भाग प्राप्त होता है और पी.एच. मान 7 से बहुत नीचे तुल्यता बिन्दु स्थित है। अत: इस अनुमापन के लिए मेथिल आरेन्ज उपयुक्त सूचक होगा जिसका पी.एच. परास 3.0 - 4.4 होता है।

- **दुर्बल अम्ल का दुर्बल क्षारक के साथ अनुमापन और विलोमत:**

इस प्रकार के अनुमापनों के लिए अमोनियम हाइड्रॉक्साइड के साथ ऐसीटिक अम्ल के अनुमापन पर विचार कर सकते हैं। ऐसे अनुमापन के लिए पी.एच. अनुमापन वक्र चित्र 16.2(ङ.) में दिया गया है। अनुमापन वक्र से स्पष्ट है कि तुल्यता बिन्दु के समीप पी.एच. परिवर्तन तीक्ष्ण नहीं है। तुल्यता बिन्दु के पहले और बाद में पूरे अनुमापन में पी.एच. मान में धीरे-धीरे परिवर्तन होता है। अत: सूचक रंग-परिवर्तन विधियों द्वारा तुल्यता बिन्दु की स्थिति का निर्धारण त्रुटि मुक्त नहीं हो सकता है। इसलिए इस प्रकार के अनुमापन संभव नहीं है।

अपितु अनुमापक का चयन अपनी पसन्द है। दुर्बल अम्ल का अनुमापन करने के लिए प्रबल क्षारक का तथा दुर्बल क्षारक का अनुमापन करने के लिए प्रबल अम्ल को अनुमापक के रूप में प्रयुक्त करना चाहिए।

16.6.2 ऑक्सीकरण-अपचयन (अथवा रेडॉक्स) अनुमापन

गुणात्मक विश्लेषण में होने वाली अभिक्रियाओं में बहुधा ऑक्सीकरण-अपचयन प्रक्रियाएं होती हैं। इनका अनुमापनमिति में विशेष महत्व है। ऑक्सीकरण-अपचयन प्रक्रमों में इलेक्ट्रॉनों का स्थानांतरण होता है। जिस अभिक्रिया में स्पीशीज़ (परमाणु, आयन अथवा अणु) इलेक्ट्रॉनों को देते हैं, उसे ऑक्सीकरण कहते हैं। उदाहरण के लिए आयरन (II) में से इलेक्ट्रॉन के निकलने से आयरन (III) प्राप्त होता है:

$$Fe^{2+} \longrightarrow Fe^{3+} + e^- \quad \text{ऑक्सीकरण} \qquad (16.31)$$

जिस प्रक्रिया में स्पीशीज़ (परमाणु, आयन अथवा अणु) इलेक्ट्रॉनों को प्राप्त करते हैं उसे अपचयन कहते हैं। उदाहरण के लिए क्लोरीन 2 इलेक्ट्रॉनों को प्राप्त करके क्लोराइड आयन में अपचित हो जाता है:

$$Cl_2 + 2e^- \longrightarrow 2Cl^- \quad \text{अपचयन} \qquad (16.32)$$

MAADHYAM IAS

रेडॉक्स सूचक

रेडॉक्स सूचकों को दो समूहों में विभाजित किया जाता है:

1) वे पदार्थ जो दृश्य रंग-परिवर्तन के लिए या तो ऑक्सीकारक के साथ अथवा अपचायक के साथ अभिक्रिया करते हैं। उदाहरण के लिए आयोडिन के लिए स्टार्च का और फेरिक आयरन के लिए थायोसानेट का सूचक के रूप में प्रयोग।

2) वे पदार्थ जो स्वयं रेडाक्स युग्म होते हैं और उनके दो भिन्न रंग होते हैं, एक ऑक्सीकृत रूप के लिए और दूसरा अपचित रूप के लिए।

पहले प्रकार के सूचकों का सीमित प्रयोजन होता है और उनकी चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है। किन्तु दूसरे प्रकार के सूचकों का बहुत व्यावहारिक महत्व है।

कुछ रेडॉक्स सूचकों को सारणी 16.1 में सूचीबद्ध किया गया है।

सारणी 16.1: रेडॉक्स सूचकों की सूची तथा ऑक्सीकृत और अपचित रूपों में उनके रंग

नाम	रंग	
	ऑक्सीकृत रूप	**अपचित रूप**
फेरोइन	नीला	नारंगी-लाल
डाइफेनिलऐमीन	जाम्ब	रंगहीन
मेथिलीन ब्लू	नीला	रंगहीन
डाइफेनिलऐमीन-सल्फोनिक अम्ल	बैंगनी	रंगहीन

अनुमापक के रूप में $KMnO_4$ का उपयोग

पोटैशियम परमैंगनेट सबसे प्रारंभिक आयतनमापी अभिकर्मकों में है। विभिन्न ऑक्सीकारकों में इसका सबसे अधिक उपयोग होता है क्योंकि: (i) यह प्रबल ऑक्सीकारक है (ii) सस्ता है, और (iii) अधिकांश अनुमापनों में सूचक की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि पोटैशियम परमैंगनेट का तीव्र रंग अन्त्य बिन्दुओं की पहचान के लिए पर्याप्त होता है।

उपयुक्त लाभों के अतिरिक्त, $KMNO_4$ की कुछ सीमाएं भी हैं: (1) क्लोराइड आयन की उपस्थिति में इस अभिकर्मक का उपयोग नहीं किया जा सकता है जो $KMNO_4$ के साथ अभिक्रिया से Cl_2 में ऑक्सीकृत हो जाता है। (ii) कभी-कभी पार्श्व अभिक्रिया हो जाती है और (iii) $KMNO_4$ विलयनों का समय-समय पर मानकीकरण करना पड़ता है क्योंकि सूर्य की रोशनी और धूल कणों की उपस्थिति में इसका सीमित स्थायित्व होता है।

परमैंगनेट आयन की अभिक्रियाएं:

पोटैशियम परमैंगनेट का तीन भिन्न परिस्थितयों में ऑक्सीकारक के रूप में उपयोग किया जाता है।

i) प्रबल अम्लीय विलयनों में
ii) उदासीन, किंचित अम्लीय अथवा किंचित क्षारकीय, विलयनों में
iii) प्रबल क्षारीय विलयनों में

नीचे प्रत्येक प्रकार के कुछ उदाहरणों की चर्चा की गई है:

1) **प्रबल अम्लीय विलयनों में** : अनुमापन, सल्फ्यूरिक अम्ल के 0.1N अथवा उच्च सान्द्रताओं में (अर्थात् पी.एच. ≤ 1) किए जाते हैं। इन परिस्थितियों में परमैंगनेट आयन प्रबल ऑक्सीकारक की भांति काम करता है और Mn^{2+} में अपचित हो जाता है। अर्ध-अभिक्रिया इस प्रकार होती है:

$$MnO_4^- + 8H^+ + 5e^- \longrightarrow Mn^{2+} + 4H_2O \qquad (16.33)$$

अनेक पदार्थों का ऑक्सीकरण प्रबल अम्लीय विलयनों में तीव्र गति से होता है। किन्तु ऑक्सेलिक अम्ल के लिए उच्च ताप और As (iii) के लिए उत्प्रेरक की आवश्यकता होती है। अम्लीय विलयन में Fe^{2+} का तीव्र गति से Fe^{3+} में ऑक्सीकरण हो जाता है।

$$Fe^{2+} \longrightarrow Fe^{3+} + e^- \qquad (16.34)$$

MAADHYAM IAS

समीकरणों (16.33) और (16.34) के संयोजन से पूर्ण अभिक्रिया प्राप्त होती है जिसमें इलेक्ट्रानों की संख्या निरसित हो जाती है, इस प्रकार,

$$5Fe^{2+} + MnO_4^- + 8H^+ \rightleftharpoons 5Fe^{3+} + Mn^{2+} + 4H_2O \quad (16.35)$$

यह अनुमापन प्रबल अम्लीय माध्यम में किया जाता है ताकि रेडॉक्स अभिक्रिया पूर्ण हो जाए।

2) **दुर्बल अम्लीय, उदासीन अथवा किंचित क्षारीय विलयनों में (अर्थात् पी.एच. 4–9):** ऐसे विलयनों में परमैंगनेट का मैगनीज डाइऑक्साइड में अपचयन हो जाता है जैसा कि नीचे की अर्धअभिक्रिया में दिखाया गया है:

$$MnO_4^- + 4H^+ + 3e^- \longrightarrow MnO_2 + 2H_2O \quad (16.36)$$

उपर्युक्त अर्ध अभिक्रिया के अनुसार $KMnO_4$ के ऑक्सीकरण द्वारा निर्धारित किए जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण पदार्थ हैं: CN^- से CNO, SO_3^{2-} से SO_4^{2-}, $S_2O_3^{2-}$ से SO_4^{2-} और Mn^{2+} से MnO_2

3) **प्रबल क्षारीय माध्यम में, अर्थात् पी.एच. >12:** प्रबल क्षारीय विलयनों में एक इलेक्ट्रॉन के स्थानांतरण से परमैंगनेट का मैंगनेट आयन में अपचयन हो जाता है। अर्धअभिक्रिया इस प्रकार लिखी जा सकती है:

$$MnO_4^- + e^- \longrightarrow MnO_2^{2-} \quad (16.37)$$

अथवा $$MnO_4^- + OH^- \longrightarrow MnO_2^{2-} + OH^- \quad \mathbf{(16.38)}$$

प्रबल क्षारीय माध्यम में $KMnO_4$ द्वारा अनेक कार्बनिक यौगिकों का निर्धारण किया जा चुका है।

अनुमापक के रूप में $K_2Cr_2O_7$ का उपयोग

पोटैशियम डाइक्रोमेट का नित्यप्रति अनेक अनुमापनों में उपयोग किया जाता है। जो कम कीमत पर प्राथमिक मानक कोटि उत्पाद के रूप में उपलब्ध रहता है। जल में इसका विलयन अत्यंत स्थायी होता है। जहां $KMnO_4$ का उपयोग न हो सके वहां इसका उपयोग Cl^- की उपस्थिति में किया जा सकता है। डाइक्रोमेट के विलयनों का पीला रंग होता है किन्तु अंत्य बिन्दु के निर्धारण के लिए यह पर्याप्त तीव्र नहीं होता है। डाइफेनिलएमीन सल्फोनिक अम्ल का सूचक के रूप में आमतौर पर प्रयोग किया जाता है। अम्लीय विलयन में परमैंगनेट की अपेक्षा डाइक्रोमेट दुर्बल ऑक्सीकारक है। डाइक्रोमेट आयन का त्रिसंयोजी क्रोमियम में रूपांतरण हो जाता है और अर्धअभिक्रिया इस प्रकार होती है।

$$Cr_2O_7^{2-} + 14H^+ + 6e^- \longrightarrow 2Cr^{3+} + 7H_2O \quad (16.39)$$

प्रायः आयरन (II) के निर्धारण के लिए अम्लीय विलयन में पोटैशियम डाइक्रोमेट का उपयोग किया जाता है जिसमें अर्धअभिक्रिया (16.34) का अनुसरण किया जाता है। संपूर्ण रेडॉक्स अभिक्रिया इस प्रकार होती है:

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

$$6Fe^{2+} + Cr_2O_7^{2-} + 14H^+ \rightleftharpoons 6Fe^{3+} + 2Cr^{3+} + 7H_2O \quad (16.40)$$

प्रत्यक्ष अनुमापन द्वारा यूरेनियम +4 को +6 ऑक्सीकरण अवस्था में ऑक्सीकृत करने के लिए पोटैशियम डाइक्रोमेट का उपयोग किया जाता है। जिसे निम्न अर्धअभिक्रिया द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है:

$$UO_2^{2+} + H_2O \rightleftharpoons UO_3^{2+} + 2H^+ + 2e^- \quad (16.41)$$

प्रबल अम्लीय माध्यम और उच्च ताप पर पोटैशियम डाइक्रोमेट का उपयोग अनेक कार्बनिक यौगिकों के आक्सीकरण के लिए किया जा सकता है। ये अभिक्रियाएं बहुत जटिल होती हैं।

आयोडीन के उपयोग द्वारा अनुमापन

क्लोरीन और ब्रोमीन के समान आयोडीन भी ऑक्सीकारक की भांति क्रिया करता है।

$$I_2 + 2e^- \longrightarrow 2I^- \qquad (16.42)$$

यद्यपि यह एक दुर्बल ऑक्सीकारक है अपितु इसकी वरणात्मकता तथा स्टार्च सूचक के साथ तीक्ष्ण अंत्य बिन्दु प्रदर्शित करने के कारण अनुमापनात्मक विश्लेषण में इसका उपयोग सर्वतोमुखी होता है। आयोडीन, थायोसल्फेट को टेट्राथायोनेट में, सल्फाइट को सल्फेट में और आर्सेनाइट को आर्सेनेट में ऑक्सीकृत कर देता है।

आयोडीन का उपयोग करने वाली विधियों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है:

1) **प्रत्यक्ष विधियां :** इन विधियों में किसी प्रबल अपचायक के उदासीन विलयन अथवा किंचित क्षारकीय विलयन के अनुमापन के लिए आयोडीन के मानक विलयन का उपयोग किया जाता है। इन विधियों को आयोडीनमितीय विधियां कहते हैं। आयोडीन पर्याप्त शुद्ध अवस्था में पाई जाती है किन्तु जल में अल्प विलेय होती है। इसलिए शुद्ध जल में इसका मानक विलयन नहीं बनाया जा सकता है। किन्तु आयोडिन, पोटैशियम आयोडाइड वाले जल में आसानी से घुल जाता है और ट्राइआयोडाइड संकुल बनाता है:

$$KI + I_2 \rightleftharpoons KI_3 \qquad (16.43)$$

ऑक्सीकारक क्रिया इस प्रकार निरूपित की जा सकती है:

$$I_3^- + 2e \longrightarrow 3I^- \qquad (16.44)$$

आयोडीनमितीय अनुमापनों में त्रुटि के दो कारण होते हैं:

i) आयोडीन, विलयन में किंचित वाष्पशील होता है अत: ये अनुमापन गर्म विलयनों में नहीं किए जाते हैं।

ii) प्रकाश की उपस्थिति में KI से प्राप्त आयोडाइड आयन, वायु की ऑक्सीजन द्वारा ऑक्सीकृत हो जाता है।

$$4I^- + O_2 + 4H^+ \longrightarrow 2H_2O + 2I_2 \qquad (16.45)$$

इसलिए पोटैशियम आयोडाइड को घोलने के लिए प्रयुक्त जल (जो आयोडीन घोलने के काम में लाया जाता है) को उबाल लेना चाहिए ताकि घुली हुई ऑक्सीजन निकल जाए।

2) **अप्रत्यक्ष विधियां :** इन विधियों में $KMnO_4$, $K_2Cr_2O_7$, $CuSO_4$ आदि ऑक्सीकारकों को आयोडाइड के आधिक्य के संपर्क में लाकर आयोडीन मुक्त की जाती है। मुक्त आयोडीन का सोडियम थायोसल्फेट के मानक विलयन के साथ अनुमापन किया जाता है। इन विधियों को आयोडोमितीय विधियां कहते हैं। इन अनुमापनों में उदासीन अथवा अम्लीय माध्यम में पोटैशियम आयोडाइड पर रससमीकरणमितीयत: ऑक्सीकारकों की क्रिया से आयोडीन मुक्त होती है। उदाहरणार्थ पोटैशियम डाइक्रोमेट के साथ अभिक्रिया इस प्रकार होती है:

$$K_2Cr_2O_7 + 6KI + 7H_2SO_4 \longrightarrow 4K_2SO_4 + Cr_2(SO_4)_3 + I_2 + 7H_2SO_4 \quad (16.46)$$

मुक्त आयोडीन, पोटैशियम आयोडाइड के आधिक्य में घुलकर भूरे रंग का ट्राइआयोडाइड संकुल आयन बनाता है (समीकरण 16.44) जिसका मानक सोडियम थायोसल्फेट विलयन के साथ अनुमापन किया जा सकता है। अभिक्रिया इस प्रकार होती है:

MAADHYAM IAS

$$2Na_2S_2O_3 + I_2 \longrightarrow Na_2S_4O_6 + 2NaI \quad (16.47)$$

$CuSO_4$ के साथ आयोडोमितीय अनुमापन को भी उसी प्रकार की अभिक्रिया द्वारा निरूपित किया जा सकता है। किन्तु यह अनुमापन खनिज अम्ल की अनुपस्थिति में किया जाता है।

$$CuSO_4 + 2KI \rightleftharpoons CuI_2 + K_2SO_4 \quad (16.48)$$

निर्मित क्यूप्रिक आयोडाइड अस्थायी यौगिक है जो क्यूप्रस आयोडाइड और आयोडीन में परिवर्तित हो जाता है:

$$2CuI_2 \rightleftharpoons Cu_2I_2 + I_2 \quad (16.49)$$

मुक्त आयोडीन का उपयुक्त विधि से (समीकरण 16.47) अनुमापन किया जाता है।

बोध प्रश्न

7) ऑक्सीकरण और अपचयन शब्दों से आप क्या समझते हैं?

....

....

....

....

....

16.6.3 संकुलमितीय अनुमापन

किसी अवयव के अन्य स्पीशीज़ के साथ संयोजन को संकुलन (Complex) कहते हैं। अनेक धातु आयन संलग्नियों (लिगण्डों) के साथ मिलकर संकुलन बनाते हैं। धातु आयनों को देने के लिए संलग्नियों के पास इलेक्ट्रॉनों का एक युग्म होता है। किसी धातु आयन से संयुक्त संलग्नियों की संख्या उसकी समन्वय संख्या पर निर्भर करती है। इस प्रकार संकुलों की रचना धातु आयन और सहलग्नियों के बीच समन्वयी आबंधों की रचना पर निर्भर करती है। धातु संकुलों की रचना की व्याख्या लुइस के अम्ल-क्षारक सिद्धांत के आधार पर की जा सकती है। धातु आयन इलेक्ट्रॉन युग्म न्यून होने के कारण बहुक्षारकीय लुइस अम्ल होता है और संलग्नी युग्म 'लुइस क्षारक' होता है।

संलग्नी या तो उदासीन होते हैं जैसे NH_3, H_2O अथवा ऋण आवेशित होते हैं जैसे CN^-, OH^-, Cl^- आदि। एक दन्तुरित संलग्नियों (क्षारकीय समूह) की संख्या जो स्वयं को केन्द्रीय धातु आयन के चारों ओर विन्यस्त कर सकती है, उसकी समन्वय संख्या कहलाती है। संकुल का आवेश, धातु आयन और उससे संयुक्त संलग्नियों के आवेशों का बीजगणितीय योग होगा। NH_3, CN^- आदि संलग्नी एक समन्वय आबंध बना सकते हैं और एक दन्तुरित होते हैं। जिन संलग्नियों में दो दाता होते हैं वे दो आबंध बना सकते हैं और द्वि-दन्तुरित होते हैं जैसे एथिलीन डाइएमीन। इ.डी.टी.ए. का ऋणायन जिसे कार्बोक्सिलिक अम्ल के दो हाइड्रोजन और चार ऑक्सीजन परमाणुओं द्वारा आबंधित किया जा सकता है, डेक्साडेन्टेट संलग्नी की भांति काम कर सकता है।

MAADHYAM IAS

बहुदन्तुरित संलग्नी द्वारा निर्मित संकुल की वलय संरचना होती है जिसे कीलेट कहते हैं। ऐसे संलग्नी को कीलेटीकर्मक कहते हैं। कीलेटीकर्मक, सरल एक दन्तुरित संलग्नियों की अपेक्षा अधिक स्थायी धातुओं के साथ संकुल बनाते हैं।

धातु संकुल रचना का उपयोग उपयुक्त अनुमापनमितीय अभिक्रिया के रूप में किया जाता है, यदि:

i) संकुल की रचना तीव्र गति से हो,

ii) संकुल पर्याप्त स्थायी हो, और

iii) उपयुक्त सूचक उपलब्ध हो।

सफल अनुमापन के लिए धातु-आयन और संलग्नी के परस्पर अभिक्रिया-दर तीव्र होनी चाहिए। तीव्रतापूर्वक बनने वाले धातु संकुल 'चंचल' कहलाते हैं और धातु आयन का निर्धारण प्रत्यक्ष प्रक्रिया द्वारा किया जाता है। किन्तु कुछ धातु संकुलों की रचना अपेक्षाकृत मंद गति से होती है और ऐसे संकुलों को 'अक्रिय' संकुल कहते हैं। ऐसे धातुओं के अनुमापन के लिए पश्च-अनुमापन प्रक्रिया का अनुसरण किया जा सकता है। रासायनिक विश्लेषण में कुछ ऐसी अभिक्रियाएं होती हैं जिनमें संकुल बनते हैं किन्तु सूचकों की कमी के कारण उनमें से कुछ का ही आयतनमापी विश्लेषण के लिए उपयोग किया जा सकता है।

इ.डी.टी.ए. के उपयोग वाले अनुमापन

धातु आयनों के निर्धारण के लिए अनुमापन सामान्य तौर पर कार्बनिक कीलेटन अभिकर्मकों के साथ और विशेष रूप से ऐथिलीन डाइऐमीन टेट्रा ऐसीटिक अम्ल के साथ किए जाते हैं जिनकी धातु आयनों के निर्धारण के लिए बहुत उपयोगिता है। आजकल इ.डी.टी.ए. अनुमापन का उपयोग 50 से अधिक तत्वों के लिए किया जा रहा है।

इ.डी.टी.ए. अणु में पर्याप्त संख्या में संलग्नी समूह होते हैं और अनेक धातुओं के साथ तत्काल 1:1 संकुल बनाते हैं भले ही उनकी ऑक्सीकरण अवस्था कुछ भी हो। इन कीलेट संकुलों का स्थायित्व बहुत अधिक होता है (संकुल किंचित आयनित होते हैं) इस कारण इ.डी.टी.ए. का उपयोग अनेक धनायनों के अनुमापनमितीय निर्धारण के लिए अभिकर्मक के रूप में किया जाता है और अनुमापक के रूप में अन्य अनेक संकुल रचक पदार्थों से उत्कृष्ठ होता है। धातुओं का निर्धारण प्रत्यक्ष, पश्च और प्रतिस्थापन अनुमापनों जैसी विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा किया जाता है। अंत्य बिन्दु की पहचान उपयुक्त धातु आयन सूचक द्वारा अनुमोदित पी.एच. पर की जाती है।

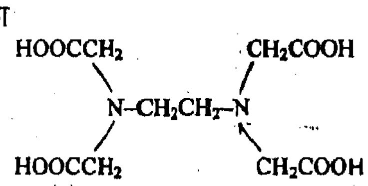

इ.डी.टी.ए.की संरचना

मेटैलोक्रोमिक सूचक स्वयं एक बहुदन्तुरित कीलेटन कर्मक है। मेटैलोक्रोमिक सूचक उपयोगी हो, इसके लिए आवश्यक है कि प्रभावी स्थायित्व स्थिरांक का उचित अनुक्रम हो। इसके लिए धातु-इ.डी.टी.ए. का स्थायित्व धातु-सूचक संकुल के स्थायित्व से अधिक होना चाहिए और इसके बावजूद धातु सूचक संकुल अति तनु विलयनों में पर्याप्त स्थायी होना चाहिए। इस आवश्यक अनुक्रम का बहुत कम पदार्थ पालन करते हैं।

MAADHYAM IAS

सफल इ.डी.टी.ए. अनुमापनों के लिए विलयन संबंधी कुछ शर्तों, जैसे बफर का प्रकार, पी.एच. का चयन, आच्छादक आदि को अनुमापित किए जाने वाले धातु आयन के अनुसार सुनिश्चित कर लेना चाहिए। धातु-इ.डी.टी.ए. अनुमापनों में संकुल निमार्ण के अलावा कुछ अन्य प्रतियोगी साम्य भी पाए जाते हैं।

विभिन्न धातु-इ.डी.टी.ए. संकुलों के स्थायित्व स्थिरांकों के मानों में बहुत भिन्नता होती है। धातु-इ.डी.टी.ए. संकुलों को उनके स्थायित्व के अनुसार तीन समूहों में विभाजित किया जा

संकता है। यह देखा गया है कि अधिकांशतया द्विसंयोजी धातु आयनों के साथ बने संकुल, क्षारकीय माध्यम (पी.एच. 8–12) में अत्यंत स्थायी होते हैं। त्रिसंयोजी धातु आयनों के साथ बने संकुलों का अम्लीय विलयनों (पी.एच.1–2) में उच्च स्थायित्व होता है और चुत: संयोजी धातु आयनों के साथ बने संकुल पी.एच.1 से कम अम्लीय विलयनों में स्थायी होते हैं।

किसी धातु आयन विलयन का मानक इ.डी.टी.ए. विलयन के साथ अनुमापन करते समय अंत्य बिन्दु पर धातु आयन सूचक का रंग परिवर्तन देखा जाता है। सूचक की क्रियाविधि संकुलों के विभेदी स्थायित्व पर आधारित होती है। विशिष्ट पी.एच. पर सूचक भी धातु आयन के साथ संकुल बनाता है। सफल अनुमापन के लिए धातु आयन का सूचक के साथ बना संकुल, धातु आयन–इ.डी.टी.ए. संकुल से कम स्थायी होना चाहिए।

पी.एच. 10 पर अनेक धातु आयनों के अनुमापनों के लिए ऐरिओक्रोम ब्लैक टी (इ.बी.टी.) एक सफल सूचक का काम करता है। अंत्य बिन्दु पर मदिरा-रक्त रंग (M–संकुल में) से नीले रंग (मुक्त सूचक) में तीक्ष्ण रंग परिवर्तन होता है।

इस सूचक के ऐल्कोहॉली विलयन का रंग पी.एच. 6 से नीचे लाल, पी.एच. 8 और 11 के बीच नीला तथा पी.एच 11.5 के ऊपर नारंगी होता है। साम्यावस्थाओं को समीकरण 16.50 में निरूपित किया गया है।

$$\underset{\text{लाल}}{H_2In^-} \xrightarrow{pH=6.5} \underset{\text{नीला}}{HIn^{2-}} \xrightarrow{pH=11.5} \underset{\text{नारंगी}}{In^{3-}} \qquad (16.50)$$

सूचक के साथ दुर्बल संकुल बनाने वाले धातु आयनों का सूचक के साथ प्रबल संकुल बनाने वाले अन्य धातु आयन की उपस्थिति में अनुमापन किया जा सकता है। ऐसे अनुमापनों को प्रतिस्थापना अनुमापन कहते हैं। उदाहरण के लिए इ.बी.टी. का उपयोग करते हुए Ca^{2+} का प्रत्यक्ष अनुमापन सफल नहीं होता है क्योंकि वह इ.बी.टी. के साथ आंशिक अभिक्रिया करता है। किन्तु Mg-Y संकुल (मैग्नीशियम रिक्त) की उपस्थिति में अंत्य बिन्दु का निर्धारण सफलतापूर्वक किया जा सकता है क्योंकि निर्मित Mg-EBT संकुल, Ca-EBT संकुल से, अधिक स्थायी होता है।

$$Ca^{2+} + (Mg\text{-}Y)^{2-} + HIn^{2-} \longrightarrow \underset{\text{नीला}}{[Ca\text{-}Y]^{2-}} + \underset{\text{गुलाबी}}{MgIn^-} + H^+ \qquad (16.51)$$

इस प्रकार Ca^{2+} के अनुमापन के लिए पहले एक Mg- रिक्त बनाया जाता है अर्थात् Mg^{2+} की अल्प मात्रा का इ.डी.टी.ए. के साथ अनुमापन किया जाता है ताकि नीला रंग प्राप्त हो जाए (इसे Mg- रिक्त कहते हैं) Ca^{2+} आयनों के विलयन को Mg- रिक्त में मिलाया जाता है। नीला रंग बदलकर लाल हो जाता है। अब उसका इ.डी.टी.ए. के साथ अनुमापन किया जाता है ताकि पक्का नीला रंग दिखाई दे। इसकी व्याख्या नीचे पैराग्राफ में की गई है।

MAADHYAM IAS

आरंभ में Mg^{2+} आयन इ.बी.टी. सूचक के साथ लाल रंग बनाते हैं उसमें इ.डी.टी.ए. मिलाने से MgY^{2-} संकुल बनता है और In^{3-} मुक्त होता है जो पी.एच.10 पर HIn^{2-} बनाता है। यह Mg-रिक्त है। MgY^{2-} में Ca^{2+} मिलाने से प्रतिस्थापन अभिक्रिया होती है जिसमें MgY^{2-} से Y^{2-} मुक्त होता है और Ca^{2+} आयनों से संयुक्त होकर CaY^{2-} बनाता है क्योंकि इ.डी.टी.ए. के साथ Mg^{2+} की तुलना में Ca^{2+} अधिक प्रबल संकुल बनाता है। साथ ही Mg^{2+} सूचक के साथ अभिक्रिया से $MgIn^-$ (लाल) बनाता है क्योंकि इ.बी.टी. के साथ कैल्सियम की अपेक्षा मैग्नीशियम अधिक प्रबल संकुल बनाता है। इ.डी.टी.ए. मिलाने पर पहले Ca^{2+} (यदि असंकुलित रह गया हो तो) का और फिर मुक्त Mg^{2+} का अनुमापन होता है।

अंत्य बिन्दु पर सभी Ca^{2+} और Mg^{2+} आयनों का इ.डी.टी.ए. के साथ कीलेटन हो जाता है तथा सूचक केवल HIn^{2-} के रूप में पाया जाता है जिससे विलयन का रंग नीला हो जाता है।

16.6.4 अवक्षेपण अनुमापन

अल्प विलेय (लगभग अविलेय) अवक्षेपों की रचना पर आधारित अनुमापनों को अवक्षेपण (precipitation) अनुमापन कहते हैं। उदासीनीकरण, संकुल-रचना और रेडॉक्स अनुमापनों की तुलना में अवक्षेपण अनुमापनों का कम महत्व है। अवक्षेपण मुख्यत: अभिक्रिया दर पर निर्भर करता है जो पर्याप्त तीव्र नहीं होती है। विशेष रूप से तनु विलयनों के अनुमापन में और अंत्य बिन्दु के अति समीप अवक्षेपण बहुत कम होता है। इसके अलावा ऐसे अनुमापनों के दौरान होने वाले सह-अवक्षेपण से रससमीकरणमितीय अभिक्रिया की यथार्थता सीमित होती है।

कुल मिलाकर अवक्षेपण अनुमापनों का उपयोग विभिन्न ऋणायनों के निर्धारण में किया जाता है। उदाहरण के लिए सिल्वर नाइट्रेट द्वारा हैलाइडों के अनुमापन का हैलाइडों के निर्धारण के लिए विस्तृत उपयोग किया जाता है। बेरियम आयन के साथ सल्फेट के और सिल्वर नाइट्रेट के साथ थायोसायनेट के अनुमापन का भी कुछ मात्रा में उपयोग किया जाता है। सर्वाधिक अवक्षेपण-अनुमापन, सिल्वर नाइट्रेट के मानक विलयन के साथ किए जाते हैं जिन्हें रजतमापी विधियां कहते है।

अनुमापन वक्र : उदासीनीकरण अनुमापनों में पी.एच. अनुमापन वक्रों की भांति, अवक्षेपण अभिक्रियाओं के लिए भी अनुमापन वक्र प्राप्त किए जा सकते हैं। उदाहरणार्थ Ag^+ के साथ Cl^- के अनुमापन के लिए, $-logCl^-$ अर्थात्, pCl^- अथवा $-logAg^+$ अर्थात् pAg^+ को अनुमापक के आयतन के फलन के रूप में आलेखित किया जा सकता है। प्राप्त वक्र के नतिपरिवर्तन बिन्दु पर आयतन नोट करके तुल्यता बिन्दु ज्ञात किया जा सकता है।

सूचक : अवक्षेपण अनुमापन में अंत्य बिन्दु ज्ञात करने के लिए प्रयुक्त सूचकों को दो संवर्गों में विभाजित किया जा सकता है:

i) वे पदार्थ जो अनुमापक के आधिक्य के साथ क्रिया करते हैं, और

ii) वे पदार्थ जो स्वयं अवक्षेप के साथ क्रिया करते हैं।

पहले संवर्ग में सूचक ऐसा होना चाहिए कि वह अनुमापक के आधिक्य के साथ स्पष्ट तथा रंगीन अवक्षेप अथवा रंगीन, विलेय यौगिक बना सके। उदाहरण के लिए क्लोराइड के मोर अनुमापन में CrO_4^{2-} सूचक, रजत के आधिक्य के साथ लाल अवक्षेप बनाता है। अंत्य बिन्दु की पहचान सिल्वर हैलाइड और सिल्वर क्रोमेट के विभेदी अवक्षेपण पर निर्भर करती है। अत: ऐसे सूचकों के चयन में विलेयता गुणनफल और अन्य साम्यों का ध्यान रखना आवश्यक है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

सूचकों के दूसरे संवर्ग में निर्मित अवक्षेप के पृष्ठ पर रंजक के अवशोषण का लाभ उठाया जाता है। उदाहरण के लिए धन आवेशित सिल्वर क्लोराइड पर फ्लुओरेसीन ऋणायन के रूप में अवशोषित हो जाता है। अवशोषित सूचक, विलयन में मौजूद सूचक से भिन्न रंग प्रदर्शित करता है और इस प्रकार अवशोषित जालक आयनों के लिए सूचक के रूप में काम करता है।

16.7 सारांश

आपने पढ़ा कि परंपरागत विधियों की प्रक्रियाएं और प्रयुक्त उपस्कर साधारण होते हैं। ये विधियां रचक पदार्थ के द्रव्यमान के निर्धारण पर आधारित हैं। द्रव्यमान के निर्धारण की दो प्रक्रियाएं है: भारमितीय और आयतनमितीय। इन दोनों निर्धारणों का आधार रासायनिक

अभिक्रिया है जो अधिकांश अवयवों के लिए उपयुक्त है। भारमिति में उपयुक्त अवक्षेप को पृथक करने के बाद सुखाकर तोल लिया जाता है जबकि आयतनमिति में अभिकारी पदार्थ के विलयन की अनुमापक के साथ क्रिया की जाती है। अनुमापक को रुक-रुक कर मिलाया जाता है जब तक सूचक द्वारा तुल्यता बिन्दु का संकेत न मिल जाए। तुल्यता बिन्दु प्राप्त करने के लिए आवश्यक अनुमापक के आयतन द्वारा अभिकारक पदार्थ की मात्रा परिकलित की जाती है। विभिन्न आयतनमितीय निर्धारणों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है: उदासीनीकरण अनुमापन, रेडॉक्स अनुमापन, संकुलमितीय अनुमापन और अवक्षेपण अनुमापन।

16.8 अंत में कुछ प्रश्न

1) निम्नलिखित शब्दों की व्याख्या कीजिए:

   i) प्रतिशत सान्द्रता

   ii) मोल अंश

2) तुल्यता बिन्दु और अंत्य बिन्दु में क्या भिन्नता है?

3) HCl के एक विलयन में 20% HCl है और HCl का आपेक्षिक घनत्व 1.098 है। HCl विलयन की नॉर्मलता परिकलित कीजिए।

4) क्रमश: भार के अनुरूप निम्नलिखित के रूपांतरण गुणक लिखिए।

   Al_2O_3 से Al, $BaSO_4$ से Ba

   $Mg_2P_2O_7$ से Mg, $Mg_2P_2O_7$ से P_2O_5

5) निम्नलिखित में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए जबकि C सान्द्रता को व्यक्त करता है।

   i) यदि $C_{Ag^+}.C_{Cl^-}$........... विलयन असंतृप्त है।

   ii) यदि $C_{Ag^+}.C_{Cl^-}$........... विलयन अतिसंतृप्त है।

   iii) यदि $C_{Ag^+}.C_{Cl^-}$.......... विलयन ठीक संतृप्त है।

16.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1) 4°C पर 1 dm^3 जल का भार = 1000 ग्राम

$$\text{मोलों की संख्या} = \frac{\text{ग्रामों में भार}}{\text{gmw}}$$

$$= \frac{1000}{18}$$

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

2) $$\text{मोलरता} = \frac{\text{मोलों की संख्या}}{\text{आयतन } (dm^3 \text{ में})}$$

$$\text{मोलों की संख्या} = \text{मोलरता} \times \text{आयतन } (dm^3 \text{ में})$$

$$= 0.1 \times \frac{250}{1000} = 0.025$$

3) i) नार्मलता

ii) dm^3

ii) मोललता

4) • अवक्षेपण मात्रात्मक होना चाहिए।

• अवक्षेप के कणों का उचित आमाप होना चाहिए ताकि उसे आसानी से निस्यंदित किया जा सके।

• अवक्षेप ऐसी अवस्थाओं में बनाया जाए कि वह पर्याप्त शुद्ध हो।

• अवक्षेपित रूप का निश्चित संघटन होना चाहिए।

5) वह रजत और क्लोरीन में अपघटित हो जाएगा।

6) ऑक्सीकरण की अर्ध अभिक्रिया इस प्रकार होती है:

$Fe(CN)_6^{4-} \longrightarrow Fe(CN)_6^{3-}$

जिसमें एक इलेक्ट्रॉन स्थानांतर हो जाता है:

$K_4Fe(CN)_6.3H_2O$ का GEW = GMW/1 = 422.4 ग्राम

7) **ऑक्सीकरण:** वह अभिक्रिया जिसमें किसी स्पीशीज़ से इलेक्ट्रॉन की हानि होती है, ऑक्सीकरण कहलाती है।

अपचयन: वह अभिक्रिया जिसमें किसी स्पीशीज में इलेक्ट्रॉन की वृद्धि होती है, अपचयन कहलाती है।

अंत में कुछ प्रश्न

1) देखिए उपभाग 16.2.3

2) तुल्यता बिन्दु वह बिन्दु होता है जिसमें अनुमापक की रससमीकरणमितीय मात्रा को अभिकारक में मिलाया जाता है। जबकि अंत्य बिन्दु वह बिन्दु होता है जिस पर सूचक अनुमापन की समाप्ति का संकेत देता है।

3) HCl का आपेक्षिक घनत्व 1.098 है। इसका अर्थ हुआ कि 1 cm^3 विलयन का भार 1.098 ग्राम है और 1 dm^3 विलयन का भार 1098 ग्राम होगा।

इसका (1098 ग्राम का) 20% HCl के कारण है।

1098 ग्राम अथवा 1 dm^3 विलयन में HCl की मात्रा $= \frac{1098 \times 20}{100}$ ग्राम

1 dm^3 विलयन में HCl के मोलों की संख्या $= \frac{1098 \times 20}{100 \times 36.5} = 6.02$

दिए गए HCl विलयन की नॉर्मलता = 1 dm^3 विलयन में मोलों की संख्या = 6.02

4) रूपांतरण गुणक,

$$F = \frac{\text{वांछित पदार्थ का ग्राम तुल्यांक भार}}{\text{भारित पदार्थ का ग्राम तुल्यांक भार}}$$

MAADHYAM IAS

$$\text{Al के लिए रूपांतरण गुणक} = \frac{27}{101/2} = 27/51 = 0.5294$$

Ba के लिए रूपांतरण गुणक = 137/233 = 0.588

$$\text{Mg के लिए रूपांतरण गुणक} = \frac{24}{222/2} = 24/111 = 0.2162$$

P_2O_5 के लिए रूपांतरण गुणक = 142/222 = 0.6596

5) i) $<10\times10^{-10}$
ii) $>10\times10^{-10}$
iii) $=10\times10^{-10}$

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इकाई 17 पृथक्करण तकनीकें

इकाई की रूपरेखा

17.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
17.2 विलायक निष्कर्षण
17.3 वर्णलेखिकी का इतिहास
17.4 वर्णलेखिकी का सिद्धांत
परिभाषा
वर्गीकरण
नियम
17.5 वर्णलेखिकी की शब्दावली
गतिशील प्रावस्था
स्थिर प्रावस्था
नमूना
घटक अथवा विलेय
17.6 कुछ मौलिक संकल्पनाएं
मंदन गुणक (आर. एफ.)
क्रोमैटोग्राम (वर्णलेख)
वियोजन
17.7 अधिशोषण तंत्र
17.8 पतली परत वर्णलेखिकी (टी.एल.सी.)
टी.एल.सी. प्लेट तैयार करना
क्रोमैटोग्राम का विकास
बिन्दुओं की पहचान
घटकों का अभिनिर्धारण
प्रमात्रीकरण
17.9 स्तंभ वर्णलेखिकी
17.10 कागज़ वर्णलेखिकी
नियम
क्रोमैटोग्राम का विकास
बिन्दुओं की पहचान
प्रमात्रीकरण
लाभ
सीमाएं
17.11 आयन विनिमय वर्णलेखिकी
आयन विनिमय पदार्थ
आयन विनिमय प्रक्रम
आयन विनिमय की क्रियाविधि
आयन विनिमय क्षमता
17.12 आयन विनिमय के अनुप्रयोग
जल का मृदुकरण और विआयनीकरण
प्रदूषण नियंत्रण में आयन विनिमय
17.13 सारांश
17.14 अंत में कुछ प्रश्न
17.15 उत्तर

MAADHYAM IAS

17.1 प्रस्तावना

विश्लेषण के लिए नमूने का पूर्व-उपचार करना होता है ताकि दूसरे पदार्थ कोई रुकावट न डाल सकें। रासायनिक विश्लेषण में सबसे महत्वपूर्ण पूर्व-उपचार घटकों को ऐसे रूपों में पृथक करना है जिन्हें निर्धारण के लिए आसानी से इस्तेमाल किया जा सके।

विश्लेषण रसायनज्ञ अनेक पृथक्करण विधियों का उपयोग करते हैं जो द्रव्य की एक प्रावस्था से दूसरे प्रावस्था में परिवर्तन पर आधारित हैं।

यदि पदार्थ अंतरण के एक चरण से पर्याप्त मात्रा में पृथक्करण हो जाए तो अवक्षेपण, वाष्पीकरण और विलायक निष्कर्षण आदि प्रक्रियाओं का सफल उपयोग किया जा सकता है। किन्तु पदार्थ अंतरण के एक चरण से पर्याप्त मात्रा में पृथक्करण न हो तो बहुचरण पृथक्करण प्रक्रियाओं पर आधारित आधुनिक विधियों का उपयोग किया जाता है। इन प्रक्रियाओं में स्थिर प्रावस्था को बार-बार गतिशील प्रावस्था के संपर्क में लाया जाता है जो भागशः अथवा निरंतर प्रतिस्थापनीय होती है। इस संवर्ग में शामिल विधियां विलायक निष्कर्षण **(solvent extraction)** वर्णलेखिकी **(chromatography)** और आयन विनिमय **(ion exchange)** है। इस इकाई में केवल इन विधियों की चर्चा की जाएगी।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप,

- वर्णलेखिकी की तकनीक और नियम को समझ जाएंगे,
- वर्णलेखिकी के वर्गीकरण की जानकारी प्राप्त कर लेंगे,
- वर्णलेखिकी की सामान्य शब्दावली की व्याख्या कर सकेंगे,
- कागज, पतली परत और स्तंभ वर्णलेखिकी की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे,
- आयन विनिमय के सिद्धांत को समझ जाएंगे,
- पर्यावरणी विश्लेषण में इन वर्णलेखिकियों के अनुप्रयोग को स्पष्ट कर सकेंगे।

17.2 विलायक निष्कर्षण

आपको मालूम है कि अधिकांश कार्बनिक अभिक्रियाएं प्रायः पूरी नहीं होती हैं। अभिक्रिया मिश्रण में वांछित उत्पादों के अलावा वे अभिकारक भी होते हैं जिन्होंने क्रिया में भाग न लिया हो। साथ ही मिश्रण में अवांछित पार्श्व उत्पाद भी होते हैं। ऐसी स्थिति में किसी एक उत्पाद (वांछित अथवा अवांछित) को पृथक करने की आवश्यकता हो सकती है। इस प्रकार के पृथक्करण के लिए प्रयुक्त एक विधि का नाम **विलायक निष्कर्षण** है। यह विधि प्रावस्था वितरण के नियम पर आधारित है। इसमें किसी विलेय को किसी मिश्रण से पृथक करने के लिए उस विलेय की दो अमिश्रणीय विलायकों में विभेदी विलेयताओं का लाभ उठाया जाता है। आइए, इस तकनीक की संक्षेप में जानकारी प्राप्त करें।

MAADHYAM IAS

माना किसी 'x' पदार्थ की दो अमिश्रणीय विलायकों में अलग-अलग विलेयताएं हैं। यदि पदार्थ के किसी एक विलायक में बने विलयन को दूसरे विलायक के साथ हिलाएं तो वह पदार्थ विलेयता के अनुसार स्वयं को दोनों में वितरित कर लेगा। उदाहरण के लिए ऐसीटिनैलाइड, ईथर और जल दोनों में विलेय है। यदि जल में उसके विलयन को ईथर के साथ हिलाएं तो ऐसीटिनैलाइड का कुछ भाग ईथर की परत में चला जाता है। ईथर की परत को पृथक कर उद्वाष्पित करने से ऐसीटिनैलाइड प्राप्त होता है। इस प्रक्रम को कई बार दोहरा सकते हैं।

प्रत्येक बार अधिकाधिक ऐसीटिनैलाइड ईथर में आएगा और अंततः जलीय परत से संपूर्ण ऐसीटिनैलाइड निष्कर्षित हो जाएगा।

विलायक की निष्कर्षण दक्षता, दो विलायकों में विलेय के वितरण गुणांक पर निर्भर करती है। दो विलायकों में विलेय की सान्द्रता के अनुपात को वितरण गुणांक कहते हैं।

$$K = \frac{\text{'A' विलायक में विलेय की सान्द्रता}}{\text{'B' विलायक में विलेय की सान्द्रता}}$$

$$= \frac{\text{'A' विलायक में विलेय की विलेयता}}{\text{'B' विलायक में विलेय की विलेयता}}$$

वितरण गुणांक की परिभाषा केवल तब लागू होती है जब विलेय दोनों विलायकों में एक समान आण्विक अवस्था में रहे। किन्तु विलेय किसी एक अथवा दोनों विलायकों में संयोजित अथवा वियोजित हो जाए तो परिभाषित समीकरण में संशोधन करना होगा। इन समीकरणों का उल्लेख भौतिक रसायन की किसी भी प्रामाणिक पुस्तक में मिल सकता है।

स्पष्ट है कि K का मान जितना अधिक होगा निष्कर्षण दक्षता भी उतनी ही अधिक होगी अर्थात् निष्कर्षण के समय विलेय की अधिक मात्रा स्थानांतरित होगी जिससे निष्कर्षक विलायक के कम आयतन की आवश्यकता होगी। उत्तम निष्कर्षण विलायक के निम्नलिखित गुणधर्म होने चाहिए।

- उसे निष्कर्षित किए जाने वाले पदार्थ के लिए उत्तम विलायक होना चाहिए अर्थात् विलायक में विलेय की उच्च विलेयता होनी चाहिए,
- उसका क्वथनांक कम होना चाहिए ताकि निष्कर्षित पदार्थ को आसानी से पुनः प्राप्त किया जा सके,
- उसे मंहगा नहीं होना चाहिए,
- उसे विलेय अथवा दूसरे विलायक के साथ अभिक्रिया नहीं करनी चाहिए और
- उसे दूसरे विलायक के साथ अमिश्रणीय होना चाहिए।

माना आप अम्लीय और क्षारकीय पदार्थों को उदासीन पदार्थों के साथ उनके मिश्रणों से पृथक करना चाहते हैं। इस प्रकार के निष्कर्षण के लिए मिश्रण को किसी कार्बनिक विलायक में लेकर क्षारक अथवा अम्ल के जलीय विलयन के साथ हिलाया जाता है। इस प्रक्रम को अम्ल-क्षारक निष्कर्षण कहते हैं। आइए, अम्ल-क्षारक निष्कर्षण प्रक्रम को समझने के लिए किसी मिश्रण में से अम्लीय घटक के पृथक्करण का उदाहरण लें। इस प्रकार के मिश्रण को जब क्षारक जलीय विलयन के साथ हिलाया जाता है तो अम्लीय यौगिक लवण के रूप में जलीय प्रावस्था में निष्कर्षित हो जाता है। निष्कर्षण प्रक्रम की इस प्रकार कल्पना की जा सकती है:

जब अम्ल युक्त कार्बनिक विलायक को क्षारक के जलीय विलयन के साथ मिश्रित किया जाता है अम्ल, वितरण गुणांक के अनुसार कार्बनिक और जलीय परत में वितरित हो जाता है। जलीय परत में मौजूद क्षारक शीघ्र अम्ल को उसके लवण में परिवर्तित कर देता है; समीकरण 17.1

$$\text{RCOOH} + \text{MOH} \rightarrow \text{RCOOM} + H_2O \qquad (17.1)$$

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

परिवर्तन की मात्रा क्षारक की प्रबलता पर निर्भर करती है। प्रत्येक स्थिति में जलीय परत में मुक्त अम्ल की सान्द्रता बहुत कम हो जाती है। फलस्वरूप वितरण गुणांक बनाए रखने के लिए जलीय प्रावस्था में अधिक अम्ल आता है और लवण में परिवर्तित हो जाता है। यह प्रक्रम तब तक होता रहता है जब तक क्षारक इस परिवर्तन को पूरा न कर ले। इस प्रक्रम में बना लवण भी स्वयं को दो विलायकों में वितरित कर लेता है। लवण की कार्बनिक प्रावस्था की तुलना में जलीय प्रावस्था में अत्यधिक विलेयता के कारण अधिकांश लवण जलीय परत में रहता है। अर्थात् अम्ल की बहुत कम मात्रा कार्बनिक परत में लवण के रूप में वापस जाती है।

पृथक्कारी कीप में क्लोरोफार्म और कार्बन टेट्राक्लोराइड जल के साथ निचली परत बनाते हैं जबकि ईथर और पेट्रोल जल के साथ ऊपरी परत बनाते हैं।

विलायक निष्कर्षण द्वारा बेन्जोइक अम्ल, 2-पेप्थॉल और 1, 4-डाइमेथॉक्सी बेन्ज़ीन के मिश्रण का पृथक्करण और उनके अभिलक्षकीय समूहों का अभिनिर्धारण

इन प्रक्रमों के परिणामस्वरूप अधिकांश अम्ल जलीय प्रावस्था में चले जाते हैं। जलीय परत में आने वाली अम्ल की मात्रा क्षारक की मात्रा और स्वभाव (दुर्बल अथवा प्रबल) पर निर्भर करती है। यदि उपयुक्त क्षारक की पर्याप्त मात्रा मौजूद हो तो कार्बनिक परत से लगभग पूरा अम्ल जलीय परत में चला जाता है और उत्तम निष्कर्षण हो जाता है। इन प्रक्रमों में शामिल साम्यावस्थाओं को चित्र 17.1 में निरूपित किया गया है।

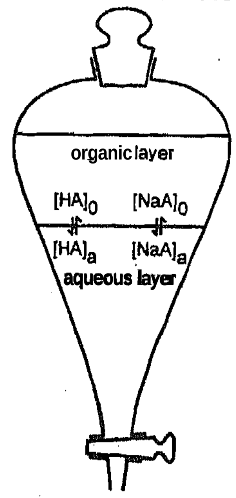

$[HA]_a$: जलीय परत में HA अम्ल की सान्द्रता

$[HA]_o$: कार्बनिक परत में HA अम्ल की सान्द्रता

$[NaA]_a$: जलीय परत में NaA लवण की सान्द्रता

$[NaA]_o$: कार्बनिक परत में NaA लवण की सान्द्रता

चित्र 17.1: किसी अम्लीय यौगिक के कार्बनिक परत से जलीय परत में हुए निष्कर्षण में प्राप्त साम्यावस्थाओं का व्यवस्था चित्र।

जैसा कि आप जानते है, pK_a, अम्ल की सान्द्रता का सूचक है। इसे $-\log K_a$ के रूप में व्यक्त किया जाता है, जिसमें K_a अम्ल का वियोजन स्थिरांक है। pK_a मान जितना अधिक होगा अम्ल उतना ही तनु होगा।

उपयुक्त क्षारक उसे कहते हैं जो प्रभावपूर्वक अम्लीय यौगिक को उसके लवण में परिवर्तित कर सकता है। व्यावहारिक रूप में वह क्षारकीय विलयन जिसका पी. एच. निष्कर्षित किए जाने वाले अम्ल के pK_a से कम से कम 4 पी. एच. यूनिट अधिक होता है लगभग पूर्ण निष्कर्षण कर सकता है।

उदाहरण के लिए बेन्जोइक अम्ल (pK_a4) को सोडियम बाइकार्बोनेट के 5% जलीय विलयन (पी.एच. 11) द्वारा प्रभावी ढंग से निष्कर्षित किया जा सकता है। प्रमुख कार्बनिक अम्लों अथवा क्षारकों के लगभग pK_a4 मान तथा प्रमुख निष्कर्षक विलयनों के पी. एच. मान क्रमश: सारणी 17.1 और 17.2 में दिए गए हैं। इससे किसी अन्य मिश्रण को पृथक करने के लिए उपयुक्त निष्कर्षण योजना को ज्ञात करने में सहायता मिलेगी।

सारणी 17.1: कुछ प्रमुख अम्लीय/क्षारकीय यौगिकों के सन्निकट pK_a मान

यौगिक का वर्ग	सन्निकट pK_a	उदाहरण
खनिज अम्ल	<1	HCl, HNO_3
ऐरोमैटिक कार्बोक्सिलिक अम्ल	4	बेन्जोइक अम्ल
ऐलिफैटिक कार्बोक्सिलिक अम्ल	5	ऐसीटिक अम्ल, प्रोपिओनिक अम्ल
ऐनिलीन	5	ऐनिलीन, टॉलुइडीन
पिरिडीन	6	पिरिडीन
फीनॉल	10	1-नैफ्थॉल, फीनॉल, 2-नैफ्थॉल
ऐलिफैटिक ऐमीन	11	मेथिलऐमीन, एथिल ऐमीन

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

सारणी 17.2: अम्ल-क्षारक निष्कर्षण के लिए सामान्यत: प्रयुक्त विलयनों (भार से 5-10%) के सन्निकट पी. एच. मान

यौगिक	सन्निकट पी. एच.
HCl, H_2SO_4	0
ऐसीटिक अम्ल	3
$NaHCO_3$	8
Na_2CO_3, K_2CO_3	11
NaOH, KOH	14

कहने की आवश्यकता नहीं कि अन्य स्पीशीज़ (जो अम्लीय नहीं हैं) कार्बनिक परत में रहेंगे। केवल बहुत कम भाग जलीय परत में आएगा जो उसकी विलेयता और वितरण गुणांक पर निर्भर करता है। अम्लीकरण अथवा क्रिस्टलीकरण के समय वे पृथक हो जाते हैं। आपको आश्चर्य होगा कि हमने अम्ल को पृथक करना चाहा किन्तु विलयन प्राप्त हो गया जिसमें अम्ल का लवण है। चिन्ता की बात नहीं, खनिज अम्ल (पी.एच. 1) के साथ विलयन के अम्लीकरण से अम्ल को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

उसी प्रकार अम्ल के जलीय विलयन का उपयोग कर किसी कार्बनिक विलायक से क्षारकीय यौगिक, जैसे ऐमीन, के निष्कर्षण की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। व्यावहारिक तौर पर निष्कर्षक अम्ल विलयन के पी. एच में कम से कम 4 पी. एच. का अंतर होना चाहिए। (संयुग्मित अम्ल के pK_a, RNH = 11 को ऐसीटिक अम्ल (pK_a = 3) के 5-10% विलयन द्वारा प्रभाव पूर्वक निष्कर्षित किया जा सकता है)। इस प्रकार प्राप्त ऐसीटेट लवण को सोडियम हाइड्रॉक्साइड के जलीय विलयन द्वारा वापस ऐमीन में परिवर्तित किया जा सकता है।

17.3 वर्णलेखिकी का इतिहास

विभिन्न प्रकार की पृथक्करण विधियों में वर्णलेखिकी एक सर्वतोमुखी तकनीक है। यह बहुत उपयोगी तकनीक है। जिन यौगिकों के समान गुणधर्म होते हैं और अन्य विधियों से पृथक नहीं किया जा सकता है उन्हें वर्णलेखिकी द्वारा वियोजित कर सकते हैं।

स्थूल रूप से वर्णलेखिकी ऐसी तकनीक है जिसमें दो अमिश्रणीय प्रावस्थाओं में वितरण द्वारा नमूने को पृथक किया जा सकता है। एक प्रावस्था स्थिर होती है जबकि दूसरी गतिशील होती है और पहली प्रावस्था में अंत:स्रवण करती है। वर्णलेखिकी की सहायता से घटकों को दोनों चरम अवस्थाओं में पृथक किया जा सकता है अर्थात् चाहे नमूना बहुत कम मात्रा में हो अथवा बहुत अधिक मात्रा में।

MAADHYAM IAS

सन् 1906 में मिखेल त्स्वेत (Mikhail Tswett) नामक रूसी वनस्पतिज्ञ और भौतिक रसायनज्ञ ने पत्तियों के वर्णकों के लिए एक पृथक्करण प्रक्रम प्रस्तुत किया। उसके प्रयोग में पत्तियों के विभिन्न रंग वाले अवयवों को पेट्रोलियम ईथर में निष्कर्षित किया गया और प्राप्त निष्कर्ष को कैल्सियम कार्बोनेट के स्तंभ में से गुजरने दिया। स्तंभ में शुद्ध पेट्रोलियम ईथर लगातार मिलाते रहे। कुछ समय बाद स्तंभ में विभिन्न रंगों वाले क्षेत्र (क्लोरोफिल A, क्लोरोफिल B, जैन्थोफिल और कैरोटीन) दिखाई दिए। त्स्वेत्त ने इस प्रक्रम को क्रोमैटोग्रैफी नाम दिया। क्रोमैटोग्रैफी शब्द दो यूनानी शब्दों, क्रोमैटस और ग्रैफीन से मिलकर बना है जिनका अर्थ क्रमश:, वर्ण (रंग) और लिखना है। अनेक दशाब्दियों तक इस विधि को स्वीकृति नहीं मिली और 1930 के दशक तक कोई प्रगति नहीं हुई। सन् 1931 में कुन (Kuhn) और लेडेरर (Lederer) ने इस विधि के सफल प्रयोग से कैरोटीनों को पृथक किया। सन् 1941 में मार्टेन

और सिंगे (Martain and Synge) ने विभाजन वर्णलेखिकी को विकसित किया और सन् **1944** में कंस्टेन (Consten), मार्टिन और गोरडोन (Gordon) ने कागज वर्णलेखिकी का विकास किया। सन् **1952** में मार्टिन और जेम्स (James) ने गैस वर्णलेखिकी विकसित की। बाद के वर्षों में पतली परत वर्णलेखिकी, जेल वर्णलेखिकी, बन्धुता वर्णलेखिकी और आयन विनिमय वर्णलेखिकी का विकास हुआ।

17.4 वर्णलेखिकी का सिद्धांत

17.4.1 परिभाषा

वर्णलेखिकी विविध प्रकार की तकनीकों की ओर संकेत करती है जिनके द्वारा दो अमिश्रणीय प्रावस्थाओं के बीच नमूने के वितरण द्वारा उसके अवयवों को पृथक किया जाता है। एक प्रावस्था स्थिर होती है जबकि दूसरी गतिशील होती है जो पहली प्रावस्था में से अंत:स्रवण करती है। स्थिर प्रावस्था ठोस अथवा द्रव होती है जबकि गतिशील प्रावस्था द्रव अथवा गैस हो सकती है।

17.4.2 वर्गीकरण

वर्णलेखिकी के वर्गीकरण की अनेक विधियाँ हैं।

1) गतिशील प्रावस्था की भौतिक अवस्थाओं के आधार पर वर्णलेखिकी को दो सामान्य वर्गो में विभाजित किया जाता है।
   - *द्रव वर्णलेखिकी* जिसमें प्रयुक्त गतिशील प्रावस्था द्रव के रूप में होती है।
   - *गैस वर्णलेखिकी* जिसमें प्रयुक्त गतिशील प्रावस्था गैस होती है।
2) स्थिर प्रावस्था की भौतिक अवस्थाओं और उसके कार्यकारी नियम के आधार पर वर्णलेखिकी का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है :
   - *अधिशोषण वर्णलेखिकी* जिसमें स्थिर प्रावस्था कोई ठोस होती है और अधिशोषक के रूप में कार्य करती है।
   - *विभाजन वर्णलेखिकी* जिसमें स्थिर प्रावस्था कोई द्रव अथवा किसी अक्रिय ठोस पर अवलंबित द्रव होता है। विलेय की गति दो प्रावस्थाओं में विलेय के विभाजन गुणांक पर आधारित होती है।
   - *आयन-विनिमय वर्णलेखिकी* जिसमें स्थिर प्रावस्था कोई आयन विनिमयित्र होता है और विलेय का वितरण आयन विनिमय नियम पर आधारित होता है।
   - *जेल वर्णलेखिकी* जिसमें स्थिर प्रावस्था के रूप में जेल होता है तथा पृथक्करण उसके चालन क्रिया पर आधारित रहता है।
3) स्तंभ की किस्मों के आधार पर वर्णलेखिकी का वर्गीकरण इस प्रकार किया जाता है :
   - *स्तंभ वर्णलेखिकी* जिसमें बंद स्तंभ का उपयोग किया जाता है। इस बंद स्तंभ के अंदर एक बेलनाकार नली में स्थिर प्रावस्था होती है।
   - *शीट वर्णलेखिकी* में एक खुला स्तंभ होता जिसमें निस्यंदक पत्र की शीटों अथवा पतली परतों में पृथक्करण किया जाता है जो कांच अथवा सूक्ष्म ठोस कणों की प्लास्टिक की प्लेटों पर अवलंबित रहती हैं।

MAADHYAM IAS

17.4.3 नियम

वर्णलेखिकी मुख्यत: एक पृथक्करण प्रक्रम है जिसमें नमूने को दो प्रावस्थाओं में विभाजन द्वारा पृथक किया जाता है। एक प्रावस्था स्थिर होती है और दूसरी गतिशील। गतिशील प्रावस्था,

स्थिर प्रावस्था में से प्रवाहित होती है। गतिशील प्रावस्था के चलते समय मिश्रण के प्रत्येक घटक के अधिशोषण-विशोषण अथवा विभाजन अथवा आयन विनिमय जैसे व्यवहारों में कई गुना वृद्धि हो जाती है। इन प्राचलों के द्वारा विभिन्न विलेयों के बीच भेद किया जा सकता है। दो विलेयों को पृथक करने की वर्णलेखिकी की क्षमता प्रक्रम की वरणात्मकता पर तथा तंत्र के दो विलेयों के बीच भेद करने की मात्रा पर निर्भर करती है। वितरण का परिमाण, विलेय की और गतिशील तथा स्थिर प्रावस्थाओं के भौतिक-रासायनिक स्वभाव के साथ-साथ विलेय के स्थिर और गतिशील प्रावस्थाओं के साथ विभिन्न भौतिक अन्योन्य क्रियाओं (जैसे हाइड्रोजन आबंधन, द्विध्रुव आघूर्ण आदि) द्वारा निर्धारित किया जाता है।

बोध प्रश्न

1) वर्णलेखिकी की परिभाषा दीजिए।

....

....

....

....

....

17.5 वर्णलेखिकी की शब्दावली

वर्णलेखिकी में अनेक शब्दों का बार-बार प्रयोग होता है जो वर्णलेखन तकनीक की भाषा होते हैं।

17.5.1 गतिशील प्रावस्था

वर्णलेखन तकनीक में चलायमान घटक को गतिशील प्रावस्था कहते हैं। गतिशील प्रावस्था कोई द्रव अथवा द्रवों का मिश्रण होता है। केवल गैस वर्णलेखिकी में गैस का उपयोग किया जाता है।

17.5.2 स्थिर प्रावस्था

जब माध्यम गतिशील नहीं होता है उस स्थिति को स्थिर प्रावस्था कहते हैं। तंत्र के स्थाई अथवा ठोस भाग को अधिशोषक कहते हैं। क्योंकि वह विलेय का अधिशोषण करता है न कि अवशोषण। अधिशोषक और अवशोषक के बीच अंतर समझना आवश्यक है। अवशोषण में विलेय (पदार्थ जिसे पृथक करना है) को लेकर उसे दूसरे पदार्थ के अंदर, जिसे अवशोषक कहते हैं, धारण किया जाता है। उदाहरण के लिए स्पंज, जल का अवशोषण करता है। अधिशोषण में ठोस, विलेय को अपने पृष्ठ में धारण करता है। विलेय को धारित करने वाले ठोस को अधिशोषक कहते हैं। अधिशोषक, अधिशोषित पदार्थ को आसानी से मुक्त कर देता है।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

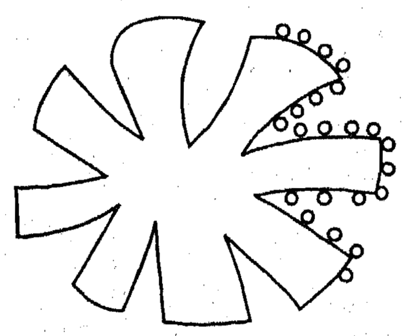

चित्र 17.2: रंध्रों और अधिशोषित अणुओं के साथ गोल अधिशोषक कण

उत्तम अधिशोषक के निम्नलिखित गुणधर्म होने चाहिए :

i) अधिशोषक को पृथक किए जा रहे विलेय के साथ अभिक्रिया नहीं करनी चाहिए,

ii) अधिशोषक को गतिशील प्रावस्था में नहीं घुलना चाहिए,

iii) अधिशोषक को गतिशील प्रावस्था के साथ अभिक्रिया नहीं करनी चाहिए,

iv) अधिशोषक को गतिशील प्रावस्था के साथ विलेय को मुक्त करना चाहिए।

आमतौर पर प्रयुक्त अधिशोषक हैं : सिलिका, जेल, ऐलुमिना, सेलुलोस और जान्तव कोयला।

17.5.3 नमूना

पृथक किए जाने वाले यौगिकों के मिश्रण को नमूना कहते हैं।

17.5.4 घटक अथवा विलेय

नमूने के पृथक अवयव को घटक अथवा विलेय कहते हैं।

17.6 कुछ मौलिक संकल्पनाएं

17.6.1 मंदन गुणक (आर. एफ.)

आर. एफ (R_f), सामान्यतया सभी वर्णलेखन तंत्रों के लिए प्रयुक्त होता है जिसमें निक्षालक के सापेक्ष अधिकतम सान्द्रता वाले बिन्दु की गति पर विचार किया जाता है। इसे निम्न समीकरण द्वारा व्यक्त किया जाता है :

$$R_f = \frac{\text{ds}}{\text{dm}} = \frac{\text{विलेय क्षेत्र के केन्द्र द्वारा तय की गई दूरी}}{\text{विलायक अग्र द्वारा तय की गई दूरी}}$$

कम आर. एफ. मान व्यक्त करते हैं कि विलायक के साथ गमन करने की कम प्रवृत्ति है और इस प्रकार वे प्रबल विलेय-अधिशोषक पारस्परिक क्रिया की ओर संकेत करते हैं। इसके विपरीत अधिक आर. एफ. मान विलेय की कम ध्रुवता और दुर्बल विलेय-अधिशोषक आकर्षण की ओर संकेत करते हैं (बशर्ते विलायक, अधिशोषक से कम ध्रुवीय हो)। प्रयोग की दी गई शर्तों में आर. एफ. मानों को लगभग स्थिर माना जा सकता है जिनका उपयोग घटकों के अभिनिर्धारण के लिए किया जा सकता है। किन्तु समान शर्तों में संदर्भ मानकों के बिना उन्हें परिशुद्ध माप के लिए स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

17.6.2 क्रोमैटोग्राम (Chromatogram)

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

क्रोमैटोग्राम, नमूने के घटकों की सान्द्रता का निक्षालन आयतन (अथवा निक्षालय समय) के सम्मुख आलेखित चित्र होता है। यदि विलेयों के साथ अनुक्रिया करने वाले संसूचक को स्तंभ के सिरों पर रख दिया जाए तो संसूचक की अनुक्रिया का उपयोग सीधे सान्द्रता को मापने के लिए किया जाता है। द्रव वर्णलिखिकी में निक्षालन आयतन को वरीयता दी जाती है, उत्तम क्रोमैटोग्राम के लिए क्षेत्रों को, सुसंहत, सुस्पष्ट और सुपृथकित होना चाहिए।

17.6.3 वियोजन (Resolution)

कुछ विलेय-युग्मों को पृथक करने की क्षमता को वियोजन कहते हैं। उत्तम वियोजन के लिए क्षेत्रों को सुपृथकित होना चाहिए अर्थात् क्षेत्र-केन्द्रों के बीच पर्याप्त दूरी होनी चाहिए और क्षेत्रों में अतिव्याप्ति नहीं होनी चाहिए।

सामान्यतया, वियोजन, स्तंभ की लंबाई और वितरण गुणांक द्वारा होता है। इसलिए वियोजन से प्रयोगिक अवस्थाओं में परिवर्तन हो सकता है। उदाहरण के लिए स्तंभ की लंबाई में वृद्धि से वियोजन में भी वृद्धि हो जाती है।

बोध प्रश्न

2) चित्र में ऐसीटोफीनोन और हेक्साडेकानॉल के मिश्रण के पृथक्करण को देखिए।
(क) ऐसीटोफीनोन (ख) हेक्साडेकानॉल का R_f (आर. एफ.) मान परिकलित कीजिए।

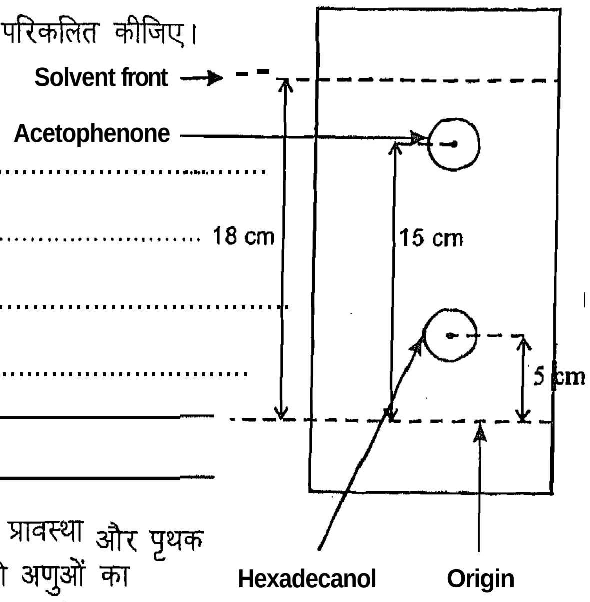

....

....

....

....

17.7 अधिशोषण तंत्र

अधिशोषण तंत्र (adsorption system) के अंतर्गत स्थिर प्रावस्था, गतिशील प्रावस्था और पृथक किए जाने वाले घटक आते हैं। स्थिर प्रावस्था अत्यधिक ध्रुवीय होती है जो अणुओं का मज़बूती के साथ अधिशोषण करती है। स्थिर प्रावस्था के रूप में प्राय: सिलिका जेल और ऐलुमिना का उपयोग किया जाता है। सिलिका जेल में मौजूद ऑक्सीजन परमाणु और सिनेनॉल समूह (Si-OH) अधिशोषण स्थल होते हैं जो ध्रुवीय अणुओं के साथ शीघ्र हाइड्रोजन आबंध बनाते हैं। यदि नमूने के घटकों का बहुत मज़बूती के साथ अधिशोषण हो जाए तो उन्हें उपयुक्त विलायक द्वारा पृथक करना (निक्षालन (elute)) कठिन होता है। इसके विपरीत यदि विलेय ध्रुवीय न हो; (जैसे हाइड्रो- कार्बन) और विलायक पर्याप्त ध्रुवीय हो तो बहुत कम पृथक्करण के साथ अथवा पृथक्करण के बिना, निक्षालन बहुत शीघ्रतापूर्वक होता है।

गतिशील प्रावस्था को लें तो पृथक अणुओं की ध्रुवता का ध्यान रखना भी महत्वपूर्ण है। इसके कारण विक्षालवर्ती श्रेणी की रचना होती है जैसा कि सारणी 17.1 में दिखाया गया है। इसमें विलायकों को बढ़ती निक्षालन शक्ति के क्रम में व्यवस्थित किया गया है।

सारणी 17.1: विक्षालवर्ती श्रेणी का भाग

⇩ हेक्सेन
पेट्रोलियम स्पिरिट
साइक्लोहेक्सेन
टेट्राक्लोरोमेथेन

⇩ मेथिलबेन्जीन
बेन्जीन
एथॉक्सीएथेन (डाइएथिल ईथर)
ट्राइक्लोरोमेथेन

⇩ डाइक्लोरोमेथेन
टेट्राहाइड्रोफ्यूरेन
प्रोपेन

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

एथिल एथेनोएट
सायनोमेथेन
पिरिडीन
प्रोपेन-2-ऑल
एथेनॉल
मेथेनॉल
जल
कार्बनिक अम्ल

किसी मिश्रण के घटकों को भली प्रकार पृथक करने हेतु उपयुक्त विलायक प्रयुक्त करने के लिए निम्नलिखित दो बातों का ध्यान रखना चाहिए :

1) अत्यंत ध्रुवीय विलायक स्थिर प्रावस्था के पृष्ठ पर अधिशोषण के लिए पृथक किए जाने वाले विलेयों के साथ प्रतिस्पर्धा करेगा। अतः ये विलेय आसानी से विस्थापित हो जाएंगे और इनका कम धारण समय होगा अर्थात् विलेय के टी. एल. सी. प्लेट अथवा स्तंभ से निकलने में लगने वाला समय कम होगा। यदि विभिन्न घटकों का धारण समय कम हो जाए तो कम पृथक्करण होगा।

2) जो विलायक कम ध्रुवता के कारण भली भांति अधिशोषित नहीं होते हैं, विलेय अणुओं के साथ प्रभावपूर्वक प्रतिस्पर्धा नहीं करते हैं, इसलिए वे पृष्ठ से विलेय अणुओं को शीघ्र विस्थापित नहीं करते हैं अतः धारण समय बहुत अधिक हो जाता है। इससे भी कम पृथक्करण होगा।

वास्तव में न्यूनतम संभव ध्रुवीय विलायक के साथ निक्षालन करने से अधिकतम पृथक्करण होता है

बोध प्रश्न

3) i) निम्नलिखित यौगिकों को बढ़ती निक्षालन शक्ति के क्रम में व्यवस्थित कीजिए।

3 साइक्लोहेक्सेन ii) एथिल एथेनोएट iii) बेन्जीन .

iv) प्रोपेन-2-ऑल v) डाइक्लोरोमेथेन vi) प्रोपेन

....

....

....

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

17.8 पतली परत वर्णलेखिकी (टी.एल.सी.)

इजमे लोव और श्राइबर (Izmailov and Schreiber) ने 1938 में पतली परत वर्णलेखिकी को 'बूंद वर्णलेखिकी' के नाम से प्रस्तुत किया। एक दशक बाद माइनहार्ट और हॉल (Meinhardt and Hall) ने अधिशोषक लेपित कांच की प्लेटों का उपयोग किया और 'पृष्ठ वर्णलेखिकी' नाम दिया। सन् 1958 में स्टाही (Stahi) के व्यवस्थित कार्यविधि अपनाने के बाद इसका अधिक उपयोग होने लगा है। स्टाही द्वारा अपनाई गई विधि में मानक आमाप की कांच की प्लेटें, परतें बनाने का उपकरण और मानक अधिशोषक, पेरिस प्लास्टर मिश्रित सिलिका जेल का उपयोग किया जाता है। स्टाही ने इस विधि को 'पतली परत वर्णलेखिकी' कहा जिसे अब टी. एल.सी. संक्षिप्त नाम से व्यापक तौर पर प्रयुक्त किया जाता है।

शाब्दिक तौर पर टी.एल.सी. ऐसी कोई भी वर्णलेखन पद्धति है जिसमें स्थिर प्रावस्था के रूप में कोई पतली परत (कांच या प्लास्टिक की प्लेट अथवा धातु की पर्णी पर विलेपित सिलिका जेल अथवा ऐलुमिना) होती है और गतिशील प्रावस्था के रूप में कोई द्रव प्रयुक्त होता है। छोटी प्रयोगशालाओं के लिए, उन्नत वर्णलेखन उपस्कर जिनकी पहुँच के बाहर होते हैं, यह उत्तम तकनीक है। उच्च गति और स्थिर प्रावस्था में आसानी से परिवर्तन, टी. एल. सी. के लाभ हैं।

17.8.1 टी.एल.सी. प्लेट तैयार करना

मात्रात्मक कार्य में यथार्थता के लिए पुन: प्राप्य आर. एफ. प्राप्त करने के लिए अधिशोषक का एकसमान विलेय होना आवश्यक है। विलेपन, हाथ से अथवा स्वत: किया जा सकता है, जो मंहगा होता है। परत की मोटाई 2 से 10 mm तक होती है। किन्तु गुणात्मक और मात्रात्मक विश्लेषण के लिए क्रमश: 2.5 और 5 mm मोटी परतें प्रचलित हैं। विलेपन के लिए आमतौर पर सिलिका जेल और ऐलुमिना का अवशोषक के रूप में उपयोग किया जाता है। अन्य प्रयुक्त अवशोषक, सेलुलोस, पॉलिएमाइड, चारकोल, मैग्नीशियम आक्साइड, जेल और आयन विनिमयक हैं।

17.8.2 क्रोमैटोग्राम का विकास

क्रोमैटोग्राम के विकास का अर्थ है प्लेट पर मिश्रण का पृथक्करण जिसमें द्रव प्रावस्था को प्लेट पर विलेपित अधिशोषक में ऊपर की ओर गमन करने दिया जाता है। द्रव नमूने को केशिका नली की मदद से आधार से 1 cm ऊपर सीधे प्लेट पर प्रयुक्त किया जा सकता है। मात्रात्मक कार्य के लिए सूक्ष्मपिपेट का उपयोग किया जाता है जबकि प्लेट के न्यूनतम बिन्दु क्षेत्र पर 1-25 माइक्रोलिटर नमूना प्रयुक्त किया जाता है। ठोस नमूने को सीधे प्लेट पर प्रयुक्त नहीं किया जा सकता है इसलिए प्रयोग करने से पहले उसे उपयुक्त विलायक में घोल लेना चाहिए। बिन्दु के सूख जाने के बाद प्लेट को कांच के कोष्ठ में रख दिया जाता है जिसमें विकासक द्रव (गतिशील प्रावस्था) होता है, चित्र 17.3। कांच कोष्ठ, विशेष रूप से बनाया गया बेलनाकार अथवा आयताकार बंद जार होता है। कोष्ठ को एक अथवा अधिक प्लेटों को विकसित करने के लिए बनाया जाता है। इसका अर्थ है कि एक ही विकासक विलायक के उपयोग से उसी टंकी में एक से अधिक प्लेटों को विकसित किया जा सकता है।

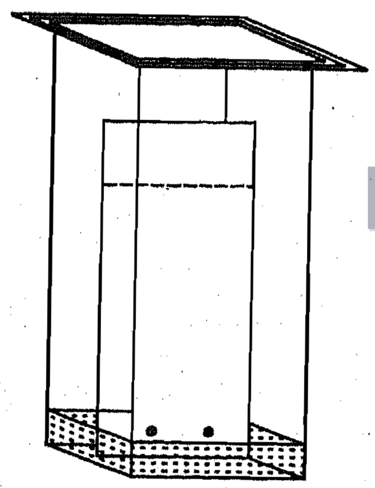

MAADHYAM IAS

चित्र 17.3: टी.एल.सी. प्लेट का विकास

जैसे ही विलायक ऊपर की ओर गमन करता है नमूना मिश्रण में मौजूद घटक भी ऊपर की ओर गमन करते हैं। जो घटक सबसे कम मजबूती के साथ अधिशोषित होगा वह सबसे अधिक दूरी तय करेगा। यदि विलायक का चयन ठीक प्रकार से किया जाए प्लेट में ऊपर की ओर गमन करने वाले बिन्दुओं को देखा जा सकता है बशर्तें विलेय रंगीन हों। विलायक द्वारा आवश्यक दूरी (अथवा समय) गमन कर चुकने के बाद प्लेट को कोष्ठ में से निकाल दिया जाता है। सुखाने के बाद बिन्दुओं को सीधे अथवा पराबैंगनी प्रकाश द्वारा अथवा संसूचक की फुहार करने के बाद देखा जा सकता है। बिन्दुकन रेखा से बिन्दु के केन्द्र की दूरी को तथा विलायक द्वारा तय की गई दूरी को नापकर आर. एफ. मान परिकलित किए जा सकते हैं।

17.8.3 बिन्दुओं की पहचान

रंगीन क्षेत्रों का स्थान-निर्धारण, देखकर आसानी से किया जा सकता है। किन्तु कभी कभी बिन्दुओं की स्थिति जानने के लिए फुहार अभिकर्मक का उपयोग आवश्यक होता है। इन अभिकर्मकों का विकसित और शुष्क प्लेटों पर फुहार किया जाता है। देखने के लिए प्रयुक्त इन अभिकर्मकों को नमूने के घटकों के साथ रंगीन उत्पाद बनाने चाहिए।

पराबैंगनी का अवशोषण करने वाले यौगिकों का स्थान-निर्धारण करने के लिए विकसित प्लेट को पराबैंगनी लैंप के नीचे रखा जाता है जिसमें घटक क्षेत्र काले बिन्दुओं के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। किन्तु प्रतिदीप्ति वाले यौगिक पराबैंगनी लैंप के नीचे चमकीले क्षेत्र के रूप में दिखाई देते हैं।

जब प्लेटों को विकसित करने के बाद NH_3, SO_2, Br_2 और I_2 आदि गैसों वाली टंकियों में रखा जाता है तो पक्वन प्रक्रम का उपयोग किया जाता है। कभी कभी रेडियोऐक्टिव घटकों की पहचान और निर्धारण के लिए रेडियोऐक्टिव संसूचकों का उपयोग किया जाता है।

17.8.4 घटकों का अभिनिर्धारण

किसी यौगिक का अभिनिर्धारण करने के लिए उसके आर. एफ. मान की शुद्ध यौगिक (मानक यौगिक) के आर. एफ. मान के साथ तुलना की जाती है। माना दिए गए मिश्रण में यौगिक क, ख, और ग हैं। आपके पास शुद्ध मानक यौगिक क, ख और ग भी हैं। यदि मिश्रण का शुद्ध मानक यौगिक के साथ बिन्दुकन किया जाए तो आर. एफ. मानों की तुलना से मिश्रण में यौगिक के स्वभाव का पता लगेगा। चित्र 17.4 के अध्ययन से आप इस स्थिति को समझ सकते हैं। मिश्रण में तीन घटक हैं : पहला (क) जिसका आर. एफ. मान वही है जो मानक नमूने में से एक का। अतः इसका अभिनिर्धारण किया जा सकता है। उसी प्रकार अन्य का भी अभिनिर्धारण किया जा सकता है।

MAADHYAM IAS

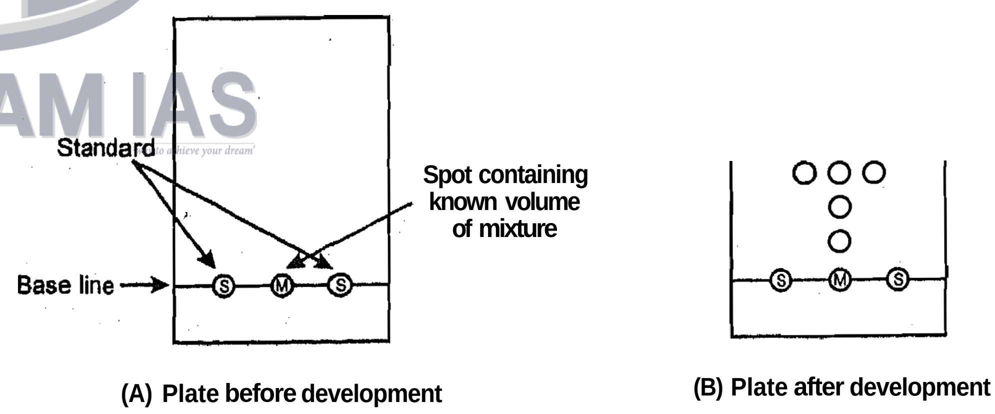

चित्र 17.4: अज्ञात यौगिक और मानक यौगिक के आर. एफ. मानों की तुलना।

17.8.5 प्रमात्रीकरण

प्रमात्रीकरण (quantification) में केवल देखकर मोटा अनुमान लगाया जा सकता है। इसमें नमूना घटक के रंगीन क्षेत्र की तीव्रता की मानक के साथ तुलना की जाती है। इसके लिए नमूना घटक की प्लेट को दो मानकों के बीच रखा जाता है जिनकी तीव्रताएं नमूना घटक की तीव्रता के निकट होती हैं। नमूना घटक की अपेक्षा एक घटक की तीव्रता कम और दूसरे की अधिक होनी चाहिए। यह विश्वसनीय विधि नहीं है क्योंकि इसमें बहुधा 10% अथवा अधिक त्रुटियां पाई जाती हैं।

स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी विधियां अधिक ठीक हैं क्योंकि उनसे प्राप्त परिणामों में त्रुटियां कम होती हैं। पतला माध्यम क्रोमैटोग्रामों के प्रमात्रीकरण के लिए ये विधियां अधिक पसन्द की जाती हैं क्योंकि वे सुग्राही, यथार्थ और पुनरुत्पादनीय होती हैं।

हाल में आविष्कृत पूर्णत स्वचालित टी.एल.सी. क्रमवीक्षण (Scanner) विधि अत्यंत सुग्राही और यथार्थ है। इसमें टी.एल.सी. द्वारा पृथक्करण के बाद रेडियोऐक्टिव चिन्हित पदार्थ की पहचान की जाती है।

बोध प्रश्न

4) दृष्टि अभिकर्मक (visualising agent) किसे कहते हैं? तीन दृष्टि अभिकर्मकों के नाम बताइए।

....

....

....

....

17.9 स्तंभ वर्णलेखिकी

सामान्यतया स्तंभ वर्णलेखिकी एक द्रव-ठोस अधिशोषण तकनीक है। स्तंभ वर्णलेखिकी का मौलिक नियम वहीं है जो टी.एल.सी. का। स्तम्भ वर्णलेखिकी ऐसी तकनीक है जिसका उपयोग अनेक जटिल मिश्रणों को पृथक करने के लिए किया जाता है। इस वर्णलेखन पद्धति में स्थिर प्रावस्था स्तंभ के अंदर होती है। नमूने को स्तंभ के शीर्ष से डाला जाता है और गतिशील प्रावस्था स्तंभ में नीचे की ओर प्रवाहित होती है।

स्तंभ वर्णलेखिकी द्वारा पृथक्करण की सफलता स्थिर प्रावस्था और गतिशील प्रावस्था के चयन पर निर्भर करती है। गतिशील प्रावस्था का चयन गतिशील प्रावस्था के स्वभाव के साथ-साथ इस बात पर भी निर्भर करता है कि वह कितनी मजबूती के साथ अधिशोषित होती है। अनेक मामलों में, जैसे ऐलुमिना और सिलिका जेल को अधिशोषक के रूप में प्रयुक्त करने पर, गतिशील प्रावस्था के रूप में पेट्रोल, बेन्जीन आदि अध्रुवीय विलायकों का उपयोग किया जाता है क्योंकि ध्रुवीय समूह वाले विलायक में, (जैसे जल और एथेनॉल में हाइड्रोक्सिल समूह) विशोषण आसानी से हो जाता है, जिन निक्षालकों में दो अथवा अधिक समूह होते हैं उनका उपयोग अच्छे परिणामों के लिए किया जा सकता है। ऐसे मामलों में अध्रुवीय विलायक में ध्रुवीय विलायक मिलाकर ध्रुवता में वृद्धि की जाती है जैसा कि भाग 17.7 में चर्चा की गई है।

चित्र 17.5 में दिखाए गए स्वंभ पर विचार करें जिसे, बेलनाकार कांच की नली में स्थिर प्रावस्था पदार्थ को कर्दम के रूप में लेकर बनाया गया है। नली की तली को कांच, ऊन अथवा कपास से बंद कर दिया गया है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

माना हमें A और B दो रंगीन घटकों वाले मिश्रण से घटकों को पृथक करना है जिनके वितरण गुणांक क्रमश: K_A और K_B हैं। K स्थिर प्रावस्था में विलेय की सान्द्रता का गतिशील प्रावस्था में विलेय की सान्द्रता के साथ अनुपात है ($K = c_s/c_m$)। माना $K_A < K_B$

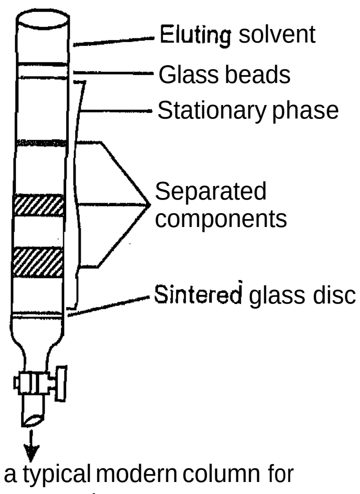

Schematic diagram of a typical modern column for chromatography

चित्र 17.5: वर्णलेखन स्तंभ

स्तंभ के शीर्ष में नमूना विलयन की अल्प मात्रा प्रयुक्त की जाती है। पहले स्तंभ में एक संकीर्ण बैंड बनता है। उसके बाद निक्षालक को (विकासक अथवा गतिशील प्रावस्था) स्तंभ में डालकर आगे बढ़ने दिया जाता है। जैसे-जैसे निक्षालक स्थिर प्रावस्था के ऊपर से रिसता है, कुछ विलेय अणु स्थिर प्रावस्था से निकलकर विकासक में स्थानांतरित हो जाते हैं क्योंकि $K_A < K_B$। अत: विकासक में A की मात्रा अधिक होगी। इस प्रकार जब विकासक, संकीर्ण बैंड से आगे बढ़ता है उसमें B से A की मात्रा अधिक होती है। विकासक फिर से ताज़े स्थिर प्रावस्था के संपर्क में आता है। प्रत्येक बार स्थिर प्रावस्था से आगे बढ़ने पर उसमें A की मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है। शीघ्र ही सुपृथकित बैंड प्राप्त हो जाते हैं जिन्हें उनके क्रमिक रंगों द्वारा देखा जा सकता है। यदि विकास की क्रिया चलती रहे तो घटक, स्तंभ से बाहर निकल आते हैं। A विलेय, जिसका K मान कम है, पहले निकलता है। उसके बाद अधिक K मान वाला B विलेय निकलता है। वर्णलेखन प्रक्रम के विभिन्न चरण चित्र 17.6 में दिखाए गए हैं।

MAADHYAM IAS

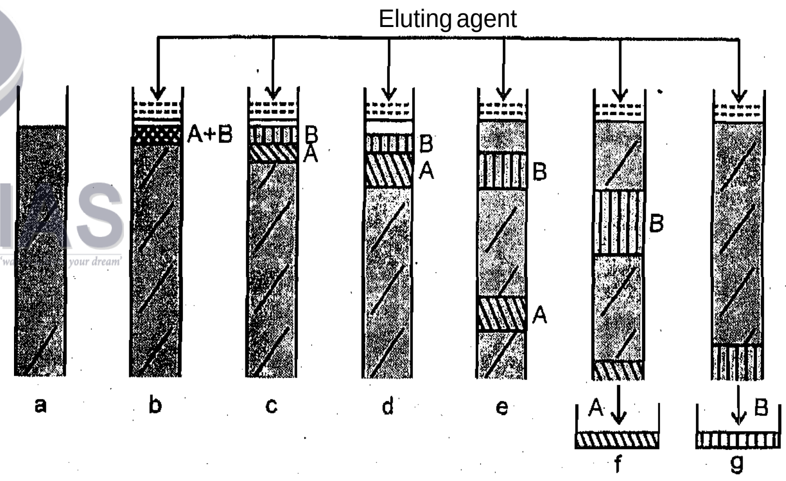

चित्र 17.6: दो घटकों वाले मिश्रण के पृथक्करण के विभिन्न चरण

बहि:स्राव का विश्लेषण किया जाता है और सान्द्रता को बहि:स्राव आयतन के फलन के रूप में आलेखित किया जाता है। एक द्रव क्रोमैटोग्राम प्राप्त होता है जैसा कि चित्र 17.7 में दिखाया गया है।

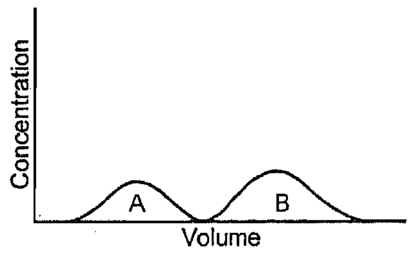

चित्र 17.7: द्रव क्रोमैटोग्राम

17.10 कागज़ वर्णलेखिकी

कागज़ वर्णलेखिकी को 1944 में कॉन्सडेन, गॉर्डन (Consden, Gordon and Martin) और मार्टिन ने प्रस्तुत किया था। यह विभिन्न वर्गों के यौगिकों के पृथक्करण और अभिनिर्धारण की सुग्राही और सस्ती विधि सिद्ध हुई है। इसका प्रयोग पर्यावरण विश्लेषण के लिए भी किया जा सकता है। यद्यपि इस विधि से मात्रात्मक विश्लेषण भी किया जा सकता है किन्तु इसका मुख्य अनुप्रयोग गुणात्मक अभिनिर्धारण में होता है।

17.10.1 नियम

कागज़ वर्णलेखिकी द्वारा पृथक्करण, मुख्यत: जल संतृप्त सेलुलोस (स्थिर प्रावस्था) और विकास द्रव (गतिशील प्रावस्था) के परस्पर वितरण अनुपात पर आधारित है। निस्यंदक पत्र में मौजूद सेलुलोस अक्रिय आधार के रूप में काम करता है।

यद्यपि प्रमुख कारक विभाजन है, अपितु कागज़ वर्णलेखिकी द्वारा किए जाने वाले अनेक पृथक्करणों में अधिशोषण की भी भूमिका होती है। इस प्रकार कागज़ वर्णलेखिकी में स्थिर प्रावस्था के रूप में या तो स्वयं कागज़ होता है (अधिशोषण) अथवा उसमें सेलुलोस और एक द्रव (विभाजन) होता है।

स्पष्ट है कि कागज़ क्रोमैटोग्राम में विकासक (गतिशील प्रावस्था) की प्रवाह दर मंद होती है तथा दो प्रावस्थाओं के बीच विलेयों के वितरण प्रक्रम की कई बार पुनरावृत्ति होती है। कागज़ में विकासक का आरोहण केशिका क्रिया द्वारा होता है तथा विलेय भिन्न गतियों से कागज़ में ऊपर की ओर गमन करते हैं जो विलेय के स्थिर प्रावस्था और गतिशील प्रावस्था के बीच वितरण पर आधारित होता है। विलायक की तुलना में विलेय की आपेक्षिक संचलन-दर आर. एफ. मानों के रूप में मापी जाती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

द्विविम वर्णलेखिकी द्वारा पृथक्करण शक्ति में वृद्धि होती है जिसमें कागज़ के एक कोने पर कागज़ का वर्गाकार टुकड़ा बिन्दुकित किया जाता है। पहले उसे विकासक द्वारा विकसित किया जाता है। सुखाने के बाद उसे 90° घुमा दिया जाता है और दूसरे विकासक द्वारा फिर से विकसित किया जाता है। यह जटिल मिश्रणों को पृथक करने की एक उपयोगी विधि है जिन्हें एक विकासक से विकसित नहीं किया जा सकता है। द्विविम वर्णलेखिकी द्वारा वियोजित 10 घटकों के परिकल्पनात्मक मिश्रण का कागज़ क्रोमैटोग्राम, चित्र 17.8 में निरूपित किया गया है।

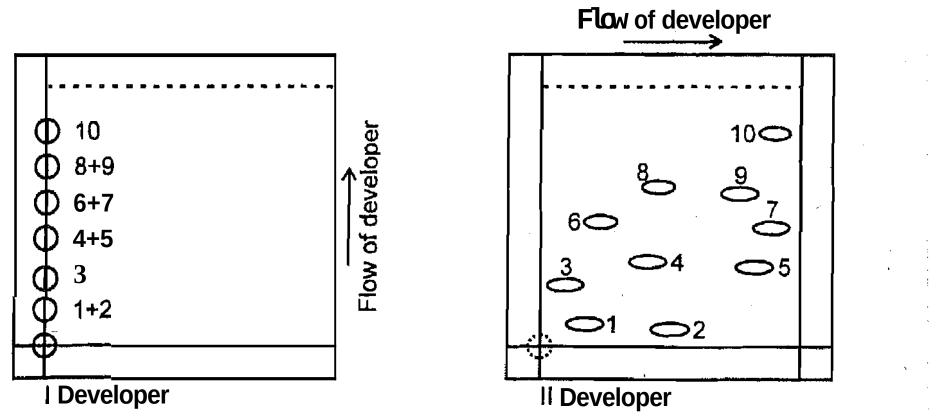

चित्र 17.8: 10 घटकों के मिश्रण (परिकल्पनात्मक) का द्विविम कागज़ वर्णलेखन पृथक्करण

17.10.2 क्रोमैटोग्राम का विकास

कागज़ में विकासक के प्रवाह की दिशा के अनुसार तीन भिन्न प्रकार की प्रक्रियाएं होती हैं: विकासक के ऊपर की ओर गमन करने से आरोहण, नीचे की ओर गमन करने से अवरोहण और क्षैतिज दिशा में गमन करने से गोलाकार आरोहण तकनीक अधिक प्रचलित है क्योंकि वह अन्य दो प्रक्रियाओं से सरल है।

आरोहण प्रक्रिया के लिए प्रयुक्त कागज वर्णलेखिकी को चित्र 17.9 में दिखाया गया है। आवश्यक आमाप का निस्यंदन पत्र (उदाहरणार्थ हूटमैन नं. 1) काटा जाता है। निस्यंदक पत्र के एक सिरे से एक से.मी. की दूरी पर पेन्सिल से एक रेखा खीची जाती है। रेखा के बीच में पेंसिल से एक बिन्दु चिन्हित किया जाता है और नमूने को केशिका की मदद से इस बिन्दु पर देखा जाता है, अच्छे परिणाम के लिए नमूना बिन्दु को यथा संभव छोटा होना चाहिए। बिन्दु को सूखने दिया जाता है और कागज़ को वर्णलेखन जार में रखा जाता है जिसमें कोई उपयुक्त विकासक होता है। विकासक को कागज़ के साथ आरोहित होने दिया जाता है जब तक वह एक निश्चित ऊँचाई तक न पहुँच जाए तथा विलेयों के क्षेत्र कागज़ में वितरित हो जाएं। कागज़ को जार से निकालकर उसमें मौजूद विलायक को उद्वाष्पित होने दिया जाता है। नमूनों के विलेयों के संगत क्षेत्रों को देखने के लिए कागज़ का उपयुक्त संसूचक के साथ उपचार किया जाता है। प्रत्येक क्षेत्र में चारों ओर पेन्सिल से निशान लगाकर उसका आर. एफ. मान परिकलित कर लिया जाता है।

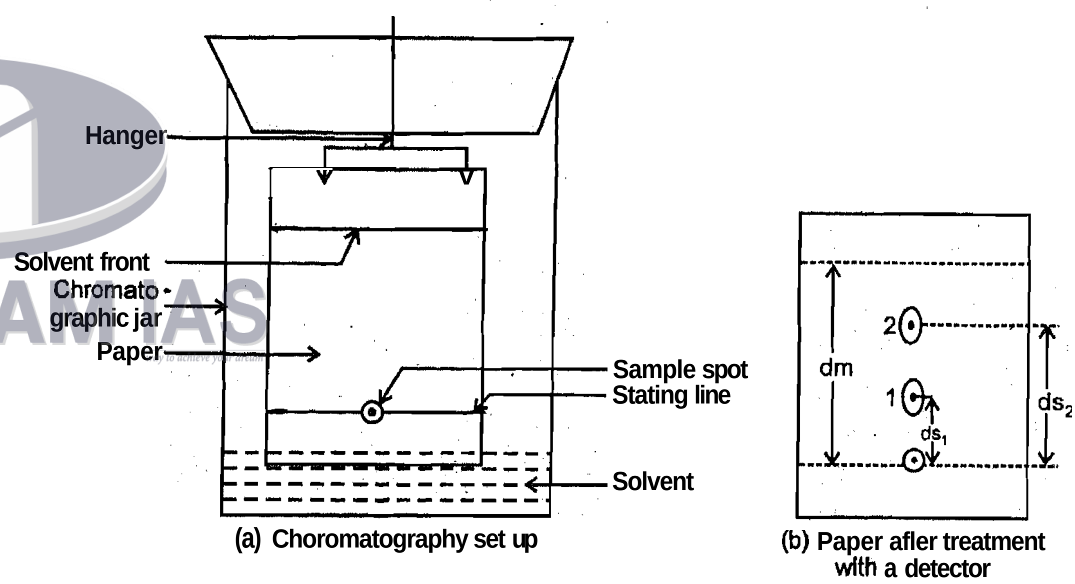

MAADHYAM IAS

चित्र 17.9: आरोहण कागज़ वर्णलेखिकी का निरूपण

17.10.3 बिन्दुओं की पहचान

यदि विलेय रंगीन हों तो उन्हें आसानी से पहचाना जा सकता है। प्रतिदीप्ति प्रदर्शित करने वाले विलेयों की पहचान करने के लिए पराबैंगनी प्रकाश का उपयोग किया जा सकता है। बहुधा अभिज्ञापक अभिकर्मकों का उपयोग किया जाता है जो विलेयों के साथ रंगीन यौगिक बनाते हैं। उदाहरण के लिए ऐमीनों अम्लों की पहचान करने के लिए निनहाइड्रिन विलयन का उपयोग किया जाता है। स्थायी अभिनिर्धारण के लिए आर. एफ. मान परिकलित करने हेतु बिन्दुओं के चारों ओर एक पेन्सिल रेखा खींची जाती है।

17.10.4 प्रमात्रीकरण

विलेय की मात्रा का लगभग आकलन बिन्दु के आमाप अथवा बिन्दु की तीव्रता द्वारा किया जा सकता है जिसमें समान्तर में वर्णलेखित मानकों द्वारा अंशांकित पैमाने के साथ देखकर तुलना की जाती है जैसा कि टी.एल.सी. में चर्चा की गई है।

17.10.5 लाभ

कागज़ वर्णलेखिकी के निम्नलिखित लाभ हैं :

i) इससे विश्वसनीय परिणाम प्राप्त होते हैं क्योंकि कागज़ समांगी, अपेक्षाकृत स्थिर, पारभासी और रूप में शीट के समान होता है।

ii) नैनोग्राम तक की सूक्ष्म मात्राओं का उपयोग किया जा सकता है।

iii) जटिल मिश्रणों के लिए द्विविम कागज़ क्रोमैटोग्राफ के उपयोग द्वारा उच्च पृथक्करण शक्ति प्राप्त की जा सकती है।

iv) आयनी पदार्थों के पृथक्करण के लिए आयन विनमय संसिक्त कागज़ों का उपयोग करके उच्च वरणात्मकता प्राप्त की जा सकती है।

17.10.6 सीमाएं

कागज वर्गलेखिकी की सीमाएं इस प्रकार हैं :

i) टी.एल.सी. की तुलना में अधिक विकास समय लगता है।

ii) क्षेत्र, सदैव, सुस्पष्ट नहीं होते हैं।

iii) पुनरुत्पाद्यता कम होती है।

iv) मात्रात्मक विश्लेषण में उच्च यथार्थता नहीं होती है।

17.11 आयन विनिमय वर्णलेखिकी

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

आयन विनिमय तकनीक, जिसे हाल ही में पुनर्व्यवस्थित किया गया है, जलीय विलयनों से आयनी स्पीशीज़ को पृथक करने और पुनः प्राप्त करने की एक सर्वतोमुखी तकनीक सिद्ध हुई है। सबसे पहले इसकी आवश्यकता रासायनिक उद्योगों में अनुभव की गई जहाँ प्रायः रसायनतः शुद्ध जल की आवश्यकता होती है। समाज में पीने, नहाने, कपड़े धोने और सिंचाई आदि विभिन्न कार्यों के लिए उपयुक्त शुद्धता के जल की आवश्यकता होती है। बाद के वर्षों में अनेक अन्य क्षेत्रों में आयन विनिमय प्रौद्योगिकी का उपयोग आरंभ हुआ। आजकल आयन विनिमयकों का उपयोग औषधियों के उत्पादन, अल्सर (व्रण) और हृदय रोग के खतरनाक प्रभावों को कम करने, उत्कृष्ट धातुओं की सान्द्रता और पुनर्प्राप्ति, रासायनों को बनाने, शर्करा चाशनी के विआयनन आदि में किया जाता है।

आजकल जल में घुले प्रदूषकों, विशेषत: आयनी प्रदूषकों, की पहचान और माप करने के लिए आयन विनिमय एक महत्वपूर्ण तकनीक है। साथ ही इस तकनीक का उपयोग औद्योगिक अपशिष्ट जल से प्रदूषक स्पीशीज़ को पृथक कर पुन: प्राप्त करने तथा जल में सूक्ष्म मात्रा में मौजूद संदूषकों के विश्लेषण के लिए किया जा सकता है।

आयन विनिमय परिघटना का आविष्कार 1850 में थॉमसन और वे ने मृदाओं में क्षारक विनिमय के नाम से किया था। जब मृदाओं की अमोनियम लवणों के साथ क्रिया की जाती है तो मृदा, अमोनियम ग्रहण कर लेती है और कैल्सियम की तुल्य मात्रा मुक्त कर देती है। बाद में यह प्रमाणित हुआ कि इस परिघटना के लिए मुख्यत: मृत्तिकाएं, जिओलाइट, ग्लूकोनाइट और ह्यूमिक अम्ल उत्तरदायी होते हैं।

1905 में गैन्स ने जिओलाइटो और मृत्तिकाओं के उपयोग से जल मृदुकरण के लिए आयन विनिमय परिघटना की व्यावहारिकता को प्रमाणित किया। 1935 में एक महत्वपूर्ण आविष्कार हुआ जब एडम्स और होल्मस ने कार्बनिक आयन विनिमय रेजिनों का संश्लेषण किया। इन रेजिनों के इससे पहले आविष्कृत उत्पादों से अधिक अच्छे गुणधर्म थे। ये रेजिन अम्लों की उपस्थिति में स्थायी और उपयोग में आसान होते हैं।

आवश्यकता के अनुसार इनकी संरचना में परिवर्तन हो सकता है। इसलिए जिओलाइटों और मृत्तिकाओं के साथ होने वाली कठिनाइयों को रेजिनों के उपयोग से दूर किया गया। तब से इन कार्बनिक आयन विनिमयकों का उपयोग प्रयोगशालाओं और उद्योगों में धातुओं को पृथक करने और पुन: प्राप्त करने, जल के शोधन, विद्युत अपघट्यों के सान्द्रण और अनेक अन्य प्रकार से किया जाता है।

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आयन विनिमय प्रक्रम का उपयोग संभवत: सबसे पहले 1939 में किया गया जबकि क्यूप्रामोनियम अपशिष्ट द्राव तांबे की प्राप्ति के लिए पायलट संयंत्र का प्रयोग हुआ। उन्नत आयन विनिमय रेजिनो के विकास से बहुमूल्य धातु आयन प्राप्ति के लिए आयन विनिमय के महत्व को 1946 में स्वीकृत किया गया। उपयुक्त आयनजनी समूह के साथ स्टाइरीन और डाइवाइनिल बेन्ज़ीन के बहुलकन द्वारा निर्मित आयन विनिमयक, पिछले सभी आयन विनिमयकों से अधिक अच्छे प्रमाणित हुए।

बोध प्रश्न

5) निम्नलिखित में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

क) आयन विनिमय .... चिह्न के आयनों में होता है। (विपरीत/समान)

ख) आयन विनिमय .... प्रक्रम है। (रससमीकरणमितीय/अरससमीकरणमितीय)

ग) आयन विनिमय सदैव एक .... प्रक्रम होता है (उत्क्रमणीय/अनुत्क्रमणीय)

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

17.11.1 आयन विनिमय पदार्थ

कोई भी आयन विनिमयक दो भागों का बना होता है, एक भाग को मैटेरिक्स कहते हैं जो ढांचा बनाता है। उसमें आयनजनी समूह के रूप में नियत अधिशेष आवेश होता है। दूसरे भाग को प्रति आयन कहते हैं। ये गतिशील और समान आवेश के आयनों के साथ रससमीकरणमितीयत: विनिमेय होते हैं। प्रति आयनों का आवेश, मैट्रिक्स के आवेश के विपरीत

होता है। वे पर्याप्त संख्या में रंध्रों में रहते हैं ताकि विनिमयक, कुल मिलाकर, विद्युत् उदासीन हो। विनिमेय धनायनों के वाहकों को धनायन विनिमयक कहते हैं जबकि विनिमेय ऋणायनों के वाहकों को ऋणायन विनिमयक कहते हैं। उदाहरण के लिए धनायन विनिमयक को चित्र 17.10 की भांति निरूपित किया जा सकता है।

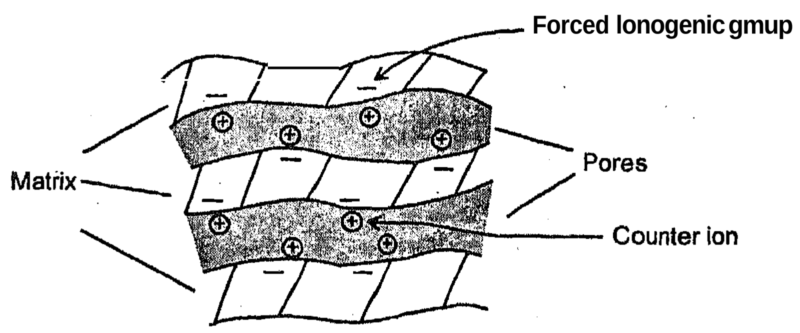

चित्र 17.10: धनायन विनिमयक का निरूपण

1935 में एडम्स और होल्मस ने फॉर्मेल्डिहाइड के साथ फ़ीनॉल सल्फोनिक अम्ल के संघनन से पहला संश्लिष्ट रेज़िन बनाया।

आयन विनिमयक पदार्थों को इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है :

1) संश्लिष्ट कार्बनिक आयन विनिमयक रेजिन।

2) प्राकृतिक और संश्लिष्ट जिओलाइट

3) संश्लिष्ट अकार्बनिक आयन विनिमयक

4) कीलेट आयन विनिमयक

इस पाठ्यक्रम में केवल संश्लिष्ट कार्बनिक आयन विनिमयक रेजिन की चर्चा की जाएगी।

1) संश्लिष्ट कार्बनिक आयन विनिमयक रेजिन

पॉलिस्टाइरीन डाइवाइनिल बेन्जीन के बहुलक सबसे महत्वपूर्ण व्यापारिक विनिमयक हैं जिनमें मैट्रिक्स के साथ स्थिर आयनजनी समूह संलग्न रहते हैं तथा रंध्रों में प्रतिआयन होते हैं। वे रासायनिक दृष्टि से हृष्ट-पुष्ट होते हैं तथा उनके फुल्लन, विनिमय क्षमता और वरणात्मकता आदि स्पष्ट गुणधर्म होते हैं। उसका व्यवस्थात्मक निरूपण चित्र 17.11 में दिखाया गया है।

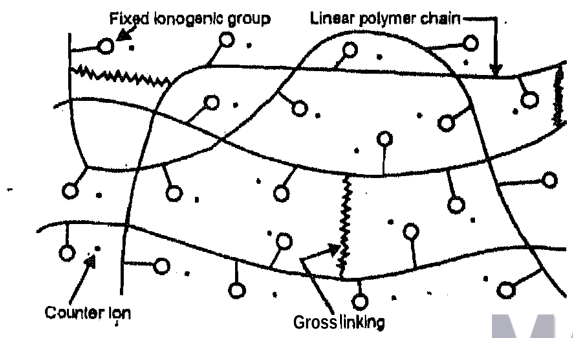

MAADHYAM IAS

चित्र 17.11: संश्लिष्ट कार्बनिक आयन विनिमयक रेज़िन का अवस्थात्मक निरूपण

धनायन विनिमयकों के लिए प्रयुक्त प्रमुख आयनजनी समूह, सल्फोनेट ($-SO_3^-$) फ़ास्फोनिक ($-PO_3^{2-}$) और कार्बोक्सेलेट ($-COOH$) हैं तथा ऋणायन विनिमयकों के लिए प्रयुक्त प्रमुख आयनजनी समूह, ऐमीन ($-NH_2^+$, $-NHR^+$, $-NR_2^+$) और चतुष्क ऐमीन ($-NR_3^+$) हैं।

नियत आयनजनी समूह के स्वभाव के अनुसार आयन विनिमयक चार प्रकार के होते हैं :

i) प्रबल अम्लीय धनायन विनिमयक

ii) दुर्बल अम्लीय धनायन विनिमयक

iii) प्रबल क्षारकीय ऋणायन विनिमयक

iv) दुर्बल क्षारकीय ऋणायन विनियमक

उदाहरण के लिए जिस विनिमयक में प्रबल अम्ल से प्राप्त $-SO_3^-$ समूह होता है उसे प्रबल अम्ल धनायन विनिमयक कहते हैं तथा जिसमें –COOH समूह होता है उसे दुर्बल अम्ल धनायन विनिमयक कहते हैं। प्रबल क्षारकीय ऋणायन विनिमयकों में चतुष्क अमोनियम आयनजनी समूह होते हैं तथा दुर्बल क्षारक ऋणायन विनिमयकों में प्राथमिक अथवा द्वितीयक ऐमीन आयन आयनजनी समूह होते हैं। इन पदार्थों के कुछ महत्वपूर्ण गुणधर्म आयनजनी समूह के स्वभाव पर निर्भर करते हैं।

प्रबल अम्ल धनायन विनिमयक

प्रमुख प्रबल अम्ल धनायन विनिमयकों में डोवेक्स-50, ऐम्बरलाइट आइ. आर.-120, ड्यूओलाइट सी-20, परम्यूटिट क्यू और अनेक अन्य पदार्थ आते हैं। ये पदार्थ स्टाइरीन और डाइवाइनिल बेन्जीन के सहबहुलकन से बनाए जाते हैं। डाइवाइनिल बेन्जीन की प्रतिशत मात्रा तिर्यक-बंधन के लिए उत्तरदायी होती है जो 2 से 20 प्रतिशत तक होती है। इसमें 8% चयन साधारण आयन विनिमयकों के लिए होता है। पर्ल बहुलकन में गोलाकार मनका प्राप्त होते हैं जिससे आवश्यकतानुसार विभिन्न आमाप के कण प्राप्त किए जा सकते हैं।

मनकाओं का सल्फ्यूरिक अम्ल अथवा क्लोरोसल्फ्यूरिक अम्ल के साथ पश्चवाहन द्वारा सल्फोनेटीकरण किया जाता है, बहुलक का प्रत्येक बेन्जीन वलय, प्रतिस्थापन अभिक्रिया द्वारा सल्फोनेटित होता है। $-SO_3^-$ समूह मैट्रिक्स के साथ संलग्न होकर उस पर ऋण आवेश उत्पन्न करता है। H^+ आयन, गतिशील आयनों की भांति रहते हैं और प्रति आयनों की भांति काम करते हैं। अभिक्रियाओं को इस प्रकार निरूपित किया जा सकता है।

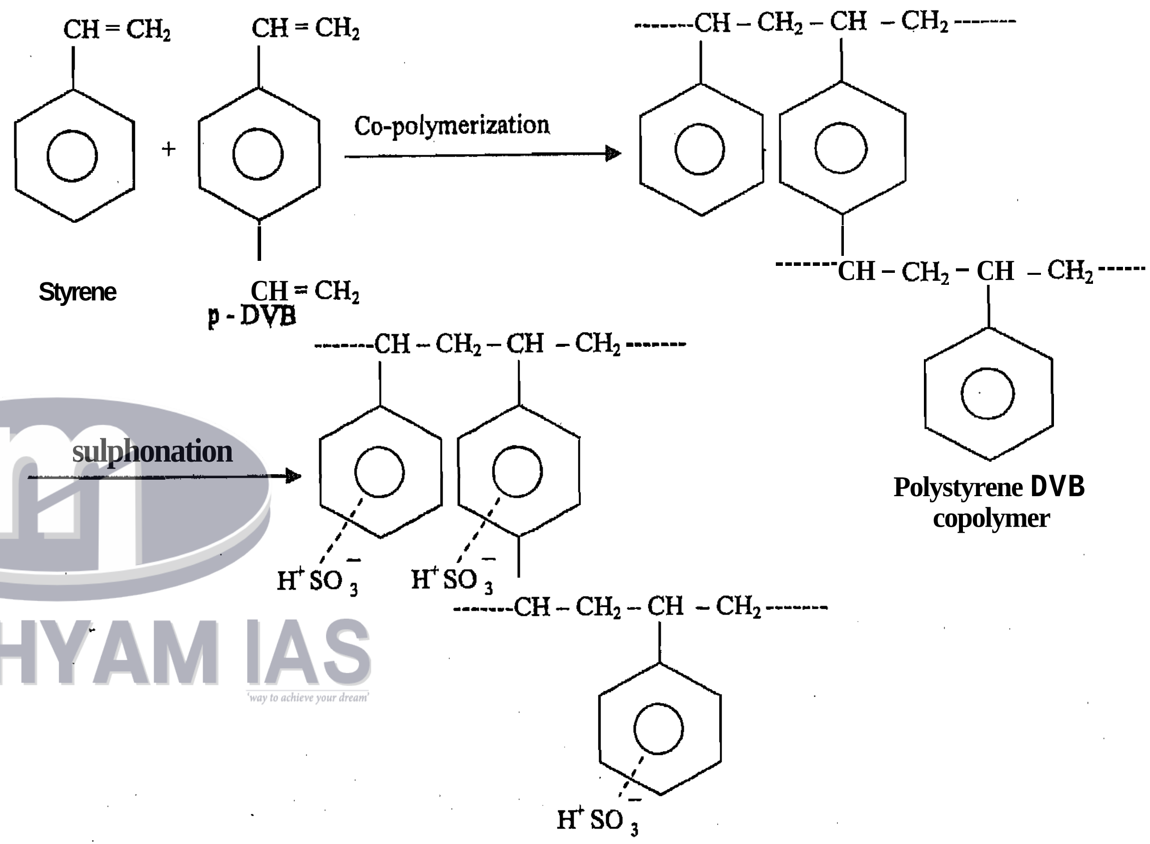

MAADHYAM IAS

दुर्बल अम्ल धनायन विनिमयक

वोफाल्ट सी और ऐम्बरलाइट 45 सी दुर्बल अम्ल धनायन विनिमयक के उदाहरण हैं। इन्हें बनाने के लिए बहुलक नेटवर्क में दुर्बल अम्ल कार्बोक्सिलेट अभिलक्षकीय समूह प्रविष्ट किया जाता है। उन्हें डाइवाइनिल बेन्जीन के साथ ऐक्रिलिक अम्ल और मेथऐक्रिलिक अम्ल के मिश्रण

के सहबहुलकन द्वारा बनाया जाता है। अभिक्रियाओं को इस प्रकार निरूपित किया जा सकता है :

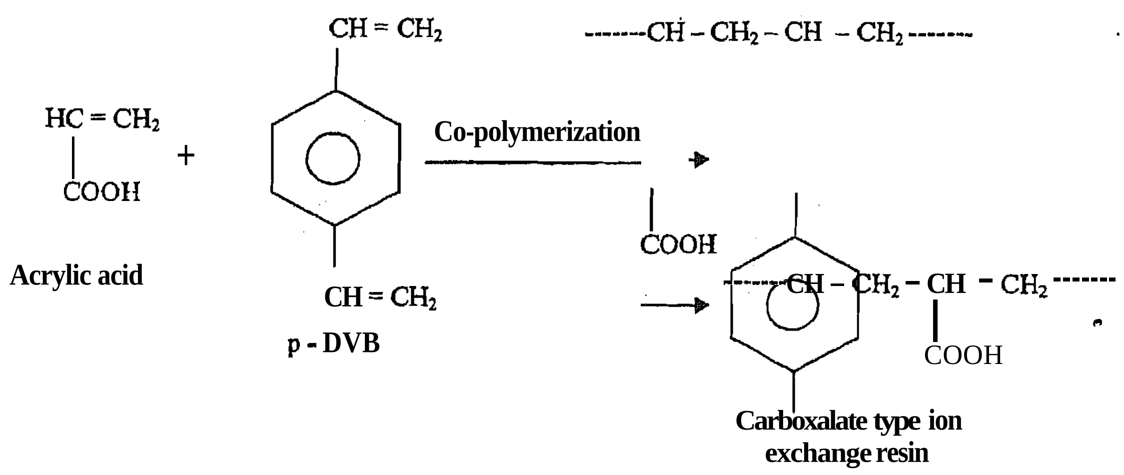

प्रबल क्षारक ऋणायन विनिमयक

प्रबल क्षारक ऋणायन विनिमयक पदार्थों को बनाने के लिए चतुष्क अमोनियम समूह का संयोजन किया जाता है। इसके लिए फ्रीडल क्राफ्ट्स संघनन अभिक्रिया द्वारा तिर्यक बद्ध बहुलक का क्लोरोमेथिलन करने के बाद ऐमीनीकरण किया जाता है। अभिक्रिया इस प्रकार लिखी जा सकती है :

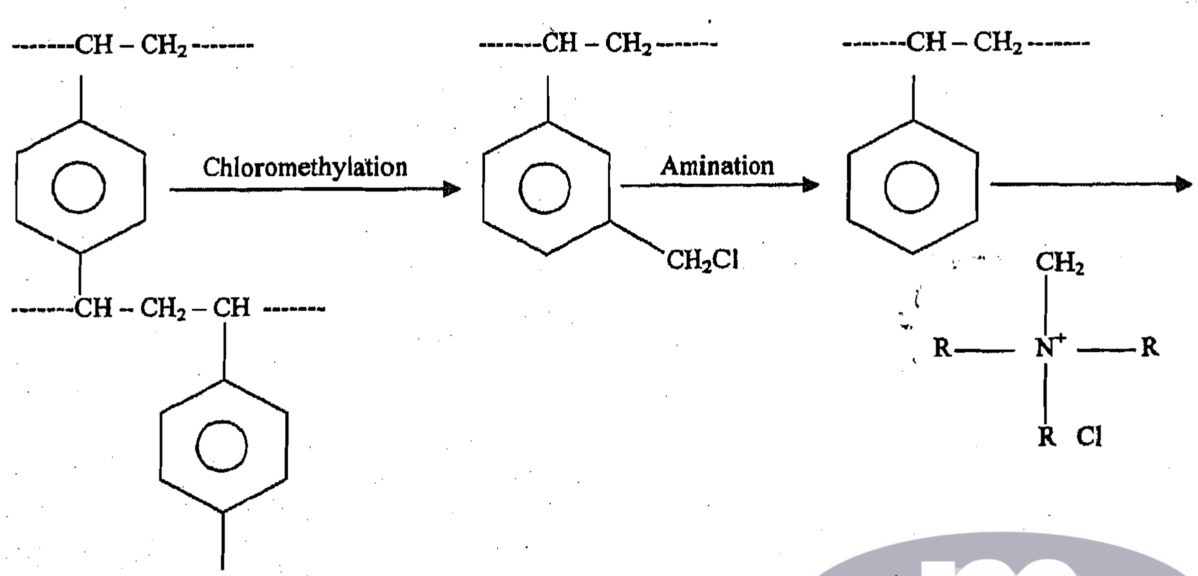

MAADHYAM IAS

दुर्बल क्षारक ऋणायन विनिमयक

दुर्बल क्षारक ऋणायन विनिमयक बनाने के लिए प्राथमिक अथवा द्वितीयक ऐमीन समूह का संयोजन किया जाता है। दुर्बल क्षारक आयन विनिमयक दुर्बल अम्लों के साथ ठीक काम नहीं करते हैं किन्तु प्रबल अम्लों के साथ उन्हें वरीयता दी जाती है।

बोध प्रश्न

6) कार्बनिक आयन विनिमयक रेजिनों के मुख्य लाभ बताइए।

....

....

....

17.11.2 आयन विनिमय प्रक्रम

आयन विनिमय वह प्रक्रम है जिसमें कोई अविलेय पदार्थ (आयन विनिमयक), धन अथवा ऋण आवेश वाले विद्युत् अपघट्य विलयन के संपर्क में आकर विनिमयक प्रावस्था से विलयन प्रावस्था में समान आवेश के अन्य आयनों को मुक्त करता है।

$$2RH + CaCl_2 \rightarrow R_2Ca + 2HCl$$

जिसमें R, आयन विनिमयक के यूनिट को निरूपित करता है। इसमें सामान्यतया स्तंभ प्रचालन का उपयोग किया जाता है जिसमें नमूना विलयन को आयन विनिमयक में से प्रविष्ट किया जाता है। यह बहुचरण पृथक्करण प्रक्रम है जिसमें प्रावस्था पृथक्करण आसानी से हो जाता है। स्तंभ के रेचन के बाद समुचित पुनरुत्पादन के कारण (ऊपर समीकरण) इन आयन विनिमयकों का बार-बार उपयोग किया जा सकता है।

$$R_2Ca + 2HCl \rightarrow 2\,RH + CaCl_2$$

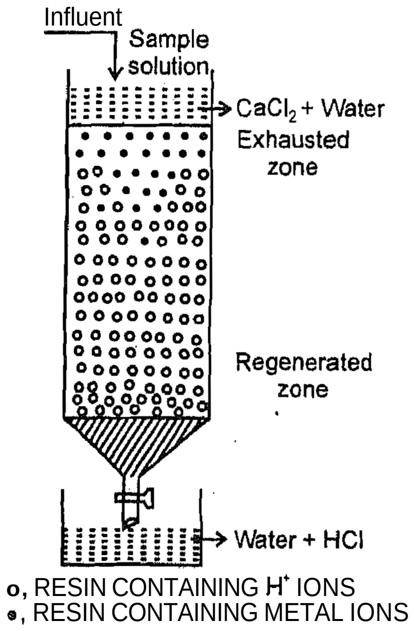

चित्र 17.12: कार्यरत सामान्य धनायन विनिमयक स्तंभ

17.11.3 आयन विनिमय की क्रियाविधि

आइए, किसी By विद्युत् अपघट्य के सुविलोडित विलयन में स्थित A प्रति आयन के रूप में मौजूद एक समान और गोल आयन विनिमयक मनकों पर विचार करें। आयन विनिमय एक रससमीकरणमितीय प्रक्रम है इसलिए A प्रतिआयनों का दूसरे B प्रति आयनों की तुल्य मात्राओं द्वारा प्रतिस्थापन होता है। चित्र 17.13 (क)

MAADHYAM IAS

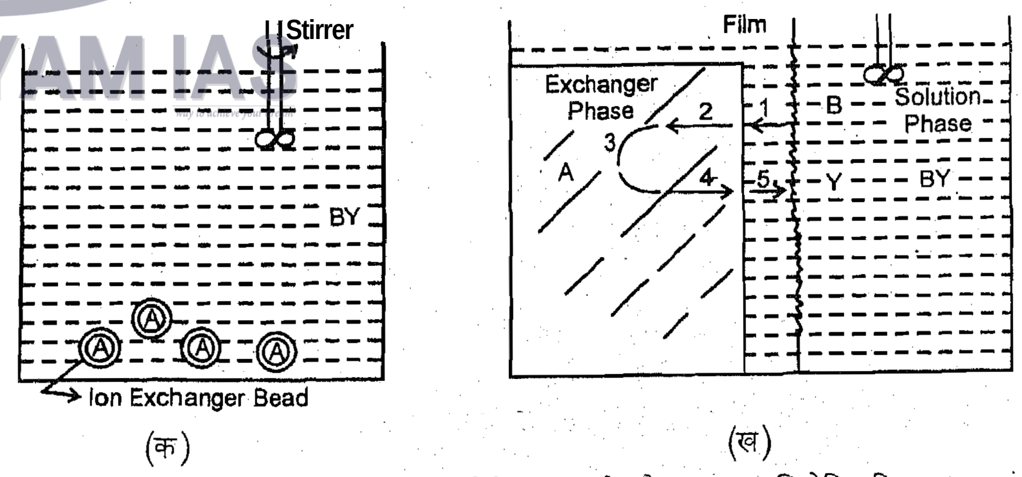

चित्र 17.13: A रूप में आयन विनिमयक मनके और By का सुविलोडित विलयन।

डोनन विभव सह-आयनों के प्रवेश को रोकता है। किन्तु प्रतिआयनों के प्रवेश में कोई बाधा नहीं डालता है। वैद्युत उदासीनता बनाए रखी जाती है तथा A प्रति आयनों द्वारा आवेश स्थानांतरण का B प्रति आयनों के तुल्य आवेश स्थानांतरण द्वारा संतुलन हो जाता है।

आयन विनियम की व्याख्या चित्र 17.13 (ख) की सहायता से चरणश: क्रियाविधि के रूप में की जा सकती है :

1) B प्रति आयन का विलयन से फिल्म में अभिगमन।
2) B प्रति आयन का फिल्म से विनिमयक कण में अभिगमन।
3) A और B के परस्पर रासायनिक विनिमय।
4) A प्रति आयन का कण से फिल्म में अभिगमन।
5) A प्रति आयन का फिल्म से विलयन में आगमन।

17.11.4 आयन विनिमय क्षमता

आयन विनिमय पदार्थ के अभिलक्षणन और किसी प्रयोग में आयन विनिमयक का मात्रात्मक उपयोग ज्ञात करने में क्षमता का विशेष महत्व है। आयन विनिमय क्षमता को कई प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है। अपितु, निम्नलिखित तीन प्रकारों का आमतौर पर उपयोग किया जाता है।

i) भार क्षमता

यह शुष्क आयन विनिमयक की प्रति निर्दिष्ट मात्रा में मौजूद आयनजनी समूहों की संख्या होती है। इसे शुष्क आयन विनिमयक के मेगाग्राम (meg) प्रतिग्राम में व्यक्त किया जाता है। इस क्षमता को नापने के लिए धनायन विनिमयक H^+ रूप में और ऋणायन विनिमयक Cl^- रूप में लिया जाता है। भार क्षमता का मान स्थिर होता है और प्रायोगिक परिस्थितियों पर निर्भर नहीं करता है। इसका उपयोग आयन विनिमयकों के अभिलक्षणन के लिए किया जाता है। इसे वैज्ञानिक भार क्षमता अथवा अधिकतम क्षमता भी कहते हैं। सामान्य आयन विनिमयकों की भार क्षमताएं 1 और 5 मेगाग्राम प्रति ग्राम होती है।

ii) आयतन क्षमता

यह निचित संस्तर पूर्णतया फुल्लत विनिमयक के प्रति इकाई आयतन में मौजूद आयनजनी समूहों की संख्या होती है। इसे मेगाग्राम प्रति मिलि में व्यक्त किया जाता है। आयतन क्षमता, आयन विनिमयक में जल की मात्रा पर निर्भर करती है।

iii) आभासी अथवा प्रभावी क्षमता

शुष्क आयन विनिमयक की प्रतिनिर्दिष्ट मात्रा में विनिमेय प्रतिआयनों की संख्या को प्रभावी क्षमता कहते हैं। इसे आयन विनिमयक के H^+ अथवा Cl^- रूप के मेगाग्राम प्रतिग्राम में व्यक्त किया जाता है। यह प्रायोगिक परिस्थितियों पर निर्भर करती है और आयनजनी समूहों के अपूर्णतया आयनित होने पर भार क्षमता से कम होती है। प्रायोगिक उपयोग के लिए यह प्रकार अन्य दो से अधिक महत्वपूर्ण होता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

17.12 आयन विनिमय के अनुप्रयोग

आयन विनियम के अनेक अनुप्रयोग हैं जैसे जल का मृदुकरण और विआयनीकरण, आयनी सूक्ष्ममात्रिक अवयवों का सान्द्रण, अल्पविलेय लवणों का विलयनीकरण आयन वरणात्मक

इलेक्ट्रोड अभिकर्मकों को बनाना, व्यतिकारी धनायनों अथवा ऋणायनों का निष्कासन, उत्प्रेरण, रेडाक्स अभिक्रियाएं, कुछ आयनों का वरणात्मक उद्ग्रहण, जल प्रदूषण नियंत्रण, धातु आयन निष्कासन और पुन: प्राप्ति आदि।

पर्यावरणी विश्लेषण के उद्देश्य से केवल जल के मृदुकरण, विआयनीकरण और प्रदूषण नियंत्रण तथा धातु आयन निराकरण और पुन: प्राप्ति की चर्चा की जाएगी। यद्यपि अन्य विधियों द्वारा भी उपचार संभव है किन्तु आयन विनिमय के छ: लाभ हैं : (1) आसान प्रायोगिक उपयोगिता (2) अपशिष्टों का न्यूनतमीकरण (3) धातुओं का निष्कासन और पुन: प्राप्ति (4) जल को पुनरुपयोग के लिए बनाना (5) आयन विनिमयक का संभावित पुनरुत्पादन और (6) कम पुनरावर्ती लागत।

17.12.1 जल का मृदुकरण और विआयनीकरण

किसी विलयन अथवा कठोर जल से सभी आयनों के पूर्णतया निष्कासन को विआयनीकरण कहते हैं। इसके लिए युगल संस्तर पद्धति का उपयोग किया जाता है। पहले स्तंभ में हाइड्रोजन रूप में धनायन विनिमय रेजिन होता है और दूसरे स्तंभ में हाइड्रॉक्सिल रूप में ऋणायन विनिमय रेजिन होता है। पहले कठोर जल अथवा आयनी स्पीशीज़ वाले जलीय विलयन को H^+ रूप में धनायन विनिमय रेजिन वाले स्तंभ में प्रविष्ट किया जाता है। जब विलयन विनिमयक संस्तर में से अत:स्रवण करता है तो विलयन में मौजूद धनायनों को रेजिन ग्रहण कर लेता है और उसमें से हाइड्रोजन आयनों की तुल्य मात्रा मुक्त होती है। इस स्तंभ के बहि:स्राव में हाइड्रोजन आयन तथा कठोर जल अथवा जलीय विलयन में पहले से मौजूद ऋणायन होते हैं। विनिमय अभिक्रिया को इस प्रकार निरूपित कर सकते हैं :

$$2R_cH + MSO_4 \rightarrow R_{c2}M + SO_4^{2-} + 2H^+$$

जिसमें M धातु है और R_c धनायन विनिमय रेजिन की मैट्रिक्स यूनिट है।

अब पहले स्तंभ के बहि:स्राव को दूसरे स्तंभ में प्रविष्ट किया जाता है जिसमें हाइड्रॉक्सिल रूप में ऋणायन विनिमय रेजिन होता है। जब इस विलयन का स्तंभ में से अंत:स्रवण होता है तो विलयन में मौजूद ऋणायन विनिमयक द्वारा ग्रहण कर लिए जाते हैं जो हाइड्रॉक्सिल आयनों की समान मात्रा को प्रतिस्थापित करते हैं ये हाइड्राक्सिल आयन पहले स्तंभ से मुक्त हाइड्रोजन आयनों के साथ रससमीकरणमितीयत: अभिक्रिया करते हैं। दूसरे स्तंभ का बहि:स्राव विआयनित शुद्ध जल होता है। अभिक्रिया इस प्रकार होती है :

$$2R_aOH + SO_4^{2-} + 2H^+ \rightarrow R_{a2}SO_4 + 2H_2O.$$

जिसमें R_a ऋणायन विनिमय रेजिन का मैट्रिक्स यूनिट है इस प्रकार प्राप्त विआनित जल, द्वि अथवा त्रिगुण आसुत जल के समान होता है जिसकी जांच चालकता माप द्वारा की जा सकती है।

जब रेजिन संस्तर रेचित हो जाते हैं तो उनका क्रमश: उपयुक्त अम्ल और क्षारक द्वारा पुन: उत्पादन किया जाता है। उदाहरण के लिए धनायन विनिमयक स्तंभ का पुन: उत्पादन 4 M हाइड्रोक्लोरिक अम्ल द्वारा तथा ऋणायन विनिमयक स्तंभ का पुन: उत्पादन 1 M सोडियम हाइड्रॉक्साइड विलयन द्वारा किया जाता है।

MAADHYAM IAS

17.12.2 प्रदूषण नियंत्रण में आयन विनिमय

जल-प्रदूषण का अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि जल का उपयोग मनुष्यों द्वारा खंपत, कृषि, विद्युत् उत्पादन और मत्स्य-उत्पादन आदि अनेक कार्यों में होता है। भारत में जल का प्रमुख स्रोत नदी-जल है। किन्तु नदियाँ तेल, परिष्करण, तेल-वेधन, कागज़ उद्योग, उर्वरक उद्योग, शर्करा उद्योग, आसवनियों, नगर निगम अपशिष्टों, कोयला क्षेत्रों के खनन नाभिकीय रिएक्टरों, पीड़कनाशी तथा अन्य रासायनिक उद्योगों के अपशिष्ट निपटान द्वारा लगातार प्रदूषित हो रही हैं।

समय के साथ ज्ञान में वृद्धि से जल में मौजूद आविषालु पदार्थों के प्रभावों के बारे में भी जानकारी बढ़ी है। इससे जल के संदूषण को दूर करने के लिए अन्वेषण किए गए तथा लोगों के स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए सुरक्षित जल उपलब्ध कराने की आवश्यकता महसूस हुई। आयन विनिमय पदार्थों का उपयोग एक उत्कृष्ट विधि है जिसका उपयोग आयनी स्पीशीज़ के निराकरण के लिए किया जा सकता है। मुख्य जल धारा में प्रवाहित करने से पहले संदूषित जल का उपचार कर लेना चाहिए।

i) खारे जल का उपचार : दुर्बल आयन विनिमयकों का उपयोग

ऊर्जा की कमी दिनों-दिन बढ़ती जा रही है अत: जल-उपचार प्रक्रम को पहले से अधिक सक्षम होना चाहिए। अपशिष्ट सरिताओं में बढ़ते पर्यावरणी प्रतिबंधों का पालन करना आवश्यक है अत: अपनाई गई उपचार विधि ऐसी होनी चाहिए कि वह अपशिष्ट जल को, कम से कम खर्च में, आवश्यक गुणता वाले जल में परिवर्तित कर दे।

जल उपचार के लिए परंपरागत विआयनीकरण विधि का अनेक वर्षों से लगातार उपयोग हो रहा है। किन्तु यह सामान्यतया 500 पी. पी. एम. ($CaCO_3$) कठोरता स्तर से कम स्तर वाले जल के लिए ही प्रयुक्त होती है। यदि खारापन इससे अधिक हो तो पुनर्जात की अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है जिससे परिचालन लागत बढ़ जाती है।

यदि खारापन अधिक हो (जैसे समुद्री जल, उद्योग अपशिष्ट जल आदि में) तो परंपरागत विआयनीकरण से पहले दुर्बल आयन विनिमयकों का उपयोग लाभदायक रहता है। दुर्बल आयन विनिमयक रेजिनों की उत्तम रासायनिक दक्षता होने के कारण पुनर्जात उपयोगिता बहुत कम हो जाती है जिससे उत्पाद की गुणता में कमी हुए बिना अपशिष्टों की मात्रा कम हो जाती है। ये विनिमयक अनेक जल-अनुकूलन अनुप्रयोगों में परिचालन की अधिक वरणात्मकता और दक्षता के लिए अवसर प्रदान करते हैं।

हाल ही में खारे जल के उपचार के लिए एक सस्ती विआयनीकरण तकनीक का आविष्कार किया गया है जिसे 'डिसेल प्रक्रम' कहते हैं। यह विधि दो दुर्बल आयन विनिमय रेजिनों पर आधारित है। पहले बाइकार्बोनेट रूप में दुर्बल ऋणायन विनिमय रेजिन और फिर हाइड्रोजन रूप में दुर्बल धनायन विनिमय रेजिन।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

खारे जल के ऋणायन पहले स्तंभ से बाइकार्बोनेट को प्रतिस्थापित करते हैं जिसमें दुर्बल अम्ल ऋणायन विनिमयक होते हैं। इसे क्षारीयन स्तंभ कहते हैं क्योंकि यह बाइकार्बोनेट को मुक्त करता है जिससे विलयन क्षारीय हो जाता है। कठोरता उत्पन्न करने वाले लवण के रूप में कैल्सियम क्लोराइड का उदाहरण लेकर नीचे अभिक्रिया की व्याख्या की गई है

$$2(R\text{–}NH)\,HCO_3 + CaCl_2 \rightarrow 2(R\text{–}NH)Cl + Ca(HCO_3)_2$$

जिसमें $(R\text{–}NH)HCO_3$, बाइकार्बोनेट रूप में दुर्बल ऋणायन विनिमय रेजिन को निरूपित करता है।

पहले स्तंभ के बहि:स्राव में धातु आयनों के बाइकार्बोनेट लवण होते हैं। यह बहि:स्राव दूसरे स्तंभ में प्रविष्ट होता है जिसमें हाइड्रोजन रूप में दुर्बल धनायन विनिमय रेजिन होता है। धातु आयन, हाइड्रोजन आयनों को प्रतिस्थापित करते हैं। हाइड्रोजन आयन रससमीकरणमितीयत: बाइकार्बोनेट आयनों के साथ अभिक्रिया कर कार्बोनिक अम्ल बनाते हैं। जल की क्षारता का इस स्तंभ द्वारा निराकरण हो जाता है जैसा कि नीचे समीकरण में दिखाया गया है;

$$2R\text{–}COOH + Ca(HCO_3)_2 \rightarrow (R\text{–}COO)_2\,Ca + 2H_2CO_3$$

जिसमें R–COOH, हाइड्रोजन रूप में दुर्बल धनायन विनिमयक को निरूपित करता है। यह क्षार रहित जल दूसरे स्तंभ में प्रविष्ट होता है। दूसरे स्तंभ के बहि:स्राव को विगैसीकारक तंत्र में प्रविष्ट किया जाता है जहाँ CO_2 मुक्त हो जाता है और संसाधित जल घरेलू, औद्योगिक और कृषि कार्यों के लिए इस्तेमाल किया जाता है। मुक्त CO_2 पहले स्तंभ के पुनरुद्भवन में प्रयुक्त होता है। इस प्रक्रम को चित्र 17.14 के ब्लॉक आरेख में स्पष्ट समझाया गया है।

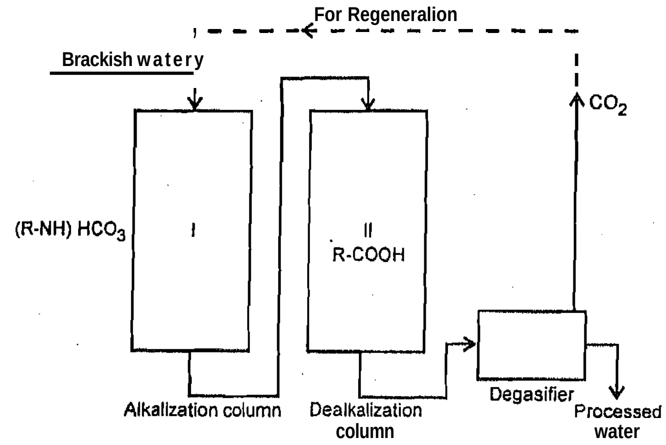

चित्र 17.14: खारे जल के उपचार का 'डिसेल प्रक्रम'

पुनरुद्भवन : रेजिन स्तंभों के रेचित हो जाने पर पुनरुद्भवन इस प्रकार किया जाता है।

क्षारीयन स्तंभ का पुनरुद्भवन दो चरणों में किया जाता है। पहले चरण में वह NaOH अथवा $Ca(OH)_2$ विलयन द्वारा मुक्त क्षारक में परिवर्तित हो जाता है।

$$(R\text{–}NH)\ C1 + NaOH \rightarrow R\text{–}N + NaCl + H_2O.$$

दूसरे चरण में रेजिन का मुक्त क्षारक रूप, विगैसीकारक तंत्र से प्राप्त CO_2 के साथ मिलकर बाइकार्बोनेट रूप में परिवर्तित हो जाता है।

$$R\text{–}N + H_2O + CO_2 \rightarrow (R\text{–}NH)\ HCO_3.$$

उपयुक्त और सस्ते अम्ल के साथ विक्षारीयन स्तंभ का पुनरुद्भवन हो जाता है।

$$(R\text{–}COO)_2\,Ca + 2HCl \rightarrow 2(R\text{–}COOH) + CaCl_2$$

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इस प्रक्रम के उन्नत रूप का उपयोग अम्ल खान अपवाह जल और औद्योगिक अपशिष्ट जल के उपचार के लिए किया जाता है।

iii अम्ल खान अपवाह जल का उपचार

अम्ल वाली खानों के अपवाह जल को उत्क्रम ढंग से बाइकार्बोनेट रूप में दुर्बल ऋणायन विनिमय रेजिन स्तंभ में प्रविष्ट किया जाता है। रेजिन में बाइकार्बोनेट आयनों, का स्थान अन्य ऋणायन ले लेते हैं और बाइकार्बोनेट आयन, अम्ल खान अपवाह जल में मौजूद हाइड्रोजन आयनों के साथ अभिक्रिया कर कार्बोनिक अम्ल बनाते हैं।

$(R-NH)\ HCO_3 + HNO_3 \rightarrow (R-NH)\ NO_3 + H_2CO_3$

बहि:स्राव को विगैसीकारक तंत्र में प्रविष्ट करने से CO_2 मुक्त हो जाता है और अम्ल रहित जल प्राप्त होता है। उपोत्पाद के रूप में प्राप्त CO_2 का उपयोग रेजिन स्तंभ के पुनरुद्भवन के लिए किया जाता है।

इस प्रक्रम को ब्लॉक आरेख के द्वारा चित्र 17.15 में स्पष्ट रूप से समझाया गया है।

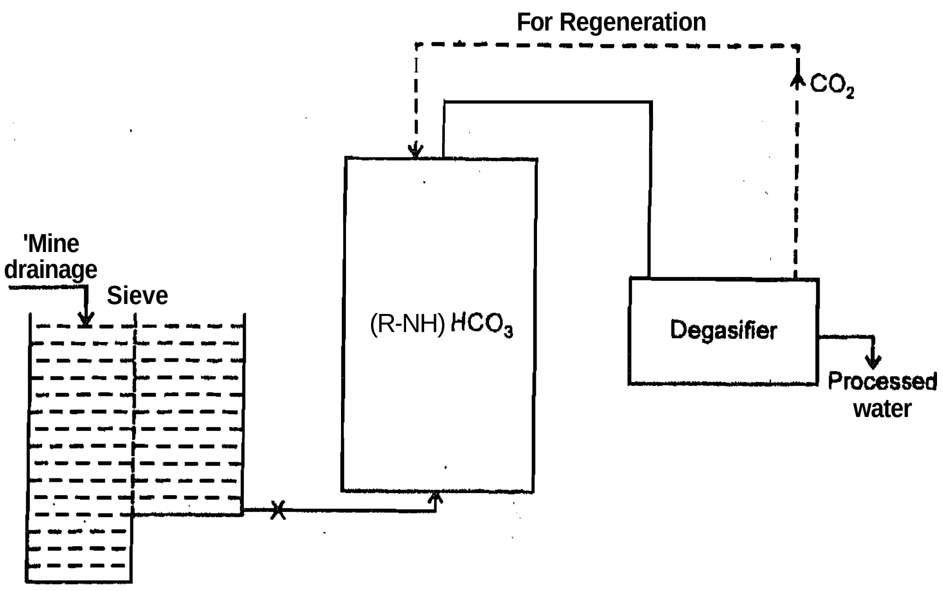

चित्र 17.15: अम्ल खान अपवाह जल के उपचार का डिसेल रेजिन प्रक्रम

यदि आवश्यक हो तो चूना उपचार मृदुकरण द्वारा संसाधित जल की गुणता में और सुधार किया जा सकता है।

iii) पेट्रोलियम परिष्करणशाला अपवाह जल का उपचार

पेट्रोलियम परिष्करणशाला अपवाह जल में, जिसे सामान्यतया अम्ल जल कहा जाता है, अमोनिया, हाइड्रोजन सल्फाइड और फीनॉलों की विभिन्न मात्राएं तथा कुछ अकार्बनिक धनायन होते हैं। परिष्करण प्रक्रियाओं में भारी तेलों के उत्प्रेरकीय भंजन और तापीय भंजन से उत्पन्न दुर्गन्ध युक्त प्रदूषक तथा अम्ल जल का अभिलाक्षणिक प्रदूषण चिन्ता का विषय है।

दुर्बल विद्युत् अपघट्य आयन विनिमय रेजिनों के उपयोग पर आधारित प्रक्रम आम्ल जल के पुनरुद्धार का अत्यन्त प्रभावी प्रक्रम है। संपूर्ण व्यवस्था में दो स्तंभ होते हैं। पहला हाइड्रोजन रूप में दुर्बल धनायन विनिमयक का और दूसरा मुक्त क्षारक रूप में ऋणायन विनिमयक का। दोनों स्तंभों के बीच में विगैसीकारक तंत्र होता है (चित्र 17.16)।

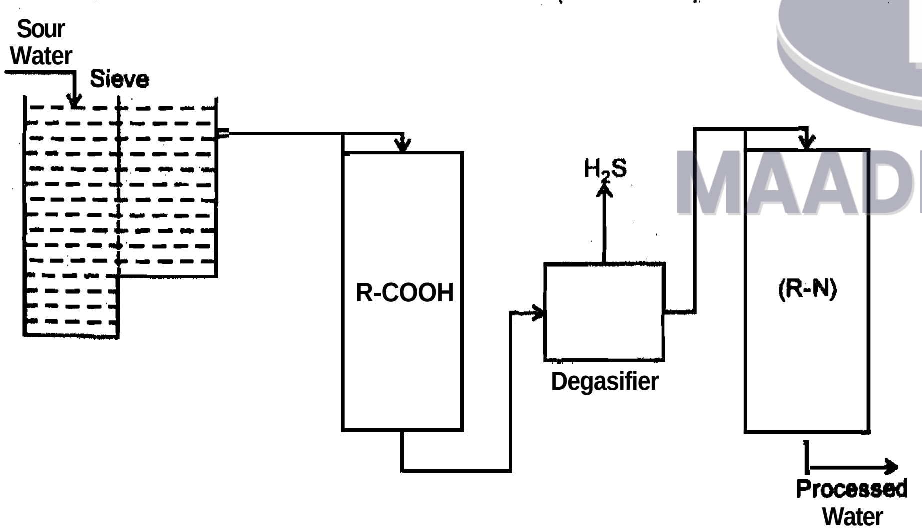

MAADHYAM IAS

चित्र 17.16: आम्ल जल का उपचार

आम्ल जल में मौजूद हाइड्रोजन सल्फाइड और अमोनिया संयुक्त होकर अमोनियम हाइड्रोजन सल्फाइड बनाते हैं जो जल में NH_4^+ और H_2S मुक्त करते है जिसे विगैसीकारक तंत्र का उपयोग करते हुए किसी परंपरागत विधि द्वारा पृथक किया जाता है।

$$R\text{-}COOH + NH_4HS \rightarrow R\text{–}COONH_4 + H_2S$$

H_2S को उपोत्पाद के रूप में एकत्रित कर लिया जाता है और उसका उपयोग सोडियम सल्फाइड अथवा अमोनियम सल्फाइड बनाने के लिए किया जाता है। यदि अकार्बनिक धनायन विद्यमान हों तो दुर्बल धनायन विनिमयक में उनका भी विनिमय हो जाता है। विगैसीकारक तंत्र के युक्त क्षारक रूप में दुर्बल ऋणायन विनिमय रेजिन वाले दूसरे स्तंभ में प्रविष्ट करने पर प्राप्त बहि:स्राव फीनॉलों का अवशोषण कर लेता है। संसाधित जल को नदी में विसर्जित किया जा सकता है।

सल्फ्यूरस अम्ल के साथ धनायन विनिमयक का पुनरुद्भवन किया जाता है। परिष्करणशाला में सल्फ्यूरस अम्ल प्राप्त करने के लिए फ्लू गैस से प्राप्त SO_2 को जल में घोला जाता है।

$$2R\text{–}COONH_4 + H_2SO_3 \rightarrow 2R\text{–}COOH + (NH_4)_2SO_3$$

अवशोषित फीनॉलों को पृथक करने के लिए ऋणायन विनिमयक का ऐल्कोहॉल द्वारा पुनरुद्भवन किया जाता है। बाद में ऐल्कोहॉल और फीनॉलो के मिश्रण को पृथक कर लिया जाता है और प्रभाजी आसवन द्वारा मिश्रण में से फीनॉल और ऐल्कोहॉल प्राप्त कर लिए जाते हैं।

बोध प्रश्न

7) रिक्त स्थानों में उपयुक्त शब्द लिखिए

   क) पेट्रोलियम परिष्करण अपवाह जल में मुख्यत: .... अपद्रव्य होते हैं।

   ख) धनायन विनिमयक झिल्ली में से ....प्रविष्ट कर सकते हैं और ....नहीं कर सकते।

   ग) यदि कठोरता स्तर ....पी. पी. एम. ($CaCO_3$) हो तो परंपरागत विआयनीकरण उपयुक्त विधि नहीं होती है।

8) अपशिष्ट जल के उपचार के लिए अन्य विधियों के बजाय आयन विनिमय विधि के क्या लाभ हैं?

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

17.13 सारांश

- विलायक निष्कर्षण, प्रावस्था वितरण के नियम पर आधारित है। इसमें विलेय को किसी मिश्रण से पृथक करने के लिए उसकी (विलेय की) दो अमिश्रणीय विलायकों में विभेदी विलेयता का उपयोग किया जाता है,
- वर्णलेखिकी एक पृथक्करण तकनीक है जो किसी नमूने के दो अमिश्रणीय प्रावस्थाओं में वितरण पर आधारित है। इनमें एक स्थिर प्रावस्था और दूसरी गतिशील प्रावस्था होती है। गतिशील प्रावस्था, स्थिर प्रावस्था में अंत:स्रवण करती है।
- इस पाठ्यक्रम में केवल तीन प्रमुख वर्णलेखन तकनीकों की चर्चा की गई है। ये हैं - पतली परत वर्णलेखिकी, स्तंभ वर्णलेखिकी और कागज वर्णलेखिकी। इन तकनीकों के मूल सिद्धांतों का उल्लेख किया गया है।
- विलेय बिन्दु द्वारा तय की गई दूरी का विलायक अग्र द्वारा तय की गई दूरी के साथ अनुपात को आर. एफ. कहते हैं।
- क्रोमैटोग्राम बनने का अर्थ है द्रव प्रावस्था को अधिशोषक में गमन कराने से प्लेट अथवा स्तंभ में मिश्रण को पृथक करना।
- देखकर रंगीन यौगिकों का आसानी से निर्धारण किया जा सकता है किन्तु रंगहीन यौगिकों के लिए टी.एल.सी. प्लेट में स्थान निर्धारण के लिए फुहारण अभिकर्मकों का उपयोग किया जाता है।
- प्रमात्रीकरण का आकलन देखकर तुलना करने से अथवा स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी विधि द्वारा किया जा सकता है।
- अनेक प्रकार के आयन विनिमय पदार्थ होते हैं किन्तु इस इकाई में केवल संश्लिष्ट आयन विनिमय रेजिन और कीलेट आयन विनिमय रेजिन की चर्चा की गई हैं।
- आयन विनिमय की उपयोगिता अनेक प्रक्रमों में हो सकती है किन्तु यहाँ केवल पर्यावरणी विश्लेषण संबंधी उपयोगिता पर विचार किया गया है जैसे जल का मृदुकरण और विआयनीकरण, जल का प्रदूषण नियंत्रण तथा धातु आयन का निष्कासन और पुन: प्राप्ति।
- यद्यपि टी.एल.सी. और कागज़ वर्णलेखिकी द्वारा मात्रात्मक विश्लेषण संभव है किन्तु मुख्य अनुप्रयोग गुणात्मक अभिनिर्धारण में होता है।
- कागज वर्णलेखिकी द्वारा पृथक्करण जल संतृप्त सेलुलोस (स्थिर प्रावस्था) और विकासक द्रव के बीच वितरण अनुपात पर आधारित होता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

17.14 अंत में कुछ प्रश्न

1) वितरण गुणांक क्या होता है?
2) उत्तम अधिशोषक के गुणधर्म बताइए।
3) उत्तम क्रोमैटोग्राम के गुणधर्म बताइए।
4) कागज़ वर्णलेखिकी की सीमाएं बताइए।
5) हाइड्रोजन रूप में 2 ग्राम डोवेक्स-50 रेजिन से बनाए गए स्तंभ में सोडियम क्लोराइड का जलीय विलयन प्रविष्ट किया गया जब तक सभी H^+ आयन Na^+ आयनों से

प्रतिस्थापित नहीं हो गए। प्राप्त कुल बहिस्राव के पूर्ण उदासीनीकरण के लिए 0.1N NaOH के 84 मिलि की आवश्यकता हुई। डोवेक्स-50 रेजिन की आयन विनिमय क्षमता परिकलित कीजिए।

17.15 उत्तर

बोध प्रश्न

1) देखिए उप-भाग 17.4.1

2) हम जानते हैं कि

$$R_f = \frac{\text{बिन्दु द्वारा तय की गई दूरी}}{\text{विलायक द्वारा तय की गई दूरी}}$$

ऐसीटोफीनोन का आर. एफ. (R_f) मान $= \frac{15}{18} = 0.83$ cm

हेक्साडेकोनॉल का आर. एफ. (R_f) मान $= \frac{5}{18} = 0.28$ cm

3) बढ़ते क्रम में निक्षालन शक्ति इस प्रकार हैं : i), iii), v), vi), ii), iv)

4) रंगहीन घटकों में अंत्य बिन्दु का स्थान ज्ञात करने के लिए फुहारन अभिकर्मक का उपयोग किया जाता है जिसे दृष्टिअभिकर्मक कहते हैं। प्रमुख दृष्टिअभिकर्मक यू.आर. प्रकाश, I_2, NH_3 आदि हैं।

5) क) समान ख) रससमीकरणमितीय ग) उत्क्रमणीय

6) क) कार्बनिक आयन विनिमयक रेजिन यांत्रिकत: स्थायी होते हैं। उनके निर्माण में इच्छानुसार परिवर्तन किया जा सकता है तथा स्तंभ प्रचालन के लिए उनका रूप उपयुक्त होता है। आयन विनिमय क्षमता की हानि के बिना इन रेजिनों का पुनरुत्पादन किया जा सकता है।

7) क) NH_3, H_2S और फीनॉल

ख) धनायन, ऋणायन

ग) > 500

8) आसान व्यावहारिक अनुप्रयोज्यता, अपशिष्ट का न्यूनतमीकरण, धातुओं की पुन: प्राप्ति और पृथक्करण, जल को पुन: उपयोग के लिए प्राप्त करना आयन विनिमय स्तंभ का संभावित पुनरुत्पादन और सुस्ती होना दि आयन विनियम विधि के लाभ हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अंत में कुछ प्रश्न

1) दो विलायकों में किसी विलेय की सान्द्रता के अनुपात को वितरण गुणांक कहते हैं।

2) उत्तम अधिशोषक के निम्नलिखित गुणधर्म होने चाहिए :

i) अधिशोषक को पृथक किए जाने वाले विलेय के साथ अभिक्रिया नहीं करनी चाहिए।

ii) अधिशोषक को गतिशील प्रावस्था में नहीं घुलना चाहिए।

iii) अधिशोषक को गतिशील प्रावस्था के साथ अभिक्रिया नहीं करनी चाहिए।

iv) अधिशोषक को गतिशील प्रावस्था के साथ विलेय को मुक्त करना चाहिए।

3) उत्तम क्रोमैटोग्राम के लिए क्षेत्र को सुसंहत, सुनिश्चित और सुपृथकित होना चाहिए।

4) कागज़ वर्णलेखिकी की सीमाएं इस प्रकार हैं:

- टी.एल.सी. की अपेक्षा इसका पृथक्करण समय बहुत अधिक होता है।
- पृथक किए गए घटक की पुन: प्राप्ति कठिन होती है।
- यथार्थता और पुनरुत्पाद्यता कम होती है।

5) आयन विनिमय क्षमता = प्रति आयन के मेगाग्राम/ग्राम संख्या
= मुक्त H^+ के मेगाग्राम/ग्राम संख्या
= उपभुक्त OH^- के मेगाग्राम/ग्राम संख्या
= 8.4 × 0. D/2 = रेजिन के 4.2 मेगाग्राम/प्रतिग्राम

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 18 वैद्युत विश्लेषण विधियां

इकाई की रूपरेखा

18.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
18.2 पी॰एच॰ मिति
पी॰एच॰ की परिभाषा
पी॰एच॰ की माप
पी॰एच॰ की वर्णमितीय माप
18.3 पी॰एच॰ की वैद्युतमितीय माप
विभवमिति का नियम
इलेक्ट्रोड
पी॰एच॰ मापी द्वारा पी॰एच॰ की माप
जल और अपशिष्ट जल का पी॰एच॰
अम्ल वृष्टि और पी॰एच॰
मृदाओं का पी॰एच॰
18.4 आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड
18.5 चालकतामिति
चालकतामिति की मौलिक संकल्पनाएं
18.6 चालकत्व की माप
ह्वीटस्टोन सेतु नियम
किसी विलयन के चालकत्व की माप
प्रायोगिक माप
18.7 चालकत्वमिति के अनुप्रयोग
18.8 सारांश
18.9 अंत में कुछ प्रश्न
18.10 उत्तर

18.1 प्रस्तावना

वैद्युत विश्लेषण विधियों का अनुप्रयोग रसायन विज्ञान की सभी शाखाओं, उद्योगों, इंजीनियरी और अन्य प्रौद्योगिकियों में होता है। प्रदूषकों के न्यून स्तर पर निर्धारण की संभावना से पर्यावरण के अध्ययन में इन विधियों के उपयोग को प्रोत्साहन मिला है।

वैद्युत विश्लेषण विधि वह है जिसमें किसी रासायनिक पद्धति अथवा प्रतिदर्श की वैद्युत अनुक्रिया की माप की जाती है। इन विधियों का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया जा सकता है जिनमें वैद्युत अनुक्रिया की माप विभव, धारा, धारा की मात्रा, प्रतिरोध और वोल्टता आदि विभिन्न वैद्युत मात्राओं के रूप में की जाती है और तद्नुसार उन विधियों को विभवमिति, ऐम्पियरमिति, कूलॉममिति, चालकतामिति और विभवधारामिति आदि कहते हैं। पिछले कुछ वर्षों में एकाएक वैद्युत विश्लेषण तकनीकों में रुचि बढ़ी है। इसका कारण अंशत: यंत्रीकरण में प्रगति और अंशत: जल और मृदा के नमूनों में अनेक भारी धातुओं तथा कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थों का निर्धारण करना है।

MAADHYAM IAS

इस इकाई में हम पढ़ेंगे कि पी०एच०मिति द्वारा जल और मृदा के नमूनों में पी०एच० की माप कैसे की जाती है। साथ ही हम आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोडों द्वारा वरणात्मक रूप से आयनों की सान्द्रता की विभवमितीय माप की भी चर्चा करेंगे। उसके बाद चालकतामिति का वर्णन किया जाएगा।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप,

- पी०एच० की परिभाषा दे सकेंगे,
- इलेक्ट्रोड विभव की परिभाषा दे सकेंगे,
- कुछ इलेक्ट्रोडों का उपयोग बता सकेंगे,
- किसी विलयन का पी०एच० माप सकेंगे,
- चालकता की परिभाषा दे सकेंगे,
- किसी विलयन की चालकता माप सकेंगे,
- जल और मृदा के विश्लेषण के लिए पी०एच० मिति, आयन वरणात्मक विभवमिति और चालकता की संकल्पना को प्रयुक्त कर सकेंगे।

18.2 पी०एच०मिति

साधारणतया विद्युत् रासायनिक विधियों का और विशेषतया पी०एच० का तथा आयनों का विभवमितीय निर्धारण का विस्तृत उपयोग किया जाता है। जल-विश्लेषण में पी०एच० माप एक महत्वपूर्ण और व्यापक परीक्षण है। प्राकृतिक जल-उपचार और अपशिष्ट जल-उपचार दोनों के लिए स्कंदन, विसंक्रमण, जल मृदुकरण, अम्ल-क्षारक उदासीनीकरण आदि अनेक क्रियाएं पी०एच० पर निर्भर करती हैं। रसायन विज्ञान की अधिकतर प्रयोगशालाओं में पी०एच० मीटर होते हैं। आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोडों के विकास से विभवमिति का आधुनिकीकरण हुआ है जिससे पर्यावरण के नमूनों के अध्ययन में रुचि बढ़ी है।

पी० एच० पैमाने पर, पी० एच० मात्रक के रूप में विभवांतर को मापने के लिए विभवमिति नियम का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए सामान्य वोल्टमीटर को उच्च प्रतिबाधा मिलिवोल्टमापी में रूपांतरित कर दिया जाता है। इस पी०एच० माप को विभवमिति के स्थान पर पी०एच० मिति कहते हैं। पी०एच० मिति में पी०एच० मापी का उपयोग पी०एच० मापने के लिए किया जाता है। पी०एच० के विभवमितीय माप का विस्तृत अध्ययन करने से पहले आइए, पी०एच० की मौलिक संकल्पना के बारे में जानकारी प्राप्त करें।

MAADHYAM IAS

18.2.1 पी०एच० की परिभाषा

रसायन विज्ञान के अनेक क्षेत्रों में हाइड्रोजन आयन सान्द्रता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है तथा पर्यावरण के अध्ययन में उसके निर्धारण और नियंत्रण का बहुत प्रायोगिक महत्व है।

पी०एच० की यथार्थ परिभाषा में हाइड्रोजन आयन की सक्रियता (activity) सम्मिलित होनी चाहिए, अतः,

$$pH = -\log a_{H^+}$$

हाइड्रोजन आयन सान्द्रता को संक्षेप में pH लिखा जाता है जो 'puissance de hydrogen' का संक्षिप्त नाम है।

पी०एच० मान को सबसे पहले 1909 में एस०पी० सोरेन्सन ने सूत्रबद्ध किया था। इसे हाइड्रोजन आयन सान्द्रता के ऋणात्मक लघुगणक के रूप में परिभाषित किया जाता है

$$pH = -\log_{10}[H^+] \quad (18.1)$$

इसमें [ ] तुल्य सान्द्रता को निरूपित करता है और लघुगणक आधार 10 पर लिया जाता है। व्यवहार में किसी चर के पहले लिखे जाने वाले 'p' का उपयोग उस चर के ऋणात्मक लघुगणक को व्यक्त करता है। उदाहरणार्थ pOH, हाइड्रॉक्सिल आयन सान्द्रता के ऋणात्मक लघुगणक को निर्दिष्ट करता है।

जलीय विलयनों में $[H^+]$ और $[OH^-]$ का गुणनफल किसी निश्चित ताप पर सदैव स्थिर होता है। इस प्रकार,

$$K_w = [H^+][OH^-] \qquad (18.2)$$

जिसमें K_w जल का आयनी गुणनफल स्थिरांक है जिसका मान $25^\circ C$ पर 1×10^{-14} होता है। समीकरण 18.2 में साम्यावस्था के दोनों ओर लघुगणक लेने और ऋणात्मक लघुगणक के स्थान पर p लिखने पर,

$$pH + pOH = pK_w = 14 \ (25^\circ C \text{ पर}) \qquad (18.3)$$

$25^\circ C$ पर शुद्ध जल के लिए,

$$[H^+] = [OH^-] = 1\times10^{-7}$$

जिससे इस ताप पर शुद्ध जल का मान पी०एच० मान 7 प्राप्त होता है।

अम्लीय विलयन के लिए $[H^+] > [OH^-]$ और पी०एच० मान 7 से कम होता है जबकि क्षारकीय विलयन के लिए $[OH^-] > [H^+]$ और पी०एच० मान 7 से अधिक होता है।

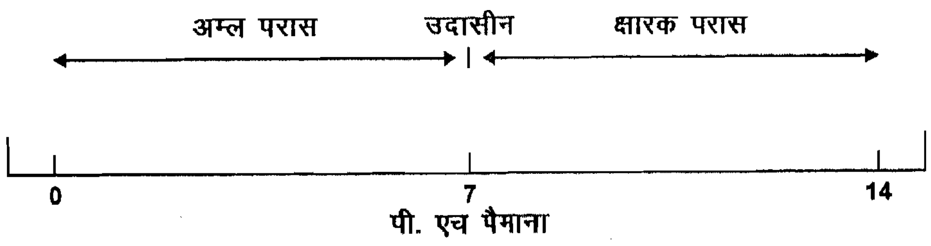

सक्रियता a प्रभावी सान्द्रता है। यदि c सान्द्रता है, तब

$$a = \gamma c$$

यहाँ γ सक्रियता गुणांक है। आदर्श विलयन के लिए यह 1 होता है, तब

$$a = c$$

बोध प्रश्न 1

एक विलयन का पी०एच० मान 4.5 है। उसके H^+ आयनों की सान्द्रता ज्ञात कीजिए।

....

....

....

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

18.2.2 पी०एच० की माप

सामान्यतया किसी विलयन का पी०एच० मान या तो किसी सूचक की मदद से अथवा पी०एच० मापी द्वारा ज्ञात किया जाता है। किन्तु अपनी यथार्थता और उच्च गति के कारण प्रायः पुरानी सूचक विधि का स्थान पी०एच० मापियों ने ले लिया है। अपितु अपनी सरलता और प्रदूषण-विश्लेषण में क्षेत्र-कार्य के लिए सुविधाजनक होने के कारण सूचक विधि का उपयोग भी किया जाता है। इस अनुच्छेद के अगले भाग में सूचक विधि का संक्षेप में वर्णन किया जाएगा जिसे पी०एच० माप की वर्णमितीय विधि भी कहते हैं।

18.2.3 पी॰एच॰ की वर्णमितीय माप

पी॰एच॰ के लगभग और द्रुत अनुमापन के लिए तथा निर्जल माध्यम में रंगीन सूचकों का उपयोग सुविधाजनक होता है। वर्णमितीय माप आंखों से देखकर अथवा प्रकाशमितीयत: किए जा सकते हैं।

पी॰एच॰ की चाक्षुष माप (visual measurement of pH)

पी॰एच॰ के चाक्षुष माप के लिए रंगीन सूचकों का उपयोग सुविदित है। किसी विलयन का लगभग पी॰एच॰ मान निर्धारित करने के लिए उसकी विभिन्न सूचकों के साथ अथवा सूचक विलयन से संसिक्त कागजों के साथ अभिक्रिया की तुलना की जाती है। इस विधि में किसी विशिष्ट पी॰एच॰ परास में रंग परिवर्तन दिखाई देता है। कम लागत इसका मुख्य लाभ है। साथ ही यह विधि नित्यप्रति के पी॰एच॰ माप के लिए भी उपयुक्त है। लिटमस कागज इसका सामान्य उदाहरण है जो पी॰एच॰ 5 के नीचे लाल और पी॰एच॰ 8 के ऊपर नीला होता है। जब पी॰एच॰ 5 से **बदल**कर 8 होता है तो रंग लाल से नीला हो जाता है। पी॰एच॰ के विस्तृत परास के लिए सूचकों के मिश्रण का, जिन्हें **सार्वत्रिक सूचक (universal indicator)** कहते हैं, उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए कोलथॉफ सार्वत्रिक सूचक, पांच सूचकों का मिश्रण है और प्रत्येक इकाई पी॰एच॰ मान पर स्पष्ट रंग बदलता है। विभिन्न पी॰एच॰ मानों पर उत्पन्न होने वाले रंग सारणी **18.1** में दिए गए हैं।

सारणी 18.1: पी॰एच॰ परिवर्तन के साथ कोलथॉफ सार्वत्रिक सूचक के रंग-परिवर्तन

पी॰एच॰	1	2	3	4	5
रंग	लाल	लाल-गुलाबी	लाल-नारंगी	नारंगी	पीला-नारंगी
पी॰एच॰	6	7	8	9	10
रंग	हल्का पीला	पीला-हरा	हरा	हरा-नीला	बैंगनी

पी॰एच॰ का प्रकाशमितीय माप

सूचक का प्रयोग करते हुए पी॰एच॰ माप की दृश्य विधि कम यथार्थ होती है क्योंकि प्रकाश की तीव्रता के परिमापन में कठिनाई होती है। यंत्रों के उपयोग से यथार्थता बढ़ाई जा सकती है जबकि किसी विशेष तरंगदैर्घ्य पर अवशोषकता को मापने के लिए वर्णमापी अथवा स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी का उपयोग किया जाता है। सूचक दुर्बल अम्ल अथवा दुर्बल क्षारक के रूप में कार्य करते हैं तथा सूचक पदार्थ की वियोजन-मात्रा, विलयन में हाइड्रोजन आयनों की सान्द्रता पर निर्भर करती है। उदाहरणार्थ, माना HIn कोई सूचक अम्ल है जो इस प्रकार वियोजित होता है,

$$\underset{\text{रंग A}}{HIn} \rightleftharpoons H^+ + \underset{\text{रंग B}}{In^-} \quad (18.4)$$

MAADHYAM IAS

हमारी आँखें, सामान्यत: एक ही रंग को पहचानती है अगर दो रंगों की सान्द्रता का अनुपात 10:1 हो। अधिक सान्द्रता वाले स्वरूप का ही रंग दिखता है।

HIn सूचक का वियोजन-स्थिरांक, k इस प्रकार होगा-

$$K = \frac{[H^+][In^-]}{[HIn]} \quad (18.5)$$

$$\log K = \log [H^+] + \log \frac{[In^-]}{[HIn]} \quad (18.6)$$

$$pH = pK + \log \frac{[In^-]}{[HIn]} \quad (18.7)$$

सूचकों के रंग In^- और HIn सान्द्रताओं के अनुपात द्वारा निदर्शित होते हैं जो वियोजन-मात्रा पर निर्भर करते हैं। इसलिए पी०एच० को रंग A अथवा रंग B की तीव्रता से निदर्शित किया जा सकता है जबकि यह मान लिया जाता है कि बियर नियम का पालन हुआ है। प्रकाशमितीय माप द्वारा सन्तोषजनक परिणाम प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि सूचक की सान्द्रता को कम से कम रखा जाय। प्रकाशमितीय माप के नियम की विस्तृत चर्चा इस पाठ्यक्रम की इकाई 19 में की गई है। अगले अनुच्छेद में पी०एच०मिति नियम का वर्णन किया जाएगा।

18.3 पी०एच० की वैद्युतमितीय माप

पी०एच० निर्धारण की वैद्युतमितीय विधि, पी०एच० सेल के विभव की माप पर आधारित है जबकि हाइड्रोजन सुग्राही इलेक्ट्रोड का विभव, पी०एच० के अनुक्रमानुपाती होता है और पी०एच० को विभवमितीय पैमाने पर निर्धारित किया जाता है।

मानक बफर का उपयोग करते हुए पी०एच० मापी को विभवमितीयत: सूचक इलेक्ट्रोड (कांच) और निर्देश इलेक्ट्रोड के साथ अंशांकित किया जाता है। संक्रियात्मक पी०एच० को इस प्रकार व्यक्त किया जाता है :

$$(pH)_{\text{अज्ञात}} = (pH)_{\text{मानक}} + \frac{(E_{\text{सेल}})_{\text{मानक}} - (E_{\text{सेल}})_{\text{अज्ञात}}}{0.0591} \quad (18.8)$$

जिसमें

$(pH)_{\text{अज्ञात}}$ = नमूने (अज्ञात विलयन) का विभवमितीयत: मापा गया पी०एच० है।

$(pH)_{\text{मानक}}$ = अंशांकन के लिए प्रयुक्त मानक बफर का निर्दिष्ट पी०एच० है।

$(E_{\text{सेल}})_{\text{अज्ञात}}$ = अज्ञात विलयन के साथ कांच इलेक्ट्रोड और निर्देश इलेक्ट्रोड पद्धति का सेल विभव है।

$(E_{\text{सेल}})_{\text{मानक}}$ = मानक बफर के साथ कांच इलेक्ट्रोड और निर्देश इलेक्ट्रोड का सेल विभव है।

पी०एच० की इस संक्रियात्मक परिभाषा को समझने के लिए हम विभवमिति के सामान्य नियमों का अध्ययन करेंगे।

18.3.1 विभवमिति का नियम

विभवमिति में दो इलेक्ट्रोडों के बीच विभवांतर की माप की जाती है जिन्हें वैद्युत-रासायनिक सेल बनाने के लिए परस्पर संयुक्त कर दिया गया हो। किसी वैद्युत-रासायनिक सेल में दो इलेक्ट्रोडों के बीच विभवांतर को सेल-विभव कहते हैं। सेल-विभव, इलेक्ट्रोडों के संघटन, विलयन की सान्द्रता और ठीक-ठीक कहें तो विलयन में स्पीशीज की सक्रियता (अथवा गैसों के दाब) और ताप पर निर्भर करता है। सेल-विभव को संबद्ध रासायनिक अभिक्रिया में सम्मिलित स्पीशीज की सक्रियता के साथ संयुक्त करने वाले संबंध को *नेर्न्स्ट समीकरण* कहते हैं। इसकी व्युत्पत्ति तापगतिकीय नियमों द्वारा की जा सकती है। इसकी विस्तृत चर्चा भौतिक रसायन (CHE-04) पाठ्यक्रम की इकाई 17 में की गई है। सेल-विभव, वैद्युत-रासायनिक सेल में स्पीशीज की सक्रियता अथवा सान्द्रता पर निर्भर करता है। इस

MAADHYAM IAS

संकल्पना का उपयोग विभवांतर के माप से विलयन में स्पीशीज की सक्रियता, सान्द्रता और पी०एच० ज्ञात करने के लिए किया जाता है। विभवांतर की माप के लिए विभवमापी अथवा पी०एच० मापी का उपयोग किया जाता है।

उपर्युक्त संकल्पना को समझने के लिए हम गैल्वेनी सेल की विस्तार से चर्चा करेंगे। उदाहरण के लिए चित्र 18.1 में दिए गए सामान्य गैल्वेनी सेल का अध्ययन करेंगे। इस सेल में दो अर्ध सेल हैं। प्रत्येक अर्ध सेल, एक इलेक्ट्रोड और उसके संपर्क में मौजूद विलयन का बना होता है। एक अर्ध सेल में जस्ते का Zn^{2+} में ऑक्सीकरण हो जाता है।

$$Zn(s) \rightarrow Zn^{2+}(a_1) + 2e^- \quad \text{(ऑक्सीकरण)}$$

इलेक्ट्रोड, विलयन के सापेक्ष ऋण आवेशित है और एनोड कहलाता है, अर्थात् ऑक्सीकरण सदैव ऐनोड पर होता है। दूसरी ओर दूसरे अर्ध सेल में ताम्र (II) आयन का ताम्र में अपचयन हो जाता है।

$$Cu^{2+}(a_2) + 2e^- \rightarrow Cu(s) \quad \text{(अपचयन)}$$

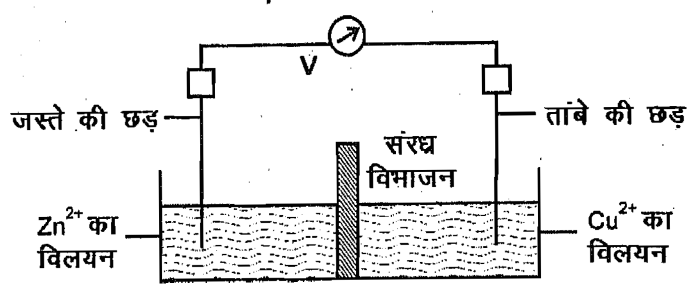

चित्र 18.1: सामान्य गैल्वेनी सेल जिसमें Cu^{2+}/Cu और Zn^{2+}/Zn अर्ध सेल है

यह इलेक्ट्रोड विलयन के सापेक्ष धन आवेशित है और इसे कैथोड कहते हैं। ध्यान देने की बात है कि अपचयन सदैव कैथोड पर होता है।

जैसाकि चित्र 18.1 में दिखाया गया है अर्ध सेलों के दोनों इलेक्ट्रोड बाह्यत: एक विद्युत् परिपथ द्वारा संयुक्त हैं। यह परिपथ विलयन और KCl लवण सेतु से होते हुए आयनी चालन द्वारा पूरा होता है। वोल्टमीटर दो इलेक्ट्रोड के बीच विभवांतर की माप करेगा।

उल्लेखनीय है कि एक अर्ध सेल में ऑक्सीकरण प्रक्रम और दूसरे अर्ध सेल में अपचयन प्रक्रम होता है। ये प्रक्रम सेल में संयुक्त होकर रेडॉक्स अभिक्रिया उत्पन्न करते हैं जिसे नीचे समीकरण द्वारा निरूपित किया जा सकता है,

$$Zn(s) + Cu^{2+}(a_2) \rightarrow Zn^{2+}(a_1) + Cu(s) \quad (18.9)$$

MAADHYAM IAS

आइ०यू०पी०ए०सी० परिपाटी का उपयोग करते हुए इसे इस प्रकार निरूपित किया जा सकता है :

$$Zn(s) \,|\, Zn^{2+}(a_1) \,||\, Cu^{2+}(a_2) \,|\, Cu(s)$$

यह संकेत पद्धति बांये हाथ के इलेक्ट्रोड से आरंभ होती है और विलयन से होते हुए दाहिने हाथ के इलेक्ट्रोड की ओर जाती है। साधारण ऊर्ध्व रेखाएं प्रावस्था की सीमा को व्यक्त करती हैं जबकि दोहरी ऊर्ध्व रेखा लवण सेतु को व्यक्त करती हैं। a_1 और a_2 दो आयनों की सक्रिताएं हैं।

अर्ध सेल में इलेक्ट्रोड और विलयन के बीच विभवांतर को इलेक्ट्रोड विभव कहते हैं। एक इलेक्ट्रोड का विभव मापना संभव नहीं है, वास्तव में विभवांतर को मापा जाता है। विभिन्न अर्ध अभिक्रियाओं के विभवों की तुलना करने के लिए अनेक परिपाटियां प्रचलित हैं। **अर्ध अभिक्रिया को अपचयन प्रक्रम के रूप में** लिखा जाता है, अर्थात्, धातु M और उसके आयन M^{n+} के लिए उसे इस प्रकार लिखा जाता है–

$$M^{n+} + ne^- \rightleftharpoons M(s)$$

यदि अर्ध सेल के अवयवों की इकाई सक्रियता हो तो विभवांतर, मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड के सापेक्ष, 25° C पर मापा जाता है। मानव हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड का स्वेच्छा से शून्य विभव माना गया है। इन अवस्थाओं में प्राप्त विभवांतर अथवा इलेक्ट्रोड विभव को मानक इलेक्ट्रोड विभव, E^0 कहते हैं। मानक इलेक्ट्रोड विलयन की विस्तृत चर्चा अगले अनुच्छेद में की जाएगी।

सामान्य तौर पर किसी सेल का विभवांतर क्रमशः कैथोड और ऐनोड पर दो इलेक्ट्रोड अपचयक विभवों E_1 और E_2 का अंतर होता है।

$$E_{\text{सेल}} = E_1 - E_2$$

दो अर्ध सेलों के बीच संधि पर उत्पन्न संधि विभव भी सेल विभव में योगदान करते हैं। $E_{\text{सेल}}$ का परिकलन इस प्रकार किया जा सकता है :

$$E_{\text{सेल}} = [E_1 - E_2] + E_j$$

जिसमें E_j द्रव संधि विभव है जिसका मान धनात्मक अथवा ऋणात्मक हो सकता है। दो अर्ध सेलों के बीच लवण सेतु का उपयोग कर द्रव संधि विभव को कम किया जा सकता है।

नेर्न्स्ट समीकरण द्वारा सेल-विभव और सम्मिलित स्पीशीज की सक्रियता के बीच संबंध स्थापित किया जा सकता है। नेर्न्स्ट समीकरण इस प्रकार है :

$$E = E^0 - \frac{RT}{nF} \ln \frac{a(\text{अपचित})}{a(\text{ऑक्सीकृत})} \qquad (18.10)$$

25° C or 298 K पर नेर्न्स्ट समीकरण को इस प्रकार लिख सकते हैं :

$$E = E^0 - \frac{0.591}{n} \log \frac{a(\text{अपचित})}{a(\text{ऑक्सीकृत})}$$

जिसमें R सार्वत्रिक गैस स्थिरांक, T परम ताप, n स्थानांतरण में सम्मिलित इलेक्ट्रानों की संख्या, F फैराडे स्थिरांक और a (अपचित) और a (ऑक्सीकृत) प्रत्येक अर्ध सेल के अपचित और ऑक्सीकृत स्पीशीज की सक्रियता है।

पहले उल्लिखित गेल्वेनी सेल के ताम्र (ताम्र II) अर्ध सेल के लिए नेर्न्स्ट समीकरण को इस प्रकार लिखा जा सकता है,

$$E_{(Cu^{2+}/Cu)} = E^0_{(Cu^{2+}/Cu)} - \frac{RT}{2F} \ln \frac{a(Cu)}{a(Cu^{2+})}$$

किन्तु हम शुद्ध पदार्थ की सक्रियता 1 ले सकते हैं, इसलिए

$$E_{(Cu^{2+}/Cu)} = E^0_{(Cu^{2+}/Cu)} - \frac{RT}{2F} \ln \frac{1}{a(Cu^{2+})}$$

अथवा

$$E_{(Cu^{2+}/Cu)} = E^0_{(Cu^{2+}/Cu)} + \frac{RT}{2F} \ln a(Cu^{2+})$$

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बायें हाथ के अर्ध सेल के लिए भी ऐसा ही व्यंजक लिखा जा सकता है :

$$E_{(Zn^{2+}/Zn)} = E^0_{(Zn^{2+}/Zn)} + \frac{RT}{2F}\ln a\left(Zn^{2+}\right)$$

यदि द्रव सन्धि विभव नगण्य हो तो सेल का विभव इस प्रकार लिखा जा सकता है :

$$E_{\text{सेल}} = E_{(Cu^{2+}/Cu)} - E_{(Zn^{2+}/Zn)}$$

स्पष्ट है कि सेल का विभव ताम्र (II) आयन और जस्ता (II) आयन दोनों की सक्रियता पर निर्भर करेगा। ऐसी स्थिति में सेल विभव से दो आयनों की सक्रियता अथवा सान्द्रता को निर्धारित करना संभव नहीं है। व्यवहार में हम दो या अधिक पदार्थों के संयुक्त मान के बजाय केवल एक पदार्थ की सक्रियता अथवा सान्द्रता निर्धारित करते हैं। इसलिए यदि हम जस्ता (II) आयनों की सक्रियता नियत रखें, ताकि उसका विभव भी नियत रहे, तो

$$E_{\text{सेल}} = E^0_{(Cu^{2+}/Cu)} + \frac{RT}{2F}\ln a\left(Cu^{2+}\right) - E_{(Zn^{2+}/Zn)}$$

क्योंकि $E^0_{(Cu^{2+}/Cu)}$ और $E_{(Zn^{2+}/Zn)}$ दोनों स्थिर हैं अतः उन्हें मिलाकर एक मान E' रखा जा सकता है, अर्थात्

$$E_{\text{सेल}} = E' + \frac{RT}{2F}\ln a\left(Cu^{2+}\right)$$

सेल-विभव की माप, स्पष्ट रूप से, ताम्र (II) आयन की सक्रियता के प्राकृतिक लघुगणक के समानुपाती होती है। यह समीकरण, धातु के सक्रियित रूप का विभव के साथ संबंध बतलाता है। इलेक्ट्रोडों के ऑक्सीकृत और अपचित दोनों रूपों के लिए व्यापक समीकरण लिखा जा सकता है।

$$E_{\text{सेल}} = E' \pm \frac{RT}{nF}\ln a_i$$

जिसमें n, आयन I, का आवेश है E' एक स्थिरांक है जिसमें पहले अर्ध सेल का विभव, जिसे स्थिर रखा जाता है, और दूसरे अर्ध सेल का मानक विभव सम्मिलित है। दूसरे अर्ध

MAADHYAM IAS

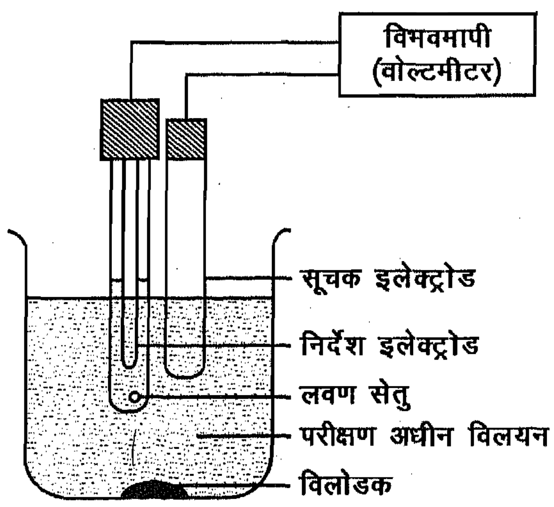

चित्र 18.2: विभवमितीय विश्लेषण के लिए प्रयुक्त सेल का आरेखी निरूपण

सेल में वह विलयन होता है जिसका जांच की जा रही हो। समीकरण में ± चिह्न यह निर्दिष्ट करता है कि यदि I धनायन हो तो वह धनात्मक होगा और I ऋणायन हो तो वह ऋणात्मक होगा। इस समीकरण का विभवमितीय विश्लेषण में प्रयुक्त होने वाले किसी भी प्ररूपी सेल के लिए प्रयोग किया जा सकता है जैसा कि चित्र 18.2 में दिखाया गया है।

यह विभवमितीय माप की सामान्य विधि है। स्थिर विभव वाले पहले अर्ध सेल को *निर्देश इलेक्ट्रोड* कहते हैं। निर्देश इलेक्ट्रोड सहित दूसरे अर्ध सेल को *सूचक इलेक्ट्रोड* कहते हैं जिसकी अनुक्रिया संबद्ध स्पीशीज की सक्रियता अथवा सान्द्रता पर निर्भर करनी चाहिए।

इलेक्ट्रोडों पर विस्तृत चर्चा करने से पहले आइए सेल विभव के माप पर चर्चा करें। जब यदि किसी सेल से धारा कर्षित की जाती है जैसा कि ऊपर बताया गया है, तो सेल विभव की माप करते समय, सेल अभिक्रिया होती है तथा दो अर्ध सेलों में विलयनों की सान्द्रता बदल जाती है। इसलिए यह आवश्यक है कि धारा को प्रवाहित होने दिए बिना, सेल विभव मापा जाए। लगभग शून्य अथवा नगण्य धारा प्रवाह की स्थिति में मापे गए सेल विभव को सेल का *विद्युत् वाहक बल (वि.वा.ब.)* कहते हैं। विभव के यथार्थ माप के लिए प्रयुक्त यंत्र विभवमापी और पी०एच० मापी हैं। ये यंत्र नगण्य धारा प्रयुक्त करते हैं।

18.3.2 इलेक्ट्रोड

पिछले भाग में हमने पढ़ा कि वैद्युत रासायनिक सेल दो इलेक्ट्रोडों के बने होते हैं–सूचक इलेक्ट्रोड और निर्देश इलेक्ट्रोड। यह आवश्यक है कि निर्देश इलेक्ट्रोड आसानी से बनाया जा सके और अल्पधारा प्रवाहित होने पर भी उसका विभव स्थिर और पुन: प्राप्य हो। सूचक इलेक्ट्रोड, मापी जाने वाली स्पीशीज की सक्रियता-परिवर्तन के प्रति अनुक्रिया करता है। अब हम ऐसी पद्धतियों पर विचार करेंगे जिनका उपयोग निर्देश इलेक्ट्रोड की भांति किया जा सकता है।

परिपाटी के अनुसार निर्देश इलेक्ट्रोड को ऐनोड माना जाता है। निर्देश और सूचक इलेक्ट्रोडों से बने सेल को इस प्रकार लिख सकते हैं।

निर्देश ‖ सूचक

और इस सेल का विभव होगा :

$$E_{\text{सेल}} = E_{\text{निर्देश}} - E_{\text{सूचक}} + E_j$$

निर्देश इलेक्ट्रोड

विभवमितीय विश्लेषण के लिए सामान्यत: तीन निर्देश इलेक्ट्रोडों का उपयोग किया जाता है :

- मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड
- कैलोमेल इलेक्ट्रोड
- सिल्वर-सिल्वर क्लोराइड इलेक्ट्रोड

मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड

मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड (चित्र 18.3) प्लैटिनम पन्नी की प्लेट से बनाया जाता है जिसे क्लोरोप्लैटिनिक अम्ल के रासायनिक अथवा वैद्युत रासायनिक अपचयन द्वारा प्लैटिनम लेपित अर्थात् प्लैटिनम ब्लैक (सूक्ष्म चूर्णित प्लैटिनम) से विलेपित कर दिया जाता है। प्लैटिनम ब्लैक की सूक्ष्म चूर्णित परत अधिकतम पृष्ठ क्षेत्रफल प्राप्त करने में सहायता करती है। उसका संघटन इस प्रकार लिखा जा सकता है: Pt, H_2 (1 ऐट्म) | $H^+ (a = 1)$ अर्ध सेल अभिक्रिया दो में से किसी भी दिशा में हो सकती है जो उसके साथ युग्मित इलेक्ट्रोड के प्रकार पर निर्भर करता है।

$$2H^+ + 2e^- = H_2(g)$$

हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड का विभव नेर्न्स्ट समीकरण द्वारा प्राप्त होता है :

$$E = E^0_{2H^+/H_2} - \frac{2.303RT}{2F}\log\frac{p_{H_2}}{(a_{H^+})^2} \qquad (18.12)$$

MAADHYAM IAS

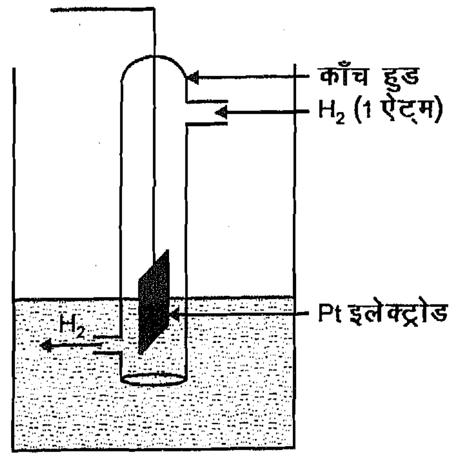

चित्र 18.3: मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड

जिसमें हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड का मानक इलेक्ट्रोड विभव, शून्य है। H^+ सक्रियता वाले मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड के लिए $a_{H^+} = 1$ है और हाइड्रोजन गैस द्वारा डाला गया दाब; p_{H_2} भी 1 ऐट्मॉस्फियर है। समीकरण 18.12 के दाईं ओर का लघुगणकीय पद शून्य हो जाता है अर्थात् $E = E^0 = 0$। परिपाटी के अनुसार सभी तापों पर मानक हाइड्रोजन का विभव, शून्य वोल्ट माना जाता है।

मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड का प्राथमिक निर्देश इलेक्ट्रोड के रूप में वरण किया गया है जिसके निम्नलिखित कारण हैं :

(i) इसका उपयोग पूरे पी०एच० परास में हो सकता है।

(ii) माप की उच्च यथार्थता होती है।

(iii) इसे बनाने में प्रयुक्त अभिकर्मकों का आसानी से शोधन किया जा सकता है।

(iv) इलेक्ट्रोड के विभव पर इलेक्ट्रोड के यांत्रिक प्रतिबल का प्रभाव नहीं पड़ता है।

उपर्युक्त लाभों के अलावा मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड की कुछ सीमाएं भी हैं, जैसे,

(i) इसका उपयोग प्रबल ऑक्सीकारक और प्रबल अपचायक वाले विलयनों में नहीं किया जा सकता है।

(ii) यह सुवाह्य नहीं है इसलिए एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाना आसान नहीं है।

(iii) H_2S, CN^- और Hg जैसी स्पीशीज की उपस्थिति में प्लैटिनम पृष्ठ दूषित हो जाता है।

MAADHYAM IAS

तथापि इलेक्ट्रोड विभव के प्रायोगिक माप के लिए मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड के उपयोग में अनेक सावधानियां रखनी पड़ती हैं। इसलिए संतृप्त कैलोमेल इलेक्ट्रोड और Ag/AgCl इलेक्ट्रोडों को अधिक पसन्द किया जाता है जिनका डिजाइन सरल है और मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड के सापेक्ष जिनका विभव सुविदित है। इन इलेक्ट्रोडों को **द्वितीयक निर्देश इलेक्ट्रोड** कहते हैं।

संतृप्त कैलोमेल इलेक्ट्रोड

संतृप्त कैलोमेन इलेक्ट्रोड सर्वाधिक प्रयुक्त निर्देश इलेक्ट्रोड है। साहित्य में संतृप्त कैलोमेल इलेक्ट्रोड के अनेक डिजाइन दिए गए हैं। उनमें से एक चित्र 18.4 में दिखाया गया है।

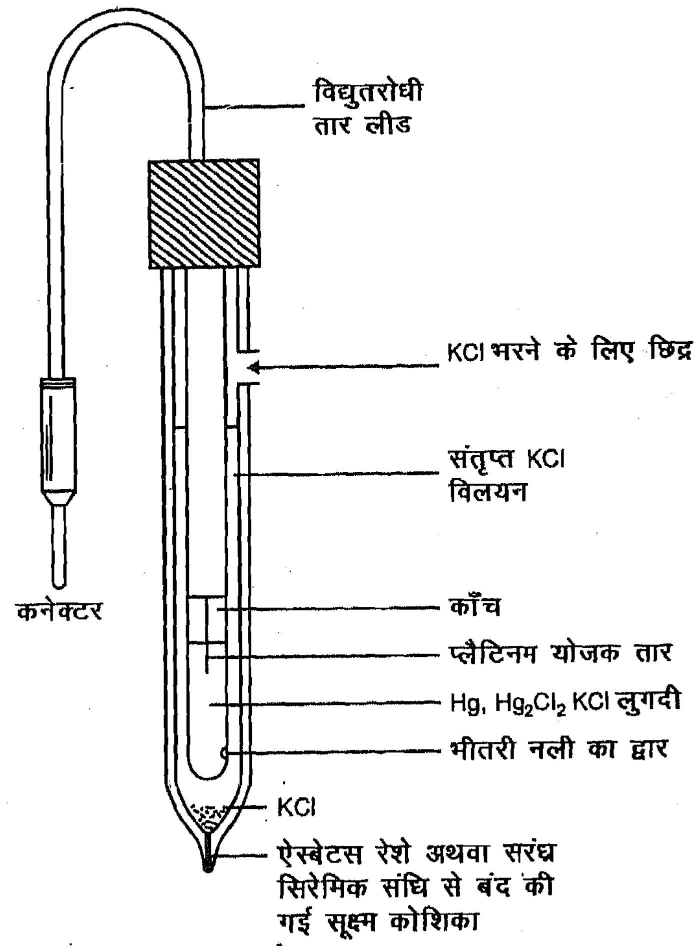

चित्र 18.4: व्यापारिक कैलोमेल इलेक्ट्रोड

इसमें एक बाहरी कांच की नली होती है जिसके अंत में एक दरार होती है। यह दरार ऐस्बेस्टॉस तंतु अथवा पोर्सिलेन डाट अथवा क्वार्ट्ज रेशे से बनाई जाती है। भीतरी नली में मर्करी और मर्क्यूरस क्लोराइड लुगदी भर दिए जाते हैं। भीतरी नली एक छोटे छिद्र द्वारा बाहरी नली में रखे संतृप्त पोटैशियम क्लोराइड विलयन से जुड़ी रहती है। बाहरी नली में संतृप्त पोटेशियम क्लोराइड विलयन को एक पार्श्व छिद्र से आसानी से बदला जा सकता है। कैलोमेल अर्थात् मर्क्यूरस क्लोराइड एक अल्पविलेय लवण है। उसका विलेयता गुणनफल (K_{sp}) इस प्रकार लिखा जाता है:

$$K_{sp} = a_{Hg_2^{2+}} \times \left(a_{Cl^-}\right)^2 = 1.1\times10^{-18} \qquad (18.13)$$

कैलोमेल इलेक्ट्रोड को प्रतीक द्वारा इस प्रकार निरूपित किया जा सकता है:

$Hg \mid Hg_2Cl_2$ (संतृप्त), KCl (x M)

कैलोमेल इलेक्ट्रोड का विभव Cl^- आयन की सान्द्रता पर निर्भर करता है।

जिसमें x पोटैशियम क्लोराइड की सान्द्रता को निरूपित करता है और इलेक्ट्रोड का वर्णन करते समय उसका उल्लेख करना चाहिए। सामान्यतया पोटैशियम क्लोराइड के 0.1 M, 1 M और संतृप्त विलयन का उपयोग किया जाता है। तद्नुसार कैलोमेल इलेक्ट्रोडों को क्रमश: डेसीमोलर, मोलर और संतृप्त कैलोमेल इलेक्ट्रोड कहा जाता है।

अर्ध सेल अभिक्रिया इस प्रकार लिखी जाती है :

$$Hg_2Cl_2(s) + 2e^- \rightleftharpoons 2Hg(l) + 2Cl^-$$

MAADHYAM IAS

और 25° C पर विभव निम्न समीकरण द्वारा प्राप्त होता है:

$$E = E^0_{Hg_2Cl_2/Hg} - \frac{0.0591}{2}\log\left(a_{Cl^-}\right)^2$$

समीकरण 18.13 से a_{Cl^-} का मान रखने पर,

$$E = E^0_{Hg_2Cl_2/Hg} - \frac{0.0591}{2}\log\frac{K_{sp}}{a_{Hg_2^{2+}}} \quad (18.14)$$

किसी विशेष इलेक्ट्रोड के लिए क्लोराइड आयनों की (पोटैशियम क्लोराइड से प्राप्त अतिरिक्त क्लोराइड आयन) सक्रियता स्थिर रहती है। 25° C पर संतृप्त कैलोमेल इलेक्ट्रोड के विभव का प्रायोगिक मान 0.224 V है।

सिल्वर–सिल्वर क्लोराइड इलेक्ट्रोड

सिल्वर-सिल्वर क्लोराइड इलेक्ट्रोड बारंबार प्रयुक्त होने वाला अन्य निर्देश इलेक्ट्रोड है। इसे बनाने के लिए सिल्वर क्लोराइड की परत का रजत धातु के तार पर विद्युत् लेपन किया जाता है। फिर उसे ज्ञात सान्द्रता के क्लोराइड आयन युक्त विलयन (सामान्यतया KCl विलयन) में निमज्जित कर दिया जाता है। इस क्लोराइड आयन युक्त विलयन को सिल्वर क्लोराइड से भी संतृप्त कर दिया जाता है (देखिए चित्र 18.5)।

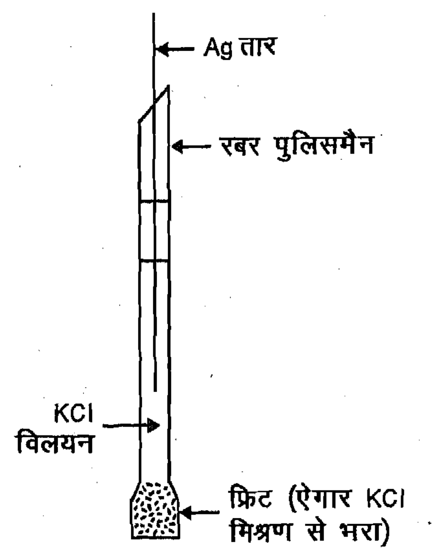

चित्र 18.5: सिल्वर-सिल्वर क्लोराइड इलेक्ट्रोड

MAADHYAM IAS

सिल्वर क्लोराइड अल्प विलेय लवण है। उसका विलेयता गुणनफल, K_{sp} इस प्रकार लिखा जा सकता है:

$$K_{sp} = a_{Ag^+} \times a_{Cl^-} = 1.77\times10^{-10}\,(25^{\circ}\text{C पर}) \quad (18.15)$$

सिल्वर-सिल्वर क्लोराइड इलेक्ट्रोड को प्रतीक रूप में इस प्रकार लिखा जा सकता है,

$$Ag\,|\,AgCl\ (\text{संतृप्त}),\ KCl\ (x\,M)$$

जिसमें x पोटैशियम क्लोराइड विलयन की मोलरता निरूपित करता है। सामान्यतया संतृप्त पोटैशियम क्लोराइड विलयन लिया जाता है

अर्ध सेल अभिक्रिया इस प्रकार होती है :

$$AgCl(s) + e^- \rightarrow \mathbf{Ag}(s) + Cl^-$$

और 25^0 C पर विभव निम्न समीकरण द्वारा प्राप्त होता है,

$$E = E^0_{Ag^+/Ag} - 0.0591 \log a_{Cl^-}$$

समीकरण 18.15 से a_{Cl^-} का मान रखने पर,

$$E = E^0_{Ag^+/Ag} - 0.0591 \log \frac{K_{sp}}{a_{Ag^+}} \qquad (18.16)$$

Ag / AgCl इलेक्ट्रोड का विभव कैलोमेल इलेक्ट्रोड की तरह ही Cl^- आयन की सान्द्रता पर निर्भर करता है

यदि क्लोराइड आयनों (पोटैशियम क्लोराइड) की बहुत अधिकता हो तो अर्ध सेल में सिल्वर क्लोराइड को घोलने से प्राप्त क्लोराइड आयनों के योगदान को पोटैशियम क्लोराइड की सान्द्रता (जो स्थिर रहती है) द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। पोटैशियम क्लोराइड के संतृप्त विलयन द्वारा निर्मित इलेक्ट्रोड के विभव का प्रायोगिक मान 0.199 V होता है।

बोध प्रश्न 3

निर्देश इलेक्ट्रोड किसे कहते हैं? कुछ उदाहरण दीजिए।

....

....

....

सूचक इलेक्ट्रोड

जैसाकि पहले बताया गया है, जो इलेक्ट्रोड विशिष्ट आयन के साथ अनुक्रिया करते हैं वे सूचक इलेक्ट्रोड कहलाते हैं। ऐसे इलेक्ट्रोडों का वरण और उपयोग आधुनिक विभवमिति की कुंजी है। अनेक धातुएं, सूचक इलेक्ट्रोड के रूप में काम कर सकती हैं। किन्तु वे वरणात्मक नहीं हैं क्योंकि ये इलेक्ट्रोड अपने आयनों के साथ अनुक्रिया करते हैं और अनेक अन्य धात्विक आयनों के साथ भी अनुक्रिया करते हैं। अनेक अन्य सूचक इलेक्ट्रोड भी हैं जो विशिष्ट आयनों के साथ ही अनुक्रिया कर सकते हैं। उनमें से अनेक विभवमितीय विश्लेषण में बहुत उपयोगी हैं जिन्हें सामूहिक रूप से **आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड** [ion selective electrode (ICE)] कहते हैं। इनमें सर्वाधिक प्रयुक्त कांच इलेक्ट्रोड है जो H^+ आयनों और फलस्वरूप पी०एच० के लिए वरणात्मक है। अगले भाग में कांच-इलेक्ट्रोड की विस्तार से चर्चा की जाएगी।

कांच इलेक्ट्रोड

कांच इलेक्ट्रोड द्वारा pH आसानी से ज्ञात किया जा सकता है। यह आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड है। कांच इलेक्ट्रोड, झिल्ली प्रकार का इलेक्ट्रोड है जिसकी झिल्ली विशेष प्रकार के कांच से बनाई जाती है। भिन्न भिन्न अम्लता के दो विलयनों को पृथक करने वाली कांच की पतली झिल्ली के आरपार विभव उत्पन्न होता है। इस प्रकार विभवांतर की माप का संबंध हाइड्रोजन आयन सान्द्रता से होता है। क्रेमर ने सबसे पहले 1906 में इस परिघटना को ज्ञात किया और हाबर ने 1909 में कांच बल्ब इलेक्ट्रोडों की रचना कर इसका क्रमबद्ध रूप से अन्वेषण किया। सोरेन्सन द्वारा 1909 में हाइड्रोजन आयन सान्द्रता को पी०एच० के रूप में ज्ञात करने और ए० बेकमान द्वारा 1930 में निर्वात नली

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

वोल्टमीटर का उपयोग करने से कांच पी॰एच॰ इलेक्ट्रोडों का उपयोग अधिक व्यावहारिक हो गया। ट्रांजिस्टर आधारित पी॰एच॰ मापी तथा उच्च पी॰एच॰ मान मापने के लिए विशेष कांच के निर्माण से इस प्रौद्योगिकी में और सुधार हुआ है।

बाजार में विभिन्न आकारों, आमापों और पी॰एच॰ परासों के कांच इलेक्ट्रोड उपलब्ध हैं। चित्र 18.6 में सामान्य प्रकार के कांच इलेक्ट्रोड की रचना दिखाई गई है। इसमें भारी दीवार की कांच नलिका के सिरे पर एक पतली, H^+ सुग्राही, कांच की झिल्ली का बल्ब होता है। कांच की झिल्ली वाले बल्ब में कोई बफर विलयन (अथवा 0.1 M HCl) भरा होता है। भीतरी विलयन के संपर्क में कोई निर्देश इलेक्ट्रोड (प्राय: सिल्वर-सिल्वर क्लोराइड इलेक्ट्रोड) रखा जाता है। उसे पी॰एच॰ मापी के एक सिरे पर जोड़ दिया जाता है। कांच इलेक्ट्रोड का निचला भाग (बल्ब) बाहरी उस विलयन में डूबा रहता है जिसका पी॰एच॰ मापना होता है। बाहरी विलयन में एक बाह्य निर्देश इलेक्ट्रोड (सामान्यत: संतृप्त कैलोमेल इलेक्ट्रोड) डूबा रहता है और वह पी॰एच॰ मापी के दूसरे सिरे से जुड़ा रहता है।

पी॰एच॰ कांच इलेक्ट्रोड वाले सेल का व्यवस्था-आरेख इस प्रकार निरूपित किया जा सकता है:

बाहरी निर्देश इलेक्ट्रोड	बाहरी विलयन $(a_{H^+})_{बाहरी}$	H^+ सुग्राही कांच की झिल्ली	भीतरी बफर $(a_{H^+})_{भीतरी}$	भीतरी निर्देश इलेक्ट्रोड

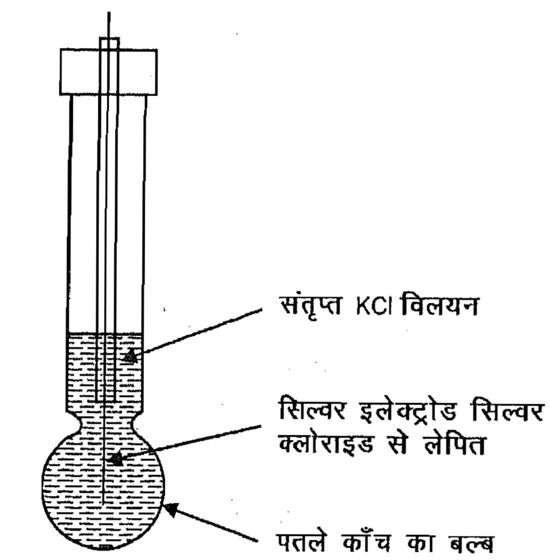

चित्र 18.6: पी॰एच॰ मापने का एक प्ररूपी कांच इलेक्ट्रोड

MAADHYAM IAS

इस सेल का विभव है :

$$E_{सेल} = E_{निर्देश\,(भीतरी)} - E_{निर्देश\,(बाहरी)} + E_{झिल्ली} + E_j$$

भीतरी और बाहरी निर्देश E_j (द्रव संधि विभव) को स्थिर रखा जा सकता है। इसी अवस्था में सेल के विभव में परिवर्तन काँच की झिल्ली के विभव के कारण होगा। झिल्ली का विभव दोनों ओर हाइड्रोजन आयनों की सक्रियता पर निर्भर करेगा। जिसे नेन्स्ट समीकरण द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है।

$$E_{झिल्ली} = E_{अस} - 0591 \log \frac{N_{H^+_{भीतरी}}}{a_{H\&}}$$

यहाँ $E_{\text{अस.}}$ असममिति विभव है। असममिति विभव, कांच की झिल्ली की भीतरी और बाहरी परतों के पृष्ठ में अंतर के कारण होता है। अब $E_{\text{सेल}}$ को इस प्रकार लिखा जा सकता है :

$$E_{\text{सेल}} = k - 0.0591 \log \frac{(a_{H^+})_{\text{भीतरी}}}{(a_{H^+})_{\text{बाहरी}}} \qquad (18.17)$$

जिसमें k स्थिरांक है। स्थिरांक में, बाहरी और भीतरी निर्देश इलेक्ट्रोडों के विभव, संधि विभव तथा कांच की झिल्ली के असममिति विभव शामिल हैं।

क्योंकि बफर विलयन इस्तेमाल कर कांच की झिल्ली के भीतरी पार्श्व का पी॰एच॰ अथवा हाइड्रोजन आयनों की सक्रियता को स्थिर रखा जाता है अत: कांच की झिल्ली के इलेक्ट्रोड का विभव बाहरी विलयन के पी॰एच॰ या हाइड्रोजन आयनों की सक्रियता पर निर्भर करेगा अब समीकरण 18.17 को निम्न प्रकार लिख सकते हैं :

$$E_{\text{सेल}} = k_1 + 0.0591 \log (a_{H^+})_{\text{बाहरी}}$$

क्योंकि पी॰एच॰ $= -\log a_{H}$,

इसे समीकरण 18.17 में प्रतिस्थापित करने पर

$$E_{\text{सेल}} = k_1 - 0.0591\,\text{pH} \qquad (18.18)$$

यहाँ k_1 नया स्थिरांक है जिसमें दोनों निर्देश इलेक्ट्रोडों के विभव, संधि विभव, असममिति विभव और भीतरी विलयन की सक्रियता शामिल हैं। इस प्रकार, कांच इलेक्ट्रोड पद्धति में उत्पन्न विद्युत् वाहक बल पी॰एच॰ के साथ रैखिकत: परिवर्तित होता है। विभव को पहले मानक बफर विलयन के साथ, जिसका पी॰एच॰ ठीक ज्ञात हो, मापकर और फिर अज्ञात विलयन के साथ मापकर स्थिरांक k_1 का विलोप किया जा सकता है। इस प्रकार मानक बफर के लिए,

$$(E_{\text{सेल}})_{\text{मानक}} = k_1 - 0.0591\,(\text{pH})_{\text{मानक}}$$

अथवा

$$k_1 = (E_{\text{सेल}})_{\text{मानक}} + 0.0591\,(\text{pH})_{\text{मानक}}$$

अज्ञात विलयन के नमूने के लिए,

$$(E_{\text{सेल}})_{\text{अज्ञात}} = k_1 - 0.0591\,(\text{pH})_{\text{अज्ञात}}$$

ऊपर से k_1 का मान रखने पर,

$$(E_{\text{सेल}})_{\text{अज्ञात}} = (E_{\text{सेल}})_{\text{मानक}} + 0.0591\,(\text{pH})_{\text{मानक}} - 0.0591\,(\text{pH})_{\text{अज्ञात}}$$

$$(\text{pH})_{\text{अज्ञात}} = (\text{pH})_{\text{मानक}} + \frac{(E_{\text{सेल}})_{\text{मानक}} - (E_{\text{सेल}})_{\text{अज्ञात}}}{0.0591} \qquad (18.8)$$

यह pH की संक्रियात्मक परिभाषा है।

जैसाकि ऊपर कहा गया है, स्थिरांक k_1 में असममिति विभव शामिल है जो कांच की झिल्ली के आरपार विद्यमान रहता है भले ही सेल के दो पार्श्वों का समान संघटन हो। इसलिए पी॰एच॰ मापी का समय-समय पर मानक बफर के साथ अंशांकन करना होता है, (अधिकांशत: जब पी॰एच॰ मापी जाए)।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

पी॰एच॰ मापी में वोल्टमीटर का उपयोग सेल का विभव मापने के लिए किया जाता है। वोल्टता पैमाने का पी॰एच॰ मात्रकों में अंशाकन किया जाता है ताकि 25° C पर 0.0591V, 1 पी॰एच॰ मात्रक के संगत हो। इस मान में ताप के साथ परिवर्तन होगा और आधुनिक पी॰एच॰ मापियों में ताप प्रतिकारी युक्ति होती है। इसे पी॰एच॰ पठनों से पहले सेट किया जा सकता है।

संयोजन इलेक्ट्रोड (combination electrodes)

सुविधा के लिए सूचक इलेक्ट्रोड और निर्देश इलेक्ट्रोड दोनों को (लवण सेतु सहित) मिलाकर पूर्ण सेल अथवा संयोजन इलेक्ट्रोड बनाए जा सकते हैं। ऐसे इलेक्ट्रोडों में विभवमितीय मापों के लिए बहुत कम आयतन की आवश्यकता होती है। संयोजन इलेक्ट्रोडों का प्ररूपी समुच्चय चित्र 18.7 में दिखाया गया है। उसमें नली के अंदर नली होती है, अंदर की नली में पी॰एच॰ सूचक इलेक्ट्रोड होता है और बाहर की नली में निर्देश इलेक्ट्रोड और इसका लवण सेतु होते हैं।

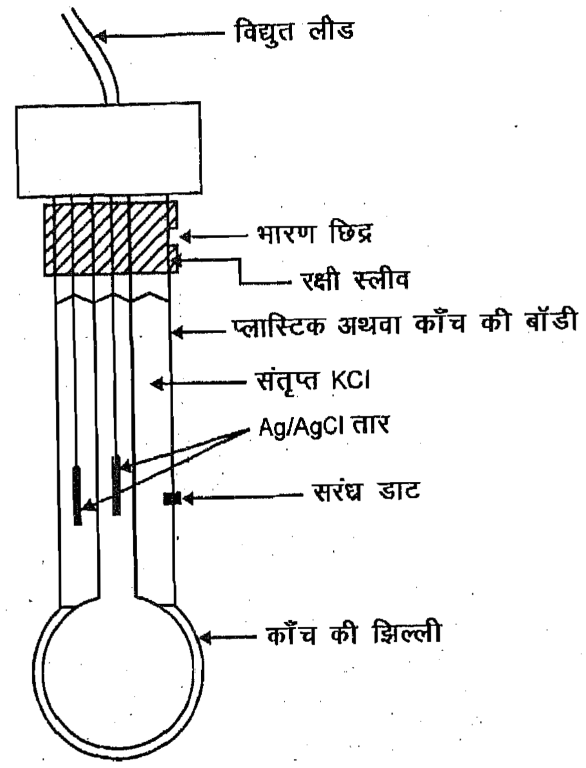

चित्र 18.7: संयोजन पी॰एच॰-निर्देश इलेक्ट्रोड

MAADHYAM IAS

बोध प्रश्न 4

विलयन का पी॰एच॰ ज्ञात करने से पहले कांच इलेक्ट्रोड का अंशांकन करना आवश्यक क्यों है?

....

....

....

18.3.3 पी॰एच॰ मापी द्वारा पी॰एच॰ की माप

पी॰एच॰ मापी, आवश्यक सुग्राहिता वाला इलेक्ट्रॉनिक वोल्टमीटर होता है जिसका पैमाना सीधे पी॰एच॰ मात्रकों में अंशांकित रहता है। पैमाने में 0 से 14 पी॰एच॰ मात्रक होते हैं।

एक नोकदार सुई अंशाकित पैमाने के आर-पार चलती है जिससे विलयन का पी०एच० पैमाने पर सीधे पढ़ा जा सकता है।

अनेक यंत्र निर्माताओं द्वारा बनाए गए विभिन्न डिजाइनों के कई पी०एच० मापी बाजार में उपलब्ध हैं। सामान्य प्रयोजन के पी०एच० मापी या तो लाइन प्रचालित होते हैं, जिन्हें 0.05 पी०एच० मात्रक तक पढ़ा जा सकता है, अथवा बैटरी प्रचालित यंत्र होते हैं जो क्षेत्र-कार्य के लिए उपयुक्त हैं। आजकल पैमाना-सुई-यंत्रों की तुलना में अंकीय पी०एच०मापी अधिक प्रचलित है जिन्हें 0.01 पी०एच० मात्रक तक पढ़ा जा सकता है।

चित्र 18.8 में दिखाए यंत्र (पी०एच० मापी) द्वारा किसी विलयन का पी०एच० की माप निम्नलिखित प्रक्रिया के अनुसार की जा सकती है।

1. वरणकारी स्विच (selector switch) को शून्य स्थिति में रखें। यदि संकेतक शून्य पर न हो तो पेचकश से शून्य स्थिति पर समंजित करें।
2. इलेक्ट्रोडों (कांच इलेक्ट्रोड, संतृप्त कैलोमेल इलेक्ट्रोड अथवा संयुक्त कांच-कैलोमेल इलेक्ट्रोड) को स्टैंड पर क्लिप में आरूढ़ करें और इलेक्ट्रोडों को भली भांति आसुत जल से धोले।
3. पावर केबल को 220V ए०सी० सप्लाई से जोड़ दें। यंत्र का स्विच चालू करें और कुछ मिनट इंतजार करें ताकि यंत्र गरम हो जाए।
4. ताप को विलयन ताप मान पर समंजित करें।

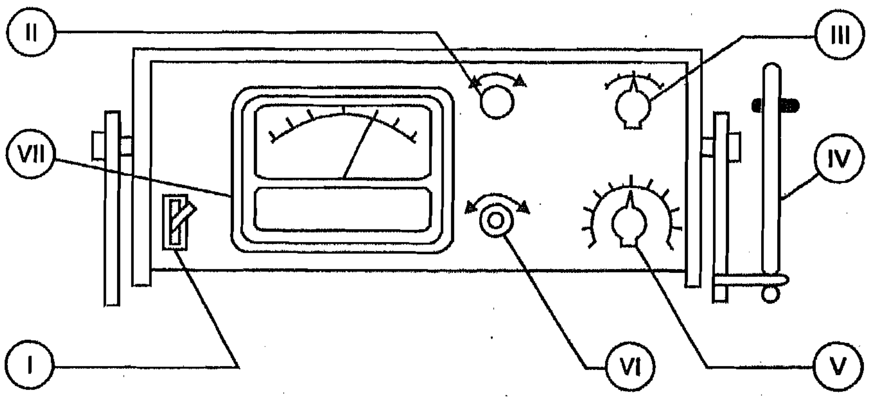

चित्र 18.8: प्रत्यक्ष पठन पी०एच० मापी (सामने का दृश्य) निर्देशिका: I चालू/बंद स्विच II सेट शून्य III वरणकारी IV इलेक्ट्रोड अवलंब V ताप क्षतिपूर्ति VI सेट बफर VII मीटर

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

5. एक बीकर में वांछित परास का मानक बफर विलयन लें (जैसे अम्लीय विलयनों के लिए पी०एच० 4 बफर)। इलेक्ट्रोड समुच्चय को पी०एच० निर्देश बफर में निमज्जित कर दें। विलयन को हिलाएं जिससे उसका पी०एच० संतुलित हो जाए। यह सुनिश्चित करें कि कांच इलेक्ट्रोड झिल्ली, विलयन में पूर्णतया निमज्जित हो जाए। इलेक्ट्रोड न तो एक-दूसरे को छुएं और न बीकर के पार्श्व अथवा तली को छुएं।
6. वरणकारी स्विच (selector switch) को उपयुक्त पी०एच० परास (अम्लीय विलयन के लिए 0-7 और क्षारकीय विलयन के लिए 7-14) पर रखे। सेट बफर घुंडी को इस प्रकार समंजित करें कि संकेतक, फ्लास्क में रखे मानक बफर विलयन के पी०एच० को बतलाए।
7. वरणकारी स्विच को वापस शून्य स्थिति में रखें। बफर विलयन से इलेक्ट्रोडों को पृथक कर दें। इलेक्ट्रोडों को आसुत जल से धोलें और टिशू कागज से पोंछ लें।

8. मानक बफर को वापस संग्रह बोतल में डाल दें और बीकर को आसुत जल से भली भांति धोलें।
9. नमूना विलयन, बीकर में लें। इलेक्ट्रोडों को विलयन में डालें और विलयन को धीरे से घुमाएं।
10. वरणकारी स्विच को उपयुक्त परास पर सेट करें और पैमाने पर पी०एच० को पढ़ लें।
11. वरणकारी स्विच को वापस शून्य पर ले आएं। विलयन से इलेक्ट्रोडों को हटा लें और आसुत जल से धोलें। उपयोग में न होने पर इलेक्ट्रोडों को आसुत जल में रखें।

सावधानियां

(i) कांच इलेक्ट्रोड की झिल्ली को मुलायम टिशू कागज के अलावा किसी चीज़ से न छुएं क्योंकि वह बहुत कमजोर होती है तथा खरोंच पड़ने अथवा टकराने से आसानी से टूट जाती है।

(ii) वरणकारी स्विच के शून्य पर आने से पहले विलयन से इलेक्ट्रोडों को न हटाएं।

(iii) कांच इलेक्ट्रोडों को उस विलयन में न डुबाएं जो निर्जलीकारी क्रिया करता हो।

(iv) यदि कांच इलेक्ट्रोड को ऐल्बूमिनी पदार्थों का पी०एच० मापने के लिए प्रयुक्त किया गया हो तो किसी अन्य विलयन का पी०एच० मापन से पहले उसे उपयुक्त विलायक से साफ कर कुछ घंटे आसुत जल में रख देना चाहिए।

(v) जिन क्षारकीय विलयनों का पी०एच० मान 11 से अधिक हो उनके लिए विशेष संघटन वाले कांच इलेक्ट्रोडों की आवश्यकता होती है ताकि सोडियम आयनों के कारण व्यतिकरण न हो।

(vi) झटकों से बचने के लिए कांच इलेक्ट्रोड को स्लीव से आच्छादित कर दें।

(vii) यंत्र के अंशांकन के लिए ऐसा मानक बफर लें जिसका पी०एच० मान, नमूने के पी०एच० मान के निकटतम हो। सामान्यत: 4, 7 और 9.2 पी०एच० मान वाले मानक बफरों का उपयोग किया जाता है जो बाजार में उपलब्ध रहते हैं।

18.3.4 जल और अपशिष्ट जल का पी०एच०

जल के नमूने के पी०एच० से ज्ञात होता है कि वह अम्लीय है अथवा क्षारकीय। पी०एच०, प्राकृतिक जल और अपशिष्ट जल के समुच्चय गुणधर्म का माप होता है और उसकी व्याख्या विशिष्ट पदार्थ के लिए ही की जा सकती है जबकि नमूने का रासायनिक संघटन ज्ञात हो।

जल की अम्लता, प्रबल खनिज अम्लों, कार्बोनिक अम्ल, ऐसीटिक अम्ल आदि दुर्बल अम्लों और लोहा, ऐलुमिनियम आदि बहुसंयोजी धातुओं के जलविश्लेषी लवणों की उपस्थिति के कारण हो सकती है। अम्लों से संक्षारकता उत्पन्न होती है और वे जल में रासायनिक अभिक्रिया दरों को और जैव प्रक्रम को प्रभावित करते हैं।

MAADHYAM IAS

जल की क्षारता मुख्यत: उसमें कार्बोनेट, बाइकार्बोनेट और हाइड्रॉक्साइड की उपस्थिति के कारण होती है। फॉस्फेट, बोरेट सिलिकेट आदि क्षारकों की उपस्थिति से भी क्षारता उत्पन्न हो सकती है।

विभिन्न उद्योगों से निकलने वाला जल भी कभी कभी अत्यधिक अम्लीय होता है जैसे अम्ल खान निकास जल, इस्पात उद्योग अम्लोपचार जल और वंग पट्टन प्रक्षाल जल में अम्ल

की पर्याप्त मात्रा होती है। इस प्रकार प्राप्त अपशिष्ट जल में अम्ल की मात्रा बहुत अधिक होती है जिसकी जांच पी०एच० मापकर की जा सकती है। नदी में छोड़ने से पहले अपशिष्ट जल के अम्ल को पी०एच० 6-8 तक उदासीन कर लेना चाहिए।

आजकल जल और औद्योगिक अपशिष्ट जल का पी०एच० मापना अत्यधिक महत्वपूर्ण कार्य हो गया है। इसके लिए रासायनिक उद्योगों और प्राकृतिक जल में पी०एच० मापने की प्रक्रिया बढ़ती जा रही है। अधिकांश औद्योगिक संयंत्रों में वैद्युतमितीयत: पी०एच० मापन किया जाता है। इस कार्य के लिए व्यापारिक पी०एच० मापी का उपयोग किया जाता है। कुछ विशेष मामलों को छोड़कर कांच इलेक्ट्रोड का, पी०एच० मापी इलेक्ट्रोड के रूप में उपयोग किया जाता है। ताप क्षतिपूर्ति और इलेक्ट्रोड की देखभाल का विशेष ध्यान रखना चाहिए। क्षेत्र-कार्य के लिए बैटरी चालित यंत्रों का उपयोग किया जाता है। सतत संयंत्र नियंत्रण में माप के लिए कांच इलेक्ट्रोडों का उपयोग किया जाता है। किन्तु उपयोग से पहले इलेक्ट्रोडों का बफर विलयनों के साथ मानकीकरण कर देना चाहिए तथा विद्युत् अभिलेखी को इस प्रकार समंजित करना चाहिए कि माप से प्राप्त मान, अभिलेखी के मान के अनुरूप हों।

यदि अपशिष्ट जल में हाइड्रोफ्लुओरिक अम्ल हो तो पी०एच० माप के लिए ऐन्टिमनी इलेक्ट्रोड का उपयोग करना चाहिए क्योंकि फ्लुओराइड, कांच के सिलिकन से अभिक्रिया कर सकता है।

18.3.5 अम्ल वृष्टि और पी०एच०

अम्ल वृष्टि आज दुनियां में पर्यावरण की सबसे बड़ी समस्या है जिसका दुनियां के अनेक प्रदेश सामना कर रहे हैं। जो वृष्टि अ-प्रदूषित प्राकृतिक वृष्टि से बहुत अधिक अम्लीय (पी०एच० < 5.0) होती है वह अम्ल वृष्टि मानी जाती है। सामान्य रूप से इसके अंतर्गत अम्ल-कुहरा और अम्ल हिम जैसी अन्य परिघटनाएं भी आती हैं। अम्ल-वृष्टि के अनेक पारिस्थितिक क्षतिकारक परिणाम होते हैं और वायु में अम्लीय ऑक्साइडों की उपस्थिति का मनुष्य के स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

प्राकृतिक (अर्थात् अप्रदूषित) वृष्टि, वायुमंडल में मौजूद कार्बन डाइऑक्साइड के घुले होने से किंचित अम्लीय होती है। कार्बन डाइऑक्साइड के जल में घुलने से कार्बोनिक अम्ल प्राप्त होता है जो एक दुर्बल अम्ल है। यह अंशत: आयनित होकर प्रोटॉन उत्पन्न करता है जिससे तंत्र कर पी०एच० कम हो जाता है:

$$CO_2 + H_2O \rightleftharpoons H_2CO_3$$

$$H_2CO_3 \rightleftharpoons H^+ + HCO_3^-$$

प्रोटॉन के उत्पन्न होने से अप्रदूषित प्राकृतिक वृष्टि का पी०एच० लगभग 5.6 होता है जो 7.0 से कम है और अम्लीय क्षेत्र में है। इसलिए वास्तविक अम्ल वृष्टि, प्राकृतिक वृष्टि से अधिक अम्लीय होनी चाहिए, अम्ल वृष्टि का पी०एच० 5 से कम होता है। अम्ल वृष्टि के प्रमुख प्रदूषक सल्फर डाइऑक्साइड, SO_2 और नाइट्रोजन ऑक्साइड NO_x हैं। सल्फर डाइऑक्साइड प्राय: ज्वालामुखियों द्वारा उत्पन्न किया जाता है अथवा कोयले के जलने से प्राप्त होता है। यह प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से हवा में तेल परिष्करणशालाओं अथवा ताप विद्युत् संयंत्रों द्वारा भी उत्सर्जित होता है। नाइट्रोजन ऑक्साइड प्रदूषक गैसें, हवा में ईंधन के गरम ज्वाला के साथ जलने से उत्पन्न होती हैं। पहले नाइट्रिक ऑक्साइड, NO बनता है जो धीरे-धीरे नाइट्रोजन डाइ ऑक्साइड में ऑक्सीकृत हो जाता है। हवा में NO और NO_2 को संयुक्त रूप में NO_x कहते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

समय गुजरने के साथ ये प्राथमिक प्रदूषक, वायु ऑक्सीकरण और जल वाष्प द्वारा, द्वितीयक प्रदूषकों, सल्फ्यूरिक अम्ल, H_2SO_4 और नाइट्रिक अम्ल HNO_3 में परिवर्तित हो जाते हैं। ये दोनों अम्ल जल में अत्यंत विलेय हैं। ये प्रबल अम्ल हैं और अम्ल वृष्टि के लिए उत्तरदायी हैं।

अम्ल वृष्टि की गुणता उसके पी०एच० से निर्धारित की जाती है। साल-दर-साल वृष्टि के पी०एच० मान गिरते जा रहे हैं अर्थात् वृष्टि अधिक अम्लीय होती जा रही है। तथापि वृष्टि का पी०एच० अलग-अलग स्थान पर भिन्न-2 होता है। अभी तक, अप्रैल 1974 में स्कॉटलैंड में हुई वृष्टि का सबसे कम पी०एच० मान, 2.4, रिकार्ड किया गया है।

वृष्टि के घटते पी०एच० के गंभीर पारिस्थितिक परिणाम होते हैं क्योंकि भूमि पर गिरने वाला अम्लीय वृष्टि जल बहकर नदियों और तालाबों में चला जाता है। अम्लीलियत तालाबों में घुले ऐलुमिनियम, Al^{3+} की सान्द्रता बहुत अधिक होती है। अम्लता (अर्थात् कम पी०एच०) और उच्च ऐलुमिनियम सान्द्रता दोनों अनेक जल-निकायों में मछलियों की घटती जनसंख्या के लिए उत्तरदायी हैं।

बोध प्रश्न 5

उन पदार्थों को सूचीबद्ध कीजिए जिनके कारण अम्ल-वृष्टि होती है।

....

....

....

18.3.6 मृदाओं का पी०एच०

खाद्य उत्पादन का आवश्यक अंग होने के कारण मृदा, पर्यावरण का महत्वपूर्ण भाग है। इसलिए फसलों की आवश्यकता के संदर्भ में मृदा का भौतिक लक्षण ज्ञात होना अनिवार्य है। पर्यावरण संबंधी घटनाओं का, जैसे जलवायु और वनस्पति आदि के कारण होने वाले कुछ भौतिक और रासायनिक प्रक्रमों का मृदा के गुणधर्मों पर प्रभाव पड़ता है। मृदाओं के भौतिक और रासायनिक गुणधर्मों में भिन्नता उनके रंग, क्षारता, अम्लता, पी०एच०, विनिमेय धनायनों आदि पर निर्भर करती है। मृदा के स्वभाव को निर्धारित करने में मृदा के पी०एच० की महत्वपूर्ण भूमिका है अर्थात् मृदा का अम्लीय और क्षारकीय स्वभाव, मृदा के पी०एच० को मापकर सुनिश्चित किया जाता है।

विद्युत् अपघट्यों, सल्फाइडों, कार्बोनेटों, अमोनिया और अमोनियम लवणों की उपस्थिति से मृदा का पी०एच० प्रभावित होता है। मृदा में जल की मात्रा से भी पी०एच० में परिवर्तन होता है। जिन मृदाओं में कार्बोनेट अथवा बाइकार्बोनेट होते हैं उनके पी०एच० का कार्बन डाइऑक्साइड दाब के साथ निकट संबंध होता है। आर्द्र क्षेत्रों में मृदा में जल के अंत:स्रवण से क्षारकों का निक्षालन हो जाता है जिससे मृदा में अम्लता बढ़ जाती है और फ़लस्वरूप उत्पादकता कम हो जाती है। मृदाओं का पी०एच०, विनिमेय धनायनों की मात्रा और स्वभाव पर भी निर्भर करता है। इस प्रकार कैल्सियम संतृप्त मृदाओं के लिए पी०एच० प्राय: 7 से 8.5 तक बदलता रहता है जबकि सोडियम संतृप्त विलयनों के लिए वह 10.0 तक हो सकता है।

मृदा के पी०एच० निर्धारण का वह अर्थ नहीं जो वास्तविक विलयन के पी०एच० का है। जल में मृदा का निलंबन समांगी नहीं होता है और उसमें आयनों का एक समान वितरण

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

नहीं रहता है। यदि पी०एच० माप के लिए मृदा निलंबन का अधिप्लवी विलयन लिया जाए तो वह निलंबन से भिन्न हो सकता है। कुछ लोग मृदा के पी०एच० निर्धारण से पहले विद्युत् अपघट्यों के निराकरण के लिए मृदा के नमूनों का निक्षालन करते हैं। किन्तु निक्षालित मृदा का पी०एच०मान, अनिक्षालित मृदा के पी०एच० मान से 0.2 से 0.5 पी०एच० मात्रक तक अधिक होता है। ठोस की जल संतृप्त लुगदी के पी०एच० की माप की सामान्य प्रक्रिया द्वारा की जा सकती है। निम्नतम आर्द्रता स्तर पर निर्धारण आसानी से किया जा सकता है। लुगदी विधि द्वारा प्राप्त पी०एच० मान भी क्षेत्र की स्थितियों में प्राप्त मानों के बराबर होते हैं।

18.4 आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड

पिछले अनुच्छेद में आपने पढ़ा कि वरणात्मकत: पी०एच० के रूप में किसी विलयन की हाइड्रोजन आयन सान्द्रता निर्धारित करने के लिए कांच इलेक्ट्रोड का उपयोग किया जाता है। नियत H^+ आयन सान्द्रता के निर्देश विलयन को परीक्षण विलयन से पृथक करने वाली कांच की झिल्ली के आर पार का विभवांतर, परीक्षण विलयन के पी०एच० पर निर्भर करता है।

सिद्धांत रूप में कांच इलेक्ट्रोड की भांति $Na^+, NH_4^+, Ag^+, F^-, CN^-$ आदि आयनों के वरणात्मक निर्धारण के लिए नए प्रकार के आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोडों को बनाया गया है। आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड, विचाराधीन आयन की सक्रियता के प्रति लघुगणकीयत: अनुक्रिया करते हैं। इस प्रकार उनका उपयोग वरणात्मकत: विशिष्ट आयनों के निर्धारण के लिए किया जा सकता है।

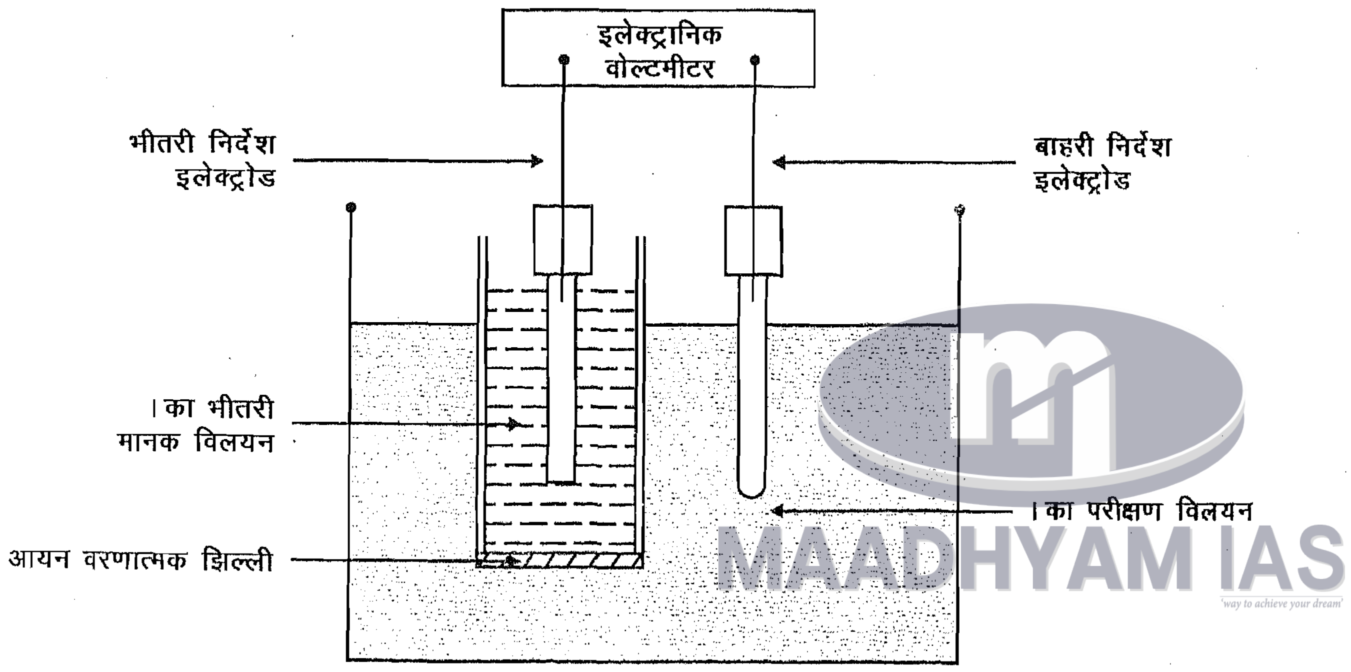

MAADHYAM IAS

चित्र 18.9: वरणात्मक आयन इलेक्ट्रोड सेल

नए (विशिष्ट) आयन इलेक्ट्रोडों की आवश्यकता बहुत समय से थी तथा उन्हें उपयोग करने की प्रौद्योगिकी (पी०एच० मापियों की भांति आयनमापी) भी उपलब्ध थी। उन्नीस सौ साठ के दशक में उसके संकल्पनात्मक आविष्कारों के बाद इस क्षेत्र में बहुत द्रुत गति से प्रगति हुई है। आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड में एक आयन वरणात्मक झिल्ली होती है जिसमें

व्यावहारिक वैद्युत चालकता, वैश्लेष्य आयन के वरणात्मक बंधन की क्षमता और वैश्लेष्य विलयनों में उसकी शून्य विलेयता जैसे आवश्यक गुणधर्म होते हैं।

अनेक डिजाइनों के आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड बनाए जा सकते हैं। एक सामान्य वरणात्मक इलेक्ट्रोड में कांच अथवा प्लास्टिक की बनी नली के निचले सिरे पर आयन वरणात्मक झिल्ली बंद रहती है। चयन किए गए आयन (I) की निश्चित सान्द्रता वाले भीतरी संदर्भ विलयन को नली में भरकर उसमें भीतरी निर्देश इलेक्ट्रोड निमज्जित कर दिया जाता है। आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड सेल चित्र 18.9 में दिखाया गया है। आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड को आयन I के परीक्षण विलयन में डुबाकर उसे बाहरी निर्देश इलेक्ट्रोड के साथ युग्मित कर दिया जाता है।

विभव माप की एक सुविदित प्रक्रिया कैलोमेल निर्देश इलेक्ट्रोडों पर आधारित है जिसमें यह माना जाता है कि दो संतृप्त कैलोमेल इलेक्ट्रोडों का विभव बराबर होता है। इन स्थितियों में सेल का वि॰वा॰ब॰ झिल्ली के विभव के बराबर होता है।

दो संतृप्त कैलोमेल इलेक्ट्रोडों का उपयोग करते हुए सेल को इस प्रकार निरूपित किया जा सकता है:

Hg	Hg_2Cl_2	KCl	विलयन	झिल्ली	विलयन	KCl	Hg_2Cl_2	Hg
		संतृप्त	बाहरी		भीतरी	संतृप्त		

इन स्थितियों में सेल का विभव काँच की झिल्ली इलेक्ट्रोड के समान, झिल्ली विभव पर निर्भर करेगा।

$$25^{o}C \text{ पर} = E_{\text{सेल}} = \text{स्थिरांक} + E_{\text{झिल्ली}} = k - \frac{0.591}{z} \log \frac{a_{\text{भीतरी}}}{a_{\text{बाहरी}}} \quad (18.19)$$

जिसमें z आयन I का आवेश, $a_{\text{भीतरी}}$ और $a_{\text{बाहरी}}$ आयन I के भीतरी और बाहरी विलयनों की सक्रिताएं हैं। भीतरी विलयन की सक्रियता स्थिर है, अतः समीकरण 18.19 को इस प्रकार लिख सकते हैं :

$$E_{\text{सेल}} = k_1 + \frac{0.0591}{z} a_{\text{बाहरी}} \quad (18.20)$$

अथवा

$$E_{\text{सेल}} = k_1 + \frac{0.0591}{z} \text{pI}$$

जिसमें pI, आयन I की सक्रियता (तनु विलयनों में सान्द्रता) का ऋणात्मक लघुगणक है। ऊपरी समीकरण सेल-विभव का आयन I की सान्द्रता के साथ संबंध बतलाता है, और कांच पी॰एच॰ इलेक्ट्रोड के समीकरण के अनुरूप है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

फ्लुओराइड आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड

यह आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड है जिसे 1 मिमी मोटी और कुछ मिमी व्यास के झिल्ली-डिस्क के एक टुकड़े को प्लास्टिक की नली में रख कर बनाया जाता है। इसमें यूरोपियम फ्लुओराइड (EuF_2) लेपित लैंथेनम फ्लुओराइड (LaF_3) का एक क्रिस्टल होता है। यूरोपियम फ्लुओराइड के लेपन से LaF_3 झिल्ली की विद्युत् चालकता बढ़ जाती है। नली में भीतरी मानक के रूप में, सिल्वर-सिल्वर क्लोराइड इलेक्ट्रोड रखा जाता है और नली में KCl (1 M) और NaF (1 M) का सम-अणुक विलयन भर दिया जाता है। सेल

नली में KCl (1 M) और NaF (1 M) का सम-अणुक विलयन भर दिया जाता है। सेल का विभवांतर मापने के लिए इस इलेक्ट्रोड को संतृप्त कैलोमेल इलेक्ट्रोड के साथ युग्मित कर फ्लुओराइड युक्त परीक्षण विलयन में रखते हैं।

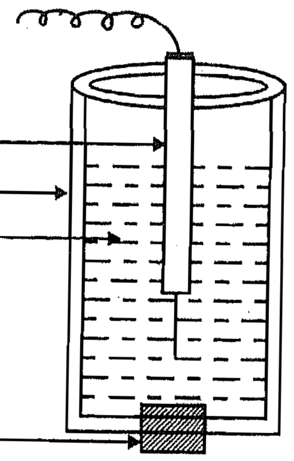

चित्र 18.10: फ्लुओराइड वरणात्मक इलेक्ट्रोड

सेल का विभव इस प्रकार होगा :

$$E_{\text{सेल}} = \text{स्थिरांक} - 0.0591 \log a_{F^-} \quad (18.21)$$

$$= \text{स्थिरांक} + 0.0591\, pF^- \quad (18.22)$$

इस इलेक्ट्रोड से F^- आयन सान्द्रताओं के 10^{-5} M तक मापी जा सकती हैं।

चेतावनी : F^- कांच के सिलिकॉन के साथ क्रिया करता है इसलिए माप, प्लास्टिक अथवा टेफ्लॉन के पात्र में किए जाते हैं।

फ्लुओराइड आयन इलेक्ट्रोड के अतिरिक्त बाजार में अनेक ठोस और द्रव, झिल्ली इलेक्ट्रोड उपलब्ध हैं। इलेक्ट्रोडों का उपयोग पर्यावरण में प्रदूषण उत्पन्न करने वाले आयनों, जैसे $Cd^{2+}, CN^-, Pb^{2+}, SCN^-$ आदि के निर्धारण के लिए किया जा सकता है।

18.5 चालकतामिति

चालकतामिति में हम किसी विलयन में विद्युत् वहन की जांच करते हैं तथा इस परिघटना के अनुप्रयोग रासायनिक विश्लेषण में करते हैं। यह तकनीक सरल और अपेक्षाकृत सुग्राही है। यह विद्युत् अपटनी विलयनों के व्यवहार का अध्ययन करने की प्रारंभिक तकनीक में से एक है। किसी विद्युत् अपघटनी विलयन का चालकत्व (जो प्रतिरोध का व्युत्क्रम है) उपस्थित आयनों की संख्या (सान्द्रता), उनके आवेश, उनकी गतिशीलता और ताप पर निर्भर करता है अत: चालकतामिति का वैश्लेषिक अनुप्रयोग किया जा सकता है।

MAADHYAM IAS

चालकत्व की माप, जल की शुद्धता निर्धारित करने की सबसे उत्तम विधि है। चालकत्व को लगातार रिकार्ड करने से आयन विनिमय द्वारा शोधित अथवा वृहद आसवन यूनिट से प्राप्त जल की शुद्धता को मॉनीटर करने में सहायता मिलती है। ऐसे मापों का उपयोग विद्युत् संयंत्रों में भाप आसुत, जल और कच्चे जल की शुद्धता की जांच करने तथा क्वथित्र जल में ठोस पदार्थ की जांच करने के लिए किया जाता है। इससे सुवाह्य यंत्रों द्वारा खुले स्थान में मृदा में मौजूद नमी की मात्रा को भी निर्धारित किया जा सकता है।

चालकत्व, विलयन का योगशील गुणधर्म है। यह नियम चालकतामूलक अनुमापनों का आवश्यक आधार है जिसमें चालकत्व-परिवर्तन का संबंध अनुमापन अभिक्रिया में शामिल आयनी स्पीशीज के सान्द्रता परिवर्तन से होता है। इसे अम्ल-क्षारक अनुमापन, अवक्षेपण, और संकुल रचक अभिक्रियाओं के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। विभवमिति आदि विश्लेषण की अन्य विधियों की तुलना में इस विधि से दुर्बल अम्ल का दुर्बल क्षारक के साथ अनुमापन में तथा अम्लों अथवा क्षारकों के मिश्रण के लिए तुल्यता-बिन्दु भली भांति प्राप्त हो सकता है। इसके अतिरिक्त चालकतामिति का अनुप्रयोग आयनन मात्रा, विलेयता और संकुल निर्माण में भी किया जा सकता है।

18.5.1 चालकतामिति की मौलिक संकल्पनाएं

चालकत्व

किसी वस्तु में विद्युत् धारा के प्रवाह की सुगमता को चालकत्व कहते हैं। यह धात्विक चालकों में इलेक्ट्रानों की गति के कारण उत्पन्न होता है जबकि विद्युत् अपघटनी विलयनों में अनुप्रयुक्त विद्युत् क्षेत्र के कारण उत्पन्न होता है। किसी माध्यम का विद्युत् अपघटनी चालकत्व, G, उसके विद्युत् प्रतिरोध, R, (ओम में) के व्युत्क्रम के बराबर होता है:

$$G = \frac{1}{R} \tag{18.23}$$

किसी विद्युत् अपघटनी विलयन में धारा का प्रवाह, आयनों द्वारा वाहित आवेश के कारण होता है जिससे विद्युत् अपघटनी चालन होता है। इस प्रकार विद्युत् अपघट्यों के जलीय विलयनों में और गलित विद्युत् अपघट्यों में आयनों का संचलन होता है।

विशिष्ट चालकत्व

विलयन त्रिविम चालक होता है इसलिए यथार्थ प्रतिरोध इलेक्ट्रोडों के बीच अंतराल (l) और इलेक्ट्रोडों के क्षेत्रफल (A) पर निर्भर करेगा। किसी विलयन का प्रतिरोध इलेक्ट्रोडों के बीच की दूरी के समानुपाती तथा इलेक्ट्रोड पृष्ठ क्षेत्रफल के व्युत्क्रमानुपाती होता है।

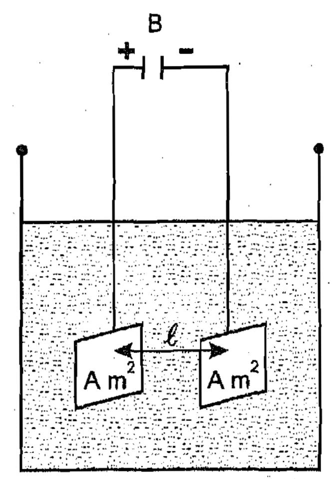

MAADHYAM IAS

यदि दो इलेक्ट्रोडों का अनुप्रस्थ काट क्षेत्रफल $A\,m^2$ (मीटर^2) हो और उनके बीच की दूरी l m हो और उन्हें किसी विद्युत् अपघट्य के विलयन में डुबा दिया जाए तो दो इलेक्ट्रोडों के बीच विलयन का प्रतिरोध (R) इस प्रकार होगा :

$$R \times l$$

$$R \times \frac{l}{A}$$

और $R = \rho \frac{l}{A}$ (18.24)

जिसमें ρ (रो) आनुपातिकता स्थिरांक है जिसे *विशिष्ट प्रतिरोध* अथवा *प्रतिरोधकता* कहते हैं।

विशिष्ट प्रतिरोध के व्युत्क्रम को विशिष्ट चालकत्व अथवा चालकता कहते हैं। इसे κ (कप्पा) से नामोदिष्ट किया जाता है।

$$\kappa = \frac{1}{\rho} \quad (18.25)$$

इसलिए समीकरण 18.24 को इस प्रकार लिख सकते हैं

$$R = \frac{1}{\kappa} \times \frac{1}{A}$$

अथवा $\kappa = \frac{1}{R} \times \frac{1}{A}$ (18.26)

$\left(\frac{1}{A}\right)$ अनुपात को सेल स्थिरांक, $K_{\text{सेल}}$ और $1/R = G$ (समी० 18.23 से)

हम संक्षेप में इस प्रकार लिख सकते हैं,

$$\kappa = 1/\rho = (1/R)(1/A) = GK_{\text{सेल}} \quad (18.27)$$

चालकता = प्रेक्षित चालकत्व × सेल स्थिरांक

क्योंकि प्रतिरोध ओम, Ω (ओमेगा) में व्यक्त किया जाता है, इसलिए पहले ओम का व्युत्क्रम (Ω^{-1}). चालकत्व के मात्रक के रूप में प्रयुक्त किया जाता था। किन्तु एस०आइ० पद्धति में चालकत्व का मात्रक सीमेंज है जिसका प्रतीक S है। इसलिए चालकता का मात्रक S m^{-1} ($1S = 1\Omega^{-1}$) अथवा S cm^{-1} होगा। उल्लेखनीय है कि $S\,m^{-1} = \frac{1}{100} S\,cm^{-1}$।

साधारणतया विशिष्ट चालकत्व को छोटे मात्रकों में व्यक्त किया जाता है जैसे मिलीसीमेंज प्रतिमीटर (mS m^{-1}) और माइक्रोसीमेंज प्रति सेंमी (μS cm^{-1})।

चालकता वृद्धि निम्न कारकों पर निर्भर करती है :

(i) विलयन की सान्द्रता

(ii) संबंधित आयनों की गति

कुछ प्ररूपी नमूनों के चालकता मान, सारणी 18.2 में दिए गए हैं।

सारणी 18.2: प्ररूपी नमूनों के चालकता मान

25^0 C पर नमूना	चालकता μS cm^{-1} में
अतिशुद्ध जल	0.055
विद्युत् संयंत्र क्वथित्र जल	1.0 – 5.0
पेय जल (पीने का पानी)	50 – 1100
समुद्री जल	53,000
5% NaOH	2,23,000
50% NaOH	1,50,000
10% HCl	6,30,000
20% HCl	7,62,000
31% HNO_3 S	8,00,000

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

मोलर चालकता

विद्युत् अपघट्यों की चालकताओं की तुलना करने के लिए बहुधा मोलर चालकता का उपयोग किया जाता है। मोलर चालकता, Λ_m (बड़ा लैम्डा) में लिखा जाता है। यह घुले हुए विद्युत् अपघट्य की प्रति इकाई मोलर सान्द्रता की चालकता होती है। चालकता, κ, के साथ इसके संबंध को इस प्रकार लिखा जा सकता है :

$$\Lambda_m = \frac{\kappa}{c} \quad (18.28)$$

जिसमें c मोल m^{-3} में सान्द्रता है। मोलर चालकता प्रायः $S\ m^2\ mol^{-1}$ अथवा $S\ cm^2\ mol^{-1}$ में व्यक्त किया जाता है। ($1\ S\ m^2\ mol^{-1} = 10,000\ S\ cm^2\ mol^{-1}$)

उल्लेखनीय है कि समीकरण 18.28 में c को $mol\ m^{-3}$ मात्रक में व्यक्त किया जाता है। यदि सान्द्रता को मोलरता ($mol\ dm^{-3}$) में व्यक्त किया जाए तो निम्नलिखित परिवर्तन करना होगा,

$$c\ (mol\ m^{-3}) = \text{मोलरता} \times 1000 \quad (18.29)$$

पहले निम्न व्यंजक द्वारा व्यक्त तुल्य चालकता ($\Lambda_{\text{तुल्य}}$) का उपयोग किया जाता था :

$$\Lambda_{\text{तुल्य}} = \frac{1000 \times \kappa}{c} \quad (18.30)$$

जिसमें c विलयन की नॉर्मलता के रूप में व्यक्त सान्द्रता है। किन्तु आइ०यू०पी०ए०सी० केवल मोलर चालकता के उपयोग का अनुमोदन करता है।

आगामी भाग में हम पढ़ेंगे कि चालकत्व की माप कैसे की जाती है।

18.6 चालकत्व की माप

किसी विलयन का चालकत्व मापने के लिए ह्वीटस्टोन सेतु नियम का उपयोग किया जाता है। इसलिए विलयन के चालकत्व का माप लेने से पहले आइए ह्वीटस्टोन सेतु के नियम का अध्ययन करें।

18.6.1 ह्वीटस्टोन सेतु नियम

ह्वीटस्टोन सेतु (चित्र 18.11) का उपयोग किसी इलेक्ट्रानिक चालक के प्रतिरोध को मापने के लिए किया जाता है। यह संतुलन सूचक (जैसे गेल्वेनोमीटर) की मदद से दो भुजाओं के बीच साम्य प्राप्त करने के नियम पर कार्य करता है बशर्ते विभव समान हो।

माना R_x अज्ञात प्रतिरोधक, R_1 और R_2 दो मानक प्रतिरोधक, R_3 एक समंजनीय प्रतिरोधक और G गेल्वेनोमीटर है। सेतु को एक बैटरी (विद्युत् स्रोत) S से जोड दिया गया है। संबंधनों को नियंत्रित करने के लिए पथ में एक रवट-कुंजी **(tapping key)** K जोड दी जाती है।

R_x प्रतिरोध मापने के लिए रवट-कुंजी को क्षणमात्र के लिए दबाया जाता है और R_3 को समंजित कर सेतु को संतुलित कर दिया जाता है। इस स्थिति में गैल्वेनोमीटर में शून्य विक्षेप होता है।

MAADHYAM IAS

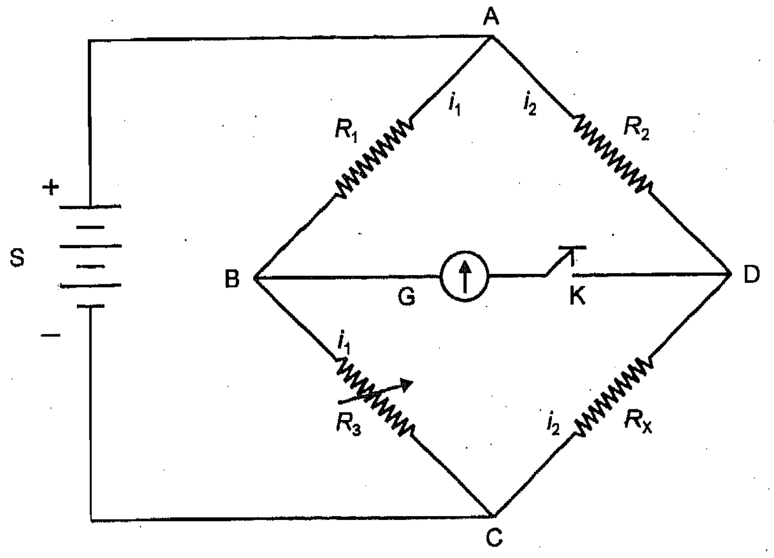

चित्र 18.11: डी०सी० व्हीटस्टोन सेतु परिपथ

सेतु में कुल धारा दो पथों में विभक्त हो जाती है : R_1 और R_3 से होते हुए i_1; R_2 और R_x से होतु हुए i_2 संतुलन की अवस्था में B और D बिन्दुओं पर समान विभव होना चाहिए अर्थात् R_1 ओर R_2 में ओम विभव पात (voltage drop) समान होना चाहिए। इसलिए B पर विभव (E_B), D पर विभव (E_D) के बराबर होना चाहिए

$$E_B = E_D \tag{18.34}$$

अथवा $$i_1R_1 = i_2R_2 \tag{18.35}$$

उसी प्रकार $$i_1R_3 = i_2R_x \tag{18.36}$$

समीकरण (18.35) को समीकरण (18.36) से भाग करने पर,

$$\frac{R_1}{R_3} = \frac{R_2}{R_x}$$

और $$R_x = \frac{R_2R_3}{R_1} \tag{18.37}$$

इस प्रकार हम R_x परिकलित कर सकते हैं क्योंकि R_1, R_2 और R_3 ज्ञात हैं। चालकत्व G, जो प्रतिरोध का व्युत्क्रम है, इस प्रकार होगा,

$$G = \frac{R_1}{R_2R_3} \tag{18.38}$$

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

वैकल्पिक रूप से प्रचालन प्रवर्धक नियंत्रण परिपथ में चालकतामापी सेल शामिल किया जा सकता है जैसा कि चित्र 18.12 में दिखाया गया है। प्रवर्धक, दो निवेशों के विभव को संतुलित करता है। निवेश विभव (E_i) की धारा प्रवर्धक निर्गम की धारा द्वारा संतुलित होती है जो पुनर्निवेश प्रतिरोधक (R_f) में प्रवाहित होती है। निर्गम विभव, E_0 को प्रतिरोध के रूप में इस प्रकार लिखा जा सकता है:

$$E_0 = E_i\left(R_f/R_x + 1\right)$$

जिसमें R_x चालकतामापी सेल का प्रतिरोध है।

विलयन चालकत्व, G के लिए उपर्युक्त समीकरण को इस प्रकार लिख सकते हैं :

$$E_0 = E_i\left(R_fG + 1\right)$$

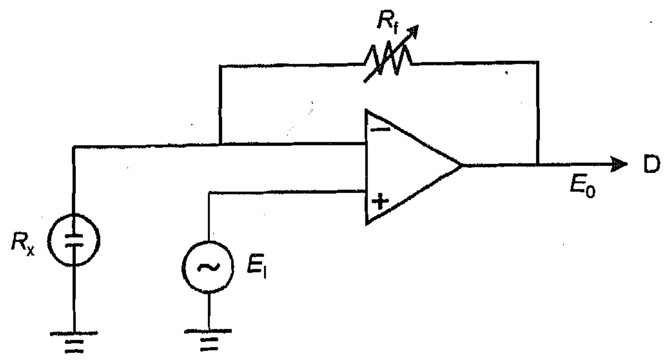

चित्र 18.12: चालकता माप के लिए प्रचालन प्रवर्धक नियंत्रण परिपथ R_x विलयन प्रतिरोध है और R_f पश्चमरण प्रतिरोध है।

18.6.2 किसी विलयन के चालकत्व की माप

ह्वीटस्टोन सेतु के नियम का उपयोग विलयनों का चालकत्व मापने के लिए किया जाता है। अपितु निम्नलिखित बातों को भी ध्यान में रखना चाहिए :

(i) क्योंकि दिष्ट धारा (DC), विलयन के विद्युत् अपघटन द्वारा चालकता सेल में इलेक्ट्रोडों का ध्रुवीकरण कर देती है, अत: ध्रुवीकरण से बचने के लिए दिष्ट धारा स्रोत (बैटरी) के स्थान पर प्रत्यावर्ती धारा (AC) स्रोत का उपयोग करना चाहिए। इसके लिए प्राय: चित्र 18.13 में A और C बिन्दुओं के आरपार 50 हर्ट्ज अथवा 1000 हर्ट्ज आवृत्ति वाली 3-6 वोल्ट की प्रत्यावर्ती धारा वोल्टता का उपयोग किया जाता है।

(ii) C और D बिन्दुओं के बीच उपयुक्त चालकता सेल (जिसके इलेक्ट्रोड विलयन में डूबे रहते हैं) स्थित रहता है। इस प्रकार R_x चालकता सेल का प्रतिरोध बतलाता है।

(iii) क्योंकि सेल एक छोटे संधारित्र (C_x) का काम भी करता है अत: उसके धारिता प्रतिरोध को संतुलित करने के लिए सेतु में एक परिवर्ती संधारित्र (variable capacitor) (C_B) भी निविष्ट करना चाहिए।

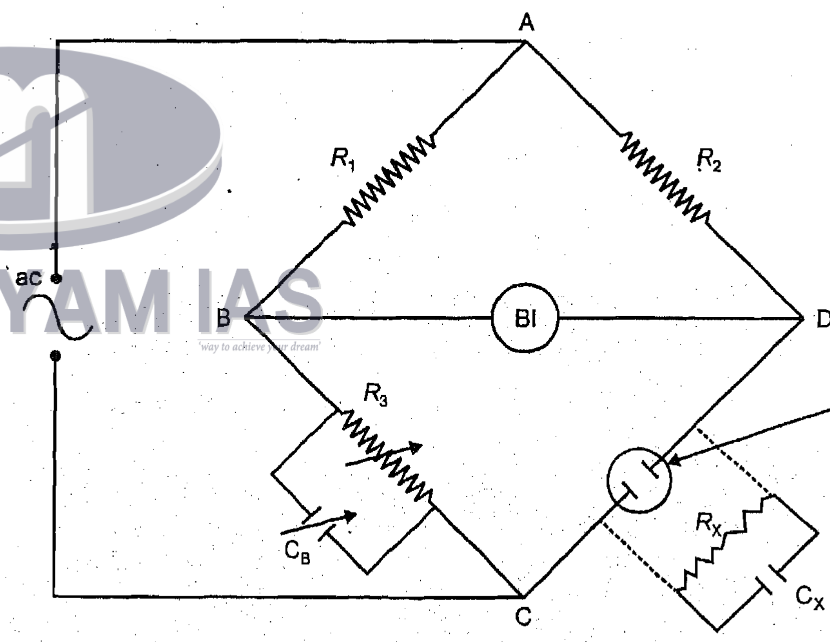

MAADHYAM IAS

चित्र 18.13: चालकता सेतु परिपथ

(iv) संतुलन सूचक (बी॰आई॰) के रूप में प्रत्यावर्ती धारा गैल्वेनोमीटर को प्रयोग में ला सकते हैं, बल्कि उसके अलावा अन्य युक्ति का भी उपयोग किया जाता है, जैसे,

- यदि प्रत्यावर्ती धारा स्रोत की आवृत्ति श्रव्य परास में हो तो इयर फोन, संतुलन सूचक का काम कर सकता है।
- अनेक व्यापारिक यंत्रों में मायाक्षि (magic eye) का उपयोग किया जाता है जिसमें कांच नली के अंदर फॉस्फर लेप पर इलेक्ट्रानों के टकराने से हरे रंग की स्फुर दीप्ति प्राप्त होती है।
- यथार्थ चालकत्व माप के लिए संतुलन सूचक के रूप में कैथोड किरण दोलनदर्शी का उपयोग किया जाता है।

(v) कुछ व्यापारिक यंत्रों में चालकत्व $(G = 1/R_x)$ को सीधे पैनेल आरूढ़मापी में पढ़ा जा सकता है। आजकल अनेक अंकीय यंत्र उपलब्ध हैं जिनमें चालकत्व सीधे अंकीय मान के रूप में प्राप्त हो जाता है।

18.6.3 प्रायोगिक माप

चालकत्व, प्रतिरोध का व्युत्क्रम है और किसी सेल का प्रतिरोध उसे ह्वीटस्टोन सेतु की भुजा में संयुक्त कर मापा जा सकता है। प्रतिरोध के व्युत्क्रम से चालकत्व प्राप्त होता है जिसे चालकत्व मापी यंत्र में सीधे पढ़ा जा सकता है जिसे "चालकता सेतु" कहते हैं।

एक प्ररूपी चालकतामापी यंत्र में प्रत्यावर्ती धारा (ए॰सी॰) स्रोत, ह्वीटस्टोन सेतु सक्रीट, चालकता सेल और प्रत्यक्ष पाठी प्रदर्श होते हैं।

ध्रुवीकरण के प्रभावों अर्थात् मापी सेल के संघटन में परिवर्तन को रोकने के लिए प्रत्यावर्ती धारा (ए॰सी॰) का उपयोग किया जाता है। इस यंत्र में 50 हर्ट्ज आवृत्ति को उच्च आवृत्ति में, 1000 हर्ट्ज में, बदलने की व्यवस्था होती है। कम चालकत्व वाले विलयनों को मापने के लिए अधिमानत: निम्न आवृत्तियों का और अधिक चालकत्व के विलयनों को मापने के लिए उच्च आवृत्तियों का उपयोग किया जाता है।

बाजार में अनेक सस्ते चालकतामापी अंकीय या बिना अंकीय प्रत्यक्ष पठन के उपलब्ध हैं। यंत्र, लाइन प्रचालित यूनिट के रूप में प्रयुक्त किए जा सकते हैं। प्रक्रम धारा अथवा टंकी में मौके पर जांच के लिए नति-प्ररूप चालकता सेल का उपयोग किया जाता है। अनुमापन के लिए विभिन्न डिजाइनों के चालकता सेल उपलब्ध हैं। कुछ अनुमापनों में स्थिर इलेक्ट्रोडों वाला खुला बीकर पर्याप्त होता है। अपितु पर्याप्त तनु विलयनों के लिए खुला बीकर उपयुक्त नहीं होता है क्योंकि वायुमंडल की CO_2 से चालकत्व में परिवर्तन हो सकता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

चित्र 18.14 में प्ररूपी चालकतामापी को दिखाया गया है जिसे दिए गए अनुदेशों के अनुसार प्रचालित किया जा सकता है।

1. यंत्र को ए॰सी॰ सप्लाई से जोड़ दें।
2. आवृत्ति वरणकारी स्विच को आवश्यक आवृत्ति (माना 1000 हर्ट्ज) पर रखें।
3. विधा वरित्र (mode selector) CAL अवस्था पर रखें और परास वरण (range selector) घुण्डी की मदद से मनचाही अवस्था में 2, 20 या 200 पर रखें। ये मान मीटर की पूरे पैमाने को मान को mS (मिली सीन्मस) में व्यक्त करते हैं। सुग्राहिता घुण्डी की मदद से पाइंटर को न्यूनतम और अधिकतम सुग्राहिता के लगभग बीच में जैसे कि 1 पर रखें।

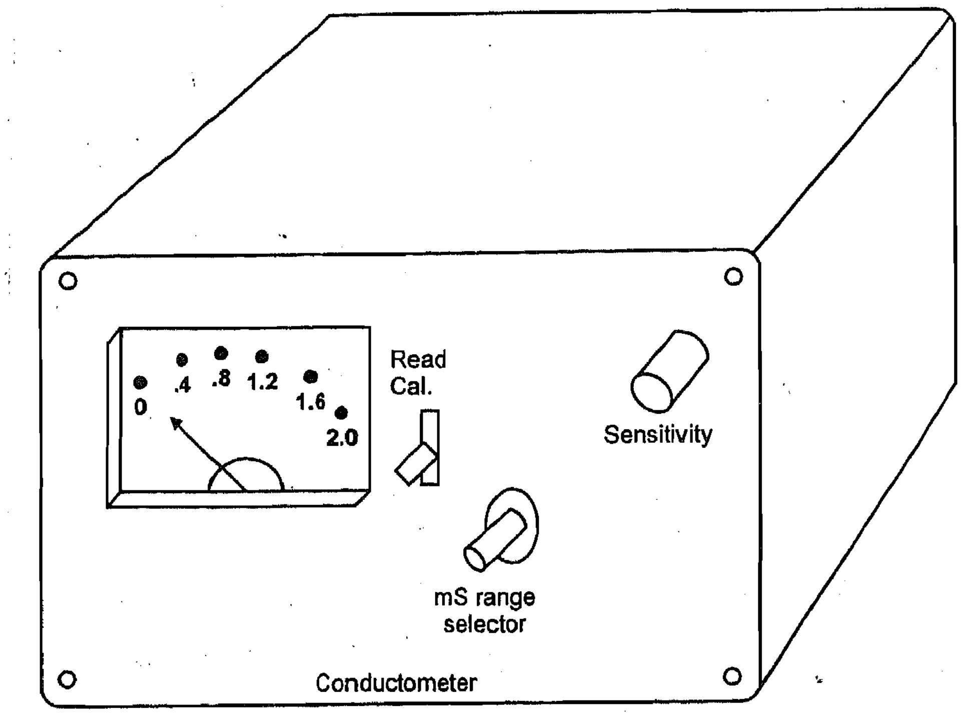

चित्र 18.14: चालकतामापी यंत्र

4. चालकता सेल इलेक्ट्रोडों को यंत्र के समुचित सिरों से जोड़ दें। चालकता सेल को आसुत जल (चालकता जल) से साफ कर लें।

5. एक स्वच्छ बीकर में मानक KCl विलयन (माना 0.1 M) लें। विलयन में एक विलोडक छड़ (चुंबकीय विलोडन के लिए प्रयुक्त) डालें और विलयन वाले बीकर को चुंबकीय विलोडक प्लेट में रखें।

6. चालकता सेल को विलयन में प्रविष्ट करें। ध्यान रखें कि प्लैटिनम प्लेट इलेक्ट्रोड पूरी तरह विलयन में निमज्जित हों और वे विलोडक छड़ अथवा बीकर के पार्श्वों या तली को न छुएं।

7. यंत्र में धारा चालू करें और 2-5 मिनट तक गरम होने दें।

8. मानक KCl विलयन का चालकत्व, G_s, मीटर स्विच को READ स्थान पर लाकर माप लें।

9. बीकर से KCl विलयन निकाल दें और चालकता सेल को आसुत जल से भली भांति धोलें। अज्ञात विलयन को बीकर में डालकर उसका चालकत्व, G_u, उसी प्रकार ज्ञात करें जिस प्रकार मानक KCl विलयन का किया था।

10. मानक के चालकत्व और चालकता मानों से सेल स्थिरांक परिकलित करें,

$$K_{\text{सेल}} = \frac{\text{चालकता (विशिष्ट चालकत्व)}}{\text{मानक का प्रेक्षित चालकत्व}}$$

$$= \frac{K_s}{G_s} \text{cm}^{-1}$$

11. अज्ञात विलयन की चालकता (विशिष्ट चालकत्व) परिकलित करें। अज्ञात विलयन की चालकता (विशिष्ट चालकत्व) = प्रेक्षित चालकत्व × सेल स्थिरांक

$$\kappa_u = K_{\text{सेल}}\, G_u$$

MAADHYAM IAS

12. अनुमापन के लिए, सेल स्थिरांक, $K_{सेल}$ का मान परिकलित करने की आवश्यकता नही होती है क्योंकि किसी अनुमापन के दौरान सेल स्थिरांक अपरिवर्तित रहेगा।

टिप्पणियां :

(i) परासवरण घुण्डी को जब भी नयी अवस्था में लाते हैं तो यंत्र का अंशशोधन दोबारा से करना आवश्यक हो जाता है। मीटर के मान को धीरे से सुग्राहिता घुण्डी की मदद से एक पर ले आते हैं अगर इसमें बदलाव आता है।

(ii) यदि चालकता सेल, प्रयोग में न हो तो उसे आसुत जल में रखें ताकि प्लैटिनम इलेक्ट्रोड सूखने न पाएं।

(iii) यदि चालकता सेल इलेक्ट्रोड प्लेटों से दुर्गंध आ रही हो तो उन्हें 24 घंटों तक H_2SO_4 विलयन युक्त तनु $K_2Cr_2O_7$ विलयन (अर्थात् तनु क्रोमिक अम्ल) में रखें। उसके बाद नल के जल से धोकर आसुत जल में प्रक्षालित कर लें।

बोध प्रश्न 6

298 K पर 2.00×10^{-2} M KCl का प्रतिरोध 195.96 Ω और 2.50×10^{-3} M K_2SO_4 का प्रतिरोध 775.19 Ω है। 298 K पर 2.00×10^{-2} M KCl की चालकता (κ) 0.2768 S मी$^{-1}$ है। K_2SO_4 विलयन की मोलर चालकता परिकलित करें।

....

....

....

18.7 चालकत्वमिति के अनुप्रयोग

अत्यंत सुग्राही होने के कारण चालकतामितीय माप, पर्यावरणी विश्लेषण और कुछ अन्य अनुप्रयोगों के लिए महत्वपूर्ण उपकरण है। प्राय: नति इलेक्ट्रोड सेल और मीटर द्वारा चालकत्व का सतत् अथवा स्थान पर ही माप किया जाता है। कुछ मामलों में चालकत्व को सतत् अभिलेखन (रिकार्डिंग) भी किया जाता है। क्योंकि चालकत्व आयनी सान्द्रताओं पर निर्भर करता है, अत: चालकत्व को सीधे मापकर भाप आसुत और विखनिजित जल की शुद्धता तथा अपरिष्कृत जल में आयनी मात्राएं ज्ञात की जा सकती हैं। चालकत्व विधियों द्वारा धातु उद्योगों, विद्युत्लेपन बाथ और प्रक्षालन बाथ को मॉनीटर किया जाता है।

संभवत: प्रत्यक्ष चालकतामिति का सर्वाधिक अनुप्रयोग आसुत जल की शुद्धता का आकलन है। कोलराउश ने कठोर परिश्रम से निर्वात में जल के 42 क्रमिक आसवन करने के बाद चालकता जल प्राप्त किया जिसका 18° C पर चालकता $\kappa = 4.3 \times 10^{-8}$ S cm^{-1} था। आयनी अपद्रव्य की अल्पमात्रा के होने से भी चालकत्व बहुत बढ़ जाता है। वायु में विद्यमान कार्बन डाइऑक्साइड के साथ साम्यावस्था वाले साधारण आसुत जल की चालकता लगभग 7.0×10^{-7} S cm^{-1} होती है। समुद्री जल का चालकता मान बहुत अधिक होता है तथा समुद्र विज्ञान में जल की लवणता की जांच करने के लिए चालकतामितीय मापों का विस्तृत उपयोग किया जाता है।

MAADHYAM IAS

सुवाह्य यंत्रों द्वारा मृदाओं के चालकत्व माप से विभिन्न स्थानों पर मृदाओं में नमी की मात्रा ज्ञात करने में सहायता मिलती है। सभी मृदाओं में जल विलेय लवणों की विभिन्न मात्राएं, 0.1% या अधिक, होती है। ये लवण प्राय: सोडियम, पोटैशियम, कैल्सियम और मैग्नीशियम के सल्फेट, क्लोराइड, कार्बोनेट और बाइकार्बोनेट के रूप में विद्यमान रहते हैं

तथा मृदा के चालकत्व में योगदान करते हैं। मृदाओं को लवण-मृदा और अलवण मृदा में वर्गीकृत किया जा सकता है जो मौजूद लवणों के स्वभाव और मात्रा पर निर्भर करता है। 25^{o} C पर जल के साथ लवण मृदा के संतृप्त निष्कर्ष की चालकता 4 mS cm^{-1} से अधिक होती है।

18.8 सारांश

आपने पढ़ा कि पी०एच० जलीय विलयन के अम्लीय अथवा क्षारकीय स्वभाव को बतलाता है तथा हाइड्रोजन आयन सान्द्रता के ऋणात्मक लघुगणक को पी०एच० कहते हैं। पी०एच० को पी०एच० मापी द्वारा विद्युतमितीय विधि से ठीक-ठाक मापा जा सकता है। अम्ल वृष्टि की गुणता उसके पी०एच० से निर्धारित की जाती है। जिस प्रकार H^+ को कांच इलेक्ट्रोड द्वारा निर्धारित किया जा सकता है उसी प्रकार कुछ आयनों के निर्धारण के लिए आयन वरणात्मक इलेक्ट्रोड का उपयोग किया जा सकता है।

किसी विलयन में धारा के प्रवाह की सुगमता को चालकत्व कहते हैं। ह्वीटस्टोन सेतु नियम के द्वारा चालकत्व का निर्धारण किया जा सकता है। इसके लिए चालकतामापी नामक यंत्र का उपयोग किया जाता है। जल की शुद्धता का आकलन करने तथा मृदा का स्वभाव जानने के लिए प्रत्यक्ष चालकतामिति का उपयोग किया जाता है।

18.9 अंत में कुछ प्रश्न

1. पी०एच० की परिभाषा दीजिए।
2. 2×10^{-3} M HCl विलयन का पी०एच० मान परिकलित कीजिए।
3. कांच इलेक्ट्रोड का आरेख रेखित कीजिए।
4. असममिति विभव क्या होता है?
5. मोलर चालकता की परिभाषा दीजिए।
6. 25^{o} C पर KCl के 0.20 M विलयन की चालकता 2.5×10^{-1} S cm^{-1} है। उसकी मोलर चालकता परिकलित कीजिए।

18.10 उत्तर

बोध प्रश्न

1. पी०एच० $= -\log[H^+]$ का उपयोग करने से
   हम पाते हैं, $4.5 = -\log[H^+]$
   $\log[H^+] = -4.5$
   $[H^+] = 10^{-4.5}$M
   अथवा $10^{(-5+0.5)}M = 10^{0.5} \times 10^{-5}M$
   $= 3.2 \times 10^{-5}M$
2. जिस इलेक्ट्रोड के विभव की माप करनी होती है उसे मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड के साथ युग्मित किया जाता है। प्राप्त सेल का विभव उस इलेक्ट्रोड का विभव होता है जिसका अध्ययन किया जा रहा हो। ऐसी अवस्थाओं में द्रव-द्रव संधि विभव नगण्य होता है।
3. उस मानक इलेक्ट्रोड को 'निर्देश इलेक्ट्रोड' कहते हैं जिसके संदर्भ में किसी सूचक

MAADHYAM IAS

इलेक्ट्रोड का विभव निर्धारित किया जाता है। मानक हाइड्रोजन इलेक्ट्रोड संतृप्त कैलोमेल इलेक्ट्रोड इसके उदाहरण हैं।

4. असममिति विभव के कारण, कांच पी॰एच॰ इलेक्ट्रोड का अंशांकन विलयन का पी॰एच॰ निर्धारित करने से पहले करना चाहिए।

5. H_2SO_4, HNO_3 आदि।

6. समीकरण 18.27 से KCl विलयन के लिए :

$$K_{\text{सेल}} = \kappa \times R$$
$$= 0.2768 \text{ S m}^{-1} \times 195.96\,\Omega$$
$$= 54.24 \text{ m}^{-1}$$

K_2SO_4 विलयन की चालकता इस प्रकार प्राप्त हो सकती है,

$$\kappa = \frac{K_{\text{सेल}}}{R} = \frac{54.24 \text{ m}^{-1}}{775.19\,\Omega}$$
$$= 0.06997 \text{ S m}^{-1}$$

मोल मी$^{-3}$ मात्रक में K_2SO_4 की सान्द्रता :

$$c = 1000 \times 2.50 \times 10^{-3} \text{ mol m}^{-3}$$
$$= 2.50 \text{ mol m}^{-3}$$

समीकरण 18.28 द्वारा K_2SO_4 की मोलर चालकता परिकलित की जा सकती है।

$$\Lambda_m = \frac{\kappa}{c} = \frac{0.06997}{2.50} \text{ S m}^2 \text{ mol}^{-1}$$
$$= 0.028 \text{ S m}^2 \text{ mol}^{-1}$$

अंत में कुछ प्रश्न

1. पी॰एच॰ की परिभाषा हाइड्रोजन आयन सान्द्रता के ऋणात्मक लघुगणक के रूप में दी जाती है।

पी॰एच॰ $= -\log[H^+]$

2. $[H^+] = 2\times10^{-3}$M

पी॰एच॰ $= -\log 2\times10^{-3} = -\log 2 + 3\log 10$

$= -030 + 3.0$

$= 2.7$

3. देखिए चित्र 18.6

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

4. कांच इलेक्ट्रोड का असममिति विभव होता है। यह कांच झिल्ली के आरपार विभवांतर होता है जबकि सेल के दो पार्श्वों का संघटन समान हो।

5. किसी विद्युत् अपघट्य की प्रति इकाई मोलर सान्द्रता के चालकत्व को मोलर चालकता कहते हैं। इसका संबंध विशिष्ट चालकत्व κ और विलयन की मोलरता से है।

6. 25^o C पर KCl विलयन की चालकता

$= 2.5 \times 10^{-1} \text{ S cm}^{-1}$

$= 25 \text{ S cm}^{-1}$

मोल मी$^{-3}$ मात्रक में KCl की सान्द्रता :

$$c = 1000 \times 0.2\,\text{mol m}^{-3}$$
$$= 200\,\text{mol m}^{-3}$$

समीकरण 18.28 से KCl की मोलर चालकता परिकलित की जा सकती है।

$$\Lambda_m = \frac{\kappa}{c} = \frac{25}{100}\,\text{S m}^2\ \text{mol}^{-1} = 0.125\ \text{S m}^2\ \text{mol}^{-1}$$

अतिरिक्त पाठ्य सामग्री

1. इलेक्ट्रोएनालिटिकल केमिस्ट्री, संपादक- एच० डब्ल्यू नूर्नवर्ग (इन्टर साइन्स), जॉन विली एण्ड सन्स लिमिटेड।
2. फिजीकल केमिस्ट्री, लेखक-डब्ल्यू०जे०भूरे, लांगमैन्स एण्ड को०
3. ऐनैलिटिकल केमिस्ट्री, गैरी डी. किस्टिन, जॉन विली एण्ड संस इंक।
4. मॉडन ऐनैलिटिकल केमिस्ट्री, डेविड हारवे, मैक ग्रव हिल।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इकाई 19 प्रकाशिक विधियां

इकाई की रूपरेखा

19.1 प्रस्तावना
उद्देश्य

19.2 स्पेक्ट्रमिकी के मूल सिद्धांत
वैद्युत चुंबकीय विकिरण का स्वभाव
स्पेक्ट्रमी क्षेत्र
स्पेक्ट्रमी विधियों का वर्गीकरण

19.3 अवशोषण विधियां
अवशोषण विधियों के मूल नियम
अवशोषक स्पीशीज

19.4 पराबैंगनी-दृश्य स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति
अवशोषण मापों के लिए यंत्रों के घटक
कुछ प्ररूपी यंत्र
वैश्लेषिक तकनीकें
जल, मृदा और वायु में पदार्थों का निर्धारण

19.5 उत्सर्जन विधियां
ज्वाला प्रकाशमिति
परमाण्विक अवशोषण स्पेक्ट्रमी प्रकाशमिति

19.6 सारांश

19.7 अंत में कुछ प्रश्न

19.8 उत्तर

19.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हमने विश्लेषण की विद्युत वैश्लेषिक विधियों का अध्ययन किया। पर्यावरण रसायन में प्रकाशिक विधियां ऐसी दूसरी यंत्रीय विधियां हैं जिनका विश्लेषण के लिए व्यापक उपयोग किया जाता है। इन विधियों द्वारा वैद्युत चुंबकीय विकिरण और द्रव्य के परस्पर क्रिया के परिणामों को मापा जाता है। वैद्युत चुंबकीय विकिरण का परास, ऐक्स-किरण से दृश्य प्रकाश होते हुए रेडियो तरंग तक हो सकता है।

विश्लेषण की प्रकाशिक विधियों में उत्सर्जन, अवशोषण, प्रकीर्णन अथवा विकिरण के कुछ गुणधर्मों (जैसे, दिशा और ध्रुवण-अवस्था) में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन किया जाता है। इन प्रभावों के माप से भिन्न प्रकार की प्रकाशिक विधियाँ प्राप्त होती हैं जिनका उपयोग नमूने के एक अथवा अधिक अवयवों के निर्धारण के लिए किया जाता है।

आजकल स्पेक्ट्रमिकी शब्द का उपयोग महत्वपूर्ण प्रकाशिक विधियों के लिए किया जाता है। उनके अंतर्गत वैद्युत चुंबकीय विकिरण के उत्सर्जन, अवशोषण अथवा प्रकीर्णन **(scattering)** का अध्ययन किया जाता है जिनके फलस्वरूप नाभिकों, परमाणुओं अथवा अणुओं में ऊर्जा परिवर्तन होते हैं। वैद्युत् चुंबकीय विकिरण के अवशोषण का उपयोग अवशोषण स्पेक्ट्रमिकी में और उत्सर्जन का उपयोग उत्सर्जन-स्पेक्ट्रमिकी में होता है। प्रकीर्णन का उपयोग रामन स्पेक्ट्रमिकी, नेफेलोमिति (nephelometry) और आविलतामिति (turbidimetry) में होता है।

MAADHYAM IAS

स्पेक्ट्रमिकी एक महत्वपूर्ण साधन है जो रसायन विज्ञान की और विज्ञान की अन्य शाखाओं में कठिन कार्यों को शीघ्र हल कर देता है। स्पेक्ट्रमी विधियों का उपयोग, संरचना के स्पष्टीकरण, यौगिकों और अभिलक्षकीय समूहों के अभिनिर्धारण, गुणात्मक और मात्रात्मक विश्लेषण, तापगतिकीय गुणधर्मों का निर्धारण और प्रदूषण विश्लेषण जैसे विविध क्षेत्रों में होता है। वायुमंडलीय संदूषकों से संबंधित सरकारी विनियमों के हाल के विस्तार के कारण विभिन्न रासायनिक यौगिकों के लिए सुग्राही, द्रुत और विशिष्ट विधियों के विकास की मांग बढ़ी है। किसी अन्य यंत्र की अपेक्षा अवशोषण स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति से समस्या का हल अच्छी तरह हो सकता है। अवशोषण स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति में यह मापा जाता है कि रासायनिक पद्धति द्वारा तरंगदैर्घ्य के फलन के रूप में विकिरण ऊर्जा का कितना अवशोषण हुआ है। यह माप विकिरण के नियत, पूर्व निर्धारित तरंगदैर्घ्य पर की जाती है।

सभी स्पेक्ट्रमी विधियों में वैद्युत चुंबकीय विकिरण की, द्रव्य की क्वांटित ऊर्जा-अवस्थाओं के साथ पारस्परिक क्रिया होती है। किसी विशेष आवृत्ति के विकिरण के उत्सर्जन अथवा अवशोषण से ऊर्जा की भिन्न अवस्थाओं के बीच संक्रमण होता है। स्पेक्ट्रमिकीविद् का उद्देश्य ऐसी आवृत्ति पर अवशोषित अथवा उत्सर्जित विकिरण ऊर्जा की आपेक्षिक मात्राओं की माप करना और इन परिवर्तनों का विभिन्न पदार्थों के स्वभाव और मात्रा के साथ संबंध स्थापित करना होता है।

संभवत: दैनिक कार्य में लेश घटकों के मात्रात्मक विश्लेषण के लिए पराबैंगनी-दृश्य स्पेक्ट्रमिकी अब भी एकमात्र सर्वाधिक प्रयुक्त वैश्लेषिक विधि है। इसलिए हमारी दिलचस्पी पराबैंगनी दृश्य अवशोषण विधियों की चर्चा करने और उन्हें प्रदूषण अध्ययन के लिए प्रयुक्त करने से है।

हम ज्वाला प्रकाशमिति (flame photometry) और परमाण्विक अवशोषण स्पेक्ट्रमी प्रकाशमिति (atomic absorption spectrophotometry) की चर्चा भी करेंगे। प्रकाशमिति यद्यपि बहुत कम तत्वों के निर्धारण के लिए प्रयुक्त होती है किन्तु बहुत सरल है।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप,

- वैद्युत चुंबकीय विकिरण का वर्णन कर सकेंगे,
- स्पेक्ट्रमी विधियों का वर्गीकरण कर सकेंगे,
- वैद्युत चुंबकीय विकिरण से संबंधित विभिन्न प्राचलों, जैसे तरंगदैर्घ्य, आवृत्ति, तरंग संख्या आदि की परिभाषा दे सकेंगे और उनके परस्पर संबंध स्थापित कर सकेंगे,
- लियर-लैम्बर्ट नियम की परिभाषा दे सकेंगे,
- स्पेक्ट्रमी प्रकाशमापी के विभिन्न घटकों का वर्णन कर सकेंगे,
- अवशोषक स्पीशीज, जैसे वर्णमूलक, वर्णवर्धी आदि की परिभाषा दे सकेंगे,
- पराबैंगनी दृश्य स्पेक्ट्रमी प्रकाशमिति द्वारा जल, अपशिष्ट जल, मृदा और वायु के नमूनों में मौजूद पदार्थों को निर्धारित कर सकेंगे, और
- ज्वाला प्रकाशमिति और परमाण्विक स्पेक्ट्रमी प्रकाशमिति का वर्णन कर सकेंगे।

19.2 स्पेक्ट्रमिकी के मूल सिद्धांत

अवशोषण और उत्सर्जन स्पेक्ट्रमी प्रकाशमिति की विस्तार से चर्चा करने से पहले आइए कुछ संकल्पनाओं का पुनरीक्षण करें जिनका अध्ययन आपने बी०एससी० कक्षाओं के

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

सी०एच०ई०-1 (परमाणु और अणु) सी०एच०ई०-5 (कार्बनिक रसायन) और सी०एच०ई०-10 (स्पेक्ट्रमिकी) पाठ्यक्रमों के अंतर्गत किया था।

19.2.1 वैद्युत चुंबकीय विकिरण का स्वभाव

सभी प्रकाशिक विधियों में वैद्युत चुंबकीय विकिरण की द्रव्य के साथ अभिक्रिया होती है और उसके बाद अनेक क्रियाविधियां होती हैं। हम सबसे पहले वैद्युत चुंबकीय विकिरण और उनके अभिलक्षणों की संक्षेप में चर्चा करेंगे।

वैद्युत चुंबकीय विकिरण का दोहरा स्वभाव होता है: (i) वह पृथक कणों की धारा होती है जिन्हें फोटॉन (अथवा क्वांटा) कहते हैं, और (ii) वह एक प्रकार की ऊर्जा है जिसका आकाश (space) में अत्यधिक वेग के साथ संचरण होता है, और जिसे तरंग कहते हैं। अनेक प्रकाशिक परिघटनाओं की व्याख्या वैद्युत चुंबकीय विकिरण के तरंग-स्वभाव के आधार पर की जा सकती है।

सामान्यतया वैद्युत चुंबकीय विकिरण का चित्रण, तरंग गति के रूप में किया जाता है जिसमें वैद्युत और चुंबकीय विस्थापन एक-दूसरे के और विकिरण के संचरण की दिशा के समकोण पर होता है जैसा कि चित्र 19.1 में दिखाया गया है। प्रकाशिक परिघटना के लिए केवल

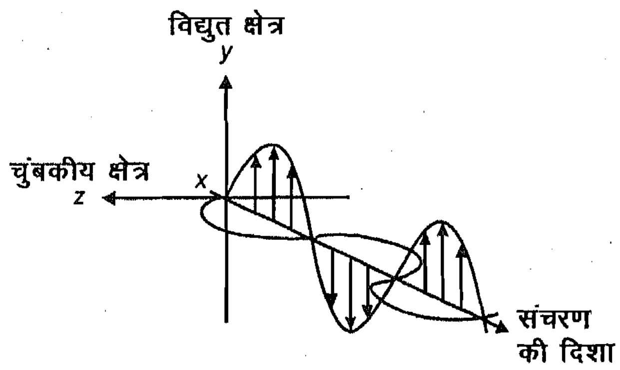

चित्र 19.1: वैद्युत चुंबकीय विकिरण के वैद्युत और चुंबकीय क्षेत्र

वैद्युत विस्थापन का ध्यान रखा जाता है। वैद्युत चुंबकीय विकिरणों के विभिन्न गुणधर्मों को बतलाने के लिए इन तरंगों को वेग, आवृत्ति, तरंगदैर्घ्य और तरंग संख्या जैसे प्राचलों के रूप में प्रस्तुत करना सुविधाजनक रहता है।

- वेग : किसी वैद्युत चुंबकीय तरंग का वेग उस गति को कहते हैं जिससे तरंगाग्र (wave front), माध्यम में गमन करता है। निर्वात में सभी वैद्युत चुंबकीय तरंगों का वेग एक-समान (2.998×10^8 m s^{-1} (मीटर प्रति सेकंड)) होता है और c द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है। वेग, माध्यम के संघटन और आवृत्ति दोनों पर निर्भर करता है। किन्तु निर्वात में, विकिरण का वेग आवृत्ति पर निर्भर नहीं करता है और तब उसका मान अधिकतम होता है।

- तरंगदैर्घ्य : दो संलग्न शिखरों अथवा गर्तों के बीच की दूरी को तरंगदैर्घ्य कहते हैं (देखिए चित्र 19.2)। इसे λ (लैम्डा) द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है। तरंगदैर्घ्य के मात्रक, स्पेक्ट्रम क्षेत्र पर निर्भर करते हैं। पराबैंगनी और दृश्य क्षेत्र में ऐंग्स्ट्रम (Å) और नैनोमीटर (nm) का उपयोग किया जाता है।

MAADHYAM IAS

ऐंगस्ट्रम मानक, Å स्वीडन के भौतिकीविद् ए० जे० ऐंगस्ट्रम के नाम पर रखा गया है।

$\text{Å} = 10^{-10}\,\text{m}$

$\text{nm} = 10^{-9}\,\text{m}$

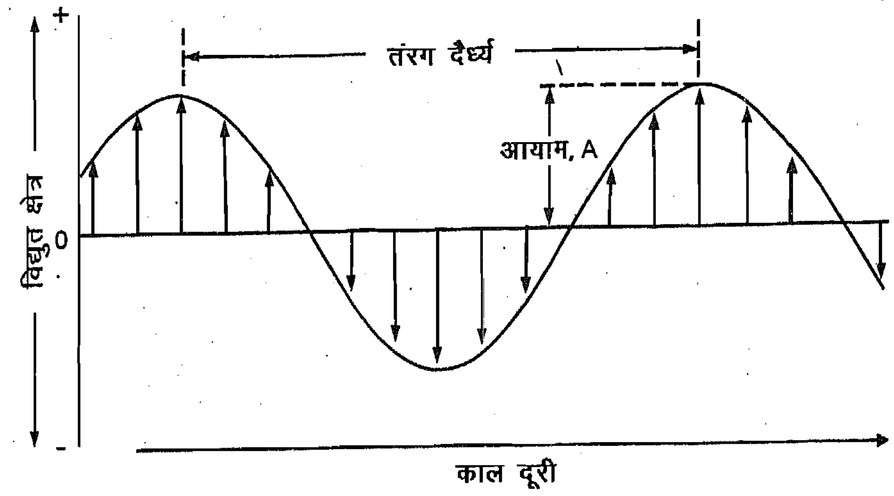

चित्र 19.2: वैद्युत चुंबकीय विकिरण से संबद्ध तरंगदैर्ध्य (λ) और आयाम (A)

- **तरंग-संख्या** : इकाई लंबाई में तरंगों की संख्या को तरंग-संख्या कहते हैं। तरंग-संख्या, तरंगदैर्घ्य का व्युत्क्रम होता है। तरंग संख्या का प्रतीक $\bar{\nu}$ (न्यू बार) है। तरंग संख्या का सामान्य मात्रक व्युत्क्रम सेंटीमीटर (cm^{-1}) है।

- **आवृत्ति** : आकाश में किसी बिन्दु से इकाई समय में गुजरने वाली तरंगों (साइकिलों) की संख्या को आवृत्ति कहते हैं। आवृत्ति का मात्रक हर्ट्ज है। 1 हर्ट्ज = 1 साइकिल प्रति सेंकड। आवृत्ति को ν (न्यू) से निर्दिष्ट किया जाता है। आवृत्ति, स्रोत से निर्धारित की जाती है और अपरिवर्ती रहती है भले ही जिस माध्यम से विकिरण गमन करता है वह कोई भी हो।

  ये प्राचल परस्पर निम्नलिखित समीकरणों से संबंधित रहते हैं :

$$\bar{\nu} = \frac{1}{\lambda}, \nu = \frac{c}{\lambda} = c\bar{\nu}, c = \nu\lambda$$

विकिरण के साथ द्रव्य की क्रिया

जब वैद्युत चुंबकीय विकिरण, द्रव्य के परमाणुओं अथवा अणुओं के संपर्क में आता है तो उनके परस्पर ऊर्जा का विनिमेय होता है। तंत्र में ऊर्जा का अवशोषण हो सकता है और वह निम्न ऊर्जा अवस्था, E_1 से उच्च ऊर्जा-अवस्था E_2 में परिवर्तित हो सकता है। वैकल्पिक रूप से यदि आरंभ में तंत्र की उच्च ऊर्जा अवस्था E_2 हो तो वह ऊर्जा खोकर निम्न ऊर्जा अवस्था E_1 में परिवर्तित हो सकता है। यह ऊर्जा-अंतरण क्वांटित होता है और दो ऊर्जा अवस्थाओं के बीच का ऊर्जा-अंतर ΔE निम्नलिखित समीकरण से प्राप्त हो सकता है;

MAADHYAM IAS

$$\Delta E = E_2 - E_1 = \lambda\nu \qquad (19.1)$$

इस समीकरण का संबंध λ और $\bar{\nu}$ के साथ निम्न समीकरण द्वारा दिखाया सकता है:

$$\Delta E = hc/\lambda = hc\bar{\nu}$$

जिसमें h प्लांक स्थिरांक हैं जिसका मान 6.626×10^{-34} जूल सेंकड है, ν वैद्युत चुंबकीय विकिरण की आवृत्ति है जिसके कारण ऊर्जा-परिवर्तन होता है। ऊर्जा-परिवर्तन चित्र 19.3 में दिखाया गया है।

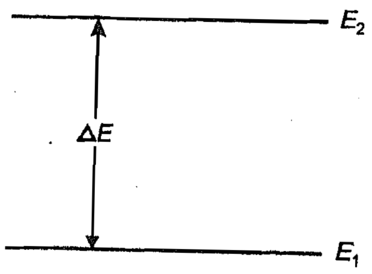

चित्र 19.3: ऊर्जा स्तर आरेख; E_1 निम्न ऊर्जा स्तर, E_2 उच्च ऊर्जा स्तर

अवशोषित अथवा उत्सर्जित ऊर्जा का निर्धारण कर हम किसी परमाणु अथवा अणु में उपस्थित ऊर्जा स्तरों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में, इस प्रकार के ऊर्जा परिवर्तनों जिन्हें क्वांटम संक्रमण भी कहते हैं का परमाणुओं अथवा अणुओं की संरचना के साथ संबंध दिखलाया जा सकता है। द्रव्य द्वारा अवशोषित अथवा उत्सर्जित ऊर्जा का संसूचन स्पेक्ट्रमी प्रकाशमापी नामक यंत्र द्वारा किया जा सकता है। इन यंत्रों का निर्माण किसी-नमूने द्वारा उसके किरणन पर अवशोषित अथवा उत्सर्जित विकिरण की आवृत्ति, तरंग-संख्या अथवा तरंगदैर्घ्य को मापने के लिए किया जाता है।

बोध प्रश्न 1

4000 Å तरंगदैर्घ्य वाले विकिरण की तरंग संख्या cm^{-1} में और आवृत्ति हर्ट्ज में बताइए।

....

....

....

19.2.2 स्पेक्ट्रमी क्षेत्र

वैद्युत चुंबकीय विकिरण का स्पेक्ट्रम अनेक क्षेत्रों में विभाजित रहता है (चित्र 19.4)। इन क्षेत्रों की सीमाएं सम्मिलित क्रियाविधियों के आधार पर तथा वैद्युत चुंबकीय विकिरण की अन्योन्यक्रिया से प्राप्त विभिन्न प्रकार की सूचनाओं से निर्धारित की जाती हैं। सारणी 19.1 में विभिन्न स्पेक्ट्रमी क्षेत्र, उनके लगभग तरंगदैर्घ्य परास तथा होने वाले ऊर्जा-परिवर्तन (क्वांटम संक्रमण) दिखाए गए हैं।

MAADHYAM IAS

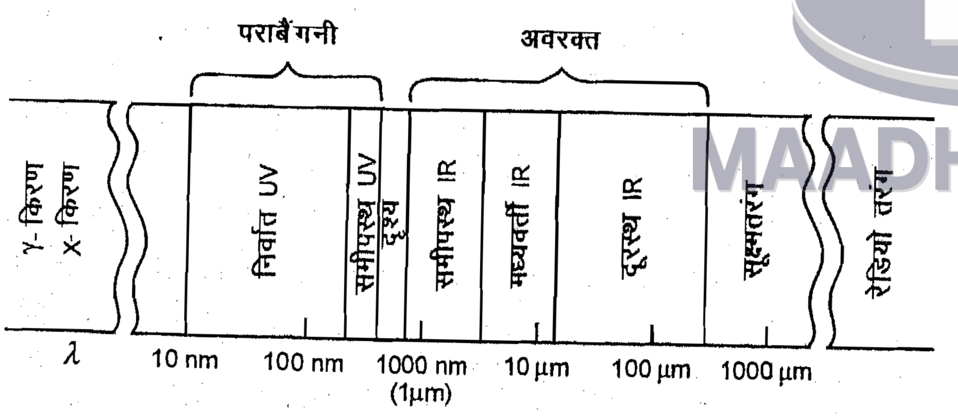

चित्र 19.4: वैद्युत चुंबकीय स्पेक्ट्रम का निरूपण

सारणी 19.1: वैद्युत चुंबकीय स्पेक्ट्रम के क्षेत्र और होने वाले ऊर्जा परिवर्तन के प्रकार

वैद्युत चुंबकीय विकिरण का प्रदेश	तरंगदैर्घ्य परास	ऊर्जा परिवर्तन का प्रकार (परिणामी प्रभाव)
गामा-किरणें (मॉस बौर स्पेक्ट्रमिकी)	0.005 – 1.4 Å	न्यूक्लीय संक्रमण (न्यूक्लीय विन्यास में परिवर्तन)
ऐक्स-किरणें (विवर्तन, अवशोषण, उत्सर्जन, प्रतिदीप्ति)	0.1 – 100 Å	आंतरिक इलेक्ट्रॉन संक्रमण (इलेक्ट्रॉन वितरण में परिवर्तन)
निर्वात पराबैगनी (अवशोषण)	10 – 180 nm	आबंधक इलेक्ट्रॉन संक्रमण (इलेक्ट्रॉन वितरण परिवर्तन)
पराबैंगनी-दृश्य (अवशोषण उत्सर्जन, प्रतिदीप्ति)	180 – 780 nm	आबंधक इलेक्ट्रॉन संक्रमण (इलेक्ट्रॉन वितरण परिवर्तन)
अवरक्त (अवशोषण) और रामन (प्रकीर्णन)	0.78 – 300 μm	अणुओं का कंपन/घूर्णन (विन्यास परिवर्तन)
सूक्ष्म तरंग (अवशोषण)	0.75 – 3.75 nm	अणुओं का घूर्णन (विन्यास परिवर्तन)
इलेक्ट्रॉन प्रचक्रण अनुनाद (electron spin resonance) (इ०एस०आर०)	3 cm	चुंबकीय क्षेत्र में इलेक्ट्रॉनों का प्रचक्रण (इलेक्ट्रॉन प्रचक्रण परिवर्तन)
न्यूक्लीय चुंबकीय अनुनाद (nuclear magnetic resonance) (एन०एम०आर०)	0.6 – 10 m	चुंबकीय क्षेत्र में नाभिको का प्रचक्रण (न्यूक्लीय प्रचक्रण परिवर्तन)

यह ध्यान देने की बात है कि स्पेक्ट्रम का दृश्य भाग, जिसे मनुष्य की आंख देख सकती है, वैद्युत चुंबकीय विकिरण स्पेक्ट्रम का बहुत छोटा हिस्सा होता है।

19.2.3 स्पेक्ट्रमी विधियों का वर्गीकरण

पिछले उपभाग में आपने पढ़ा कि स्पेक्ट्रमी विधियां, वैद्युत चुंबकीय विकिरण का द्रव्य के साथ अन्योन्य क्रिया के कारण होने वाले ऊर्जा परिवर्तनों पर आधारित हैं। इस प्रकार उनका वर्गीकरण होने वाले ऊर्जा-परिवर्तनों (अर्थात् नाभिकीय, इलेक्ट्रॉनिक, कंपन अथवा घूर्णन) के आधार पर किया जा सकता है। वर्गीकरण की दूसरी विधि प्रक्रम के प्रकार (अर्थात् उत्सर्जन, अवशोषण अथवा प्रकीर्णन) पर आधारित है। एक अन्य विधि में स्पेक्ट्रमी विधियों का वर्गीकरण वैद्युत चुंबकीय विकिरण के स्पेक्ट्रमी क्षेत्र के अनुसार किया जाता है। उनमें गामा-किरणें, एक्स-किरणें, पराबैंगनी, दृश्य, अवरक्त, सूक्ष्म तरंग, इलेक्ट्रॉन प्रचक्रण अनुनाद और नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद विधियां शामिल हैं।

MAADHYAM IAS

संरचना स्पष्टीकरण और मात्रात्मक आकलन की समस्याओं को हल करने अथवा द्विध्रुव आघूर्ण, साम्य स्थिरांक आदि का मान ज्ञात करने के लिए हम उपयुक्त स्पेक्ट्रमी विधि का चयन कर सकते हैं।

एक्स किरणें प्रायः आंतरिक कोशों (K और L कोश) के इलेक्ट्रॉनों का संक्रमण करती हैं। धातु कर्म के क्षेत्र में एक्स किरणों का विस्तृत उपयोग होता है। साथ ही एक्स किरणों का उपयोग धातुओं, खनिजों, द्रवों, कांचों और सिरेमिकों के विश्लेषण में भी किया जाता है।

उनका उपयोग क्रिस्टल संरचना निर्धारित करने और वंग-लेप की बहुत पतली परत की मोटाई मापने के लिए किया जाता है।

पराबैंगनी-दृश्य स्पेक्ट्रमिकी में परमाणुओं और अणुओं का इलेक्ट्रॉनिक संक्रमण होता है। मुख्यतः इसका उपयोग अकार्बनिक, कार्बनिक और जैव रासायनिक पदार्थों के मात्रात्मक विश्लेषण के लिए किया जाता है। नैदानिक प्रयोगशाला और पर्यावरणी नमूनों के रासायनिक विश्लेषण के लिए इस तकनीक का बहुत महत्व है।

अवरक्त स्पेक्ट्रमिकी का प्रयोग अणु-संरचना निर्धारित करने के लिए किया जा सकता है। अभिलक्षकीय समूहों के निर्धारण से यौगिकों का निर्धारण किया जा सकता है। इससे मात्रात्मक निर्धारण भी संभव है। रामन स्पेक्ट्रमिकी में भी इस आवृत्ति परास का उपयोग किया जाता है। रामन स्पेक्ट्रमिकी का उपयोग भी उसी प्रकार के अनुप्रयोगों के लिए किया जाता है जैसे अवरक्त स्पेक्ट्रमिकी का और इस प्रकार रामन स्पेक्ट्रम तकनीक अवरक्त स्पेक्ट्रमिकी का पूरक है।

नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद (एन०एम०आर०) और इलेक्ट्रॉन प्रचक्रण अनुनाद (इ०एस०आर०) स्पेक्ट्रमी विधियां यद्यपि हाल ही में विकसित तकनीकें हैं किन्तु वे कार्बनिक यौगिकों के संरचना स्पष्टीकरण में बहुत उपयोगी हैं। इन विधियों में बाह्य प्रबल चुंबकीय क्षेत्र के प्रभाव से ऊर्जा स्तरों का विपाटन हो जाता है।

इस पृष्ठभूमि में हम अपनी चर्चा अवशोषण विधि पर केन्द्रित करेंगे जबकि वैद्युत चुंबकीय विकिरणों के पराबैंगनी दृश्य प्रदेश संबंधी विधियों पर विशेष जोर दिया जाएगा।

19.3 अवशोषण विधियां

वे अवशोषण विधियां जिनमें विशेष रूप से पराबैंगनी-दृश्य प्रदेश का उपयोग किया जाता है, अल्पमात्रिक पदार्थों के मात्रात्मक आकलन की सर्वाधिक प्रयुक्त वैश्लेषिक तकनीकें हैं। चाहे रुधिर अथवा मूत्र के नमूनों के विश्लेषण के लिए नैदानिक प्रयोगशाला हो अथवा प्राकृतिक जल अथवा अपशिष्ट जल विषालु धातुओं को ज्ञात करने के लिए पर्यावरण प्रयोगशाला हो अथवा उद्योगों या वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में प्रतिदिन किए जाने वाले विश्लेषण हों, सर्वत्र इस तकनीक का व्यापक उपयोग होता है। पराबैंगनी-दृश्य प्रदेश वाली अवशोषण विधियों में नमूना-विलयन को एकल तंरगदैर्घ्य (एकवर्णी विकिरण) के वैद्युत चुंबकीय विकिरण से किरणित किया जाता है और तरंगदैर्घ्य में परिवर्तन करते हुए प्रत्येक तरंगदैर्घ्य पर अवशोषण की मात्रा माप ली जाती है। अवशोषणांक अथवा प्रतिशत पारगम्यता को तरंगदैर्घ्य के सम्मुख आलेखित करने से अवशोषण स्पेक्ट्रम प्राप्त होता है। माप के लिए **स्पेक्ट्रम प्रकाश मापी** यंत्र का उपयोग किया जाता है। अवशोषणांक (A) के सम्मुख तरंगदैर्घ्य (λ) का आलेख चित्र 19.5 में दिखाया गया है। इस चित्र में आप देखेंगे कि बिन्दु (i) और (ii) के संगत दो उच्चिष्ठ प्राप्त होते हैं जो बतलाते हैं कि संगत तंरगदैर्घ्य पर तीव्र अवशोषण होता है। अवशोषणांक और पारगम्यता शब्दों की विस्तृत चर्चा अगले उपभाग में की जाएगी। चित्र 19.5 में दिखाए गए स्पेक्ट्रम में दो प्राचल हैं:

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

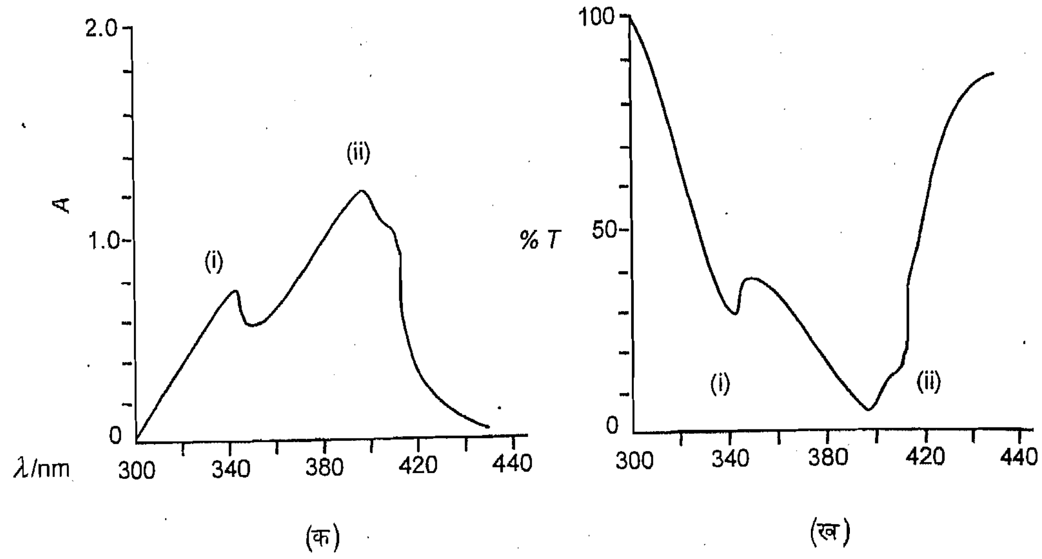

चित्र 19.5: अवशोषण स्पेक्ट्रमी आकड़ों का निरूपण

$\lambda_{उच्चिष्ठ}$ *मान* : तरंगदैर्घ्य के जिस मान पर अधिकतम अवशोषण होता है उसे तरंगदैर्घ्य उच्चिष्ठ ($\lambda_{उच्चिष्ठ}$) कहते हैं। भिन्न अणुओं के उच्चिष्ठ मान भिन्न होते हैं। उदाहरण के लिए ऐसीटोन का उच्चिष्ठ मान ($\lambda_{उच्चिष्ठ}$) 279 नैनोमीटर है जबकि बेन्जीन का 255 नैनोमीटर है। यौगिकों के एक से अधिक उच्चिष्ठ मान हो सकते हैं। चित्र 19.5 में दो उच्चिष्ठ मान (i) और (ii) दिखाए गए हैं।

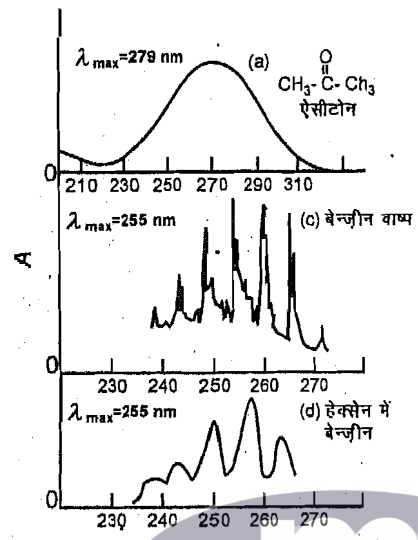

कुछ प्ररूपी अवशोषण वक्र

ϵ *मान* : किसी दिए गए तरंगदैर्घ्य पर किसी यौगिक की दी गई सान्द्रता के लिए अवशोषण की मात्रा को मोलर अवशोषकता कहते है जिसे ϵ (एप्सिलॉन) से निर्दिष्ट किया जाता है। इसका संबंध अवशोषण बैंड की ऊंचाई से होता है। इसकी सही परिभाषा अगले उपभाग में दी जाएगी। प्राचल $\lambda_{उच्चिष्ठ}$ (स्थिति) और ϵ (अवशोषण की मात्रा) अणु के लाक्षणिक गुणधर्म होते हैं। ये प्राचल, विलयन में अणुओं की संरचना और सान्द्रता पर निर्भर करते हैं। इसलिए अवशोषण स्पेक्ट्रम का, विशेष रूप से पराबैंगनी दृश्य प्रदेश में, लक्षण चित्रण और मात्रात्मक आकलन में व्यापक उपयोग होता है।

इस अनुच्छेद में हम मात्रात्मक विश्लेषण के मूल नियमों का अध्ययन करेंगे जो अवशोषित विकिरण की मात्रा का अवशोषक पदार्थ की सान्द्रता के साथ सम्बंध स्थापित करते हैं और साथ ही पराबैंगनी दृश्य क्षेत्र में अवशोषण करने के लिए पदार्थ की संरचनात्मक आवश्यकता का भी उल्लेख करेंगे।

MAADHYAM IAS

19.3.1 अवशोषण विधियों के मूल नियम

अवशोषण विधियों में दो मूल नियमों को प्रयुक्त किया जाता है। पहला बूगे नियम अथवा लैम्बर्ट नियम है जो अवशोषक माध्यम की प्रकाश अवशोषक क्षमता तथा मोटाई के बीच संबंध बतलाता है। दूसरा बियर नियम है जो विलयन की प्रकाश अवशोषक क्षमता और सान्द्रता के बीच संबंध बतलाता है। इन दो नियमों को मिलाकर बियर-लैम्बर्ट नियम प्राप्त होता है। इन नियमों की चर्चा नीचे की गई है।

बियर-लैम्बर्ट नियम

लैम्बर्ट नियम: पहले बूगे ने और बाद में लैम्बर्ट ने एक गणितीय संबंध प्रस्तुत किया जो समांगी अवशोषक माध्यम द्वारा एकवर्णी प्रकाश के पारगमन पर आधारित है। इस नियम के अनुसार जिस अवशोषक पदार्थ में से प्रकाश गमन करता है उसकी प्रत्येक इकाई लंबाई, प्रवेश करने वाले प्रकाश की समान मात्रा अवशोषित करती है।

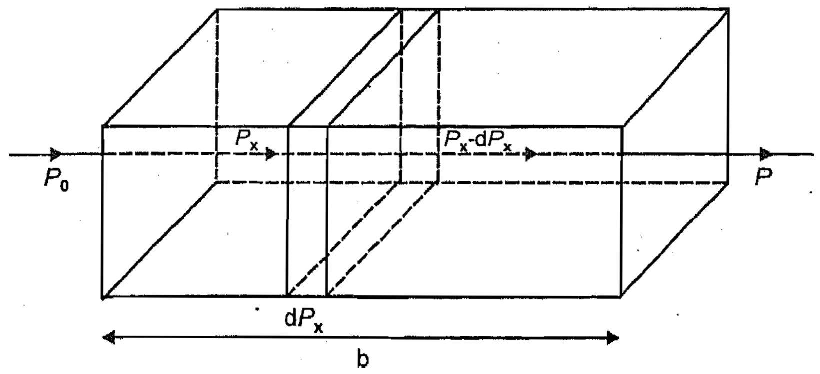

चित्र **19.6:** लैम्बर्ट नियम का निदर्श-चित्र

चित्र 19.6 में P_0 आपतित प्रकाश की विकिरण-शक्ति को और P, b मोटाई की शिला में से गुजरने के बाद, पारगत प्रकाश की विकिरण-शक्ति को निरूपित करता है। माना एक छोटी शिला है जिसकी मोटाई dx है। अतः, शक्ति में परिवर्तन, dP_x समानुपाती होगा आपतित प्रकाश की शक्ति (P_x) गुणा शिला की उस मोटाई (dx) में परिवर्तन जिसमें से प्रकाश गुजरता है। अर्थात्

$$\mathrm{d}P_x \propto P_x.\mathrm{d}x$$

अथवा $\mathrm{d}P_x = -k\,P_x.\mathrm{d}x$ (19.2)

जिसमें k आनुपातिकता स्थिरांक है जिसका ऋण चिन्ह बतलाता है कि अवशोषण के साथ शक्ति कम होती जाती है। समीकरण (19.2) को इस प्रकार लिखा जा सकता है:

$$\frac{\mathrm{d}P_x}{P_x} = -k\mathrm{d}x \qquad (19.3)$$

समीकरण 19.3 के समाकलन से,

$$\int_{P_0}^{P}\frac{\mathrm{d}P_x}{P_x} = -k\int_0^b \mathrm{d}x$$

अथवा $\ln\dfrac{P}{P_0} = -kb$ (19.4)

समीकरण 19.4, बूगे-लैम्बर्ट नियम अथवा लैम्बर्ट नियम का गणितीय व्यंजक है

समीकरण 19.4 को आधार 10 लघुगणक में बदलने और पुनर्व्यवस्थित करने पर,

$$\log\frac{P_0}{P} = \frac{k}{2.303}b = k'h \qquad (19.5)$$

ध्यान रहे कि ऋण चिन्ह को हटाने के लिए अनुपात P/P_0 उल्टा कर दिया गया है। लैम्बर्ट नियम किसी भी समांगी गैर-प्रकीर्णक माध्यम के लिए लागू होता है। चाहे वह गैस, द्रव, ठोस अथवा विलयन कुछ भी हो।

बियर नियम: पथ की नियत लंबाई, b में अवशोषक स्पीशीज की सान्द्रता को ध्यान में रखते हुए बियर ने 1852 में लैम्बर्ट नियम में संशोधन किया। उसने बताया कि "एकवर्णी विकिरण के किरण पुंज की शक्ति का ह्रास, किरण पुंज की शक्ति x पंथ में अवशोषक पदार्थ की सान्द्रता में परिवर्तन के समानुपाती होता है।" बियर नियम के गणितीय व्यंजक

पारगम्यता एक उपयोगी शब्द है। यह नमूने में से पारगत विकिरण की शक्ति का आपतन विकिरण शक्ति के साथ अनुपात होता है:

$$T = \frac{P}{P_0}$$

प्रायः पारगम्यता प्रतिशत में व्यक्त की जाती है।

$$\%T = \frac{P}{P_0}\times 100$$

विलयन के साथ काम करते हुए रिक्त के साथ तुलना की जा सकती है। विलयन और रिक्त (अथवा विलायक) में से पारगत शक्तियों के अनुपात को पारगम्यता कहते हैं। इसके लिए रिक्त को प्रकाश पथ में रखकर 100% T समंजन किया जाता है।

टिप्पणी : पारगम्यता एक अनुपात है अतः उसका कोई मात्रक नहीं होता है।

पारगम्यता के व्युत्क्रम को अपार्यता (opacity) कहते हैं।

MAADHYAM IAS

की व्युत्पत्ति उसी प्रकार की जा सकती है जैसे लैम्बर्ट नियम की। माना कोई समांतर एकवर्णी विकिरण-पुंज, c सान्द्रता के एकल अवशोषक पदार्थ के विलयन की किसी मोटाई को पार करता है। यदि c में किंचित परिवर्तन (dc) कर नई सान्द्रता $c + dc$ कर दी जाए तो परागत शक्ति में परिवर्तन इस प्रकार होगा :

$$dP_x \propto P_x \, dc$$
$$dP_x = -k'' P_x \, dc$$

जिसमें k'' आनुपातिकता स्थिरांक है और ऋण चिह्न बतलाता है कि अवशोषण के साथ विकिरण शक्ति कम होती जाती है। इस समीकरण को इस प्रकार पुनर्व्यवस्थित किया जा सकता है:

$$\frac{dP_x}{P_x} = -k'' \, dc$$

समाकलन करने पर,

$$\int_{P_0}^{P} \frac{dP_x}{P_x} = -k'' \int_0^c dc$$

अथवा $\ln \frac{P}{P_0} = -k''c$

अथवा $\log \frac{P_0}{P} = k''c$ (19.6)

गणितीयत: यह दिखाया जा सकता है कि दो समीकरणों (19.5) और (19.6) को इस प्रकार संयुक्त कर सकते हैं :

$$\log \frac{P_0}{P} = abc \qquad (19.7)$$

जिसमें a स्थिरांक है जिसे सान्द्रता c जिसे ग्राम प्रति डेसिमीटर^3 में व्यक्त किया जाता है की अवशोषकता कहते हैं (a, दो स्थिरांक k' और k'' को संयुक्त करने से प्राप्त होता है । इसका मात्रक सेमी$^{-1}$ ग्राम$^{-1}$ डेसिमीटर^3 ($cm^{-1}\,g^{-1}\,dm^3$) है। $\log \frac{P_0}{P}$ को एक विशेष प्रतीक A से निर्दिष्ट किया जाता है जिसे अवशोषणांक कहते हैं। अत: समीकरण (19.7) को इस प्रकार लिख सकते हैं :

$$A = abc \qquad (19.8)$$

जबकि सान्द्रता c, मोल प्रति डेसिमी^{3} (मोल डेसिमी$^{-3}$) ($mol\,dm^{-3}$) में व्यक्त की जाती है,

$$A = \epsilon bc \qquad (19.9)$$

जिसमें ϵ (ऐप्सिलॉन) को मोलर अवशोषकता कहते हैं (जिसे पहले मोलर विलोपन गुणांक कहते थे)। इसका मात्रक सेमी$^{-1}$ मोल$^{-1}$ डेसिमी^{3} ($cm^{-1}\,mol^{-1}\,dm^3$) है।

समीकरण (19.8) और (19.9) बियर-लैम्बर्ट नियम के व्यंजक हैं जिसे प्राय: बियर नियम कहा जाता है।

बियर-लैम्बर्ट नियम, विलयन की सान्द्रता निर्धारित करने वाला मात्रात्मक संबंध प्रस्तुत

MAADHYAM IAS

करता है। इसमें विलयन द्वारा अवशोषित प्रकाश की मात्रा की माप की जाती है जिसे पथ लंबाई सेल कहते हैं।

बियर-नियम से विचलन

बियर-लैम्बर्ट नियम (अथवा केवल बियर नियम) समीकरण $A = abc$ द्वारा व्यक्त किया जाता है। यह नियम बतलाता है कि अवशोषणांक का सान्द्रता के सम्मुख आलेखन से सीधी रेखा प्राप्त होती है जो मूल बिन्दु से गुजरती है चित्र 19.7 (क)। किन्तु कभी कभी अवशोषणांक (ख) और सान्द्रता (ग) के बीच इस रैखिक संबंध का विचलन भी हो जाता है जबकि आलेख में सीधी रेखा के बजाय वक्रता प्राप्त होती है। ऊपर की ओर की वक्रता (ख) को धनात्मक विचलन और नीचे की ओर की वक्रता (ग) को ऋणात्मक विचलन कहते हैं।

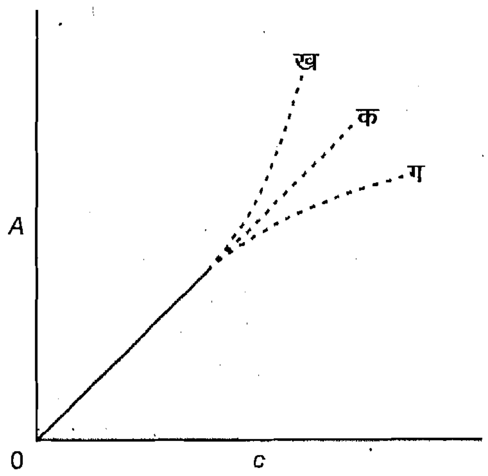

चित्र 19.7: बियर-नियम से विचलन

समीकरण (19.8) से स्पष्ट है कि अवशोषणांक के सम्मुख सान्द्रता आलेखों का ढाल ab के बराबर होगा। जब a और b दोनों स्थिरांक होंगे तो ढाल भी स्थिरांक होगा और A तथा c का संबंध रैखिक होगा। किन्तु यदि a और b में कोई एक भी स्थिरांक न हो तो बियर-नियम आलेख में रैखिकता से विचलन हो जाता है। सामान्यतया सेल-लंबाई एक स्थिर कारक है और विचलन में शामिल नहीं रहता है। अर्थात् यदि यंत्र कारकों में परिवर्तन न किया जाय तो लैम्बर्ट-नियम, $A \propto b$ में विचलन नहीं होते हैं।

विचलन का कारण, अवशोषकता में परिवर्तन है। अवशोषकता, a, तरंगदैर्घ्य और उस पदार्थ के स्वभाव का फलन होता है जिसकी अवशोषकता मापी जा रही हो। पदार्थ का स्वभाव अनेक चरों पर निर्भर करता है। इस प्रकार अवशोषकता में परिवर्तन के अनेक कारक हो सकते हैं, जैसे अन्-एकवर्णी विकिरण, वियोजन, संयोजन, संकुल-निर्माण, बहुलकन, विलायक-अपघटन, अवशोषक स्पीशीज का स्थायित्व, पी०एच०, प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया, अभिक्रिया-समय और ताप। बियर-नियम की विफलता के लिए उत्तरदायी इन कारकों को **आभासी विचलनों** (apparent daviation) के वर्ग में रखा जाता है क्योंकि वे स्वयं प्रदर्शित करते हैं। इन विचलनों को आभासी कहते हैं क्योंकि इनमें वे अवस्थाएं विचलित होती हैं जिनमें नियम की व्युत्पत्ति की गई थी और वास्तविक अवस्थाओं को प्रयुक्त करने पर वे विचलन लुप्त हो जाते हैं। इनमें से कुछ कारकों की चर्चा आगामी पैराग्राफों में की गई है।

अन्-एकवर्णी विकिरण: बियर-नियम में एकवर्णी विकिरण की आवश्यकता होती है।

MAADHYAM IAS

जिस तरंगदैर्घ्य पर, एक-दूसरे के साथ साम्यावस्था पर स्थिर दो या अधिक स्पीशीज का एक समान अवशोषकता-मान होता है उसे **आइसोबेस्टिक-बिन्दु** कहते हैं।

सामान्यतया हम केवल एक तरंगदैर्घ्य के साथ काम न कर तरंगदैर्घ्य के संकीर्ण बैन्ड के साथ काम करते हैं। क्योंकि अवशोषकता, तरंगदैर्घ्य का फलन होता है अतः यह आवश्यक नहीं कि किसी बैन्ड में एक तरंगदैर्घ्य, λ, पर प्राप्त अवशोषकता, a दूसरे तरंगदैर्घ्य λ' पर प्राप्त अवशोषकता, a' के बराबर हो, इसलिए अवशोषणांक और सान्द्रता के परस्पर अरैखिक संबंध होगा। a और a' के परस्पर जितना अधिक अंतर होगा, विचलन उतना ही अधिक होगा।

संयोजन और वियोजन जब किसी पदार्थ के संयोजन, वियोजन अथवा बहुलकन से ऐसी स्पीशीज प्राप्त हो जिसका $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ उससे (पदार्थ) से भिन्न हो तो बियर-नियम से विचलन हो जाता है। इसका उदाहरण डाइक्रोमेट और क्रोमेट की साम्यावस्था में पाया जाता है जैसा कि नीचे समीकरण में दिया गया है :

$$Cr_2O_7^{2-} + H_2O \rightarrow 2H^+ + 2CrO_4^{2-}$$

स्पष्ट है कि डाइक्रोमेट और क्रोमेट इन दो स्पीशीज के भिन्न $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ के अलावा रंग और स्पेक्ट्रम भी भिन्न हैं। $Cr_2O_7^{2-}$ और CrO_4^{2-} की सान्द्रताएं पी०एच० द्वारा प्रभावित होती हैं। $Cr_2O_7^{2-}$ जो कम पी०एच० पर प्रमुख स्पीशीज है, जल से तनु करने पर क्रोमेट में बदल जाएगा और बियर-नियम से विचलन दृष्टिगोचर होगा।

आइसोबेस्टिक बिन्दु, (isobestic point) जिस पर साम्यावस्था में दो स्पीशीज की अवशोषकता मान एक समान होता है पर अवशोषणांक के माप में विचलन नहीं दिखाई देगा। अतः बियर-नियम लागू होगा भले ही साम्यावस्था में विस्थापन हो यद्यपि मापों की सुग्राहिता कम होगी।

इस व्यवहार का अन्य उदाहरण अम्ल-क्षारक सूचक में दृष्टिगोचर होता है, जबकि

$$HIn \rightleftharpoons H^+In^-$$

दो स्पीशीज HIn और वियोजित आयन In^- का भिन्न रंग होता है। पी०एच० परिवर्तन के साथ रंग में भी परिवर्तन होता है, इसलिए विचलन-प्रभाव से बचने के लिए हमें माप से पहले विलयन का उभय प्रतिरोधन कर लेना चाहिए।

ताप: यद्यपि ताप को महत्वपूर्ण कारक नहीं माना जाता है क्योंकि सामान्यतया सभी माप स्थिर ताप पर किए जाते हैं, किन्तु कभी कभी ताप में परिवर्तन से आयनी साम्यावस्था और अवशोषकता में विस्थापन हो सकता है। उदाहरण के लिए गरम करने पर अम्लीय फेरिक क्लोराइड विलयन का रंग पीले से लाल-भूरा हो जाता है इसलिए $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ और अवशोषकता में परिवर्तन हो जाता है।

प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाएं : यदि विकिरण के प्रभाव से विश्लेष्य की प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया हो जाए तो उत्पाद विश्लेष्य से भिन्न होगा और विचलन दिखाई देगा।

MAADHYAM IAS

वास्तविक सीमाबंधन (real limitations): अन्य प्रकार के विचलन जो आभासी नहीं बल्कि वास्तविक होते हैं, निम्नलिखित कारकों के कारण उत्पन्न होते हैं।

सान्द्रता : बियर-नियम केवल तनु विलयनों (अर्थात् जिन विलयनों की सान्द्रता 0.01 M से कम हो) के लिए लागू होता है। उच्च सान्द्रताओं में विचलन का कारण, विलयन में अवशोषणांक के लिए उत्तरदायी स्पीशीज के परस्पर औसत दूरी का कम होना है (अर्थात् विलयन में अवशोषक कणों द्वारा फोटॉन का अधिग्रहण क्षेत्र कम हो जाता है)।

अपवर्तनांक (refractive **index):** जब तरंगदैर्ध्य में परिवर्तन होता है तो अवशोषकता में भी परिवर्तन होता है। जब माध्यम में परिवर्तन होता है तब तरंगदैर्ध्य में परिवर्तन होता है अर्थात् माध्यम के अपवर्तनांक में परिवर्तन होता है। अत: अवशोषकता, माध्यम के अपवर्तनांक पर निर्भर करती है। सान्द्रता में परिवर्तन से अपवर्तनांक में परिवर्तन होता है और इसलिए अवशोषकता में परिवर्तन होता है। इसके फलस्वरूप बियर-नियम से विचलन हो जाता है। किन्तु यह प्रभाव बहुत कम होता है और प्राय: स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति में प्रायोगिक त्रुटियों की सीमा के अंदर रहता है।

अवशोषणांक की संकलनीयता (additivity of absorbance)

बियर-नियम समीकरण (19.9) के अनुसार किसी दिए गए तरंगदैर्घ्य पर अवशोषणांक, विकिरण-कणों की संख्या के समानुपाती होता है जो विकिरण-शक्ति के अवशोषण में प्रभावकारी होते हैं। यदि उसे एक से अधिक स्पीशीज के लिए प्रयुक्त किया जाए तो हम इस प्रकार लिख सकते हैं :

$$A = \epsilon_x\, bc, + \epsilon_y\, bc_y \qquad (19.10)$$

सामान्य रूप *it,*

$$A = \Sigma A_l = b\Sigma \epsilon_l\, c_l \qquad (19.11)$$

अर्थात् किसी दिए गए तंरगदैर्घ्य पर किसी विलयन का कुल अवशोषणांक उपस्थित पृथक घटकों के अवशोषणांकों के योग के बराबर होता है। इसका अर्थ हुआ कि अवशोषणांक एक योगशील गुणधर्म है। यह गुणधर्म निम्नलिखित कार्यों में उपयोगी हो सकता है :

i) अवशोषणांक माप में विलायक का अर्थात् रिक्त **(blank)** का योगदान ज्ञात करना।

ii) व्यवकलन द्वारा ज्ञात वर्णमूलक की उपस्थिति में अज्ञात वर्णमूलक का अवशोषण स्पेक्ट्रम ज्ञात करना।

iii बहुघटक विश्लेषण में अर्थात् किसी मिश्रण में दो अथवा अधिक घटकों की सान्द्रता एक साथ ज्ञात करना।

बोध प्रश्न 2

किसी प्रकाशमापी में 2.00 सेमी क्यूवे का उपयोग करते हुए किसी नमूने के $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ पर विलायक के साथ P_0 का मान 85.4 था और नमूने के 1×10^4 M विलयन के साथ P का मान 20.3 था। नमूने की मोलर अवशोषकता ज्ञात कीजिए।

....

....

....

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

द्वि-अंगी मिश्रणों का विश्लेषण

अवशोषणांक की संकलनीयता गुणधर्म का अनुप्रयोग एक ही विलयन में उपस्थित दो अवशोषी घटकों की सान्द्रता को निर्धारित करने के लिए किया जाता है बशर्ते दो घटकों का पृथक तरंगदैर्घ्य उच्चिष्ठ (λ उच्दिष्ठ) हो और वे एक-दूसरे के साथ क्रिया न करें। माना किसी विलयन में दो अवशोषक घटक X और Y हैं जिनके तरंगदैर्घ्य उच्चिष्ठ क्रमश: λ_1 और λ_2 हैं। मिश्रण में सान्द्रताएं c_x और c_y परिकलित करने के लिए हमें दो

भिन्न तरंगदैर्घ्यों (a, और λ_2) पर अवशोषणांक की माप लेनी होगी; अत:,

$$A_1 = (A_x)_1 + (A_y)_2$$
$$= (\epsilon_x)_1 bc_x + (\epsilon_y)_1 bc_y \quad (19.12)$$

और $$A_2 = (A_x)_2 + (A_y)_2$$
$$= (\epsilon_x)_2 bc_x + (\epsilon_y)_2 bc_y \quad (19.13)$$

जिसमें $(A_x)_1, \lambda_1$ पर X घटक का अवशोषणांक योगदान है; $(A_y)_1, \lambda_1$ पर Y घटक का अवशोषणांक योगदान है; $(A_x)_2, \lambda_2$ पर X घटक का अवशोषणांक योगदान है और $(A_y)_2, \lambda_2$ पर Y घटक का अवशोषणांक योगदान है। मोलर अवशोषकताएं (ϵs) दिए गए अनुलग्न वाले क्रमिक मान हैं जैसा कि अवशोषणांक में होता है। c_x और c_y विश्लेषित किए जाने वाले मिश्रण में X और Y की सान्द्रताएं हैं।

यदि चार स्थिरांकों (मोलर अवशोषकताओं) $(\epsilon_x)_1, (\epsilon_y)_1, (\epsilon_x)_2, (\epsilon_y)_2$ के मान ज्ञात हों तो समीकरणों 19.12 और 19.13 को c_x और c_y के लिए हल किया जा सकता है। λ_1 और λ_2 तरंगदैर्घ्यों पर X और Y के शुद्ध मोलर विलयन के अवशोषणांकों की माप करके मोलर अवशोषकताएं निर्धारित की जाती है।

अवशोषकता, तरंगदैर्घ्य और पदार्थ के स्वभाव का फलन होता है अत: किसी दिए गए तरंगदैर्घ्य और दिए गए घटक के लिए उसका मान स्थिर रहेगा। इसलिए अवशोषण स्पेक्ट्रमों से ज्ञात सान्द्रताओं के लिए परिकलित मोलर अवशोषकताओं के मानों को समीकरणों (19.12) और (19.13) में प्रतिस्थापित करके अज्ञात सान्द्रताओं को मालूम किया जा सकता है। घटक स्पेक्ट्रमों की जानकारी से अज्ञात विलयन में c_x और c_y के मानों को ज्ञात करने के लिए इन समीकरणों को बीजगणित की विधि से हल किया जा सकता है। इसमें कोई भी तीन संभावित स्थितियां हो सकती हैं जैसा कि चित्र 19.8 में दिखाया गया है।

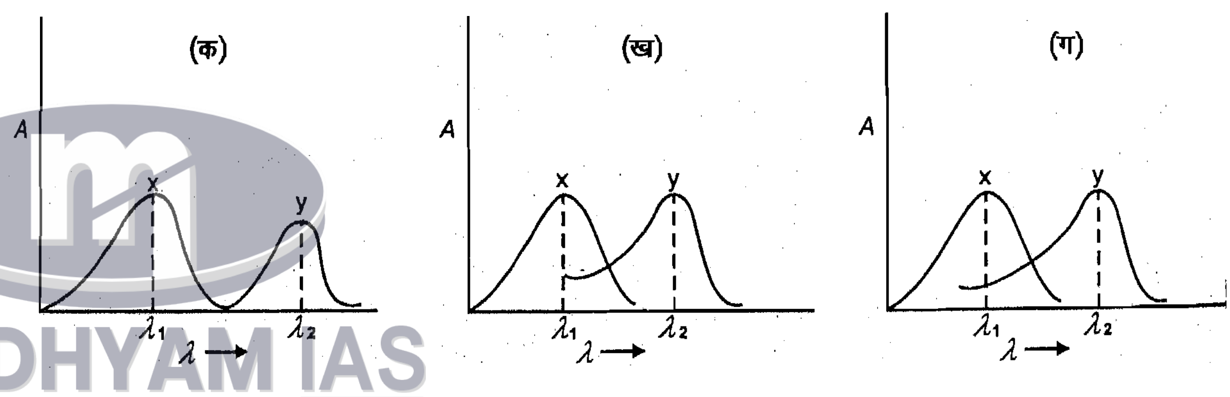

MAADHYAM IAS

चित्र 19.8: भिन्न संभावनाओं के साथ X और Y के अवशोषण स्पेक्ट्रम (क) कोई अतिव्यापन नहीं (ख) एक-पार्श्वी अतिव्यापन (ग) द्वि-पार्श्वी अतिव्यापन

चित्र 19.8 (क) में दो स्पेक्ट्रम दिखाए गए हैं जिनमें दो पृथक अवशोषण शिखर हैं और कोई अतिव्यापन नहीं है। λ_1 पर X घटक का अवशोषणांक अधिकतम है जबकि Y घटक कोई अवशोषण नहीं करता है। λ_2 पर Y घटक का अवशोषणांक अधिकतम है जबकि X घटक कोई अवशोषण नहीं करता है। इस प्रकार समीकरण (19.12) से A_1 बराबर है $(A_x)_1$ के और समीकरण (19.13) से A_2 बराबर है $(A_y)_2$ के क्योंकि $(A_y)_1$ और

$(A_x)_2$ शून्य हैं। इस प्रकार c_x और c_y को बियर-नियम से सीधे परिकलित किया जा सकता है जबकि ज्ञात सान्द्रताओं के लिए मोलर अवशोषकताएं पहले से परिकलित हैं। अत: X और Y घटकों की सान्द्रताओं को क्रमश: λ_1 और λ_2 पर बिना किसी व्यवधान के सीधे मापा जा सकता है।

चित्र 19.8 (ख) में एक-पार्श्वी अतिव्यापन दिखाया गया है अर्थात् λ_1 पर Y के स्पेक्ट्रम का X के स्पेक्ट्रम पर अतिव्यापन होता है किन्तु λ_2 पर X के स्पेक्ट्रम का Y के स्पेक्ट्रम पर अतिव्यापन नहीं होता है। समीकरण (19.12) से A_2 बराबर है $(A_y)_2$ के क्योंकि $(A_x)_2$ शून्य है और तब $(A_y)_2$ बराबर है $(\epsilon_y)_2 bc_y$ के। इससे c_y का सीधे परिकलन किया जा सकता है। c_y के इस मान को समीकरण (19.12) में प्रतिस्थापित करने पर $(A_y)_1$ का मान प्राप्त होता है। इस प्रकार c_x को आसानी से परिकलित किया जा सकता है।

चित्र 19.8 (ग) में द्विपार्श्वी अतिव्यापन दिखाया गया है अर्थात् X और Y के स्पेक्ट्रम एक-दूसरे का अतिव्यापन करते हैं। समीकरणों (19.12) और (19.13) से हम देखते हैं कि n, पर मिश्रण का अवशोषणांक A, है जो $(A,)$, और $(A_y)_1$ का योग है और λ_2 पर मिश्रण का अवशोषणांक A_2 है जो $(A,)_2$ और $(A_y)_2$ का योग है। c_x और c_y परिकलित करने के लिए इन दो समीकरणों को बीजगणित की विधि से हलकर c_x और c_y के मान परिकलित किए जा सकते हैं।

19.3.2 अवशोषक स्पीशीज

निकट पराबैंगनी क्षेत्र (175-375 नैनोमीटर) और दृश्य क्षेत्र (375-750 नैनोमीटर) में वैद्युत चुम्बकीय विकिरण के अवशोषण के फलस्वरूप कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थों का इलेक्ट्रॉनी संक्रमण होता है।

कार्बनिक स्पीशीज द्वारा अवशोषण

कार्बनिक यौगिकों द्वारा वैद्युत चुम्बकीय विकिरण का अवशोषण अणु की मूल अवस्था और विभिन्न उत्तेजित अवस्थाओं के बीच ऊर्जा के अंतर पर आधारित होता है। अधिकांश अणु, दृश्य और निकट पराबैंगनी क्षेत्र में केवल एक अथवा दो इलेक्ट्रॉनिक संक्रमण प्रदर्शित करते हैं जिसके लिए केवल बाह्यतम इलेक्ट्रॉनों का ध्यान रखने की आवश्यकता होती है। कार्बनिक अणुओं में इलेक्ट्रॉन तीन प्रकार के कक्षकों में होते हैं : σ (सिग्मा)– आबंधन, π (पाई)-आबंधन और n (नॉन)-आबंधन।

इन इलेक्ट्रॉनों के संक्रमण की विशेषता यह है कि उनका उत्तेजित अवस्था वाले प्रति-आबंधी अणु-कक्षकों (π* और σ*) में उन्नयन हो जाता है। इन संक्रमणों के लिए आवश्यक क्वांटम ऊर्जाएं भिन्न होती हैं तथा वे कार्बनिक अणुओं की संरचना के अनुसार बदलती हैं। संभावित संक्रमणों की आपेक्षिक ऊजाओं के गुणात्मक रूप से चित्र 19.9 में दिखाया गया है।

MAADHYAM IAS

जैसा कि चित्र 19.9 में दिखाया गया है चार प्रकार के संक्रमण संभव हैं $\sigma \to \sigma^*$, $n \to \sigma^*$, $\pi \to \pi^*$ और $n \to \pi^*$

इलेक्ट्रॉनिक स्पेक्ट्रम के संभावित क्षेत्र निम्नलिखित माने जाते हैं :

ΔE_1 $\sigma \to \sigma^*$ निर्वात पराबैंगनी

ΔE_2 $n \to \sigma^*$ सुदूर पराबैंगनी

$\Delta E_3 \;\; \pi \rightarrow \pi^*$ पराबैंगनी

$\Delta E_4 \;\; n \rightarrow \pi^*$ निकट पराबैंगनी और दृश्य

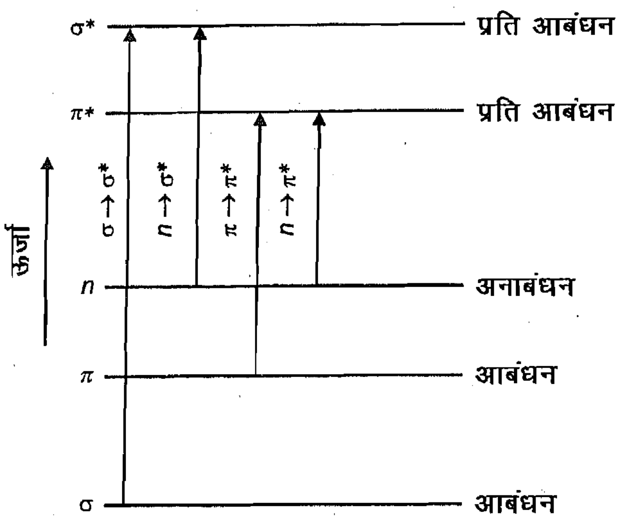

चित्र 19.9: विभिन्न प्रकार के अणु कक्षकों और इलेक्ट्रॉनिक संक्रमणों के लिए ऊर्जा-क्रम

आइए, इन संक्रमणों की कुछ विस्तार से चर्चा करें।

$\sigma \rightarrow \sigma^*$ *संक्रमण:* पिछली चर्चा से स्पष्ट है कि अन्य संभावित संक्रमणों की अपेक्षा $\sigma \rightarrow \sigma^*$ संक्रमण को प्रेरित करने के लिए आवश्यक उत्तेजन ऊर्जा बहुत अधिक होती है और वह निर्वात पराबैंगनी क्षेत्र ($\lambda < 175$ नैनोमीटर) में अवशोषण शिखर के संगत होती है। इस प्रकार एल्केनों में C–H अथवा C–C एकल आबंध इलेक्ट्रॉनों को उत्तेजित करने के लिए 160 नैनोमीटर के कम तरंगदैर्घ्य वाले विकिरण की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए $\sigma \rightarrow \sigma^*$ संक्रमण के संगत मेथेन, 122 नैनोमीटर पर शिखर प्रदर्शित करती है।

$n \rightarrow \sigma^*$ *संक्रमण:* $n \rightarrow \sigma^*$ संक्रमणों के लिए आवश्यक ऊर्जाएं $\sigma \rightarrow \sigma^*$ संक्रमणों से कम किन्तु $\pi \rightarrow \pi^*$ और $n \rightarrow \pi^*$ प्रकार के संक्रमणों से अधिक होती हैं। उन्हें 150 – 250 नैनोमीटर तरंग परास के विकिरण द्वारा उत्पन्न किया जा सकता है जबकि अधिकांश अवशोषण शिखर 200 नैनोमीटर से नीचे (सुदूर पराबैंगनी परास) प्राप्त होते हैं।

$\pi \rightarrow \pi^*$ *संक्रमण:* इन संक्रमणों के लिए आवश्यक ऊर्जाएं $\sigma \rightarrow \sigma^*$ और $n \rightarrow \sigma^*$ संक्रमणों से कम होती हैं और दीर्घ तरंगदैर्घ्य पर अवशोषण होता है। द्वि-आबंध और त्रि-आबंध वाले हाइड्रोकार्बनों में निकट-पराबैंगनी के आसपास अवशोषण होता है। संयुग्मन से $\lambda_{उच्चिष्ठ}$ बढ़ जाता है जो ऐरोमैटिक अणुओं में पर्याप्त होता है। उदाहरण के लिए एक-वलय वाले ऐरोमैटिक यौगिक 250 नैनोमीटर के आसपास नैफ्थेलीन, 300 नैनोमीटर के आसपास और ऐन्थ्रासीन 360 नैनोमीटर के आसपास अवशोषण करते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

$n \rightarrow \pi^*$ *संक्रमण:* ऐसे संक्रमणों में एक अनाबंधी इलेक्ट्रॉन (एकल युग्म), रिक्त π^* कक्षक में उत्तेजित हो जाता है। इन संक्रमणों में आवश्यक ऊर्जाएं, $\pi \rightarrow \pi^*$ संक्रमणों से कम होती है और ये पराबैंगनी तथा दृश्य क्षेत्र में उत्पन्न होते हैं। *n*-इलेक्ट्रॉन वाले परमाणुओं अथवा समूहों की उपस्थिति से स्पेक्ट्रम में उल्लेखनीय परिवर्तन हो जाता है। इस प्रकार नाइट्रोजन, गंधक और हैलोजनों के कारण अवशोषण उच्च तरंगदैर्घ्यों पर होता है।

वर्णमूलक (chromophores)

किसी रासायनिक यौगिक का प्रमुख अभिलक्षण। उसका रंग होता है। 1876 में विट ने

ज्ञात किया कि अणुओं का रंग, उनमें उपस्थित कुछ रासायनिक समूहों के कारण होता है जिन्हें वर्णमूलक कहते हैं। क्रोमोफोर (वर्ण मूलक) यूनानी शब्द है जिसका अर्थ है रंग उत्पन्न करने वाला। किन्तु अब क्रोमोफोर (वर्ण मूलक) शब्द का उपयोग केवल रंग के लिए ही नहीं होता है। अब इस शब्द का उपयोग उन सब समूहों के लिए किया जाता है जो 175 और 1000 नैनोमीटर के बीच वैद्युत चुम्बकीय विकिरण के अवशोषण के लिए उत्तरदायी होते हैं। प्रयोग के लिए इस परास का उपयोग सुविधाजनक रहता है।

किसी विशेष आवृत्ति के वैद्युत चुम्बकीय विकिरण के अवशोषण से भिन्न ऊर्जा वाली अवस्थाओं के बीच संक्रमण होता है। इसलिए जिस तरंगदैर्घ्य पर कोई वर्णमूलक अधिकतम अवशोषणांक प्रदर्शित करता है वह इलेक्ट्रॉनिक संक्रमण के प्रकार पर निर्भर करता है अर्थात् किसी विशेष किस्म के इलेक्ट्रॉन के निम्न ऊर्जा-अवस्था से संभावित उच्च ऊर्जा-अवस्था में उत्तेजन के लिए आवश्यक ऊर्जा पर निर्भर करता है। पराबैंगनी-दृश्य क्षेत्र में अधिकांश अवशोषण बैंड, π-इलेक्ट्रॉनों और n-इलेक्ट्रॉनों के उत्तेजन के कारण होते हैं। π-इलेक्ट्रॉनों और n-इलेक्ट्रॉनों के π^* उत्तेजित अवस्था में संक्रमण के लिए आवश्यक ऊर्जाएं, अवशोषण शिखरों को प्रयोगत: सुविधाजनक स्पेक्ट्रमी क्षेत्र (175-1000 नैनोमीटर) के अंतर्गत ले आती हैं। उदाहरण के लिए π अथवा n-इलेक्ट्रॉनों द्वारा फोटॉनों के अवशोषण के कारण ऐल्डिहाइडों और कीटोनों में मौजूद कार्बोनिल समूहों से $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ पराबैंगनी क्षेत्र में प्राप्त होता है। $n \rightarrow \pi^*$ संक्रमण के कारण ऐसीटैल्डिहाइड में $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$, 293 नैनोमीटर पर प्राप्त होता है। $n \rightarrow \sigma^*$ और $n \rightarrow \pi^*$ संक्रमण के कारण ऐसीटोन का $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ क्रमश: 186 और 280 पर प्राप्त होता है। इस क्षेत्र में वर्णमूलकों के कुछ अन्य उदाहरण हैं : $>C=C<$, $-C\equiv C-$, $-N=O$ और $-N=N-$ आदि।

सारणी 19.2 में सामान्य वर्णमूलकों, संक्रमणों के प्रकार, और उनके अवशोषण उच्चिष्ठों की लगभग स्थितियों की सूची दी गई है। यद्यपि कंपन प्रभाव के कारण शिखर, सामान्यतया, चौड़े होते हैं तथापि ये शिखर कार्बनिक यौगिकों में अभिलक्षकीय समूहों के अभिनिर्धारण के लिए निर्देशक का काम करते हैं।

जब अणु में दो अथवा अधिक वर्णमूलक होते हैं तो अवशोषण उनके $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ की आपेक्षिक स्थितियों पर निर्भर करता है और अवशोषण की तीव्रता, विलायक के स्वभाव के अनुसार बदलती है। प्राय: ध्रुवीय विलायक $\pi \rightarrow \pi^*$ संक्रमणों को दीर्घ तरंगदैर्घ्य की ओर विस्थापित करते हैं [(रक्त विस्थापन) (red shift)] और $n \rightarrow \pi^*$ संक्रमणों को लघु तरंगदैर्घ्य की ओर विस्थापित करते हैं [(नील विस्थापन) (blue shift)]।

संयुग्मी अणुओं (जिनमें एकान्तरत: द्विआबंध होते हैं) में अवशोषण दीर्घ तरंगदैर्घ्य की ओर विस्थापित होता है क्योंकि अनुनाद संरचना से इलेक्ट्रॉनों का विस्थानीकरण हो जाता है। अर्थात् असंयुग्मी तंत्र की अपेक्षा संयुग्मी तंत्र में इलेक्ट्रॉन कम मजबूती के साथ आबद्ध रहता है।

MAADHYAM IAS

वर्णवर्धक (anxochrome) यद्यपि, स्वयं वैद्युत चुम्बकीय विकिरण का अवशोषण नहीं करते हैं किन्तु जब वे वर्णमूलक के साथ संलग्न रहते हैं तो तरंगदैर्घ्य तथा वर्णमूलक की अवशोषण तीव्रता दोनों में परिवर्तन कर देते हैं। वर्णवर्धक, संतृप्त (अभिलक्षकीय) समूह होता है जिससे अनाबंधी इलेक्ट्रॉन होते हैं जिन्हें किसी संयुग्मी तंत्र को प्रदान किया जा सकता है। $-\ddot{O}R, -\ddot{N}H_2, -\ddot{N}R_2$ आदि इसके उदाहरण हैं।

सारणी 19.2: कुछ प्रमुख वर्णमूलकों के अवशोषण अभिलक्षण

वर्णमूलक	उदाहरण	$\lambda_{उच्चिष्ठ}$	संक्रमण का प्रकार
$>C=C<$	$C_6H_{13}CH=CH_2$	177	$\pi \rightarrow \pi^*$
$-C\equiv C-$	$C_5H_{11}C\equiv C-CH_3$	178	$\pi \rightarrow \pi^*$
$>C=O$	CH_3COCH_3	186	$n \rightarrow \sigma^*$
		280	$n \rightarrow \pi^*$
	CH_3CHO	180	$n \rightarrow \sigma^*$
		293	$n \rightarrow \pi^*$
$-\overset{O}{\overset{\|\|}{C}}-OH$	CH_3COOH	204	$n \rightarrow \pi^*$
$-N=N-$	$CH_3N=NCH_3$	339	$n \rightarrow \pi^*$
$-N=O$	C_4H_9NO	300	$\pi \rightarrow \pi^*$
		665	$n \rightarrow \pi^*$
$-NO_2$	CH_3NO_2	280	$n \rightarrow \pi^*$

अकार्बनिक यौगिकों द्वारा अवशोषण

अकार्बनिक यौगिकों द्वारा वैद्युत चुम्बकीय विकिरणों के अवशोषण का संक्षिप्त उल्लेख नीचे किया गया है जिसमें d इलेक्ट्रॉन, f इलेक्ट्रॉन के इलेक्ट्रॉनिक संक्रमण सम्मिलित हैं।

संक्रमण धातु आयनों के स्पेक्ट्रम प्राप्त होने का कारण है इन आयनों का विलायक अणुओं के साथ समन्वय आबंधन में, अथवा विशिष्ट संलग्नियों के साथ संकुल निर्माण में, d कक्षकों का सम्मिलित होना। संकुल निर्माण में संक्रमण धातु आयनों के पांच d कक्षकों की अपभ्रंशता (degeneracy) समाप्त हो जाती है और जब उपयुक्त आवृत्ति (पराबैंगनी से निकट अवरक्त क्षेत्र तक) के वैद्युत चुम्बकीय विकिरण का अवशोषण होता है तो निम्न ऊर्जा वाले d कक्षकों से उच्च ऊर्जा वाले d^* कक्षकों में इलेक्ट्रॉनिक संक्रमण होते हैं।

लैन्थेनाइडों और ऐक्टिनाइडों के आयन, f से f^* संक्रमणों के कारण, पराबैंगनी और दृश्य विकिरण का अवशोषण करते हैं। इसमें उच्च मुख्य क्वांटम संख्या वाले अध्यासित कक्षकों द्वारा बाहरी प्रभावों से परिरक्षित रहने के कारण, f इलेक्ट्रॉन संकीर्ण बैंडों में पराबैंगनी और दृश्य क्षेत्र के विकिरण का अवशोषण करते हैं।

अनेक संक्रमण धातु संकुलों में वैद्युत चुम्बकीय विकिरण के अवशोषण से आवेश स्थानांतर (charge transfer) प्रक्रिया होती है जो अवशोषण के लिए उत्तरदायी होती है। इस प्रकार के संक्रमण में फोटॉन के अवशोषण से संकुल के दो घटकों के बीच इलेक्ट्रॉन स्थानांतरण (आंतरिक ऑक्सीकरण–अपचयन प्रक्रिया द्वारा) होता है जबकि संकुल का एक घटक इलेक्ट्रॉन दाता का काम करता है और दूसरा घटक इलेक्ट्रॉन ग्राही के रूप में काम करता है। आगे बढ़ने से पहले आइए निम्नलिखित बोध प्रश्न को हल करें।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बोध प्रश्न 3

नीचे दिए गए यौगिकों में $\pi \rightarrow \pi^*, n \rightarrow \pi^*$ अथवा $n \rightarrow \sigma^*$ अवशोषण को अभिनिर्धारित कीजिए:

		$\lambda_{उच्चिष्ठ}$
क)	$CH_3\overset{O}{\overset{\|\|}{C}}CH_3$	293
ख)	CH_3COOH	294
ग)	CH_3NO_2	280

बोध प्रश्न 4

निम्नलिखित संक्रमणों को बढ़ते क्रम में लिखिए :

$n \rightarrow \pi^*$, $\pi \rightarrow \pi^*$, $\sigma \rightarrow \sigma^*$, $n \rightarrow \sigma^*$

....

....

....

19.4 पराबैंगनी-दृश्य स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति

पराबैंगनी-दृश्य स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति में पराबैंगनी अथवा दृश्य प्रकाश के अवशोषण का उपयोग किसी विलयन में एक अथवा अधिक घटकों की पहचान करने और उनकी सान्द्रता ज्ञात करने के लिए किया जाता है। ज्ञान की इस शाखा का यंत्रीय तकनीक के रूप में उपयोग करने का मुख्य लाभ यह है कि इसके द्वारा लेशमात्र पदार्थों को भी सामान्य विधि से ज्ञात किया जा सकता है जो परंपरागत विधियों से संभव नहीं है। यह तकनीक, विश्लेषण की सबसे पुरानी यंत्रीय विधियों में से एक है। विश्लेषण की इस भौतिक-रासायनिक विधि में, आरंभ में, प्रकाश स्रोत के रूप में प्राकृतिक अथवा कृत्रिम श्वेत प्रकाश का उपयोग किया जाता था। साधारण यंत्रों से माप की जाती थी और आरंभ में विलयन की रंग-तीव्रता की तुलना करने के लिए खाली आंख का उपयोग किया जाता था। बाद में आंख की जगह रंग की तीव्रता मापने के लिए प्रकाशमापियों का प्रयोग होने लगा और इस प्रकार विकसित यंत्र को प्रकाशमापी अथवा वर्णमापी कहते थे। रंग माप के लिए स्पेक्ट्रम बैंड का चयन करने के लिए वर्णमापियों में फिल्टरों का उपयोग होने लगा। बाद में निश्चित तरंगदैर्ध्य का वरण करने वाले यंत्रों का प्रयोग होने लगा जिन्हें **स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी** कहते हैं। साधारण वर्णमापी विधियों से 1 प्रतिशत से अधिक यथार्थता प्राप्त नहीं होती है। अधिक यथार्थता के लिए स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी विधियों का उपयोग किया जाता है। अपितु इन दोनों यंत्रीय तकनीकों का सबसे बड़ा लाभ यह है कि ये सरल और सस्ती हैं।

19.4.1 अवशोषण मापों के लिए यंत्रों के घटक

वैद्युत चुम्बकीय विकिरण की तीव्रताओं को मापने के लिए प्रयुक्त यंत्र में पांच मुख्य घटक होते हैं जैसा कि चित्र 19.10 के ब्लॉक आरेख में दिखाया गया है।

विकिरण स्रोत → तरंगदैर्ध्य वरणकारी → नमूना → संसूचक → संकेत सूचक

चित्र 19.10: विकिरण के अवशोषण को मापने के लिए प्रयुक्त यंत्र के मुख्य घटकों को प्रदर्शित करता ब्लॉक आरेख।

MAADHYAM IAS

जिस तरंगदैर्ध्य क्षेत्र में अवशोषण की माप करनी हो उसमें उपयुक्त विकिरण स्रोत से पर्याप्त विकिरण शक्ति प्राप्त होनी चाहिए। स्रोत के विकिरण को फिल्टर करके अथवा एकवर्णित्र के उपयोग से तरंगदैर्ध्य वरणकारी द्वारा उपयुक्त तरंगदैर्ध्य प्राप्त किया जाता है। फिल्टर प्रकाशमिति में फिल्टरों को प्रयुक्त किया जाता है। फिल्टरों का उपयोग मुख्यत: दृश्य परास में होता है जबकि एकवर्णित्र का उपयोग स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति में पराबैंगनी, दृश्य और अवरक्त परासों में होता है। चयन किए गए तरंगदैर्ध्य को द्रोणिका (क्यूवे) में रखे विलायक अथवा नमूने में जाने दिया जाता है। संसूचक, पारगत विकिरण की तीव्रता की माप करता है और संकेत देता है जिसे संकेत सूचक द्वारा पढ़ लिया जाता है। अब इन घटकों की विस्तार से चर्चा की जाएगी।

स्रोत (source) : पराबैंगनी क्षेत्र (180 – 350 नैनोमीटर) में विकिरण का सामान्य स्रोत, हाइड्रोजन अथवा ड्यूटीरियम विसर्जन लैंप है जिसे न्यून दाब पर प्रचालित किया जाता है। इस लैंप की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें कैथोड और ऐनोड के बीच एक यांत्रिक द्वारक द्वारा विसर्जन को संकीर्ण पथ में रख सकते हैं। हाइड्रोजन के स्थान पर ड्यूटीरियम के उपयोग से लैंप की दीप्ति बढ जाती है।

दृश्य क्षेत्र और निकट अवरक्त क्षेत्र (325 नैनोमीटर से 3 माइक्रोमीटर) में विकिरण का स्रोत तापदीप्त लैंप होता है जिसमें टंगस्टेन-तार का तन्तु होता है। कुंडलित तार तंतु, कांच के बल्ब में बंद रहता है। बल्ब में कोई अक्रिय गैस भरी होती है अथवा वह निर्वात होता है। तन्तु को विद्युत् धारा से गरम करने पर विकिरण निकलते हैं। तापदीप्त लैंप एक सस्ता स्रोत है जो दृश्य और निकट पराबैंगनी क्षेत्र में कार्य करने के लिए उपयुक्त रहता है।

तरंगदैर्घ्य वरणकारी (wavelength selector) : तरंगदैर्घ्य वरणकारी का काम तरंगदैर्घ्य के एक संकीर्ण परास को स्रोत से पृथक करना है। टंग्स्टेन लैंप, हाइड्रोजन विसर्जन नलियॉं आदि विकिरण स्रोत, अपेक्षाकृत विस्तृत आवृत्ति-परास पर, प्रायः लगातार विकिरण उत्सर्जित करते हैं। फिल्टरों द्वारा चयनित तरंगदैर्घ्य परासों के संकीर्ण स्पेक्ट्रमी क्षेत्रों को सतत् स्पेक्ट्रम से पृथक किया जा सकता है। अपितु, वांछित आवृत्ति के एकवर्णी विकिरण उत्पन्न करने के लिए एकवर्णित्र की आवश्यकता होती है। संकीर्ण परास को फिल्टरों से अथवा (अधिक संकीर्ण एकवर्णित्र) को प्रिज्म अथवा ग्रेटिंग से पृथक कर सकते हैं।

फिल्टर : अवशोषण फिल्टर कांच का रंगीन टुकड़ा होता है जो कुछ विशेष तरंगदैर्घ्यों वाले प्रकाश को अन्य से अधिक मात्रा में अवशोषित करता है। हम जानते हैं कि श्वेत प्रकाश सात भिन्न रंगों (VIBGYOR) का बना होता है। किसी विशेष रंग की वस्तु उस रंग की दिखाई देती है क्योंकि वह उस रंग को प्रेषण करती है और उसके पूरक रंग का अवशोषण करती है। पहले सन्निकटन के लिए फिल्टर को ऐसे रंग का प्रेषण करना चाहिए जो नमूने का पूरक हो। दूसरे शब्दों में फिल्टर को उस रंग के प्रकाश का अवशोषण करना चाहिए जिसे नमूना प्रेषित करता है। उदाहरण के लिए नीला कोबाल्ट कांच, नील-जाम्ब प्रकाश का प्रेषण करता है किन्तु पीले प्रकाश का अवशोषण करता है। ऐसे फिल्टर का उपयोग चित्र 19.11 में दिखाया गया है।

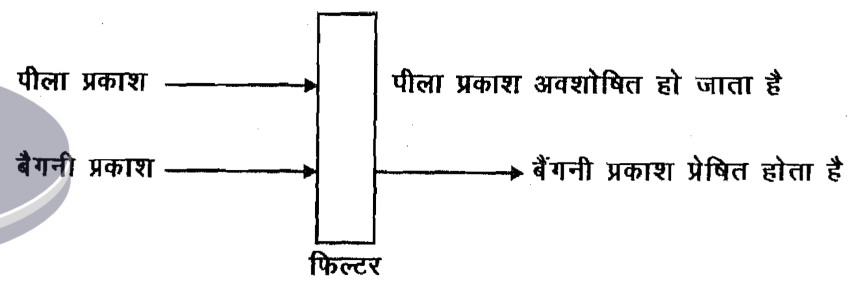

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

चित्र 19.11: नीले कोबाल्ट कांच फिल्टर का उपयोग

फिल्टर का रंग ज्ञात करने के लिए हम वर्ण-चक्र की सहायता ले सकते हैं (चित्र 19.12)।

चित्र 19.12 में रंगों और उनके तरंगदैर्घ्यों को दिखाया गया है। जो रंग आमने-सामने हैं, एक-दूसरे के पूरक कहलाते हैं। पूरक रंग का फिल्टर, माप के लिए सबसे अधिक उपयुक्त होता है। उदाहरण के लिए लाल रंग के विलयन के लिए उसके पूरक अर्थात् हरे रंग के फिल्टर का उपयोग करना चाहिए जो बतलाता है कि लाल रंग के विलयन का $\lambda_{उच्चिष्ठ}$, 490 – 525 के बीच होना चाहिए। फिल्टर की विशेषता का निर्णय उसकी प्रभावी

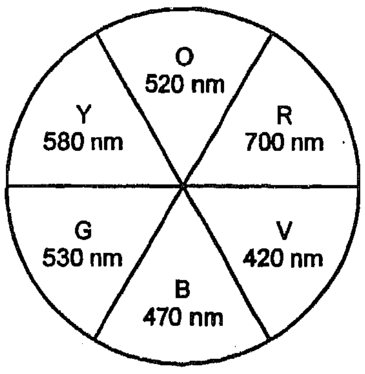

चित्र 19.12: वर्ण-चक्र

बैंड-चौड़ाई (effective band width) से किया जाता है जिसे अधिकतम प्रेष्यता मान के आधे पर तरंगदैर्घ्य अंतराल के रूप में व्यक्त किया जाता है जबकि फिल्टर की अनुक्रिया को तरंगदैर्घ्य के परिवर्तन के साथ आलेखित किया जाता है (देखें चित्र 19.13)। प्रभावी बैंड-चौड़ाई (AR) जितनी संकीर्ण होगी, फिल्टर उतना ही अच्छा होगा। सामान्यतया AR का मान 30 – 50 नैनोमीटर होता है।

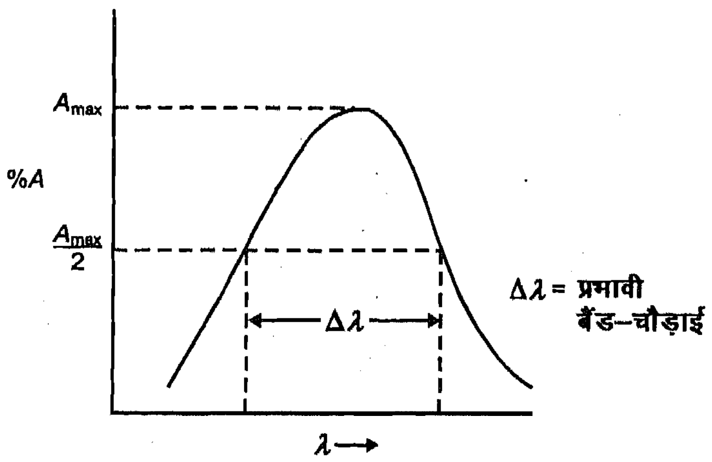

चित्र 19.13: फिल्टर की अनुक्रिया

अवशोषण फिल्टर आसान होते हैं और वैद्युत चुम्बकीय विकिरण स्पेक्ट्रमों के दृश्य परास में अनेक अनुप्रयोगों के लिए उपयुक्त रहते हैं। किन्तु विस्तृत परासों के लिए व्यतिकरण फिल्टरों (interference filter) की आवश्यकता होती है। अवशोषण फिल्टरों की अपेक्षा व्यतिकरण फिल्टर विस्तृत परास में प्रयुक्त हो सकते हैं, व्यतिकरण फिल्टर मुख्यत: चांदी के दो पारदर्शी समांतर फिल्मों के बने होते हैं जो इतने समीप होते हैं कि व्यतिकरण प्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं। ये व्यतिकरण फिल्टर, पराबैंगनी, दृश्य और निकट-अवरक्त क्षेत्र के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं। अवशोषण (रंगीन) फिल्टरों की अपेक्षा व्यतिकरण फिल्टर बहुत अच्छा कार्य करते हैं। अवशोषण फिल्टरों की तुलना में इन फिल्टरों की प्रभावी बैंड चौड़ाई अधिक संकीर्ण होती है।

MAADHYAM IAS

एकवर्णित्र (monochromator) : लगभग एकवर्णी विकिरण प्राप्त करने के लिए परिक्षेपण (dispersing) युक्ति का उपयोग किया जाता है। एकवर्णित्र में प्राय: स्रोत से प्राप्त विभिन्न वर्णी विकिरण के लिए प्रवेश-द्वारक, विकिरण को समांतर बनाने के लिए समांतरकारी लेन्स, अथवा दर्पण, विकिरण को उसके घटक तरंगदैर्घ्यों में परिक्षेपित करने के लिए प्रिज्म अथवा ग्रेटिंग, लगभग एकवर्णी परिक्षेपित विकिरण को फोकस करने के लिए लेन्स अथवा दर्पण और एक निर्गम द्वारक होता है जिसमें से एकवर्णी विकिरण पारित होता है।

आजकल, प्रिज्म एकवर्णित्र की अपेक्षा ग्रेटिंग एकवर्णित्र का अधिक उपयोग होता है। ग्रेटिंग, धातु अथवा कांच का छोटा टुकड़ा होता है जिसमें असंख्य समांतर और एकसमान खांचे रेखांकित होते हैं (10,000 खांचे/cm तक)। ग्रेटिंग को हीरे के चाकू से रेखांकित किया जाता है जिसमें बहुत सावधानियां रखी जाती हैं। उच्च कोटि के ग्रेटिंग रेखांकित करना एक कठिन कार्य है। आजकल प्रतिकृति ग्रेटिंग का उपयोग किया जाता है जिन्हें मूल ग्रेटिंग में गलित प्लास्टिक उडेलकर संचकित किया जाता है। प्रतिकृति ग्रेटिंग कम महंगी होती है और मूल ग्रेटिंग से विशेष घटिया भी नहीं होती हैं। ग्रेटिंग में प्रगति के फलस्वरूप उत्तल ग्रेटिंग का विकास हुआ जिसमें विकिरण को फोकस करने के लिए लेन्स की आवश्यकता नहीं होती है।

चित्र 19.14 में एक प्ररूपी एकवर्णित्र का प्रकाशिक डिजाइन दिखाया गया है जिसमें परिक्षेपण युक्ति के रूप में ग्रेटिंग का उपयोग किया गया है। ग्रेटिंग पर पड़ने वाला प्रकाश विवर्तित हो जाता है जिससे भिन्न तरंगदैर्घ्य भिन्न कोणों पर निकलते हैं। ग्रेटिंग को घुमाने से वांछित तरंगदैर्घ्य के विकिरण का वरण किया जा सकता है।

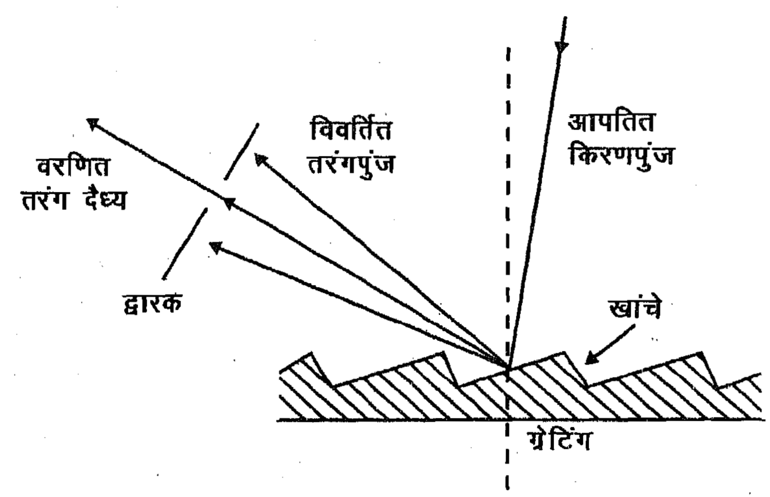

चित्र 19.14: प्ररूपी एकविर्णत्र जिसमें ग्रेटिंग का उपयोग किया गया है।

नमूना: पराबैंगनी-दृश्य स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति में नमूने को एक सेल में रखा जाता है जिसे द्रोणिका या क्यूवे (cuvette) कहते हैं। द्रोणिका ऐसे पदार्थ का बना होना चाहिए जो वांछित क्षेत्र में विकिरण का अवशोषण न करें। क्वार्ट्ज सेलों का उपयोग 190 नैनोमीटर – 84 माइक्रोमीटर के परास में किया जा सकता है। सिलिकेट कांच सेल, संपूर्ण दृश्य परास (375 – 950 नैनोमीटर) तथा पराबैंगनी क्षेत्र के एक भाग में प्रयुक्त हो सकते हैं। सस्ती होने के कारण बहुधा बेलनाकार द्रोणिकाओं का उपयोग किया जाता है। किन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक द्रोणिका चिन्हित हो ताकि होल्डर में उसे निविष्ट करने पर आपतित और निर्गत पृष्ठ में कोई भिन्नता न आने पाए। द्रोणिकाओं की पथ लंबाई सामान्यतया एक सेन्टीमीटर होती है।

MAADHYAM IAS

संसूचक (detector) : अधिकांश यंत्रों के ससूचक संकेत उत्पन्न करते हैं जो रैखिकत: प्रेषित होता है अर्थात् वे अपने पर आपतित होने वाली विकिरण शक्ति के साथ रैखिकत: अनुक्रिया करते हैं। संकेत में किसी वैद्युत अथवा यांत्रिक व्यवस्था द्वारा प्रेषण मानों को लघुगणकीयत: अवशोषणांक मात्रकों में परिवर्तित किया जा सकता है।

वास्तव में संसूचक ट्रान्सड्यूसर होता है जो एक प्रकार के संकेत को दूसरे प्रकार के संकेत में बदल देता है। आरंभिक यंत्रों में, आंख का अथवा फोटोग्राफिक प्लेट का संसूचक के रूप

में उपयोग किया जाता था। अधिकांश आधुनिक संसूचक, प्रकाश वैद्युत संसूचक होते हैं जिनमें वैद्युत चुम्बकीय विकिरण की तीव्रता (अर्थात् फोटॉन की ऊर्जा) वैद्युत ऊर्जा में परिवर्तित की जाती है। इसके कारण इलेक्ट्रॉन प्रवाह होता है और फलस्वरूप परिपथ में धारा प्रवाह अथवा वोल्टता को पढ़ लिया जाता है।

संसूचक के रूप में मानव-नेत्र का उपयोग : पहले खाली आंख से रंगों का निर्धारण एक प्रमुख वैश्लेषिक साधन था। मानव नेत्र दो रंगीन विलयनों से प्रेषित विकिरण शक्ति में भिन्नता देखने में अत्यंत सुग्राही होता है। वह दृश्य-परास में प्राकृतिक प्रकाश-सुग्राही संसूचक होता है। चित्र 19.15 में मानव नेत्र के लिए औसत सुग्राहिता अभिलक्षण दिखाए गए हैं।

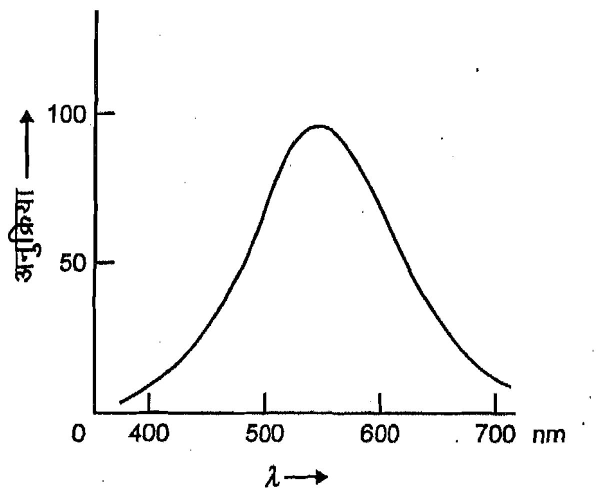

चित्र 19.15: तरंगदैर्ध्य के फल के रूप में औसत मानव-नेत्र की अनुक्रिया

प्रकाश तंत्रिकाएं, संकेत को, शलाकाओं और शंकुओं से होते हुए रेटिना से मस्तिष्क तक ले जाती हैं। संदर्भ से मिलान कर रंगों और उनकी तीव्रताओं की सन्निकटन तुलना की जा सकती है।

प्रकाश वैद्युत संसूचक (photoelectric detector) : इन संसूचकों में विकिरण ऊर्जा, विद्युत् ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है। उनका वर्गीकरण, प्रकाश वोल्टीय सेलों और प्रकाश उत्सर्जक संसूचकों के रूप में किया जा सकता है। उनकी चर्चा नीचे की गई है।

प्रकाश वोल्टीय सेल (photovoltaic cell) : प्रकाश वोल्टीय सेल का उपयोग मुख्यत: दृश्य क्षेत्र में विकिरण को पहचानने और माप करने के लिए किया जाता है। एक प्ररूपी प्रकाश वोल्टीय सेल अथवा प्रकाश-सेल (जिसका व्यवस्था-आरेख चित्र 19.16 में दिखाया गया है) में एक चपटा लोहे अथवा तांबे का इलेक्ट्रोड (ऐनोड) होता है जिसके ऊपर किसी अर्धचालक पदार्थ, जैसे सिलीनियम (अथवा क्यूप्रस ऑक्साइड) आदि की पतली परत निक्षेपित रहती है। सिलीनियम परत चांदी, सोना अथवा अन्य धातु की पारदर्शी फिल्म द्वारा विलेपित रहती है जो कांच की पारदर्शी प्लेट द्वारा सुरक्षित रहती है। एक धातु-वलय को, जो सेल के दूसरे सिरे (कैथोड) के रूप में काम करता है, पारदर्शी धात्विक फिल्म पर दबा रहता है। दो सिरे गैल्वेनोमीटर के साथ संयुक्त कर दिए जाते हैं। पूरा निकाय एक प्लास्टिक के केस में रख दिया जाता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

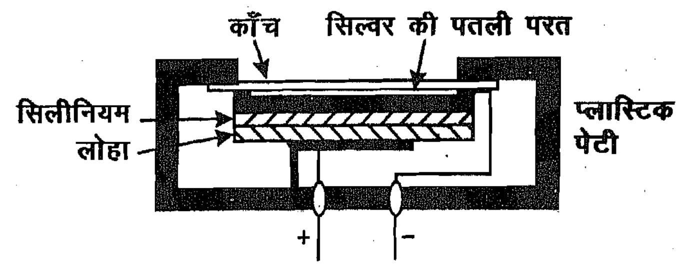

चित्र 19.16: प्ररूपी प्रकाश वोल्टीय सेल का व्यवस्था-आरेख पर प्रहार

जब विकिरण, सेल पर गिरता है तो गैल्वेनोमीटर में धारा प्रवाहित होती है। धारा, सेल पर टकराने वाले फोटॉनों की तीव्रता पर निर्भर करती है। उचित परिस्थितियों में, प्रकाशवोल्टीय सेलों से प्रवाहित होने वाली धारा इकाई समय में अवशोषित ऊर्जा के समानुपाती होती है। प्रकाशवोल्टीय सेलों में सामान्य परिपथिकी की आवश्यकता होती है जिसमें कोई प्रवर्धन नहीं साधारण तौर पर उनका उपयोग फिल्टर (निस्यंदन) फोटोमापियों में होता है।

प्रकाश उत्सर्जक संसूचक (photo emissive detector) : प्रकाश उत्सर्जक संसूचक अत्यंत सुग्राही होते हैं और उनका उपयोग प्रकाश तीव्रता में बहुत कम परिवर्तन के लिए भी किया जा सकता है जो प्रकाश वोल्टीय सेल से संभव नहीं है। इसलिए स्पेक्ट्रम प्रकाश मापियों में, जिनमें एकवर्णित्रों द्वारा तरंगदैर्घ्य वियोजन अनिवार्य है, इन संसूचकों का उपयोग किया जाता है। दो प्रकार के प्रकाश उत्सर्जक संसूचकों का उपयोग किया जाता है (i) निर्वात प्रकाश नलियां और (ii) प्रकाशवर्धक नलियां।

(i) *निर्वात प्रकाश नलियां (vacuum phototubes)* : निर्वात प्रकाश नलियों (चित्र 19.17) में दो इलेक्ट्रोड होते हैं, एक अर्धबिलनाकार कैथोड और एक तार का ऐनोड जो निर्वातित पारदर्शी पात्र के अंदर मोहर बंद रहते हैं। कैथोड पर पोटैशियम अथवा सीजियम आदि प्रकाश उत्सर्जक पदार्थ का विलेप लगा रहता है। पोटैशियम विलेपित कैथोड वाली प्रकाश नलियों का उपयोग 200 – 600 नैनोमीटर के परास में होता है और सीजियम विलेपित कैथोड वाली प्रकाश नलियों का उपयोग मुख्यत: 600 – 1000 नैनोमीटर के परास में होता है। द्वि-क्षार प्रकार के कैथोड सर्वाधिक सुग्राही होते हैं, जैसे पोटैशियम, सीजियम और ऐन्टिमनी का बना कैथोड।

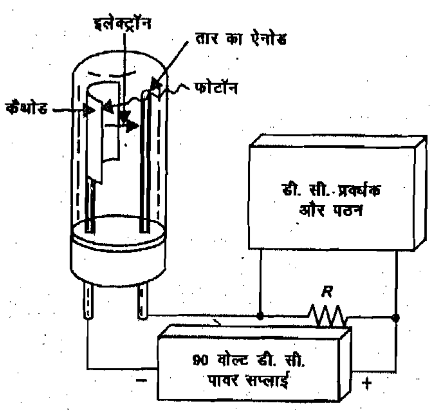

चित्र 19.17: प्रकाश नली का व्यवस्था-आरेख

चित्र 19.17 में प्रकाश नली और उसके सहायक परिपथ का आरेख दिखाया गया है। जब उच्च ऊर्जा वाले फोटॉन कैथोड पर टकराते हैं तो इलेक्ट्रॉन, प्रकाश-विद्युत् प्रभाव द्वारा, प्रकाश उत्सर्जक पदार्थ से विस्थापित होकर ऐनोड पर एकत्रित हो जाते हैं। प्रकाश सुग्राही कैथोड पृष्ठ से उत्क्षिप्त इलेक्ट्रॉनों की संख्या, कैथोड पृष्ठ पर टकराने वाले किरण-पुंज की विकिरक शक्ति के अनुक्रमानुपाती होती है। जब किसी डी०सी० स्रोत से इलेक्ट्रोडों के

MAADHYAM IAS

आरपार विभव प्रयुक्त किया जाता है तो उत्सर्जित इलेक्ट्रॉन, तार-ऐनोड की ओर प्रवाहित होते हैं और प्रकाश विद्युत् धारा उत्पन्न करते हैं जो किरणपुंज की विकिरण शक्ति तथा डी॰सी॰ स्रोत के आरपार प्रयुक्त विभव पर निर्भर करती है। दो इलेक्ट्रोडों के आरपार संतृप्त विभव (लगभग 90 V) पर कैथोड द्वारा उत्सर्जित सभी इलेक्ट्रॉन प्रयुक्त विभव के आधीन नहीं रहते हैं तथा किरणपुंज की विकिरण शक्ति के अनुक्रमानुपाती होते हैं। इस प्रकार तंत्र में प्रवाहित होने वाली धारा का संबंध, प्रकाश सुग्राही कैथोड के उत्तल पृष्ठ पर आने वाले फोटॉन फ्लक्स से होता है।

(ii) *प्रकाशवर्धक नलियां (photo multiple tube) :* प्रकाशवर्धक नलियों को बाहरी प्रवर्धन की आवश्यकता नहीं होती है। वे प्रकाश नलियों से अधिक सुग्राही और यथार्थ होती हैं। चित्र 19.18 में प्रकाशवर्धक नली का अनुप्रस्थ काट और विद्युत् परिपथ दिखाया गया है जिसे विशेष ढंग से व्यवस्थित अनेक प्रकाश नलियों का समुच्चय माना जा सकता है। प्रकाशवर्धक नलियों के मध्यवर्ती डाइनोडों को ऐसे पदार्थ से आच्छादित किया जाता है जो उसके पृष्ठ पर एकत्रित प्रत्येक इलेक्ट्रॉन के बदले अनेक (2 से 5) इलेक्ट्रॉन उत्सर्जित करते हैं। डाइनोड इस प्रकार व्यवहार करते हैं कि पहले चरण का ऐनोड, दूसरे का कैथोड होता है। पहले कैथोड से उत्क्षिप्त प्राथमिक इलेक्ट्रॉन (e_1) पहले डाइनोड (e_2) के छोटे से क्षेत्र में प्रहार करते हैं जो पहले कैथोड (e_1) से लगभग 90 V अधिक धनात्मक होता है। प्रकाश उत्सर्जक पदार्थ से आच्छादित डाइनोड अपने पृष्ठ पर एकत्रित प्रत्येक इलेक्ट्रॉन के बदले 2 से 5 द्वितीयक इलेक्ट्रॉन उत्क्षिप्त करता है। ये द्वितीयक इलेक्ट्रॉन दूसरे डाइनोड (e_3) पर प्रहार करते हैं और इस प्रकार प्रत्येक चरण में प्रक्रिया प्रवर्धित होती जाती है। इलेक्ट्रॉन प्रवर्धन डाइनोडों पर होता है और 9 डाइनोडों वाली नली के लिए कुल प्रवर्धन 2^9 और 5^9 के बीच होता है।

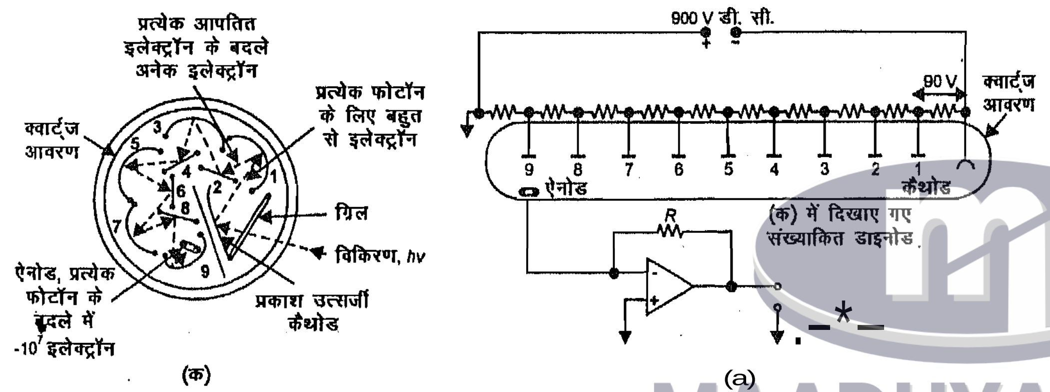

MAADHYAM IAS

चित्र **19.18:** प्रकाशवर्धक नली (क) अनुप्रस्थ काट (ख) विद्युत् परिपथ

19.4.2 कुछ प्ररूपी यंत्र

पिछले अनुच्छेद में जिन यंत्रीय घटकों का उल्लेख किया गया है उन्हें विकिरण के अवशोषण के माप के लिए विभिन्न व्यापारिक यंत्र बनाने के उद्देश्य से अनेक विधियों से संयुक्त किया जा सकता है। सभी अवशोषण मापों में नमूने में से प्रेषित विकिरण की तीव्रता की संदर्भ (विलायक/रिक्त) की तीव्रता से तुलना की जाती है। इसलिए निरपेक्ष माप के स्थान पर आपेक्षिक माप किए जाते हैं।

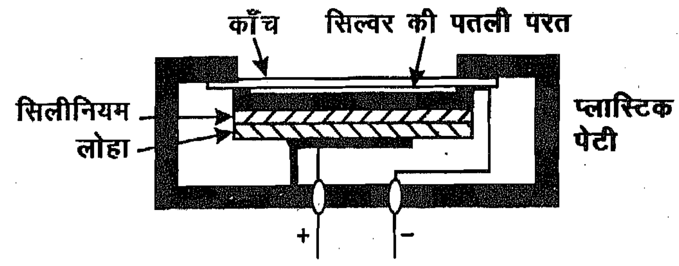

चित्र 19.16: प्ररूपी प्रकाश वोल्टीय सेल का व्यवस्था-आरेख पर प्रहार

जब विकिरण, सेल पर गिरता है तो गैल्वेनोमीटर में धारा प्रवाहित होती है। धारा, सेल पर टकराने वाले फोटॉनों की तीव्रता पर निर्भर करती है। उचित परिस्थितियों में, प्रकाशवोल्टीय सेलों से प्रवाहित होने वाली धारा इकाई समय में अवशोषित ऊर्जा के समानुपाती होती है। प्रकाशवोल्टीय सेलों में सामान्य परिपथिकी की आवश्यकता होती है जिसमें कोई प्रवर्धन नहीं साधारण तौर पर उनका उपयोग फिल्टर (निस्यंदन) फोटोमापियों में होता है।

प्रकाश उत्सर्जक ससूचक **(photo emissive detector)** *:* प्रकाश उत्सर्जक संसूचक अत्यंत सुग्राही होते हैं और उनका उपयोग प्रकाश तीव्रता में बहुत कम परिवर्तन के लिए भी किया जा सकता है जो प्रकाश वोल्टीय सेल से संभव नहीं है। इसलिए स्पेक्ट्रम प्रकाश मापियों में, जिनमें एकवर्णित्रों द्वारा तरंगदैर्घ्य वियोजन अनिवार्य है, इन संसूचकों का उपयोग किया जाता है। दो प्रकार के प्रकाश उत्सर्जक संसूचकों का उपयोग किया जाता है (i) निर्वात प्रकाश नलियां और (ii) प्रकाशवर्धक नलियां।

(i) *निर्वात प्रकाश नलियां* **(vacuum phototubes)** *:* निर्वात प्रकाश नलियों (चित्र **19.17**) में दो इलेक्ट्रोड होते हैं, एक अर्धबिलनाकार कैथोड और एक तार का ऐनोड जो निर्वातित पारदर्शी पात्र के अंदर मोहर बंद रहते हैं। कैथोड पर पोटैशियम अथवा सीजियम आदि प्रकाश उत्सर्जक पदार्थ का विलेप लगा रहता है। पोटैशियम विलेपित कैथोड वाली प्रकाश नलियों का उपयोग 200 – 600 नैनोमीटर के परास में होता है और सीजियम विलेपित कैथोड वाली प्रकाश नलियों का उपयोग मुख्यत: 600 – 1000 नैनोमीटर के परास में होता है। द्वि-क्षार प्रकार के कैथोड सर्वाधिक सुग्राही होते हैं, जैसे पोटैशियम, सीजियम और ऐन्टिमनी का बना कैथोड।

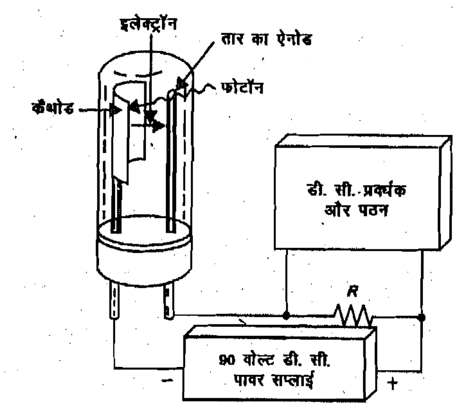

चित्र 19.17: प्रकाश नली का व्यवस्था-आरेख

चित्र 19.17 में प्रकाश नली और उसके सहायक परिपथ का आरेख दिखाया गया है। जब उच्च ऊर्जा वाले फोटॉन कैथोड पर टकराते हैं तो इलेक्ट्रॉन, प्रकाश-विद्युत् प्रभाव द्वारा, प्रकाश उत्सर्जक पदार्थ से विस्थापित होकर ऐनोड पर एकत्रित हो जाते हैं। प्रकाश सुग्राही कैथोड पृष्ठ से उत्क्षिप्त इलेक्ट्रॉनों की संख्या, कैथोड पृष्ठ पर टकराने वाले किरण-पुंज की विकिरक शक्ति के अनुक्रमानुपाती होती है। जब किसी डी०सी० स्रोत से इलेक्ट्रोडों के

MAADHYAM IAS

आरपार विभव प्रयुक्त किया जाता है तो उत्सर्जित इलेक्ट्रॉन, तार-ऐनोड की ओर प्रवाहित होते हैं और प्रकाश विद्युत् धारा उत्पन्न करते हैं जो किरणपुंज की विकिरण शक्ति तथा डी॰सी॰ स्रोत के आरपार प्रयुक्त विभव पर निर्भर करती है। दो इलेक्ट्रोडों के आरपार संतृप्त विभव (लगभग 90 V) पर कैथोड द्वारा उत्सर्जित सभी इलेक्ट्रॉन प्रयुक्त विभव के आधीन नहीं रहते हैं तथा किरणपुंज की विकिरण शक्ति के अनुक्रमानुपाती होते हैं। इस प्रकार तंत्र में प्रवाहित होने वाली धारा का संबंध, प्रकाश सुग्राही कैथोड के उत्तल पृष्ठ पर आने वाले फोटॉन फ्लक्स से होता है।

(ii) *प्रकाशवर्धक नलियां (photo multiple tube) :* प्रकाशवर्धक नलियों को बाहरी प्रवर्धन की आवश्यकता नहीं होती है। वे प्रकाश नलियों से अधिक सुग्राही और यथार्थ होती हैं। चित्र 19.18 में प्रकाशवर्धक नली का अनुप्रस्थ काट और विद्युत् परिपथ दिखाया गया है जिसे विशेष ढंग से व्यवस्थित अनेक प्रकाश नलियों का समुच्चय माना जा सकता है। प्रकाशवर्धक नलियों के मध्यवर्ती डाइनोडों को ऐसे पदार्थ से आच्छादित किया जाता है जो उसके पृष्ठ पर एकत्रित प्रत्येक इलेक्ट्रॉन के बदले अनेक (2 से 5) इलेक्ट्रॉन उत्सर्जित करते हैं। डाइनोड इस प्रकार व्यवहार करते हैं कि पहले चरण का ऐनोड, दूसरे का कैथोड होता है। पहले कैथोड से उत्क्षिप्त प्राथमिक इलेक्ट्रॉन (e_1) पहले डाइनोड (e_2) के छोटे से क्षेत्र में प्रहार करते हैं जो पहले कैथोड (e_1) से लगभग 90 V अधिक धनात्मक होता है। प्रकाश उत्सर्जक पदार्थ से आच्छादित डाइनोड अपने पृष्ठ पर एकत्रित प्रत्येक इलेक्ट्रॉन के बदले 2 से 5 द्वितीयक इलेक्ट्रॉन उत्क्षिप्त करता है। ये द्वितीयक इलेक्ट्रॉन दूसरे डाइनोड (e_3) पर प्रहार करते हैं और इस प्रकार प्रत्येक चरण में प्रक्रिया प्रवर्धित होती जाती है। इलेक्ट्रॉन प्रवर्धन डाइनोडों पर होता है और 9 डाइनोडों वाली नली के लिए कुल प्रवर्धन 2^9 और 5^9 के बीच होता है।

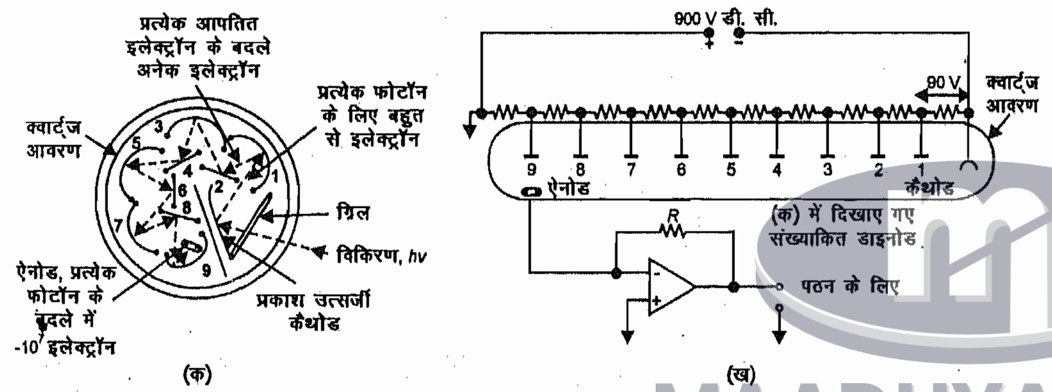

MAADHYAM IAS

चित्र 19.18: प्रकाशवर्धक नली (क) अनुप्रस्थ काट (ख) विद्युत् परिपथ

19.4.2 कुछ प्ररूपी यंत्र

पिछले अनुच्छेद में जिन यंत्रीय घटकों का उल्लेख किया गया है उन्हें विकिरण के अवशोषण के माप के लिए विभिन्न व्यापारिक यंत्र बनाने के उद्देश्य से अनेक विधियों से संयुक्त किया जा सकता है। सभी अवशोषण मापों में नमूने में से प्रेषित विकिरण की तीव्रता की संदर्भ (विलायक/रिक्त) की तीव्रता से तुलना की जाती है। इसलिए निरपेक्ष माप के स्थान पर आपेक्षिक माप किए जाते हैं।

एकल-किरणपुंज यंत्र में संदर्भ और नमूने को क्रमश: एक वर्णी किरणपुंज के पथ पर रखा जाता है। द्वि-किरणपुंज यंत्र में एकवर्णी किरणपुंज को प्रकाशिक साधनों द्वारा दो समान तीव्रताओं में विभाजित किया जाता है। एक किरणपुंज संदर्भ में से और दूसरा नमूने में से गुजरता है। कुछ उन्नत स्पेक्ट्रम प्रकाशमापियों में, स्वचालन में प्रयुक्त सूक्ष्म संसाधित्रों की मदद से, विश्लेषण के परिणामों को (सान्द्रता मात्रकों में) और अन्य सूचनाओं सीधे प्राप्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए प्रोग्राम वाले सांख्यिकीय परिकलित्र से युक्त एक अंकीय स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी, से आंकड़ों का संचय, प्रथम और द्वितीय व्युत्पन्न स्पेक्ट्रम, शिखर स्थिति और शिखर क्षेत्र आदि प्राप्त हो सकते हैं। यंत्र का चयन, कार्य के प्रकार तथा यंत्र की कीमत पर निर्भर करता है।

इस अनुच्छेद में कुछ सरल यंत्रों का वर्णन किया जाएगा जिन्हें विद्यार्थी इस स्तर पर प्रयुक्त करते हैं।

फिल्टर प्रकाशमापी

फिल्टर प्रकाशमापी अपेक्षाकृत सस्ता और सरल यंत्र है जो दृश्य परास में फिल्टरों के समुच्चय के चारों ओर काम करता है। ऐसे यंत्र अनेक विधियों के लिए, विशेष रूप से विस्तृत अवशोषण बैंडों वाले अवशोषक तंत्रों के लिए, उपयुक्त रहते हैं। फिल्टर प्रकाशमापी दो प्रकार के होते हैं– एकल-किरणपुंज और द्वि-किरणपुंज। पहले एकल-किरणपुंज फिल्टर प्रकाशमापी की चर्चा की जाएगी।

एकल-किरणपुंज फिल्टर प्रकाशमापी

इसमें प्रकाश स्रोत, S, जो सामान्य बिजली का बल्ब होता है, समांतर किरण पुंज उत्पन्न करने के लिए संग्राही लेन्स, L; उपयुक्त तरंगदैर्घ्य बैंड उत्पन्न करने के लिए फिल्टर, F; द्रोणिका, C; संसूचक के रूप में प्रकाश वोल्टीय सेल, D; तथा संकेत सूचक के रूप में गैल्वेनोमीटर होता है (देखिए चित्र 19.19)।

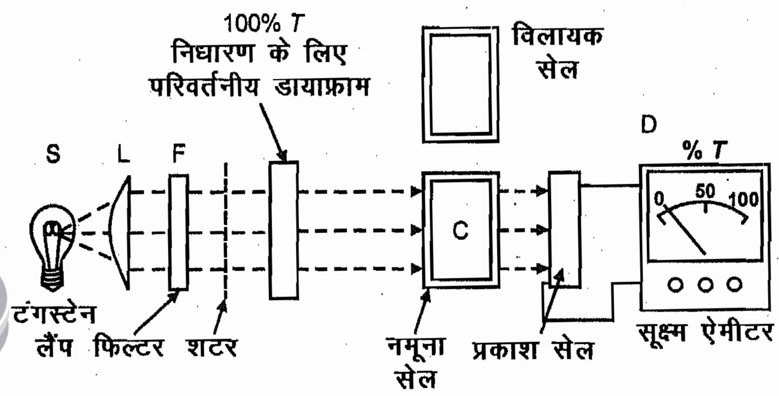

चित्र 19.19: एकल किरणपुंज फिल्टर प्रकाशमापी का व्यवस्था-आरेख

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

प्रकाश-बल्ब से निकलकर विकिरण उत्तल लेन्स से गुजरता है। उत्तल लेन्स इस प्रकार स्थित रहता है कि प्रकाश बल्ब से उसकी दूरी, लेन्स की फोकस दूरी के बराबर हो। इस व्यवस्था से विकिरण के समांतर किरणपुंज प्राप्त होते हैं। समांतर किरणपुंज, फिल्टर पर पड़ता है, जिसमें से तरंगदैर्घ्य का संकीर्ण बैन्ड ही गुज़र सकता है। फिल्टरित विकिरण को नमूना सेल (द्रोणिका) से गुजारा जाता है तथा प्रकाश वोल्टीय सेल द्वारा प्रेषित विकिरण शक्ति का आकलन किया जाता है। प्रकाश वोल्टीय सेल का काम फोटॉनों की ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करना है। इससे गैल्वेनोमीटर की सुई पैमाने पर घूमती है। पैमाना, प्रतिशत प्रेषणांक अथवा अवशोषणांक के लिए अंशांकित रहता है।

नमूना विलयन के अवशोषणांक और प्रेषणांक मापने का कार्य निम्नलिखित चरणों में होता है:

1) पावर स्विच द्वारा यंत्र को चालू करें और 15 मिनट तक यंत्र को गरम होने दें।
2) यंत्र में उपयुक्त फिल्टर को यथास्थान निविष्ट करें।
3) द्रोणिका में रिक्त (अथवा विलायक) को भर दें और उसे प्रकाश पथ में उचित स्थिति में रख दें।
4) गैल्वेनोमीटर पैमाने की सुई को 100% T (अथवा शून्य A) चिन्ह पर समंजित करें।
5) द्रोणिका में से विलायक/रिक्त को निकाल दें और उसमें नमूना विलयन भरकर उसे प्रकाश पथ में उचित स्थिति में रख दें।
6) मीटर को पढ़ें और प्रतिशत प्रेषणांक/अवशोषणांक नोट कर लें।

सरल संरचना, कम कीमत और आसान परिचालन, एकल किरण-पुंज फिल्टर प्रकाशमापी के लाभ हैं किन्तु गैल्वेनोमीटर के छोटे पैमाने (लगभग 10 सेमी) के कारण वह कम यथार्थ और कम सुग्राही ही होता है जो उसकी कमियां हैं।

द्वि-किरणपुंज फिल्टर प्रकाशमापी

द्वि-किरणपुंज फिल्टर प्रकाशमापी में प्रकाश किरणपुंज दो भागों में विभाजित रहता है और संसूचक के रूप में दो प्रकाश सेलों का उपयोग किया जाता है। द्वि-किरणपुंज फिल्टर प्रकाशमापी का व्यवस्था-आरेख चित्र 19.20 में दिया गया है। S प्रकाश स्रोत है जो टंगस्टेन तंतु लैंप है। L, लेन्स है जिसे स्रोत से फोकस-लंबाई की दूरी पर रखा गया है। संमातर किरण-पुंज, लेन्स के बाद फिल्टर F, पर गिरता है। फिल्टर F में से तरंगदैर्घ्य का केवल एक संकीर्ण बैन्ड ही गुजर सकता है। फिल्टरित विकिरण को अर्धरजतित दर्पण पर गिरने दिया जाता है। इससे आरंभिक किरणपुंज दो भागों में विभाजित हो जाता है। एक भाग द्रोणिका, C_1, से गुजर कर प्रकाश वोल्टीय सेल, D_1 पर गिरता है और दूसरा भाग द्रोणिका, C_2 से होते हुए समान प्रकाश वोल्टीय सेल, D_2 पर गिरता है। P_1 और P_2 दो विभवमापी तथा G गैल्वेनोमीटर है जिसका उपयोग शून्य संसूचक के रूप में किया जाता है। P_1 को प्रतिशत प्रेषणांक मात्रकों में अंशांकित किया जाता है। K_1 और K_2 दो कुंजिया हैं।

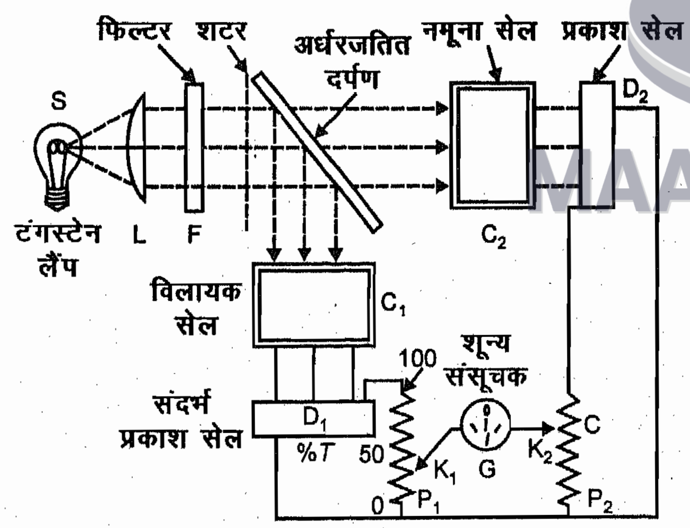

चित्र 19.20: प्ररूपी द्वि-किरणपुंज फिल्टर प्रकाशमापी का व्यवस्था आरेख

MAADHYAM IAS

कार्यविधि

1. यंत्र को चालू करें और 15 मिनट तक गरम होने दें।
2. उपयुक्त फिल्टर को यंत्र में यथास्थान रखें।
3. द्रोणिकाओं C_1 और C_2 में क्रमशः रिक्त और विलयन को भरें और प्रकाश पथ पर रख दें।
4. K_1 को विभवमापी P_1 के पैमाने में 100% T पर रखें और P_2 पर K_2 को घुमाएं ताकि गैल्वेनोमीटर, G, में पठनांक शून्य हो।
5. नमूना-विलयन को द्रोणिका C_2 में भरें और प्रकाश पथ में रख दें।
6. K_2 की स्थित को बिना बदले, K_1 को विभवमापी, P_1 के पैमाने पर घुमाएं ताकि गैल्वेनोमीटर का पठन पुनः शून्य हो जाए। P_1 का % T नोट कर लें।
   एकल-किरणपुंज यंत्र की तुलना में द्वि-किरणपुंज फिल्टर फोटोमापी के निम्नलिखित लाभ हैं।

(i) क्योंकि प्रकाश किरण-पुंज दो भागों में विभाजित किया जाता है और दो समान संसूचकों पर गिरने दिया जाता है, इसलिए स्रोत के घट बढ़ का (यदि हो) पठन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा जिसे दो विभवमापियों को संतुलित करने के बाद नोट किया जाता है।

(ii) क्योंकि गैल्वेनोमीटर का उपयोग शून्य संसूचक के रूप में किया जाता है अतः गैल्वेनोमीटर की सुई के हिलने में कोई विद्युत् धारा प्रयुक्त नहीं होगी, जिससे एकल किरणपुंज यंत्र की अपेक्षा अधिक यथार्थ परिणाम प्राप्त होंगे।

(iii) क्योंकि पठनांक को बड़े विभवमापी के पैमाने पर नोट किया जाता है अतः सुग्राहिता अधिक होती है।

स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी

स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी, फिल्टर प्रकाशमापी से, अधिक सुग्राही यंत्र हैं। स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी, एकवर्णी प्रकाश और प्रकाशमापी का संयोजन होता है। प्रकाश को विवर्तन ग्रेटिंग और द्वारक युक्ति (slit device) द्वारा एक वर्णी बनाया जाता है। स्पेक्ट्रम प्रकाशमापियों के अनेक डिजाइन बाज़ार में उपलब्ध हैं। यहां बाउश-लॉम स्पेक्ट्रॉनिक-20 स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी पर विचार किया जाएगा जो सरल और पर्याप्त यथार्थ होता है।

बाउश लॉम स्पेक्ट्रॉनिक-20 के प्रचालन लक्षण चित्र 19.21 (क) में और प्रकाशिक व्यवस्था-आरेख चित्र 19.21 (ख) में दिखाया गया है। यह एकल किरणपुंज स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी होता है जो 340–950 नैनोमीटर के बीच काम करता है। मानक प्रकाश नली के साथ मूल परास 340 से 600 नैनोमीटर होता है। इसे लाल फिल्टर संयुक्त करके तथा मानक प्रकाशनली को लाल प्रकाश नली से प्रतिस्थापित करके 950 नैनोमीटर तक बढ़ाया जा सकता है। यंत्र का पैमाना, प्रकाशनली के प्रचालन-परास के अनुरूप, रंग-कोडित होता हे। यह मूल 340 – 600 नैनोमीटर परास के लिए काली श्रेणी का तथा वैकल्पिक लाल फोटोनली/फिल्टर संयोजन के 600 – 950 नैनोमीटर परास के लिए लाल श्रेणी का होता है। पठनांक सीधे मीटर से अवशोषणांक अथवा प्रेषणांक के रूप में प्राप्त किए जाते हैं।

MAADHYAM IAS

कार्यविधि

1. 230 V ए०सी० लाइन पर परिचालि करने के लिए यंत्र को प्लग करें।

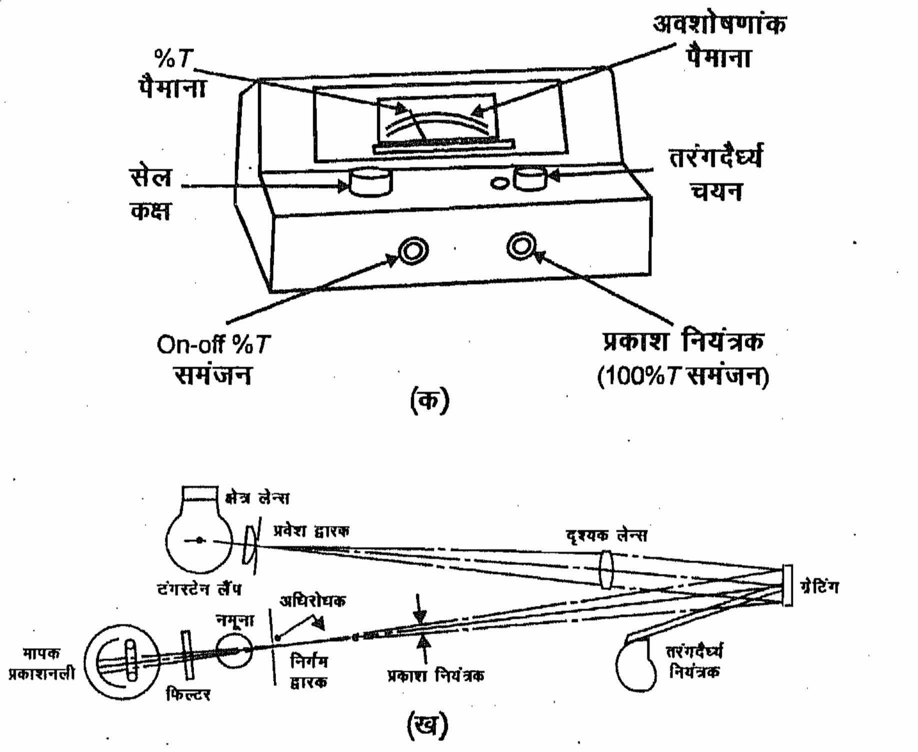

चित्र 19.21: (क) बाउश-लॉम स्टेक्ट्रॉनिक-20 स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी (ख) बाउश लॉम स्पेक्ट्रॉनिक-20 स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी का व्यवस्था प्रकाशिक विन्यास

2. यंत्र को चालू करें और 15 मिनट तक गरम होने दें।
3. तरंगदैर्घ्य चयन घुंडी से तरंगदैर्घ्य का चयन करें।
4. विश्लेषण विधि के लिए उचित पथ लंबाई (प्राय: 1 cm) के अनुरूप द्रोणिकाओं का चयन करें। सभी रिक्त, मानक और नमूनों के लिए समान पथ लंबाई की द्रोणिकाओं का प्रयोग करें।
5. एक द्रोणिका में रिक्त (अथवा विलयन) को उस पर बने निशान तक भरें। विलयन का आयतन पर्याप्त होना चाहिए जिससे वह नमूना-कक्ष से गुजर रहे प्रकाश किरणपुंज को आच्छादित करने के लिए पर्याप्त हो।
6. नमूना-कक्ष के आवरण को खोलें और रिक्त से भरी द्रोणिका को नमूना-कक्ष में निविष्ट करें।
7. नमूना-कक्ष के आवरण को बंद कर दें।
8. बाईं ओर स्थित नियंत्रण घुंडी से, रिक्त के लिए, पैमाने पर शून्य अवशोषणांक अथवा 100% प्रेषणांक सेट करें।
9. नमूना-कक्ष से रिक्त को निकाल दें।
10. अनुरूप द्रोणिकाओं में मानक विलयनों को भरें और एक के बाद एक नमूना-कक्ष में निविष्ट करें। प्रत्येक मानक विलयन के लिए अवशोषणांक मान पढ़कर लिख लें।
11. अवशोषणांक को y-अक्ष में तथा प्रत्येक मानक विलयन की सान्द्रता को x-अक्ष में लेकर अंशांकन वक्र आलेखित करें।
12. जिस नमूने की माप करनी हो उसे अनुरूप द्रोणिका में भर कर नमूना-कक्ष में

MAADHYAM IAS

कार्यविधि

1. यंत्र को चालू करें और 15 मिनट तक गरम होने दें।
2. उपयुक्त फिल्टर को यंत्र में यथास्थान रखें।
3. द्रोणिकाओं C_1 और C_2 में क्रमशः रिक्त और विलयन को भरें और प्रकाश पथ पर रख दें।
4. K_1 को विभवमापी P_1 के पैमाने में 100% T पर रखें और P_2 पर K_2 को घुमाएं ताकि गैल्वेनोमीटर, G, में पठनांक शून्य हो।
5. नमूना-विलयन को द्रोणिका C_2 में भरें और प्रकाश पथ में रख दें।
6. K_2 की स्थित को बिना बदले, K_1 को विभवमापी, P_1 के पैमाने पर घुमाएं ताकि गैल्वेनोमीटर का पठन पुनः शून्य हो जाए। P_1 का % T नोट कर लें।
   एकल-किरणपुंज यंत्र की तुलना में द्वि-किरणपुंज फिल्टर फोटोमापी के निम्नलिखित लाभ हैं।

(i) क्योंकि प्रकाश किरण-पुंज दो भागों में विभाजित किया जाता है और दो समान संसूचकों पर गिरने दिया जाता है, इसलिए स्रोत के घट बढ़ का (यदि हो) पठन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा जिसे दो विभवमापियों को संतुलित करने के बाद नोट किया जाता है।

(ii) क्योंकि गैल्वेनोमीटर का उपयोग शून्य संसूचक के रूप में किया जाता है अतः गैल्वेनोमीटर की सुई के हिलने में कोई विद्युत् धारा प्रयुक्त नहीं होगी, जिससे एकल किरणपुंज यंत्र की अपेक्षा अधिक यथार्थ परिणाम प्राप्त होंगे।

(iii) क्योंकि पठनांक को बड़े विभवमापी के पैमाने पर नोट किया जाता है अतः सुग्राहिता अधिक होती है।

स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी

स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी, फिल्टर प्रकाशमापी से, अधिक सुग्राही यंत्र हैं। स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी, एकवर्णी प्रकाश और प्रकाशमापी का संयोजन होता है। प्रकाश को विवर्तन ग्रेटिंग और द्वारक युक्ति (slit device) द्वारा एक वर्णी बनाया जाता है। स्पेक्ट्रम प्रकाशमापियों के अनेक डिजाइन बाज़ार में उपलब्ध हैं। यहां बाउश-लॉम स्पेक्ट्रॉनिक-20 स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी पर विचार किया जाएगा जो सरल और पर्याप्त यथार्थ होता है।

बाउश लॉम स्पेक्ट्रॉनिक-20 के प्रचालन लक्षण चित्र 19.21 (क) में और प्रकाशिक व्यवस्था-आरेख चित्र 19.21 (ख) में दिखाया गया है। यह एकल किरणपुंज स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी होता है जो 340–950 नैनोमीटर के बीच काम करता है। मानक प्रकाश नली के साथ मूल परास 340 से 600 नैनोमीटर होता है। इसे लाल फिल्टर संयुक्त करके तथा मानक प्रकाशनली को लाल प्रकाश नली से प्रतिस्थापित करके 950 नैनोमीटर तक बढ़ाया जा सकता है। यंत्र का पैमाना, प्रकाशनली के प्रचालन-परास के अनुरूप, रंग-कोडित होता है। यह मूल 340 – 600 नैनोमीटर परास के लिए काली श्रेणी का तथा वैकल्पिक लाल फोटोनली/फिल्टर संयोजन के 600 – 950 नैनोमीटर परास के लिए लाल श्रेणी का होता है। पठनांक सीधे मीटर से अवशोषणांक अथवा प्रेषणांक के रूप में प्राप्त किए जाते हैं।

कार्यविधि

1. 230 V ए०सी० लाइन पर परिचालित करने के लिए यंत्र को प्लग करें।

MAADHYAM IAS

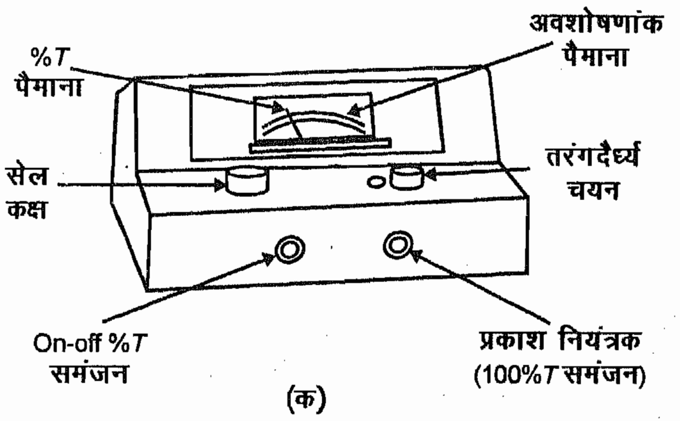

(क)

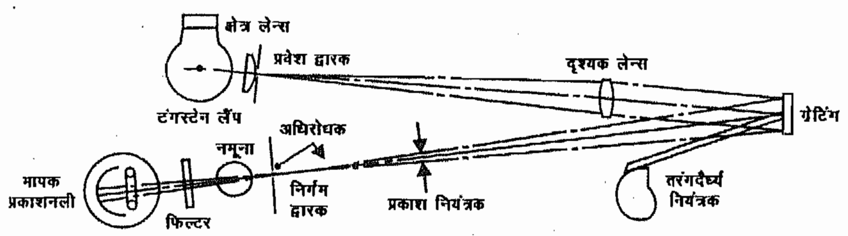

(ख)

चित्र 19.21: (क) बाउश-लॉम स्टेक्ट्रॉनिक-20 स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी (ख) बाउश लॉम स्पेक्ट्रॉनिक-20 स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी का व्यवस्था प्रकाशिक विन्यास

2. यंत्र को चालू करें और 15 मिनट तक गरम होने दें।
3. तरंगदैर्घ्य चयन घुंडी से तरंगदैर्घ्य का चयन करें।
4. विश्लेषण विधि के लिए उचित पथ लंबाई (प्राय: 1 cm) के अनुरूप द्रोणिकाओं का चयन करें। सभी रिक्त, मानक और नमूनों के लिए समान पथ लंबाई की द्रोणिकाओं का प्रयोग करें।
5. एक द्रोणिका में रिक्त (अथवा विलयन) को उस पर बने निशान तक भरें। विलयन का आयतन पर्याप्त होना चाहिए जिससे वह नमूना-कक्ष से गुजर रहे प्रकाश किरणपुंज को आच्छादित करने के लिए पर्याप्त हो।
6. नमूना-कक्ष के आवरण को खोलें और रिक्त से भरी द्रोणिका को नमूना-कक्ष में निविष्ट करें।
7. नमूना-कक्ष के आवरण को बंद कर दें।
8. बाईं ओर स्थित नियंत्रण घुंडी से, रिक्त के लिए, पैमाने पर शून्य अवशोषणांक अथवा 100% प्रेषणांक सेट करें।
9. नमूना-कक्ष से रिक्त को निकाल दें।
10. अनुरूप द्रोणिकाओं में मानक विलयनों को भरें और एक के बाद एक नमूना-कक्ष में निविष्ट करें। प्रत्येक मानक विलयन के लिए अवशोषणांक मान पढ़कर लिख लें।
11. अवशोषणांक को y-अक्ष में तथा प्रत्येक मानक विलयन की सान्द्रता को x-अक्ष में लेकर अंशांकन वक्र आलेखित करें।
12. जिस नमूने की माप करनी हो उसे अनुरूप द्रोणिका में भर कर नमूना-कक्ष में

MAADHYAM IAS

निविष्ट करें। अवशोषणांक मान को पढ़कर, लिख लें। अंशांकन वक्र से, नमूने के अवशोषणांक मान के संगत सान्द्रता पढ़ें।

19.4.3 वैश्लेषिक तकनीकें

इस भाग में पराबैंगनी-दृश्य स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी विश्लेषण में अपनाई जाने वाली सामान्य प्रक्रियाओं का अध्ययन किया जाएगा। बियर-लैम्बर्ट नियम के आधार पर पदार्थ की मात्रा ज्ञात की जा सकती है। किसी यौगिक द्वारा अवशोषित प्रकाश-विकिरण की मात्रा का उस यौगिक की सान्द्रता से सीधा संबंध होता है। सामान्य माप प्रक्रिया में निम्नलिखित चरण होते हैं :

1. अवशोषक स्पीशीज बनाने के लिए नमूना तैयार करना।
2. तरंगदैर्घ्य का चयन करना।
3. अंशांकन आलेख तैयार करना।

अवशोषक स्पीशीज बनाने के लिए नमूना तैयार करना

पराबैंगनी-दृश्य विधि द्वारा सामान्यतया 200 से 800 नैनोमीटर तरंगदैर्घ्य परास में अवशोषण करने वाले नमूनों का विश्लेषण किया जाता है। किन्तु आमतौर पर माप, दृश्य परास में की जाती है। जिस पदार्थ का विश्लेषण किया जा रहा हो कभी-कभी वह दृश्य परास में विशेष तीव्र अवशोषण करता है किन्तु बहुधा उसमें कोई ऐसा अभिकर्मक मिलाया जाता है जो उसके साथ आवश्यक उच्च अवशोषकता का व्युत्पन्न अथवा संकुल बनाए।

अभिकर्मक का चयन करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए।

i) अभिकर्मक को वरणात्मकत: उसी पदार्थ के साथ अभिक्रिया करनी चाहिए जिसका निर्धारण करना हो।

ii) यदि पदार्थ की पहचान वर्णमितीयत: करनी हो तो ऐसी परिस्थितियों का चयन करें जिनमें अनुकूलतम वर्ण प्राप्त हो।

iii) निर्मित उत्पाद अथवा संकुलन की उच्च मोलर अवशोषकता होनी चाहिए और उसे स्थायी होना चाहिए।

तरंगदैर्घ्य का चयन

साधारण तौर पर मात्रात्मक विश्लेषण $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ पर किया जाता है क्योंकि इससे विश्लेषण में अधिकतम सुग्राहिता प्राप्त होती है। अवशोषण-स्पेक्ट्रम के आलेखन द्वारा $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ का निर्धारण किया जाता है।

MAADHYAM IAS

स्पेक्ट्रम : अवशोषणांक के सम्मुख तरंगदैर्घ्य के आलेख को अवशोषण स्पेक्ट्रम कहते हैं। सामान्यतया तरंगदैर्घ्य को भुज और अवशोषणांक को कोटि में लिया जाता है। सभी पराबैंगनी दृश्य स्पेक्ट्रम प्रकाशमापियों में तरंगदैर्घ्य पैमाना होता है जो नैनोमीटर अथवा ऐंगस्ट्राम मात्रकों में अंशांकित रहता है।

समुचित तरंगदैर्घ्य : एकल अवशोषक स्पीशीज के लिए आलेखित अवशोषण स्पेक्ट्रम (ऊपर वर्णित A के सम्मुख λ के आलेख) से प्राप्त वक्र में एक विशिष्ट तरंगदैर्घ्य पर अधिकतम अवशोषणांक-मान होगा। इस तरंगदैर्घ्य को $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ कहते हैं। इस तरंगदैर्घ्य पर सुग्राहिता, अर्थात् अवशोषक स्पीशीज की प्रति इकाई सान्द्रता परिवर्तन के लिए अवशोषणांक परिवर्तन, अधिकतम होता है। निर्धारण के लिए $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ उपयुक्त तरंगदैर्घ्य होता है किन्तु वह स्पेक्ट्रम

के उस भाग में स्थित नहीं होना चाहिए जहां तरंगदैर्घ्य में बहुत कम परिवर्तन से अवशोषणांक में बहुत अधिक परिवर्तन हो जाए। ऐसी परिस्थितियों में $\lambda_{\text{इष्टतम}}$ (λ_{opt}) अर्थात् इष्टतम (optimum) तंरगदैर्घ्य का उपयोग किया जाना चाहिए। चित्र 19.22 (क) में स्पेक्ट्रम में उपयुक्त वक्रता के साथ केवल एक उच्चिष्ठ दिखाई देता है तथा $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$, $\lambda_{\text{इष्टतम}}$ भी है।

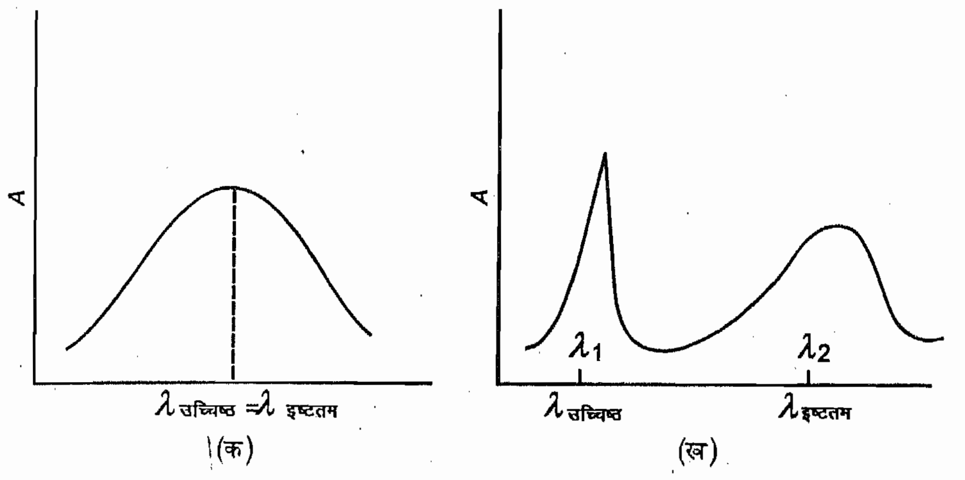

चित्र 19.22: निर्धारण के लिए समुचित तरंगदैर्घ्य का स्थान ज्ञात करने के लिए अवशोषण स्पेक्ट्रम

चित्र 19.22 (ख) में $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ (λ_1) तीक्ष्ण शिखर के रूप में है। उसमें तरंगदैर्घ्य में अल्प परिवर्तन से अवशोषणांक में बहुत अधिक परिवर्तन होगा। इसलिए वह स्पेक्ट्रम प्रकाशमितीय निर्धारण के लिए उचित तरंगदैर्घ्य नहीं है। इसमें निर्धारण के लिए उपयुक्त वक्रता वाले λ_2 का समुचित तरंगदैर्घ्य ($\lambda_{\text{इष्टतम}}$) के रूप में चयन किया जाना चाहिए यद्यपि $\lambda_{\text{इष्टतम}}$, $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ नहीं है।

अंशांकन आलेख को तैयार करना

यंत्र को, एक वर्णित्र के साथ इष्टतम तरंगदैर्घ्य के लिए सेट करने के बाद अवशोषणांक मानों के लिए आलेख तैयार किया जाता है। ये अवशोषणांक मान ज्ञात सान्द्रताओं के विलयनों को क्रमशः बढ़ते क्रम में निविष्ट करने से प्राप्त होते हैं। अवशोषणांक सम्मुख सान्द्रता के आरेखन से प्राप्त आलेख (देखिए चित्र 19.23 क) को अंशांकन आलेख कहते हैं। मूलत: जहां बियर-नियम का पालन होता है वहां अवशोषणांक सम्मुख सान्द्रता के आरेखन से प्राप्त आलेख में ऋजु-रेखा प्राप्त होती है। एक निश्चित सान्द्रता-परास के बाद यह अवशोषणांक सम्मुख सान्द्रता आलेख से प्राप्त ऋजु रेखा आलेख में विचलन हो जाता है। ऐसे विचलन से बियर-नियम के लिए असमविन्यास क्षेत्र प्राप्त होता है।

अज्ञात विलयन की सान्द्रता मापने के लिए उसे इस प्रकार समंजित करना चाहिए जिससे ऐसे सान्द्रता परास प्राप्त हों जिनमें बियर-नियम का पालन हो सके। अज्ञात विलयन का अवशोषणांक मापने के बाद, अंशांकन आलेख चित्र 19.23 (ख) से उसकी सान्द्रता सीधे पढ़ी जा सकती है।

अज्ञात विलयन की सान्द्रता, अनुपात विधि द्वारा भी परिकलित की जा सकती है जबकि उसके अवशोषणांक की ज्ञात सान्द्रता के विलयन के अवशोषणांक के साथ तुलना की जाती है; जैसा कि नीचे दिया गया है,

$$c_{\text{अज्ञात}} = \frac{c_{\text{ज्ञात}} \times A_{\text{अज्ञात}}}{A_{\text{ज्ञात}}}$$

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

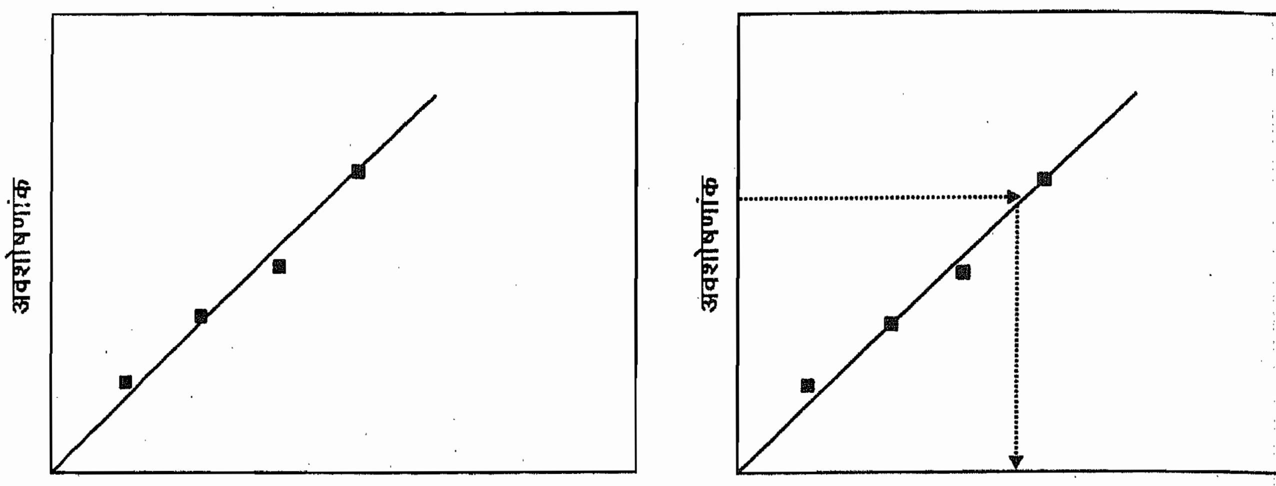

चित्र 19.23 (क) अंशांकन आलेख (ख) अज्ञात नमूने की सान्द्रता ज्ञात करना

19.4.4 जल, मृदा और वायु में पदार्थों का निर्धारण

रोजमर्रा के काम के लिए और साधारणतया न्यून सान्द्रता पर्यावरणी पहचान के लिए पराबैंगनी-दृश्य स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी विधि सर्वाधिक प्रयुक्त यंत्रीय विधि है। जल और मृदा में धातु आयनों की पहचान के लिए सामान्यत: आयनों का डाइथाइजोन अथवा डाइएथिलडाइथायो कार्बामेट आदि वर्णमूलक अभिकर्मक के साथ उपचार करके उन्हें रंगीन स्पीशीज में परिवर्तित किया जाता है। सारणी 19.3 में ऐसे धातु अभिकर्मक युग्म दिए गए हैं जिनका जल और मृदा में उपस्थित धातु-आयनों की पहचान के लिए उपयोग किया जाता है। कार्बनिक यौगिकों के साथ रंगीन व्युत्पन्न बनाकर भी अकार्बनिक ऋणायनों और अमोनिया की पहचान की जा सकती हैं, जैसे जाइलेनॉल के साथ नाइट्रेट (देखिए सारणी 19.4)। वायु में गैसों की पहचान के लिए, पहले उन्हें विशेष अभिकर्मक में अवशोषित करना चाहिए और फिर उनकी अभिक्रिया से रंजक द्रव्य प्राप्त होना चाहिए जिसे स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी में मापा जा सके (सारणी 19.5), जैसे नाइट्रोजन के ऑक्साइडों के निर्धारण के लिए डाइऐज़ो रंजक।

ऋणायनी पृष्ठ सक्रियक, धनायनी सक्रियक, फीनॉल आदि कार्बनिक अपद्रव्यों की पहचान रंगीन रंज़क अणुओं के साथ व्युत्पन्न बनाकर अथवा युग्म बनाकर की जाती है।

ऋणायनी पृष्ठ सक्रियक : मेथिलीन ब्लू

धनायनी पृष्ठ सक्रियक : ब्रोमोफीनॉल ब्लू

फीनॉल : 4 ऐमीनों एंटीपाइरीन

MAADHYAM IAS

सारणी 19.3: धातुओं के स्पेक्ट्रम प्रकाशमितीय निर्धारण के लिए प्रयुक्त अभिकर्मक

धातु	अभिकर्मक	तरंगदैर्घ्य (नैनोमीटर)
ऐलुमिनियम	क्रोम ऐज़ूरॉल S	545
	8-हाइड्रॉक्सी क्विनोलीन	390
एंटिमनी	आयोडीन	425
आर्सेनिक	डाइएथिलडाइथायोकार्बामेट	515
बिस्मथ	डाइथाइजोन	490

	आयोडाइड	465
	जाइलेनॉल आरेन्ज	450
कैडमियम	कैडिऑन	480
	डाइथाइजोन	520
क्रोमियम	डाइफेनिल कार्बाजाइड	545
कोबाल्ट	नाइट्रोसोनैफ्थॉल	415
	4-(2-पिरीडिलएज़ो) रिसॉर्सिनॉल (पी॰ए॰आर॰)	510
	थायोसायनेट	620
तांबा	डाइएथिल डाइथायोकार्बमिट	436
	डाइथाइजोन	550
लोहा	1, 10 फीनेन्थ्रोलीन	512
	थायोसायनेट	495
सीसा	डाइथाइजोन	520
	4-(2-पिरीडिलएज़ो) रिसॉर्सिनॉल (पी॰ए॰आर॰)	520
मैंगनीज	पिरीडिलएज़ो-2-नैफ्थॉल (पी॰ए॰एन॰)	564
पारा	डाइथाइजोन	485
मॉलिब्डेनम	थायासायनेट	470
निकेल	डाइमेथिलग्लाइऑक्सिम	400
सिलिनियम	डाइऐमीनोबेन्जीडीन	420
टेलुरियम	बिस्मथिऑल II	330
वैनेडियम	8-हाइड्रॉक्सीक्विनोलीन	550
जस्ता	डाइथाइजोन	538
	पिरीडिलएज़ो-2-नैफ्थॉल (पी॰ए॰एन॰)	560

सारणी 19.4: ऋणायनों और अमोनियम के स्पेक्ट्रम प्रकाशमितीय निर्धारण के लिए प्रयुक्त अभिकर्मक

ऋणायन	अभिकर्मक	तरंगदैर्घ्य (नैनोमीटर)
अमोनियम	हाइपोक्लोराइट/फीनॉल	625
ब्रोमाइड	हाइपोक्लोराइट/फीनॉल रेड	580
क्लोराइड	मर्करी थायोसायनेट/Fe(III)	480
क्लोरीन	ऑर्थोटॉलिडीन	625
सायनाइड	क्लोरैमीन-T/पिरिडीन/बार्बिट्यूरिक अम्ल	580
आयोडाइड	ब्रोमीन/स्टार्च	590
नाइट्रेट	3, 4 जाइलेनॉल फीनॉलडाइसल्फोनिक अम्ल	410
नाइट्राइट	नैफ्थिलऐमीन सल्फोनिक अम्ल के साथ सल्फैनिलिक अम्ल	520
फॉस्फेट	मॉलिब्डेट/बैनेडेट (यलो)	400
	मॉलिब्डेनम ब्लू	780

MAADHYAM IAS

सल्फेट	बेरियम क्लोरैनिलेट	530
सल्फाइड	डाइमेथिलऐमीनोऐनिलीन/Fe (III)	662

सारणी 19.5: गैसों के स्पेक्ट्रम प्रकाशमितीय निर्धारण के लिए प्रयुक्त अभिकर्मक

गैस	अभिकर्मक	तंरगदैर्घ्य (नैनोमीटर)
ओजोन	आयोडाइड/स्टार्च	590
हाइड्रोजन सल्फाइड	जिंक ऐसीटेट, फिर डाइमेथिल ऐमीनो ऐनिलीन/Fe (III)	662
नाइट्रोजन के आक्साइड	नैफ्थिलऐमीन सल्फोनिक अम्ल के साथ सल्फैनिलिक अम्ल	520
सल्फर डाइऑक्साइड	टेट्राक्लोरोमर्क्यूरेट, फिर पैरेरोसेनिलीन/फॉर्मेल्डिहाइड	545
फॉर्मेल्डिहाइड	फेनिलहाइड्रैजीन/फेरीसायनाइड	515

बोध प्रश्न 5

किसी पदार्थ के विश्लेषण की स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी विधि में सम्मिलित प्ररूपी प्रक्रिया के चरणों को लिखिए।

....

....

....

19.5 उत्सर्जन विधियां (Emission Methods)

आप सोडियम के ज्वाला परीक्षण से परिचित होंगे जिसमें पीला प्रकाश उत्सर्जित होता है। साथ ही आप अन्य क्षार और क्षारीय मृदा धातुओं के ज्वाला परीक्षण से भी परिचित होंगे। इसके अलावा जब अनेक अन्य धात्विक तत्वों का समुचित उत्तेजन किया जाता है तो वे भी लाक्षणिक तरंगदैर्घ्यों वाले विकिरणों का उत्सर्जन करते हैं। उचित नियंत्रण-अवस्थाओं में किसी विशिष्ट तरंगदैर्घ्य पर उत्सर्जित विकिरण की तीव्रता का उपस्थित तत्व की मात्रा के साथ भी संबंध स्थापित किया जा सकता है। इस प्रकार उत्सर्जन विधियों द्वारा मात्रात्मक और गुणात्मक दोनों प्रकार के निर्धारण किए जा सकते हैं। उत्सर्जन स्पेक्ट्रमों का उपयोग करने वाली विभिन्न वैश्लेषिक विधियां प्रयुक्त उत्तेजन विधि, नमूने के स्वरूप (ठोस अथवा द्रव) और उत्पन्न स्पेक्ट्रमों की पहचान करने तथा रिकार्ड करने की विधि पर निर्भर करती हैं। इस वर्ग की विधियां हैं– ज्वाला उत्सर्जन प्रकाश स्पेक्ट्रममिति, (ज्वाला प्रकाशमिति), प्रेरण युग्मित प्लाज्मा, परमाणु उत्सर्जन स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति आदि। इनमें से ज्वाला प्रकाशमिति का अधिक उपयोग होता है। इस विधि का उपयोग सोडियम, पोटैशियम, कैल्सियम आदि क्षार धातुओं अथवा क्षार मृदा धातुओं की सान्द्रता निर्धारित करने के लिए जल और मृदा के विश्लेषण में किया जाता है।

MAADHYAM IAS

19.5.1 ज्वाला प्रकाशमिति (Flame photometry)

इस तकनीक में परमाणुओं को उत्तेजित करने के लिए ज्वाला का उपयोग किया जाता है। जब आयन युक्त विलयन की ज्वाला में से फुहार की जाती है तो प्रक्रिया निम्नलिखित चरणों में होती है :

i) विलायक वाष्पित हो जाता है और लवण के कण शेष रह जाते हैं।

ii) फिर लवण वाष्पित होकर परमाणुओं में वियोजित हो जाता है।

iii) कुछ परमाणु, ज्वाला द्वारा उत्तेजित हो जाते हैं।

iv) उत्तेजित परमाणु, अपनी स्पीशीज के लाक्षणिक, विकिरणों का उत्सर्जन करते हैं।

ज्वाला की अपेक्षाकृत कम ऊर्जा होने के कारण कुछ ही तत्वों का उत्तेजन किया जा सकता है। इसलिए ज्वाला प्रकाशमिति का मुख्य अनुप्रयोग क्षार और क्षारीय मृदा तत्वों के मात्रात्मक निर्धारण में [0.1 माइक्रोग्राम/सेमी^{3} (0.1 $\mu g\ cm^{-1}$) तक न्यून सान्द्रताओं (0.1 पी॰पी॰एम॰) में भी] किया जाता है। चित्र 19.24 में ज्वाला प्रकाशमापी के मुख्य अवयवों का आरेख दिया गया है। उसके मुख्य अवयव हैं ज्वाला, एकवर्णित्र और संसूचक

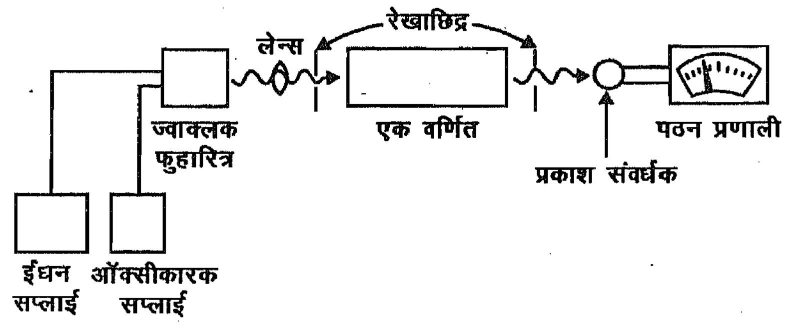

चित्र 19.24: ज्वाला प्रकाशमापी के मुख्य अवयव

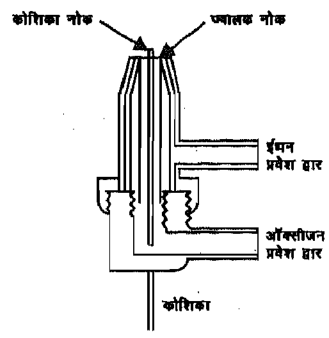

चित्र 19.25: ज्वालक-फुहारित्र समुच्चय

पठन प्रणाली। ज्वाला को ज्वालक-फुहारित्र समुच्चय द्वारा उत्पन्न किया जाता है जैसा कि चित्र 19.25 में दिखाया गया है। ईंधन और ऑक्सीकारक को ज्वालक के अंदर दो पृथक कक्षों में भरा जाता है और बाद में निर्गम रंध्रों के बाहर मिलाया जाता है। इस प्रकार प्रक्षुब्ध ज्वाला उत्पन्न होती है। जैसे ही ऑक्सीकारक नमूना-कोशिका में से प्रवाहित होता है, निर्वात पैदा हो जाता है जो विलयन को ज्वाला की ओर कर्षित करता है। अधिकांश प्रयोगशालाओं में तापन के लिए प्रयुक्त गैसों, जैसे ऐसीटिलीन, हाइड्रोजन अथवा द्रव पेट्रोलियम गैस, को ज्वाला के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। ऑक्सीकारक के रूप में वायु के बजाय ऑक्सीजन का उपयोग किया जाता है। जिन ज्वालाओं में उच्च ताप उत्पन्न होता है वे अधिक तत्वों को उत्तेजित कर सकती हैं अत: अधिक सर्वतोमुखी होती हैं। कुछ सामान्य ज्वाला गैस मिश्रणों की सूची सारणी 19.6 में दी गई है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

सारणी 19.6: कुछ सामान्य ज्वाला गैस मिश्रण

ईंधन	ऑक्सीकारक	ताप
हाइड्रोजन	वायु	2000
हाइड्रोजन	ऑक्सीजंन	2200
ऐसीटिलीन	वायु	2000
ऐसीटिलीन	ऑक्सीजन	2800
प्राकृतिक गैस (एल॰पी॰जी॰)	वायु	1900
ऐसीटिलीन	N_2O	2800

उत्सर्जित विकिरण को एकवर्णित्र अथवा प्रिज्म में से प्रविष्ट किया जाता है जो विभिन्न तरंगदैर्घ्यों को पृथक कर देता है। इस प्रकार वांछित क्षेत्र को पृथक किया जा सकता है।

पृथकित विकिरण की तीव्रता को मापने के लिए संसूचक के रूप में एक प्रकाश सेल और किसी प्रवर्धक का उपयोग किया जाता है।

प्रत्येक धातु का उत्सर्जन-स्पेक्ट्रम भिन्न होता है और उसकी तीव्रता, ज्वाला में परमाणु की सान्द्रता, प्रयुक्त उत्तेजन विधि तथा उत्तेजित परमाणुओं के पश्च-इतिवृत्त पर निर्भर करता है। सोडियम, 589 नैनोमीटर पर अभिलाक्षणिक पीले उत्सर्जन, लीथियम, 671 नैनोमीटर पर लाल उत्सर्जन, और कैल्सियम, 423 नैनोमीटर पर नीले उत्सर्जन उत्पन्न करता है। प्रत्येक तत्व लघु तरंगदैर्घ्यों पर कम तीव्र उत्सर्जन भी उत्पन्न करता है। इन तत्वों की 0.1 माइक्रोग्राम/सेमी^{3} ($\mu g\ cm^{-3}$) अथवा इससे कम सान्द्रता को यथार्थ मात्रा में मापा जा सकता है जो प्रयुक्त यंत्र की सुग्राहिता पर निर्भर करता है।

ज्वाला उत्सर्जन स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति के अनुप्रयोग

सारणी 19.7 में नाइट्रस ऑक्साइड-ऐसीटिलीन ज्वाला में ज्वाला-उत्सर्जन स्पेक्ट्रममापी द्वारा विशिष्ट प्रदूषक तत्वों के निर्धारण के लिए प्ररूपी संसूचन सीमाओं की सूची दी गई है। वर्तमान संदर्भ में ज्वाला उत्सर्जन स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति को परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति की सस्ती पूरक तकनीक मानना चाहिए।

सारणी 19.7: ज्वाला उत्सर्जन स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति द्वारा निर्धारित किए जाने वाले तत्व

तत्व	तरंगदैर्घ्य (नैनोमीटर)	संसूचन सीमा (माइक्रोग्राम/cm^3)	तत्व	तरंगदैर्घ्य (नैनोमीटर)	संसूचन सीमा (माइक्रोग्राम/सेमी^{3})
Ag	328.1	20	In	451.1	2
Al	396.2	5	Mg	285.2	5
Ba	553.6	2	Mn	403.1	5
Ca	423.7	0.1	Mo	390.3	5
Co	345.4	50	Ni	341.5	300
Cr	425.4	5	Pb	405.8	200
Cu	324.7	10	Sr	460.7	0.2
Ga	417.2	10	Tl	377.6	20

19.5.2 परमाण्विक अवशोषण स्पेक्ट्रमी प्रकाशमिति (Atomic absorption spectrophotometry)

परमाणु अवशोषण यद्यपि एक अवशोषण विधि है किन्तु यह ज्वाला उत्सर्जन स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति के समान है। इस तकनीक में विकिरण, वाष्प अवस्था में अनुत्तेजित परमाणुओं द्वारा अवशोषित होता है। ज्वाला उत्सर्जन की तुलना में इसके निम्नलिखित लाभ हैं:

i) मात्रात्मकत: अधिक तत्वों का निर्धारण किया जा सकता है।

ii) स्पेक्ट्रमी व्यतिकरण कम हो जाते हैं।

iii) अधिकांश तत्वों के लिए सुग्राहिता अधिक होती है।

MAADHYAM IAS

ज्वाला प्रकाशमापी की भांति परमाणु अवशोषण यंत्र में एक ज्वाला यूनिट, उत्सर्जन रेखाओं को परिक्षिप्त और पृथक करने के लिए एक प्रिज्म अथवा ग्रेटिंग तथा उपयुक्त प्रवर्धकों वाला संसूचक होता है। प्रकाश स्रोत (खोखला कैथोड लैंप) से विशेष तरंगदैर्घ्य का स्थायी और तीव्र प्रकाश उत्सर्जित होता है। प्रत्येक तत्व अभिलाक्षणिक तरंगदैर्घ्यों का अवशोषण करता है। एक प्रकाश-स्रोत को, जिसका तरंगदैर्घ्य निर्धारित किए जाने वाले तत्व द्वारा शीघ्र

अवशोषित हो जाता है, ज्वाला में से दिष्ट किया जाता है तथा पहले नमूने के बिना और बाद में ज्वाला में नमूना प्रविष्ट करके तीव्रता की माप की जाती है। नमूने के साथ प्रेक्षित तीव्रता में कमी, तत्व की सान्द्रता की माप होता है।

अवशोषित विकिरण की मात्रा बियर-लैम्बर्ट नियम का पालन करती है अर्थात् वह नमूने में विद्यमान तत्व की सान्द्रता के समानुपाती होती है। इस विधि की एक कमी यह है कि प्रत्येक तत्व के लिए पृथक प्रकाश स्रोत/खोखले कैथोड लैम्प का उपयोग करना होता है। परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति का लाभ यह है कि वह अधिकांश तत्वों के लिए अत्यन्त विशिष्ट होती है। अवशोषण, ज्वाला में मुक्त अनुत्तेजित परमाणुओं की उपस्थिति पर निर्भर करता है जो प्रायः उत्तेजित परमाणुओं की अपेक्षा बहुत अधिक संख्या में उपलब्ध रहते हैं।

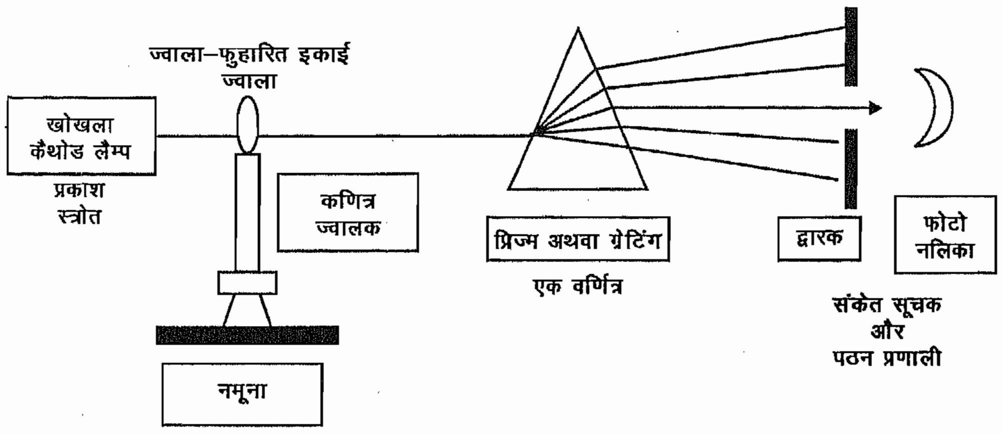

चित्र 19.26: परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी का व्यवस्था-आरेख

तत्वों के निर्धारण में परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रममिति का उपयोग

परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रममिति का अनुप्रयोग लगभग 70 तत्वों के निर्धारण के लिए किया जाता है। इसका अनुप्रयोग नैदानिक और जैविक नमूनों, विधि पदार्थों, खाद्य पदार्थों और पेय पदार्थों, जल और बहि:स्राव, मृदाओं, पादपों, उर्वरकों, लोहा, इस्पात और अनेक अन्य मिश्र धातुओं खनिजों, पेट्रोलियम उत्पादों, औषधियों और प्रसाधन सामग्री में भी किया जाता है।

परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति का परिवर्तित रूप विद्युत-तापीय परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति है। इस में ग्रैफाइट भाष्ट्रिका का प्रयोग किया जाता है। इस तकनीक से बहुत सी भारी धातुओं को माइक्रोग्राम प्रति घन डेसीमीटर तक यथार्थ मात्रा में माप सकते हैं। इस तकनीक में कणित्र बर्नर की जगह ग्रैफाइट भाष्ट्रिका ले लेती है।

MAADHYAM IAS

प्रेरण युग्मित प्लाज्मा [inductive coupled plasma, (ICP)]

प्रेरण युग्मित प्लाज्मा विधि (उत्सर्जन स्पेक्ट्रम विज्ञान) अपेक्षाकृत नई तकनीक है जिसे सूक्ष्म मात्रिक धातुओं के विश्लेषण के लिए, 1970 के दशक में विकसित किया गया। इस विधि में उच्च ऊर्जा उत्सर्जन स्रोत के लिए प्लाज्मा स्रोतों का उपयोग किया जाता है। इन अधिक ऊर्जा वाले स्वचलन स्रोतों का लाभ यह है कि इनमें अंतरातत्व व्यतिकरण कम होता है, समान उत्तेजन अवस्थाओं में अनेक तत्वों के लिए अच्छे स्पेक्ट्रम प्राप्त किए जा सकते हैं और इसलिए एक साथ अनेक तत्वों के स्पेक्ट्रम रिकार्ड किए जा सकते हैं। इन स्रोतों की हानियां यह हैं कि यंत्र और प्रचालन की लागत अधिक होती है, अधिक कुशल प्रचालकों की आवश्यकता होती है और परमाणु-अवशोषण विधि से कम यथार्थ होती है।

प्रेरण युग्मित प्लाजमा विधि में तीन संकेन्द्री क्वार्ट्ज नलियों में से आर्गन गैस की धारा प्रवाहित होती है। ये नलियां जल-शीतित प्रेरण कुंडली द्वारा घिरी रहती हैं जिसे रेडियो आवृत्ति जनित्र द्वारा शक्ति प्राप्त होती है जो प्रबल चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न करता है। जब एक चिनगारी से आर्गन का आयनन आरंभ होता है तो चुम्बकीय क्षेत्र के फलस्वरूप आय और उनसे संबद्ध इलेक्ट्रॉन, नलियों के अंदर सर्पिल प्रवाह पैटर्न का अनुसरण करते हैं तथा उनके संघट्टन और गति प्रतिरोध के कारण ताप उत्पन्न होता है। प्राप्त ताप 400 से 8000 K तक होता है जो सबसे गरम दहन ज्वाला से प्राप्त ताप से दो से तीन गुना है। यह ताप अणुओं को पूर्णतया वियोजित करने के लिए पर्याप्त होता है जिसके कारण अत्यंत सफलतापूर्वक परमाणु-उत्सर्जन होता है। जिस नमूने का विश्लेषण करना हो उसे एक रेखा छिद्र में से प्रविष्ट कर एकवर्णित्र अथवा बहुवर्णित्र में भेजा जाता है तथा स्पेक्ट्र का एक भाग तीव्रता मापने के लिए पृथक किया जाता है। यंत्र, 180 से 900 नैनोमीटर तक संपूर्ण पराबैंगनी। दृश्य स्पेक्ट्रम में माप कर सकता है।

बोध प्रश्न 6

ज्वाला उत्सर्जन स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी के प्रमुख घटकों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

19.6 सारांश

इस इकाई में आपने वैद्युत चुंबकीय विकिरण के स्वभाव और अभिलक्षणों के बारे में पढ़ा। इसमें वैद्युत चुंबकीय विकिरणों से संबद्ध, आवृत्ति, तरंगदैर्घ्य आदि अनेक प्राचलों की व्याख्या की गई तथा उनके परस्पर संबंधों की चर्चा की गई। उसके बाद बियर-लैम्बर्ट नियम का अध्ययन किया जो गुणात्मक विश्लेषण का मूल नियम है। कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थ में पराबैंगनी दृश्य वैद्युत चुंबकीय विकिरणों के लिए उत्तरदायी अवशोषण स्पीशीज का उल्लेख किया गया। इसके बाद पराबैंगनी दृश्य स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी के घटकों का वर्णन किया गया। तत्पश्चात् पर्यावरण विश्लेषण में पराबैंगनी दृश्य स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति के अनेक अनुप्रयोगों पर प्रकाश डाला गया। अंत में ज्वाला प्रकाशमिति और परमाणु-अवशोषण स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति का संक्षेप में चर्चा की गई।

19.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. निम्नलिखित की परिभाषा दीजिए :
   क) अवशोषणांक ख) प्रतिशत पारगम्यता ग) अवशोषकता घ) मोलर अवशोषकता
2. बियर-लैम्बर्ट नियम से विचलन के चार भिन्न-भिन्न कारणों को सूचीबद्ध कीजिए।
3. पराबैंगनी-दृश्य प्रदेश में वैद्युत चुंबकीय विकिरण के अवशोषण के दौरान बहुधा होने वाले इलेक्ट्रॉनिक संक्रमणों का उल्लेख कीजिए।
4. वर्णमूलक और वर्णवर्धक की परिभाषा लिखिए।
5. एक-किरणपुंज प्रकाशमापी की तुलना में द्वि-किरणपुंज प्रकाशमापी का मुख्य लाभ बताइए।
6. *o*-जाइलीन और *p*-जाइलीन के मिश्रण के विश्लेषण के लिए प्रयुक्त इष्टतम तरंगदैर्ध्य

MAADHYAM IAS

क्रमशः 271 नैनोमीटर और 275 नैनोमीटर हैं। इन दो तरंगदैर्घ्यों पर एकल घटकों और मिश्रण के अवशोषणांक नीचे दिए गए हैं :

विलयन	271 नैनोमीटर	275 नैनोमीटर
o-जाइलीन	0.90	0.10
p-जाइलीन	0.34	1.02
मिश्रण	0.47	0.54

विभिन्न अवशोषकताएं तथा *o*-जाइलीन और *p*-जाइलीन की सान्द्रताएं परिकलित कीजिए। मान लीजिए कि $b = 1$ सेमी

7. यंत्रीकरण की दृष्टि से ज्वाला उत्सर्जन और परमाणु स्पेक्ट्रम प्रकाशमिति की तुलना कीजिए।

19.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1. $\bar{\nu} = \frac{1}{\lambda} = \frac{1}{4000\times10^{-10}} = 2.5\times10^{6}$ मी$^{-1}$ $= 2.5\times10^{-4}$ सेमी$^{-1}$

$$\nu = \frac{c}{\lambda} = \frac{2.998\times10^{8}}{4000\times10^{-10}} = 7.495\times10^{4}\ \text{Hz}$$

2. $\text{A} = \log\frac{P_0}{P} = \epsilon bc$

$$= \log\frac{85.4}{20.3} = \epsilon \times 2\times1\times10^{-4}$$

$$= \log 4.207 = \epsilon \times 2\times10^{-4}$$

$$\epsilon = \frac{0.62396}{2}\times10^{4} = 3.12\times10^{3}\ \text{dm}^3/\text{mol cm}$$

3. क) $n \to \pi^*$; ख) $n \to \pi^*$; ग) $n \to \sigma^*$;

4. $\sigma \to \sigma^* > n \to \sigma^* > \pi \to \pi^* > n \to \pi^*$

5. i) अवशोषक स्पीशीज बनाने के लिए नमूना बनाना
   ii) तरंगदैर्घ्य का चयन करना,
   iii) $\lambda_{\text{उच्चिष्ठ}}$ पर अभिकर्मक रिक्त, मानक और नमूने के लिए अवशोषणांक की माप करना,
   iv) अंशांकन वक्र बनाना, और
   v) अंशांकन वक्र से नमूने की सान्द्रता को पढ़ना।

6. ज्वाला, एकवर्णित्र और संसूचक पठन पद्धति।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अंत में कुछ प्रश्न

1. *अवशोषणांक (A)* : यह आपतित विकिरण शक्ति का नमूने में से पारगत विकिरण शक्ति के अनुपात का लघुगणक (आधार 10) होता है।

$$\text{A} = \log\frac{P_0}{P} \text{ अथवा } \log\frac{I_0}{I}$$

प्रतिशत पारगम्यता (T) : नमूने में से पारगत विकिरण शक्ति का आपतित विकिरण शक्ति के साथ अनुपात को पारगम्यता कहते हैं।

$$T = \frac{P_0}{P}$$

जब पारगम्यता को प्रतिशत में व्यक्त किया जाता है तो उसे प्रतिशत पारगम्यता कहते हैं

$$\%T = \frac{P_0}{P} \times 100$$

अवशोषकता (a) : इकाई सान्द्रता ($g\ dm^3$) और इकाई पथ लंबाई (1 cm) वाले विलयन के अवशोषणांक को अवशोषकता कहते हैं। अर्थात्

$a = A/bc$

मोलर अवशोषकता (∈) : जब अवशोषक पदार्थ की सान्द्रता मोल डेसिमी^{3} में ली जाती है। तो A/bc अनुपात को मोलर अवशोषकता कहते हैं। मोलर अवशोषकता का मात्रक $dm^3\ mol^{-1}\ cm^{-1}$ है।

2. गैर-एकवर्णी विकिरण, विश्लेष्य का संयोजन और वियोजन, प्रयोग के समय ताप में परिवर्तन, प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया के कारण विश्लेष्य में परिवर्तन नमूने की उच्च सान्द्रता आदि।

3. $\sigma \rightarrow \sigma^* > \pi \rightarrow \pi^* > n \rightarrow \sigma^* > n \rightarrow \pi^*$ आदि

4. *वर्णमूलक:* वर्णमूलक में ऐसे समूह होते हैं जो 175 और 1000 नैनोमीटर के बीच वैद्युतचुंबकीय विकिरण के अवशोषण के लिए उत्तरदायी होते हैं। इन समूहों की अभिलाक्षणिक मोलर अवशोषकता होती है और वे सुनिश्चित तरंगदैर्घ्यों पर अवशोषण करते हैं। उदाहरण, $>C = C<$, $-C \equiv C$, $-N = O$ और $-N = N-$ आदि।

   वर्णवर्धक: वे स्वयं वैद्युत चुंबकीय विकिरण का अवशोषण नहीं करते हैं किन्तु जब किसी वर्णमूलक के साथ संलग्न रहते हैं तो वे वर्णमूलक के तरंगदैर्घ्य और अवशोषण की तीव्रता दोनों को बदल देते हैं। उदाहरण, $-OR$, $-NH_2$, NR_2 आदि।

5. i) क्योंकि प्रकाश किरण-पुंज को दो हिस्सों में विभाजित करके दो समान संसूचकों में गिराया जाता है अत: स्रोत के उच्चावचन (यदि कोई हों), पठन में कोई विक्षोभ पैदा नहीं करेंगे। पाठ्यांक को दो विभवमापियों को संतुलित करके नोट किया जाता है।

   ii) क्योंकि गैल्वेनोमीटर का उपयोग शून्य संसूचक के रूप में किया जाता है अत: गैल्वेनोमीटर की सुई के हिलने में कोई विद्युत् व्यय नहीं होती है। इसलिए परिणाम एक किरणपुंज यंत्र की अपेक्षा अधिक यथार्थ होते हैं।

   iii) क्योंकि पाठ्यांक, बड़े विभवमापी पैमाने में नोट किया जाता है इसलिए सुग्राहिता अधिक होती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

6. *o*-जाइलीन के लिए (यौगिक X)

   271 नैनोमीटर $(\lambda_1)(a_x)_1 = \frac{0.90}{0.40} = 2.25\ dm^3\ g^{-1}\ cm^{-1}$

   275 नैनोमीटर $(\lambda_2)(a_x)_2 = \frac{0.10}{0.40} = 0.25\ dm^3\ g^{-1}\ cm^{-1}$

p-जाइलीन के लिए (यौगिक Y)

$$271 \text{ नैनोमीटर } (\lambda_1)(a_y)_1 = \frac{0.34}{0.17} = 2.0 \text{ dm}^3 \text{ g}^{-1} \text{ cm}^{-1}$$

$$275 \text{ नैनोमीटर } (\lambda_2)(a_y)_2 = \frac{1.02}{0.17} = 6.0 \text{ dm}^3 \text{ g}^{-1} \text{ cm}^{-1}$$

इसलिए, $\lambda_1 \; 0.47 = 2.25 \text{ C}_x + 2 \, c_y$ (1)

$\lambda_2 \; 0.54 = 0.25 \text{ C}_x + 6.0 \, c_y$ (2)

पहले समीकरण को 3 से गुणाकर और गुणनफल में (2) को घटाकर c_y का विलोपन करें।

इस प्रकार $c_x = 0.13 \text{ g dm}^{-3}$

c_x का मान रखकर c_y परिकलित किया जा सकता है

$$c_y = 0.084 \text{ g dm}^{-3}$$

7. देखिए उपभाग 19.5.1 और 19.5.2

अतिरिक्त पाठ्यसामग्री

1. ऐनैलिटिकल केमिस्ट्री, गैरी डी० किस्टिन, जॉन विली एण्ड संस, इंक।
2. प्रिंसिपल्स ऑफ इन्स्ट्रूमेंटल एनैलिसिस, स्कूग, हॉलर एण्ड नीमन, सॉन्डर्स गोल्डन सनबार्स्ट सिरीज।

MAADHYAM IAS
'way to achieve your dream'

इकाई 20 जल, मृदा और वायु का सूक्ष्मजैविक परीक्षण

इकाई की रूपरेखा

20.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
20.2 जल का सूक्ष्मजैविक परीक्षण
जलीय चक्र
जल का जीवाणु-विज्ञान
जल-गुणता आमापन
20.3 मृदा का सूक्ष्मजैविक परीक्षण
सूक्ष्मजैविक आबादी
मृदा सूक्ष्मजीवों की अध्ययन विधियाँ
20.4 वायु का सूक्ष्मजैविक परीक्षण
20.5 सारांश
20.6 अंत में कुछ प्रश्न
20.7 उत्तर
20.8 शब्दावली

20.1 प्रस्तावना

इस खंड की पिछली इकाइयों में और खंड 5 में आपने विश्लेषण की यंत्रीय और गैरयंत्रीय विधियों का अध्ययन किया। इन विधियों से ज्ञात होता है कि जल, मृदा और वायु प्रदूषित हैं अथवा नहीं। साथ ही अन्य सूचनाएं भी प्राप्त होती हैं। किन्तु ये विधियां सूक्ष्मजैविक संदूषण, के संसूचन के लिए पर्याप्त सुग्राही अथवा विशिष्ट नहीं होती हैं। दूसरी ओर सूक्ष्मजैविक परीक्षण, जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न प्रदूषण को व्यक्त करने के लिए अत्यंत सुग्राही और विशिष्ट होते हैं।

इस इकाई में आप जल, मृदा और वायु के परीक्षण के लिए कुछ सूक्ष्मजैविक तकनीकों का अध्ययन करेंगे।

सूक्ष्मजैविकी क्या है?

MAADHYAM IAS

पृथ्वी ग्रह की उत्पत्ति लगभग 4.5 अरब वर्ष पहले हुई जबकि वायुमंडल में मुख्यतः नाइट्रोजन, हाइड्रोजन और कार्बन मोनॉक्साइड विद्यमान थे और मुक्त ऑक्सीजन बिल्कुल नहीं थी। आज सूर्य और पृथ्वी के बीच जो ओजोन का परिरक्षक कवच है वह उस युग के वायुमंडल में विद्यमान नहीं था। इसलिए सूर्य की घातक पराबैंगनी किरणें बंजर चट्टानों पर गिरती थीं और उन्हें अनुर्वर बना दिया था। उस समय समुद्र में पर्याप्त मात्रा में अमोनिया और कार्बन डाइऑक्साइड घुले हुए थे तथा सल्फेट और लोहा के प्रचुर भंडार मौजूद थे। इस प्रकार जीवन की उत्पत्ति से पहले पृथ्वी का पर्यावरण अत्यंत प्रतिकूल था। यह माना जाता है कि आदिकाल में जीवन की उत्पत्ति समुद्र में हुई और वहां से भूमि की परिरक्षित विदरिकाओं में स्थानांतरित हो गई जहां सूर्य की पराबैंगनी किरणें नहीं पहुंच सकती थीं। जैव द्रव्य न के बराबर होने के कारण अनुमान है कि आदिकाल में रसायन संश्लेषी सूक्ष्मजीव पृथ्वी के प्रथम उपनिवेशक थे।

सूक्ष्मजैविक विश्व, अर्थात् जंतुक अथवा सूक्ष्म जन्तुओं की दुनिया, को खोजने वाला एंटनी वान लीवेनहोक नामक डच व्यापारी था। सभी ज्ञात एक कोशिकीय सूक्ष्मजीवों की प्रमुख किस्मों- प्रोटोजोआ, यीस्ट, शैवाल, बैक्टीरिया का वर्णन सबसे पहले लीवेनहोक ने किया था। सूक्ष्मजीवों की विविधता के अतिरिक्त लीवेनहोक ने उसकी बहुलता पर भी जोर दिया।

जीवित प्राणियों के ज्ञान में वृद्धि के साथ यह स्पष्ट हो गया कि इन सूक्ष्मजीवों की रोगों, उद्योगों और पारिस्थितिकी में प्रमुख भूमिका होती है और वे लोगों के जीवन के रहन सहन को बदल सकते हैं। *सूक्ष्मजीवों के अध्ययन को सूक्ष्मजैविकी* कहते हैं।

मृदा, जल और वायु में सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति का पर्यावरण के भौतिक और रासायनिक गुणधर्मों पर प्रभाव पड़ता है। इसलिए उनके सूक्ष्मजैविक परीक्षण से पर्यावरण की गुणता का आकलन किया जा सकता है जिसमें हम रहते हैं।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप,

- जल, मृदा और वायु में सूक्ष्म जीवों के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे,
- जल की पेयता का मूल्यांकन करने वाली विधियों का वर्णन कर सकेंगे,
- जल में कोलीफॉर्म की पहचान कर सकेंगे, और
- मृदा सूक्ष्मजीवों की गणना करने के लिए प्रयुक्त विभिन्न तकनीकों का वर्णन कर सकेंगे।

20.2 जल का सूक्ष्मजैविक परीक्षण

जल के सूक्ष्मजैविक परीक्षण का विस्तृत अध्ययन करने से पहले आइए जलीय चक्र और जल के जीवाणु-विज्ञान का अध्ययन करें।

20.2.1 जलीय चक्र (hydrologic cycle)

जल, पृथ्वी में पाया जाने वाला प्रमुख यौगिक है। पृथ्वी के पृष्ठ का लगभग ¾ भाग जल है और 97% जल महासागरों में है। पृथ्वी की जल-सप्लाई जलमंडल, वायुमंडल और स्थल मंडल के बीच लगातार चक्कर लगाती रहती है। जलीय चक्र, पृथ्वी के पृष्ठीय जल से आरंभ होता है जबकि तालाबों, महासागरों और नदियों का जल धूप और हवा के प्रभाव से उद्वाष्पित होकर वायुमंडल में चला जाता है। पादपों, पत्तियों द्वारा वाष्पोत्सर्जन और श्वसन से इस भंडार में योगदान होता है (देखिए चित्र 20.1)। जल, संघनन अथवा वर्षण द्वारा, वर्षा, हिम, ओलों के माध्यम से पृथ्वी में लौट आता है। यद्यपि जल की बूंद देखने में साधारण लगती है किन्तु वह एक सम्मिश्र है जिसमें अनेक प्रकार के रासायनिक पदार्थ और सूक्ष्म जीव विद्यमान रहते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

इस चक्र में जल को, उसके प्राप्ति-स्थान के आधार पर निम्नलिखित तीन प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जाता है। इस चक्रीय प्रक्रम के विभिन्न चरणों में अनेक प्रकार के सूक्ष्मजीव विद्यमान रहते हैं।

क) वायुमंडलीय जल

बादलों में विद्यमान नमी, जो हिम, ओलों और वर्षा के रूप में अवक्षेपित होती हैं, वायुमंडलीय जल के अंतर्गत आती है। जल की सूक्ष्मजैविक वनस्पति, वायु से प्राप्त होती है। वायु में मौजूद धूल के कणों के साथ सूक्ष्मजीव संलग्न हो जाते हैं। ये वर्षा द्वारा प्रवाहित हो जाते हैं।

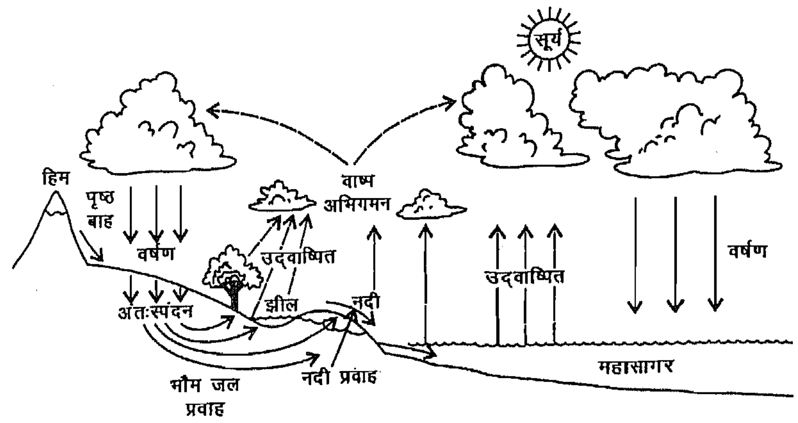

चित्र 20.1: जलीय-चक्र

ख) पृष्ठीय जल

तालाब, सरिता, नदी और महासागर आदि जल राशियां पृष्ठीय जल को निरूपित करती हैं। वायुमंडलीय जल में विद्यमान सूक्ष्मजीवों, मृदा को पृष्ठीय जल प्रवाह और अपशिष्टों को फेंकने से ये जलराशियां संदूषित हो जाती हैं। सूक्ष्मजैविक समुदायों की संख्या और किस्म, जल के स्रोत, सूक्ष्मजैविक पोषकों के रूप में जल के संघटन तथा भौगोलिक, जैविक और जलवायु संबंधी अवस्थाओं पर निर्भर करती हैं।

ग) भौम जल

भौम जल, भूमिगत जल होता है जो मृदा अथवा शैलयुक्त पदार्थों के रंध्रों के वर्षा के जल से संतृप्त होने पर पाया जाता है। भूमि के अंदर इस प्रक्रिया से जल स्रोत को जलभृत कहते हैं। यह पृष्ठीय जल का महत्वपूर्ण स्रोत है। मृदा की पारगम्यता और जल की गहराई से जीवाणुओं और निलंबित द्रव्य के निराकरण में सहायता मिलती है।

स्रोतों (Springs) if भौम जल होता है जो शैल-विदर अथवा खुले रंध्रों के द्वारा पृष्ठ पर पहुंचता है।

कुओं को खोदने के लिए कूपक को भूमि के अंदर धंसाया जाता है ताकि वह भूमिगत जल की सतह तक पहुंच जाए अच्छे स्रोतों और कुओं से बहुत अच्छा जल प्राप्त होता है और उनमें सूक्ष्मजीवों की मात्रा नगण्य होती है।

जलीय पर्यावरण में बहुत भिन्नता होने के कारण सूक्ष्मजीवों की विभिन्न जातियों को विशिष्ट आवास का निवासी माना जाता है।

MAADHYAM IAS

करोड़ों वर्षों में जलीय चक्र के कारण जल की कुल मात्रा में परिवर्तन हुआ है। मनुष्य के कार्यकलापों से उसके वितरण और गुणता में भी परिवर्तन हुआ है। मौसमी उत्स्रवण और बाढ़, तूफान जैसी विपदाओं से जल में पोषक तत्व और जैव द्रव्य मिल जाते हैं। किन्तु सबसे अधिक परिवर्तन वाहित मल, कृषि और उद्योगों के बहिःस्राव होता है जिसमें जैव मलवा अथवा नाइट्रेट और फास्फेट उर्वरक होते हैं। जलीय पारितंत्र में इन पोषकों के इतनी अधिक मात्रा में मिल जाने से (जिसे सुपोषण कहते हैं) समुदायों में तबाही हो जाती है। ज्ञातव्य है कि जल-स्रोतों का उचित प्रबंधन इस शताब्दी की सबसे बड़ी चुनौतियों में है।

बोध प्रश्न 1

(क) प्राकृतिक जल के तीन संवर्ग कौन से हैं? किसी उत्तम गुणता और नगण्य सूक्ष्मजैविक

मात्रा होती है।

....

....

....

(ख) भू-पृष्ठ का कितना भाग जल से घिरा है?

....

....

....

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित शब्दों की व्याख्या कीजिए

क) जलभृत्

....

....

ख) सुपोषण

....

....

20.2.2 जल का जीवाणु विज्ञान

जल में आश्चर्यजनक सूक्ष्मजैविक गतिविधियां होती हैं। मनुष्यों द्वारा इस्तेमाल होने वाला जल रासायनिक पदार्थों और सूक्ष्मजीवों से मुक्त होना चाहिए अन्यथा स्वास्थ्य के लिए खतरा हो सकता है। ध्यान देने की बात है कि सभी प्रकार के जल में प्रदूषण की संभावना रहती है। जल सप्लाई की स्थिति, रचना और रखरखाव, उसके संग्रह और वितरण-तंत्र में प्रदूषण की संभावना नहीं होनी चाहिए।

रोग उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीवों को रोग जनक कहते हैं। आजकल प्रमुख जलवाहित रोगजनकों में प्रोटोजोआ के अंतर्गत *गिआर्डिआ* (*Giardia*) और *ऐन्टअमीबा* (*Entamaeba*); बैक्टीरिया के अंतर्गत *कैम्पिलोबैक्टर* (*Campylobacter*), *विब्रो कोलेरी* (*Vibro cholerae*), *सैल्मोनेला* (*Salmonella*), *शिगेला* (*Shigella*), *विब्रियो* (*Vibrio*) और *माइकोबैक्टीरियम* (*Mycobacterium*); और विषाणुओं के अंतर्गत *पोलियो* और *हैपैटाइटिस* आते हैं (देखिए सारणी 20.1)। इनमें से कुछ (विशेषरूप से पुटीभूत प्रोटोजोआ) प्राकृतिक जल में मानव परपोषी के बिना दीर्घ काल तक जीवित रह सकते हैं जबकि अन्य अल्प समय तक ही जीवित रहते हैं और शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। जलवाहित रोगजनक, मल से होते हुए कुओं, जलाशयों के जल में मिल जाते हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

जल के सूक्ष्मजैविक परीक्षण का उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि रोगजनक जीवों द्वारा जल प्रदूषित हुआ है या नहीं।

सारणी 20.1: जलवाहित रोगजनकों का वर्गीकरण

प्रकार	उदाहरण	रोग
प्रोटोजोआ	*गिआर्डिआ लैम्बिया, एन्टअमीबा हिस्टोलिटिका*	गिआर्डियता (प्रवाहिका रोग), अमीबी अतिसार
बैक्टीरिया	*कैम्पायलोबैक्टर जेजुनी*	प्रवाहिका

	(जीवाणु) वाइब्रो कोलेरा	हैजा
	साल्मोनेला स्पीशीज	टाइफॉइड (आंत्रज्वर)
	शिगेला स्पीशीज	अतिसार
विषाणु	पोलियो विषाणु	पोलियो
	हेपैटाइटिस ए	हैपैटाइटिस (यकृतशोध)

अच्छा यह होगा कि जल के संदूषण के लिए उत्तरदायी रोगजनक की तलाश की जाए किन्तु ऐसा करना व्यवहारिक नहीं है क्योंकि रोगजनकों की संख्या बहुत कम होती है जबकि अरोगजनकों की संख्या बहुत अधिक होती है। साथ ही उनके संसूचन की विधियां भी महंगी है और उनमें समय भी बहुत लगता है। इसलिए हम प्राय: मानव/जन्तु प्रदूषण अर्थात् आंत्र जीवों के सूचकों की तलाश करते हैं। प्रदूषण के सूचकों के रूप में आमतौर पर प्रयुक्त सूक्ष्मजीव हैं– *एशरिकिआ कोली* (*Escherichia Coli*) (*ई० कोली*) और कोलीफॉर्म वर्ग के सभी जीवाणु। ये जीव प्राकृतिक जल में जीवित रहते हैं किन्तु उनकी संख्या में वृद्धि नहीं होती है। इसलिए उनकी संख्या से संकेत मिलता है कि जल में मल-संदूषण कितना है। पर्यावरण संरक्षण एजेंसियों के जल स्वच्छता मानक, मुख्यत: सूचक सूक्ष्मजीवों के स्तर पर निर्भर करते हैं। यदि,

1. प्रदूषण के स्वभाव में संदेह हो,
2. जल का परीक्षण विरल अंतरालों पर करना हो, और
3. जल-सप्लाई के नये स्रोत की जांच करनी हो, तो स्ट्रेप्टोकोकस वर्ग के मल-सूक्ष्मजीवों का अन्वेषण भी किया जाता है।

ई० कोली, कोलीफॉर्म बैक्टीरिया की आबादी में से एक है तथा अन्य कोलीफॉर्म वर्ग की तुलना में मल-स्रोतों का उपयुक्त प्रतिनिधि है।

कोलीफॉर्म जीवाणु की भांति, मानव अपशिष्टों द्वारा आंत्र-विषाणु भी जल में चले जाते हैं। जीवाणुओं के पृथक्करण के लिए प्रयुक्त प्रक्रियाओं की तुलना में विषाणुओं की उपस्थिति ज्ञात करने के उद्देश्य से जल के नमूनों के विश्लेषण के लिए अधिक विस्तृत प्रक्रियाओं की आवश्यकता होती है। जल में विषाणुओं के संसूचन के लिए अभी तक कोई मानक विधि स्वीकार नहीं की गई है। आइए, अब सूचक सूक्ष्मजीवों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करें।

सूचक सूक्ष्मजीव (Indicator Microorganisms)

सूचक सूक्ष्मजीव 'सचेतक' तंत्र का काम करते हैं। यह एक प्रकार के सूक्ष्मजीव की ओर निर्देश करता है जिसकी जल में उपस्थिति इस बात का प्रमाण है कि जल मनुष्यों अथवा अन्य नियत तापी प्राणियों के मल-पदार्थ से प्रदूषित है। इस प्रकार के प्रदूषण का अर्थ यह है कि इन जन्तुओं के आंत्र क्षेत्र में पाया जाने वाले रोगजनक सूक्ष्मजीव जल में भी उपस्थित हो सकते हैं। सूचक जीव के कुछ महत्वपूर्ण अभिलक्षण इस प्रकार हैं :

MAADHYAM IAS

1. यह प्रदूषित जल में पाया जाता है किन्तु पेय (अप्रदूषित) जल में नहीं पाया जाता।
2. जब जल में रोगजनक होते हैं तो यह पाया जाता है।
3. यह रोगजनकों की अपेक्षा लंबे समय तक भली भांति जीवित रह सकता है।
4. सूचक जीव की मात्रा का संबंध प्रदूषण की मात्रा से होता है।
5. इसके एक समान और स्थायी गुणधर्म होते हैं।
6. यह रोगजनकों की अपेक्षा अधिक संख्या में विद्यमान रहता है।
7. यह मनुष्यों और अन्य जन्तुओं के लिए हानिरहित होता है।
8. इसकी मानक प्रयोगशाला तकनीकों द्वारा आसानी से पहचान की जा सकती है।

जल सप्लाई के संदूषण के सूचक के रूप में सामान्यत: सूक्ष्मजीवों के दो वर्गों का उपयोग किया जाता है: कोलीफॉर्म वर्ग और मल स्ट्रेप्टोकी वर्ग। इसमें सभी वायुजीवी और विकल्पी आवायुजीवी ग्रैम नेगेटिव तथा अबीजाणुजन दंडाणु हैं जो $35^{\circ}C$ पर 48 घंटे के अंदर गैस-उत्पादन के साथ लैक्टोस का किण्वन करते हैं। इस वर्ग में *एशारिकिआ कोली* (*ई० कोली*) और *ऐन्टेरोबैक्टर ऐरोजनीज.* (*Enterobacter aerogenes*) नामक कोलीफार्म आमतौर पर पाए जाते हैं।

ई० कोली प्राय: मानव आंत्रों और अन्य नियततापी प्राणियों में वास करता है और उसे मल प्ररूपी कोलीफॉर्म माना जाता हैं। कोलीफॉर्म वर्ग के अन्य सदस्य, जैसे *एन्टेरोबैक्टर एरोजेनीज,* मृदा, जल, और अनाज में तथा मनुष्यों के और अन्य जन्तुओं के आंत्र क्षेत्र में पर्याप्त वितरित रहते हैं और उन्हें मलहीन कोलीफॉर्म कहते हैं। इन स्पीशीज के अनेक अभिलक्षण बहुत समान होते हैं। इनमें निम्नलिखित जैव रासायनिक परीक्षणों द्वारा भेद किया जा सकता है :

सारणी 20.2: एशरिकिआ कोली और एन्टेरोबैक्टर ऐरोजनीज की आइ०एम०वी०आइ०सी अभिक्रिया परीक्षण

जीव	इंडोल	मेथिल रेड	बोजेस प्रोस्केनर	सिट्रेट
एशरिकिआ कोली	+	+	–	–
एन्टेरोबैक्टर ऐरोजेनीज	–	–	+	+

1. *ई०कोली,* ट्रिप्टोफैन से इंडोल उत्पन्न करता है जबकि *एन्टेरोबैक्टर* नहीं करता।

2. विशेष ग्लूकोस यूष **(broth)** माध्यम में उत्पन्न अम्लता की मात्रा को मेथिल रेड पी०एच० सूचक द्वारा संसूचित किया जाता है। दोनों जीव ग्लूकोस से अम्ल उत्पन्न करते हैं। किन्तु *ई०कोली* कम पी०एच० उत्पन्न करते हैं जो सूचक का रंग लाल कर देता है जबकि *एन्टेरोबैक्टर ऐरोजेनीज* अम्ल की अधिक मात्रा उत्पन्न नहीं करते हैं इसलिए रंग-परिवर्तन नहीं होता है।

3. ग्लूकोस पेप्टोन माध्यम में ऐसीटिल मेथिल कार्बिनॉल (ऐसीटॉइन) उत्पन्न करने की क्षमता : इस रसायंन की पहचान वोजेस प्रोस्केनर **(Vogcs -** Proskauer) परीक्षण द्वारा की जाती है। *ई० कोली* ऐसीटॉइन उत्पन्न नहीं करता है जबकि *एन्टेरोबैक्टर ऐरोजेनीज* उत्पन्न करता है।

4. सोडियम सिट्रेट का उपयोग: एन्टेरोबैक्टर ऐरोजेनीज रसायनत: सुनिश्चित माध्यम में वृद्धि कर सकता है जिसमें सोडियम सिट्रेट एकमात्र कार्बन स्रोत होता है। *ई०कोली* ऐसे माध्यम में वृद्धि नहीं करता है। सुविधा के लिए इन परीक्षणों को सामूहिक रूप से आइ०एम०वी०आइ०सी० अभिक्रियाएं कहते हैं। (आइ० = इंडोल, एम० = मेथिल रेड, वी०आइ०-वोजेस प्रोस्केनर अभिक्रियाएं और सी० = सिट्रेट)

कोलीफॉर्म के अनेक अभिलक्षण *साल्मोनेला (Salmonella)* और *शिगेला (Shigella)* वंश की स्पीशीज के समान होते हैं जो रोग जनक हैं। किन्तु एक स्पष्ट भिन्नता यह है कि कोलीफॉर्म, लैक्टोस का किण्वन करते हैं जिससे अम्ल और गैस उत्पन्न होते हैं। *साल्मोनेला* और *शिगेला,* लैक्टोस का किण्वन नहीं करते हैं। इसलिए प्रयोगशाला में कोलीफॉर्मो के निर्धारण के लिए प्रयुक्त प्रक्रिया में लैक्टोस का किण्वन एक प्रमुख अभिक्रिया है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

मल (फेकल) स्ट्रेप्टोकोसाई मनुष्यों और जन्तुओं की आंतों में *स्ट्रेप्टोकोसाई फेकैलिस, स्ट्रेप्टोकोसाई फेसियम, स्ट्रेप्टोकोसाई बोविस* और *स्ट्रेप्टोकोसाई इक्वीनस* के रूप में विद्यमान रहते हैं। वे मल जल प्रदूषण के सूचक का काम भी करते हैं। आगामी अनुच्छेद में हम पढ़ेंगे कि प्रदूषण स्रोत की पहचान करने के लिए किस प्रकार कोलीफॉर्मों के साथ मल स्ट्रेप्टोकोसाई का उपयोग किया जाता है।

एस० बोविस और *एस० एक्वीनस* जीवाणु हैं जो पशुओं, घोड़ों से होने वाले प्रदूषण के लिए सूचक का काम करते हैं।

क्लेबसिला और *सिट्रोबैक्टर* वंश में अतिरिक्त कोलीफार्म स्पीशीज हैं जिनकी पहचान के लिए अधिक विस्तृत जैवरासायनिक, आनुवांशिक और प्रतिरक्षात्मक आंकड़ों की आवश्यकता होती है।

बोध प्रश्न 3

क) सूचक जीव क्या होता है?

....

....

....

ख) जल की पेयता के लिए कोलीफार्मों का परीक्षण किया जाता है रोगजनकों का नहीं, क्यों?

....

....

....

ग) कोलीफॉर्म क्या होते हैं?

....

....

....

घ) यदि कोलीफॉर्म जल में विद्यमान हों तो .... भी विद्यमान हो सकते हैं और जल पीने के लिए हानिकर होता है।

ङ) कोलीफॉर्मों की 35^{o} C पर क्यों वृद्धि की जाती है?

....

....

....

20.2.3 जल गुणता आमापन

अधिकांश पेय जल की आपूर्ति नदियों, भूमिगत कुंओं और स्रोतों से होती है। भूमिगत स्रोतों से प्राप्त जल निस्यंदन के द्वारा आंशिक रूप से शुद्ध हो जाता है क्योंकि मृदा-स्तंभों में से गुजरते हुए उसमें से कणिकीय पदार्थ और सूक्ष्मजीव पृथक हो जाते हैं। सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए पीने के लिए प्रयुक्त जल को उबाला जाता है अथवा प्रतिसूक्ष्मजीवी रसायनों द्वारा उसका उपचार किया जाता है। इन प्रतिसूक्ष्मजीवी रसायनों को रोगाणुनाशी कहते हैं, जैसे क्लोरीन और उसके यौगिक: ब्रोमीन, आयोडीन, ओजोन आदि का भी रोगाणुनाशी के रूप में उपयोग किया जाता है। UV विकिरण भी रोगाणुनाशी का कार्य करते हैं।

MAADHYAM IAS

जल के नमूनों को एकत्रित कर जीवाण्विक विश्लेषण के लिए प्रस्तुत करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए :

1. जल-नमूनों को एकत्रित करने के लिए निर्जर्म (रोगाणुरहित) बोतल/पात्र का उपयोग करना चाहिए।
2. नमूने द्वारा उस सप्लाई को निरूपित करना चाहिए जिसमें से उसे लिया गया है।
3. नमूना लेते समय और उसके बाद संदूषण से बचना चाहिए।

4. नमूना एकत्रित करने के बाद यथाशीघ्र उसका परीक्षण कर लेना चाहिए।
5. यदि परीक्षण में देर हो तो नमूने को $0^o C$ और $10^o C$ के बीच के ताप पर संग्रहित करना चाहिए।

सामान्य जीवाण्विक प्रक्रियाओं में निम्न परीक्षण किए जाते हैं :

क) उपस्थित जीवाणुओं की संख्या निर्धारित करने के लिए प्लेट गणन, और

ख) कोलीफॉर्म जीवाणुओं की उपस्थिति बतलाने वाले परीक्षण।

(क) सूक्ष्मजीवों की कुल गणना (Total Count of Microorganisms)

जल के नमूनों में जीवाणुओं की कुल संख्या के निर्धारण से सप्लाई में उपस्थित जैव द्रव्य की मात्रा और प्रकार का संकेत मिलता है। जल के नमूने में मौजूद सूक्ष्मजीवों की कुल संख्या निर्धारित करने के लिए मानक प्लेट गणन विधि का उपयोग किया जाता है। यह विधि इस धारणा पर आधारित है कि ठोस माध्यम में प्रत्येक कोशिका में बार बार वृद्धि होती है और अंततोगत्वा एक पृथक कॉलोनी बन जाती है। परीक्षण के लिए 1 cm^3 जल का प्लेटिंग किया जाता है जिसमें कल्चर माध्यम के रूप में प्लेट गणन ऐगार अथवा मानक विधि ऐगार का उपयोग किया जाता है। प्लेटों का $35^o C$ पर 48 से 72 घंटों तक ऊष्मायन किया जाता है। उसके बाद कॉलोनी गणित्र (colony counter) द्वारा माध्यम में कॉलोनियों की गणना की जाती है। साधित्र के रूप में आवर्धक लेन्स अथवा उन्नत इलेक्ट्रॉनिक कालोनी गणित्र का उपयोग किया जा सकता है। उत्तम कोटि का जल कम गणन देता है जो 100 आबादी प्रति cm^3 से कम होता है।

प्लेट गणन, जीवों के निराकरण अथवा नष्ट करने के लिए जल-उपचार प्रक्रियाओं की दक्षता को निर्धारित करने में काफी उपयोगी हैं। जल उपचार प्रक्रियाएं इस प्रकार हैं: अवसादन, निस्यंदन और क्लोरीनन। गणन, विशिष्ट उपचार के पहले और बाद में किया जा सकता है। परिणाम से पता लगता है कि सूक्ष्मजैविक संख्या कितनी कम हुई है।

(ख) कोलीफॉर्मो का परीक्षण

कोलीफॉर्म वर्ग की पहचान के दो मानक परीक्षण हैं :

i) बहु-नली किण्वन परीक्षण (multiple-tube fermentation test) (एम०टी०एफ०)

ii) झिल्ली निस्यंद परीक्षण (membrane filter test) (एम०एफ०)

i) बहु-नली किण्वन परीक्षण

इस परीक्षण में कोलीफॉर्म जीवों के लिए जल का परीक्षण करने के लिए सर्वाधिक प्रसंभाव्य संख्या (most probable number) (एम०पी०एन०) प्रक्रिया तथा वरणात्मक और विभेदक माध्यमों का उपयोग किया जाता है। पेय और अन्य जल के विश्लेषण के लिए इस परीक्षण का अनेक देशों में सफलतापूर्वक उपयोग किया गया है। कोलीफॉर्म परिणामों को जीव की सर्वाधिक प्रसंभाव्य संख्या (most probable number) (एम०पी०एन०) के रूप में व्यक्त किया जाता है। इसलिए इस परीक्षण को एम०पी०एन० विधि भी कहते हैं। परीक्षण से कोलीफॉर्म जीवाणुओं की वास्तविक संख्या नहीं बल्कि सर्वाधिक संभावित संख्या प्राप्त होती हैं। यह तीन चरणों में पूरा होता है (i) अनुमानित (presumsptive) परीक्षण (ii) सपुष्टि (conforination) परीक्षण और (iii) पूर्ण परीक्षण (completed test) (चित्र 20.2)

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

1) अनुमानित परीक्षण (presumptive test)

इसमें किण्वन नलियों के तीन उपसमुच्चय (subsets) लिए जाते हैं। प्रत्येक उपसमुच्चय में 5 किण्वन नलियां होती हैं और प्रत्येक नली में उपयुक्त लैक्टोस संवर्ध माध्यम (लैक्टोस ब्रॉथ) और एक उल्टी डुरहैम नली (गैस एकत्रित करने के लिए) होती है। तीन उपसमुच्चयों **4** जल नमूने की भिन्न मात्राएं उदाहरणार्थ क्रमश: 10 cm^3, 1 cm^3 और

विश्लेषण की यंत्रीय विधियां

कोलीफॉर्म जीवाणुओं की सान्द्रता प्रति $100cm^3$ सर्वाधिक प्रसंभाव्य सख्या (एम०एन०पी०/$100 cm^3$) के रूप में व्यक्त की जाती है। एम०पी०एन० समान आयतन के अनेक हिस्सों का गुणोत्तर श्रेणी में परीक्षण करते समय प्राप्त धनात्मक और ऋणात्मक परिणामों की संख्या के विश्लेषण के चरम मानों के प्वासों बंटन (possion distribution) के अनुप्रयोग पर आधारित है। ध्यान देने की बात है कि एम०एन०पी० उपस्थित जीव की पूर्ण सान्द्रता नहीं है बल्कि प्रत्यक्ष प्वासों बंटन का केवल सांख्यिकीय आकलन है।

$0.1\ cm^3$ निविष्ट की जाती हैं (देखिए चित्र 20.3) 35^0 C पर ऊष्मायन (incubation) के 24± घंटे बाद नलियों का गैस उत्पादन के लिए मूल्यांकन किया जाता है। जो नलियां सकारात्मक गैस उत्पादन प्रदर्शित करती हैं वे कोलीफॉर्मों का अनुमानित प्रमाण प्रस्तुत करती हैं और नकारात्मक गैस उत्पादन का अर्थ है कि कोलीफॉर्म नहीं है। प्रत्येक उपसमुच्चय से ऐसी सकारात्मक और नकारात्मक नलियों की संख्या गिन ली जाती है और इन मानों को सांख्यिकीय सारणियों में प्रयुक्त किया जाता है जिससे सर्वाधिक प्रसंभाव्य संख्या (एम०पी०एन०) प्राप्त होती है। ऐसी ही एक एम०पी०एन० सारणी परिशिष्ट I में दी गई है। एम०पी०एन० सारणी से कोलीफॉर्मों की सर्वाधिक प्रसंभाव्य अथवा संभावित संख्या का आकलन किया जा सकता है।

- संपुष्टि परीक्षण

दूसरा चरण संपुष्टि परीक्षण का है। इसमें एक स्वच्छ किण्वन नली को, चटक हरा जिसमें बाइल और लैक्टोस (brilliant green, bile, and lactose) (बी०जी०बी०एल०) ब्रॉथ हो, अनुमानित परीक्षण के सकारात्मक परीक्षण के नमूने के साथ निविष्ट किया जाता है। बी०जी०बी०एल० ब्रॉथ में अवयव, कोलीफॉर्म के लिए वरणात्मक होते हैं। 24 घंटों तक

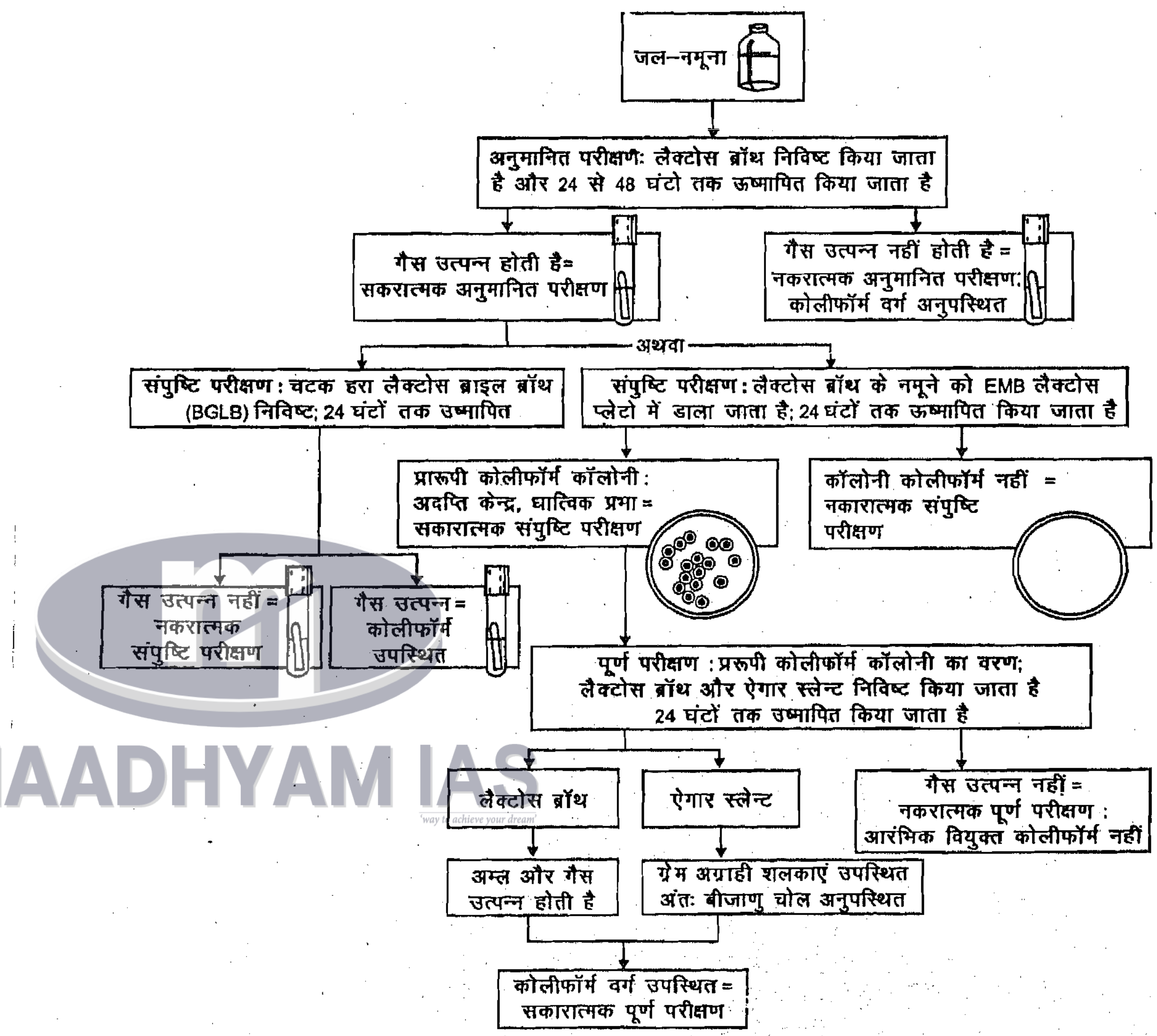

चित्र 20.2: बहुनली किण्वन परीक्षण द्वारा कोलीफॉर्म के लिए पेय जल का विश्लेषण

MAADHYAM IAS

ऊष्मायन के बाद इस नली का गैस उत्पादन के लिए प्रेक्षण किया जाता है। इससे कोलीफ़ॉर्मों की उपस्थिति की पुष्टि होती है।

वैकल्पिक रूप से नमूनों के कोलीफॉर्म जीवाणुओं के कल्चर विकसित करके भी कोलीफॉर्मों की उपस्थिति की संपुष्टि जा सकती है। ये नमूने उस नली से लिए जाते हैं जो वरणात्मक माध्यम में सकारात्मक अनुमानित परीक्षण प्रदर्शित करते हैं। वरणात्मक माध्यम इओसिन मेथिलीन ब्लू ऐगार (इ०एम०बी०) अन्य जीवों की वृद्धि को रोक देते हैं। 35°C पर 24 घंटों तक ऊष्मायन करने के बाद उसका कोलीफॉर्म की प्ररूपी कालोनी के लिए परीक्षण किया जाता है। यदि प्ररूपी कालोनी दिखाई दे तो 'पूर्ण परीक्षण' किया जाता है।

- **पूर्ण परीक्षण**

इ०एम०बी० प्लेट से अनेक कालोनियों का लैक्टोस ब्रॉथ किण्वन नली में पोषक ऐगार स्लैन्ट पर उपसंवर्धन किया जाता है। दोनों का 35°C पर 24 घंटों के लिए उष्मायन किया जाता है। ब्रॉथ में गैस और स्लैन्ट पर ग्रैम अग्राही,अबीजाणु शलाका का बनना कोलीफार्मो को प्रमाणित करता है।

दैनिक जल विश्लेषण के लिए केवल अनुमानित परीक्षण किया जाता है। अनुमानित परीक्षण के प्रमुख चरणों को संक्षेप में चित्र 20.3 में दिखाया गया है।

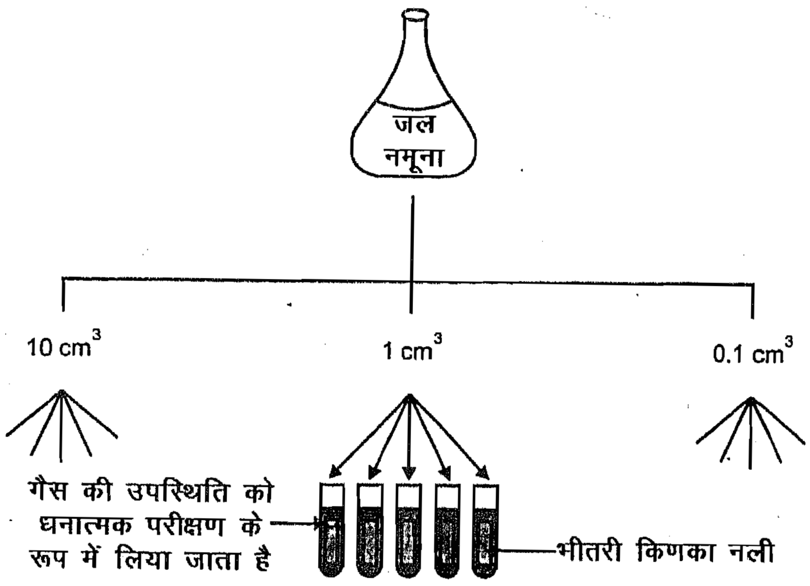

चित्र 20.3: अनुमानित परीक्षण का निदर्श-चित्र

अपेय प्रदूषित जल के लिए अल्प आयतन के अर्थात् 1 सेमी^{3}, 0.1 सेमी$^{-3}$ और 0.01 सेमी^{3} के नमूने लिए जाते हैं। नमूने की अल्प मात्राओं को स्थानांतरित करना कठिन होता है, इसलिए पहले एक श्रेणी में तनुकरण किया जाता है जैसा कि नीचे दिखाया गया है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

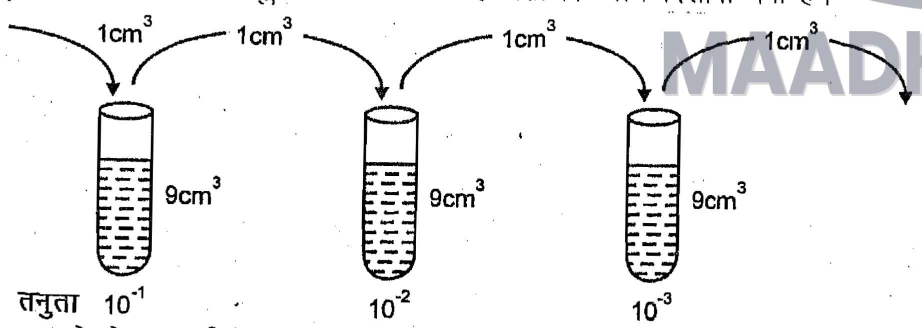

आरंभिक नमूने के 1 cm^3 में कोशिकाओं की जितनी संख्या होगी उससे प्रथम न ा के 1 cm^3 नमूने में उनकी संख्या 1/10 ही होगी।

नमूने का निवेशन और तनुकरण निर्जर्म परिवेश में किया जाता है अर्थात् या तो पराबैंगनी प्रकाश युक्त निवेश कक्ष में अथवा ज्वाला के परिवेश में किया जाता है।

2) झिल्ली निस्यंदन परीक्षण (membrane filter test)

जल के तीव्र परीक्षण के लिए आजकल इस विधि का विस्तृत उपयोग किया जाता है। यह विधि निम्नलिखित चरणों में होती हैं :

1. जीवाणुरहित निस्यंदन यूनिट में एक झिल्ली निस्यंदक रखा जाता है। झिल्ली निस्यंदक में बहुत छोटे रंध्र (0.45 माइक्रोमीटर व्यास के) होते हैं। जीवाणु, निस्यंदक में ही रह जाते हैं क्योंकि वे रंध्र से बड़े होते हैं जबकि जल-नमूना उसमें से निकल जाता है देखिए चित्र 20.4।
2. निर्वात पंप की मदद से नमूने का ज्ञात आयतन (प्राय 100 cm^3) को इस यूनिट में से निकाला जाता है। जीवाणु, झिल्ली-निस्यंदक के पृष्ठ पर रह जाते हैं।
3. झिल्ली निस्यंदक को पृथक कर ऐसे अवशोषक पैड पर रखा जाता है जिसे उपयुक्त माध्यम द्वारा संसिक्त किया गया हो। अथवा वैकल्पिक रूप से निस्यंदक को अपूतिक रूप से पेट्रीडिश में ऐगार माध्यम (इ०एम०बी० अथवा ऐन्डो ऐगार) के पृष्ठ पर रखा जा सकता है।
4. 35^o C पर 24 घंटों तक ऊष्मायित करने के बाद झिल्ली निस्यंदक पर कालोनियों के परिवर्धन के लिए प्रेक्षण करें। इ०एन०बी० पर प्ररूपी कोलीफॉर्म कालोनी गहरे बैंगनी रंग की होती हैं और उनकी हरी धात्विक प्रभा होती है। ऐन्डो (endo) पर कालोनी गहरे लाल रंग की होती हैं और पृष्ठों पर गुलाबी अथवा लाल धात्विक प्रभा होती है। कोलीफॉर्म कालोनियों की गणना कर ली जाती है और परिणाम प्रति 100 cm^3 कुल कोलीफॉर्म के रूप में व्यक्त किए जाते हैं। इन कालोनियों का सत्यापन पूर्व प्रक्रिया (i) से किया जाता है।

पिछली तकनीक की तुलना में इस तकनीक के निम्नलिखित लाभ हैं।

झिल्ली निस्यंदक तकनीक और उपभोज्यों की ऊंची लागत के कारण, भारत में बहुनली किण्वन विधि का उपयोग अधिक किया जाता है।

i) जल नमूने की किसी भी मात्रा का परीक्षण किया जा सकता है।
ii) जीवों के चयन अथवा विभेदन के लिए एक ही झिल्ली निस्यंदक का उपयोग अथवा एक माध्यम से दूसरे माध्यम में स्थानांतरण किया जा सकता है।
iii) मानक एम०पी०एन० विधि की अपेक्षा इससे शीघ्र परिणाम प्राप्त होते हैं।
iv) कोलीफॉर्म आदि जीवाणुओं का उपयुक्त माध्यम में गुणात्मक आकलन किया जा सकता है।

इस तकनीक की कुछ निम्नलिखित कमियां हैं :

i) झिल्ली निस्यंदन, उच्च आविलता और न्यून गणन वाले जल के लिए उपयुक्त नहीं होता है क्योंकि पर्याप्त मात्रा में जल के गुजरने से पहले निस्यंदक अवरुद्ध हो जाएगा।
ii) माध्यम में अभिवृद्धि कर सकने वाले अनेक गैर-कोलीफार्म जीव, कोलीफार्म समूह के साथ बाधा उत्पन्न कर सकते हैं।

MAADHYAM IAS

उपर्युक्त परीक्षणों से प्राप्त कोलीफॉर्म जीवाणुओं की कुल गणना, जल स्रोतों की पेयता को निर्धारित करता है। प्रति 100 cm^3 कुल कोलीफॉर्म गणना के आधार पर जल को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है (देखिए सारणी 20.3)।

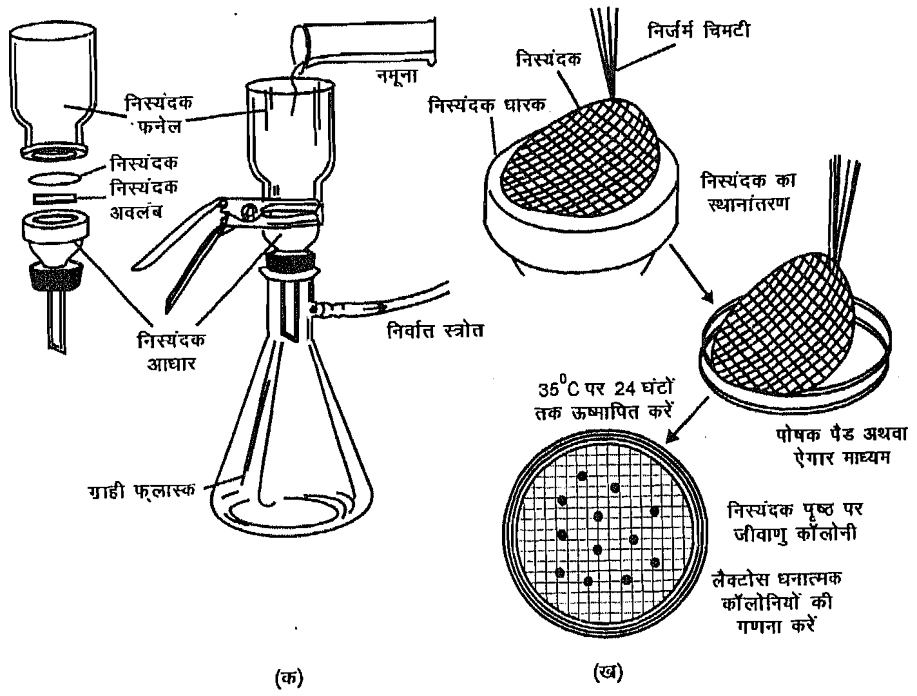

चित्र 20.4: झिल्ली-निस्यंदक व्यवस्था क) निस्यंदन यूनिट ख) नमूने को निस्यंदन करने के बाद झिल्ली को पेट्रीडिश में रखा जाता है, जिसमें संवर्ध माध्यम हो, और फिर ऊष्मायित किया जाता है।

सारणी 20.3: जीवाण्विक परीक्षणों के अनुसार पेय जल का वर्गीकरण

		अनुमानित कोलीफॉर्म गणना एम०पी०एन० प्रति 100 cm^3	इ०कोली (एफ०सी०) एम०पी०एन० प्रति 100 cm^3
I	उत्तम	0	0
II	संतोषजनक	1 – 3	0
III	संदेहजनक	4 – 10	0
IV	असंतोषजनक	> 10	0 – 10

ग्रामीण क्षेत्रों में जहां सेप्टिक टैंकों का उपयोग किया जाता है वहां वर्षा वाह जल अध्ययन और प्रदूषण-अध्ययन में प्रदूषण के स्रोत को निर्धारित करने में एफ०सी०/एफ०एस० अनुपात बहुत उपयोगी हो सकता है।

मल कोलीफॉर्म (Fecal coliform) (FC) जीवाणु वर्ग का निर्धारण 24 ± 2 घंटों तक उन्नयित ऊष्मायन ताप (44.5°C) पर गैस (अथवा कालोनियों) को उत्पन्न करने की क्षमता पर निर्भर करता है

मल प्रदूषण, यदि हो तो, उसे मल (fecal) कोलीफॉर्म (एफ०सी०) गणन द्वारा निर्धारित की जाती है जो मानव प्रदूषण का सूचक होता है। सूचक जीवाणुओं का एक अन्य वर्ग होता है जिसे मल स्ट्रेप्टोकोसाई (fecal streptococci or FS) (एफ०एस०) कहते हैं। मल स्ट्रेप्टोकोकल गणना, अन्य जन्तु स्रोतों से उत्पन्न प्रदूषण की ओर संकेत करता है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

किसी नमूने के मल स्ट्रेप्टोकोकस प्रति सेमी^{3} की मल कोलीफॉर्मों के साथ अनुपात (एफ०सी०/एफ०एस०) की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है :

2 और 4 के बीच	–	मानव और जन्तु प्रदूषण
> 4	–	मानव प्रदूषण
< 0.7	–	कुक्कुट और पशुधन प्रदूषण

सूचक जीवाणु वर्गों के सह्य स्तरों (tolerable levels) के मानक

जल के अभीष्ट उपयोग के अनुसार मानक भिन्न होते हैं (देखिए सारणी 20.4)। नगर पालिकाओं द्वारा सप्लाई किए जाने वाले जल पर जिसे अधिकांश लोग इस्तेमाल करते हैं। सबसे सख्त मानक प्रयुक्त किए जाते हैं।

किसी संक्रमण को प्रमाणित करने के लिए सैकड़ों से हजारों जीवाणुओं की न्यूनतम संक्रामक मात्रा की आवश्यकता होती है। 1/100 cm^3 कोलीफॉर्म मानक को पूरा करने वाले पेय जल आपूर्ति, उपयोग के सुरक्षित होती है।

सारणी 20.4: सूचक जीवाणु वर्गों के लिए कुछ भारतीय और अंतर्राष्ट्रीय जल गुणता मानक

उपयोग	कुल कोलीफॉर्म एम०पी०एन० प्रति 100 cm^3	मल कोलीफॉर्म एम०पी०एन० प्रति 100 cm^3	एजेंसी/देश
सार्वजनिक जल आपूर्ति	0	0	वि०स्वा०सं (WHO)
पेय जल स्रोत, परंपरागत उपचार के बिना, किन्तु विसंक्रमण के बाद	< 50	कोई मान नहीं	भारत
पेय जल स्रोत, परंपरागत उपचार और विसंक्रमण के बिना	< 5000	कोई मान नहीं	भारत
स्नान, मनोरंजन के लिए प्रयुक्त जल	5000 निर्देश 10,000 अनिवार्य	100 निर्देश 2000 अनिवार्य	यूरोप
बाहरी स्नान (संगठित)	< 500	कोई मान नहीं	भारत
कवच प्राणीयन	70	कोई मान नहीं	संयुक्त राज्य
(shell fishing)	कोई मान नहीं	14	वेनेजुला मेक्सिको

बोध प्रश्न 4

क) किस जीव के लिए अनुमानित परीक्षण का उपयोग किया जाता है?

....

....

....

ख) एम०पी०एन० का क्या अर्थ है?

....

....

....

ग) *ई०कोली* और एन्टेरोबैक्टर इ०एम०बी० ऐगार पर कौन सा कॉलोनी रंग बनाते हैं?

....

....

....

घ) संपुष्टि परीक्षण में सकारात्मक अनुमानित परीक्षण से .... ब्रॉथ अथवा .... ऐगार में स्थानांतरण किया जाता है।

ङ) एक जल विश्लेषण में निम्नलिखित परिणाम प्राप्त हुए। परिशिष्ट I में दी गई एम०पी०एन० सारणी से कोलीफॉर्म सान्द्रता ज्ञात कीजिए।

MAADHYAM IAS

cm^3 में जल-नमूना	सकारात्मक नलियों की संख्या	नकारात्मक नलियों की संख्या
10	4	1
1	4	1
0.1	1	4

20.3 मृदा का सूक्ष्मजैविक परीक्षण

सामान्य व्यक्ति मृदा को अक्रिय पदार्थ मानता है। किन्तु इस धारणा के विपरीत यह विशाल और विविध सूक्ष्मजैविक आबादी सहित अनेक प्रकार के जीवों के भण्डार का काम करती हैं। मृदा में रहने वाले इन जीवों के लाभदायक कार्य उनके हानिकारक प्रभावों से बहुत अधिक हैं।

मृदा में रहने वाले सूक्ष्मजीवों की अनुपस्थिति में पृथ्वी पर जीवन बनाए रखना असंभव है। मृदा में मृत पादप, जन्तु ऊतक और जन्तु अपशिष्ट आदि जैव द्रव्य के निम्नीकरण के लिए सूक्ष्मजीवी आवश्यक हैं। सूक्ष्मजैविक एन्ज़ाइमों द्वारा इन स्थूल अणुओं के जल-अपघटन से मृदा को मूल तत्व पोषकों की आपूर्ति और पुनः प्राप्ति होती रहती है। एन्ज़ाइमी रूपांतरण द्वारा पौधे इन पोषकों का कार्बनिक यौगिकों में स्वांगीकरण कर लेते हैं जो उनकी वृद्धि और उत्पादन के लिए आवश्यक होते हैं। बदले में ये पौधे जीवों के लिए पोषण द्रव्यों के स्रोत का काम करते हैं। इस प्रकार अनेक मृदा जीव कुछ तात्विक चक्रों में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। उनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं : नाइट्रोजन चक्र, कार्बन चक्र और गंधक चक्र। कुछ सूक्ष्मजीव, फ़ास्फ़ोरस, लोहा, पोटैशियम, जस्ता, मैंगनीज और सिलीनियम आदि तत्वों के एन्जाइमी रूपांतरण में भी कार्य करते हैं। इन जैवरासायनिक परिवर्तनों से ये खनिज पौधों को विलेय रूप में उपलब्ध रहते हैं।

20.3.1 सूक्ष्मजैविक आबादी

यह ध्यान रखना आवश्यक है कि मृदा पर्यावरण एक स्थान से दूसरे स्थान में और एक अवधि से दूसरी अवधि में भिन्न-भिन्न होते हैं। इसलिए किसी विशेष नमूने की विशिष्ट सूक्ष्मजैविक वनस्पति के निर्धारण में नमी, पी०एच०, ताप, गैसीय ऑक्सीजन मात्रा तथा मृदा के जैविक और अजैविक संघटन निर्णायक होते हैं। मृदा में जीवाणु, कवक, ऐक्टिनोमाइसिटीज, प्रोटोजुआ, शैवाल और विषाणु सहित असंख्य सूक्ष्मजीव होते हैं। उनकी संख्या अरबों में हो सकती है (सारणी 20.5)। इस विविधता के बावजूद मृदा में जीवाणुओं की आबादी, सूक्ष्मजीवों के अन्य सब वर्गों की आबादी से, संख्या और किस्म दोनों में, अधिक होती है।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

सारणी 20.5: उपजाऊ मृदा में सूक्ष्मजैविक आबादी

प्रकार		संख्या प्रतिग्राम
जीवाणु	प्रत्यक्ष गणना	2,500,000,000
	तनुकरण प्लेट	15,000,000
ऐक्टिनोमाइसिटीज		700,000
कवक		400,000
शैवाल		50,000
प्रोटोजोआ		30,000

जीवन के स्थूल रूप जैसे केंचुए, सूत्रकृमि, बरूथी और कृमि तथा पादपों का मूल-तंत्र भी चारों ओर पाए जाते हैं। इस प्रकार मृदा अत्यंत जटिल जीवित पर्यावरण है।

मृदा में अभिलाक्षणिक संस्तर होते हैं। ये विभिन्न मोटाई और संरचना की समांतर परतें होती हैं। प्रत्येक संस्तर अपने ऊपर और नीचे के संस्तर से कार्बनिक और पी०एच० की दृष्टि से भिन्न होता है। ये गुणधर्म, आर्द्रता, गैसीय मात्रा तथा संस्तर की जैव-मात्रा में को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए जिस संस्तर में जैव द्रव्य पर्याप्त मात्रा में होता है उसमें जैव गतिविधियां बहुत अधिक होती हैं तथा वह आधार शैल (bedrock) से बने संस्तर से बिल्कुल भिन्न होता है आधार शैल से बने संस्तर में जैव द्रव्य बहुत कम होता है और उसमें जैव गतिविधियां भी कम होती हैं।

बोध प्रश्न 5

क) मृदाओं का लक्षण-वर्णन कैसे किया जाता है?

....

....

....

ख) मृदा में सूक्ष्मजीवों की संख्या और प्रकार को प्रभावित करने वाले कारक कौन से हैं?

....

....

....

ग) मृदा में निम्नलिखित की संख्याओं की तुलना कीजिए विषाणु, प्रोटोजोआ, शैवाल, कवक, जीवाणु।

....

....

....

घ) तीन मुख्य तात्विक चक्र कौन से हैं?

....

....

....

ङ) मृदा में जैव द्रव्य की भूमिका बताइए।

....

....

....

MAADHYAM IAS

20.3.2 मृदा सूक्ष्मजीवों की अध्ययन विधियां

सूक्ष्मजैव अध्ययन के लिए प्रयुक्त मृदा-नमूने में प्रकृति में पाए जाने वाले असंख्य सूक्ष्म-जीवों का मिश्रण होता है। मृदा के विभिन्न रूपों, संरचनाओं और उपापचयी गतिविधियों के आकलन के लिए तथा मृदा में सूक्ष्मजीवों की व्यवस्था के निर्धारण के लिए प्रयुक्त विधियों में रूप का निर्धारण, मृदा में सूक्ष्म जीवों की व्यवस्था, उपवर्ग और जाति (स्पीशीज) का पृथक्करण और लक्षण वर्णन तथा उपापचयी प्रक्रमों का संसूचन एवं माप शामिल हैं।

मृदा के नमूने प्राप्त करना

1. मृदा के नमूने प्रायः 6 इंचों की गहराई से एकत्रित कर स्वच्छ पात्रों में स्थानांतरित कर दिए जाते हैं।
2. प्रत्येक प्रतिकृति के लिए तीन से पांच नमूने लिए जाते हैं और उन्हें भली भांति मिला लिया जाता है।
3. किसी प्रतिकृति के प्रतिनिधि नमूने के रूप में कम से कम 10 – 25 ग्राम मृदा ली जाती है।

मृदाओं में भिन्नता होने के कारण उनके विश्लेषण के लिए प्रयुक्त सूक्ष्मजैव विधियां भी भिन्न होती हैं। मृदा सूक्ष्मजीवों के अध्ययन के लिए निम्नलिखित विधियों का प्रयोग किया जाता है:

1. **प्रत्यक्ष सूक्ष्मदर्शिका (direct microscopy)**

मृदा में सूक्ष्मजीवों के रूप और विन्यास के निर्धारण के लिए प्रत्यक्ष परीक्षण उपयोगी होता है। मैग्नीशियम सल्फोनिक अम्ल, एक्रीडीन आरेन्ज और फ्लूओरेसीन आइसोथायोसायनेट (एफ़०आइ०टी०सी०) जैसे प्रतिदीप्तिशील अभिरंजकों द्वारा सामान्य प्रकाश सूक्ष्मजैविकी (light microscopy) की मदद से मृदा-कणों पर सूक्ष्मजीवों का प्रेक्षण संभव होता है। संचरण इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शिकी (टी०इ०एम०) और क्रमवीक्षण इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शिकी (एस०इ०एम०) से अच्छा विभेदन प्राप्त होता है तथा वे सूक्ष्मजीवों के आकार और संरचना दोनों को प्रदर्शित करते हैं। एस०इ०एम० से त्रिविम दृश्य प्राप्त होता है।

प्रत्यक्ष सूक्ष्मदर्शी परीक्षण के लिए मृदा के तनु नमूने को स्वच्द कांच स्लाइड के ऊपर पतली फिल्म के रूप में फैलाया जाता है। फिल्म के स्थिरीकरण और अभिरंजन के बाद सूक्ष्मजीवों की सूक्ष्मदर्शी द्वारा गणना की जाती है। यद्यपि इस विधि का उपयोग सूक्ष्मदर्शी की कुल आबादी का आकलन करने के लिए किया जाता है किन्तु मृत सूक्ष्म जीवों से जीवित सूक्ष्म जीवों में भेद करने के लिए विशिष्ट अभिरंजन तकनीकें आवश्यक हैं। अभिरंजन की अनेक तकनीकें हैं। ऐक्रिडीन आरेन्ज सबसे पुराना और सर्वाधिक प्रयुक्त अभिरंजक है जो कोशिकाओं के अंदर डी०एन०ए० को अभिरंजित कर देता है। जीवित कोशिकाओं का रंग हरा हो जाता है जबकि मृत कोशिकाओं में प्रकार्यात्मक साइटोप्लाज्मी झिल्ली न होने के कारण वे बहुत अधिक रंजक का अवशोषण कर लेती है और लाल रंग की हो जाती है। फ्लुओरेसिन आइसोथायोसायनेट (एफ़०आइ०टी०सी) प्रोटीन में मौजूद डाइसल्फाइड समूह द्वारा अवशोषित होता है और जीवाणुओं के लिए उत्तम है किन्तु सब कवकों द्वारा अवशोषित नहीं होता है। कवकों के लिए, जल विलेय प्रतिदीप्तिशील रंजक ऐनिलीन ब्लू जो कवक कोशिकाओं में मौजूद β (1 – 3) ग्लाइकन बंधनों द्वारा अवशोषित होता है, उपयुक्त रहता है।

MAADHYAM IAS

2. **ऐगार प्लेट तकनीक (agar plate tehniquc)**

यह मृदा-सूक्ष्मजीवों के पृथक्करण और गणना की एक सर्वाधिक प्रयुक्त विधि है। मृदा के तनु नमूनें (1 सेमी^{3} अथवा 0.1 cm^3 समभाग) परखनलियों में डाले जाते हैं जिनमें गलित और शीतलित ऐगार माध्यम होता है। ठीक प्रकार मिलाने के बाद मिश्रण को जीवाणुरहित पेट्रीप्लेटों में उड़ेल दिया जाता है। वैकल्पिक रूप से तनुकृत भागों को पिंडित ऐगार माध्यम की प्लेटों के पृष्ठ के ऊपर फैला दिया जाता है जिससे कॉलोनियाँ विकसित हो जाएं। प्लेटों पर विकसित कॉलोनियों की संख्या से मृदा के प्रति ग्राम जीवित जीवों की संख्या परिकलित की जा सकती है।

वांछित वर्ग को बढ़ावा देने और अन्य प्रकार के सूक्ष्मजीवों के संदमन के लिए उचित निरोधकों को मिलाना चाहिए। उदाहरण के लिए जीवाणुओं के संदमन और कवकों की वृद्धि को बढ़ावा देने के लिए माध्यम में रोज बेन्गल और स्ट्रेप्टोमाइसिन मिलाए जाते हैं। कवकों के लिए निस्टेटिन। साइक्लोहेक्सामाइड मिलाया जाता है।

स्मरणीय है कि किन्हीं विशेष संवर्धन परिस्थितियों में कुल सूक्ष्मजैव आबादी के केवल एक भाग का वर्धन हो सकेगा। उदाहरण के लिए यदि पोषक ऐगार माध्यम का उपयोग करें और प्लेटों को अंधेरे में 35^{o} C पर 48 घंटों तक वायु में ऊष्मायित करें तो आप निम्न प्रकार के सूक्ष्मजीवों की पहचान नहीं कर पाएंगे :

1. अवायुजीवी और अल्पवातरागी क्योंकि वे वायुमंडल द्वारा विषाक्त हो जाते हैं।
2. तापरागी, मध्यतापरागी और शीतरागी क्योंकि 35^{o} C पर उनका वर्धन नहीं होता है।
3. प्रकाशस्वपोषी क्योंकि उन्हें ऊर्जा स्रोत के रूप में प्रकाश की आवश्यकता होती है।
4. रसायन स्वपोषी, क्योंकि उन्हें अकार्बनिक पोषकों की आवश्यकता होती है।
5. मंद वर्धक क्योंकि दृश्य कालोनियां बनाने के लिए उन्हें एक सप्ताह अथवा उससे भी अधिक समय लगता है।

इसलिए, उल्लेखनीय है कि आवश्यकतानुसार विभिन्न माध्यमों और ऊष्मायन अवस्थाओं का उपयोग किया जा सकता है।

3. सर्वाधिक प्रसंभाव्य संख्या (most probable number) (एम॰पी॰एन॰)

यदि प्लेट गणन उपयुक्त न हों तो तनुता गणन किए जा सकते हैं। तनुता-गणन अधिकतम मृदा-तनुता का निर्धारण है जिसमें, उपयुक्त माध्यम में, वर्धन हो सकेगा। परखनलियों के तीन सेटों (सामान्यत: 10, न्यूनतम 5) को संरोपित (enoculation) करने के लिए तीन क्रमिक तनुताओं से संरोप्यों का उपयोग किया जाता है (चित्र 20.5)। प्रत्येक परखनली में दृश्य वर्धन (visual growth) की गणना की जाती है और उसे धनात्मक माना जाता है और जिन परखनलियों में वर्धन नहीं होता है उन्हें ऋणात्मक माना जाता है। मानक सारणी की सहायता से इन्हें संख्याओं में परिवर्तित किया जाता है जैसे कि जल के नमूने के साथ किया था। इसे सूक्ष्मजीवों की गणना की सर्वाधिक प्रसंभाव्य संख्या (एम॰पी॰एन॰) कहते हैं।

4. समृद्धि संवर्धन तकनीक (enrichment culture technique)

MAADHYAM IAS

अन्य विधि संवर्धन तकनीक है। यह किसी नमूने में विद्यमान सूक्ष्मजैविक वनस्पति की मात्रात्मक सूचना प्रदान नहीं करती है। इसके बजाय यह उन सूक्ष्मजीवों को पृथक करने में सहायता करती है जो मूल नमूने में बहुत कम संख्या में विद्यमान विशेष सबस्ट्रेट (कार्य द्रव) का उपापचयन कर सकते हैं। उदाहरणार्थ, माना आप मृदा सूक्ष्मजीवों को पृथक करना चाहते हैं जो लिग्निन जैसे किसी संकुलन यौगिक को निम्नीकरण कर सके (चित्र 20.6)। आपको ऐसा माध्यम तैयार करना पड़ेगा जिसमें लिग्निन, कार्बन का केवल मात्र स्रोत (ऊर्जा स्रोत) हो। फिर ऊर्जा स्रोत को फ्लास्क श्रेणी के पहले फ्लास्क में संरोपित किया जाता है और फिर उस फ्लास्क को ऊष्मायित्र में रखा जाता है। अनेक दिनों के ऊष्मायन के बाद कुछ पदार्थ को अपूतित: पहले फ्लास्क से दूसरे फ्लास्क में स्थानांतरित किया जाता है। इस प्रक्रम को अनेक बार दोहराया जाता है। इस श्रेणी में अंतिम निविष्ट फ्लास्क के ऊष्मायन के बाद इस फ्लास्क में रखे पदार्थ को ऐगार माध्यम में स्थानांतरित कर दिया जाता है जिसमें लिग्निन केवल मात्र कार्बन स्रोत होता है। ऊष्मायन के बाद ऐगार पर

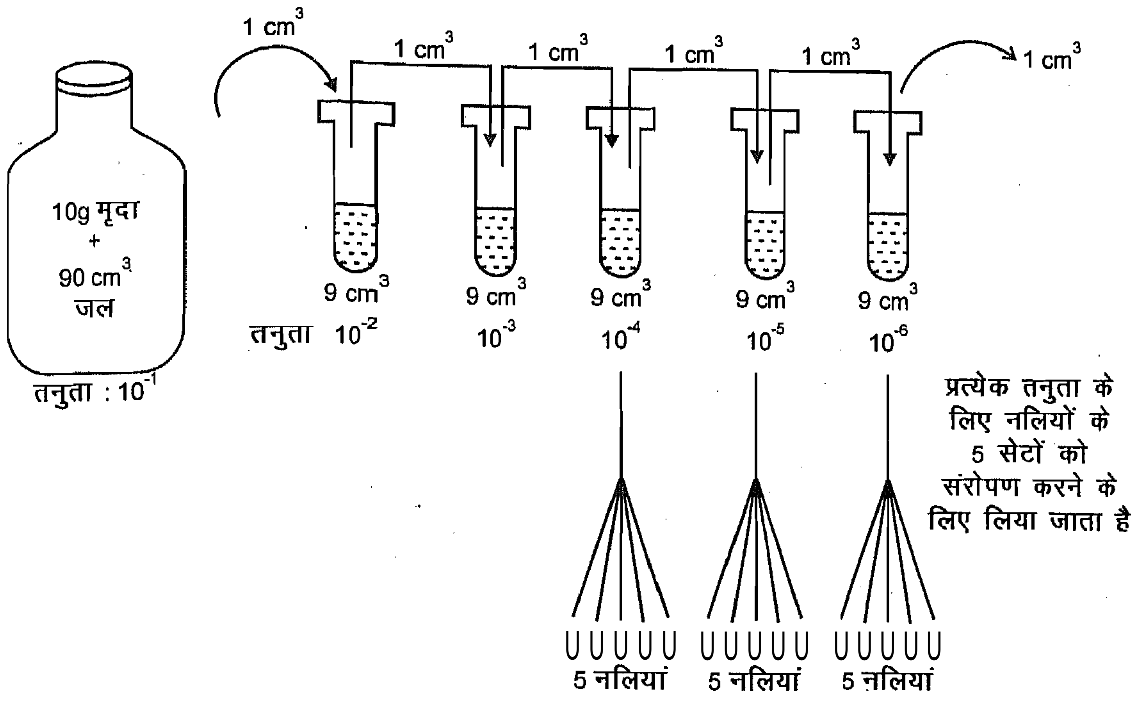

चित्र **20.5:** सर्वाधिक प्रसंभाव्य संख्या तकनीक

कॉलोनियों का वर्धन होगा जिनमें लिग्निन उपयोजक सूक्ष्मजीव होते हैं। इसकी पुष्टि के लिए परीक्षण की जाने वाली प्रत्येक कॉलोनी की अल्पमात्रा को द्रव माध्यम में संरोपित किया जाता है जिसमें लिग्निन सबस्ट्रेट होता है अथवा नहीं होता। यदि संवर्धन प्रक्रम का चयन और वर्धन लिग्निन उपयोजक सूक्ष्मजीवों के वर्धन के लिए हो तो ऊष्मायन के बाद वर्धन के केवल उस माध्यम में होगा जिसमें सबस्ट्रेट है।

यद्यपि यह विधि विशिष्ट जीवों को पृथक करने के लिए होती है किन्तु यह निश्चित नहीं है। अर्थात् विटामिन आदि आवश्यक घटकों की कमी से वांछित उपापचयी प्रकार के सूक्ष्मजीवों का पृथक्करण नहीं होगा। वैकल्पिक रूप से संकुल सबस्ट्रेट के निम्नीकरण से एक से अधिक प्रकार के सूक्ष्मजीव प्राप्त हो सकते हैं।

5. दफन स्लाइड तकनीक (burial slide technique)

इस विधि को आरंभ में रॉसी और कोलोड्नी ने विकसित किया था। प्रयोगकर्ताओं के आवश्यकता के अनुसार इसमें संशोधन किए गए हैं। यह तकनीक मृदा संशोधनों के प्रभाव में मृदा सूक्ष्मवनस्पति में गुणात्मक परिवर्तनों का अध्ययन करने के लिए उपयोगी है। इसमें एक स्वच्छ कांच स्लाइड की आवश्यकता होती है जिसे मृदा में झिरी में प्रविष्ट किया जाता है। इसे तीन सप्ताह तक उसी स्थिति में रखा जाता है। स्लाइड के ऊपरी पार्श्व को विक्षुब्ध किए बिना सावधानीपूर्वक हटा दिया जाता है। ऊपरी पार्श्व को धीरे से जल से धोकर हवा में सुखा लिया जाता है और मंद ज्वाला में स्थिर कर दिया जाता है। उसके बाद ऊपरी पार्श्व को एरिथ्रोसिन अथवा रोज बंगाल से अभिरंजित कर दिया जाता है और सूक्ष्मवनस्पति के अध्ययन के लिए सूक्ष्मदर्शी द्वारा प्रेक्षण किया जाता है।

MAADHYAM IAS

6. मृदा श्वसन तकनीक (soil respiration technique)

जब कार्बन युक्त सबस्ट्रेट, मृदा में ऑक्सीकृत किए जाते हैं तो CO_2 उत्पन्न होती है। CO_2 परिमापन, मृदा में सूक्ष्मजैविक गतिविधि का एक प्राचल अथवा सूचक है। CO_2 निर्धारण के लिए भारमापी, आयतमापी और दाबांतरमापी आदि सरल विधियों का उपयोग किया जाता है।

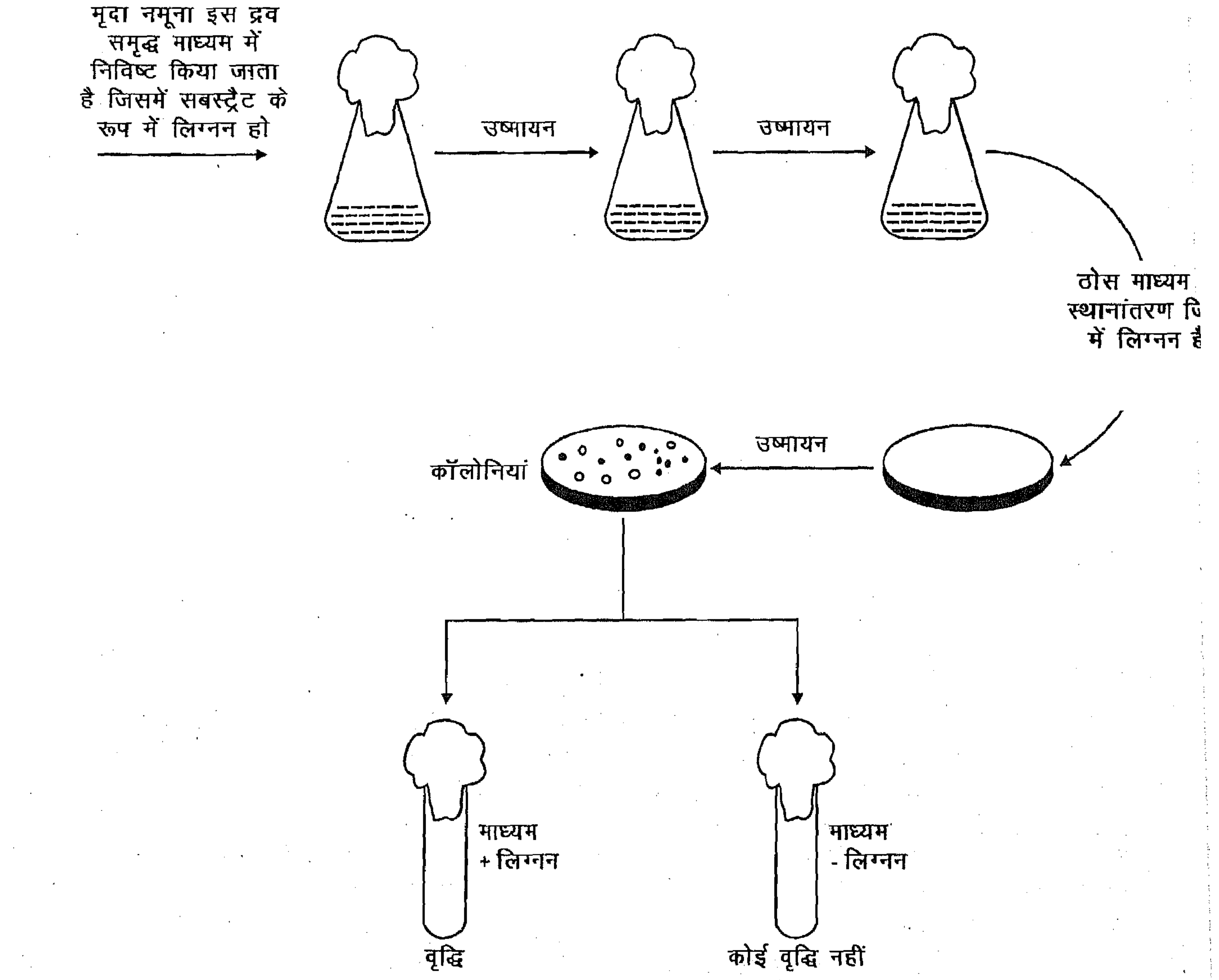

चित्र 20.6: समृद्धि संवर्धन तकनीक

i) दाबांतरमापी विधि

इसमें बारबर्ग दाबांतरमापी का उपयोग किया जाता है। किसी दाबांतरमापी फ्लास्क में 1–10 ग्राम मृदा लेकर उसमें जल अथवा बफर विलयन मिलाया जाता है जिससे 60% संतृप्ति प्राप्त हो। बीच के कूप में 3% पोटैशियम हाइड्रॉक्साइड विलयन का 0.2 सेमी^{3} डाला जाता है। CO_2 के अवशोषण के लिए पृष्ठीय क्षेत्र बढ़ाने के उद्देश्य से निस्यंदन पत्र का एक छोटा रोल भी वहां रख दिया जाता है। इसके बाद फ्लास्कों को बारवर्ग दाबांतरमापी के साथ संयुक्त करने के बाद (जिनमें सूचक के रूप में ब्रॉडी विलयन होता है) 30^o C पर जल बाथ में निलंबित कर दिया जाता है। समान अंतरालों पर दाबांतरमापी में पठनांकों में होने वाले परिवर्तनों को नोट कर लिया जाता है। ऑक्सीजन अंतर्ग्रहण की दर $l/g/hr$ में व्यक्त की जाती है।

MAADHYAM IAS

ii) आयतनमापी विधि

इस तकनीक में एक निश्चित अवधि में उत्पन्न CO_2 को एक वायुरुद्ध फ्लास्क में रखे NaOH विलयन में अवशोषित कर लिया जाता है। एक dm^3 के फ्लास्क में 100 ग्राम मृदा ली जाती है। एक परखनली में मानक M/2 NaOH का 15 cm^3 लेकर उसे इस फ्लास्क में निलंबित करने के बाद शीघ्र डाट लगा दिया जाता है। 24 घंटे तक ऊष्मायन

के बाद परखनली में रखी अंतर्वस्तु नए फ्लास्क में स्थानांतरित कर दी जाती है और परखनली में फिर से M/2 NaOH विलयन का 15 cm^3 भर दिया जाता है। उसे फिर से फ्लास्क में रखकर ऊष्मायित किया जाता है। पृथक किए गए NaOH का बोरियम क्लोराइड के संतृप्त विलयन के साथ उपचार किया जाता है जिसमें फीनॉल्फथेलीन विलयन की *2-3* बूंदे मिलाई गई हो। इसका मानक HCl (M/2) के साथ पश्च-अनु मापन किया जाता है।

7. मृदा एन्जाइम (Soil Enzymes)

जीवन में अनेक एन्जाइम अभिक्रियाऐं होती हैं और पोषण-चक्र की अधिकांश अभिक्रियाएं एन्जाइम द्वारा ही संपन्न होतीं हैं। अनेक एन्जाइम, मृदा सूक्ष्मजीवों द्वारा उनके उपापचय के समय उत्पन्न होते हैं। मृदा सूक्ष्मवनस्पति की कुल गतिविधियां, विभिन्न सूक्ष्मजीवों की गतिविधियों का योग होता है। प्रायः डिहाइड्रोजेनेस गतिविधियां बढ़ जाती हैं क्यों वे अहेतुक होती हैं और केवल जीवित कोशिकाओं में होती हैं और एक आसान प्रयोगशाला तकनीक है। 90% जल धारक क्षमता की 10-20 ग्राम मृदा लेकर उसे 200 मिग्रा $CaCO_3$ और 1% ट्राइफेनिल टेट्राजोलियम क्लोराइड (टी०टी०सी०) विलयन के 2 मिली के साथ मिलाया जाता है। मिश्रण को 24 घंटों तक ऊष्मायित किया जाता है। O_2 की अनुपस्थिति में टी०टी०सी०, सूक्ष्मजैव डिहाइड्रोजेनेस द्वारा उत्पन्न हाइड्रोजन के लिए सीमान्त ग्राही का काम करता है। टी०टी०सी० जो ऑक्सीकृत अवस्था में रंगहीन होता है, ट्राइफेनिल फॉर्मेजोन (टी०पी०एफ०) में अपचित हो जाता है जिसका लाल रंग होता है। टी०पी०एफ० को 485 नैनोमीटर पर मेथेनॉल के साथ निष्कर्षित किया जाता है। उसका प्रकाशित घनत्व, सान्द्रता का समानुपाती होता है और स्पेक्ट्रम प्रकाशमापी द्वारा पढ़ा जा सकता है।

8. आण्विक तकनीक (Molecular Technique)

हाल के वर्षों में अनेक आण्विक तकनीकों के विकास से, कृत्रिम माध्यम की आवश्यकता के बिना, मृदा वनस्पति के अभिनिर्धारण और परीक्षण में बहुत आशा बनी है। इसमें मृदा-अवसाद अथवा जल से डी०एन०ए० अथवा आर०एन०ए० का प्रत्यक्ष निष्कर्षण अथवा सूक्ष्मजीवों से नाभिकीय पदार्थ का निष्कर्षण किया जाता है। 16 S आर०एन०ए० का विश्लेषण जैसे मध्यवर्ती अभिगम से सूक्ष्मजीवों के वर्ग पृथक हो जाते हैं। विशिष्ट अभिगम में जीन अन्वेषी सम्मिलित किए जाते हैं जो जाति स्तर पर अथवा एन्जाइम स्तर पर पृथक हो जाते हैं। एक सर्वाधिक द्रुत और उत्तेजक विकसित तकनीक पॉलिमरेज श्रृंखला अभिक्रिया अथवा पी०सी०आर० है। यह डी०एन०ए० पॉलिमरेज एन्जाइम विशेष रूप से टैक पॉलिमरेज की गतिविधि पर आधारित है जो ऊष्मास्थायी है। गरम और ठंडे चक्रों की श्रेणी में, जबकि प्रत्येक चक्रम कुछ मिनटों का हो, वांछित स्ट्रांड (strand) का चरघातांकी पुनरुत्पादन होता है। इसका जीन अन्वेषी द्वारा विश्लेषण किया जा सकता है। इस तकनीक से मृदा अथवा अवसाद में प्राप्त संकुल आनुवंशिक पदार्थ की अल्पमात्राएं भी मापी जा सकती हैं।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

बोध प्रश्न 6

क) हम मृदा में सूक्ष्मजीवों की गणना क्यों करते हैं?

....

....

....

ख) 30° C पर ऊष्मायित पोषक ऐगार प्लेट के संरोपण से मृदा से किस प्रकार के जीवाणु की प्राप्ति नहीं होगे?

....

....

....

ग) *p*-हाइड्रॉक्सीबेन्जॉइक अम्ल का उपापचयन करने वाले जीव को पृथक करने के लिए कौन सी विधि सर्वोत्तम है।

....

....

....

घ) क्या प्लेट गणना में और सूक्ष्मदर्शी विधियों में, गणन संख्या समान होगी?

....

....

....

बोध प्रश्न 7

क) बारबर्ग विधि में किस गैस की माप की जाती है?

....

....

....

ख) मृदा सूक्ष्मजैव गतिविधि की माप किन एन्जाइम से प्राप्त होती हैं?

....

....

....

ग) पी०सी०आर० क्या होता है?

....

....

....

घ) टैक पॉलिमरेज ऊष्मा .... होता है।

20.4 वायु का सूक्ष्मजैविक परीक्षण

MAADHYAM IAS

भू पृष्ठ, भूमि और जल दोनों, वायुमंडल में सूक्ष्मजीवों का स्रोत होता है। मिट्टी से हवा द्वारा धूल उत्पन्न होती है और धूल के कण, मिट्टी में मौजूद सूक्ष्मजीवों को हवा में ले जाते हैं। वायुमंडल की सूक्ष्मजैव आबादी क्षणिक और परिवर्ती होती है। वायु में सूक्ष्मजीव पैदा नहीं होते हैं। हवा में मौजूद जीव कुछ फुट अथवा कई मील दूर वाहित हो जाते हैं। हवा में मौजूद कुछ सूक्ष्मजीव, कुछ ही सेकंडों में मर जाते हैं जबकि अन्य कई सप्ताहों, महीनों अथवा उससे भी अधिक समय तक जिन्दा रहते हैं। हवा में मौजूद सूक्ष्मजीवों की अंतिम परिणति, जटिल परिस्थितियों पर निर्भर करती है जिनमें आर्द्रता, ताप, सूर्य की रोशनी तथा सूक्ष्म जीवधारी कणों के आमाप आदि शामिल हैं। सूक्ष्मजीवों का स्वभाव भी महत्वपूर्ण होता है। उदाहरण के लिए बीजाणु अथवा पुटी बनाने वाले जीवों की वायुमंडल में अधिक समय तक जिन्दा रहने की संभावना रहती हैं।

शैवाल, प्रोटोजोआ, यीस्ट, फफूंदी और जीवाणुओं को भू-पृष्ठ के निकट वायु से पृथक किया गया है। वायु के सूक्ष्मजैविक प्रतिचयन की एक विधि इस प्रकासर है – ऐगार माध्यम युक्त पेट्रीडिश को कुछ समय तक हवा में रखें। डिश को ऊष्मायित करें और देखें कि ऐगार पृष्ठ पर मौजूद सूक्ष्मजीवों की वृद्धि से कालोनियां बन जाती हैं। इस विधि से हवा में मौजूद जीवों की लगभग संख्या और किस्मों की जानकारी प्राप्त होती है।

बोध प्रश्न 8

क) वायुमंडल में सूक्ष्मजीव कैसे पहुंचते हैं।

....

....

ख) हवा के नमूने में सूक्ष्मजीवों की संख्या कैसे निर्धारित की जाती है।

....

....

20.5 सारांश

इस इकाई में हमने जल, मृदा और वायु के सूक्ष्मजैविक परीक्षण के बारे में पढ़ा। हमने पढ़ा कि सूक्ष्मजीवों के चारों ओर जल, वायु और मृदा होती है। पृथ्वी की जल-आपूर्ति का लगातार पुनर्चक्रण होता रहता है। ये विभिन्न चरण मिलकर जलीय चक्र बनाते हैं। जल की पेयता के लिए आवश्यक है कि उसकी संदूषणों के लिए जांच की जाए। इसके लिए झिल्ली निस्यंदन तकनीक, प्लेट गणन आदि विभिन्न सूक्ष्मजैव तकनीकों का उपयोग किया जाता है। किन्तु कोलीफॉर्म जीवाणु की उपस्थिति व्यक्त करने के लिए तीन-पद परीक्षण सबसे अधिक प्रयुक्त होता है और महत्वपूर्ण है। व्यवहार में रोगाणुओं की नहीं, बल्कि, कोलीफॉर्मों की उपस्थिति जल की गुणता को निर्धारित करती है।

मृदा और वायु में रहने वाले सूक्ष्मजीवों का परीक्षण प्रयोगकर्ता की आवश्यकता के अनुसार, अनेक विधियों से किया जा सकता है। किन्तु कोई भी तकनीक पूर्णतः लाभदायक नहीं है। प्रत्येक के लाभ हैं और हानियां भी।

20.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. जलीय चक्र क्या होता है?
2. अनुमानित जल-परीक्षण में प्रयुक्त माध्यम का सुनिश्चिम घटक क) लैक्टोस ख) ग्लूकोस ग) मेथिलीन ब्लू घ) पित्त लवण ङ) नाइट्रेट लवण होता है।
3. वृहत् परिमाण में जल के शोधन के लिए नीचे तत्वों में कौन सर्वाधिक प्रयुक्त होता है। क) फ्लुओरीन ख) क्लोरीन ग) आयोडीन घ) ब्रामीन ङ) पारा
4. एम०पी०एन० तीन पद प्रक्रिया गुणात्मक नहीं बल्कि मात्रात्मक है, क्यों?
5. इन परीक्षणों की श्रेणी में प्रथम परीक्षण के लिए अनुमानित शब्द का प्रयोग क्यों किया जाता है?
6. कोलीफॉर्मों के अलावा कौन से सूक्ष्मजीव सकारात्मक अनुमानित परीक्षण दे सकते हैं?
7. जल-विश्लेषण में झिल्ली निस्यंदन के लाभ कौन से हैं?

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

8. निम्नलिखित में कौन से तीन वंश जीवाणुओं के कोलीफॉर्म वर्ग के सदस्य हैं।

   क) क्लेबसीला **I)** शिगेला ग) साल्मोनेला 4) एशरिकिआ 3) एन्टेरोबैक्टर

9. मल कोलीफॉर्म और साल्मोनेला में भेद करने के लिए निम्नलिखित अभिलक्षणों में किसे प्रयुक्त किया जा सकता है?

   क) ग्रैम अभिक्रिया ख) ग्लूकोस का किण्वन ग) बीजाणुकजनन घ) लैक्टोस का किण्वन ङ) वृद्धि के लिए ताप की आवश्यकता

10. सूचक जीव के महत्वपूर्ण लक्षण बताइए।

11. कौन से अन्य तत्व है जिनके N, C और S चक्रों के समान चक्र-प्रक्रम होते हैं?

12. मृदा में सूक्ष्मजीवों की गणना के लिए प्रयुक्त प्रक्रियाओं के संदर्भ में निम्नलिखित कथनों में कौन सत्य हैं?

    क) एक प्लेट संवर्ध प्रक्रिया द्वारा सभी शरीरक्रियात्मक किस्मों का वर्धन किया जा सकता है।

    ख) मृदा नमूने के सूक्ष्मदर्शी परीक्षण से मृत और जीवित सूक्ष्मजैविक कोशिकाओं में भेद नहीं किया जा सकता है।

    ग) मृदा से जीवाण्विक जाति को पृथक करने की समृद्धि संवर्धन तकनीक अद्वितीय जैवरासायनिक अभिलक्षणों वाली एक उत्तम विधि है।

    घ) मृदा के नमूनों से निर्मित ऐगार प्लेट संवर्ध कुल सूक्ष्म जैविक वनस्पति के केवल एक भाग को व्यक्त करते हैं।

13. मृदा सूक्ष्मजीवों की संख्या और किस्मों के आकलन के लिए कौन सी तकनीकों का उपयोग किया जाता है?

14. डिहाइड्रोजेनेस की गतिविधि मापने का क्या लाभ है?

20.7 उत्तर

बोध प्रश्न

1. क) प्राकृतिक जल के तीन संवर्ग हैं : वायुमंडलीय जल, पृष्ठीय जल और भौमजल। इन तीनों में भौम जल की उत्तम गुणता होती है। और उसमें सूक्ष्मजैविक मात्रा भी कम होती है।

   ख) पृथ्वी का लगभग ¾ भाग पानी से घिरा है।

2. क) जलभृत, जलराशि है जो मृदा रंध्रों को संतृप्त कर देती है। यह पृष्ठीय जल का महत्वपूर्ण स्रोत होता है।

   ख) सुपोषण का अर्थ है जल में पोषक तत्वों को मिलाना जिससे बहुत अधिक सूक्ष्मजैविक वृद्धि होती है और ऑक्सीजन का ह्रास हो जाता है।

3. क) सूचक जीव वह है जिसकी जल में उपस्थिति प्रमाणित करती है कि जल, मल पदार्थ द्वारा प्रदूषित है और वह पीने के लिए उपयुक्त नहीं है।

   ख) कोलीफॉर्म, रोगाणुओं की तुलना में अधिक समय तक जीवित रहते हैं और संख्या में अधिक होते हैं। इसलिए कोलीफॉर्म का परीक्षण किया जाता है क्योंकि उनकी पहचान करना आसान होता है।

   ग) कोलीफॉर्म ग्रैम नेगेटिव, अबीजाणुक जनक, वायुजीवी और विकल्पी रूप से अवायुजीवी दण्डायु जो लैक्टोस के किण्वन से अम्ल और गैस उत्पन्न करते हैं।

MAADHYAM IAS

घ) रोगाणु

ङ) कोलीफॉर्म और विशेष रूप से एशरिकिआ कोली, मनुष्यों और अन्य नियततापी प्राणियों, जिनके शरीर का ताप 37° C के आसपास रहता है, के आंत्र-नाल के सामान्य निवासी होते हैं।

4. क) कोलीफॉर्म

ख) प्रायिकतम संख्या

ग) इ०एम०बी० ऐगार पर *ई०कोली* धात्विक हरे रंग की कॉलोनियां और एन्टेरोबैक्टर लाल रंग की कॉलोनियां बनाता है।

घ) बी०जी०एल०बी०, इ०एम०बी०

ङ) 40 एम०पी०एन० प्रति 100 cm^3

5. क) संस्तर, मृदाओं की विशेषता होती है।

ख) जैव और खनिज मात्राएं, रंग, गठन, संरचना, रंध्रता और पी०एच० आदि मृदा-गुणधर्म, मृदा में सूक्ष्म-जीवों की संख्या और किस्मों को प्रभावित करते हैं।

ग) जीवाणुओं की संख्या सबसे अधिक होती है उसके बाद कवक, शैवाल, प्रोटोजोआ और विषाणु की संख्या होती है।

घ) N-चक्र, C-चक्र, S-चक्र

ङ) मृदा में जैव द्रव्य जैव गतिविधि को नियंत्रित करता है। अधिक जैद द्रव्य, अधिक सूक्ष्म वनस्पति को पोषण करता है और कम जैव द्रव्य में कम सूक्ष्म वनस्पति होती है।

6. क) मृदा में सूक्ष्मजीवों की गणना सूक्ष्मजैव वनस्पति की किस्म और मात्रा को जानने के लिए की जाती है।

ख) 30° C पर ऊष्मायित करने पर तापरागियों और शीतरागियों की प्राप्ति नहीं होगी।

ग) समृद्धि संवर्धन तकनीक।

घ) नहीं।

7. क) CO_2

a) डिहाइड्रजेनेस

ग) पॉलिमरेस श्रृंखला अभिक्रिया

घ) स्थायी

8. क) धूल-कणों द्वारा

ख) माध्यम के साथ पेट्रीडिश को हवा में रखने, और प्लेट को वृद्धि के लिए ऊष्मायित करने से।

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

अंत में कुछ प्रश्न

1. पृथ्वी की जल-आपूर्ति एक चरण से दूसरे चरण में लगातार चक्कर लगाती रहती है। इसके विभिन्न चरण जलीय चक्रण बनाते हैं।

2. लैक्टोस

3. क्लोरीन
4. एम०पी०एन० तीन पद प्रक्रिया में अनुमानित, पुष्टि और पूर्ण परीक्षण सम्मिलित हैं। ये कोलीफॉर्मों की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति कर सकारात्मक प्रमाण प्रस्तुत करते हैं किन्तु उपस्थित कोलीफॉर्मों की संख्या को नहीं बतलाते हैं।
5. अनुमानित शब्द का प्रयोग किया जाता है क्योंकि $37^0 C$ पर लैक्टोस ब्रॉथ में गैस का बनना केवल कोलीफॉर्मों का ही नहीं बल्कि एन्टेरोबैक्टर एरोजेनेस और कुछ क्लेबसीला स्पीशीज का भी अभिलाक्षणिक है।
6. क्लेबसिला स्पीशीज
7. लाभ इस प्रकार हैं :
   यह प्रत्यक्ष, शीघ्र होने वाली (18 – 24 घंटों में परिणाम प्राप्त हो जाते हैं) प्रक्रिया है तथा इसमें जल-नमूने की बड़ी मात्राओं के साथ काम किया जा सकता है।
8. क्लेबसीला, एशरिकिआ, एन्टेरोबैक्टर
9. लैक्टोस का किण्वन
10. सूचक जीव को अधिक समय जीवित रहना चाहिए, अधिक संख्या में उपस्थित रहना चाहिए और मनुष्यों के लिए हानिरहित होना चाहिए।
11. फास्फोरस, लोहा, पोटैशियम
12. क) m a)सही ग) सही घ) सही
13. प्रत्यक्ष सूक्ष्मदर्शिकी, ऐगार प्लेट गणना और एम०पी०एन०।
14. अल्प समय में संवर्धन के बिना सूक्ष्मजीवों की पहचान करना।

अतिरिक्त पाठ्य सामग्री

1. टेक्स्ट बुक ऑफ माइक्रोबायोलॉजी, आर. अनंतनारायन और सी०के० जयराम पनिकर, ओरियन्ट लौंगमन लिमिटेड, मद्रास।
2. माइक्रोब्स इन एक्शन: ए लैबोरेटरी मैनुअल ऑफ माइक्रोबायोलॉजी डब्ल्यू. हैरी, जूनियर सीले एण्ड जे. पॉल वैनडेमार्क, डब्ल्यू०एच० फ्रीमेन एण्ड कम्पनी।
3. माइक्रोबायोलॉजी: फन्डामेन्टल्स एण्ड एप्लीकेशन्स, रोनल्ड, एम० एटलस, मैक्सवेल मैक्मिलन इन्टर्न।
4. माइक्रोबायोलॉजी, कन्सेप्टस एण्ड एप्लीकेशन्स, जूनियर एम०जे० पेल्कजार, इ०सी०एस० चान एण्ड एन०आर० क्रीग, मैक्ग्रा हिल इन्क।
5. फाउंडेशन्स इन माइक्रोबायोलॉजी, कथलीन टलरो एण्ड आर्थर टलरो, डब्ल्यू. सी०बी० पब्लिकेशन।
6. सॉयल माइक्रोआर्गेनिज्म एण्ड प्लान्ट ग्रोथ, एन०एस०, सुब्बाराव, ऑक्सफोर्ड एण्ड आइ०बी०एच०पब०को।
7. इन्ट्रोडक्शन टू सॉयल माइक्रोबायोलॉजी, एम० एलेक्जैन्डर, विले इस्टर्न लिमिटेड।
8. सायल माइक्रोबायोलॉजी एण्ड बायोकेमिस्ट्री, इ०ए० पॉल एण्ड एफ०इ० क्लार्क।

MAADHYAM IAS

प्रति 100 cm^3 नमूने के लिए कोलीफॉर्म की सर्वाधिक प्रसंभाव्य संख्या

धनात्मक नलियों की संख्या				धनात्मक नलियों की संख्या				धनात्मक नलियों की संख्या				धनात्मक नलियों की संख्या				धनात्मक नलियों की संख्या				धनात्मक नलियों की संख्या			
10	**1**	**0.1**	**MPN**	**10**	**1**	**0.1**	**MPN**	**10**	**1**	**0.1**	**MPN**	**10**	**1**	**0.1**	**MPN**	**10**	**1**	**0.1**	**MPN**	**10**	**1**	**0.1**	**MPN**
0	0	0	**<1.8**	1	0	0	**2**	2	0	0	**4.5**	3	0	0	**7.8**	4	0	0	**13**	5	0	0	**23**
0	0	1	**1.8**	1	0	1	**4**	2	0	1	**6.8**	3	0	1	**11**	4	0	1	**17**	5	0	1	**31**
0	0	2	**3.6**	1	0	2	**6**	2	0	2	**9.1**	3	0	2	**13**	4	0	2	**21**	5	0	2	**43**
0	0	3	**5.4**	1	0	3	**8**	2	0	3	**12**	3	0	3	**16**	4	0	3	**25**	5	0	3	**58**
0	0	4	**7.2**	1	0	4	**10**	2	0	4	**14**	3	0	4	**20**	4	0	4	**30**	5	0	4	**76**
0	0	5	**9**	1	0	5	**12**	2	0	5	**16**	3	0	5	**23**	4	0	5	**36**	5	0	5	**95**
0	1	0	**1.8**	1	1	0	**4**	2	1	0	**6.8**	3	1	0	**11**	4	1	0	**17**	5	1	0	**33**
0	1	1	**3.6**	1	1	1	**6.1**	2	1	1	**9.2**	3	1	1	**14**	4	1	1	**21**	5	1	1	**46**
0	1	2	**5.5**	1	1	2	**8.1**	2	1	2	**12**	3	1	2	**17**	4	1	2	**26**	5	1	2	**64**
0	1	3	**7.3**	1	1	3	**10**	2	1	3	**14**	3	1	3	**20**	4	1	3	**31**	5	1	3	**84**
0	1	4	**9.1**	1	1	4	**12**	2	1	4	**17**	3	1	4	**23**	4	1	4	**36**	5	1	4	**110**
0	1	5	**11**	1	1	5	**14**	2	1	5	**19**	3	1	5	**27**	4	1	5	**42**	5	1	5	**130**
0	2	0	**3.7**	1	2	0	**6.1**	2	2	0	**9.3**	3	2	0	**14**	4	2	0	**22**	5	2	0	**49**
0	2	1	**5.5**	1	2	1	**8.2**	2	2	1	**12**	3	2	1	**17**	4	2	1	**26**	5	2	1	**70**
0	2	2	**7.4**	1	2	2	**10**	2	2	2	**14**	3	2	2	**20**	4	2	2	**32**	5	2	2	**95**
0	2	3	**9.2**	1	2	3	**12**	2	2	3	**17**	3	2	3	**24**	4	2	3	**38**	5	2	3	**120**

MAADHYAM IAS
way to achieve your dream

MAADHYAM IAS

0	2	4	**11**	1	2	4	**15**	2	2	4	**19**	3	2	4	**27**	4	2	4	**44**	5	2	4	**150**
0	2	5	**13**	1	2	5	**17**	2	2	5	**22**	3	2	5	**31**	4	2	5	**50**	5	2	5	**180**
0	3	0	**5.6**	1	3	0	**8.3**	2	3	0	**12**	3	3	0	**17**	4	3	0	**27**	5	3	0	**79**
0	3	1	**7.4**	1	3	1	**10**	2	3	1	**14**	3	3	1	**21**	4	3	1	**33**	5	3	1	**110**
0	3	2	**9.3**	1	3	2	**13**	2	3	2	**17**	3	3	2	**24**	4	3	2	**39**	5	3	2	**140**
0	3	3	**11**	1	3	3	**15**	2	3	3	**20**	3	3	3	**28**	4	3	3	**45**	5	3	3	**180**
0	3	4	**13**	1	3	4	**17**	2	3	4	**22**	3	3	4	**31**	4	3	4	**52**	5	3	4	**210**
0	3	5	**15**	1	3	5	**19**	2	3	5	**25**	3	3	5	**35**	4	3	5	**59**	5	3	5	**250**
0	4	0	**7.5**	1	4	0	**11**	2	4	0	**15**	3	4	0	**21**	4	4	0	**34**	5	4	0	**130**
0	4	1	**9.4**	1	4	1	**13**	2	4	1	**17**	3	4	1	**24**	4	4	1	**40**	5	4	1	**170**
0	4	2	**11**	1	4	2	**15**	2	4	2	**20**	3	4	2	**28**	4	4	2	**47**	5	4	2	**220**
0	4	3	**13**	1	4	3	**17**	2	4	3	**23**	3	4	3	**32**	4	4	3	**54**	5	4	3	**280**
0	4	4	**15**	1	4	4	**19**	2	4	4	**25**	3	4	4	**36**	4	4	4	**62**	5	4	4	**350**
0	4	5	**17**	1	4	5	**22**	2	4	5	**28**	3	4	5	**40**	4	4	5	**69**	5	4	5	**440**
0	5	0	**9.4**	1	5	0	**13**	2	5	0	**17**	3	5	0	**25**	4	5	0	**41**	5	5	0	**240**
0	5	1	**11**	1	5	1	**15**	2	5	1	**20**	3	5	1	**29**	4	5	1	**48**	5	5	1	**350**
0	5	2	**13**	1	5	2	**17**	2	5	2	**17**	3	5	2	**32**	4	5	2	**56**	5	5	2	**540**
0	5	3	**15**	1	5	3	**19**	2	5	3	**26**	3	5	3	**37**	4	5	3	**64**	5	5	3	**920**
0	5	4	**17**	1	5	4	**22**	2	5	4	**29**	3	5	4	**41**	4	5	4	**72**	5	5	4	**1600**
0	5	5	**19**	1	5	5	**24**	2	5	5	**32**	3	5	5	**45**	4	5	5	**81**	5	5	5	**>1600**